अथाष्टादशस्मृतिप्रस्तावः ॥

यद्यपि स्मृतियों के विषय में जो २ विचार वा संशोधन जिस २ प्रकार का अपेक्षित है वह ठीक २ हम ने अभी तक नहीं कर पाया है। क्योंकि ठीक२ शुद्ध पुस्तकादि साधन प्राप्त नहीं हुए। तथापि न होने से फिर भी बहुत कुछ अच्छा हुआ है। हम इस प्रस्तावना में संक्षेप से कुछ विचार दिखाते हैं जिन को पुस्तकों के अवलोकन से पहिले पाठक लोग बड़ी सावधानी से पढ़ के ध्यान में रख लेवें तब स्मृतियों को देखने से अवश्य कुछ लाभ होगा कल्याण का मार्ग भी दीख पड़ेगा। याज्ञवल्क्य० अ० १। ३।

पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः ।
वेदाःस्थानानिविद्यानां धर्मस्यचचतुर्दश ॥ ३ ॥

भा०-(१-पुराण) ब्रह्मवैवर्त्तादि अठारह पुराण जिन के (सृष्टि रचना, प्रलय, वंश, मन्वन्तर, और वंशों के चरित वर्णन ये) पांच विषय हैं। (२-न्याय) न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, ये चारो एक २ प्रकार से अपने २ उद्दिष्ट विषय का न्याय नाम निर्णय (फैसला) करने वाले होने से न्याय पद वाच्य हो सकते हैं। (३-मीमांसा) धर्म का विचार करने के लिये पूर्व मीमांसा, और साक्षात सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्मतत्त्व का निश्चय करने के लिये उत्तर मीमांसा (वेदान्त दर्शन) ये दोनों मीमांसा पद वाच्य हैं। (४-धर्म शास्त्र) मनुआदि बीसस्मृति (धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः) इस मनुजी के कथनानुसार स्मृति और धर्मशास्त्र एक ही हैं। (५-अङ्ग) वेद के छः अङ्ग हैं (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष,) ये छः (६-चार वेद) ऋग्यजुः साम अथर्व ये सब चौदह, विद्या और धर्म के स्थान हैं। इन चतु-

प्रकार की विद्या से धर्म जाना जाता है। चार वेद, छः वेदाङ्ग, पुराण, न्याय, मीमांसा, धर्मशास्त्र ये सब चौदह होते हैं। ये ही चौदह विद्या हैं। महाभारतादि इतिहास का विषय यही है कि जो पुराणों का ... [illegible] उन्हीं के अन्तर्गत इतिहास भी आजाते हैं। वाल्मीकीय रामायण और महाभारत ये दो इतिहास मुख्य हैं। तुलसीदास की रामायण वाल्मीकीय की

छाया रूप होने से उसी के अन्तर्गत जानो ॥

चार वेदों की ११३१ शाखा, प्रत्येक शाखा के साथ ११३१ ब्राह्मण ग्रन्थ कल्पवेदाङ्ग के ११३१ श्रौत सूत्र, तथा ११३१ गृह्यसूत्र, ४ वेदों की चार शिक्षा एक व्याकरण, एक निरुक्त, एक छन्दः, एक ज्योतिष, बीश २० धर्म शास्त्र,दो मीमांसा, चार ४ न्याय, बीश २० इतिहास पुराण, ये सब क्रम से क्रम सनातन धर्म तथा विद्या के भण्डार ४५७८ चार हजार पांच सौ अठहत्तर विद्य धर्म के पुस्तक पूर्वकाल में विद्यमान थे। इन से भिन्न उपपुराणादि अन्य भी ग्रन्थ बाकी रहते हैं। उपपुराणादि का पुराणों में अन्तर्भाव हो सकेगा परन्तु मुख्य कर यही चौदह प्रकार की विद्या प्राणी को संसार समुद्र से पार करने वाली है। उपनिषद् पुस्तक, शाखा तथा ब्राह्मणों के अन्तर्गत आजाने से पृथक् नहीं गिनाये गये हैं। तथा उस २ वेद के उपनिषद् भी उसी २ वेद के अन्तर्गत माने जाते हैं। उपवेद पुस्तकों का धर्मके साथ विशेष सम्बन्ध न होने पर भी विद्या पुस्तक अवश्य माने जावेंगे। पर उन का अपने २ वेद के साथ अन्तर्भाव हो जाने से चार वेदों में आ सकते हैं इस से पृथक् नहीं गिनाये गये हैं। याज्ञवल्क्यस्मृति अ० १।

> मन्वत्रिविष्णुहारीत याज्ञवल्क्योशनोऽङ्गिराः।
> यमापस्तम्बसंवर्त्ताः कात्यायनबृहस्पती ॥ ४ ॥
> पराशरव्यासशंख लिखितादक्षगौतमौ।
> शातातपोवसिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रवर्त्तकाः ॥ ५ ॥

भाषार्थ—मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत, याज्ञवल्क्य, उशना, अङ्गिरा, यम, आपस्तम्ब, संवर्त्त, कात्यायन, बृहस्पति, पराशर, व्यास, शंख, लिखित, दक्ष, गौतम, शातातप, और वसिष्ठ, ये बीश महर्षि वा आचार्य धर्मशास्त्रों के प्रवर्त्तक वा बनाने वाले हैं। अर्थात् मनुआदि के नाम से बीश धर्मशास्त्र प्रधान वा मुख्य हैं। इन में से कई ऋषियों के नाम से लघु बृहत् दो २ पुस्तक बने हुए मिलते हैं। सो अनुमान होता है कि काल क्रम से एक ही — र्षि के उपदेश को उन २ के शिष्यादि लोगों ने धर्म शास्त्र पढ़ने वालों थोड़ा पढ़ने से काम चल सके इत्यादि प्रयोजन से समय २ पर भिन्न २ वश्यकता देख समझ कर दो २ भाग किये होंगे। परन्तु इन धर्मशास्त्रों

(...रीत) पुस्तक बृहत् नाम से ऐसा भी है कि जिसको स्मृति व ...ीं कह सकते। क्योंकि लोकव्यवहार की व्यवस्था करना धर्म ...है। और स्मृतियों के जो २ विषय लोक व्यवहार के नियम रखते हैं वे सब पाठक महाशयों,को अष्टादशस्मृतियों के सूची

हो हो जायंगे। अर्थात् संप्रदायी चिह्नों का आग्रह करना जीव में से किसी भी स्मृति में जब नहीं आया तो, वृद्धहारीतादि में केवल वैष्णव संप्रदाय के शंख चक्रादि संस्कारों का सब के लिये आग्रह करना स्मृति का विषय कैसे होगा ? । अर्थात् कदापि नहीं। हमारा अनुमान है कि ऐसी स्मृति महर्षि हारीत की कही हुई नहीं है किन्तु किसी वैष्णव सम्प्रदायी विद्वान् ने अपने मत के प्रचारार्थ महर्षि हारीत के नाम से बना दी है। इससे हमारा प्रयोजन किसी सम्प्रदाय को बुरा कहने वा खण्डन करने का नहीं है। किन्तु प्रयोजन इतना ही है कि सम्प्रदाय के चिन्हादि का आग्रह करना स्मृति का विषय कदापि सिद्ध नहीं होता। इससे उसको स्मृति नहीं कह सकते क्योंकि उससे लोक व्यवहार की कुछ भी व्यवस्था नहीं होती है। तथा शंख चक्रादि चिन्ह धारण किये विना पूर्ण भक्ति से पूजा उपासना करनेवाले पर विष्णु भगवान् प्रसन्न न हों यह भी समझ में नहीं आता। इस से हम इतना ही कहना उचित समझते हैं कि जिनके यहां कुल परम्परा से जो सम्प्रदाय चला आता है उन्हीं के लिये वह अच्छा है। उसी सम्प्रदाय के नियमानुसार वे लोग प्रभुभक्ति से देवाराधन करें, यही सनातन धर्म का फल है। किन्तु यह न कहें वा मानें कि जो ऊर्ध्व पुण्ड्र वा शंख चक्रादि धारण न करें वे चाण्डाल वा नीच हैं।

अब एक बात यह भी विचारणीय है कि याज्ञवल्क्य स्मृति के ऊपर लिखे दो श्लोकों में स्मृतियों के २० ही होनेका कोई नियम नहीं कियागया किन्तु ऊपर लिखे याज्ञवल्क्य के दो श्लोकों में मुख्यकर धर्मशास्त्र कर्त्ताओं के नाम दिखाये हैं कि ये स्मृतिकारों में प्रधान हैं। यह अभिप्राय नहीं है कि ये ही स्मृतिकार हैं इनसे भिन्न कोई भी धर्मशास्त्र कर्त्ता नहीं है। इस से पुलस्त्य, बौधायन, देवलादि की स्मृतियों को भी धर्मशास्त्र मानना चाहिये।

इन ऊपर लिखी २० स्मृतियों में भी मनु और याज्ञवल्क्य स्मृति विशेष मान्य तथा प्रसिद्ध हैं। इसी कारण इन अष्टादशस्मृतियों के संग्रह में उक्त दोनों स्मृति नहीं रक्खी गयी हैं। हम इन स्मृतियों के बाद में ही मनु, याज्ञवल्क्य, बौधायनादि कई उपयोगी स्मृतियां शीघ्र छपाने की इच्छा रखते हैं। जिसको श्रीकृष्ण भगवान् पूरी करेंगे ऐसी आशा है।

इन अठारह स्मृतियों में एक से ही कई विषय आये हैं। जिनको बार२ आये देखकर पाठक महाशय पुनरुक्त दोष न समझें क्योंकि एक ऋषिके कथन में एक विषय बार२ होने से पुनरुक्त कह सकते थे। पूर्वकाल में अब आदेशानों

का प्रचार नहीं था तब अपने२ कुल गोत्र के महर्षि ने कहे अपने२ धर्मशास्त्र
को भिन्न२ प्रान्तों में रहने वाले ब्राह्मणादि लोग पढ़ते पढ़ाते थे। अब जैसे२ छापे
खाने बढ़े वैसे२ सब पुस्तक सर्वत्र फैलने लगे हैं। परन्तु पूर्वकाल के तुल्य सा
मयिक ब्राह्मणादि द्विज लोग धर्मशास्त्रों के जानकार अब नहीं हैं। हम अपने
पाठकों से सानुनय प्रार्थना करते हैं कि आप लोग कई बार इन धर्मशास्त्रों
को ध्यान देकर अवश्य पढ़ जाइये। तो आप को बड़ा लाभ होगा सो आ
स्वयमेव पीछे जान लोगे।

परन्तु धर्मशास्त्रों का पाठ करने से पहिले निम्न लिखित विचारों को अवश्य
ध्यान में रख लेना।

१—जहां लिखा हो कि ऐसा काम करने से अमुक २ उत्तम अद्भुत
फल होता है। तब आपको समयानुसार यदि सन्देह हो कि ऐसा फल
होगा इस में प्रमाण (सबूत) क्या है? तब सोच लेना कि—किसी ने कहा
कि नदी के किनारे फल हैं जाकर लेआओ। इस शब्दप्रमाण पर अन्य
प्रमाण की हुज्जत करने वाला न तो नदी तक जायगा और न उस को वे
फल मिलेंगे। कर्म का फल उस के अन्त में होता है।

२—यह भी ध्यान रहे कि धर्मशास्त्रादि पुस्तक अधिक वा अपरिमित
देशकालों में होने वाले असंख्य प्राणियों के लिये हैं। इन में लिखे विचार
प्रत्येक देश या काल में प्रत्येक प्राणी के लिये उपकारी नहीं हो सकते हैं
जैसे पसारी की दुकान में तिक्त, कटु, मिष्ट और विष आदि भी रहते हैं। उनमें
से कभी किसी को विष भी अमृत का सा काम देता और कभी जीवन का
आधार अन्न भी विष के तुल्य मनुष्य को मार डालता है (अजीर्णे भोजनं
विषम्) इस लिये जो अंश आप का अपने उपयोगी न जान पड़ें उन के लि-
ये हुज्जत न मचाइये। पसारी की दुकान पर कुछ प्रयोजनीय वस्तु लेने को
गया हुआ मनुष्य विषादि के लिये झगड़ा करने लगे कि तुम ने यह दूकान
में रक्खा ही क्यों ?। तो उस का समय झगड़े में ही चला जायगा किन्तु प्र
योजनीय वस्तु लेने से भी वंचित रहेगा। इसी के अनुसार, मांसादि प्रति-
कूल विषयों पर झगड़ा छोड़ के अपने कल्याणार्थ किन्हीं उत्तम अंशों पर जिस
समा के अनुसार आचार विचार सुधार के अपना कल्याण कीजिये। अन्य-
था यही बहावत सिद्ध होगी कि (आये थे हरिभजन को ओटन लगे कपास)

३—धर्मशास्त्रों में बार २ लिखी विशेष उपयोगी बातों को बार २ देखिये
तो कर्तव्य हो जाने से विशेष लाभ होगा।

४-इन धर्मशास्त्रों में अनेक विचार आप को ऐसे मिलेंगे कि जिन को न जानने के कारण ही आप उन कामों को विरुद्ध करते होंगे। और जब जान लोगे तो ठीक २ करने लगोगे। तब उस से आप का कुछ कल्याण भी अवश्य होगा। जैसे शिर बांध के भोजन न करना, शिर खोल के मल मूत्र त्याग न करना, पूर्व को पग करके कदापि न सोना, इत्यादि कामों के करने में जो कुछ समय वा श्रम आप करते हैं वही आगे भी लगेगा पर यदि शास्त्र की आज्ञानुकूल उन २ कामों को करोगे तो सहज में ही कुछ धर्म कर लोगे।

५-यद्यपि सभी धर्मशास्त्र अनेक प्रकार से मनुष्य को कल्याण का मार्ग दिखाने वाले होने से उत्तम हैं तथापि कात्यायन, व्यास, पराशर, शंख, दक्ष, गौतम और वसिष्ठादि कई स्मृतियां उन में और भी अत्यन्त उपकारी हैं। कात्यायन में कर्मकाण्ड, व्यास में पतिव्रताधर्म, दानधर्मादि, पराशर में ब्रह्मकूर्च व्रतादि, शंख में वर्णाश्रम धर्मादि, दक्ष में दिनचर्या वा रात्रिचर्या-योगाभ्यासादि, गौतम में ४८ अड़तालीश संस्कारादि, वसिष्ठ में संन्यासादि, विषय अधिक प्रशंसनीय हैं।

इन स्मृतियों में, शिक्षा, विद्या, सामान्यनीति, राजनीति, स्त्रीशिक्षा, योग, ध्यान, उपासना, देवपूजा और धर्मादि का विचार ऐसा भी है जो सभी के लिये उपयोगी होगा।

विशेष कर स्मृतियों के संक्षिप्त विषय-१-प्रायश्चित्त, २-वर्णधर्म, ३-आश्रम धर्म, ४-सूतक शुद्धि, ५-द्रव्यशुद्धि, ६-गर्भाधानादि संस्कार, ७-सन्ध्या, ८-श्राद्ध तर्पण, ९-पञ्चमहायज्ञ, १०-पातिव्रतधर्म, ११-भक्ष्याभक्ष्य, १२-आपद्धर्म, १३-वेद का अभ्यास तथा महत्त्व, १४-आचार, इत्यादि संक्षेप से धर्मशास्त्रों का विषय जानो॥

हमारी राय जाति निर्णय के विषय में, यह है कि जो कायस्थ, रथकार, स्वर्णकार, आदि जाति हैं वे लोग धर्मशास्त्रों में लिखे निर्विवाद उत्तमाचरणों के द्वारा श्रेष्ठ बनने का उद्योग करें तो उन के लिये भविष्यत् में कल्याण की संभावना है।

-दक्षस्मृति में नौ २ की संख्या वाले नौनवें इक्यासी उपदेश देखने योग्य सब के लिये विशेष उपकारी हैं।

-इन स्मृतियों के जो २ पारिभाषिक शब्द (ब्रह्मकूर्च, कृच्छ्र, तप्तकृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, कृच्छ्रातिकृच्छ्र, कृच्छ्रसान्तपन, प्राजापत्य, पराककृच्छ्र, चान्द्रा-

(जो) इत्यादि के लक्षण या अर्थ गौतमस्मृति के २७। २८ अध्यायादि या अन्यस्मृतियों में जहां २ कहे हैं वहीं से पाठक महाशय जानें सर्वत्र वही लक्षण जान लेवें। इसीसे जहां २ कृच्छ्रादि शब्द आये वहां २ सर्वत्र उनके लक्षण हमने नहीं दिखाये हैं। ब्रह्मकूर्च व्रत की प्रशंसा धर्मशास्त्रों में बहुत बढ के की गयी है। इस ब्रह्मकूर्च का लक्षण व्याख्यान वा विधान पराशर स्मृति के ११ वें अध्याय में देखिये।

११–कृच्छ्रादि सभी व्रतों के लिये सामान्य विचार ये हैं कि–ब्राह्मणादि द्विज शिखा को छोड़ के अन्य सब मूंछों सहित बाल मुंडा के अपने २ वर्ण के दण्ड, कमण्डलु, मेखला, श्वेत लाल पीले वस्त्र तथा मृग चर्मादि ब्रह्मचर्य के चिह्न धारण कर के वाग, देवस्थान, वा जलाशय के तट पर शुद्ध एकान्त स्थान में रहें, संसारी काम अथवा बात चीत कुछ न करें, शूद्रादिनीचों से कुछ भी न बोलें, प्रयोजन मात्र द्विजों से बोलें, प्रायः मौनरहें, तीन बार स्नान करें या छः बार स्नान करें अपने २ गुरु मन्त्र सावित्री का जप करें, व्याहृतियों से होम करें इत्यादि नियम भी पाठकों को इन्हीं धर्म शास्त्रों के देखने से ज्ञात होंगे।

१२–अब अन्तिम निवेदन यह है कि इन १८ स्मृतियों के छपाने या अर्थ करने में यथासम्भव हम ने सावधानी से शुद्ध करने का उद्योग किया है। तथापि कई कारणों से जो २ त्रुटि हमारे पाठकों को ज्ञात हों उन को पण्डितों की राय से सम्हाल लें और हमारे गुण या परिश्रम को सादर स्वीकार करते हुए तथा दोषों पर ध्यान न देते हुए उनसे उपेक्षा वृत्ति करें। क्योंकि मनुष्यको गुण ग्राही होने में जो लाभ तथा सुख होता है वह दोष दर्शी को कदापि नहीं होता। परन्तु जो२ अशुद्धि तथा अर्थ करने में कहीं२ भूल जान पड़े उनको विचार पूर्वक शुद्ध करने का उद्योग अवश्य करें

ह० भीमसेन शर्मा
सम्पादक ब्राह्मण सर्वस्व इटावा

अथाष्टादशस्मृतीनां सूचीपत्रम् ॥

अष्टादशस्मृतिसूचीपत्रम् ॥

अष्टादशस्मृतिसूचीपत्रम् ॥

इत्यष्टादशस्मृतिविषयसूचीपत्रं समाप्तम् ॥

॥ अत्रिस्मृतिः ॥

हुताग्निहोत्रमासीन-मत्रिंवेदविदांवरम् ।
सर्वशास्त्रविधिज्ञंत-मृषिभिश्चनमस्कृतम् ॥ १ ॥
नमस्कृत्यचतेसर्वे-इदंवचनमब्रुवन् ।
हितार्थंसर्वलोकानां भगवन्कथयस्वनः ॥ २ ॥

अत्रिरुवाच ॥

वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञा यन्मेपृच्छथसंशयम् ।
तत्सर्वंसंप्रवक्ष्यामि यथादृष्टंयथाश्रुतम् ॥ ३ ॥

भावार्थ—अग्निहोत्र करने वाले वेदज्ञों में उत्तम संपूर्ण शास्त्रों की विधि के ज्ञाता, और ऋषियों से पूज्य बैठे हुए अत्रिजी को ॥१॥ वे संपूर्ण ऋषि नमस्कार करके यह वचन बोले कि हे भगवन्! संपूर्ण मनुष्यों के हित के लिये आप हम को उपदेश करें ॥ २ ॥ अत्रि जी बोले कि—हे वेद और शास्त्र के तत्त्व (अर्थ) के यथार्थ जानने वाले ऋषि लोगो—जो संशय मुझ से तुम पूछते हो उस संपूर्ण को अपने देखे और सुने के अनुसार मैं वर्णन करूंगा ॥ ३ ॥

विशेष—(१ । २ । ३) अग्निहोत्र करने तथा वेद को जानने वाले अत्रि जी से यह धर्मशास्त्र कहा इस कथन से इस की वेदमूलकता दिखायी है। अध्यात्म में (वागत्रिः—इति श्रुतिः) वाणी अत्रि है। वाणी में आने पर ही यह विषय उपदेश या धर्मशास्त्र कहा जा सकता है। मन में रहे तब तक वह उपदेश नहीं यह बताने के लिये अत्रि जी का उपदेश अठारहों में पहिले रक्खा गया है। उपदेश की परम्परा दिखाने के लिये प्रश्नोत्तर द्वारा शास्त्र की प्रवृत्ति दिखाई है ॥

सर्वतीर्थान्युपस्पृश्य सर्वान्देवान्प्रणम्यच ।
जप्त्वातुसर्वसूक्तानि सर्वशास्त्रानुसारतः ॥ ४ ॥
सर्वपापहरंदिव्यं सर्वसंशयनाशनम् ।
चतुर्णामपिवर्णाना-मत्रिःशास्त्रमकल्पयत् ॥ ५ ॥
येचपापकृतोलोके येचान्येधर्मदूषकाः ।
सर्वपापैःप्रमुच्यन्ते श्रुत्वेदंशास्त्रमुत्तमम् ॥ ६ ॥
तस्मादिदंवेदविद्भि-रध्येतव्यंप्रयत्नतः ।
शिष्येभ्यश्चप्रवक्तव्यं सद्वृत्तेभ्यश्चधर्मतः ॥ ७ ॥
अकुलीनेह्यसद्वृत्ते जडेशूद्रेशठेद्विजे ।
एतेष्वेवनदातव्य-मिदंशास्त्रंद्विजोत्तमैः ॥ ८ ॥

भा०-संपूर्ण तीर्थों के जल से अभिषेक सब देवताओं को नमस्कार और संपूर्ण वेद सूक्तों का जप करके सर्वशास्त्रों के अनुसार ॥४॥ सर्व पापों का नाशक उत्तम सब संशयों का दूर करने वाला और चारों वर्णों का हितकारी शास्त्र अत्रि ऋषि ने रचा ॥५॥ जो जगत् में पापों के करने वाले हैं, और जो धर्म में दूषण लगाने वाले हैं वे संपूर्ण इस उत्तम शास्त्र को श्रवण कर सब पापों से छूट जाते हैं ॥ ६ ॥ इस लिये वेदज्ञ पुरुष इस शास्त्र को बड़े यत्न से पढ़ें और सदाचारी शिष्यों को धर्मानुकूल पढ़ावें ॥७॥ श्रेष्ठ विद्वान् ब्राह्मणों को चाहिये कि-अकुलीन दुराचारी-मूर्ख-शूद्र-और शठ ब्राह्मण, इन को न पढ़ावें ॥८॥

विशेष-(४) तीर्थ स्नान देवताओं का पूजन तथा विधिपूर्वक वेद मन्त्रों का जप इन कामों को जब तक श्रद्धा के साथ निरन्तर बहुत काल तक न किया जाय तब तक किसी का अन्तःकरण शुद्ध नहीं होता और शुद्धान्तःकरण हुए विना उस के हृदय से निकला उपदेश भी ठीक शुद्ध सर्व हितकारी वेदानुकूल नहीं होता इसी से ऋषि जी ने तीर्थस्नानादि किया (६) यदि पापी लोग उत्तम उपदेश को ठीक ध्यान देकर सुनें तो अवश्य अपने धर्म विरुद्ध दुराचारों से ग्लानि हो तब सब पापों से छूटना सम्भव ही है (८) जैसे सांप को पिलाया अमृत भी विष होजाता वैसे अकुलीनादि निकृष्ट को किया उत्तमोपदेश भी हानिकारक परिणाम जनक होता है ॥

गुरुःशिष्यंनिवेदयेत् ।
द्रव्यंयद्दत्त्वाह्यनृणीभवेत् ॥ ९ ॥
योगुरुंनाभिमन्यते ।
ग्रा चाण्डालेष्वभिजायते ॥ १० ॥
श्चित् शास्त्रंचैवावमन्यते ।
ति संभवानेकविंशतिम् ॥ ११ ॥
कुर्वाणा दूरे संतोपिमानवाः ।
कस्य स्वेस्वेकर्मण्युपस्थिताः ॥ १२ ॥
नं दानमध्ययनंतपः ।
प्रतिग्रहोऽध्यापनंच याजनंचेतिवृत्तयः ॥ १३ ॥

भा०-जो गुरु एक भी अक्षर शिष्य को देता है पृथिवी भर में वह कोई ऐसा द्रव्य नहीं है जिस को देकर शिष्य गुरु का अनृणी हो सके (अर्थात् बदला देसके) ॥ एक अक्षर देने वाले को जो गुरु नहीं मानता वह सौ जन्म तक कुत्तों की योनि में जाकर चांडालों में जन्मता है।१० जो कोई कुतर्की वेद और शास्त्र को जानकर अपमान करता है वह शीघ्र ही पशु योनिको पाता और पश्चात् इक्कीस प्रकार के नरकों को प्राप्त होता है ॥११॥ अपने २ कर्मों को करने वाले और दूर रहने पर भी मनुष्य अपने कर्म पर स्थिर रहने से जगत् के प्यारे होते हैं ॥ १२ ॥ केवल धर्म संचयार्थ ब्राह्मण के कर्म ये हैं कि यज्ञ करना, दान देना, साङ्गवेद पढ़ना और तप करना, और दानलेना पढ़ाना और यज्ञ कराना ये तीन ब्राह्मण की वृत्ति धर्मानुकूल आजीविका हैं ॥१३॥

(९ । १०) एकाक्षर से अभिप्राय यह है कि जो विधि पूर्वक थोड़ा भी पढ़ावे अथवा एकाक्षर नाम प्रणव को ठीक २ सार्थ पढ़ावे उस को भी गुरुअवश्य माने। न माने तो निन्दार्थवाद है यह उत्सर्ग जानो॥ किसी कारण गुरु पतित वा नास्तिकादि हो जाय तो उसे गुरु न माने ऐसा लेख जहां मिले वह इस का अपवाद होगा (१२) इस का मतलब यह है कि विदेश में जाने पर भी अपने देशाचारानुकूल अपने २ वर्ण के कामों को कदापि न छोड़े अर्थात् ऐसा न करें कि विलायत जांय तो साहब बन के ही लौटें ॥

सर्वतीर्थान्युपस्पृश्य सर्वान्देवान्प्रणम्यच ।
जप्त्वातुसर्वसूक्तानि सर्वशास्त्रानुसारतः ॥ ४ ॥
सर्वपापहरंदिव्यं सर्वसंशयनाशनम् ।
चतुर्णामपिवर्णाना-मत्रिःशास्त्रमकल्पयत् ॥ ५ ॥
येचपापकृतोलोके येचान्येधर्मदूषकाः ।
सर्वपापैःप्रमुच्यन्ते श्रुत्वेदंशास्त्रमुत्तमम् ॥ ६ ॥
तस्मादिदंवेदविद्भि-रध्येतव्यंप्रयत्नतः ।
शिष्येभ्यश्चप्रवक्तव्यं सद्वृत्तेभ्यश्चधर्मतः ॥ ७ ॥
अकुलीनेह्यसद्वृत्ते जडेशूद्रेशठेद्विजे ।
एतेष्वेवनदातव्य-मिदंशास्त्रंद्विजोत्तमैः ॥ ८ ॥

भा०-संपूर्ण तीर्थों के जल से अभिषेक सब देवताओं को नमस्कार और संपूर्ण वेद सूक्तों का जप करके सर्वशास्त्रों के अनुसार ॥४॥ सर्व पापों का नाशक उत्तम सब संशयों का दूर करने वाला और चारों वर्णों का हितकारी शास्त्र अत्रि ऋषि ने रचा ॥५॥ जो जगत् में पापों के करने वाले हैं, और जो धर्म में दूषण लगाने वाले हैं वे संपूर्ण इस उत्तम शास्त्र को श्रवण कर सब पापों से छूट जाते हैं ॥ ६ ॥ इस लिये वेदज्ञ पुरुष इस शास्त्र को बड़े प्रयत्न से पढ़ें और सदाचारी शिष्यों को धर्मानुकूल पढ़ावें ॥७॥ श्रेष्ठ विद्वान् ब्राह्मणों को चाहिये कि-अकुलीन दुराचारी-मूर्ख-शूद्र-और शठ ब्राह्मण, इन को न पढ़ावें ॥८॥

विशेष-(४) तीर्थ स्नान देवताओं का पूजन तथा विधिपूर्वक वेद म[illegible] न्त्रों का जप इन कामों को जब तक श्रद्धा के साथ निरन्तर बहुत काल त[illegible] न किया जाय तब तक किसी का अन्तःकरण शुद्ध नहीं होता और [illegible] करण हुए बिना उस के हृदय से निकला उपदेश भी ठीक [illegible] वेदानुकूल नहीं होता इसी से अत्रि जी ने [illegible] पापी लोग उत्तम उपदेश को ठीक ध्यान देकर [illegible] रुद्ध दुराचारों से ग्लानि हो तब सब पापों [illegible] सांप को पिलाया अमृत भी विष [illegible] [illegible] भी हानिकारक [illegible]

वध्योराज्ञासवैशूद्रो जपहोमपरश्चयः ।
ततोराष्ट्रस्यहन्तासौ यथावन्हेश्चवैजलम् ॥१९॥
प्रतिग्रहोऽध्यापनंच तथाऽविक्रेयविक्रयः ।
याज्यंचतुर्भिरप्येतैः क्षत्रविट्पतनंस्मृतम् ॥२०॥
सद्यःपततिमांसेन लाक्षयालवणेनच ।
त्र्यहेणशूद्रोभवति ब्राह्मणःक्षीरविक्रयी ॥२१॥
अव्रताश्चानधीयाना यत्रभैक्ष्यचराद्विजाः ।
तंग्रामंदण्डयेद्राजा चौरभक्तप्रदण्डवत् ॥२२॥
विद्वद्भोज्यमविद्वांसो येपुराष्ट्रेषुभुञ्जते ।

भा०-जो शूद्र वेदोक्त जप और होम में तत्पर है वह राजा से कठोर दण्ड पाने के योग्य है क्योंकि वह जप होम में तत्पर होने के कारण राजा के देश का नाश करने वाला है जैसे अग्नि का जल नाशक है ॥ १९ ॥ दान लेना वेदादि का पढ़ाना, निषिद्ध वस्तु का बेचना, और यज्ञ कराना इन चारों कर्मों के करने से क्षत्रिय और वैश्य का पतित होना कहा गया है ॥२०॥ मांस लाख और लवण इन के बेचने से ब्राह्मण शीघ्र ही पतित होजाता है दूध के बेचने से तीन दिन में शूद्र तुल्य होजाता है ॥२१॥ व्रतों के न करने वाले और बिना पढ़े ब्राह्मण जिस ग्राम में निवास करते हुए भिक्षा मांगते हैं उस ग्राम के लोगों को राजा वह दण्ड दे जो चोरी की वस्तु के भोगने वाले को होता है ॥ २२ ॥ जिन देशों में विद्वानों के भोगने योग्य पदार्थों को मूर्ख भोगते हैं वे

(१९) यदि राजदण्ड का भय न होता तो अब तक पाखाना कमाने के लिये एक भी भंगी न मिलता।क्योंकि मिहतरों को यदि अपने से उत्तम काम मिल सके तो वे कदापि अपने अतिनिकृष्ट काम को नहीं करेंगे (२०) दान लेना वेदादि का पढ़ाना यज्ञ कराना ये खास ब्राह्मण के ही काम हैं अन्य के लिये निषेध है (२३) विद्वानों को उत्तम भोग मिलने से विद्या का आदर है विपरीत करने से अविद्या का आदर होता इस लिये अनावृष्टि आदि अ. निष्ट फल कहते हैं ॥

क्षत्रियस्यापियजनं दानमध्ययनंतपः ।
शस्त्रोपजीवनंभूत रक्षणंचेतिवृत्तयः ॥ १४ ॥
दानमध्ययनंवार्ता यजनंचेतिवैविशः * ।
शूद्रस्यवार्ताशुश्रूषा द्विजानांकारुकर्मच ॥ १५ ॥
तदेतत्कर्माभिहितं संस्थितायत्रवर्णिनः ।
बहुमानमिहप्राप्य प्रयान्तिपरमांगतिम ॥ १६ ॥
येव्यपेताःस्वधर्मात्ते परधर्मेव्यवस्थिताः ।
तेषांशास्तिकरोराजा स्वर्गलोकेमहीयते ॥ १७ ॥
आत्मीयेसंस्थितोधर्मे शूद्रोपिस्वर्गमश्नुते ।
परधर्माभवेत्त्याज्यः सुरूपपरदारवत् ॥ १८ ॥

भा०—यज्ञ करना, दान देना, साङ्गवेद पढ़ना और तप करना, ये क्षत्री के कर्म हैं
और शस्त्र से आजीविका और भूतों की रक्षा ये दो धर्मानुकूल क्षत्रियकीजीविकाहैं
॥१४॥ दान देना, साङ्गवेद पढ़ना, खेती गौओं की रक्षा, व्यवहार, यज्ञ करना, ये
वैश्यके कर्म हैं खेती, गौओंकीरक्षा, व्यवहार, तीनों वर्णों की सेवा, और का-
रीगरी, ये शूद्र के कर्म हैं॥१५॥ जिस कर्म में तत्पर रहने से चारों वर्ण इसलोक
में बड़े मान को प्राप्त होकर परलोक में परमगति को प्राप्त होते हैं सो यह
वर्णकर्म हमने कहा ॥१६॥ जो अपने धर्म को छोड़ के दूसरे के धर्म में तत्पर
होते हैं उन को शिक्षा देने वाला राजा स्वर्गलोक में पूजा को प्राप्त होता है
॥१७॥ अपने धर्म में तत्पर हुआ शूद्र भी स्वर्ग को भोगता है और पराया धर्म इस
प्रकार त्यागने योग्य है कि जैसे श्रेष्ठरूप वाली पराई स्त्री ॥ १८ ॥

(१८) जैसे विष में पैदा हुआ कीड़ा विषसे मरतानहीं किन्तु विष ही उस
का रक्षक होता है। इसी के अनुसार अपने २ बाप दादाओं की परम्परा से
जो २ धर्म जिस वर्ण के अनुसार चला आता है उसी को अपना प्राकृत धर्म
कर्म मानकर मनुष्यों को सेवन करना चाहिये। प्रत्येक मनुष्य का प्रयोजन
सर्वोत्तम सुख स्वर्ग प्राप्त करने का है जो जब शूद्रादि को स्वधर्म के सेवन से
स्वर्ग और पराये उत्तम धर्म से भी नरक होना सिद्ध है तब किसी को भी
भयदायक परधर्म का सेवन न करना चाहिये ॥

* विषार्पणम् ॥

अधोराज्ञास्यैशूद्रो जपहोमपरश्चयः ।
ततोराष्ट्रस्यहन्तासौ यथावन्हेश्चवैजलम् ॥१९॥
प्रतिग्रहोऽध्यापनंच तथाऽविक्रेयविक्रयः ।
याज्यंचतुर्भिरप्येतैः क्षत्रविट्पतनंस्मृतम् ॥२०॥
सद्यःपततिमांसेन लाक्षयालवणेनच ।
त्र्यहेणशूद्रोभवति ब्राह्मणःक्षीरविक्रयी ॥२१॥
अव्रताश्चानधीयाना यत्रभैक्ष्यचराद्विजाः ।
तंग्रामंदण्डयेद्राजा चौरभुक्तप्रदण्डवत् ॥२२॥
विद्वद्भोज्यमविद्वांसो येषुराष्ट्रेषुभुञ्जते ।

॥८-जो शूद्र वेदोक्त जप और होम में तत्पर है वह राजा से कठोर दण्ड पाने योग्य है क्योंकि वह जप होम में तत्पर होने के कारण राजा के देश का नाश करने वाला है जैसे अग्नि का जल नाशक है ॥ १९ ॥ दान लेना वेदादि का पढ़ाना, निषिद्ध वस्तु का बेचना, और यज्ञ कराना इन चारों कर्मों के करने से क्षत्रिय और वैश्यका पतित होना कहा गयाहै ॥२०॥ मांस लाख और लवण इन के बेचने से ब्राह्मण शीघ्र ही पतित होजाता है दूध के बेचने से तीन दिन में शूद्र तुल्य होजाता है ॥२१॥ व्रतों के न करने वाले और विना पढ़े ब्राह्मण जिस ग्राम में निवास करते हुए भिक्षा मांगते हैं उस ग्राम के लोगों को राजा वह दण्ड दे जो चोरी की वस्तु के भोगने वाले को होता है ॥ २२ ॥ जिन देशों में विद्वानों के भोगने योग्य पदार्थों को मूर्ख भोगते हैं वे

(१९) यदि राजदण्ड का भय न होता तो अब तक पाखाना कमाने के लिये एक भी भंगी न मिलता।क्योंकि मिहतरों को यदि अपने से उत्तम काम मिल सके तो वे कदापि अपने अतिनिकृष्ट काम को नहीं करेंगे (२०) दान लेना वेदादि का पढ़ाना यज्ञ कराना ये ब्राह्मण के ही काम हैं अन्य के लिये निषेध है (२२) विद्वानों को उत्त ... से विद्या का आ... है विपरीत करने से ... अनावृष्टि आदि ... निष्ट फल

तेप्यनावृष्टिमिच्छन्ति महद्वाजायतेभयम् ॥२३॥
ब्राह्मणान्वेदविदुषः सर्वशास्त्रविशारदान् ।
तत्रवर्षतिपर्जन्यो यत्रैतान्पूजयेन्नृपः ॥२४॥
त्रयोलोकास्त्रयोवेदा आश्रमाश्चत्रयोऽग्नयः ।
एतेषांरक्षणार्थाय संसृष्टाब्राह्मणाःपुरा ॥२५॥
उभेसंध्येसमाधाय मौनंकुर्वन्तियेद्विजाः ।
दिव्यवर्षसहस्राणि स्वर्गलोकेमहीयते ॥२६॥
यएवंकुरुतेराजा गुणदोषपरीक्षणम् ।
यशःस्वर्गंनृपत्वंच पुनःकोशंसअर्जयेत् ॥२७॥
दुष्टस्यदण्डःसुजनस्यपूजा न्यायेनकोशस्यचसंप्रवृद्धिः ।
अपक्षपातोऽर्थिषुराष्ट्ररक्षा पंचैवयज्ञाःकथितानृपाणाम् ॥२८॥

देश भी वृष्टि के अभाव की इच्छा करते हैं अथवा उन में महान् भय उत्पन्न होता है ॥ २३ ॥
भा०-साङ्गोपाङ्ग वेद को जानने वाले और संपूर्ण शास्त्रों में कुशल ब्राह्मणों की पूजा जिस देश में राजा करता है वहां मेघ ठीक २ बर्षता है ॥ २४ ॥ तीनों लोक तीनों वेद आश्रम और तीनों अग्नि इन की रक्षा के लिये सृष्टि के आरम्भ में ब्राह्मण रचे गये हैं ॥ २५ ॥ जो दोनों सन्ध्याओं के समय एकाग्रचित्त होके मौन हुए जप करते हैं वे द्विज देवताओं के हजार वर्ष तक स्वर्गलोक में पूजा को प्राप्त होते हैं ॥ २६ ॥ जो राजा इस प्रकार गुण दोष की परीक्षा करता है वह यश स्वर्ग, राज्य और कोश का (क्षीण वा नष्ट होने पर फिर) फिर संचय करता है ॥ २७ ॥ ये पांच यज्ञ राजाओं के लिये कहे हैं कि दुष्टों को दण्ड-श्रेष्ठ जन की पूजा, न्याय से कोश का बढ़ाना-मांगने वालों के विषय में पक्षपात का न करना. और अपने देश की रक्षा ॥ २८ ॥
(२४) विद्वान् ब्राह्मणों का ठीक आदर से सत्कार किया जाय तो वे लोग अग्निहोत्रादि वेदोक्त कर्म ठीक २ करें जिस से देवता लोग प्रसन्न होकर ठीक २ समय पर वर्षा करें इसी रीति से त्रिलोकी की रक्षादि हो सकती है।

यत्प्रजापालनेपुण्यं प्राप्नुवंतीह्पार्थिवाः ।
नतुक्रतुसहस्रेण प्राप्नुवंतिद्विजोत्तमाः ॥ २९ ॥
अलाभेदेवखातानाम् ह्रदेषुसरसीषुच ।
उद्धृत्यचतुरःपिण्डान् पारक्येस्नानमाचरेत् ॥३०॥
वसाशुक्रमसृङ्मज्जा मूत्रंविट्कर्णविण्नखाः ।
श्लेष्मास्थिदूषिकास्वेदोद्वादशैतेनृणांमलाः ॥३१॥
षण्णांषण्णांक्रमेणैव शुद्धिरुक्तामनीषिभिः ।
मृद्वारिभिश्चपूर्वेषा-मुत्तरेषांतुवारिणा ॥ ३२ ॥
शौचंमंगलमायास * अनसूयास्पृहादमः ।

भा०-प्रजा के ठीक पालन करने से इस संसार में जिस पुण्यफल को राजा प्राप्त होते हैं—उस पुण्य को हजार यज्ञ करने से भी ब्राह्मण लोग नहीं प्राप्त हो सक्ते ॥ २९ ॥ देवताओं के खोदे तीर्थों (गंगा आदि) के अभाव में पराये कुंड अथवा तालाबों में से मिट्टी के चार पिंड (ढेले) निकाल कर स्नान करै ॥ ३० ॥ वसा-वीर्य-रुधिर-मज्जा-मूत्र-विष्ठा-कानकामैल-नख, कफ-हाड-नेत्रों का मल और पसीना ये बारह मनुष्यों के मल हैं ॥ ३१ ॥ विद्वान् लोगों ने पहिले वसादि छओं की शुद्धि मिट्टी और जल से तथा पिछले छओं की शुद्धि केवल जल से क्रमशः वर्णन की है ॥ ३२ ॥ शुद्ध रहना-मंगलकाम-परिश्रम करना-दूसरे के गुणों में दोषों को न देखना-तृष्णालोभ

(२९) राजा में यदि १८ प्रकार के दोष न हों और ठीक धर्मानुकूल प्रजा की रक्षा करे तो अवश्य वैसा पुण्य होगा परन्तु ब्राह्मण विरक्त जितेन्द्रिय होके योगाभ्यास सहित तप करे तो उसका पुण्य राजा से भी बहुत बड़ा अवश्य होगा (३३) जैसे अग्नि का लक्षण गर्मी जल का लक्षण शीतलता दीपक का लक्षण प्रकाश द्वारा अन्धकार की निवृत्ति होती है । दीप ज्योति न दीखने पर भी प्रकाश के देखने मात्र से दीपक का होना मानने पड़ता है वैसे लक्षण वक्ष्य के शौचादि को देख कर जाति से ब्राह्मण होना प्रत्यक्ष न होने पर भी उस को ब्राह्मण ही मानना चाहिये । क्यों कि उक्त गुण असली ब्राह्मण पन को सिद्ध करते हैं ॥ * चिन्त्यमेतत् ।

लक्षणानिचविप्रस्य तथादानंदयापिच ॥ ३३ ॥
नगुणान्गुणिनोहन्ति स्तौतिचान्यान्गुणानपि ।
नहसेच्चान्यदोषांश्च सानसूयाप्रकीर्तिता ॥३४॥
अभक्ष्यपरिहारश्च संसर्गश्चाप्यनिन्दितैः ।
आचारेषुव्यवस्थानं शौचमित्यभिधीयते ॥ ३५ ॥
प्रशस्ताचरणंनित्यमप्रशस्तविवर्जनम् ।
एतद्धिमंगलंप्रोक्त मृषिभिर्धर्मवादिभिः ॥ ३६ ॥
शरीरंपीड्यतेयेन शुभेनह्यशुभेनवा ।
अत्यन्तंतन्नकुर्वीत अनायासःसउच्यते ॥ ३७ ॥
यथोत्पन्नेनकर्तव्यः संतोषःसर्ववस्तुषु ।
नस्पृहेत्परदारेषु साऽस्पृहापरिकीर्तिता ॥ ३८ ॥

न करना-इन्द्रियों को विषयों से रोकना-दानदेना-और दयाकरना ये ब्रा
ह्मणों के लक्षण हैं इन का विशेष व्याख्यान ग्रन्थकार नेआगे स्वयं किया है॥

भा०-गुण वाले के उत्तम गुणों को न छिपावे किन्तु अन्य के गुणों की स्तु
ति करे और अन्य के दोषों की हँसी न करे उसे अनसूया कहते हैं ॥ ३४ ॥ अ
भक्ष्य वस्तु का त्याग और सज्जनों का संग-और उत्तम आचरणों से न डिग
ना इसे शौच कहते हैं ॥३५॥ प्रतिदिन उत्तम आचरण का करना और निंदि
त आचरण को त्याग देना धर्म को कहने वाले ऋषियों ने इसे मंगल कहा है
॥ ३६ ॥ जिस शुभ या अशुभ कर्म से शरीर विशेष पीड़ित हो उस को अधिक
न करना उसे अनायास कहते हैं ॥ ३७ ॥ धर्मानुकूल परिश्रम से जो कुछ अन्न
धनादि प्राप्त हो उसी में संतोष करना और पराई स्त्रियों में भोग की इच्छा
न करना उस को अस्पृहा कहते हैं ॥ ३८ ॥

(३७) शरीर पीड़ा से मतलब यह है कि शरीर को ऐसी बाधा न प
हुंचे जिस से नष्ट हो सके अर्थात् अच्छे काम में भी अधिक श्रम न करे । शरीर बना
रहा तो इसी जन्म में अधिक पुण्य कर सकेगा । इस से तपादि में भी उत
ना कष्ट सहे जिस से शरीर को धक्का न लगे । अर्थात् क्रमशः जप तपादि को
बढ़ावे (आत्मानं सततं रक्षेत्) अपने जीवन की रक्षा निरन्तर करे ॥

बाह्यमाध्यात्मिकंवापि दुःखमुत्पाद्यतेपरैः ।
नकुप्यतिनचाहन्ति दमइत्यभिधीयते ॥ ३९ ॥
अहन्यहनिदातव्य-मदीनेनान्तरात्मना ।
स्तोकादपिप्रयत्नेन दानमित्यभिधीयते ॥ ४० ॥
परेस्मिन्बन्धुवर्गेवा मित्रेद्वेष्येरिपौतथा ।
आत्मवद्वर्तितव्यंहि दयैषापरिकीर्तिता ॥ ४१ ॥
यश्चैतैर्लक्षणैर्युक्तो गृहस्थोपिभवेद्द्विजः ।
सगच्छतिपरंस्थानं जायतेनेहवैपुनः ॥ ४२ ॥
इष्टापूर्तंचकर्तव्यं ब्राह्मणेनैवयत्नतः ।
इष्टेनलभतेस्वर्गं पूर्तेमोक्षोविधीयते ॥ ४३ ॥
अग्निहोत्रंतपःसत्यं वेदानांचैवपालनम् ।
आतिथ्यंवैश्वदेवश्च इष्टमित्यभिधीयते ॥ ४४ ॥
वापीकूपतडागादि देवतायतनानिच ।
अन्नप्रदानमारामः पूर्तमित्यभिधीयते ॥ ४५ ॥

भा०-अन्य लोग भीतरी वा बाहिरी कैसा ही दुःख पहुंचावें तौभी उ-
न पर न क्रोध करे और न उन को तंग करे इस को दम कहते हैं ॥ ३९ ॥
यदि अपने पास थोड़ा ही निर्वाह मात्र अन्न धनादि हो तौभी उसी में से
कुछ प्रसन्न चित्त से नित्य २ किसी को दिया करे इस को दान कहते हैं ॥४०॥
कुटुंबी में-मित्र में द्वेष करने योग्य और शत्रु इन सब में अपने आत्मा
के समान जो वर्त्ताव करना है उसे दया कहते हैं ॥ ४१ ॥ जो गृहस्थी भी
द्विज इन लक्षणों से युक्त होता है वह उत्तम स्थान ब्रह्मलोक वा मोक्ष को
प्राप्त हो जाता है और फिर इस लोक में उत्पन्न नहीं होता ॥४२॥ इष्ट और
पूर्त दो कर्म करने में ब्राह्मण ही को यत्न करना उचित है इष्ट से स्वर्ग मिलता
और पूर्त से मोक्ष होता है ॥ ४३ ॥ अग्निहोत्र-तप सत्यभाषण-वेदों की
आज्ञा-अतिथिसत्कार और बलिवैश्वदेव करना इन्हें इष्ट कहते हैं ॥४४॥ बावली
कूप, तालाब-देवताओं के मंदिर बनवाना-अन्न का दान करना आराम (बाग)
लगाना इन्हें पूर्त कहते हैं ॥ ४५ ॥

इष्टापूर्तेद्विजातीनां सामान्येधर्मसाधने ।
अधिकाराभवेच्छूद्रः पूर्तधर्मेनवैदिके ॥ ४६ ॥
यमान्सेवेतसततं ननित्यंनियमान्बुधः ।
यमान्पतत्यकुर्वाणो नियमान्केवलान्भजन् ॥४७॥
आनृशंस्यंक्षमासत्य–महिंसादानमार्जवम् ।
प्रीतिःप्रसादोमाधुर्य्य–मार्दवंचयमादश ॥ ४८ ॥
शौचमिज्यातपोदानं स्वाध्यायोपस्थनिग्रहौ ।
व्रतमौनोपवासञ्च स्नानंचनियमादश ॥ ४९ ॥
प्रतिनिधिंकुशमयं तीर्थवारिषुमज्जति ।
यमुद्दिश्यनिमज्जेत अष्टभागंलभेतसः ॥ ५० ॥
मातरंपितरंवापि भ्रातरंसुहृदंगुरुम् ।

भावार्थ—इष्ट औरपूर्त ये दोनों द्विजाति (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तीनों के सामान्य धर्म हैं और शूद्र पूर्त धर्म का अधिकारी है परन्तु वेदोक्त धर्म का अधिकारी नहीं है ॥ ४६ ॥ बुद्धिमान् मनुष्यको चाहिये कि यमों का निरंतर सेवन करे और केवल नियमों का नित्य सेवन न करे क्योंकि केवल नियमों का सेवन करता और यमों को न करता हुआ पतित होता है । तात्पर्य यहहै कि यमोंके साथ नियमों का भी सेवन करसके तब तो बहुत ही अच्छा है । पर ऐसा न होतो केवल यमों का सेवन नित्य नियम से करे क्यों कि केवल नियमों के सेवन करने और यमों का सेवन न करने इन दोनों द- शा में मनुष्य पतित हो जाता है ॥ ४७ ॥ अक्रूरता–क्षमा–सत्य–अहिंसा– दान–नम्रता- प्रीति, प्रसन्नता–मधुरवाणी–कोमलस्वभाव ये दश यम हैं ॥४८॥ शौच–यज्ञ–तप–दान–वेद का पढ़ना–उपस्थ इन्द्रिय को रोकना व्रत–मौन– उपवास–स्नान ये दश नियम हैं ॥ ४९ ॥ जिस मनुष्य की कुशाकी प्रतिनिधि (प्रतिमा) को नमी का उद्देश लेकर तीर्थ के जलों में स्नान करावे तो उस मनुष्य को स्नान के फल का आठवां भाग प्राप्त होता है ॥ ५० ॥ माता– पिता–भ्राता मित्र और गुरु इन में से जिस के उद्देश (नाम) से पुत्रादि

यमुद्दिश्यनिमज्जेत द्वादशांशफलंभवेत् ॥ ५१ ॥
अपुत्रेणैवकर्तव्यः पुत्रप्रतिनिधिस्सदा ।
पिण्डोदकक्रियाहेतो—र्यस्मात्तस्मात्प्रयत्नतः ॥५२॥
पितापुत्रस्यजातस्य पश्येच्चेज्जीवतोमुखम् ।
ऋणमस्मिन्संनयति अमृतत्वंचगच्छति ॥ ५३ ॥
जातमात्रेणपुत्रेण पितॄणामनृणीपिता ।
तदह्निशुद्धिमाप्नोति नरकात्त्रायतेहिसः ॥ ५४ ॥
जायन्तेबहवःपुत्रा यद्येकोपिगयांव्रजेत् ।
यजतेचाश्वमेधंच नीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥ ५५ ॥

गोता लगावे उसको स्नान के फल का बारहवां भाग मिलता है ॥ ५१ ॥ पुत्र हीन पुरुष को पिण्ड और जलदान के लिये बड़े यत्न से जिस किसी के पुत्र को प्रतिनिधि (दत्तक पुत्र) करना चाहिये ॥ ५२ ॥ जो पैदा हुये जीवित पुत्र के मुख को पिता देख लेवे तो पुत्र को ऋण सौंप कर पिता पितृ-ऋण से छूट जाता है और मोक्ष को प्राप्त हो जाता है ॥ ५३ ॥ पुत्र के उत्पन्न होने मात्र से ही पिता पितरों का अनृणी हो जाता है और उसी दिन शुद्ध हो जाता है क्योंकि वह पुत्र पिता की नरक से रक्षा करता है ॥ ५४ ॥ उत्पन्न हुये बहुत पुत्रों में से यदि एक पुत्र भी गया को को-जाय अथवा नीले बैल से वृषोत्सर्ग करै वह मानों अश्वमेध यज्ञ करता है ॥ ५५ ॥

वि०ः—(५२) श्राद्ध तर्पण का सिल सिला चला जाना शास्त्रकारों के सिद्धान्तानुसार ऐसा ही आवश्यक है जैसा कि मनुष्य के लिये नित्य २ अन्न जल अपेक्षित है (५३ । ५४) पुत् नाम नरक से पिता को त्राण (रक्षा) करने वाला होने से ही मनु जी ने उस का सार्थक नाम पुत्र रक्खा है। जैसे राजकुमार के उत्पन्न होते ही भविष्यत् में राजकार्य चलाने की आशा सब को हो जाती राज कार्यों का भार रूप ऋण उसी दिन से उस पर आजाता है वैसा यहां भी जानो। (५५) अच्छे काम भी किसी खास स्थान में जैसे उत्तम होते हैं वैसे सर्वत्र नहीं हो सक्ते जैसे संस्कृत के सार्वभौम पण्डित काशी में ही होते अन्यत्र पढ़ने से नहीं। बेरिस्टरी आदि पास लंदन में ही होता अन्यत्र नहीं। वैसे ही श्राद्ध का सबसे उत्तम स्थान गया है [illegible] स्मृति मत जानो।

कांक्षन्तिपितरःसर्वे नरकान्तरभीरवः ।
गयांयास्यतियःपुत्र-स्सनस्त्राताभविष्यति ॥ ५६ ॥
फल्गुतीर्थेनरःस्नात्वा दृष्ट्वादेवंगदाधरम् ।
गयाशीर्षंपदाक्रम्य मुच्यतेब्रह्महत्यया ॥ ५७ ॥
महानदीमुपस्पृश्य तर्पयेत्पितृदेवताः ।
अक्षयान्लभतेलोकान् कुलंचैवसमुद्धरेत् ॥ ५८ ॥
शंकास्थानेसमुत्पन्ने भक्ष्यभोज्यविवर्जिते ।
आहारशुद्धिंवक्ष्यामि तन्मेनिगदतःशृणु ॥ ५९ ॥
अक्षारंलवणंरौक्षं पिवेद्ब्राह्मींसुवर्चलाम् ।
त्रिरात्रंशंखपुष्पींवा ब्राह्मणःपयसासह ॥ ६० ॥
मद्यभांडेद्विजःकश्चि-दज्ञानात्पिवतेजलम् ।
प्रायश्चित्तंकथंतस्य मुच्यतेकेनकर्मणा ॥ ६१ ॥
पालाशविल्वपत्राणि कुशान्पद्मान्युदुम्बरम् ।

भा०-अन्य २ नरकों से डरते हुये पितर यह चाहते हैं कि जो पुत्र गया को जायगा वह हमारा रक्षक होगा ॥ ५६ ॥ फल्गुतीर्थ में स्नान और गदाधर (जोगया में है) देवता के दर्शन करके और गयासुर के शिर पर चरण रख कर ब्रह्महत्या से भी मनुष्य छूट जाता है ॥५७॥ जो पुरुष महानदी में स्नान करके पितर और देवताओं का तर्पण करताहै वह अक्षय लोकों को प्राप्त होता और अपने कुल का उद्धार करता है ॥५८॥ जहां भक्ष्याभक्ष्य का विचार नहीं ऐसे देश में शंका उत्पन्न हो सकती है इस से भोजन की शुद्धि कहते हैं उसको कहते हुए हम से सुनो ॥५९॥ अभक्ष्य भक्षण कर लेनेकी शंका हो गई हो तो खार जिस में न हो ऐसे अन्न, लवण, रूखा अन्न, कांति बढ़ाने वाली ब्राह्मी ओषधि अथवा शंख पुष्पी ओषधि को दूध के संग तीन दिन तक पीवे ॥ ६० ॥ मदिरा के पात्र में यदि कोई द्विज अज्ञान से जलपान करले तो उस का कैसे प्रायश्चित्त हो और वह किस कर्म के करने से दोष से छूटे? ॥६१॥ उ०:-ढाक तथा बेल के पत्ते कुशा, कमल और गूलर, इन के क्राथ के जल को तीन दिन तक पीने से शुद्

क्षाथयित्वापिवेदाप–स्त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ॥ ६२ ॥
सायंप्रातस्तुयःसन्ध्यां प्रमादाद्विक्रमेत्सकृत् ।
गायत्र्यास्तुसहस्रंहि जपेत्स्नात्वासमाहितः ॥ ६३ ॥
रोगाक्रांतोथवाऽस्नातः स्थितःस्नानजपाद्बहिः ॥
ब्रह्मकूर्चंचरेद्भक्त्या दानंदत्वाविशुद्ध्यति ॥ ६४ ॥
गवांशृंगोदकेस्नात्वा महानद्युपसंगमे ।
समुद्रदर्शनेवापि व्यालदष्टःशुचिर्भवेत् ॥ ६५ ॥
वृकश्वानशृगालैस्तु यदिदष्टस्तुब्राह्मणः ।
हिरण्योदकसंमिश्रं घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ६६ ॥
ब्राह्मणीतुशुनीदष्टा जंबुकेनवृकेणवा ।
उदितंग्रहनक्षत्रं दृष्ट्वासद्यःशुचिर्भवेत् ॥ ६७ ॥
सव्रतस्तुशुनादष्ट–स्त्रिरात्रमुपवासयेत् ।
सघृतंपावकंप्राश्य व्रतशेषंसमापयेत् ॥ ६८ ॥

जाता है॥६२॥सायं वा प्रातःकाल यदि प्रमाद से संध्योपासनको जो त्याग दें तो स्नान कर सावधान होके एक सहस्र गायत्री का जपकरे।६३॥ किसी रोग के कारण न जो स्नान न करसके और स्नान करके जो जपन कर सके वह ब्रह्मकूर्च भक्ति से ब्रह्मकूर्च कर और दान देकर शुद्ध होता है॥ ६४ ॥ जिस मनुष्य को सांपने काटा हो वह गौओंके सींगों के जल से अथवा बड़ी नदी, गंगा यमुना आदि के संगम में स्नान करके अथवा समुद्र के दर्शन से शुद्ध होता है॥ ६५ ॥ भेड़िया– कुत्ता और गीदड़ ने जिस ब्राह्मण को काटा हो वह सोने के जल से मिले घी को खाकर शुद्ध होता है॥ ६६ ॥ जिस ब्राह्मणी को कुत्ते, गीदड़ी अथवा भेड़िया काटे तो वह उदय हुए ग्रह नक्षत्रों के दर्शन करने से शीघ्र ही शुद्ध हो जाती है॥ ६७ ॥ ब्रह्मचर्यादि व्रतवाले [illegible] काटले है तीन दिन तक उपवास करे फिर घृत सहित [illegible] को खाकर शेष व्रत को समाप्त करे॥ ६८

मोहात्प्रमादात्संलोभा–द्व्रतभंगंतुकारयेत् ।
त्रिरात्रेणैवशुद्ध्येत पुनरेवव्रतीभवेत ॥ ६९ ॥
ब्राह्मणानांयदुच्छिष्ट–मश्नात्यज्ञानतोद्विजः ।
दिनद्वयंतुगायत्र्या जपंकृत्वाविशुद्ध्यति ॥ ७० ॥
क्षत्रियान्नंयदुच्छिष्ट–मश्नात्यज्ञानतोद्विजः ।
त्रिरात्रेणभवेच्छुद्धि–र्यथाक्षत्रेतथाविशि ॥ ७१ ॥
अभोज्यान्नंतुभुक्त्वान्नं स्त्रीशूद्रोच्छिष्टमेववा ।
जग्ध्वामांसंसमक्षंच सप्तरात्रंयवान्पिबेत् ॥ ७२ ॥
असंस्पृष्टेनसंस्पृष्टः स्नानंतेनविधीयते ।
तस्यचोच्छिष्टमश्नीया–त्षण्मासान्कृच्छ्रमाचरेत्॥७३॥
अज्ञानात्प्राश्यविण्मूत्रं सुरासंस्पृष्टमेववा ।
पुनःसंस्कारमर्हंति त्रयोवर्णाद्विजातयः ॥ ७४ ॥

भा०:–मोह प्रमाद अथवा लोभ से जो व्रत को बिगाड़ दे तो वह तीन दिन उपवास कर शुद्ध होता है और फिर व्रत वाला हो जाता है ॥ ६९ ॥ ब्राह्मण अज्ञान से ब्राह्मणों के उच्छिष्ट को खाले तो दो दिन तक गायत्री का जप कर के शुद्ध होता है ॥ ७० ॥ क्षत्रिय अथवा वैश्य के उच्छिष्ट को ब्राह्मण अज्ञान से भक्षण करले तो तीन दिन गायत्री के जप से शुद्ध होता है ॥ ७१ ॥ भक्षण के अयोग्य अन्न को अथवा स्त्री और शूद्र के उच्छिष्ट को अथवा प्रत्यक्ष में मांस को खाकर ब्राह्मण सात दिन तक एक वार जौ सत्तू पीवे ॥७२॥ स्पर्श करने के अयोग्य चाण्डालादि का जो मनुष्य स्पर्श करे तो वह स्नान करने से ही शुद्ध होजाता है और उस के झूठे अन्न को खाय तो छः महीने तक कृच्छ्र व्रत करे ॥७३॥ अज्ञान से विष्ठा मूत्र अथवा मदिरा मिली में मिली हो ऐसी वस्तु के खाने से तीनों (द्विजाति) वर्ण फिर संस्कार के योग्य होते हैं ॥ ७४ ॥

विशे:–(७४) उन २ प्रायश्चित्तों से उस २ अनिष्ट की शुद्धि ऐसे ही जानो जैसे कि उस २ औषधि से उस २ रोग की निवृत्ति होती है ॥

वपनंमेखलादंडं भैक्षचर्याव्रतानिच ।
निवर्ततेद्विजातीनां पुनःसंस्कारकर्मणि ॥ ७५ ॥
गृहशुद्धिंप्रवक्ष्यामि अंतःस्थशवदूषिताम् ।
प्रयोज्यंमृन्मयंभांडं सिद्धमन्नंतथैवच ॥ ७६ ॥
गृहान्निष्क्रम्यतत्सर्वं गोमयेनोपलेपयेत् ।
गोमयेनोपलिप्याथ छागेनाघ्रापयेत्पुनः ॥ ७७ ॥
ब्राह्मैर्मंत्रैश्चपूतंतु हिरण्यकुशवारिभिः ।
तेनैवाभ्युक्ष्यतद्वेश्म शुद्ध्यतेनात्रसंशयः ॥७८॥
राज्ञाऽन्यैःश्वपचैर्वापि बलाद्विचलितोद्विजः ।
पुनःकुर्वीतसंस्कारं पश्चात्कृच्छ्रत्रयंचरेत् ॥ ७९ ॥
शुनाचैवतुसंस्पृष्ट-स्तस्यस्नानंविधीयते ।
तदुच्छिष्टंतुसंप्राश्य यत्नेनकृच्छ्रमाचरेत् ॥ ८० ॥
अतःपरंप्रवक्ष्यामि सूतकस्यविनिर्णयम् ।

मुंडन-मेखला तथा-दंड का धारण-भिक्षा का मांगना-और व्रत ये सब काम (जो यज्ञोपवीत के समय होते हैं) पुनः संस्कार में नहीं होते किन्तु निवृत्त होजाते हैं ॥ ७५ ॥ भीतर पड़ा है शव (मुर्दा) जिस में ऐसे घर की शुद्धि कहते हैं मिट्टी के पात्रों को बर्ते और सिद्ध (अन्य ने बनाये) अन्न को भक्षण करे ॥७६॥ घर से बाहर मुर्दे को निकाल कर गोबर से घर को लिपावे और गोबर से लिपा कर बकरा से सुंघावे (बकरे का मुख शुद्ध होता है) ॥ ७७ ॥ जिनका देवता ब्रह्मा है ऐसे वेद मंत्रों के पाठ से पवित्र किये घर को धोने और कुशाओं के जल द्वारा वेद मन्त्रों से छिड़कने से शुद्ध होता है इस में संशय नहीं है ॥ ७८ ॥ राजा या अन्य चांडालादि ने यदि द्विज को बलात्कार धर्म से चलायमान किया हो तो वह द्विज फिर संस्कार करे और पीछे तीन कृच्छ्रव्रत करै ॥ ७९ ॥ जिस को कुत्ते ने छूलिया हो वह स्नान करे और कुत्ते के झूट को खाकर यत्न से कृच्छ्र व्रत करे ॥ ८० ॥ इस से आगे सूतक का निर्णय

प्रायश्चित्तंपुनश्चैव कथयिष्याम्यतःपरम् ।
एकाहात्शुद्ध्यतेविप्रो योग्निवेदसमन्वितः
त्र्यहात्केवलवेदस्तु निर्गुणोदशभिर्दिनैः ॥ ८
व्रतिनःशास्त्रपूतस्य आहिताग्नेस्तथैवच ।
राज्ञांतुसूतकंनास्ति यस्यचेच्छंतिब्राह्मणाः ॥
ब्राह्मणोदशरात्रेण द्वादशाहेनभूमिपः ।
वैश्यःपञ्चदशाहेन शूद्रोमासेनशुद्ध्यति ॥ ८
सपिंडानांतुसर्वेषां गोत्रजःसप्तपौरुषः ।
पिंडांश्चोदकदानंच शावाशौचंतथानुगम् ॥ ८
चतुर्थेदशरात्रंस्या-त्षडहःपंचमेतथा ।
षष्ठेचैवत्रिरात्रंस्यात् सप्तमेत्र्यहमेववा ॥ ८६ ॥
मृत्सूतकेतुदासीनां पत्नीनांचानुलोमिनाम् ।
स्वामितुल्यंभवेच्छौचं मृतेभर्तरियौनिकम् ॥ ८७ ॥

कहते हैं और इस के आगे प्रायश्चित्त (पाप की शुद्धि) कहेंगे ॥ ८१
ब्राह्मण अग्निहोत्री और वेदपाठी भी हो वह एक दिन में शुद्ध होता
केवल वेदपाठी ही हो वह तीन दिन में और (निर्गुण) जो न अग्नि
हो और न वेदपाठी हो वह ब्राह्मण दश दिन में शुद्ध होता है ॥ ८
व्रतवाला हो वा शास्त्र के अनुसार पवित्र हो अथवा जो अग्निहोत्र
हो और राजा को सूतक नहीं लगता और जिन के सूतक को ब्राह्मण
नाहीं उस को भी सूतक नहीं लगता ।८३॥ ब्राह्मण दश दिन में क्षत्रिय बा
दिन में वैश्य पंद्रह दिन में और शूद्र एक महीने में शुद्ध हो जाता है ॥
सब सपिंडों में सात पीढ़ी पर्यंन्त गोत्रज होता है उस को पिंडों के
का जल दान का और सब के आशौच का अधिकार है ॥ ८५ ॥ चौथी प
तक दश दिन और पांचवीं पीढ़ी में छदिन, और छटी पीढ़ी में तीन
और सातवीं में तीन दिन का आशौच होता है ॥८६॥ मरे के सूतक में दा
और अनुलोम(पति से नीचे वर्ण की)स्त्रियोंको पतिके तुल्य शौच होताहै
पति के मरने पर अपनी योनि (जाति के अनुसार) का शौच होता

शवस्पृष्टस्तृतीयेतु सचैलंस्नानमाचरेत् ।
चतुर्थेसप्तभिक्षंस्या-देषशावविधिःस्मृतः ॥ ८८ ॥
एकत्रसंस्कृतानांतु मातॄणामेकभोजिनाम् ।
स्वामितुल्यंभवेच्छौचं विभक्तानांपृथक्पृथक् ॥८९॥
उष्ट्रीक्षीरमवीक्षीरं पक्वान्नंमृतसूतके ।
पाचकान्नंनवश्राद्धं भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥ ९० ॥
सूतकान्नमधर्माय यस्तुग्रश्नातिमानवः ।
त्रिरात्रमुपवासंस्या-देकरात्रंजलेवसेत् ॥ ९१ ॥
महायज्ञविधानंतु नकुर्यान्मृतजन्मनि ।
होमंतत्रप्रकुर्वीत शुष्कान्नेनफलेनवा ॥ ९२ ॥
वालस्त्वन्तर्दशाहेतु पंचत्वंयदिगच्छति ।

जिस तीसरी पीढ़ी के मनुष्य ने शव का स्पर्श किया हो वह सचैल [स्ना]न करे और चौथी पीढ़ी का मनुष्य सात घर की भिक्षा का भक्षण करे-[यह] शव (मुर्दे) के सूतक की विधि शास्त्र में कही है ॥ ८८ ॥ एक पुरुष के [सा]थ जिन का विवाह संस्कार हुआ और जो एक चौके में नित्य भोजन [कर]ती हों ऐसी माताओं को पति की जाति के समान शौच होता है और [जो] पृथक् २ रहती हों तो अपनी २ जाति का शौच होता है ॥ ८९ ॥ [ऊँट]नी और भेड़ का दूध तथा मृतसूतक में पक्वान्न और रसोइया का अन्न [औ]र नवक श्राद्ध जो मृतक के निमित्त ग्यारहवें दिन होता है इन को खाकर [चा]न्द्रायण व्रत करे ॥९०॥ जो मनुष्य सूतक का अन्न खाता है वह तीन दिन [उप]वास करे और एक दिन रात जल में रहे क्योंकि मरण वा जन्म सम्बन्धी [दो]नों प्रकार के सूतक वाले का अन्न शुद्धि से पहिले अधर्म का निमित्त होता [है] ॥ ९१ ॥ मृतक और जन्म के सूतक में पञ्चमहायज्ञ न करे किन्तु उस समय [शुष्]क अन्न अथवा फल से होम मात्र करे ॥ ९२ ॥ जो जन्मा बालक दश दिन [के] अन्तर्गत ही मृत्यु को प्राप्त हो जावे तो शीघ्र ही शुद्धि होजाती है मरण

सद्यएवविशुद्धिःस्या–न्नमेतंनैवसूतकम्

कृतचूडेप्रकुर्वीत उदकंपिंडमेवच ।
स्वधाकारंप्रकुर्वीत नामोच्चारणमेवच ।

ब्रह्मचारीयतिश्चैव मन्त्रेपूर्वंकृतेतथा ।
यज्ञेविवाहकालेच सद्यःशौचंविधीयते ॥९

विवाहोत्सवयज्ञेषु अन्तरामृतसूतके ।
पूर्वसंकल्पितार्थस्य नदोषश्चात्रिरब्रवीत् ॥

मृतसंजननोद्धं तु सूतकादौविधीयते ।
स्पर्शनाचमनाच्छुद्धिः सूतिकाञ्चेन्नसंस्पृशेत्

पंचमेहनिविज्ञेयं संस्पर्शं क्षत्रियस्यतु ।
सप्तमेहनिवैश्यस्य विज्ञेयंस्पर्शनंबुधैः ॥९८॥
दशमेहनिशूद्रस्य कर्तव्यंस्पर्शनंबुधैः ।

और जन्म के दोनों सूतक नहीं लगते अर्थात् दश आदि दिन में शु
नियम वहां नहीं रहेगा ॥ ९३ ॥ जो मुंडन करने के पीछे बालक का
होवे तो पिंड और जल का दान तथा स्वधाकार एवं नाम का उ
करें ॥ ९४ ॥ ब्रह्मचारी–संन्यासी और सूतक से पूर्व मंत्र के
का अनुष्ठान प्रारंभ करने वाले की तथा यज्ञ और विवाह के समय
उसी समय शुद्धि होजाती है ॥ ९५ ॥ विवाह–उत्सव और यज्ञ में जो म
का या जन्म का सूतक होजाय तो पूर्व से संकल्प वस्तु के लेने वा खाने आ
में दोष नहीं यह अत्रि जी ने कहा है ॥९६॥ यदि मरा हुआ बालक जन्मे त
सूतक के आरंभ में ही जल का स्पर्श तथा आचमन करने से शुद्धि हो जाती
है परन्तु सूतिका का स्पर्श न करे तो ॥ ९७ ॥ दोनों प्रकार के सूतक में
पांचवें दिन क्षत्रिय का और सातवें दिन वैश्य का स्पर्श
ना चाहिये ॥ ९८ ॥ दशवें दिन

मासेनैवात्मशुद्धिःस्यात् सूतकेमृतकेतथा ॥९९॥
व्याधितस्यकदर्यस्य ऋणग्रस्तस्यसर्वदा ।
क्रियाहीनस्यमूर्खस्य स्त्रीजितस्यविशेपतः ॥१००॥
व्यसनासक्तवित्तस्य पराधीनस्यनित्यशः ।
श्राद्धत्यागविहीनस्य भस्मान्तंसूतकंभवेत् ॥१०१॥
द्वेकृच्छ्रेपरिवित्तेस्तु कन्यायाःकृच्छ्रमेवच ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रंमातुःस्यात्पितुःसांतपनंकृतम् ॥१०२॥
कुब्जवामनपण्ढेषु गद्गदेषुजडेषुच ।
जात्यन्धेवधिरेमूके नदोपःपरिवेदने ॥१०३॥
क्लीवेदेशान्तरस्थेच पतितेव्रजितेऽपिवा ।
योगशास्त्राभियुक्तेच नदोपःपरिवेदने ॥१०४॥

और जन्म दोनों प्रकार के सूतक में एक महीने में अपनी (शूद्र की) शुद्धि होती है ॥ ९९ ॥ रोगी–कृपण जो सदा ऋणी रहै–क्रिया से हीन–मूर्ख विशेष कर स्त्री ने जिसे जीता हो अर्थात् सदा स्त्री के आधीन जो रहे ॥१००॥ जुआ आदि व्यसनों में जिस का धनादि लगा हो और जो नित्य पराधीन हो–जो कभी भी श्राद्ध के भोजन को न त्यागता हो, इतने मनुष्यों को सूतक के भस्म करने तक सूतक रहता है अर्थात इन को जीवन पर्यन्त सदा ही सूतक लगा रहता है ॥ १०१ ॥ परिवित्ति (जिस ने बड़े भाई के विवाह से पहले अपना विवाह किया हो) को दो कृच्छ्र व्रत कन्या को एक कृच्छ्र, और कृच्छ्र तथा अतिकृच्छ्र कन्या की माता को, और पिता को सांतपन कृच्छ्र करना चाहिये ॥ १०२ ॥ कुबड़ा वामन (बौना) षंढ (नपुंसक) तोतला, वा जन्म–जन्म से अंधा, बहरा गूंगा–ऐसे बड़े भाइयों से पहिले छोटा भाई विवाह करे तो कुछ दोष नहीं है ॥ १०३ ॥ नपुंसक, दूर परदेश में रहता हो, पतित, संन्यासी–योगशास्त्र में तत्पर इनके भी परिवेदन में दोष नहीं है १०४

पितापितामहोयस्य अग्रजोवापिकस्यचित् ।
अग्निहोत्राधिकार्यस्ति नदोषःपरिवेदने ॥१०५॥
भार्यामरणपक्षेवा देशान्तरगतेपिवा ।
अधिकारीभवेत्पुत्र–स्तथापातकसंयुगे ॥ १०६ ॥
ज्येष्ठोभ्रातायदानष्टो नित्यंरोगसमन्वितः ।
अनुज्ञातस्तुकुर्वीत शंखस्यवचनंयथा ॥ १०७ ॥
नाग्नयःपरिविन्दन्ति नवेदानतपांसिच ।
नचश्राद्धंकनिष्ठोवै विनाचैवाभ्यनुज्ञया ॥ १०८ ॥
तस्माद्धर्मंसदाकुर्यात्–श्रुतिस्मृत्युदितंचयत् ।
नित्यंनैमित्तिकंकाम्यं यच्चस्वर्गस्यसाधनम् ॥१०९॥
एकैकंवर्द्धयेन्नित्यं शुक्लेकृष्णेचह्रासयेत् ।
अमावास्यांनभुञ्जीतएषचांद्रायणोविधिः ॥ ११० ॥

जिस का पिता, पितामह या बड़ा भाई अग्निहोत्र का अधिकारी हो उस को बड़े भाई से पूर्व विवाह करने में दोष नहीं है ॥ १०५ ॥ पिता की स्त्री या पुत्र की माता के मरने पर, पिता के परदेश में जाने पर अथवा पिता को पातक लगने पर पिता के स्थान पर पुत्र अग्निहोत्र आदि कर्मों का अधिकारी होता है ॥१०६॥ यदि बड़ा भाई खोगया हो यद्वा सदा रोगी रहता हो तो उस की आज्ञा से छोटा भाई शंख ऋषि के वचनके अनुसार विवाहकरके अग्निहोत्रलेलेवे ॥१०७॥ छोटे भाई ज्येष्ठ भ्राता की आज्ञा के बिना न अग्निहोत्र कर सकते, न वेद पढ़ सकते, न तप करसकते, और न श्राद्ध कर सकते हैं ॥ १०८ ॥ अतएव वेद और स्मृतियों में कहे हुए नित्य (संध्या आदि) नैमित्तिक (जात कर्म आदि) काम्य (पुत्रेष्टि आदि) कर्म जो स्वर्ग का साधन (दान आदि) रूप धर्म है उसे सदा करे ॥ १०९ ॥ शुक्ल पक्ष में एक२ ग्रास बढ़ावे और कृष्णपक्ष में एक २ ग्रास घटावे एवं अमावास्या को भोजन सर्वथा न करे यह चांद्रायण व्रत की विधि है ॥ ११० ॥

एकैकंग्रासमश्नीयात् त्र्यहानित्रीणिपूर्ववत् ।
त्र्यहंपरंचनाश्नीया-दतिकृच्छ्रं तदुच्यते ॥ १११ ॥
इत्येतत्कथितंपूर्वै-र्महापातकनाशनम् ।
वेदाभ्यासरतंक्षान्तं महायज्ञक्रियापरम् ॥ ११२ ॥
नस्पृशन्तीहपापानि महापातकजान्यपि ।
वायुभक्षोदिवातिष्ठे द्रात्रींनीत्वाप्सुसूर्यदृक् ॥११३॥
जप्त्वासहस्रंगायत्र्याः शुद्धिर्ब्रह्मवधाहृते ।
पद्मोदुंबरविल्वाश्च कुशाश्वत्थपलाशकाः ॥ ११४ ॥
एतेषामुदकंपीत्वा पर्णकृच्छ्रं तदुच्यते ।
पंचगव्यंचगोक्षीरंदधिमूत्रंशकृद्घृतम् ॥ ११५ ॥
जग्ध्वापरेन्ह्युपवसे-त्कृच्छ्रं सांतपनंस्मृतम् ।
पृथक्सांतपनैर्द्रव्यैः षडहःसोपवासकः ॥११६॥

प्रथम तीन दिन तक एक २ ग्रास का भोजन करे और अगले तीन दिन में सर्वथा भोजन न करे इस को अतिकृच्छ्र व्रत कहते हैं ॥ १११ ॥ वेदों के अभ्यास में तत्पर तथा क्षमा और पांच महायज्ञों के करने में रत के लिये पूर्वज ऋषियों ने महापातक के नाश करने वाला यह प्रायश्चित्त कहा है ॥११२॥ जो दिन में सूर्य को देखता हुआ वायु को खाकर रहे और रात्रि को जलों में खड़ा हो व्यतीत करे उस को इस लोक में महापातक से उत्पन्न हुए पाप भी स्पर्श नहीं करते ॥ ११३ ॥ एक हजार गायत्री का जप करके ब्रह्महत्या से भिन्न सब पापों से शुद्धि होती है-कमल-गूलर-वेल-कुशा पीपल और ढाक ॥११४॥ इन के जल को पीकर दिन को व्यतीत करे उसे पर्णकृच्छ्र व्रत कहते हैं पंच गव्य ये हैं कि गौका दूध-दही, मूत्र, गोबर-घी ॥ ११५ ॥ इन को प्रथम दिन खाकर अगले एक दिन उपवास करे इसे सांतपनकृच्छ्र कहते हैं—सांतपनकृच्छ्र के पञ्चगव्य तथा कुशोदक इन छः पदार्थों को क्रमशः एक २ दिन खाकर छः दिन व्यतीत करे और एक सातवें दिन उपवास करे ॥ ११६ ॥

सप्ताहेनतुकृच्छ्रोयं महासांतपनंस्मृतम् ।
त्र्यहंसायंत्र्यहंप्रातस्त्र्यहंभुङ्क्तेत्वयाचितम् ॥११७॥
त्र्यहंपरंचनाश्नीयात्प्राजापत्योविधिःस्मृतः ।
सायंतुद्वादशग्रासाः प्रातःपंचदशस्मृताः ॥११८॥
अयाचितैश्चतुर्विंश परेस्त्वनशनंस्मृतम् ।
कुक्कुटाण्डप्रमाणंस्याद्ग यावद्वास्याविशेन्मुखे ॥११९॥
एतद्ग्रासंविजानीया–च्छुद्ध्यर्थं कायशोधनम् ।
त्र्यहमुष्णंपिबेदाप–स्त्र्यहमुष्णंपिबेत्पयः ॥ १२० ॥
त्र्यहमुष्णंघृतंपीत्वा वायुभक्षोदिनत्रये ।
षट्पलानिपिबेदाप–स्त्रिपलंतुपयःपिबेत्*॥१२१॥
पलमेकंतुवैसर्पि–स्तप्तकृच्छ्रं विधीयते ।
त्र्यहंतुदधिनाभुङ्क्ते त्र्यहंभुङ्क्तेचसर्पिषा ॥१२२॥

यह सात दिन में महासांतपनकृच्छ्र कहा है-तीन दिन सायं में तीन दिन प्रातःकाल में भोजन करें तथा तीन दिन बिना मांगे मिले उसे भोजन करे ॥ ११७ ॥ और अन्त के तीन दिनों में सर्वथा भोजन करे यह प्राजापत्य की विधि कही है—सायंकाल को बारह ग्रास और प्रा काल को पन्द्रह कहे हैं ॥११८॥ बिना मांगे ॥ के तीन दिनों में चौबीस ग्रा खाने से श्रेष्ठ ऋषियों ने अनशन व्रत कहा है – मुरगे के अण्डे के समान ए ग्रास का प्रमाण होवे अथवा जितना व्रती के मुख में मामके वही उस काए ग्रास है ॥ ११९ ॥ शुद्धि के अर्थ इसे ग्रास जाने और यही देह की शुद्धि करने वाला है-तीन दिन गर्म जल पीवे और तीन दिन गर्म दूध पीवे ॥ १ तीन दिन गरम घी पीकर अन्त के-तीन दिन वायु का भक्षण करे, पल जल पीवे और तीन पल दूध पीवे ॥ १२१ ॥ एक पल घी पीवे इसे त कृच्छ्रव्रत कहते हैं–तीन दिन दही भोजन करे और तीन दिन घी ॥ १२२

* चार तोला का एक पल कहाता है ॥

क्षीरेणतुत्र्यहंभुङ्क्ते वायुभक्षोदिनत्रयम् ।
त्रिपलंदधिक्षीरेण पलमेकंतुसर्पिषा ॥१२३॥
एतदेवव्रतंपुण्यं वैदिकंकृच्छ्रमुच्यते ।
एकभुक्तेननक्तेन तथैवायाचितेनच ॥१२४॥
उपवासेनचैकेन पादकृच्छ्रंप्रकीर्तितम् ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रःपयसा दिवसानेकविंशतिः ॥१२५॥
द्वादशाहोपवासेन पराकःपरिकीर्तितः ।
पिण्याकश्चामतक्रांबु सक्तूनांप्रतिवासरम् ॥ १२६ ॥
एकैकमुपवासःस्या- त्सौम्यकृच्छ्रःप्रकीर्तितः ।
एषांत्रिरात्रमभ्यासा-देकैकस्ययथाक्रमम् ॥ १२७ ॥
तुलापुरुषइत्येष ज्ञेयःपंचदशाह्निकः ।
कपिलायास्तुदुग्धाया धारोष्णंयत्पयःपिबेत् ॥ १२८ ॥
एषव्यासकृतःकृच्छ्रः श्वपाकमपिशोधयेत् ।
निशायांभोजनंचैव तज्ज्ञेयंनक्तमेवतु ॥ १२९ ॥

तीन दिन दूध को और तीन दिन वायु को भक्षण करे, दही और दूध तीन २ पल और घी एक पल भोजन करे ॥१२३॥ यही पवित्र और वेदोक्त कृच्छ्रव्रत कहा है-एक दिन हविष्य वस्तु का भोजन करे द्वितीयदिनबिना मांगे जो पदार्थ मिलैउसीकाभोजन करे ॥१२४॥ और एक तीसरे दिन अन्त में उपवास करने से यह तीन दिन का पादकृच्छ्र कहाहै-दूध को ही पीकर इक्कीसदिन बिताने से कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत कहा है ॥१२५॥ बारह दिन के उपवास से पराक व्रत कहा है। खली-कच्चा मठा जल और सत्तू इनको क्रम से एक २ दिन खावे ॥१२६॥ और एक उपवास करे इसे सौम्यकृच्छ्र कहते हैं। इन पांचों में से एक २ के तीन दिन क्रम से अभ्यास करने से ॥१२७॥ यह पंद्रह दिन का तुला पुरुषव्रत है दुही हुई कपिला गौ के धारोष्ण दूध को जो पीवे ॥१२८॥ य[illegible] जन (किया) कृच्छ्रव्रत चांडाल को भी शुद्ध करता [illegible] रा[illegible] हो उसे नक्त कहते हैं ॥ १२९ ॥

अनादिष्टेषुपापेषु चान्द्रायणमथोदितम् ।
अग्निष्टोमादिभिर्यज्ञैरिष्टैर्द्विगुणदक्षिणैः ॥ १३०
यत्फलंसमवाप्नोति तथाक्टच्छ्रैस्तपोधनाः ।
वेदाभ्यासरतःक्षान्तो नित्यंशास्त्राण्यवेक्षयेत् ॥ १
शौचमृद्वार्यभिरतो गृहस्थोपिहिमुच्यते ।
उक्तमेतद्द्विजातीनां महर्षैश्रूयतामिति ॥ १३२ ॥
अतःपरंप्रवक्ष्यामि स्त्रीशूद्रपतनानिच ।
जपस्तपस्तीर्थयात्रा प्रव्रज्यामन्त्रसाधनम् ॥ १३३ ॥
देवताराधनंचैव स्त्रीशूद्रपतनानिषट् ।
जीवद्भर्तरियानारी उपोष्यव्रतचारिणी ॥ १३४ ॥
आयुष्यंहरतेभर्तुः सानारीनरकंव्रजेत् ।
तीर्थस्नानार्थिनीनारी पतिपादोदकंपिबेत् ॥ १३५

अनादिष्टपापों (जिन का शास्त्र में प्रायश्चित्त नहीं है) की शुद्धि में चांद्र कहा है–दुगुण दक्षिणा वाले अग्निष्टोम आदि यज्ञों के करने से ॥ १३० ॥ फलों को प्राप्त होता है उन्हीं फलों को कृच्छ्रों के करने से हे तपस्वियो ! ने वाले को भी वही फल मिलता है ॥ १३१ ॥ जो गृहस्थी पुरुष मिट्टी जल से शौच करता है वह पापों से मुक्त हो जाता है हे महर्षियो ! सुनो यह द्विजातियों का धर्म कहा है ॥ १३२ ॥ इस से आगे स्त्री और शूद्र के पतित होने के कारणों को कहेंगे जप–तप–तीर्थों की यात्रा–संन्यास को सिद्ध करना ॥ १३३ ॥ और देवताओं की आराधना ये छः कर्म स्त्री शूद्रों के पतन के हेतु हैं जो स्त्री पति के जीते हुए उपवास व्रत करती ॥ १३४ ॥ वह अपने पति की अवस्था को न्यून करती है और स्वयं नरक जाती है यदि स्त्री को तीर्थ के स्नान की इच्छा हो तो अपने पति के चरणों धोकर पीवे ॥ १३५ ॥

शंकरस्यापिविष्णोर्वा प्रयातिपरमंपदम् ।
जीवद्भर्तरिवामाङ्गी मृतेवापिसुदक्षिणे ॥ १३६ ॥
श्राद्धेयज्ञेविवाहेच पत्नीदक्षिणतःसदा ।
सोमःशौचंददौतासां गंधर्वाश्चतथाङ्गिराः ॥ १३७ ॥
पावकःसर्वमेध्यंच मेध्यंवैयोषितांसदा ।
जन्मनाब्राह्मणोज्ञेयः संस्कारैर्द्विजउच्यते ॥१३८॥
विद्ययायातिविप्रत्वं श्रोत्रियस्त्रिभिरेवच ।
वेदशास्त्राण्यधीतेयः शास्त्रार्थंचनिबोधयेत् ॥१३९॥
तदासौवेदवित्प्रोक्तो वचनंतस्यपावनम् ।
एकोपिवेदविद्धर्मं यंव्यवस्येद्द्विजोत्तमः ॥१४०॥
सज्ञेयःपरमोधर्मो नाज्ञानामयुतायुतैः ।
पावकाइवदीप्यन्ते जपहोमैर्द्विजोत्तमाः ॥१४१॥

" भावार्थ–यथा शिव विष्णु की प्रतिमा के चरणोदक को श्रद्धा से पीवे तो भी वह परम पद नाम मोक्ष को प्राप्त होती है–पतिके जीते हुए स्त्री वाम अंग में स्थित होती है और पति के मरे पीछे दक्षिण अंग में ॥ १३६ ॥ श्राद्ध–यज्ञ और विवाह में सदा पत्नी दक्षिण की ओर बैठती है चन्द्रमा गन्धर्व और अंगिरा (बृहस्पति) ने इन स्त्रियों को शौच (शुद्धता) दियी है ॥१३७। और अग्नि ने सब अंगों को पवित्रता दी है इसी से स्त्रियों को सदा पवित्रता है–जन्मसे ब्राह्मण संज्ञा होतीहै–औरसंस्कारों से द्विज कहाताहै ॥१३८॥ विद्या के पढ़ने से विप्रत्व को प्राप्त होता तथा जन्म, यज्ञोपवीत और वेद विद्या से श्रोत्रिय संज्ञा होती है जो वेद और शास्त्र को पढ़े और शास्त्र के अर्थ को बतावे ॥ १३९ ॥ उस ब्राह्मण को वेदवित् कहते हैं उस का वचन पवित्र करने वाला है–एक भी वेद का जानने [illegible] ब्राह्मण जिस धर्म का निर्णय करदे ॥ १४० ॥ वही परम धर्म [illegible] सदा सुनना चाहिये [illegible] के दश सहस्रों के दश सहस्र भी [illegible] जप और होम कर [illegible] होते हैं ॥१४१॥

प्रतिग्रहेणनश्यन्ति वारिणाइवपावकः ।
तान्प्रतिग्रहजान्दोषान्--प्राणायामैर्द्विजोत्तमाः ॥१४२॥
नाशयन्तिहिविद्वांसो वायुर्मेघानिवाम्बरे ।
भुक्तमात्रेयदाविप्र आर्द्रपाणिस्तुतिष्ठति ॥१४३॥
लक्ष्मीर्बलंयशस्तेज आयुश्चैवप्रहीयते ।
यस्तुभोजनशालाया-मासनस्थउपस्पृशेत् ॥१४४॥
तस्यान्नंनैवभोक्तव्यं भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ।
पात्रोपरिस्थितेपात्रे यस्तुस्याप्यउपस्पृशेत् ॥१४५॥
तस्यान्नंनैवभोक्तव्यं भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ।
नदेवास्तृप्तिमायान्ति दातुर्भवतिनिष्फलम् ॥१४६॥
हस्तंप्रक्षालयित्वायः पिबेद्भुक्त्वाद्विजोत्तमः ।
तदन्नमसुरैर्भुक्तं निराशाःपितरोगताः ॥ १४७ ॥

भा० प्रतिग्रह लेने से ब्राह्मण ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे जल से अग्नि, उन प्रतिग्रह से उत्पन्न हुए दोषों को ब्राह्मण लोग प्राणायामों से ॥१४२॥ ऐसे नष्ट करते हैं जैसे आकाश में मेघों को वायु-जो ब्राह्मण भोजन करने के अनन्तर आर्द्र (गीले) हाथ रक्खे ॥१४३॥ तो लक्ष्मी-बल-यश-तेज-और अवस्था ये पांचों उस के नष्ट हो जाते हैं। जो भोजन के स्थान में आसन पर स्थित हुआ भोजन करते समय अन्न को छूले ॥१४४॥ तो उस अन्न को फिर स्वयं वा अन्य न खावे और खाय तो चान्द्रायण व्रत करे-पात्र के ऊपर रक्खे हुए पात्र का जो स्पर्श करले ॥१४५॥ तो उस पात्र के अन्न को भी भक्षण न करे और भक्षण करले तो चान्द्रायण व्रत करे, न तो उस के देवता तृप्त होते और दाता का दिया दान भी निष्फल होता है ॥१४६॥ हे ऋषि लोगो ! जो पुरुष भोजन करके पश्चात हाथों को धोकर जभी जल को पीता है उस के श्राद्ध के अन्न को जानो राक्षसों ने खाया और पितर निराश गये ॥ १४७ ॥

नास्तिवेदात्परंशास्त्रं नास्तिमातुःपरोगुरुः ।
नास्तिदानात्परंमित्र-मिहलोकेपरत्रच ॥ १४८ ॥
अपात्रेष्वपियद्दत्तं दहत्यासप्तमंकुलम् ।
हव्यंदेवानगृह्णन्ति कव्यंचपितरस्तथा ॥ १४९ ॥
आयसेनतुपात्रेण यदन्नमुपदीयते ।
श्वानविष्ठासमंभुङ्क्ते दाताचनरकंव्रजेत् ॥१५०॥
पित्तलेनतुपात्रेण दीयमानंविचक्षणः ।
नदद्याद्वामहस्तेन आयसेनकदाचन ॥ १५१ ॥
मृन्मयेषुचपात्रेषु यःश्राद्धेभोजयेत्पितृन् ।
अन्नदाताचभोक्ताच तावेवनरकंव्रजेत् ॥ १५२ ॥
अभावेमृन्मयेदद्या-दनुज्ञातस्तुतैर्द्विजैः ।
तेषांवचःप्रमाणंस्याद् यदन्नंचातिरिक्तकम् ॥१५३॥

इस लोक तथा परलोक में वेद से परे शास्त्र नहीं और माता से परे माननीय गुरु नहीं है तथा इस जन्म वा जन्मान्तर में दान से परे कोई मित्र नहीं है ॥ १४८ ॥ जो दान कुपात्र को दिया है वह दान सात पीढ़ी तक कुल को दग्ध (नष्ट) करता है तथा कुपात्र को दिये हव्य को देवता, और कव्य को पितर ग्रहण नहीं करते हैं ॥ १४९ ॥ लोहे के पात्र से जो अन्न परसा जाता है उस अन्न को भोजन करने वाला कुत्ते की विष्ठा के तुल्य खाताहै और उस अन्न का दाता नरक को जाताहै ॥१५०॥ बुद्धिमान् पुरुष पीतल और लोहे के पात्र में रखकर तथा बायें हाथ से, कदाचित् भी न देवे ॥ १५१ ॥

जो पुरुष श्राद्ध के समय मिट्टी के पात्रों में पितृ ब्राह्मणों को भोजन कराता है वह अन्न का दाता और भोक्ता दोनों नरक में जाते हैं ॥ १५२ ॥ शास्त्रोक्त पात्र के अभाव में उन ब्राह्मणों की आज्ञा से मिट्टी के पात्र में ही अन्न को परसदे और जो अन्न ब्राह्मणों के भोजन से बचे उस के लिये पितृ ब्राह्मण लोग जैसी आज्ञा दें वैसा करे क्यों कि उन का ही वचन प्रमाण है ॥ १५३ ॥

सौवर्णायसताम्रेषु कांस्यरौप्यमयेषुच ।
भिक्षाद‌ातुर्नधर्मोस्ति भिक्षुर्भुङ्क्तेतुकिल्विषम् ॥१५४॥
नचकांस्येषुभुञ्जीया-दापद्यपिकदाचन ।
मलाशाःसर्वएवैते यतयःकांस्यभोजनाः ॥ १५५ ॥
कांस्यकस्यचयत्पात्रं गृहस्थस्यतथैवच ।
कांस्यभोजीयतिश्चैव प्राप्नुयात्किल्विषंतयोः ॥१५६॥
अत्राप्युदाहरन्ति
सौवर्णायसताम्रेषु कांस्यरौप्यमयेषुच ।
भुञ्जन्भिक्षुर्वैदुःष्येत दुष्येच्चैवपरिग्रहे ॥ १५७ ॥
यतिहस्तेजलंदद्या-द्भिक्षांदद्यात्पुनर्जलम् ॥
तद्भैक्षंमेरुणातुल्यं तज्जलंसागरोपमम् ॥ १५८ ॥
चरेन्माधुकरींवृत्ति मपिम्लेच्छकुलादपि ।

जब यती अन्नको यदि सोने-लोहे-तांबे वा चांदीके पात्रमें भिखारी को देय तो भिक्षा के दाता का कुछ धर्म नहींहै और भिखारी पाप का भोक्ता होता है॥१५४॥ संन्यासी पुरुष आपत्ति कालमेंभी कांसेके पात्र में भोजन कदापि न करे क्योंकि जो संन्यासी कांसे के पात्र में भोजन करने वाले हैं वे संपूर्ण मल के खाने वाले हैं ॥१५५॥ जो कांसे वालेका पात्र हो और गृहस्थी का पात्र किसी धातु का हो उसमें यदि संन्यासी भोजन करे तो उनदोनों के दोषको प्राप्त होताहै ॥१५६॥ इस विषय में और ऋषि भी कहते हैं कि-सोने-लोहे-तांबे कांसे और चांदी के पात्रों में भोजन करता हुआ संन्यासी दूषित होता और भोग के पदार्थों का संचयऔर रक्षा करने से भी संन्यासी दूषित हो जाता है ॥ १५७ ॥ संन्यासी के हाथमें पहिले कुल्लादि के लिये जल दे फिर भिक्षा दे और फिर जल दे [अर्थात किसी पात्रमें जल वा भिक्षा न देवे] वह अन्न मेरु तुल्य और जल समुद्र तुल्य अनन्त फल देनेवाला होताहै ॥१५८॥ संन्यासी पुरुष भले ही बृहस्पति के तुल्य बड़ा विद्वान् प्रसिद्ध ज्ञानी हो तोभी अनेक उत्तम कुलीन ब्राह्मणादि

एकान्नं नैवभोक्तव्यं वृहस्पतिसमोयदि ॥ १५९ ॥
अनापदिचरेद्यस्तु सिद्धं भैक्षं गृहेवसन् ।
दशरात्रंपिवेद्वज्र-मापस्तुत्र्यहमेवच ॥ १६० ॥
गोमूत्रेणतुसंमिश्रं यावकंघृतपाचितम् ।
एतद्वज्रमितिप्रोक्तं भगवानत्रिरब्रवीत् ॥ १६१ ॥
ब्रह्मचारीयतिश्चैव विद्यार्थीगुरुपोषकः ।
अध्वगःक्षीणवृत्तिश्च षडेतेभिक्षुकाःस्मृताः ॥ १६२ ॥
षण्मासान्कामयेन्मर्त्यो गुर्विणीमेववैस्त्रियम् ।
आदन्तजननादूर्ध्वं एवंधर्मोनहीयते ॥ १६३ ॥
ब्रह्महाप्रथमंचैव द्वितीयंगुरुतल्पगः ।
तृतीयंतुसुरापेयं चतुर्थंस्तेयमेवच ॥ १६४ ॥
आमोवस्त्रंतिलान्भूमिं गन्धंवासयतेतथा ।

(घर न मिलने पर चाहे हो नीच म्लेच्छों के घर से भी मधूकरी एक २ रोटी) मांग कर खावे परन्तु किसी एक घर का भोजन कदापि न करे ॥ १५९ ॥ जो संन्यासी आपत्काल के विना घर में बसता हुआ सिद्ध (बनी बनाई) भिक्षा को खाता है वह दश रात्र तक वज्र को पीवे और तीन दिन केवल जल पीवे (शुद्ध होता है) ॥ १६० ॥ जो मूत्र जिसमें मिला हो ऐसे घी में पकाये जौके चून को वज्र कहते हैं यह भगवान् अत्रि ने कहा है ॥ १६१ ॥ ब्रह्मचारी,-संन्यासी,-विद्यार्थी,-निवास से गुरु का रक्षक, मार्ग में चलने वाला-और जिसकी कोई जीविका न हो ये छः भिक्षुक कहाते हैं ॥ १६२ ॥ गर्भवती स्त्री के सग छः महीने तक मनुष्य विषय करे और बालक के होने पर बालक के दांत निकलने के पश्चात् विषय करे इस प्रकार धर्म नष्ट नहीं होता है ॥ १६३ ॥ बालक के जन्म के पश्चात् प्रथम मास में ब्रह्महत्या का-दूसरे मास में गुरु की शय्या पे गमन करने का, तृतीय मास में मदिरा पान का-चतुर्थ मास में चोरी करने का-दोष लगता है ॥ १६४ ॥ बिना रंगा वस्त्र-तिल के भूमि का

पापानांचैवसंसर्गः पञ्चकंपातकंमहत् ॥ १६५ ॥
एषामेवविशुद्ध्यर्थं चरेत्कृच्छ्राण्यनुक्रमात् ।
त्रीणिवर्षाण्यकामश्चेद् ब्रह्महत्यापृथक् पृथक् ॥
अर्द्धंतुब्रह्महत्यायाः क्षत्रियेषुविधीयते ।
षड्भागोद्वादशश्चैव तथाविट्शूद्रयोर्भवेत् ॥ १६७
त्रीन्मासान्नक्तमश्नीया-द्भूमौशयनमेवच ।
स्त्रीघातीशुध्यतेऽप्येवं चरेत्कृच्छ्राब्दमेववा ॥ १६
रजकःशैलुषश्चैववेणुकर्मोपजीविनः ।
एतेषांयस्तुभुङ्क्तेवै द्विजश्चान्द्रायणंचरेत् ॥ १६९
सर्वान्त्यजानांगमने भोजनेसंप्रवेशने ।
पराकेणविशुद्धिःस्याद् भगवानत्रिरब्रवीत् ॥ १७०
चाण्डालभाण्डेयत्तोयं पीत्वाचैवद्विजोत्तमः ।
गोमूत्रयावकाहारः सप्तषट्त्रिंशहान्यपि ॥ १७१ ।

संपह —सुगन्ध का लगाना पापियों का मेल ये पांच बड़े पातक
के हैं ॥ १६५ ॥ इन की ही शुद्धि के अर्थ क्रम से तीन वर्ष तक कृच्छ्व्रत
और यदि कृच्छ्र करने की इच्छा न हो तो पृथक् २ ब्रह्महत्या लगती है
क्षत्री को आधी ब्रह्महत्या, और वैश्य को छठा भाग, और शूद्र को
भाग ब्रह्महत्या का लगता है ॥ १६७ ॥ जिस ने स्त्री की हत्या की ह
मनुष्य तीन मास तक रात्रि में ही भोजन करै, पृथ्वी पर सोवे अथव
वर्ष तक कृच्छ्रव्रत करै इस प्रकार करने से शुद्ध होता है ॥ १६८ ॥ धोबी
और बांसों से जीविका करने वाले, इन के अन्न को जो द्विज भक्षण कर
वह चान्द्रायणव्रत करे ॥ १६९ ॥ सब अंत्यज स्त्रियों के साथ गमन कर
न के साथ भोजन करने और संग बैठने से पराक व्रत से शुद्धि होती
भगवान् अत्रि ने कहा है ॥ १७० ॥ जो ब्राह्मण चाण्डाल के पात्र में जल
तो ४३ दिन तक गोमूत्र और जौ को खाकर शुद्ध होता है ॥ १७१ ॥

संस्पृष्टंयस्तुपक्वान्न-मन्त्यजैर्वाप्युदक्यया ।
अज्ञानाद्ब्राह्मणोऽश्नीयात् प्राजापत्यार्द्धमाचरेत् ॥१७२॥
चाण्डालान्नंयदाभुङ्क्ते चातुर्वर्ण्यस्यनिष्कृतिः।
चान्द्रायणंचरेद्विप्रः क्षत्रःसांतपनंचरेत् ॥ १७३ ॥
षड्रात्रमाचरेद्वैश्यः पंचगव्यंतथैवच ।
त्रिरात्रमाचरेच्छूद्रो दानंदत्वाविशुध्यति ॥ १७४ ॥
ब्राह्मणोवृक्षमारूढ-श्चाण्डालोमूलसंस्पृशः।
फलान्यत्तिस्थितस्तत्र प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १७५ ॥
ब्राह्मणान्समनुप्राप्य सवासाःस्नानमाचरेत् ।
नक्तभोजीभवेद्विप्रो घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥१७६॥
एकवृक्षसमारूढ-श्चाण्डालोब्राह्मणस्तथा ।
फलान्यत्तिस्थितस्तत्र प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १७७ ॥
ब्राह्मणान्समनुज्ञाप्य सवासाःस्नानमाचरेत् ।

चाण्डालादि नीच व रजस्वला स्त्री के स्पर्श किये हुए पक्कान्न को यदि
नजे अज्ञान से खालेतो ६ दिन अर्थात् प्राजापत्य व्रत को करे ॥१७२॥ यदि चां-
के अन्न को चारों वर्ण खालें तो उन का क्रम से यह प्रायश्चित्त है कि
ण चान्द्रायण व्रत करे क्षत्रिय सांतपन करै ॥१७३॥ छः दिन तक वैश्य पं-
य को भक्षण करै, और शूद्र तीन दिन व्रत करे व्रत की समाप्ति में ब्रा-
ादि सब लोग यथाशक्ति दान देकर शुद्ध होजाते हैं ॥ १७४ ॥ जो ब्रा-
। वृक्ष के ऊपर चढ़ा हो और चांडाल उस वृक्ष की जड़ को छूरहा हो तब
ब्राह्मण उस वृक्ष के फलों को खारहा हो तो ऐसी अवस्था में प्रायश्चित्त
हो ॥ १७५ ॥ ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर वस्त्रों सहित स्नान करै और दिन
उपवास करके रात्रि को भोजन करे पश्चात् घृत को खाकर ब्राह्मण शुद्ध
ा है ॥१७६॥ यदि चांडाल और ब्राह्मण दोनों एक वृक्षपर चढ़े हुए वृक्ष के
ों को खा रहे हों तो वहां प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ १७७ ॥ ब्राह्मण अन्य
ह्मणों की आज्ञा से सचैलस्नान करके एक दिन रात उपवास करे फिर पंच-

अहोरात्रोपितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ १७८ ॥
एकशाखासमारूढ – श्चाण्डालोब्राह्मणोयदा ।
फलान्यत्तिस्थितस्तत्र प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १७९ ॥
त्रिरात्रोपोपितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
स्त्रियोम्लेच्छस्यसंपर्कात् शुद्धिःसांतपनेतथा ॥१८०॥
तप्तकृच्छ्रं पुनःकृत्वा शुद्धिरेषाविधीयते ।
संवर्तैतयथाभार्यां गत्वाम्लेच्छग्यसंगताम् ॥१८१॥
सचैलंस्नानमादाय घृतस्यप्राशनेनच ।
केशकीटनखस्नायु अस्थिकंटकमेवच ॥ १८२ ॥
स्पृष्टोनद्युदकेस्नात्वा घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ।
संगृहीतामपत्यार्थ–मन्यैरपितथापुनः ॥ १८३ ॥
चाण्डालम्लेच्छश्वपच कपालव्रतधारिणः ।
अकामतःस्त्रियोग वा पराकेणविशुद्ध्यति ॥१८४॥

गव्य पीने से शुद्ध होता है ॥ १७८ ॥ यदि एक ही शाखा पर चढ़े हुए और चांडाल फलों को खाते हों तो ऐसी दशा में प्रायश्चित्त कैसे हो। ब्राह्मण तीन दिन तक उपवास करके पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है म्लेच्छ की स्त्री के साथ संग करने पर सांतपन कृच्छ्र व्रत करने से शुद्धि है ॥१८०॥ फिर तप्त कृच्छ्र करे यह शुद्धि शास्त्रों में कही है–यदि किसी की स्त्री कोई म्लेच्छ ले गया मात्र हो किन्तु दूषित न किया हो तो उस स्त्री के जाके उसे लाकर ऐसा बर्ताव करे कि ॥ १८१ ॥ वस्त्रों सहित स्नान करा केवल घृत खिलावे तथा केश कीट–नख–स्नायु–अस्थि (हाड़) कांटे ॥ १८ इन का स्पर्श करावे तथा नदी के जल में स्नान और घृत को भक्षण कराने से होती है–तथा संतानोत्पत्ति के लिये अन्य किसी मनुष्य ने पकड़ी मात्र का भी यही उक्त प्रायश्चित्त कराना चाहिये ॥ १८३ ॥ चांडाल–म्लेच्छ–श्वप व्रत के धारण करने वाले (कपोती) इनकी स्त्रियों के साथ इच्छा बिना संग करके पराक व्रत से विशेष कर शुद्धि होती है ॥ १८४ ॥

कामतस्तुप्रसूतोवा तत्समोनात्रसंशयः ।
सएवपुरुषस्तत्र गर्भोभूत्वाप्रजायते ॥ १८५ ॥
तैलाभ्यक्तोघृताभ्यक्तो विण्मूत्रंकुरुतेद्विजः ।
तैलाभ्यक्तोघृताभ्यक्त-श्चाण्डालंस्पृशतेद्विजः ॥१८६॥
अहोरात्रोषितोभूत्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ।
मत्स्यास्थिजंबुकास्थीनि नखशुक्तिकपर्दिकाः ॥१८७॥
होमतप्तघृतंपीत्वा तत्क्षणादेवनश्यति ।
गोकुलेकंदुशालायां तैलचक्रेक्षुयंत्रयोः ॥१८८॥
अमीमांस्यानिशौचानि स्त्रीणांचव्याधितस्यच ।
नस्त्रीदुष्यतिजारेण ब्राह्मणोवेदकर्मणा ॥ १८९ ॥
नापोमूत्रपुरीषाभ्यां नाग्निर्दहतिकर्मणा ।

पूर्वोक्त स्त्रियों के साथ संग करे तो अथवा संतान के उत्पन्न होने पर उन स्त्रियों की ही समान जाति होजाते हैं इस में संशय नहीं है क्योंकि यह रूप ही गर्भ रूप होकर उत्पन्न होता है ॥ १८५ ॥ जो द्विज तेल अथवा घृत उबटना करके शौच को जाता अथवा लघुशंका करता है या चांडाल का स्पर्श करता है॥१८६॥वह एक दिन रात उपवासकर के पंचगव्य पीनेसे शुद्ध हो ॥है-मछली और-गीदड़ की हड्डी नख,गोली सीपी-और कौड़ी इनके स्पर्शसे जो दोष लगता है । १८७। वह होम के उष्ण घी के पीने से उसी क्षण नष्ट हो जाता है । गौओं के झुंड-कंदुशाला (भाड़) में-तेल निकालने के (कोल्हू) में और गन्ने के यंत्र (कोल्हू) में । १८८ । स्त्रियों और रोग की अवस्था में शुद्धता का विचार नहीं करना अर्थात ये सर्व सर्वदा शुद्ध ही हैं स्त्री जार से [अर्थात् मन के चलायमान होने मात्र से स्त्री ऐसी दूषित नहीं होती जो त्याग दी जावे । जो मनु जीने लिखा है कि-(रजसा स्त्री मनोदुष्टा) ऐसा ठीक हां भी मानो] और ब्राह्मण वेदोक्त कर्म [लोक विरुद्ध] करने पर भी दूषित नहीं होते ॥ १८९ ॥ मूत्र और विष्ठा के पड़ने से जल (नदी आदि म-

: (१८९ । १९०) यदि स्त्री को दोष न लगे तो पतिव्रता की महिमा या प्रशंसा भी व्यर्थ हो जावे। इस कारण इन श्लोकों का अभिप्राय यह है कि

पूर्वंस्त्रियः सुरैर्भुक्ता सोमगन्धर्ववन्हिभिः ॥ १९०॥
भुञ्जतेमानवाःपश्चा-न्नवादुष्यंतिकर्हिचित् ।
असवर्णस्तुयोगर्भः स्त्रीणांयोनौ निषिच्यते ॥१९०॥
अशुद्धासाभवेन्नारी यावद्गर्भंनमुंचति ।
विमुक्तेतुततःशल्येर जश्चापिप्रदृश्यते ॥ १९२ ॥
तदासाशुद्ध्यतेनारी विमलंकांचनंयथा ।
स्वयंविप्रतिपन्नाया यदिवाविप्रतारिता ॥ १९३ ।
बलान्नारीप्रभुक्तावा, चौरभुक्तातथापिवा ।
नत्याज्यादूषितानारी नकामोस्याविधीयते ॥१९४॥

झाग आदि) और दुर्गन्धादि को जलाने से भी अग्नि दूषित नहीं होते
यम कन्या की दशा कुमारीपन में चन्द्रमा गधर्व-और अग्नि देवता
के पति हो चुकते हैं ॥ १९० पीछे से मनुष्य के साथ विवाह होता पर वे
दूषित नहीं होतीं-जो असवर्ण (भिन्न जाति का) गर्भ स्त्री की योनि
सींचा जाता है ॥ १९१ ॥ वह स्त्री इतने दिन तक अशुद्ध होती है कि
तक गर्भ को न त्यागे और गर्भत्याग के पश्चात् जो रज दीखे (गा
धन हो) ॥ १९२ ॥ तब वह स्त्री इस प्रकार शुद्ध होजाती है जैसा कि नि
सोना । अपने आप किसी मनुष्य के समीप जाने से संग दोष ल
हो वा कोई छल से ले गया हो ॥ १९३ ॥ अथवा बल पूर्वक या चो
भोगी हो ऐसी दूषित स्त्री का त्याग न करे क्योंकि स्त्री की कामना से ग
काम नहीं हुआ है ॥ १९४ ॥
स्त्रियां प्रायः मूर्ख अजान होती हैं इस से अल्पबालक के समान उन को
धारण अपराधों में त्याग नहीं देना चाहिये । (सोमः प्रथमो विविदे
ऋग्वेदमन्त्र का आशय यहां दिखाया गया है ।
(१९१-१९४) धर्मशास्त्रों की सब बातें सब काल के लिये नहीं हो
इन के अनुसार प्राचीन काल में काम क्रोध लोभ स्त्री पुरुषों में बहुत कम
और धर्म अधिक था । तथा राज प्रबन्ध भी ऐसा सब का सा नहीं था ।
हान्तः करण वालों को कभी दो चार पर कलङ्क न लगने के सुगम दोष नहीं
गते । पर अब वैसे शुद्ध धर्मनिष्ठ स्त्री- पुरुष नहीं रहे इस कारण अब अन्य
जाति के गर्भ तथा व्यभिचार से स्त्री पतित हो जाती है ।

ऋतुकालउपासीत पुष्पकालेनशुद्ध्यति ।
रजकश्चर्मकारश्च नटोवुरुडएवच ॥ १९५ ॥
कैवर्तमेदभिल्लाश्च सप्तैतेऽन्त्यजाःस्मृताः ।
एषांगत्वास्त्रियोमोहा-द्भुक्त्वाचप्रतिगृह्यच ॥१९६॥
कृच्छ्राब्दमाचरेद्ज्ञाना-दज्ञानादेवतद्द्वयम् ।
सकृद्भुक्तातुयानारी म्लेच्छैःसापापकर्मभिः ॥१९७॥
प्राजापत्येनशुद्ध्येत ऋतुप्रस्रवणेनतु ।
वलोद्धृतास्वयंवापि परप्रेरितयायदि ॥१९८॥
सकृद्भुक्तातुयानारी प्राजापत्येनशुद्ध्यति ।
प्रारब्धदीर्घतपसां नारीणांयद्रजोभवेत् ॥१९९॥

ऋतु के समय (रज के दीखने) बाद १६ सोलह दिन के भीतर स्त्री का संग करे और फिर रजदेसमय शुद्ध हो जाती है धोबी चमार नट बुरुड़(जो बांस की डलियां बनाते हैं)॥१९५॥धीमर मेद,कलाल भील ये सात अंत्यज कहे हैं इन जातियों की स्त्री को भोगकर और इन जातियों में भोजन करके और इन से प्रतिग्रह (दान) को लेकर ॥ १९६ ॥ यदि जान बूझ कर पूर्वोक्त तीनों ,कर्म किये हों तो एक वर्ष तक कृच्छ्र और अज्ञान से दो कृच्छ्र व्रत करे–जो स्त्री म्लेच्छ पापकर्मियों से एक वार भोगी हो ॥ १९७ ॥ वह प्राजापत्यव्रत से और ऋतु (मासिक धर्म) के होने से शुद्ध होती है, यदि बल से पकड़ली हो अथवा स्वयं चली गई हो अथवा किसी के कहने से गई हो ॥१९८॥

वि० (१९९) यहां से सिद्ध है कि पूर्वकाल में स्त्रियां तपस्विनी भी होती थीं वे ही ब्रह्मवादिनी कहाती थीं। इस कारण प्राचीन स्त्री पुरुषों की बराबरी वर्त्तमान के स्त्री पुरुष नहीं कर सकते। जैसे नदि आदि में मैला जलजाय तो वह फेंकने लायक नहीं होता। परन्तु रोटी आदि पकाया अन्न सैने के संसर्ग से अति दूषित हो जाता है वैसे ही पहिले स्त्री पुरुष जिन दोषों से पतित नहीं होते थे। उन्हीं दोषों से अब के नर नारी पतित होजाते हैं।

नतेनतद्व्रतंतासां विनश्यतिकदाचन ।
मद्यसंस्पृष्टकुम्भेषु यत्तोयंपिबतिद्विजः ॥२००॥
कृच्छ्रपादेनशुद्ध्येत पुनःसंस्कारमर्हति ।
अन्त्यजस्यतुयेवृक्षा-बहुपुष्पफलोपगाः ॥२०१॥
उपभोग्यास्तुतेसर्वे पुष्पेषुचफलेषुच ।
चाण्डालेनतुसंस्पृष्टं यत्तोयंपिबतिद्विजः ॥२०२॥
कृच्छ्रपादेनशुद्ध्येत आपस्तम्बोऽब्रवीन्मुनिः ।
श्लेष्मोपानहविण्मूत्र स्त्रीरजोमद्यमेवच ॥२०३॥
एभिःसंदूषितेकूपे तोयंपीत्वाकथंविधिः ।
एकंद्व्यहंत्र्यहंचैव द्विजातीनांविशोधनम् ॥२०४॥
प्रायश्चित्तंपुनश्चैव नक्तंशूद्रस्यदापयेत् ।
सद्योवांतेसचैलंतु विप्रस्तुस्नानमाचरेत् ॥२०५॥

और एक बार ही भोगी हो तो प्राजापत्य व्रत करने से शुद्ध होती है जिन स्त्रियों ने बहुत दिनों तक तप (व्रत) प्रारम्भ किया हो और उसी बी में जो मासिक धर्म हो ॥१९९॥ तो उस से उन स्त्रियों का यह व्रत कदापि भी नष्ट नहीं होता-मदिरा का स्पर्श जिस में हुआ हो ऐसे घड़े के जल को जो द्विज पीले ॥२००॥ तो चौथाई कृच्छ्र करने से शुद्ध होता है और फिर उपनयन के योग्य होता है-अन्त्यजों के जो वृक्ष हों और उन पर बहुत फल फूल आते हों ॥२०१॥ उन वृक्षों के पुष्प और फलों के भोगने में दोष नहीं है-चांडाल से स्पर्श किये हुए जल को जो द्विज पीता है ॥२०२॥ वह चौथाई कृच्छ्र से शुद्ध होता है यह आपस्तम्ब मुनि ने कहा है । थूके हुए कफ-जूता-विष्ठा-मूत्र-स्त्री का रज-और मदिरा ॥२०३॥ इन से भ्रष्ट हुए कूप के जल को पीके कैसे विधि करे, ब्राह्मण एक दिन क्षत्री दो दिन, वैश्य तीन दिन व्रत करने से शुद्ध होते हैं ॥२०४॥ और फिर प्रायश्चित्त यह है कि शूद्र नक्त (रात्रि ही को भोजन) करे और उसी समय वमन कर दिया हो तो ब्राह्मण सचैल स्नान करे ॥२०५॥

पर्युषितेत्वहोरात्र-मतिरिक्तेदिनत्रयम् ।
शिरःकंठोरुपादांश्च सुरयायस्तुलिप्यते ॥२०६॥
दशषट्त्रतयैकाहं चरेदेवमनुक्रमात् ।

अत्राप्युदाहरन्ति ॥

प्रमादान्मद्यपसुरां सकृत्पीत्वाद्विजोत्तमः ॥ २०७ ॥
गोमूत्रयावकाहारो दशरात्रेणशुद्ध्यति ।
मद्यपस्यनिषादस्य यस्तुभुङ्क्तेद्विजोत्तमः ॥ २०८ ॥
गोमूत्रयावकाहारो दशरात्रेणशुद्ध्यति ।
मद्यपस्यनिषादस्य यस्तुभुंक्तेद्विजोत्तमः ॥ २०९ ॥
नदेवाभुञ्जतेतत्र नपिबन्तिहविर्जलम् ।
चितिभ्रष्टातुयानारी ऋतुभ्रष्टाचव्याधितः ॥२१०॥
प्राजापत्येनशुद्ध्येत ब्राह्मणानांतुभोजनात् ।

उक्त कूप का जल पीकर बासी होगया पच गया होय तो एक रातदिन पवास करे और अधिक समय बीत गया हो तो तीन उपवास करे। शिर कण्ठ ंघ पैर इन को जो मदिरा से लीपले तो ॥ २०६॥ वह क्रम से दश-छः-तीन क-दिन के व्रत को करे इस विषय में और ऋषिभी कहते हैं-कि प्रमाद से मदिरा ीनेवाले की मदिरा को ब्राह्मण एक बार भी पी लेतो ॥२०७॥ गोमूत्र और जौको ाता हुआ दश दिन में शुद्ध होता है और जो ब्राह्मण मदिरा पीने वाले और निषाद (वधिक बहेलिया) के यहां भोजन करता है ॥ २०८ ॥ वह भी ोमूत्र और जौ को खाता हुआ दश दिन में शुद्ध होता है जो ब्राह्मण मदि-ा पीने वाले और निषाद का भोजन खाता है ॥२०९॥ उस के यहां देवता हवि (शाकल्य) को नहीं खाते और न जल पीते हैं। जो स्त्री चिति (ज्ञान) से भ्रष्ट (बावली) हो और व्याधि के द्वारा मासिक धर्म भ्रष्ट होगई हो ॥२१०॥ वह प्राजापत्यव्रत और ब्राह्मणों के जिमाने से शुद्ध होती है-जो ब्राह्मण सं-

येचप्रव्रजिताविप्राः प्रव्रज्याग्निजलावहाः ॥२११॥
अनाशकान्निवर्तन्ते चिकीर्षन्तिगृहस्थितिम् ।
धारयेत्त्रीणिकृच्छ्राणि चान्द्रायणमथापिवा ॥२१२
जातकर्मादिकंप्रोक्तं पुनःसंस्कारमर्हति ।
नशौचंनोदकंनाशु नापवादानुकम्पने ॥ २१३ ॥
ब्रह्मदण्डहतानांतु नकार्यंकटधारणम् ।
स्नेहंकृत्वाभयादिभ्यो यस्त्वेतानिसमाचरेत् ॥२१४॥
गोमूत्रयावकाहारः कृच्छ्रमेकंविशोधनम् ।
वृद्धःशौचस्मृतेर्लुप्तः प्रत्याख्यातभिषक्क्रियः ॥२१५॥
आत्मानंघातयेद्यस्तु शृंग्यग्न्यनशनाम्बुभिः ।
तस्यत्रिरात्रमाशौचं द्वितीयेत्वस्थिसंचयः ॥ २१६ ॥

न्यास की अग्नि और जल में बहते हुए अर्थात् संन्यासियों के धर्म में आ
हुए संन्यासी होगए हैं ॥ २११ ॥ फिर अशक्ति (असामर्थ्य) से संन्यासी
धर्म से निवृत्त होते हैं और घर में रहना चाहते हों तो वे तीन कृच्छ्र अथवा
चांद्रायण व्रत का अनुष्ठान करैं ॥२१२॥ और जात कर्मादि उपनयनतकसंस्क
उनसंन्यास से लौटने वालों के फिर करने होते हैं-शौच, और जल
दान-शीघ्र श्राद्धादि निंदा-दया ॥ २१३ ॥ और मृतक की पिंजरी का उठा
ना ये काम उन के मरने पर न करै जिन को ब्राह्मणों ने शाप दिया हो, और
प्रीति के कारण वा किसीभयादिकारण से पूर्वोक्तशौच आदि को करता है॥
सो गोमूत्र और जौ को खाते हुए उस की एक कृच्छ्र से शुद्धि होती है-जो
रुप वृद्ध हो और अशुद्ध हो और जिसे कुछ ज्ञान न हो, और वैद्यों की चि
कित्सा भी जिसने त्याग दी हो ॥२१५॥ और यह सींग वाले पशु(बैल आदि
अग्नि, भोजन का त्याग-और जल में डूबना इन से अपने आत्मा का घात
करै तो उस मनुष्य का आशौच (सूतक) तीन दिन का होता है और दू
सरे दिन अस्थि संचय होता है ॥ २१६ ॥

तृतीयेतूदकंकृत्वा चतुर्थेश्राद्धमाचरेत् ।
यस्यैकापिगृहेनास्ति धेनुर्वत्सानुचारिणी ॥२१७॥
मंगलानिकुतस्तस्य कुतस्तस्यतमःक्षयः ।
अतिदोहातिवाहाभ्यां नासिकाभेदनेनवा ॥२१८॥
नदीपर्वतसंरोधे मृतेपादोनमाचरेत् ।
अष्टागवंधर्महलं षड्गवंव्यावहारिकम् ॥ २१९ ॥
चतुर्गवंनृशंसानां द्विगवंगववध्यकृत् ।
द्विगवंवाहयेत्पादं मध्यान्हेतुचतुर्गवम् ॥२२०॥
षड्गवंतुत्रिपादोक्तं पूर्णाहस्त्वष्टभिःस्मृतः ।
काष्ठलोष्टशिलागोघ्नः कृच्छ्रंसांतनंचरेत् ॥ २२१ ॥
प्राजापत्यंचरेन्मुष्टया अतिकृच्छ्रंतुआयसैः ।

तीसरे दिन जलदान करके चौथे दिन श्राद्ध करे-जिस के घरमें एकभी गौ बछ-
ड़े वाली अर्थात् दूध देती न हो ॥२१७॥ उस के घर में मंगल कहां और अ-
न्धकार का नाश कहां अर्थात् गृहस्थ के यहां गौका रखना और उस की ठीक
सेवा करना अत्यावश्यक धर्म है ।-बहुत दूध निकालने बछड़े को न छोड़ने
या बहुत काम जोड़ने से बहुत जोतने और नाक के छेदने से ॥ २१८ ॥ नदी
अथवा पर्वत में रोकने से जो पशु की मृत्यु हो जाय तो जितना उस पशु मा-
रने का प्रायश्चित्त कहा है उस को चौथाई प्रायश्चित्त करे-आठ हैं बैल जिस
पर ऐसा हल, धर्मानुकूल है । छः बैल का व्यवहार में मध्यम हल है ॥२१९॥
और जिस पर बैल [चार] हों वह हल नृशंसों (हत्यारों) का है और दो बैल का
हल तो बैलों को मारने वाला है-दो बैल के हल को प्रातःकाल चौथाई दिन
में और चार बैल के को मध्यान्ह तक, (आधे दिन) चलावे २२० छे बैल
के को तीनपाद (तीन पहर) चलावे और आठ बैलके को संपूर्ण दिन चला-
ना धर्म शास्त्र में कहा है- लकड़ी ढेला-पत्थर इन से जो बैल वा गौकी
हत्या करै वह सांतपन कृच्छ्र करै २२१ मुष्टि (मुक्का) से जो गोहत्या करै वह

प्रायश्चित्तेनतच्छीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ २२२ ॥
अनुडुत्सहितांगांच दद्याद्विप्रायदक्षिणाम् ।
शरभोष्ट्रहयान्नागान् सिंहशार्दूलगर्दभान् ॥ २२३ ॥
हत्वाचशूद्रहत्यायाः प्रायश्चित्तंविधीयते ।
मार्जारगोधानकुल मण्डूकांश्चपतत्रिणः ॥२२४॥
हत्वात्र्यहंपिवेत्क्षीरं कृच्छ्रंव्यापादिकंचरेत् ।
चाण्डालस्यचसंस्पृष्टं विण्मूत्रोच्छिष्टमेववा ॥ २२
त्रिरात्रेणविशुद्धंहि भुक्तोच्छिष्टंसमाचरेत् ।
वापीकूपतडागानां दूषितानांचशोधनम् ॥२२६॥
उद्धरेत्घटशतंपूर्ण पंचगव्येनशुध्यति ।
अस्थिचर्मान्त्रसिक्तेषु खरश्वानादिदूषिते ॥२२७॥
उद्धरेदुदकंसर्वं शोधनंपरिमार्जनम ।

प्राजापत्यव्रत करै और लोहे के दंड से जो करे वह अतिकृच्छ्रव्रत करै प्रायश्चित्त करने के अनन्तर ब्राह्मणों को जिमावे ॥२२२॥ और बैल सहित ए ब्राह्मणों को दक्षिणा दे–शरभ नामक मृग, ऊंट–घोड़ा–हाथी–सिंह–शार्दू और–गधा॥२२३। इन कोहत्याकरने परशूद्र की हत्या काजो प्रायश्चित्त है वहे बिलाव–गोह–नौला मेंडुक–पक्षी ॥२२४॥ इन को मारकर तीन दिन तक पावे और मारने में जो कृच्छ्र कहा है वसे करे–चांडाल के स्पर्श किये और वि तथा मूत्र से छूए हुए उच्छिष्ट को खाकर ॥२२५॥ तीन दिन से विशुद्ध हो उच्छिष्ट के भक्षण में जो प्रायश्चित्त है उसे करे–अशुद्ध पदार्थ से दूषित प्राप्त हुए बावरी–कूप और ताल इन का शोधन यह है कि ॥ २२ भरे हुए सःसौ ६०० घड़े भर २ जल निकाले फिर पंचगव्य गेरने से शुद्ध होत हड्डी चाम जिनमें पड़गये हों और गधा–कुत्तादि से जोदूषित होगए हों ॥२ सो उनवापीआदिकाजल निकाले और स्वच्छ करे–गौको जिस पात्र में दु

वर्णबाह्येनसंस्पृष्ट उच्छिष्टस्तुद्विजोत्तमः ॥ २३४॥
पंचरात्रोपितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
शुचिगोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृतिस्थंमहीगतम् ॥ २३५ ॥
चर्मभाण्डंतुधाराभिस्तथायंत्रोद्धृतंजलम् ।
चाण्डालेनतुसंस्पृष्टः स्नानमेवविधीयते ॥ २३६ ॥
उच्छिष्टस्तुचसंस्पृष्ट स्त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ।
आकराद्गतवस्तूनि नाशुचीनिकदाचन ॥ २३७ ॥
आकराःशुचयःसर्वे वर्जयित्वासुरालयम् ।
भ्रष्टाभ्रष्टयवांश्चैव तथैवचणकाःस्मृताः ॥ २३८ ॥
खर्जूरंचैवकर्पूर मन्यद्भ्रष्टतरंशुचिः ।
अमीमांस्यानिशौचानि स्त्रीभिराचरितानिच ॥२३९
गोकुलेकंदुशालायां तैलयंत्रेक्षुयंत्रयोः ।
अदुष्टाःसततंधारा वातोद्धताश्चरेणवः ॥ २४० ॥

उच्छिष्ट ब्राह्मण को वर्णबाह्य (यवन आदि) नीच स्पर्श करलें ॥ २
तो पांच दिन तक उपवास करके पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है जिस
न से गौतृप्त हो सके ऐसा पृथ्वी पर टिका निर्मल जल शुद्ध है ॥२३५॥ च
पात्र का जल, निरन्तरधारा पड़ने से, और यंत्र से निकाला जल शुद्ध
चाण्डाल के छू लेने पर स्नान मात्र करे ॥ २३६ ॥ जो उच्छिष्ट को चां
छूले तो तीन दिन में शुद्ध होता है । किसी खान से निकली
कभी भी अशुद्ध नहीं होती ॥ २३७ ॥ मदिरा के स्थान को छोड़ कर अन्य
खाने या कारखाने शुद्ध हैं और भुने जौ और चने भी शुद्ध कहे हैं ॥ २३
खजूर और कपुर ये दोनों और जो २ भुना पदार्थ हो वह सब शुद्ध है । स्त्रि
यों ने आचरण किये शौच विचारने योग्य नहीं हैं ॥ २३९ ॥ गौओं के झु
में कंदुशाला (भाड़) में तेल और ईख के कोल्हू में शुद्धि का विचार नहीं क
आदि का भुंजा अन्नादि सदा शुद्ध जानो–निरन्तर पड़ती हुई जल धारा
दूषित न हो और वायु से उड़ी रेणु (धूल) ये भी पवित्र हैं ॥ २४० ॥

बहूनामेकलग्नाना—मेकश्चेदशुचिर्भवेत् ।
अशौचमेकमात्रस्य नेतरेषांकथंचन ॥ २४१
एकपंक्त्युपविष्टानां भोजनेषुपृथक्पृथक् ।
यद्येकोलभतेनीलीं सर्वेतेऽशुचयःस्मृताः ॥ २४
यस्यपट्टेपट्टसूत्रे नीलीरक्तोहिदृश्यते ।
त्रिरात्रंतस्यदातव्यंशेषाश्चैकोपवासिनः ॥ २४३
आदित्येस्तमितेरात्रा—वस्पृश्यंस्पृशतेयदि ।
भगवन्केनशुद्धिःस्या—त्तोब्रूहितपोधन ! ॥ २४
नैवसर्वशुद्धिःस्यात् शवस्पृष्टंतुवर्जयेत् ॥ २४५
देशकालंचयःशक्तिं पापंचावेक्ष्यतत्त्वतः ।
प्रायश्चित्तंप्रकल्प्यंस्याद्यस्यचोक्तानिष्कृतिः ॥२४६॥

क फर्श आदि पर बैठे हुए मनुष्यों में से जो एक अशुद्ध होजाय त
शुद्ध होता है अन्य मनुष्य कदाचित् भी अशुद्ध नहीं होते ॥ २४१
न करने के समय एक पक्ति में अलग २ बैठे मनुष्यों में जो एक मनुष्य के
में नील का वस्त्रादि छूजाय तो वे सब अशुद्ध हो जाते हैं ॥ २४२ ॥ और
क एक पङ्क्ति में बैठे हुओं के बीच में जिस के वस्त्र अथवा पट वस्त्र
पट्टा) पर नील का रंग दीख पड़े तो उसे तीन दिन का उपवास और
मनुष्यों को एक २ उपवास करना चाहिये ॥ २३३ ॥ हे भगवन् अत्रिजी !
के छिप जाने पर रात्रि में यदि स्पर्श करने के अयोग्य वस्तु का स्पर्श क-
तो किस से शुद्धि हो उस शुद्धि को कहो ॥ २४४ ॥ सूर्य के छिप जाने पर
में किसी का न छूआ निर्मल जो दिन का जल उसी से सब की शुद्धि
है किन्तु जिसने मुर्दे का स्पर्श किया हो उसकी शुद्धि जल मात्र से नहीं
॥ २४५ ॥ और देश—समय—सामर्थ्य और पाप को भी यथार्थ देखकर
प के प्रायश्चित की कल्पना विद्वान् करले जिस पाप का प्रायश्चित शास्त्र
कहा है ॥ २४६ ॥

देवयात्राविवाहेषु यज्ञप्रकरणेषुच ।
उत्सवेषुचसर्वेषु स्पृष्टास्पृष्टंनविद्यते ॥२४७॥
आलनालंतथाक्षीरं कन्दुकन्दधिसक्तवः ।
स्नेहपक्वंचतक्रंच शूद्रस्यापिनदुष्यति ॥२४८॥
आर्द्रमांसंघृतंतैलं स्नेहाश्चफलसम्भवाः ।
अन्त्यभांडस्थितास्त्वेते निष्क्रान्ताःशुद्धिमाप्नुयुः॥
अज्ञानात्पिबतेतोयं ब्राह्मणःशूद्रजातिषु ।
अहोरात्रोषितःस्नात्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥२५०॥
आहिताग्निस्तुयोविप्रो महापातकवान्भवेत् ।
अप्सुप्रक्षिप्यपात्राणि पश्चादग्निंविनिर्दिशेत् ॥२५१॥
योगृहीत्वाविवाहाग्निं गृहस्थइतिमन्यते ।
अन्नंतस्यनभोक्तव्यं वृथापाकोहिसःस्मृतः ॥२५२॥

तीर्थादि पर देवताओं की यात्रा–विवाह–यज्ञ का प्रकरण–और उत्सवों में स्पर्श करने के योग्य और अयोग्य का दोष नहीं होता है ॥२ आल का नाज (चने आदि की खटाई) दूध–कन्दुक (भाड़) दही सत्तू– (घी तेल) से पका हुआ पदार्थ–और मठा ये वस्तु शूद्र के भी दू नहीं हैं किन्तु खा लेने योग्य होते हैं ॥ २४८ ॥ गीला मांस–घृत–तेल–फ उत्पन्न हुए तैलादि अन्त्यज के पात्र में रक्खे भी हों पर निकाल लेने पर हो जाते हैं ॥२४९॥ जो ब्राह्मण शूद्र जातियों का जल अज्ञान से पीले तो दि -रात का उपवास और पंचगव्य पीकर शुद्ध होता है ॥ २५० ॥ जो अग्निहो ब्राह्मण महापातकी हो जाय तो होम के पात्रों को जल में फेंकदा विधिपूर्वक अग्नि को स्थापित करे ॥२५१॥ जो विवाह की अग्नि को करके अर्थात् स्मार्त अग्निहोत्र को लेकर अपने को गृहस्थी मानता है उस अग्नि में पकपाक तथा पंचमहायज्ञादि नित्य २ नहीं करता इस ऋषियों ने उसे वृथापाक कहा है ॥२५२॥

वृथापाकस्यभुञ्जानः प्रायश्चित्तंचरेद्द्विजः
प्राणानप्सुत्रिरायम्य घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति
वैदिकेलौकिकेवापि हुतोच्छिष्टेजलेक्षितौ
वैश्वदेवंप्रकुर्वीत पंचसूनापनुत्तये ॥ २५४ ॥
कनीयान्गुणवांश्चैव ज्येष्ठश्चेन्निर्गुणोभवेत्
पूर्वं पाणिंगृहीत्वाच गृह्याग्निंधारयेद्बुधः ।
ज्येष्ठश्चेद्यदिनिर्दोषो गृह्णात्यग्निंयवीयकः
नित्यंनित्यंभवेत्तस्य ब्रह्महत्यानसंशयः ॥२५६॥
महापातकिसंस्पृष्टः स्नानमेवविधीयते ।
संस्पृष्टस्ययदाभुंक्ते स्नानमेवविधीयते ॥२५७॥
पतितैःसहसंसर्ग–मासाद्र्धंमासमेवच ।
गोमूत्रयावकाहारोमासार्द्धेनविशुद्ध्यति ॥ २५८

वृथापाक के अन्न को जो द्विजखाले वह इस प्रायश्चित्त को करे कि जलके में तीन बार प्राणायाम करके घृत को खाकर शुद्ध होता है ॥२५३॥ विधि स्थापित किये या चूल्हे आदि के या जिस में होम हो चुका हो ऐसे अग्नि या जल में अथवा भूमि पर बलि वैश्वदेव को पांच हत्या के दूर करने के निमित्त अवश्य करे ॥२५४॥ यदि जेठा भाई मूर्ख हो और छोटा विद्वान् हो वालो छोटा भाई जेठे से पहिले विवाह करके गृह्य अग्नि को धारण करे ॥२५५॥ यदि जेठा भाई निर्दोष हो और छोटा भाई अग्निहोत्र को ग्रहण कर ले तो प्रतिदिन उसे ब्रह्महत्या लगती है इस में संशय नहीं है ॥२५६॥ महापातकी जिस को छू लिया हो वह, और महापातकी से स्पर्श किये हुए ... जिस ने खिया हो वह इन दोनों की स्नान मात्र से शुद्धि ... पतितों के साथ जिसने पन्द्रह दिन अथवा ... दिन तक गोमूत्र और ...

क्रुच्छ्राद्धपतितस्यैवसकृद्भुक्त्वाद्विजोत्तमः ।
अविज्ञानाच्चतद्भुक्त्वा कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ॥ २५९ ॥
पतितानांयदाभुक्तंभुक्तंचाण्डालवेश्मनि ।
मासार्द्धंतुपिबेद्वारि इतिशातातपोऽब्रवीत् ॥ २६० ॥
गोब्राह्मणहतानांच पतितानांतथैवच ।
अग्निनानचसंस्कारःशंखस्यवचनंयथा ॥ २६१ ॥
यश्चाण्डालींद्विजोगच्छे-त्कथंचित्काममोहितः ।
त्रिभिःकृच्छ्रैर्विशुद्ध्येत प्राजापत्यानुपूर्वशः ॥२६२॥
पतितान्चान्नमादाय भुक्त्वावाब्राह्मणोयदि ।
कृत्वातस्यसमुत्सर्गमतिकृच्छ्रंविनिर्द्दिशेत् ॥ २६३ ॥
अन्त्यहस्तात्तुविक्षिप्तं काष्ठंलोष्ठंतृणानिच ।
नस्पृशेत्तुतथोच्छिष्ट-महोरात्रंसमाचरेत् ॥२६४॥
चाण्डालपतितंम्लेच्छंमद्यभाण्डंरजस्वलाम् ।

पतितके अन्नको जानबूझ एक बारखालेतो सांतपन कृच्छ्र व्रत करे तथा अज्ञान से पतित का अन्न खाले तो कृच्छ्रसान्तपनव्रत करे ॥ २५९ ॥ यदि पतितों का भोजन किया हो अथवा चांडालके घर में भोजन किया हो तो पन्द्रह दिन तक जल ही पीकर रहे उपवासकरे यह शातातप ऋषि ने कहा है ॥२६०॥ शंख के वचनानुसार गौ और ब्राह्मणों से मारे गये और पतितों का अग्नि से दाह नहीं करना चाहिये ॥२६१॥ यदि कामदेव से मोहित द्विज किसी प्रकार से चांडालीके संग गमन करे तो प्राजापत्य व्रत के पश्चात् तीन कृच्छ्र व्रत करके शुद्ध होता है ॥२६२॥ पतितके अन्न को लेकर या खाकर ब्राह्मण उस अन्न के त्यागने पर-अतिकृच्छ्रव्रतकरे ॥ २६३ अन्त्यज के हाथ से फेंके हुए काठ-ढेला और तृणों को और अन्त्यज के उच्छिष्ट को स्पर्श करके एक दिन रात का व्रत करे ॥२६४॥ यदि भोजन करता हुआ द्विज चांडाल-पतित-म्लेच्छ-मदिरा का पात्र और रजस्व-

द्विजःस्पृष्ट्वानभुञ्जीत भुञ्जानोयदिसंस्पृशेत् ॥२६५॥
अतःपरंतुभुञ्जीत त्यक्त्वान्नंस्नानमाचरेत् ।
ब्राह्मणैःसमनुज्ञातस्त्रिरात्रमुपवासयेत् ॥२६६॥
सघृतंयावकंप्राश्य व्रतशेषंसमापयेत् ।
भुञ्जानः संस्पृशेद्यस्तु वायसंकुक्कुटंतथा ॥ २६७ ॥
त्रिरात्रेणैवशुद्धिःस्या-द्योच्छिष्टस्त्वहेनतु ।
आरूढोनैष्ठिकेधर्मे यस्तुप्रच्यवतेपुनः ॥ २६८ ॥
चान्द्रायणंचरेन्मास-मितिशातातपोऽब्रवीत् ।
पशुवेश्याभिगमने प्राजापत्यंविधीयते ॥ २६९ ॥
गवांगमनेमनुप्रोक्तं व्रतंचान्द्रायणंचरेत् ।
अमानुषीषु गोवर्जं मुदक्यायामयोनिषु ॥ २७० ॥
रेतःसिक्त्वाजलेचैव कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ।
उदक्यांसूतिकांवापि अंत्यजांस्पृशतेयदि ॥२७१॥

। ज का स्पर्श करे तो भोजन न करे–अर्थात् उपवास करे ॥ २६५ ॥
ने के पश्चात् भोजन न करे किन्तु उस अन्न को त्याग कर स्नान करे
ाह्मणों की आज्ञा लेकर तीन उपवास करे ॥२६६॥ और घीसे मिले ज
ाकर बाकी व्रत को पूरा करे—यदि भोजन करता हुआ काक और मु
ले ॥२६७॥ तो तीन दिन में शुद्धि होती है यदि उच्छिष्ट हुआ पूर्वोक्तों का
रले तो एक दिन में शुद्ध होता है-जो नैष्ठिक धर्म जन्मभर ब्रह्मचारी रहन
या गुरु सेवाकी प्रतिज्ञा करके उसको त्यागता है ॥२६८॥ वह एक मा
चांद्रायण व्रत करे यह शातातप ऋषिने कहा है । पशु और वेश्या के संग
करने से प्राजापत्य व्रत कहा है ॥२६९॥ गौओं के संग गमन (मैथुन) कर के
हे कहे हुए चांद्रायण व्रतको करे–गौसे भिन्न पशु की योनि और रजस्वला
योनि से भिन्न (भूमि आदि) में ॥२७०॥ और जल में वीर्य को सींचकर कां
कृच्छ करे । चांडाली-सूतिका-और अंत्यज की स्त्री इनका यदि स्पर्श करे तो

त्रिरात्रेणैवशुद्धिःस्या-द्विधिरेषपुरातनः ।
संसर्गंयदिगच्छेच्चे-दुदक्यावातथांत्यजैः ॥ २७२
प्रायश्चित्तीसविज्ञेयः पूर्वंस्नानंसमाचरेत् ।
एकरात्रंचरेन्मूत्रं पुरीषंतुदिनत्रयम् ॥ २७३ ॥
दिनत्रयंतथापानं मैथुनेपंचसप्तवा ।

स्मृत्यन्तरे

अंगीकारेणज्ञातीनां ब्राह्मणानुग्रहेणच ॥ २७४ ॥
पूयन्तेतत्रपापिष्ठा महापातकिनोऽपिये ।
भोजनेतुप्रसक्तानां प्राजापत्यंविधीयते ॥ २७५ ॥
दंतकाष्ठेत्वहोरात्र-मेषशौचविधिःस्मृतः ।
रजस्वलायदास्पृष्टा श्वानचांडालवायसैः ॥ २७६ ॥
निराहाराभवेत्तावत् स्नात्वाकालेनशुद्ध्यति ।

तीन दिन में शुद्धि होती है,यह पुरानी विधिहै-रजस्वला और अन्त्यज स्त्री
इनके संग जो मेल होजाय ॥२७२॥ तो वह इस प्रायश्चित्त के योग्य है कि
पहिले स्नान करै फिर एक दिन गोमूत्र और तीन दिन गोवर को भक्षण
करै ॥ २७३ ॥ रजस्वला तथा अंत्यजा स्त्री इनके जलपान और मैथुन
करने में पांच अथवा सात दिन पूर्वोक्त प्रायश्चित्त करै-यह अन्यस्मृ
तियों में लिखा है कि कुटुम्बी पुरुषां के स्वीकार करने और ब्राह्मणों के
अनुग्रह से ॥ २७४ ॥ जो महापातकी भी पापी हैं वे भी पवित्र हो जाते
हैं और निषिद्ध नीच लोगों के भोजन में जो आसक्त हैं वे प्राजापत्य
करैं ॥२७५॥ नीच मनुष्यकी दी दातौन करने में जो प्रसक्त हैं वे एक दिनरात
प्रायश्चित्त करैं यह शौच की विधि कही=जिस रजस्वला स्त्री को कुत्ता चांडाल
काक ये स्पर्श करलें ॥२७६॥ वह रजकी शुद्धितक निराहार रहै और शुद्ध होने
समय (चौथेदिन) स्नान करके शुद्ध हो जाती है-यदि रजस्वला स्त्री को का

रजस्वलायदास्पृष्टा उष्ट्रजंबुकरांबरैः ॥ २७७ ॥
पञ्चरात्रंनिराहारा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
स्पृष्टारजस्वलान्योन्यंऽब्राह्मण्याब्राह्मणीचया २७८
एकरात्रंनिराहारा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
स्पृष्टारजस्वलान्योन्यं ब्राम्हण्याक्षत्रियाचया ॥२७९॥
त्रिरात्रेणविशुद्धिःस्याद् व्यासस्यवचनंयथा ।
स्पृष्टारजस्वलान्योऽन्यं ब्राह्मण्याशूद्रसंभवा ॥ २८० ॥
षड्रात्रेणविशुद्धिःस्याद् ब्राह्मणीकामकारतः ।
स्पृष्टारजस्वलान्योऽन्यंब्राह्मण्यावैश्यसंभवा ॥ २८१ ॥
चतूरात्रंनिराहारा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
अकामतश्चरेदूर्ध्वं ब्राह्मणीसर्वतःस्पृशेत् ॥ २८२॥
चतुर्णामपिवर्णानां शुद्धिरेषाप्रकीर्तिता ।
उच्छिष्टेनतुसंस्पृष्टो ब्राह्मणो ब्राह्मणेनयः ॥ २८२ ॥

ऊंटद्र–शंवर (बारहसिंगा) करलें ॥२७७॥तो पांच दिन तक निराहार रहे और फिर पंचगव्य से शुद्धि होती है –यदि ब्राह्मणी रजस्वला ने ब्राह्मणी रजस्वला का स्पर्श कर लिया हो ॥२७८॥ तो एक दिन निराहार रह कर पंचगव्य से शुद्धि होती है–यदि ब्राह्मणी रजस्वला ने क्षत्रिया रजस्वला का स्पर्श कर लिया होय ॥ २७९॥ तो व्यास के वचन के अनुसार क्षत्रिया तीन दिन में शुद्ध होती है–यदि ब्राह्मणी रजस्वला शूद्राणी रजस्वला का स्पर्श करले॥२८०॥ तो शूद्र स्त्री छः दिन में शुद्ध होती है और पूर्वोक्त रजस्वला ब्राह्मणी अपनी इच्छा के अनुसार कुछ व्रत आदि कर के शुद्ध हो जाती है–यदि ब्राह्मणी रजस्वला ने वैश्य जाति की रजस्वला का स्पर्श कर लिया होय ॥२८१॥ तो वैश्य स्त्री चार दिन निराहार रह कर पंचगव्य से शुद्ध होती है औरों की ॥ इच्छा के अनुसार ब्राह्मणी प्रायश्चित्त करै और फिर सब का स्पर्श करै ॥२८२॥ चारों वर्णों की यह शुद्धि कही है–यदि उच्छिष्ट ब्राह्मण ने उच्छिष्ट ब्राह्मण का स्पर्शकर लिया हो तो ॥ २८२ ॥

भोजनेमूत्रचारेच शंखस्यवचनंयथा ।
स्नानंब्राह्मणसंस्पर्शे जपहोमौतुक्षत्रिये ॥ २८३ ॥
वैश्येनक्तंचकुर्वीत शूद्रेचैवउपोषणम् ।
चर्मकेरजकेवैश्ये धीवरेनटकेतथा ॥ २८४ ॥
एतान्स्पृष्ट्वाद्विजोमोहा-दाचमेत्प्रयतोपिसन् ।
एतैःस्पृष्टोद्विजोनित्य-मेकरात्रंपयःपिबेत् ॥ २८५ ॥
उच्छिष्टैस्तैस्त्रिरात्रंस्याद् घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ।
यस्तुछायांश्वपाकस्य ब्राह्मणस्त्वधिगच्छति ॥ २८६
तत्रस्नानंप्रकुर्वीत घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ।
अभिशस्तोद्विजोऽरण्ये ब्रह्महत्याव्रतंचरेत् ॥२८७॥
मासोपवासंकुर्वीत चान्द्रायणमथापिवा ।
वृथामिथ्योपयोगेन भ्रूणहत्याव्रतंचरेत् ॥ २८८ ॥
अभक्षोद्वादशाहेन पराकेणैवशुद्ध्यति ।

भोजन के उच्छिष्ट में अथवा मूत्र के त्याग के उच्छिष्ट में शंख के वचनानुसार ब्राह्मण के स्पर्श में स्नान और क्षत्रिय के स्पर्श में जप होम कहे हैं ॥ २८३ ॥ और वैश्य के स्पर्श में रात भर व्रत करै और शूद्र के स्पर्श में एक उपवास करे–और चमार धोबी–वैश्य (वेश्या का पु) धींवर– और नट॥२८४॥इन का अज्ञान से ब्राह्मण स्पर्श करके सावधान हो आचमन करे यदि वे ब्राह्मण का स्पर्श करलें तो एक दिन दुग्धपान करै॥२८५॥ और यदि पूर्वोक्त चमार आदि उच्छिष्ट हुए ब्राह्मण का स्पर्श करलें तो ब्राह्मण तीन दिन का व्रत करके घृत को खाकर शुद्ध होताहै–यदि ब्राह्मण श्वपच की छाया में चले बैठे या खड़ा रहे २८६ ॥ तो स्नान करै और घृत खाकर शुद्ध होता है । जो ब्राह्मण अभिशस्त (कलंकित) हो वह वन में जाकर ब्रह्महत्या का व्रत करै कि ॥२८७ ॥ एक मास तक उपवास करै अथवा चांद्रायण करे । यदि वृथा ही (झूठा) हिंसा का दोष लगा हो तो भ्रूणहत्या का व्रत करै कि ॥२८८॥ बारह दिन उपवास हो अथवा करके पराक व्रत से शु

शठंचब्राह्मणंहत्वा शूद्रहत्याव्रतंचरेत् ॥ २८९ ॥
निर्गुणंचगुणीहत्वा पराकंव्रतमाचरेत् ।
उपपातकसंयुक्तो मानवोम्रियतेयदि ॥ २९० ॥
तस्यसंस्कारकर्ताच प्राजापत्यद्वयंचरेत् ।
अभुञ्जानोतिसस्नेहं कदाचित्स्पृश्यतेद्विजः ॥ २९१ ॥
त्रिरात्रमाचरेन्नक्तं-निःस्नेहमथवाचरेत् ।
विडालकाकाद्युच्छिष्टं जग्ध्वाश्वनकुलस्यच ॥२९२॥
केशकीटावपन्नंच पिबेद्ब्राह्मींसुवर्चसम् ।
उष्ट्रयानंसमारुह्य खरयानंचकामतः ॥ २९३ ॥
स्नात्वाविप्रोजितप्राणः प्राणायामेनशुद्ध्यति
सव्याहृतींसप्रणवां गायत्रींशिरसासह ॥ २९४ ॥
त्रिःपठेदायतप्राणः प्राणायामःसउच्यते ।

ता है । शठ ब्राह्मण को मार कर शूद्र की हत्या का व्रत करे ॥ २८९ ॥ विद्वान् ब्राह्मण मूर्ख को मार डाले तो पराक व्रत करे यदि जिस को उपपातक लगा हो वह मनुष्य मरजाय तो ॥ २९० ॥ उस का मृतक कर्म करने वाला दो प्राजापत्यव्रत करे । अत्यंत स्नेह सहित पदार्थ को भक्षण करते हुए ब्राह्मण को कदाचित् कोई छूले तो ॥ २९१ ॥ तीन दिन तक नक्त व्रत करे अथवा घृत के बिना रूखा भोजन करे । बिलाव काक-चूहा-नौला इन के उच्छिष्ट को भक्षण करके॥२९२॥ और जिस में बाल वा कीड़े पड़े हों ऐसी ब्राह्मी औषधि को पीवे। अपनी इच्छा से ऊंट-गधा इन के यान (सवा-री) पर बैठे तो ॥२९३॥ स्नान और सूक्ष्म भोजन करके प्राणायाम से शुद्ध होता है। भूरादि व्याहृतियों और (ओम्-आपोज्योती०) इस गायत्री शिर सहित गायत्री को॥२९४॥ तीन बार स्थिरचित्त हो पढ़े वह प्राणायाम कह-

शकृद्विगुणगोमूत्रं सर्पिर्दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ २९५ ॥
क्षीरमष्टगुणंदेयं पंचगव्यंतथादधि ।
पंचगव्यंपिबेच्छूद्रो ब्राह्मणस्तुसुरांपिबेत् ॥ २९६ ॥
उभौतौतुल्यदोषौचवसतोनरकेचिरम् ।
अजागावोमहिष्यश्च अमेध्यंभक्षयन्तियाः ॥ २९७ ॥
दुग्धंहव्येचकव्येच गोमयंनविलेपयेत् ।
ऊनस्तनीमधीकांवा याचस्वस्तनपायिनी ॥ २९८॥
तासांदुग्धंनहोतव्यं हुतंचैवाहुतंभवेत् ।
ब्रह्मौदनेचसोमेच सीमन्तोन्नयनेतथा ॥ २९९ ॥
जातश्राद्धेनवश्राद्धे भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ।
राजान्नंहरतेतेजः शूद्रान्नंब्रह्मवर्चसम् ॥ ३०० ॥
स्वसुतान्नंचयोभुङ्क्ते सभुङ्क्तेपृथिवीमलम् ।
स्वसुताअप्रजाताच नाश्नीयात्तद्गृहेपिता ॥ ३०१ ॥

ते हैं। गोबरसे दूना गोमूत्र चौगुना घी—॥२९५॥ आठ गुना दूध और आठ गु ना दही डाले यह पंचगव्य कहाता है। यदि शूद्र उक्त पंचगव्य को पीवे औ ब्राह्मण मदिरा को पीवे ॥ २९६ ॥ तो वे दोनों तुल्य दोष के भागी और चिरकाल तक नरक में बसते हैं। जो बकरी गौ और भैंस विष्ठादि अ शुद्ध वस्तु को खातीहों ॥२९७॥ तो हव्य और कव्य में उन का दूध न ले और उनं गोबर से लीपे भी नहीं। जिस के थन छोटे हों अथवा ४ से अधिक हों—जो रो गिन हो और जो अपने थन को स्वयं पीती हो ॥२९८॥ ऐसी गौ आदि के दू धसे होम न करे क्योंकि वह किया हुआ होम बिन किए के समान हो जाता है। ब्राह्मौदन (अग्न्याधानादि के समय चांवल बनते हैं) सोम यज्ञ—सीमंत न्न में॥२९९। और जातकर्म के श्राद्ध और नवक श्राद्ध में भोजन करके चांद्राय ण व्रत करे। राजा का अन्न तेज को और शूद्र का ब्रह्म तेज को हरता है ॥३०० अपनी लड़की के अन्न को जो खाता है वह जानो पृथिवी के मल को खात है और जिस लड़की के संतान न हुई हो उसके घरमें भी पिता न खावे॥३०१॥

भुक्त्वास्यामायान्नं पूयसंनरकंव्रजेत् ।
अधीत्यचतुरोवेदान्सर्वशास्त्रार्थतत्ववित् ॥ ३०२ ॥
नरेन्द्रभवनेभुक्त्वा विष्ठायांजायतेकृमिः ।
नवश्राद्धेत्रिपक्षेच षण्मासेमासिकेब्दिके ॥३०३॥
पतन्तिपितरस्तस्य योभुङ्क्तेनापदिद्विजः ।
चान्द्रायणंनवश्राद्धे पराकोमासिकेतथा ॥३०४॥
त्रिपक्षेचातिकृच्छ्रंस्यात् षण्मासेकृच्छ्रमेवच ।
आब्दिकेपादकृच्छ्रं स्या-देकाहःपुनराब्दिके ॥३०५॥
ब्रह्मचर्यमनाधाय मासश्राद्धेपुपर्वसु ।
द्वादशाहेत्रिपक्षेब्दे यस्तुपक्षेद्विजोत्तमः ॥३०६॥
पतन्तिपितरस्तस्य ब्रह्मलोकेगताअपि ।
पक्षेवायदिवामासे यस्यनाश्नन्तिवैद्विजाः ॥३०७॥

र जो प्रजा हीन लड़की के अन्न को खा से खाता है वह पूयस नामक न
जाता है—चार वेदों को पढ़कर सब शास्त्रों के तत्त्व को जानने वाला पु
२॥ राजा के घर में भोजन करके विष्ठा में कीड़ा होता है। नवक श्राद्ध [मनुष्य
ने पर ग्यारहवें दिन के श्राद्ध को नव वा नवक श्राद्ध कहते हैं] त्रिपक्ष
महीने का मासिक और वार्षिक इन श्राद्धों में ॥३०३॥ आपत्ति के विना
ब्राह्मण भोजन करता है उस के पितर नरक में पड़ते हैं। नवक श्राद्ध में चां
ण, मासिकश्राद्ध में पराक, ॥३०४॥ त्रिपक्ष (१॥ मास) के श्राद्ध में अति कृ
महीने के श्राद्ध में कृच्छ्र पहिले वार्षिक वर्षी में पाद कृच्छ्र, और दूसरे वार्षि
एक दिन उपवास करे ॥३०५॥ विना ब्रह्मचर्य से किए मासिक श्राद्ध में
पूर्णमासी आदि) में मृतक के द्वादशाह में—त्रिपक्ष में—और वार्षिक श्
जो ब्राह्मण भोजन करता है ॥ ३०६ ॥ ब्रह्मलोक में गये भी उस के पि
रक में जाते हैं। जिस गृहस्थी के घर में पक्ष अथवा महीने में ब्राह्मण
न न करते हैं ॥ ३०७ ॥

भुक्त्वादुरात्मनस्तस्य द्विजश्चान्द्रायणंचरेत् ।
एकादशाहेऽहोरात्रं भुक्त्वासंचयनेत्र्यहम् ॥ ३०८ ॥
उपोष्यविधिवद्विप्रः कूष्मांडींजुहुयाद्घृतम्
यन्नवेदध्वनिस्नातं नचगोभिरलंकृतम् ॥३०९॥
यन्नवालैःपरिवृतं श्मशानमिवतद्गृहम् ।
हास्येपिवहवोयत्र विनाधर्मंवदन्तिहि ॥३१०॥
विनापिधर्मशास्त्रेण सधर्मोपावनःस्मृतः ।
हीनवर्णंचयःकुर्यात अज्ञानादभिवादनम् ॥ ३११ ॥
तत्रस्नानंप्रकुर्वीत घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ।
समुत्पन्नेयदास्नाने भुङ्क्तेवापिपिवेद्यदि ॥३१२॥
गायत्र्यष्टसहस्रंतु जपेत्स्नात्वासमाहितः ।
अंगुल्यादन्तकाष्टंच प्रत्यक्षंलवणंतथा ॥ ३१३ ॥

उस दुष्टचित्त वाले के अन्न को खाकर द्विज चांद्रायण व्रत करे। मृतक के ११
वें दिन भोजन करके एक रात दिन और अस्थि संचयन के दिन भोजन करे
तीन दिन तक ॥३०८॥ विधि से उपवास करके बैठे और घी से हवन करे। जो
घर वेद के उच्चारण से पवित्र नहीं—और जो गौओं से शोभायमान नहीं
॥ ३०९ ॥ और जो बालकों से भराहुआ नहीं है वह घर मरघट भूमि के तुल्य
है। हंसी में भी जहां बहुत मनुष्य अधर्म से भिन्न जो कुछ कर्त्तव्य कहते
३१० ॥ और चाहे वह उन बहुत मनुष्यों का कथन धर्म शास्त्र के विरुद्ध
होतो वह उनका कथन परम धर्म कहा है— जो अपने से नीचे वर्ण को
ज्ञान से अभिवादन करता है ॥ ३११ ॥ वह मनुष्य स्नान कर के घी को
तो शुद्ध होता है—जो स्नान के योग्य मनुष्य बिना स्नान किये भोजन
अथवा जलपान करले तो ॥३१२॥ स्नान करके सावधानता से आठ
गायत्री जपे। अंगुली सहित दातौन प्रत्यक्ष (केवल) लवण का भक्षण ॥

मृत्तिकाभक्षणंचैव तुल्यंगोमांसभक्षणम् ।
दिवाकपित्थच्छायायां रात्रौदधिशमीषुच ॥३१४॥
कर्पासन्दन्तकाष्ठंच विष्णोरपिश्रियंहरेत् ।
शूर्पवातोनखाग्रांबु स्नानवस्त्रंघटोदकम् ॥ ३१५ ॥
मार्जनीरजकेशांबु देवतायतनोद्भवम् ।
येनावलुण्ठितंतेषु गङ्गांभःप्लुतएवसः ॥ ३१६ ॥
मार्जनीरेणुकेशांबु हन्तिपुण्यंदिवाकृतम् ।
मृत्तिकाःसप्तनग्राह्या वल्मीकेऊपरस्थले ॥ ३१७ ॥
अंतर्जलेश्मशानांते वृक्षमूलेसुरालये ।
वृषभैश्चतथोत्खाते श्रेयस्कामैःसदाबुधैः ॥ ३१८ ॥
शुचौदेशेसुसंग्राह्या शर्कराश्मविवर्जिता ।

ा' मिट्टी का भक्षण करने से समान दूषित है दिन में कैथ की या रात्रि में दधि का भक्षण शमी (छोंकर) की छाया ॥ ३१४ ॥ और कपास की दातौन ये विष्णु की भी लक्ष्मी को हरते हैं अर्थात् ये विष कर चिकित्सा शास्त्रके अनुसार भी अधिक हानिकारक हैं। –सूप पवन–नखों के अग्रभाग का जल–स्नान का वस्त्र–और घटका जल ॥३१५॥ और मार्जनी (झाड़ू) की धूल–और केशों का जल यदि ये पूर्वोक्त छःओं देवता के स्थान के हों और इनमें जो लोटे लोचक पुरुषगाजो गंगाजीके जलमें गो ॥३१६॥ मार्जनी की धूल और केशों का जल ये दोनों दिन भरमें किये पुण्य को नष्टकरते हैं–खास जगह की मिट्टी ग्रहण न करे धमी की भुमों के स्थान की ॥३१७॥ जल के भीतर की–श्मशान की–वृक्ष की जड़ की–देवता के स्थान की–और जो बैलों ने खोदी हो इन सातों को कल्याण चाहने वाला ब्राह्मण शुभ काम के लिये ग्रहण न करे ॥३१८॥ कङ्कर और पत्थर जिस में न हों ऐसी शुद्ध स्थान की मिट्टी ग्रहण करे। और किरात, भील, डोम, लघुपट्टा, और इन–

पुरीषेमैथुनेहोमे प्रस्रावेदंतधावने ॥ ३१९ ॥
स्नानभोजनजाप्येषु सदामौनंसमाचरेत् ।
यस्तुसंवत्सरपूर्णं भुङ्क्तेमौनेनसर्वदा ॥ ३२० ॥
युगकोटिसहस्रेषु स्वर्गलोकेमहीयते ।
स्नानंदानंजपंहोमं भोजनंदेवतार्चनम् ॥ ३२१
व्यूढपादोनकुर्वीत स्वाध्यायःपितृतर्पणम् ।
सर्वस्वमपियोदद्यात् पातयित्वाद्विजोत्तमम् ॥ ३२२
नाशयित्वातुतत्सर्वं भ्रूणहत्याफलंभवेत् ।
ग्रहणोद्वाहसंक्रांतौ स्त्रीणांचप्रसवेतथा ॥ ३२३ ॥
दानंनैमित्तकंज्ञेयं रात्रावपिप्रशस्यते ।
क्षौमजंवाथकार्पासं पट्टसूत्रमथापिवा ॥ ३२४ ॥
यज्ञोपवीतंयोदद्या-द्वस्त्रदानफलंलभेत् ।
कांस्यस्यभोजनंदद्याद् घृतपूर्णसुशोभनम् ॥ ३२५

धावन करते समय तथा ॥३१९॥ स्नान, भोजन, और जप करते समय
धारण करे । जो मनुष्य एक वर्ष भर सदा मौन होकर भोजन करता है
वह एक हजार किरोड़ युग तक स्वर्ग लोक में पूजा को प्राप्त होता है
दान, जप, होम, भोजन, और देवता का पूजन ॥३२१॥ वेद का पढ़
पितरों का तर्पण इन आठ कामों को पांव पसार कर न करे । जो म
होकर अर्थात् ब्राह्मण मार कर अपने सर्व धनादि को भी दान देता है
तो भी वह उस सब को नष्ट कराकर भ्रूण (गर्भ) हत्या के
प्राप्त होता है । ग्रहण, विवाह, संक्रान्ति, और स्त्रियों का प्रसव-
पर दिया दान नैमित्तिक जानो यह दान रात्रि में भी ॥३२३॥ करना
है-रेशम-सूत-पाट का सूत्र इन के ॥ ३२४ ॥ यज्ञोपवीत को जो दे
वस्त्र दान के फल को प्राप्त होता है-जो घी से भरे कांसे के पात्र को देत

तथाऽन्यथाविधानेन अग्निष्टोमफलंलभेत् ।
श्राद्धकालेतुयोदद्यात् शोभनेचउपानहौ ॥ ३२६ ॥
नगच्छत्यक्षमार्गेपि अश्वदानफलंलभेत् ।
तैलपात्रंतुयोदद्यात्संपूर्णंसुसमाहितः ॥ ३२७ ॥
सगच्छतिध्रुवंस्वर्गं नरोनास्त्यत्रसंशयः ।
दुर्भिक्षेअन्नदाताच सुभिक्षेचहिरण्यदः ॥ ३२८ ॥
पानप्रदस्त्वरण्येतु स्वर्गलोकेमहीयते ।
यावद्वर्धप्रसूतागौस्तावत्सापृथिवीस्मृता ॥३२९॥
पृथिवीतेनदत्तास्या-दीदृशींगांददातियः ।
तेनाग्नयोहुताःसम्यक् पितरस्तेनतर्पिताः ॥३३०॥
देवाश्चपूजिताःसर्वे योददातिगवान्हिकम् ।
जन्मप्रभृतियत्पापं-मातृकंपैतृकंतथा ॥ ३३१ ॥
तत्सर्वंनश्यतिक्षिप्रं वस्त्रदानान्नसंशयः ।

और विधि से देने वाला पुरुष अग्निष्टोम यज्ञ के फल को प्राप्त
है। जो श्राद्ध के समय सुन्दर उपानह दान में देता है ॥३२६॥ वह जिस
न मिले ऐसे मार्ग में गमन करता हुआ अश्व के दान के फल को प्राप्त
है-जो सावधान होकर भरा हुआ तैल का पात्र देता है। ३२७ ॥ वह
र निश्चय से स्वर्ग में जाता है इस में सन्देह नहीं है-दुर्भिक्ष में
का दाता सुभिक्ष में सुवर्ण का देने वाला ॥ ३२८ ॥ और वन जंगल में
र द्वारा जल का दान करने वाला स्वर्ग लोक में पूजा को प्राप्त होता है।
तक गौ अधब्यानी (आधा बच्चा भीतर और आधा बाहर) हो तब
वह पृथिवी के तुल्य है ॥ ३२९ ॥ जिसने ऐसी गौ दी उसने मानो पृथिवी
दान किया। उसने मानो अग्निहोत्र किया और उसीने पितर तृप्त किये॥३३०॥
उसीने संपूर्ण देवता पूजे कि जो गौ को प्रति दिन खाने को देता है। जन्म
कर जो पाप किया तथा माता वा पिता का जो अपराध किया हो ॥३३१॥
संपूर्ण वस्त्र के देने से उसी समय नष्ट हो जाता है। सकुलादि सहित कर

कृष्णाजिनंतुयोदद्या-त्सर्वोपरकरसंयुतम् ॥ ३३२ ॥
उद्धरेन्नरकस्थाना- त्कुलान्येकोत्तरंशतम् ।
आदित्योवरुणोविष्णुर्ब्रह्मासोमोहुताशनः ॥ ३३३ ॥
शूलपाणिस्तुभगवान् अभिनन्दतिभूमिदम् ।
वालुकानांकृताराशि-र्यावत्सप्तर्षिमण्डलम् ॥ ३३५ ॥
गतेऽब्दशतेचैव पलमेकंविशीर्यति ।
क्षयंचदृश्यतेतस्य कन्यादानेनचैवहि ॥३३६॥
आतुरेप्राणदाताच त्रीणिदानफलानिच ।
सर्वेषामेवदानानां विद्यादानंततोधिकम् ॥ ३३७ ॥
पुत्रादिस्वजनेदद्या-द्विप्रायचनकैतवे ।
सकामःस्वर्गमाप्नोति निष्कामोमोक्षमाप्नुयात् ॥३३८॥
ब्राह्मणेवेदविदुषि सर्वशास्त्रविशारदे ।
मातृपितृपरेचैव ऋतुकालाभिगामिनि ॥ ३३९ ॥

ली मृगछाला को जो देता है ॥ ३३२ ॥ वह नरक में पड़े एक सौ एक कुलों का उद्धार करता है । सूर्य—वरुण—विष्णु—ब्रह्मा—चन्द्रमा—अग्नि ॥ ३३३ और भगवान् शिव जी भूमि के देने वाले की प्रशंसा करते हैं । सात ऋषि के मंडल पर्यन्त किया जो बालू (रेत) का ढेर है॥३३५॥ वह सौ वर्ष पीछे पल २ भी कमती होने से नष्ट हो जाता है परन्तु कन्या के दान में जो होता है वह नष्ट नहीं होता ॥३३६॥ आतुर (दुःखी) को प्राण का दान देता है उसको दान के तीन फल (धर्म अर्थ काम) होते हैं । सब दानों बीच में सब से अधिक विद्या का दान है ॥३३७॥ पुत्र आदि स्वजन को—सुपात्र ब्राह्मण को विद्या दे और कपटी को न दे—कुछ कामना रखने वा स्वर्ग को तथा किसी द्रव्य आदि की इच्छा न करने वाला मोक्ष को होता है ॥ ३३८ ॥ जो ब्राह्मण वेद को जानता हो, शास्त्रों में जो हो माता पिता का भक्त हो—और जो ऋतु के समय में ही स्त्री करता हो ॥ ३३९ ॥

शीलचारित्रसंपूर्णं प्रातःस्नानपरायणे ।
तस्यैवदीयतेदानं यदीच्छेच्छ्रेयआत्मनः ॥ ३४० ॥
संपूज्यत्रिदुषोविप्रान् अन्येभ्योपिप्रदीयते ।
तत्कार्यंनैवकर्तव्यं नदृष्टंनश्रुतंमया ॥ ३४१ ॥
अतःपरंप्रवक्ष्यामि श्राद्धकर्मणियेद्विजाः ।
पितृणामक्षयंदानं दत्तंयेषांतुनिष्फलम् ॥ ३४२ ॥
नहीनांगोनरोगीच श्रुतिस्मृतिविवर्जितः ।
नित्यंचानृतवादीच वणिक्श्राद्धेनभोजयेत् ॥३४३॥
हिंसारतंचकपटमुपगुह्यश्रुतंचयः ।
किंकरंकपिलंकाणं श्वित्रिणंरोगिणंतथा ॥ ३४४ ॥
दुश्चर्माणंशीर्णकेशं पाण्डुरोगंजटाधरम् ।
भारवाहितरौद्रंच द्विभार्यंवृपलीपतिम् ॥ ३४५ ॥

शील तथा उत्तम आचरण में लगा हो और प्रातःकाल स्नान में जो तत्पर
ऐसे सुपात्र ब्राह्मण को अपना कल्याण चाहने वाला दाता दान दे ॥३४०॥
द्वान् ब्राह्मण का प्रथम पूजन करके अन्य (मूर्ख) ब्राह्मणों को दान देवे ।
ीर उस कार्य को नहीं करना जिस को स्वयं न देखा और न सुना हो ॥३४१॥
स से आगे यह कहते हैं कि श्राद्ध कर्म में कैसे ब्राह्मण हों कि पितरों के नि-
मित्त जिन को दिया दान अक्षय फल दायक होता और जिन को दिया नि-
फल होता है ॥ ३४२ ॥ लूला लंगड़ा आदि (रोगी) श्रुति स्मृति को न प-
ा न जानता हो–जो नित्य झूठ बोलता हो जो व्यापारी हो इन ब्राह्मणों
ो श्राद्ध में न जिमावे ॥ ३४३ ॥ हिंसा में तत्पर–कपटी–और जो अपने वेद
को छिपा कर किंकर यम नाथ–पीला–काणा–श्वेतकुष्ठ या अन्य रोग जिसे
घेरे हो ॥ ३४४ ॥ जिस के देह की त्वचा बिगड़ी फटी हो–जिस के केश गिर
पड़े हों–पाण्डुरोगी–जटाधारी–भार (बोझ) का ढोने वाला–भयानक–जिस
की दो स्त्री हों–शूद्र स्त्री से जिस ने विवाह किया हो ॥ ३४५ ॥

भेदकारीभवेच्चैव वहुपीडाकरोपिवा ।
हीनातिरिक्तगात्रोवा तमप्यपनयेत्तथा ॥ ३४६ ॥
वहुभोक्तादीनमुखो मत्सरीक्रूरबुद्धिमान् ।
एतेषांनैवदातव्यः कदाचित्तुप्रतिग्रहः ॥ ३४७ ॥
अथचेन्मन्त्रविद्युक्तः शारीरैःपंक्तिदूषणैः ।
अदुष्यंतंयमःप्राह पंक्तिपावनएवसः ॥ ३४८ ॥
श्रुतिःस्मृतिश्चविप्राणां नयनेद्वेप्रकीर्तिते ।
काणःस्यादेकहीनोपि द्वाभ्यामन्धःप्रकीर्तितः ॥३४९
नश्रुतिर्नस्मृतिर्यस्य नशीलंनकुलंयतः ।
तस्यश्राद्धंनदातव्यं ह्यन्धकस्यात्रिरब्रवीत् ॥३५०॥
तस्माद्वेदेनशास्त्रेण ब्राह्मण्यंब्राह्मणस्यतु ।
नचैकेनैववेदेन भगवानत्रिरब्रवीत् ॥ ३५१ ॥

भेद का कर्ता (मन फटाने वाला) वहुतों को पीड़ा करने वाला जिस के अङ्ग
हीन (कम) अथवा अधिक हों-इन को श्राद्ध में से दूरकरदे ॥ ३४६॥ वहुत खा
वाला-जिसके मुखपर दीनताभलकती हो-जो दूसरेके गुणोंमें दोषोंको देख
हो-कठोर जिस की बुद्धि हो-ऐसे को कदाचित भी दान नहीं देवे ॥ ३४७
जो ब्राह्मण वेद को पढ़ा हो तथा जानता हो और चाहै वह शरीर में
दोष कहे हैं उन वाला भी हो-तो भी उस को यम ने शुद्ध कहा है क्यों
वह पङ्क्ति को पवित्र करने वाला है ॥ ३४८ ॥ वेद और स्मृति ये दोनों
ब्राह्मणों के नेत्र कहे हैं-इन के मध्य में एक को जो नहीं जानता वह का
और जो दोनों को न जानता हो वह अंधा शास्त्र में कहा है ॥ ३४
जो न वेद को और न स्मृति को जानता हो-न शील वान् हो-न कुलीन
उस अंधे को श्राद्ध में निमन्त्रण नहीं देना यह अत्रि ऋषि ने कह
॥ ३५० ॥ जिस से ब्राह्मण का ब्राह्मणपन वेद और शास्त्र से ही है किन्तु
वेद से नहीं है यह भगवान् अत्रि ने कहा है ॥ ३५१ ॥

योगस्थैर्लोचनैर्युक्तः पादाग्रंचप्रपश्यति ।
लौकिकज्ञश्चशास्त्रोक्तं पश्येच्चैपोधरोत्तरम् ॥३५२॥
वेदैश्चऋषिभिर्गीतं दृष्टिमान्शास्त्रवेदवित् ।
व्रतिनंचकुलीनंच श्रुतिस्मृतिरतंसदा ॥३५३ ॥
तादृशंभोजयेच्छ्राद्धे पितृणामक्षयंभवेत् ।
यावतोग्रसतेग्रासान् पितृणांदीप्ततेजसाम् ॥३५४॥
पितापितामहश्चैव तथैवप्रपितामहः ।
नरकस्थाविमुच्यंते ध्रुवंयांतित्रिविष्टपम् ॥ ३५५ ॥
तस्माद्विप्रंपरीक्षेत श्राद्धकालेप्रयत्नतः ।
ननिर्वपतियःश्राद्धंप्रमीतपितृकोद्विजः ॥३५६ ॥
इन्दुक्षयेमासिमासि प्रायश्चित्तीभवेत्तुसः ।
सूर्येकन्यागतेकुर्या-च्छ्राद्धंयोनगृहाश्रमी ॥३५७ ॥

योग शास्त्र में कहे अनुसार जिस के नेत्र हों—और अपने चरणों के अग्रभाग को ही जो देखता है अर्थात् कहीं भी कुदृष्टि न करता हो लौकिक व्यवहार जानता हो और शास्त्र में कहे ऊंच नीच को जो देखता हो ॥३५२॥ और ज्ञानवान् हो-शास्त्र और वेद का ज्ञाता हो-व्रत करने वाला हो-कुलीन हो-वेद और स्मृतियों के पठन और पाठन में जो तत्पर हो ॥३५३॥ ऐसे ब्राह्मण को श्राद्ध में जिमावे तो पितरों को अक्षय तृप्ति होती है। प्रदीप्त तेज वाले पितरों करके भी जितने ग्रासों को पूर्वोक्त ब्राह्मण खाता है उतने ही शीघ्र २ ॥३५४॥ पिता-पितामह-और प्रपितामह ये सब नरक में पड़े हुए भी मुक्त हो जाते हैं और निश्चय कर स्वर्ग को प्राप्त हो जाते हैं ॥३५५॥ तिस से श्राद्ध के समय बड़े यत्न से ब्राह्मण की परीक्षा करे। जिस द्विज का पिता मरगया हो यदि वह ॥३५६॥ महीने २ में अमावस के दिन श्राद्ध नहीं करता तो प्रायश्चित्त के योग्य होता है। कन्या के सूर्य कन्यागत कहाते तभी का विगड़ा शब्द (कनागत) होगया है उस काल में जो गृहस्थी श्राद्ध न करे ॥३५७॥

धनंपुत्रानकुलंतस्य पितृनिश्वासपीडया ।
कन्यागतेसवितरि पितरोयान्तिसत्सुतान् ॥ ३५८ ॥
शून्याप्रेतपुरीसर्वा यावद्वृश्चिकदर्शनम् ।
ततोवृश्चिकसंप्राप्ते निराशाःपितरोगताः ॥३५९ ॥
पुनःस्वभवनंयान्ति शापंदत्वासुदारुणम् ।
पुत्रंवाभ्रातरंवापि दौहित्रंपौत्रकंतथा ॥ ३६० ॥
पितृकार्यैप्रसक्तायेतेयान्तिपरमांगतिम् ।
यथानिर्मथनादग्निः सर्वकाष्ठेपुतिष्ठति ॥ ३६१ ॥
तथासंदृश्यतेधर्मः श्राद्धदानान्नसंशयः ।
यःप्राप्नोतितदासर्वं कन्यागतेचगंगया ॥ ३६२ ॥
सर्वशास्त्रार्थगमनं सर्वतीर्थावगाहनम् ।
सर्वयज्ञफलंविद्या=च्छ्राद्धदानान्नसंशयः ॥ ३६३ ॥
महापातकसंयुक्तो योयुक्तश्चोपपातकैः ॥]

तो पितरों की लंबीश्वास द्वारा उस का धन पुत्र और कुल न[illegible]
होता है। कन्या राशि पर जब सूर्य आते हैं तब पितर अपने उत्तम पुत्रों [illegible]
समीप आते हैं ॥ ३५८ ॥ जब तक वृश्चिक की संक्रांति नहीं लगती तब त[illegible]
यमराज की पुरी शून्य रहती है फिर वृश्चिक संक्राति के आते ही निर[illegible]
होकर पितर लौट जाते हैं ॥ ३५९ ॥ फिर वे बड़ा भयानक शाप देकर अ[illegible]
लोक को चले जाते हैं पुत्र-भाई-लड़की का लड़का-और पोता ॥ ३६० ॥
ये सब पितरों के श्राद्ध में तत्पर हों तो वे भी परम गति को प्राप्त [illegible]
हैं-जैसे मथने से सब काठों में अग्नि की स्थिति दीखती है ॥३६१॥ वैसे ही [illegible]
के देने से धर्म का विस्तार प्रत्यक्ष दीखता है इस में संशय नहीं है। औ[illegible]
कनागतों में गंगा पर श्राद्ध करता है उसे यह फल प्राप्त होता है ॥ [illegible]
[illegible] के अर्थों को जानना-सब तीर्थों में स्नान-और सब [illegible]

घनैर्मुक्तोयथाभानू राहुमुक्तश्चचन्द्रमाः ॥ ३६४ ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वपापंविलङ्घयेत् ।
सर्वसौख्यमवंप्राप्तः श्राद्धदानान्नसंशयः ॥ ३६५ ॥
सर्वेषामेवदानानां श्राद्धदानंविशिष्यते ।
मेरुतुल्यंकृतंपापं श्राद्धदानंविशोधनम् ॥३६६॥
श्राद्धंकृत्वातुमर्त्योवै स्वर्गलोकेमहीयते ।
अमृतंब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियान्नंपयःस्मृतम ॥ ३६७ ॥
वैश्यस्यचान्नमेवाज्यं शूद्रान्नंरुधिरंभवेत् ।
एतत्सर्वंमयाख्यातं श्राद्धकालेसमुत्थिते॥ ३६८ ॥
वैश्वदेवेचहोमेच देवताभ्यर्चनेजपेत् ।
अमृतंतेनविप्रान्नं ऋग्यजुःसामसंस्कृतम् ॥ ३६९ ॥
व्यवहारानुपूर्व्येण धर्मेणावलिभिर्जितम् ।

फल श्राद्ध के दान से जानो इस में संदेह नहीं है ॥ ३६३ ॥ जो महापातकी वा उपपातकी हो वह पुरुष भी श्राद्ध के दान से मेघों में से निकले सूर्य और राहु से छूटे चन्द्रमा के समान शुद्ध निर्दोष होता है ॥ ३६४ ॥ और वह सब पापों से छूटा हुआ सब पापों के पार हो जाता तथा श्राद्ध के देने से सब सुखों को प्राप्त होता है इस में सन्देह नहीं है ॥ ३६५ ॥ सब दानों में श्राद्ध का दान अधिक फल देने वाला है मेरु पहाड़ के तुल्य जो पाप किया हो तो उस से भी शुद्ध करने वाला श्राद्ध का दान है ॥ ३६६ ॥ मनुष्य श्राद्ध कर के स्वर्गलोक में पूजा जाता है ब्राह्मण का अन्न श्राद्ध में अमृत रूप क्षत्रिय का अन्न दूध रूप ॥ ३६७ ॥ वैश्य का अन्न घृत रूप और शूद्र का अन्न रुधिर रूप होता है—यह जो सब हम ने कहा है इस को श्राद्ध के समय, बलि वैश्वदेव, होम, देवताओं का पूजन, इन कामों में जपे ॥ ३६८ ॥ ऋग्वेद-यजुर्वेद सामवेद-के मन्त्रों से ब्राह्मण का अन्न निर्मल होने से अमृत रूप है ॥ ३६९ ॥ व्यवहार के क्रम से और धर्म से बलवानों को जीत कर संचय किया है इन में क्षत्री

क्षत्रियान्नंपयस्तेन घृतान्नंयज्ञपालने ॥३७०॥
देवोमुनिर्द्विजोराजा वैश्यःशूद्रोनिषादकः ।
पशुर्म्लेच्छोऽपिचांडालो विप्रादशविधाःस्मृताः ॥३७१॥
संध्यांस्नानंजपंहोमंदेवतानित्यपूजनम् ॥
अतिथिंवैश्वदेवंच देवब्राह्मणउच्यते ॥३७२॥
शाकेपत्रेफलेमूले वनवासेसदारतः ।
निरतोऽहरहःश्राद्धे सविप्रोमुनिरुच्यते ॥ ३७३ ॥
वेदान्तंपठतेनित्यंसर्वसंगंपरित्यजेत् ।
सांख्ययोगविचारस्थः सविप्रोद्विजउच्यते ॥३७४ ॥
अस्त्राहताश्चधन्वानः संग्रामेसर्वसंमुखे ।
आरंभेनिर्जितायेन सविप्रःक्षत्रउच्यते ॥ ३७५ ॥
कृषिकर्मरतोयश्च गवांचप्रतिपालकः ।
वाणिज्यव्यवसायश्च सविप्रोवैश्यउच्यते ॥ ३७६ ॥

का अन्न दूध रूप है और यज्ञ की रक्षा करने से वैश्य का अन्नघृत रूप है ।३७०। देव, मुनि, द्विज, राजा, वैश्य, शूद्र, निषाद, पशु, म्लेच्छ, चांडाल ये दश प्रकार के (जिन को आगे कहते हैं) ब्राह्मण कहे हैं ॥ ३७१ ॥ संध्या स्नान,+जप,+होम, देवपूजा, अतिथि सत्कार और बलिवैश्वदेव इनक ों को नित्य नियम से जो करै–उस ब्राह्मण को देव कहते हैं ॥ ३७२ ॥ शाक, पत्ते, फल, मूल इन को भक्षण करै सदा ही एकान्त रहने में प्रसन्न तथा प्रति दिन श्राद्ध करने में जो तत्पर हो उस ब्राह्मण को मुनि कहते ॥३७३॥ जो वेदान्तको नित्य पढ़े और सब के संग को त्यागे सांख्य और योग शा विचार में जो स्थिर हो उस ब्राह्मण को द्विज कहते हैं॥३७४॥ जिसने सब सम्मुख संग्राम में धनुषधारियों को शस्त्रास्त्रों से मारा हो और जिसने आरं युद्ध को जीता हो उस ब्राह्मण को क्षत्री कहते हैं ॥३७५॥ जो खेती के क में तत्पर हो और गौओं के पालने में तत्पर हो–जो लेन देन करता हो उ ब्राह्मण को वैश्य कहते हैं ॥ ३७६ ॥

लाक्षालवणसंमिश्र कुसुंभक्षीरसर्पिषः ।
विक्रेतामधुमांसानां सविप्रःशूद्रउच्यते ॥ ३७७ ॥
चौरश्चतस्करश्चैव सूचकोदंशकस्तथा ।
मत्स्यमांसेसदालुब्धो विप्रोनिषादउच्यते ॥ ३७८ ॥
ब्रह्मतत्वंनजानाति ब्रह्मसूत्रेणगर्वितः ।
तेनैवसचपापेन विप्रःपशुरुदाहृतः ॥ ३७९ ॥
वापीकूपतड़ागाना-मारामस्यसरस्सुच ।
निश्शंकंरोधकश्चैव सविप्रोम्लेच्छउच्यते ॥ ३८० ॥
क्रियाहीनश्चमूर्खश्च सर्वधर्मविवर्जितः ।
निर्दयःसर्वभूतेषु विप्रश्चांडालउच्यते ॥ ३८१ ॥
वेदैर्विहीनाश्चपठन्तिशास्त्रं
शास्त्रेणहीनाश्चपुराणपाठाः ।

लाख, लवण कुसुम दूध घी मिठाई शहद मांस इन को जो बेचे उस ब्राह्मण को शूद्र कहते हैं ॥ ३७७ ॥ जो चोरी, ठगई लूट निन्दा कठोर आक्षेप करने वाला तथा मछली के मांस का लोभी हो ऐसे ब्राह्मण को निषाद पथिक हिंसक कहते हैं ॥३७८॥ जो ब्रह्म (वेद) के तत्त्व को न जाने और यज्ञोपवीत का जिसे अभिमान हो उसी पाप से उस ब्राह्मण को पशु कहते हैं ॥३७९॥ बावरी, कूप, ताल बाग, छोटा तालाब इनको जो निश्शंक होकर रोके उस ब्राह्मण को म्लेच्छ कहते हैं ॥३८०॥ जो ब्राह्मण के सब कर्मों से हीन हो-मूर्ख हो-सर्वधर्मों से रहित हो किसी भी प्राणी पर जिस को दया न हो ऐसे ब्राह्मण को चांडाल कहते हैं ॥३८१॥ वेद जिन्हें नहीं आता वे इतर शास्त्रों को पढ़ते हैं और शास्त्र जिन्हें नहीं आते वे पुराणों को पढ़ते हैं-पुराण भी जिन्हें नहीं आते वे खेती करते हैं और जिनसे खेती भी नहीं हो सकती वे भागवत नाम दिखा के बाल रखा के

अब्दमेकंनकुर्वीत महागुरुनिपातत: ॥३९३॥
गंगागयात्वमावास्या वृद्धिश्राद्धेक्षयेहनि ।
मघापिण्डप्रदानंस्या–दन्यत्रपरिवर्जयेत् ॥ ३९४॥
घृतंवायदिवातैलं पयोवायदिवादधि ।
चत्वारोह्याज्यसंस्थाना हुतंनैवतुवर्जयेत् ॥ ३९५॥
श्रुत्वैतान्नृपयोधर्मान् भाषितानत्रिणास्वयम् ।
इदमूचुर्महात्मानं सर्वेतेधर्म्मनिष्ठिता: ॥ ३९६ ॥
यइदंधारयिष्यन्ति धर्मशास्त्रमतन्द्रिताः ।
इहलोकेयश:प्राप्य तेयास्यन्तित्रिविष्टपम् ॥ ३९७॥
विद्यार्थीलभतेविद्यां धनकामोधनानिच ।
आयुष्कामस्तथैवायु: श्रीकामोमहतीं श्रियम् ॥३९८॥

इति श्रीअत्रिमहर्षिनिर्मिता स्मृतिः समाप्ता ॥

महादान और तिलों से तर्पण न करै ॥ ३९३॥ गंगा—गया—अमावस—वृद्धि हु (नांदी सुख) रूपी श्राद्ध कनागत का और मघा नक्षत्र में पिण्डदान को जो पिता के मरणे के अनंतर वर्ष के मध्य में भी करे और इन से कर्मों का त्याग दे ॥३९४॥ घी—तिलका तैल—दूध—दही—ये चारों घी के स्थानी हैं अर्थात् घी के अभाव में इन से भी होम करे होम का त्याग कदापि न करे ॥३९५॥ अत्रि ऋषि ने स्वयं कहे इन धर्मों को सब ऋषि सुनकर धर्म में भली प्रकार स्थित हुये वे सब ऋषि, महात्मा अत्रि ऋषि के प्रति यह बोले कि ॥३९६॥ जो पुरुष आलस्य को त्याग कर इस धर्म शास्त्र को जानेंगे वे इस लोक में यश को प्राप्त होकर स्वर्ग को प्राप्त होंगे ॥ ३९७ ॥ इस शास्त्र के पढ़ने से विद्यार्थी विद्या को धनार्थी धन को—— अवस्था की जिसे इच्छा हो वह अवस्था को तथा लक्ष्मी की जिसे इच्छा हो वह लक्ष्मी को—प्राप्त होता है ॥ ३९८ ॥

इत्यत्रिमहर्षिस्मृतिभाषा समाप्ता ॥

श्रीगणेशायनमः

अथ विष्णुस्मृतिः

अर्थात् विष्णुप्रोक्तधर्मशास्त्रप्रारम्भः ॥

विष्णुमेकाग्रमासीनं श्रुतिस्मृतिविशारदम् ।
पप्रच्छुर्मुनयःसर्वे कलापग्रामवासिनः ॥१॥
कृतेयुगेह्यपक्षीणे लुप्तोधर्म्मस्सनातनः ।
तत्रवैशोध्यमाणेच धर्मानप्रतिमार्गितः ॥ २ ॥
त्रेतायुगेऽथसंप्राप्ते कर्तव्यश्चास्यसंग्रहः ।
यथासंप्राप्यतेस्माभिस्तत्त्वन्नोवक्तुमर्हसि ॥ ३ ॥
वर्णाश्रमाणांयोधर्मो विशेषश्चैवयः कृतः ।
भेदस्तथैवचैषांयस्तन्नोब्रूहिद्विजोत्तम ॥ ४ ॥
ऋषीणांसमवेतानां त्यमेवपरमोमतः ।

भावार्थः—श्रुति और स्मृतियों के जानने में चतुर एकाग्र बैठे हुए विष्णु नामक ऋषि से कलाप ग्राम के वासी सब मुनियों ने यह पूछा ॥१॥ कि कृतयुग बीतने पर सनातनधर्म लुप्त होगया और कृतयुग के बीतने पर किसी ने भी धर्म का शोधन नहीं किया ॥२॥ अब त्रेतायुग वर्त्तमान है इस में धर्म का संग्रह अवश्य करना चाहिये वह धर्म जिस रीतिसे हमको प्राप्त हो वह रीति आप हम से कहिये ॥३॥ वर्ण और आश्रमों का जो धर्म और इन धर्मों की विशेषता ऋषियों ने की है और परस्पर के धर्म का भेद—यह सब हे द्विजों में श्रेष्ठ हम से कहो ॥ ४ ॥ यहां इकट्ठे हुए ऋषियों ने तुम ही श्रेष्ठ माने हो इस से हे सुव्रत संपूर्ण धर्म का वक्ता तुम से अन्य नहीं है ॥ ५ ॥

(१) ये विष्णु जो धर्मशास्त्र के वक्ता हैं साक्षात् भगवान् नहीं हैं किन्तु यद्यपि सब ऋषि विष्णु के ही नाम रूप भेद हैं तथापि अन्य ऋषियों के समान विष्णु नामक भी एक ऋषि थे जिन ने इस धर्मशास्त्र को वेद का गूढ़ाशय लेकर संक्षेप से प्रकट किया है ऐसा अनुमान है ।

धर्मस्येहसमग्तस्य नान्योवक्तास्तिसुव्रत ॥ ५ ॥
श्रुत्वाधर्मं चरिष्यामो यथावत्परिभाषितम् ।
तस्माद्ब्रूहिद्विजश्रेष्ठ धर्मकामाइमेद्विजाः ॥६॥
इत्युक्तोमुनिभिस्तैस्तु विष्णुःप्रोवाचतांस्तदा ।
अनघाःशृयतांधर्मा वक्ष्यमाणोमयाक्रमात् ॥ ७ ॥
ब्राह्मण क्षत्रियोवैश्यः शूद्रश्चैवतथापरे ।
एतेषांधर्मसारंयद्वक्ष्यमाणंनिबोधत ॥ ८ ॥
ऋतौऋतौतुसंयोगाद्ब्राह्मणोजायतेस्वयम् ।
तस्माद्ब्राह्मणसंस्कारं गर्भादौतुप्रयोजयेत् ॥ ९ ॥
सीमंतोन्नयनंकर्म नस्त्रीसंस्कारइष्यते ।
गर्भस्यैवतुसंस्कारो गर्भगर्भप्रयोजयेत् ॥ १० ॥

भा०:-धर्म को सुनकर आपके कहनेके अनुसार आचरण करेंगे इससे हे [द्वि]
जों में उत्तम तुम धर्म का वर्णन करो और ये द्विज धर्म की अभिलाषा [करते]
हैं ॥६॥ इस प्रकार जब उन मुनियों ने कहा उस समय उन से विष्णु ऋ[षि]
बोले कि हे शुद्ध निष्पाप मुनियो ! जिस धर्म को हम क्रम से कहेंगे उस [को]
तुम सुनो ॥७॥ ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य और किन्हीं के मत से (शूद्र) के लि[ये]
भी धर्म का सारांश हम कहेंगे उसे तुम लोग सुनो । अर्थात् किन्हीं ऋषि
यों का मत है कि शूद्र के लिये कोई भी धर्मोपदेश नहीं है । अन्यों के [मत]
से स्मार्त धर्म में शूद्र को अधिकार है ॥८॥ ऋतु (रजो दर्शन से १६ दिन
भीतर) में स्त्री और पुरुष के संयोग से आप ब्राह्मण पैदा होता है इस[से]
ब्राह्मण का संस्कार गर्भ से लेकर करे ॥९॥ सीमन्त (अठमासा) कर्म स्त्री [का]
संस्कार नहीं है किन्तु गर्भ का है इस से प्रतिगर्भ में सीमन्त करे ॥ [१०॥]

(१०) गर्भाधान, पुंसवन और सीमन्तोन्नयन ये तीनों संस्कार [किन्हीं]
ऋषियों के मत में गर्भवती स्त्री के होते हैं और मनुष्य की पैदाइश के [क्षेत्र]
रूप स्त्री के शुद्ध होने से सन्तान भी शुद्ध होते हैं । इस कारण गर्भाधा[नादि]
तीनों संस्कार प्रथम गर्भ में एक ही वार करे प्रतिगर्भ में नहीं । परन्तु [किसी]
ऋषि का मत है कि सीमन्त संस्कार गर्भिणीका नहीं किन्तु गर्भ का ही सं[स्कार]
है इस से प्रत्येक गर्भ में कर्त्तव्य है ।

जातकर्मतथाकुर्यात्-पुत्रेजातेयथोदितम् ।
वहिर्निष्क्रमणंचैव तस्यकुर्याच्छिशोःशुभम् ॥११॥
षष्ठेमासेचसंप्राप्ते अन्नप्राशनमाचरेत् ।
तृतीयेऽब्देचसम्प्राप्ते केशकर्मसमाचरेत् ॥१२॥
गर्भाष्टमेतथाकर्म ब्राह्मणस्योपनायनम् ।
द्विजत्वेत्वयसम्प्राप्ते सावित्र्यामधिकारभाक् ॥१३॥
गर्भादेकादशेसैके कुर्यात्क्षत्रियवैश्ययोः ।
कारयेद्द्विजकर्माणि ब्राह्मणेनयथाक्रमम् ॥१४॥
शूद्रश्चतुर्थोवर्णस्तु सर्वसंस्कारवर्जितः ।
उक्तस्तस्यतुसंस्कारो द्विजेस्वात्मनिवेदनम् ॥१५॥
योयस्यविहितोदण्डो मेखलाजिनधारणम् ।
सूत्रंवस्त्रंचगृह्णीया-द्ब्रह्मचर्येणयन्त्रितः ॥१६॥
ब्राह्ममुहूर्तउत्थाय चोपस्पृश्यपयस्तथा ।

भा०-पुत्र के पैदा होते ही शास्त्र के अनुसार जातकर्म करे और उस बालक [illegible] मंगल सहित वहिर्निष्क्रमण (घर से बाहर ले जाना) करे अर्थात् चौथे [illegible]हिने में मन्त्रपूर्वक सूर्यनारायण का दर्शन कराये ॥ ११ ॥ जब छः महीने का [illegible]लक हो तब उस का अन्न प्राशन संस्कार करे और जब तीन वर्ष का हो [illegible]य केशकर्म (मुण्डन) करे ॥ १२ ॥ गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण का यज्ञोपवीत [illegible]रे क्योंकि द्विज होने पर ही गायत्री का अधिकारी होता है ॥ १३ ॥ गर्भ [illegible] ग्यारवें वर्ष क्षत्रिय का और बारवें वर्ष वैश्य का यज्ञोपवीत ब्राह्मण से कर[illegible]ाये ॥१४॥ और चौथा जो शूद्र वर्ण है वह सब संस्कारों से हीन है उस का [illegible]स्कार यही कहा है कि उक्त तीनों वर्णों को अपने आत्मा को निवेदन (आ[illegible]ीन) कर दे ॥ १५ ॥ ब्रह्मचर्य (यज्ञोपवीत के समय) में जिस वर्ण का जो २ [illegible]ण्ड मेखला, मृगछाला-सूत्र-वस्त्र गृह्यसूत्रकारों ने कहा है उस २ का वह २ [illegible]ारणादि धारण करे ॥ १६ ॥ ब्राह्म मुहूर्त में उठ कर स्नान-करके तीन

त्रिराचम्यततःप्राणां–रितष्ठेन्मौनीसमाहितः ।१७॥
अव्दैवतैःपवित्रैस्तु कृत्वात्मपरिमार्जनम् ।
सावित्रींचजपंस्तिष्ठे–दासूर्योदयनात्पुरा ॥१८॥
अग्निकार्यंततःकुर्यात्–प्रातरेवव्रतंचरेत् ।
गुरवेतुततःकुर्यात् पादयोरभिवादनम् ॥१९॥
समित्कुशांश्चोदकुम्भ माहृत्यगुरवेव्रती ।
प्राञ्जलिःसम्यगासीन उपस्थाययतःसदा ॥२०॥
यंयंग्रन्थमधीयीत तस्यतस्यव्रतंचरेत् ।
सावित्र्युपक्रमात्सर्व–मावेदग्रहणोत्तरम् ॥२१॥
द्विजातिषुचरेद्भैक्ष्यं भिक्षाकालेसमागते ।
निवेद्यगुरवेश्नीयात्संमतोगुरुणाव्रती ॥ २२ ॥
सायंसन्ध्यामुपासीनो गायत्र्यष्टशतंजपेत् ।
द्विकालभोजनार्थंच तथैवपुनराहरेत् ॥ २३ ॥

आचमन तथा तीन बार प्राणायाम कर के सावधान होकर मौन होके ख
रहै ॥ १७ ॥ जल देवता (आपोहिष्ठा०) इत्यादि तथा पवित्र मन्त्रों से देह
मार्जन कर के सूर्योदय पर्यन्त खड़े होके गायत्री का जप करे ॥ १८ ॥ उस
बाद अग्निहोत्र करे और प्रातःकाल के समय ही व्रत (मद्यमांसत्यागादि)
तत्पश्चात् गुरु के पगों में अभिवादन करे ॥ १९ ॥ फिर वह शिष्य समि
कुशा–और जल का घट गुरु के लिये लाकर हाथ जोड़ और भले प्रकार स
गुरु के समीप बैठ कर ॥ २० ॥ जिस २ ग्रन्थ को पढ़े उस २ का
करे और गायत्री के उपदेश से लेकर सब वेद के पठन पर्यन्त ॥ २१
भिक्षा के समय ब्राह्मणादि तीनों द्विजों के घरों से भिक्षा मांगकर लावे उस भि
क्षा को गुरु जी को निवेदन करके गुरु की आज्ञा होने पर ब्रह्मचारी निय
हुआ भोजन करे ॥२२॥ सायंकाल की सन्ध्या में बैठा हुआ एक सौ आठ
गायत्री जपे और सायंकालको भोजन चाहे तो उसी प्रकार भिक्षा मांगलावे॥२३॥

वेदस्त्रे करणेहृष्टो गुर्वधीनोगुरोर्हितः ।
निप्रांतत्रैवयोगच्छेन्नैष्ठिकस्सउदाहृतः ॥ २४ ॥
अनेनविधिनासम्यकूकृत्वावेदमधीत्यच ।
गृहस्थधर्ममाकांक्षन्गुरुगेहादुपागतः ॥ २५ ॥
अननैवविधानेन कुर्याद्दारपरिग्रहम् ।
कुलेमहतिसंभूतां सवर्णां लक्षणान्विताम् ॥ २६ ॥
परिणीयतुषण्मासान्वत्सरंवानसंविशेत् ।
औदुंबरायणोनाम ब्रह्मचारीगृहेगृहे ॥ २७ ॥
ऋतुकालेतुसंप्राप्ते पुत्रार्थीसंविशेत्तदा ।
जातेपुत्रेतथाकुर्यादग्न्याधेयंगृहेवसन् ॥ २८ ॥
पुत्रेजातेऽनृतौगच्छन्संप्रदुष्येत्सदागृही ।
चतुर्थेब्रह्मचारीचगृहेतिष्ठेन्नविस्मृतः ॥ २९ ॥
इति वैष्णवधर्मशास्त्र प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

भा०—जो ब्रह्मचारी वेद पढने में प्रसन्न, गुरु के आधीन तथा गुरु का हितकारी होकर मरण पर्यंत गुरु की सेवा में ही रहे उसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहते हैं ॥ २४ ॥ इस विधि से ब्रह्मचर्य धर्म को कर और वेद को पढ़के गृहस्थ धर्म की इच्छा करता हुआ गुरु के घर से आया ॥२५॥ बड़े प्रतिष्ठित कुल में पैदा हुई शुभ चिह्नोंवाली अपने वर्ण की स्त्री के साथ शास्त्रोक्त विधिसे विवाह करै ॥२६। विवाह करकेजो छःमहीने अथवा एक वर्ष पर्यंत स्त्री से संग नहीं करता ब्रह्मचारी रहता है घर में रहते हुए भी उस ब्रह्मचारी को औदुवरायण कहते हैं ॥ २७ ॥ जब स्त्री को रजोदर्शन हो तब पुत्र की इच्छा से स्त्री का संग करे पुत्र के होनेपर घर में रहता हुआ ही विधि पूर्वक अग्नि स्थापन करे ॥ २८ ॥ पुत्र के होने पर ऋतुकाल के विना स्त्री संग करने से गृहस्थी सदा दोषी होता है और चौथे पुत्र के होने पर गृहस्थी पुरुष ब्रह्मचारी रहता हुआ भी भूलकर घरमें न ठहरे किन्तु वन में जाकर तपकरे॥२९॥
इति विष्णुस्मृतौ प्रथमोऽध्यायः ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि गृहीणांधर्ममुत्तमम् ।
प्राजापत्यपदस्थानं सम्यक्कृत्यंनिबोधत ॥ ३० ॥
सर्वःकल्येसमुत्थाय कृतशौचः समाहितः ।
स्नात्वासंध्यामुपासीत सर्वकालमतन्द्रितः ॥ ३१ ॥
अज्ञानाद्यदिवामोहाद्रात्रौयद्दुरितंकृतम् ।
प्रातःस्नानेनतत्सर्वं शोधयन्तिद्विजोत्तमाः ॥ ३२ ॥
प्रविश्याथाग्निहोत्रंतु हुत्वाग्निंविधिवत्ततः ।
शुचौदेशेसमासीनः स्वाध्यायंशक्तितोऽभ्यसेत् ॥३३॥
स्वाध्यायान्तेसमुत्थाय स्नानंकृत्वातुमंत्रवित् ।
देवानृषीन्पितॄंश्चापि तर्पयेत्तिलवारिणा ॥ ३४ ॥
मध्यान्हेत्वथसंप्राप्ते शिष्टंभुञ्जीतवाग्यतः ।
भुक्त्वोपविष्टोविश्रान्तो ब्रह्मकिंचिद्विचारयेत् ॥३५॥
इतिहासंप्रयुंजीत त्रिकालसमयेगृही ।

भा०—इस से आगे गृहस्थियों के उत्तम धर्म को कहते हैं ब्रह्मलोक प्राप्ति फलके दाता उस कर्म को भली प्रकार सुनिये ॥३०॥ सब ब्राह्मणादि द्विज गृहस्थ प्रभात समय उठ सावधानीसे शौचादि करके सदैव आलस को छोड़ कर स्नान करके संध्योपासन करैं॥३१॥अज्ञानसे या मोह से रात्रि में जो पाप किया हो उस सब को नित्य प्रातःकाल के स्नान से ब्राह्मण लोग दूर कर देते हैं ॥३२॥ फिर अग्निशाला में जाकर कल्प सूत्रोक्त विधान से अग्निहोत्र करके शुद्ध स्थान में बैठा हुआ शक्ति के अनुसार वेद का पाठ करे ॥ ३३॥ वेद पाठ के अंत में उठकर मन्त्र विधि जानने वाला द्विज फिर मन्त्र पूर्वक स्नान करके तिल और जल से देवता, ऋषि, और पितर, इनका तर्पण करे ॥ ३४ ॥ फिर मध्यान्ह काल आने पर शिष्ट (पंच महायज्ञों से बचे हुए) अन्न को मौन होकर भोजन विधिकरके भोग लगावे । भोजन के पीछे बैठ,और कुछ विश्राम करके कुछ वेद का विचार करे ॥ ३५ ॥ गृहस्थ पुरुष दिन के तृतीय भाग में इतिहास

कालेचतुर्थेसंप्राप्ते गृहेवायदिवाबहिः ॥ ३६ ॥
आसीनःपश्चिमांसन्ध्यां गायत्रींशक्तितोजपेत् ।
हुत्वाचाथाग्निहोत्रंतु कृत्वाचाग्निपरिक्रियाम् ॥३७॥
बलिंचविधिवद्दत्वा भुञ्जीतविधिपूर्वकम् ।
दिवावायदिवारात्रौ अतिथिस्त्वाव्रजेद्यदि ॥३८॥
तृणभूवारिवाग्भिस्तु पूजयेत्तंयथाविधि ।
कथाभिःप्रीतिमाहृत्य विद्यादीनिविचारयेत् ॥३९॥
संनिवेश्यायवित्रम्तुसंविशेत्तदनुज्ञया ।
यदियोगीतुसंप्राप्तो भिक्षार्थीसमुपस्थितः ॥ ४० ॥
योगिनंपूजयेन्नित्य--मन्यथाकिल्विषीभवेत् ।
पुरेवायदिवाग्रामे योगीसन्निहितोभवेत् ॥ ४१ ॥
पूज्यानित्यंभवन्त्येव सर्वेचैवनिवासिनः ।

(महा भारत आदि) का भी कुछ पाठ या विचार करे और सायंकाल होने पर घर में या बाहर ॥ ३६ ॥ पश्चिम दिशा के सम्मुख बैठा हुआ सन्ध्योपासन करे और यथाशक्ति गायत्री का जप करे फिर सायंकाल का अग्निहोत्र अग्नि की सेवा ॥३७॥ और गृह्योक्त विधि से केवल बलि कर्म नामक भूतयज्ञ करके विधि पूर्वक भोजन करे। अर्थात् रात में देवयज्ञ रूप होम का निषेध है। जो दिन में या रात्रि में कोई अभ्यागत आजाय तो ॥ ३८ ॥ तृण (आसन) भूमि बैठने को जगह, जल, औरआदर सूचक वाणी से उस का सत्कारकरै जाने आने की कथा (यही कृपा की कि आप आये इत्यादि) से उस को संतुष्ट करके विद्या आदि का विचार करे ॥ ३९ ॥ अतिथि को प्रथम लिटा कर उस की आज्ञा लेकर आप लेटे। यदि भिक्षा के लिये योगी आजावे तो उस के समीप जाकर ॥ ४० ॥ योगी का नित्य पूजन करै अन्यथा पाप लगता है। नगर में या ग्राम में यदि योगी प्राप्त हो ॥ ४१ ॥ तो उस योगी के आने से-वहां के निवासी सब पूजने योग्य होते हैं क्यों कि स्थान और वहां के

तस्मात्पूजयेन्नित्यं योगिनंगृहमागतम् ॥ ४२ ॥
तस्मिन्प्रयुक्तायापूजा साक्षयायोपकल्पते ।
गृहमेधिनांयत्प्रोक्तं स्वर्गसाधनमुत्तमम् ॥४३॥
ब्राह्ममुहूर्तउत्थाय तत्सर्वं सम्यगाचरेत् ।
चतुःप्रकारंभिद्यन्ते गृहिणोधर्मसाधकाः ॥४४॥
वृत्तिभेदेनसततं ज्यायांस्तेपांपरःपरः ।
कुसूलधान्यकोवास्यात्कुंभीधान्यकएववा ॥ ४५ ॥
त्र्यहैहिकोवापिभवे-त्सद्यःप्रक्षालकोपिवा ।
श्रौतंस्मार्तंचयत्किंचिद्विधानंधर्मसाधनम् ॥४६॥
गृहेतद्वसताकार्य—मन्यथादोषभाग्भवेत् ।
एवंविप्रोगृहस्थस्तु शान्तःशुक्लांवरःशुचिः ॥ ४७ ॥

मनुष्य पवित्र होजाते हैं तिस से घर में आये योगी का नित्य पूजन करै। उस योगी अभ्यागत की जो पूजा की जाती है वह अविनाशी सुख देने होती है। गृहस्थियों के लिये स्वर्ग का साधन जो उत्तम कर्म है वह यही कि ॥४३॥ ब्राह्म मुहूर्त (३ अथवा ४ घड़ी रात रहे पर) में उठ कर उस यौक्त) कर्म का भली प्रकार सेवन करै—धर्म के सिद्ध करने वाले गृहस्थी अपनी जीविका के भेद से चार प्रकार से भिन्न २ होते हैं ॥४४॥ उन में श्रेष्ठ हैं १ कुसूलधान्यक (कोठे में इतने अन्न को जो रक्खे जिस से ३ वर्ष निर्वाह हो) २ कुंभी धान्यक (कुंडो में इतने अन्न को जो रक्खे जिस से १ निर्वाह हो) ॥ ४५ ॥ ३ त्र्यहैहिक (तीन दिनका जो अन्न रक्खै) सद्यः प्रक्षालक (प्रति दिन खाने को लाने वाला) श्रुति वा स्मृतियों में कहा जो का साधन कर्म है ॥ ४६ ॥ घर में बसते हुये मनुष्य को यह सब करना चाहिये क्योंकि न करने से दोष का भागी होता है इस प्रकार शांत स्वभाव—शुक्ल वस्त्रों वाला-शुद्ध—गृहस्थी ब्राह्मण ॥ ४७ ॥

प्रजापतेःपरंस्थानंसम्प्राप्नोतिनसंशयः ।

इति वैष्णवे धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

गृहस्थोब्रह्मचारीवा वनवासंयदाचरेत् ॥ ४८ ॥
चीरवल्कलधारीस्यादकृष्टान्नाशनोमुनिः ।
गत्वाचविजनंस्थानं पञ्चयज्ञान्नहापयेत् ॥४९॥
अग्निहोत्रंचजुहुयान्नीवारकादिभिः ।
श्रावणेनाग्निमादाय ब्रह्मचारीवनेस्थितः ॥५०॥
पञ्चयज्ञविधानेन यज्ञंकुर्यादतन्द्रितः ।
संचितंतुयदारण्यं भक्तार्थंविधिवद्वने ॥ ५१ ॥
त्यजेदाश्वयुजेमासि वन्यमन्यत्समाहरेत् ।
आकाशशायीवर्षासु हेमन्तेचजलाश्रयः ॥ ५२ ॥
ग्रीष्मेपञ्चाग्निमध्यस्थो भवेन्नित्यंवनेवसन् ।

रहता उत्तम स्थान को प्राप्त होता है इस में सन्देह नहीं है ॥

इति विष्णुस्मृतौ द्वितीयोऽध्यायः ॥

गृहस्थी या ब्रह्मचारी जब बन में निवास करना चाहे ॥ ४८ ॥ तब चीर (चीथड़े) या वृक्षों के वक्कल को वस्त्रों की जगह धारण करे और अकृष्टान्न (जो विना जोते बोए पैदा हो) बन के मुन्यन्न को भक्षण करे और मौन रहे और निर्जन स्थान में जाकर भी पञ्चयज्ञों का परित्याग न करे ॥ ४९ ॥ नीवार आदि अन्न से अग्निहोत्र भी करे और श्रावण मास में अग्नि को लेकर बन में जाये और ब्रह्मचर्य धारण कर वहां रहे ॥ ५० ॥ निरालस होकर पञ्चयज्ञ के विधानसे यज्ञ करे।जो भोजन के लिये बनका अन्न इकट्ठा किया हो॥५१॥ उस को आश्विन के मास में त्याग दे और बन में पैदा हुए नये अन्न को संग्रह करे और वर्षा काल में आकाश (खुले ऊंचे स्थान) में जाड़ों में जल में ॥ ५२ ॥ तथा ग्रीष्म ऋतु (गरमी) में पंचाग्नि [चारों दिशामें अग्नि जलता हो उसके बीच में बैठे ऊपर से सूर्य तपते हों इसको पञ्चाग्नि तप कहते हैं]

कृच्छ्रंचांद्रायणंचैव तुलापुरुषमेवच ॥ ५३ ॥
अतिकृच्छ्रं प्रकुर्वीत त्यक्त्वाकामान्शुचिस्ततः ।
त्रिसन्ध्यंस्नानमातिष्ठे-त्सहिष्णुर्भूतजान्गुणान् ॥ ५४ ॥
पूजयेदतिथींश्चैव ब्रह्मचारीवनंगतः ।
प्रतिग्रहंनगृह्णीया-त्परेषांकिंचिदात्मवान् ॥५५॥
दाताचैवभवेन्नित्यं श्रद्धधानःप्रियंवदः ।
रात्रौस्थण्डिलशायीस्या-त्प्रपदैस्तुदिनंक्षिपेत् ॥ ५६ ॥
वीरासनेनतिष्ठेद्वा क्लेशमात्मन्यचिंतयन् ।
केशरोमनखश्मश्रून्नछिन्द्यान्नापिकर्तयेत् ॥ ५७ ॥
त्यजन्शरीरसौहार्द्दं वनवासरतःशुचिः ।
चतुःप्रकारंभिद्यन्ते मुनयःशंसितव्रताः ॥ ५८ ॥
अनुष्ठानविशेषेण श्रेयांस्तेषांपरःपरः ।

के मध्य में वन में बसता हुआ मनुष्य नित्य रहै और तिसके अनन्तर कृ
चांद्रायण-तुला पुरुष॥५३॥ अतिकृच्छ्र इन व्रतों को निष्काम होकर शुद्ध
करै और पांचो भूतों के गुणों (शब्द, स्पर्श, रूप-रस-गन्ध-) को
ता हुआ त्रिकाल स्नान करै ॥ ५४ ॥ वन में प्राप्त हुआ ब्रह्मचारी
अतिथियों का पूजन करैऔर अपने आपेमें नियम बद्ध रहता हुआ किसी,से
ग्रह (दान) न ले ॥ ५५ ॥ प्रियभाषी और श्रद्धावान् होकर जो अपने
फल मूलादि हों उनका प्रतिदिन दान दिया करे स्वयं बनाये गये (चबूत
पर रात्रमें सोवै और पैरों की अंगुलियोंसे सदा जप करता हुआ दिनको वि
दे ॥५६॥अथवा अपने मनमें क्लेश मानता हुआ वीरासन से दिन में बैठा
और सिरके केश-रोम-नख-दाढ़ी-इनको न कैंची से कतराये और न मुं
कटाये ॥ ५७॥ वन वास में तत्पर शुद्ध अपने शरीर की प्रीति को छोड़ता हु
अपने पूर्वोक्त कर्म को करे इस उत्तम प्रशंसित व्रतवाले मुनि अनुष्ठान के भे
चारप्रकार के होते हैं॥५८॥ इनमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है-१ वर्ष भरके लिये विधि पू

वार्षिकंत्वन्यमाहार-माहृत्यविधिपूर्वकम् ॥ ५९ ॥
वनस्थधर्ममातिष्ठन्नपरेकालंजितेन्द्रियः ।
भूरिसंवार्षिकश्चायं वनस्थःसर्वकर्मकृत् ॥ ६० ॥
आदेहपतनंतिष्ठेन्मृत्युं चैवनकांक्षति ।
षण्मासांस्तुततश्चान्यः पचयज्ञक्रियापरः ॥ ६१ ॥
कालेचतुर्थभुञ्जानो देहंत्यजतिधर्मतः ।
त्रिंशद्दिनार्थमाहृत्य वन्यान्नानिशुचिव्रतः ॥६२॥
निर्वर्त्यसर्वकार्याणि स्याच्चषष्ठान्नभोजनः ।
दिनार्थमन्नमादाय पञ्चयज्ञक्रियारतः ॥६३॥
सद्यःप्रक्षालकोनाम चतुर्थःपरिकीर्तितः ।
एवमेतेहिवैमान्या मुनयःशंसितव्रताः ॥६४॥

इति० वैष्ण० धर्म० तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

वन के आहार (नीवारादि) को संचय करके वानप्रस्थों के धर्म में ठहरा हुआ इन्द्रियोंको जीत और आलस्य को छोड़कर ॥ ५९ ॥ काल को जो व्यतीत करे इन सब कर्मों के कर्ता वानप्रस्थ को भूरिसंवार्षिक कहते हैं ॥ ६० ॥ २ दूसरा–मरण तक वन में रहे और मृत्यु की भी इच्छा न करे पंचमहायज्ञ करने में तत्पर हुआ छः महीने तक के अन्नका संचय करके ॥ ६१ ॥ चौथे काल (सन्ध्या) में भोजन करता हुआ धर्म से देह को त्यागता है । ३ तीसरा तीस दिन के लिये वन के अन्न का संचय करके और शुद्ध व्रत हो कर ॥ ६२ ॥ सब कर्मों को करके छटे प्रहर में रात को दश बजे भोजन करे । ४ चौथा एक दिन के लिये अन्न का संग्रह करके पञ्चमहायज्ञ कर्म में तत्पर रहे ॥ ६३ ॥ यह सद्यः प्रक्षालक नाम चौथा कहा है इस प्रकार ये चारों प्रशस्त व्रतवाले मुनि पूजनीय होते हैं ॥ ६४ ॥

इति विष्णुस्मृती ३ अध्यायः ।

यथोत्तमानिस्थानानि प्राप्नुवन्तिदृढव्रताः ।
ब्रह्मचारीगृहस्थोवा वानप्रस्थोयतिस्तथा ॥६५॥
विरक्तःसर्वकामेषु पारिव्रज्यंसमाश्रयेत् ।
आत्मन्यग्नीन्समारोप्यदत्वाचाभयदक्षिणाम् ॥६६॥
चतुर्थमाश्रमंगच्छेद्ब्राह्मणःप्रव्रजन्गृहात् ॥
आचार्येणसमादिष्टं लिङ्गंयत्नात्समाश्रयेत् ॥६७॥
शौचमाश्रमसम्बद्धं यतिधर्मांश्चशिक्षयेत ।
अहिंसासत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यमफल्गुता ॥६८॥
दयांचसर्वभूतेषु नित्यमेतद्यतिश्चरेत् ।
ग्रामान्तेवृक्षमूलेच नित्यकालनिकेतनः ॥६९॥
पर्यटेत्कीटवद्भूमिं वर्षास्वेकत्रसंविशेत् ।
वृद्धानामातुराणांच भीरूणांसंगवर्जितः ॥७०॥

भा०जिस प्रकार ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ और यति ये चारों दृढ़ व्रत उत्तम स्थान (ब्रह्म लोक) को प्राप्त होते हैं वह यह है कि ॥ ६५ ॥ सब कामनाओं से विरक्त हो संन्यास का सम्यक् आश्रय लेवे कि यही सब का साधक है अपने शरीर ही में अग्नियों का समारोप मन्त्रपूर्वक और स्त्री आदिकों को अभय दक्षिणा दे (ठीक २ समझा कर) ॥ ६६ घर से चलकर ब्राह्मण चौथे आश्रम में पग धरे आचार्य के कहे हुए (दंड आदि) को यत्न से धारण करे ॥ ६७ ॥ संन्यास के ([illegible] शौच और संन्यासियों के धर्मों को सीखे अहिंसा-सत्य-चोरी का त्याग-ब्रह्मचर्य-अफल्गुता (निरर्थक बोलने आदि का त्याग) ॥६८॥ सब प्राणियों दया इतने कर्म नित्य नियम से करे-ग्राम के समीप किसी वृक्ष के नीचे स्थान रक्खे ॥ ६९ ॥ कीड़े के समान पृथ्वी पर विचरे । वर्षा काल में एक जगह बैठे विचरे नहीं और वृद्ध-रोगी-डरपोक इन का संग न करे ॥

ग्रामेवापिपुरेवापि वासेनैकत्रदुष्यति ।
कौपीनाच्छादनंवासः कन्थांशीतापहारिणीम् ॥७१॥
पादुकेचापिगृह्णीयात्कुर्यान्नान्यस्यसंग्रहम् ।
संभाषणंसहस्त्रीभि-रालम्भप्रेक्षणेतथा ॥ ७२॥
नृत्यंगानंसभांसेवां परिवादांश्चवर्जयेत् ।
वानप्रस्थगृहस्थाभ्यां प्रीतिंयत्नेनवर्जयेत् ॥ ७३ ॥
एकाकीविचरेन्नित्यं त्यक्त्वासर्वपरिग्रहम् ।
याचितायाचिताभ्यांतु भिक्षयाकल्पयेत्स्थितिम् ॥७४॥
साधुकारंयाचितंस्यात्प्राक्प्रणीतमयाचितम् ।
चतुर्विधाभिक्षुकास्यु कुटीचकबहूदकौ ॥ ७५ ॥
हंसःपरमहंसश्च पश्चाद्योयःसउत्तमः ।
एकदण्डीभवेद्वापि त्रिदण्डीवापिवाभवेत् ॥ ७६ ॥
त्यक्त्वासर्वसुखास्वादं पुत्रैश्वर्यसुखंत्यजेत् ।

ग्राम वा नगर में एक स्थान में बसने से संन्यासी को दोष लगता है। कौपीन (लंगोटी) ओढ़ने का वस्त्र, जिस में शीत न लगे ऐसी कन्था (गुदड़ी) ॥७१॥ और खड़ाऊं इन को ग्रहण करे। इन से भिन्न वस्तुओं का संग्रह न करे। स्त्रियों के संग बोलना-स्पर्श-देखना ॥ ७२ ॥ नाचना, गाना, सभा करना सेवा (नौकरी) निन्दा-इन को त्याग दे वानप्रस्थ और गृहस्थ के संग यत्न से प्रीति को त्याग दे ॥ ७३ ॥ सब प्रकार के परिग्रह (अंगरक्षकादि-योगक्षेमों) को त्यागकर अकेला विचरै-मांगने और बिना मांगने से जो भोजन मिले उस से अपना निर्वाह करे ॥ ७४ ॥ इच्छा कर कर लेने को याचित बिना मांगे जो मिले उसे अयाचित कहते हैं ये संन्यासी चार प्रकार के होते हैं-१ कुटीचक-२ बहूदक ॥ ७५ ॥ ३ हंस-४ परमहंस-इन में जो २ पिछला २ है वह २ उत्तम है एक दंड को धारण करे वा तीन दंड को ॥ ७६ ॥ सब सुखों के स्वाद को त्याग पुत्र के ऐश्वर्य (प्रताप) के सुख को त्यागे अथवा

अपत्येपुत्रसेन्नित्यं ममत्वंयत्नतस्त्यजेत् ॥ ७७ ॥
नान्यस्यगेहेभुञ्जीत भुञ्जानोदोषभाग्भवेत् ।
कामंक्रोधंचलोभंच तथेर्ष्यांसत्यमेवच ॥ ७८ ॥
कुटीचकस्त्यजेत्सर्वं पुत्रार्थंचैवसर्वतः ।
भिक्षाटनादिकेऽशक्तो यतिःपुत्रेपुसंन्यसेत् ॥ ७९ ॥
कुटीचकइतिज्ञेयः परिव्राट्त्यक्तबान्धवः।
त्रिदण्डंकुण्डिकांचैव भिक्षाधारंतथैवच ॥ ८० ॥
सूत्रंतथैवगृह्णीयान्नित्यमेवबहूदकः ।
प्राणायामेष्वभिरतो गायत्रींसततंजपेत् ॥ ८१ ॥
विश्वरूपंहृदिध्यायन्नयेत्कालंजितेन्द्रियः ।
ईषत्कृतकषायस्य लिंगमाश्रित्यतिष्ठतः ॥ ८२ ॥
अन्नार्थंलिङ्गमुद्दिष्टं नमोक्षार्थमितिस्थितिः ।

अपने लड़कों ही में नित्य वसे और यत्न से ममता को त्याग दे ॥ ७
अन्य के घर में भोजन न करे क्योंकि दोष का भागी होता है और काम
ध लोभ ईर्षा, झूठ इन को छोड़ देवे ॥ ७८ ॥ पुत्र के लिये १ कुटीचक
प्रकार से सब अन्नधनादि त्याग दे–भिक्षा मांगने आदि में असमर्थ हो तो
न्यासी अपने पुत्रों को ही अपना देह सौंपदे ॥ ७९ ॥ इस को कुटीचक
हैं–२ दूसरा त्याग दिये हैं बंधु जिसने ऐसा संन्यासी त्रिदंड–कुंडी और
क्षा का पात्र ॥८० ॥ यज्ञोपवीत इन को बहूदक नित्य ग्रहण करे । प्राणाय
में तत्पर हुआ निरंतर गायत्री को जपे ॥ ८१ ॥ विश्व रूप भगवान् का हृद
में ध्यान करता हुआ इन्द्रियों को जीतकर काल को व्यतीत करे–कुछेक गे
या वस्त्रों को करके एक चिह्न (संन्यासकीपहचान) बनाकर अपने आश्रम
ठहरते हुए संन्यासी के ८२ ॥ चिन्ह अन्न भिक्षा मिलने के लिये नियत कि
ये हैं मोक्ष के लिये कोई चिन्ह नहीं है ।

त्यक्त्वापुत्रादिकंसर्वं योगमार्गव्यवस्थितः ॥८३॥
इन्द्रियाणिमनश्चैव कर्षन्हंसोभिधीयते ।
कृच्छ्रैश्चान्द्रायणैश्चैव तुलापुरुषसंज्ञकैः ॥ ८४ ॥
अन्यैश्चशोषयेद्देहमाकाङ्क्षन्ब्रह्मणःपदम् ।
यज्ञोपवीतंदंडंच वस्त्रंजंतुनिवारणम् ॥ ८५ ॥
अयंपरिग्रहोनान्यो हंसस्यश्रुतिवेदिनः ।
आध्यात्मिकंब्रह्मजपन्प्राणायामांस्तथाचरन् ॥८६॥
वियुक्तःसर्वसंगेभ्यो योगी नित्यंचरेन्महीम् ।
आत्मनिष्ठःस्वयंयुक्तस्त्यक्तसर्वपरिग्रहः ॥ ८७ ॥
चतुर्थोयंमहानेषांध्यानभिक्षुरुदाहृतः ।
त्रिदण्डंकुण्डिकांचैव सूत्रंचाथकपालिकाम् ॥८८ ॥
जन्तूनांवारणंवस्त्रं सर्वंभिक्षुरिदंत्यजेत् ।

भा०—इस से सब पुत्रादि को त्याग और योगमार्ग में ठहर कर ॥८३॥ इ-
ां और मन को वश में करता हुआ संन्यासी हंस कहाता है। कृच्छ्र, चा-
यण, तुला पुरुष ॥८४॥ तथा अन्य व्रतों द्वारा ब्रह्मपद की इच्छा करता हुआ
ासी अपने देह को सुखादे—यज्ञोपवीत, दंड और जिस से जीव देह पर
गेरें ऐसा वस्त्र ॥ ८५ ॥ वेद के ज्ञाता हंस नामक संन्यासी को यही परिग्रह
ा वस्तुस्वीकार है अन्य नहीं। ४चौथा अध्यात्म नाम व्यापक प्रकाश ब्रह्म को
ता और प्राणायामों को करता हुआ ॥ ८६ ॥ सब सङ्गों से वियुक्त (रहित)
ने आपे में स्थित स्वयं युक्त हो कर सब स्वीकारों को त्यागने वाला यो-
होकर पृथिवी पर नित्य विचरै ॥ ८७ ॥ यह चौथा इन चारों में बड़ा
र ध्यान भिक्षु (परम हंस) कहा है। त्रिदंड-कुंडी-यज्ञोपवीत-(कपालि-
) बड़े नारियल का आधा टुकड़ा या खप्पर भिक्षा का पात्र ॥ ८८ ॥
तुओं के निवारणार्थ वस्त्र इन सब को भी यह भिक्षु त्यागदे—कौपीन ओढने

कौपोनाच्छादनार्थंच वासोघ्नपरिग्रहेत्
कुर्यात्परमहंसस्तु दण्डमेकंचधारयेत् ।
आत्मन्येवात्मनाबुद्ध्या परित्यक्तशुभाशु
अव्यक्तलिङ्गोऽव्यक्तश्च चरेद्भिक्षुःसमाहित
प्राप्तपूजोनसंतुष्येदलाभेत्यक्तमत्सरः ॥ ९१
त्यक्ततृष्णःसदाविद्वान्मूकवत्पृथिवींचरेत् ।
देहसंरक्षणार्थंतु भिक्षामीहेद्द्विजातिषु ॥ ९२
पात्रमस्यभवेत्पाणिस्तेननित्यंगृहानटेत् ।
अतैजसानिपात्राणि भिक्षार्थंक्लृप्तवान्मनुः ॥
सर्वेषामेवभिक्षूणां दार्वलाबुमयानिच ।
कांस्यपात्रेनभुञ्जीत आपद्यपिकथंचन ॥९४॥
मलाशाःसर्वउच्यन्ते यतयःकांस्यभोजनाः ।

का वस्त्र इन का ही केवल धारण ॥ ८९ ॥ परम हंस करै और ए
धारण करै और अपने मन में ही अपनी बुद्धि से त्याग दिया है
अशुभ कर्म जिसने ॥९०॥ ऐसा अपने चिन्ह को छिपा कर अप्रकट होकर
हुआ विचरै पूजा (बड़ाई) की प्राप्ति से प्रसन्न न हो और आदर
न होने पर क्रोध न करै ॥ ९१ ॥ त्यागी है तृष्णा जिसने ऐसा ज्ञानी
समान पृथिवी पर विचरै और देह की रक्षा के अर्थ द्विजातियों से भिक्ष
॥९२॥ भिक्षुक का पात्र हाथ है उसीसे नित्य गृहों में विचरै अर्थात् भिक्ष
और मनु जी ने भिक्षा के लिये धातु से भिन्न काष्ठ तुंबा आदि के पात्र
सब संन्यासियों को कहे हैं । और कांसे के पात्र में विपत्ति के सम
संन्यासी लोग भोजन न करैं ॥९४॥ कांसे के पात्र में खाने वाले सब संन्
मल (विष्ठा) के खाने वाले कहे हैं । कांसी के ---

कांस्यकस्यतुयत्पापं गृहस्थस्यतथैवच ॥९५॥
कांस्यभोजीयतिःसर्वं तयोःप्राप्नोतिकिल्बिषम् ।
ब्रह्मचारीगृहस्थश्च वानप्रस्थोयतिस्तथा ॥९६॥
उत्तमांवृत्तिमाश्रित्य पुनरावर्त्तयेद्यदि ।
आरूढपतितोज्ञेयः सर्वधर्म्मबहिष्कृतः ॥९७॥
निन्द्यश्चसर्वदेवानां पितृणांचतथोच्यते।
त्रिदण्डंलिङ्गमाश्रित्य जीवन्तिबहवोद्विजाः ॥९८॥
नतेषामपवर्गोस्तिलिङ्गमात्रोपजीविनाम् ।
त्यक्त्वालोकांश्चवेदांश्च विषयानिन्द्रियाणिच ॥९९॥
आत्मन्येवस्थितोयस्तु प्राप्नोतिपरमंपदम् ।

इति० वैष्णा० धर्म्म० चतुर्थोऽध्यायः॥४॥

राज्ञांतुपुण्यवृत्तानां त्रिवर्गपरिकाङ्क्षिणाम् ॥१००॥

कांसे में भोजन कराने वाले गृहस्थ को जो पाप होता है ॥९५॥ उन दोनों के उस पाप को कांसे के पात्र में भोजन करने वाला संन्यासी प्राप्त होता है। जो ब्रह्मचारी-गृहस्थ-वानप्रस्थ और संन्यासी इन में से कोई भी ॥९६॥ उत्तम आचरण नियम व्रत को स्वीकार कर फिर उसका त्याग करता है उसे आरूढ पतित कहते यह सब धर्मों से बहिष्कृत (बाह्य) ॥९७॥ वह सब देवता और पितरों में निन्दित कहा है। संन्यास वेष का आश्रय लेकर बहुत से ब्राह्मण संसार में जीविका करते पुजाते हैं ॥ ९८ ॥ वेषमात्र से जीविका करने वाले उन का मोक्ष नहीं होता-और जो लोक-वेद, विषय, इन्द्रिय, इन सम्बन्धी सब भोगों वा विषयों को त्याग कर ॥९९॥ अपने आत्मा में ही स्थित रहता है वह परमपद को प्राप्त होता है ॥

इति वैष्णवे धर्मशास्त्रे ४ अध्यायः ॥

पवित्र है आचार जिन का ऐसे धर्म अर्थ काम के अभिलाषी राजाओं का ॥१००॥

वक्ष्यमाणस्तुयोधर्मस्तत्वतस्तन्निबोधत ।
तेजःसत्यंधृतिर्दाक्ष्यं संग्रामेष्वनिवर्तिता ॥१०१॥
दानमीश्वरभावश्च क्षत्रधर्मःप्रकीर्तितः ।
क्षत्रियस्यपरोधर्मः प्रजानांपरिपालनम् ॥१०२॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन रक्षयेन्नृपतिःप्रजाः ।
त्रीणिकर्माणिकुर्वीत राजन्यस्तुप्रयततः ॥१०३॥
दानमध्ययनंयज्ञं ततोयोगनिषेवणम् ।
ब्राह्मणानांचसन्तुष्टिमाचरेत्सततंतथा ॥१०४॥
तेषुतुष्टेषुनियतं राज्यंकोशश्चवर्द्धते ।
वाणिज्यंकर्षणंचैव गवांचपरिपालनम् ॥ १०५ ॥
ब्राह्मणक्षत्रसेवाच वैश्यकर्मप्रकीर्तितम् ।
खलयज्ञंकृषीणांच गोयज्ञंचैवयत्नतः ॥ १०६ ॥
कुर्याद्वैश्यश्चसततं गवांचशरणंतथा ।

जो धर्म, उस को हम कहते हैं तुम सुनो । तेज, सत्य,धैर्य, दक्षता (चतुराई) संग्राम से न भागना ॥१०१॥ दानदेना, ईश्वरता (यथार्थ हुकूमत यह क्षत्रिय का धर्म कहा है । प्रजाओं की पालना करना क्षत्रियों का धर्म है ॥१०२॥ इस से सब यत्न से राजा प्रजाओं की रक्षा करे और क्षत्रिय यत्न से तीन कामों को करे कि ॥१०३॥ दान–पढ़ना–यज्ञ और फिर योग का सेवन और ब्राह्मणों को निरन्तर सदा प्रसन्न सन्तुष्ट करने का उद्योग करे ॥१०४॥उनके प्रसन्न हुये पर राजा का राज्य और कोश (खज़ाना) बढ़ता व्यवहार (लेन देन) कृषि गौओं की पालना ॥१०५॥ ब्राह्मण और क्षत्रिय सेवा ये कर्म वैश्य के कहे हैं । और कृषि (खेती) के खलिहान के यज्ञ गौओं के रक्षार्थ यज्ञ को ॥ १०६ ॥ और गौओं के शरण (घर) इन को निरन्तर करे–और शूद्र ईर्षा को त्याग कर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, इन

ब्राह्मणक्षत्रवैश्यांश्च चरेन्नित्यममत्सरः ॥ १०७ ॥
कुर्वंस्तुशूद्रःशुश्रूषां लोकान्जयतिधर्मतः ।
पंचयज्ञविधानंतु शूद्रस्यापिविधीयते ॥ १०८ ॥
तस्यप्रोक्तोनमस्कारः कुर्वन्नित्यंनहीयते ।
शूद्रोपिद्विविधोज्ञेयः श्राद्धीचैवेतरस्तथा ॥ १०९ ॥
श्राद्धीभोज्यस्तयोरुक्तो ह्यभोज्यस्त्वितरोमतः ।
प्राणानर्थांस्तथादारा-न्ब्राह्मणार्थेन्निवेदयेत् ॥ ११० ॥
सशूद्रजातिर्भोज्यः स्या-दभोज्यःशेषउच्यते ।
कुर्याच्छूद्रस्तुशुश्रूषां ब्रह्मक्षत्रविशांक्रमात् ॥ १११ ॥
कुर्यादुत्तरयोर्वैश्यः क्षत्रियोब्राह्मणस्यतु ।
आश्रमास्तुत्रयःप्रोक्ता वैश्यराजन्ययोस्तथा ॥ ११२ ॥
पारिव्राज्याश्रमप्राप्ति-र्ब्राह्मणस्यैवचोदिता ।

नित्य सेवा करे ॥१०७॥ क्योंकि इन की शुश्रूषा को धर्म से करता हुआ शूद्र
…क (स्वर्गादि) को जीतता (प्राप्त होता) है और पंचयज्ञ का करना शूद्र
… भी कहा है ॥ १०८ ॥ उस शूद्र को देवता के नामान्त में नमः लगा कर
…म मन्त्रों से पञ्च यज्ञ करने चाहिये जैसे (अग्नयेनमः) इत्यादि इस प्रकार
…त्य २ करता हुआ शूद्र पतित नहीं होता—शूद्र भी दो प्रकार का है एक
…द्ध का अधिकारी और दूसरा अनधिकारी ॥ १०९ ॥ इन दोनों में से श्राद्धके
…धिकारी का भोजन करना चाहिये—और अनधिकारी का नहीं जो शूद्र अ-
…ने प्राण—धन, स्त्री इत्यादि सब ब्राह्मण को समर्पण करदे ॥ ११० ॥ वह शूद्र
…ोजन करने योग्य है और शेष शूद्र का अन्न अभोज्य है । और शूद्र क्रम से
…ह्मण-क्षत्रिय-वैश्य—इन की सेवा करे ॥१११॥ वैश्य ब्राह्मण क्षत्रिय की सेवा
…रे और क्षत्रिय, ब्राह्मण की ही सेवा करे । वैश्य और क्षत्रिय इन के तीन
…श्रम कहे हैं । अर्थात् ब्रह्मचर्य—गृहस्थ, वानप्रस्थ ॥ ११२ ॥ और संन्यास

आश्रमाणामयंप्रोक्तो मयाधर्मःसनातनः ॥ ११३ ॥
यदत्राविदितंकिंचित्तदन्येभ्योगमिष्यथ ॥
इति विष्णुप्रोक्तं धर्मशास्त्रं समाप्तम् ॥

आश्रम की प्राप्ति केवल ब्राह्मण को ही कही है—यह चारो आश्रमों का सनातन धर्म हमने कहा ॥ ११३ ॥ जो कुछ इस ग्रन्थ में तुमने नहीं जाना उस अन्य धर्म शास्त्र ग्रन्थों से जान जाओगे ॥

इति विष्णुधर्मशास्त्रभाषासमाप्ता ॥

अथ हारीतस्मृतिः

येवर्णाश्रमधर्मस्थास्तेभक्ताःकेशवंप्रति ।
इतिपूर्वंत्वयाप्रोक्तं भुर्भुवःस्वर्द्विजोत्तमाः ॥ १ ॥
वर्णानामाश्रमाणाञ्च धर्मान्नोब्रूहिसत्तम ।
येनसन्तुष्यतेदेवो नारसिंहःसनातनः ॥ २ ॥
अत्राहंकथयिष्यामि पुरावृत्तमनुत्तमम् ।
ऋषिभिःसहसंवादं हारीतस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥
हारीतंसर्वधर्मज्ञमासीनमिवपावकम् ।
प्रणिपत्याऽब्रुवन्सर्वे मुनयोधर्मकाङ्क्षिणः ॥ ४ ॥
भगवन्सर्वधर्मज्ञ सर्वधर्मप्रवर्त्तक ।
वर्णानामाश्रमाणांच धर्मान्नोब्रूहिभार्गव ॥ ५ ॥
समासाद्योगशास्त्रंच विष्णुभक्तिकरंपरम् ।

[भा]षा:-जो वर्ण तथा आश्रम के धर्मों में स्थित तीनों लोक के ब्राह्मण हैं वे केशव भगवान् के भक्त होते हैं यह प्रथम तुमने कहा था- ॥ १ ॥ अब हे पुरुषों में [श्रे]ष्ठ जिस से सनातन नरसिंह देव प्रसन्न हों उन वर्ण आश्रम के धर्मों को क[हो] ॥ २ ॥ इस विषय में उत्तम पुरातन वृत्तान्त हम कहेंगे कि जो हारीत म[हा]त्मा के संग ऋषियों का संवाद हुआ है ॥ ३ ॥ तपोबल से अग्नि के म[ह]ान तेजस्वी-बैठे हुए सब धर्मों के मर्म ज्ञाता-हारीत से धर्म के अभिलाषी [स]म्पूर्ण मुनि नमस्कार करके बोले कि ॥ ४ ॥ हे भगवन् हे सब धर्मों के जानने [व]ाले-हे सब धर्मों के प्रवर्त्तक और हे भृगुवंश में उत्पन्न! वर्ण और आश्रमों के [ध]र्मों को हम से कहिये ॥ ५ ॥ जो विष्णु भगवान् में उत्तम भक्ति प्रकट करने

सोपिसृष्ट्वाजगत्सर्वं सदेवासुरमानुषम् ॥ ११ ॥
यज्ञसिद्ध्यर्थमनघान् ब्राह्मणान्मुखतोऽजसृत् ।
असृजत्क्षत्रियान्बाह्वोर्वैश्यानप्यूरुदेशतः ॥ १२ ॥
शूद्रांश्चपादयोःसृष्ट्वा तेषांचैवानुपूर्वशः ।
यथाप्रोवाचभगवान् ब्रह्मयोनिःपितामहः ॥ १३ ॥
तद्वचःसंप्रवक्ष्यामि शृणुतद्विजसत्तमाः ।
धन्यंयशस्यमायुष्यंस्वर्ग्यंमोक्षफलप्रदम् ॥ १४ ॥
ब्राह्मण्यांब्राह्मणेनैव ह्युत्पन्नोब्राह्मणःस्मृतः ।
तस्यधर्म्मं प्रवक्ष्यामि तद्योग्यंदेशमेवच ॥ १५ ॥
कृष्णसारोमृगोयत्र स्वभावेनप्रवर्त्तते ।
तस्मिन्देशेवसेद्धर्माः सिद्ध्यन्तिद्विजसत्तमाः ॥ १५॥
षट्कर्माणिनिजान्याहु-र्ब्राह्मणस्यमहात्मनः ।
तैरेवसततंयस्तु वर्तयेत्सुखमेधते ॥ १६ ॥
अध्यापनंचाध्ययनं याजनंयजनंतथा ।

। ब्रह्माजी ने भी देवता, असुर, मनुष्य, इन सहित सम्पूर्ण जगत् को
॥ ११ ॥ यज्ञ की सिद्धि के लिये पाप रहित तपस्वी आदि ब्राह्मणों
[illegible] से क्षत्रियों को भुजाओं से वैश्यों को जंघाओं से १२ और शूद्रों को
से उत्पन्न किया। इस क्रम से उन चारों को रच कर भगवान् ब्रह्मयो-
[illegible]ा) जी ने यह वचन कहा कि॥ १३॥ हे ब्रह्मर्षि लोगो! उस वचन कोमैं
हूं तुम सुनो और यह वचन धन, यश, आयुष्या, स्वर्ग तथा मोक्षफलका
[illegible] है॥१४॥ब्राह्मण पिता से जो ब्राह्मणी माता में पैदा हो उसे ब्राह्मण
उसका धर्म और उस के निवास के योग्य देश को हम कहेंगे ॥ १५ ॥
[illegible]ग जिस में स्वभाव से विचरता हो उस देश में [illegible] बसे
[illegible] देश में किया धर्म, हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! सिद्ध [illegible] है॥१६॥
ब्राह्मणों के छः कर्म निज के हैं उन्हीं

दानंप्रतिग्रहश्चेति षट्कर्माणीतिचोच्यते ॥ १

अध्यापनञ्चत्रिविधं धर्म्मार्थमृक्थकारणात् ।

शुश्रूषाकरणंचेति त्रिविधंपरिकीर्तितम् ॥ १८ ।

एषामन्यतमाभावे वृथाचारोभवेद्द्विजः ।

तत्रविद्यानदातव्या पुरुषेणहितैषिणा ॥ १९ ॥

योग्यानध्यापयेच्छिष्यानयोग्यानपिवर्जयेत् ।

विदितात्प्रतिगृहणीयाद्गृहेधर्मप्रसिद्धये ॥ २

वेदञ्चैवाभ्यसेन्नित्यं शुचौदेशेसमाहितः ।

धर्म्मशास्त्रंतथापाठ्यं ब्राह्मणैःशुद्धमानसैः ॥ २

वेदवत्पठितव्यंच श्रोतव्यंचदिवानिशि ।

स्मृतिहीनायविप्राय श्रुतिहीनेतथैवच ॥ २२ ॥

दानंभोजनमन्यच्च दत्तंकुलविनाशनम् ।

तमाम रहै वह सुख से बढ़ता है अर्थात् धन पुत्रवान् होता है ॥१६॥
ना पढ़ना–द्विजों को यज्ञ कराना और स्वयं यज्ञ करना–सुपात्र को
और प्रतिग्रह(दान) लेना ये छः कर्म कहे हैं ॥१७॥ वेदादिशास्त्र का
भी तीन प्रकार का है १ धर्म के अर्थ २ धन को लेकर और ३ सेवा
॥ १८ ॥ इन तीनों में से जिस शिष्य में धर्मादि एक भी न हो उस
से ब्राह्मण वृथाचारी होता है ऐसे शिष्य को अपने हित का अभि
रूप विद्या न दे ॥ १९ ॥ योग्य शिष्यों को पढ़ावे और अयोग्यों को
गृहस्थ धर्म के निर्वाहार्थ प्रसिद्ध पुरुष (धनी) से प्रतिग्रह ले ॥२०॥
सावधान होकर वेदका अभ्यास करै और शुद्ध मनवाले ब्राह्मणों को
स्त्र भी पढ़ना चाहिये ॥२१॥वेद के समान धर्म शास्त्र को भी प्रति
और सुनना चाहिये। स्मृति नाम धर्मशास्त्र श्रुति वेद इन दोनों से ही
ण को॥२२॥ दान-भोजन-और अन्य जो दिया जाय वह कुलको नष्टकरत

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन धर्मशास्त्रं पठेद्द्विजः ॥ २३॥
श्रुतिस्मृतीचविप्राणां चक्षुषीदेवनिर्म्मिते ।
काणस्तत्रैकयाहीनो द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः ॥२४॥
गुरुशुश्रूषणञ्चैव यथान्यायमतन्द्रितः ।
सायंप्रातरुपासीत विवाहाग्निंद्विजोत्तमः ॥२५॥
सुस्नातस्तुप्रकुर्वीत वैश्वदेवंदिनेदिने ।
अतिथीनागतांश्छक्त्यापूजयेदविचारतः ॥ २६ ॥
अन्यानभ्यागतान्विप्रान्पूजयेच्छक्तितोगृही ।
स्वदारनिरतोनित्यं परदारविवर्जितः ॥ २७ ॥
कृतहोमस्तुभुञ्जीत सायंप्रातरुदारधीः ।
सत्यवादीजितक्रोधो नाधर्मेवर्त्तयेन्मतिम् ॥२८॥
स्वकर्मणिचसंप्राप्ते प्रमादान्ननिवर्त्तते ।

सब यत्न से ब्राह्मण धर्म शास्त्र को अवश्य पढ़े ॥२३॥ श्रुति स्मृति ये दोनों रमेश्वर के रचे हुये ब्राह्मणों के नेत्र हैं इन दोनों में से जो एक से हीन है ह काणा, और दोनों से हीन को अंधा कहा है ॥ २४ ॥ आलस्य को त्याग र गुरु की सेवा करे और ब्राह्मण सायं प्रातः काल विवाहाग्नि (जिस में वेवाह का होम हो फिर अपने घर लाकर जीवन पर्यन्त बनाये रक्खे) की उपासना (उसी में स्मार्त्त होम) करे ॥ २५ ॥ भले प्रकार स्नान करके प्रति दिन बलिवैश्व देव करे तथा आये हुए विरक्त अतिथियों को विना विचारे शक्ति के अनुसार पूजे ॥२६॥ और अन्य गृहस्थ ब्राह्मणादि अभ्यागतों को भी गृहस्थी ब्राह्मण शक्ति के अनुसार पूजे तथा अपनी स्त्री से ही सदा प्रेम रक्खे पर स्त्री को वर्ज दे ॥ २७ ॥ उदार बुद्धि वाला ब्राह्मण सायं प्रातःकाल के समय अग्निहोत्र करके भोजन करे। सत्य बोले, क्रोध को जीते तथा अधर्म में बुद्धि को कभी न लगावे ॥ २८ ॥ अपने सन्ध्यादि कर्म के समय में प्रमाद से कर्म को न छोड़े । सत्य सब की हितकारिणी और परलोक में उ-

सत्यांहितांवदेद्वाचं परलोकहितैषिणीम् ॥ २९ ॥
एषधर्म्मःसमुद्दिष्टो ब्राह्मणस्यसमासतः ।
धर्ममेवहियःकुर्यात्सयातिब्रह्मणःपदम् ॥ ३० ॥
इत्येषधर्मःकथितोमयायं पृष्टोभवद्भिस्त्वखिलाघहारी ।
वदामिराज्ञामपिचैवधर्मान्पृथक्पृथग्बोधतविप्रवर्याः ॥३१॥

इति हारीते धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

क्षत्रादीनांप्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः ।
येषुप्रवृत्ताविधिना सर्वेयान्तिपरांगतिम् ॥१॥
राज्यस्थःक्षत्रियश्चापि प्रजाधर्मेणपालयन् ।
कुर्यादध्ययनंसम्यग् यजेद्यज्ञान्यथाविधि ॥२॥
दद्याद्दानंद्विजातिभ्यो धर्मबुद्धिसमन्वितः ।
स्वभार्यानिरतोनित्यं षड्भागार्हःसदानृपः ॥३॥
नीतिशास्त्रार्थकुशलः सन्धिविग्रहतत्त्ववित् ।

पना हित करने वाली वाणी को बोला करे ॥ २९ ॥ यह धर्म ब्राह्मण संक्षेप से कहा जो ब्राह्मण धर्म को ही करता है वह ब्रह्मपद को प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! जो धर्म तुमने मुझे पूछा था संपूर्ण पापों का नाशक वह यह धर्म हमने कहा और राजाओं के भी पृथक् २ धर्मों को कहते हैं तुम सुनो ॥ ३१ ॥

इति हारीते धर्म शास्त्रे १ अध्याय भाषा समाप्त

अब क्षत्रियादि के धर्म को यथार्थ क्रम से हम कहते हैं कि जिन धर्मों को विधि से करते हुए (क्षत्रियादि) परमगति को प्राप्त होते हैं ॥१॥ राज्य पदवी पर स्थित धर्म से प्रजा की रक्षा करता हुआ क्षत्रिय भी वेद पढ़े और विधिपूर्वक यज्ञ करे ॥२॥ जो राजा धर्मानुकूल बुद्धि करके ब्राह्मणों को दान दे और अपनी स्त्री में ही प्रेम रक्खे वेश्यादि से सदा बचे ऐसा राजा सदा प्रजा से षष्ठांश कर लेने योग्य होता है ॥३॥ नीतिशास्त्र में कुशल और स

देवब्राह्मणभक्तश्च-पितृकार्यपरस्तथा ॥४॥
धर्मेणयजनंकार्यं मधर्मपरिवर्जनम् ।
उत्तमांगतिमाप्नोति क्षत्रियोऽप्येवमाचरन् ॥५॥
गोरक्षांकृषिवाणिज्यं कुर्याद्वैश्योयथाविधि ।
दानंदेयंयथाशक्त्या ब्राह्मणानांचभोजनम् ॥६॥
दम्भमोहविनिर्मुक्तः सत्यवागनसूयकः ।
स्वदारनिरतोदान्तः परदारविवर्जितः ॥७॥
धनैर्विप्रान्भोजयित्वा यज्ञकालेतुयाजकान् ।
अप्रभुत्वेचवर्तेत धर्मेवादेहपातनात् ॥८॥
यज्ञाध्ययनदानानि कुर्यान्नित्यमतन्द्रितः ।
पितृकार्यपरश्चैव नरसिंहार्चनापरः ॥९॥
एतद्वैश्यस्यधर्मोयं स्वधर्ममनुतिष्ठति ।

मेल) विग्रह (फूट) इन के भी तत्व को राजा जाने देवता और ब्राह्मणों
में भक्ति रक्खे और पितरों के कार्य (श्राद्ध आदि) में भी तत्पर रहे ॥ ४ ॥
धर्म से यज्ञ करना और अधर्म को त्यागना इस प्रकार आचरण करता हुआ
क्षत्रिय भी उत्तम गति को प्राप्त होता है ॥५॥ वैश्य के धर्म-गौओं की रक्षा
खेती-व्यापार (लेन देन) इन कामों को वैश्य विधि से करे । यथाशक्ति दान
देना और ब्राह्मणों को भोजन कराना ॥ ६ ॥ अविद्यारूप दम्भ तथा मोह
का त्यागी और वाणी से सत्य बोले ईर्ष्या को न करे अपनी स्त्री में रत रहे
और पराई स्त्री का सदा परित्याग करे ॥ ७ ॥ धन से ब्राह्मणों को और यज्ञ
के समय ऋत्विजों को जिमा (तृप्त) करके मरण पर्यन्त धर्म के कार्यों में
अपनी हुकूमत किसी को न दिखलावे ॥ ८ ॥ प्रतिदिन आलस्य को छोड़ कर
यज्ञ, वेदाध्ययन, तथा दान, करे । पितरों के कार्य (श्राद्ध आदि) और नर
सिंह भगवान् के पूजन में तत्पर रहे ॥ ९ ॥ यह वैश्य का धर्म है इस को जो
करता है और इस के अनुसार चलता है वह स्वर्ग में जाता है इस में संशय

एतदाचरतेयोहि सस्वर्गीनात्रसंशयः ॥१०॥

वर्णत्रयस्यशुश्रूषां कुर्याच्छूद्रःप्रयत्नतः ।
दासवद्ब्राह्मणानाञ्च विशेषेणसमाचरेत् ॥११॥

अयाचितप्रदाताच कष्टंवृत्त्यर्थमाचरेत् ।
पाकयज्ञविधानेन यजेद्देवमतन्द्रितः ॥१२॥

शूद्राणामधिकंकुर्यादर्च्चनंन्यायवर्त्तिनाम् ।
धारणंजीर्णवस्त्रस्य विप्रस्योच्छिष्टभोजनम् ॥ १३

स्वदारेषुरतिश्चैव परदारविवर्जनम् ।
इत्थंकुर्यात्सदाशूद्रो मनोवाक्कायकर्म्मभिः ।
स्थानमैन्द्रमवाप्नोति नष्टपापःसुपुण्यकृत् ॥ १४ ॥

वर्णेषुधर्म्माविविधामयोक्ता यथातथाब्रह्ममुखेरिताः ।
शृणुध्वमत्राश्रमधर्म्ममाद्यं मयोच्यमानंक्रमशोमुनीन्द्राः

इति हारीते धर्म्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

नहीं ॥ १० ॥ शूद्र के धर्म–तीनों वर्णों की सेवा को शूद्र यत्न से करे और ब्राह्मणों की तो दास बन कर सेवा करे ॥ ११ ॥ बिना मांगे दे और अपनी वृत्तिके लिये कष्ट सहे और आलस्य को छोड़ कर पाक यज्ञ से देवताओं का पूजन करे ॥१२॥ और न्याय में तत्पर जो शूद्र उनकाभी पूजन अधिकता से करे पुराने वस्त्र का धारण करे और ब्राह्मण के खाने से शेष बचे भोजन शूद्र करे ॥१३॥ अपनी स्त्रियों में रमे और पराई स्त्रियोंको वर्जे––मन, वाणी, देह के कर्म से इसी प्रकार सदा करे ॥१४॥ नष्ट हुआहै पाप जिसका ऐसा उत्तम पुण्यात्मा इंद्र के स्थान को प्राप्त होता है ये ब्रह्मा जीके मुखसे निकले हुए वर्णों के यथार्थ धर्म हमने कहे ॥ १५॥ हे श्रेष्ठ मुनियो अब हमारे कहे आश्रमों के प्रथम धर्म को क्रम से सुनो ॥ १६॥

इति हारीते धर्मशास्त्रे २ अध्यायः भाषासमाप्ता ॥

उपनीतोमाणवको वसेद्गुरुकुलेषुच ।
गुरोःकुलेप्रियंकुर्य्यात्कर्म्मणामनसागिरा ॥१॥
ब्रह्मचर्य्यमधःशय्या तथावह्नेरुपासना ।
उदकुंभान्गुरोर्दद्याद् गोग्रासञ्चेन्धनानिच ॥२॥
कुर्यादध्ययनञ्चैव ब्रह्मचारीयथाविधि ।
विधिंत्यक्त्वाप्रकुर्वाणो नस्वाध्यायफलंलभेत् ॥३॥
यःकश्चित्कुरुतेधर्म्मं विधिंहित्वादुरात्मवान् ।
नतत्फलमवाप्नोति कुर्वाणोऽपिविधिच्युतः ॥४॥
तस्माद्वेदव्रतानीह चरेत्स्वाध्यायसिद्धये ।
शौचाचारमशेषंतु शिक्षयेद्गुरुसन्निधौ ॥५॥
अजिनंदण्डकाष्ठंच मेखलाञ्चोपवीतकम् ।
धारयेदप्रमत्तश्च ब्रह्मचारीसमाहितः ॥६॥
सायंप्रातश्चरेद्भैक्षं भोज्यार्थंसंयतेन्द्रियः ।
आचम्यप्रयतोनित्यं नकुर्याद्दन्तधावनम् ॥७॥

यज्ञोपवीत के पीछे बालक गुरु के कुलों में बसै और कर्म, मन, वाणी, गुरु के कुल में प्रीति रक्खै ॥ १ ॥ ब्रह्मचर्य में रहै पृथ्वीपर सोवै अग्न्याधान करै और गुरु के लिये जलका घट ईंधन और गौओं चारा दे ॥ २ ॥ और ब्रह्मचारी शास्त्रोक्त विधि से वेद वेदाङ्ग का अध्ययन करै क्योंकि विधिसे हीन रीति से पढ़ना हुआ पढ़ने के फलको प्राप्त नहीं होता ॥३॥ जोकोई दुरात्मा विधिको छोड़कर धर्म करता है, विधिवर्जित वह ब्रह्मचारी आदि पुरुष उस कर्म के फल को प्राप्त नहीं होता ॥ ४ ॥ इससे अपने स्वाध्याय की सिद्धि के अर्थ गुरुकुल में वेद के व्रतों को करै और गुरु के समीप सम्पूर्ण शौच आचरण सीखे ॥५॥ मृगछाला-दंड-मेखला कंधनी यज्ञोपवीत- इनको सावधान और अप्रमत्त होकर धारण करै ॥ ६ ॥ इन्द्रियों को जीतकर भोजनके अर्थ सायं प्रातः काल भिक्षा मांगकर नित्य सावधानी से आचमन करके रहै । तथा दंतधावन न करै ॥ ७ ॥

छत्रंचोपानहंचैव गन्धमाल्यादिवर्जयेत् ।
नृत्यगीतमथालापं मैथुनंचविवर्जयेत् ॥८॥
हस्त्यश्वारोहणंचैव सन्त्यजेत्संयतेन्द्रियः ।
सन्ध्योपास्तिंप्रकुर्वीत ब्रह्मचारीव्रतेस्थितः ॥९॥
अभिवाद्यगुरोःपादौ संध्याकर्मावसानतः ।
तथायोगंप्रकुर्वीत मातापित्रोश्चभक्तितः ॥१०॥
एतेषुत्रिषु नष्टेषु नष्टाःस्युःसर्वदेवताः ।
एतेषांशासनेतिष्ठेद् ब्रह्मचारीविमत्सरः ॥११॥
अधीत्यचगुरोर्वेदान् वेदौवावेदमेववा ।
गुरवेदक्षिणांदद्यात्संयमीग्राममावसेत् ॥१२॥
यस्यैतानिसुगुप्तानि जिह्वोपस्थोदरंकरः ।
संन्याससमयंकृत्वा ब्राह्मणोब्रह्मचर्य्यया ॥१३॥
तस्मिन्नेवनयेत्कालमाचार्य्येयावदायुषम् ।
तदभावेचतत्पुत्रे तच्छिष्येवाथवाकुले ॥१४॥

छाता जूता गंध (इतर फुलेलादि) माला नाचना गाना बहुत बो[illegible]
मैथुन इनको सर्वथा त्याग देवे हाथी घोड़े पर न चढ़े और इन्द्रियों को द[illegible]
करके नियम में स्थित ब्रह्मचारी संध्योपासन किया करे॥८॥संध्या कर्म को स[illegible]
म कर गुरु के चरणों कोअभिवादन करके भक्ति से माता और पिता की भी ह[illegible]
करे॥१०॥जो ब्रह्मचारीगुरुआदि तीनों की सेवा शुश्रूषा को सर्वथा भुला देते [illegible]
र सब देवता नष्ट (अप्रसन्न) होजाते हैं इससे ईर्षा को छोड़कर ब्रह्मचा[illegible]
इनकी शिक्षा (उपदेश में) स्थित रहे ॥११॥ गुरुसे सब (४ वेद) अथवा दो [illegible]
अथवा एक वेद को पढ़कर जितेंद्रिय ब्रह्मचारी गुरुको दक्षिणा दे के समाव[illegible]
करकेग्राममें बसे॥१२॥ जिह्वा-उपस्थ इन्द्रिय उदर(पेट)-हाथ-जिसके ये भली[illegible]
र वश में होगये हैं। वह ब्राह्मण ब्रह्मचर्य से ही संन्यास लेने का समय निय[illegible]
लेवे ॥१३॥और वह नैष्ठिकब्रह्मचारी रहनापसन्दकरेतोउसी आचार्य केपा[illegible]
स पर्यन्त विरक्त होकर गुरुसेवा करे यदि आचार्य का स्वर्गवास होग[illegible]
गुरु शिष्यके समीप, गुरु के कुलमें तत्परता दुआ जन्म को वितावे ॥

नविवाहोनसंन्यासो नैष्ठिकस्यविधीयते ।
इमंयोविधिमास्थाय त्यजेद्देहमतन्द्रितः ।
नेहभूयोऽपिजायेत ब्रह्मचारीदृढव्रतः ॥१५॥
यो ब्रह्मचारीविधिनासमाहितश्चरेत्पृथिव्यांगुरुसेवनेरतः ।
सम्प्राप्य विद्यामतिदुर्लभांशिवांफलञ्चतस्याःसुलभंतुविन्दति॥१६

इति हारीते धर्म्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

गृहीतवेदाध्ययनः श्रुतशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।
असमानर्षिगोत्रां हि कन्यांसभ्रातृकांशुभाम् ॥ १॥
सर्वावयवसम्पूर्णां सुवृत्तामुद्वहेन्नरः ।
ब्राह्मेणविधिनाकुर्यात्प्रशस्तेनद्विजोत्तमः ॥ २ ॥
तथान्येबहवःप्रोक्ता विवाहावर्णधर्मतः ।
उपासनंचविधिवदाहृत्यद्विजपुंगवाः ॥ ३ ॥
सायंप्रातश्चजुहुयात सर्वकालमतन्द्रितः ।

इस नैष्ठिक ब्रह्मचारी के लिये विवाह और संन्यास नहीं कहे हैं। जो आल-स्य को छोड़कर इस विधि से देहको त्यागदे ॥१५॥ वह दृढ़व्रत ब्रह्मचारी इस लोक में फिर पैदा नहीं होता—विधि और सावधानी से गुरु की सेवा में लव-लीन जो ब्रह्मचारी पृथ्वी पर विचरता है ॥१६॥ वह अत्यन्त दुर्लभ और कल्याण रूप विद्या को पाकर उसके सुलभ फल (मोक्ष) को प्राप्त होता है ॥ १७ ॥

इति हारीते धर्मशास्त्रे ३अध्यायभाषासमाप्ता ॥

वेद को जो पढ़ चुका है, और वेदशास्त्र के तात्पर्य को ठीक २ जानता है ऐसा ब्रह्मचारी समावर्त्तन संस्कार करके जिसके प्रवर और गोत्र अपने से भिन्न हों और कोई भाई जिस का हो ऐसी ॥१॥ देह के सब अंग जिस के पूरे २ हों और सुंदर जिसका आचरण हो ऐसी कन्या से विवाह करे। और ब्राह्म-ण आठ विवाहों में उत्तम ब्राह्मविवाह विधि से विवाह करे ॥ २ ॥ ब्राह्म से भिन्न विवाह अन्य क्षत्रियादि वर्णों के लिये कहे हैं ॥ ३ ॥ आलस्य को छोड़ सायं प्रातःकाल नित्य २ होम करे और नित्य दन्तधावन करके स्नान

स्नानंकार्य्यंततोनित्यं दन्तधावनपूर्वकम् ॥ ४ ॥
उषःकालेसमुत्थाय कृतशौचोयथाविधि ।
मुखेपर्य्युषितेनित्यं भवत्यप्रयतोनरः ॥ ५ ॥
तस्माच्छुष्कमथार्द्रंवा भक्षयेद्दन्तकाष्ठकम् ।
करंजंखादिरंवापि कदंबंकुरवंतथा ॥ ६ ॥
सप्तपर्णंपृश्निपर्णी जंबूनिंबंतथैवच ।
अपामार्गंचबिल्वंचार्कंचोदुम्बरमेवच ॥ ७ ॥
एतेप्रशस्ताःकथिता दंतधावनकर्म्मणि ।
दतकाष्ठस्यभक्षश्च समासेनप्रकीर्तितः ॥ ८ ॥
सर्वेकंटकिनःपुण्याः क्षीरिणश्चयशस्विनः ।
अष्टांगुलेनमानेन दन्तकाष्ठमिहोच्यते ॥ ९ ॥
प्रादेशमात्रमथवा तेनदन्तान्विशोधयेत् ।
प्रतिपत्पर्वषष्ठीषु नवम्यांचैवसत्तमाः ॥ १० ॥
दन्तानांकाष्ठसंयोगो दहत्यासप्तमंकुलम् ॥

करे ॥ ४ ॥ अरुणोदय में उठके विधिपूर्वक शुद्धि मुखादिकी करे क्योंकि मुख के पर्युषित (बासी) होने से मनुष्य का मन मलिन अपवित्र होता है। इस से सूखी या गीली दातौन अवश्य करे वह दातौन करंज, खैर, कदंब, कौलसिरी की हो ॥ ६ ॥ सप्तपर्ण, पृश्निपर्णी, जामन नींब ऊंगा बेल, आक, गूलर—॥ ७ ॥ इतने वृक्ष दातौन केलिये उत्तम कहे हैं—और दातौन करने का विचार भी संक्षेप से कह दिया है ॥ ८ ॥ कांटे वाले सब वृक्ष पवित्र और दूध वाले सब वृक्ष यश के हेतु हैं। आठ अंगुल लंबी दातौन होनी चाहिये अथवा प्रादेशमात्र (बिलस्तभर) लम्बी हो उस से दांतों को शुद्ध करे हे महर्षि लोगो ! पड़वा, पर्व (अमावस आदि) छठ और नवमी तिथि में ॥ १० ॥ दातौन करने से सात पीढ़ी तक के पुरुषाओं को दग्ध करता है

अभावेदन्तकाष्ठानां प्रतिपिद्धदिनेषुच ॥ ११ ॥
अपांद्वादशगण्डूषैर्मुखशुद्धिंसमाचरेत् ।
स्नात्वामन्त्रवदाचम्य पुनराचमनंचरेत् ॥ १२ ॥
मन्त्रवत्प्रोक्ष्यचात्मानं प्रक्षिपेदुदकाञ्जलिम् ।
आदित्येनसहप्रातर्मन्देहानामराक्षसाः ॥ १३ ॥
युद्ध्यन्तिवरदानेन ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
उदकाञ्जलिनिःक्षेपा गायत्र्याचाभिमंत्रिताः ॥ १४ ॥
निघ्नन्तिराक्षसान्सर्वान्मन्देहाख्यान्द्विजेरिताः ।
ततःप्रयातिसविता ब्राह्मणैरभिरक्षितः ॥ १५ ॥
मारीच्याद्यैर्महाभागैः सनकाद्यैश्चयोगिभिः ।
तस्मान्नलंघयेत्सन्ध्यां सायंप्रातःसमाहितः ॥ १६ ॥
उल्लंघयतियोमोहात् सयातिनरकंध्रुवम् ।
सायंमंत्रवदाचम्य प्रोक्ष्यसूर्य्यस्यचांजलिम् ॥ १७ ॥

दातौन के न मिलने पर तथा प्रतिपदादि निषिद्ध दिनों में ॥ ११ ॥
[illegible] के बारह कुल्ले करके तथा मज्जन द्वारा मुख की शुद्धि करे । म
न्त्रों से आचमन करके स्नान करे और स्नान के पीछे फिर आचमन करे ॥१२॥
(आपोहिष्ठादि०) मन्त्रों से देह पर मार्जन करके सूर्य को जल की अंजली
दे । सूर्य नारायण के संग प्रातःकाल में मंदेह नाम वाले राक्षस ॥ १३ ॥ अ-
व्यक्त ब्रह्म से प्रकट हुये ब्रह्मा जी के वरदान से युद्ध करते हैं । गायत्री मन्त्र
पढ़ कर सूर्यनारायण के सम्मुख द्विजों से फेंकी जल की अंजली ॥ १४ ॥ सब
मंदेह नामक राक्षसों को नष्ट करती हैं । इस कारण ब्राह्मणों से ॥ १५ ॥
बड़े भाग्यशाली मरीचि आदि ऋषियों से तथा सनकादिक योगियों से भी
रक्षित हुये सूर्यनारायण आकाश में निर्विघ्न गमन करते हैं । इस से सावधान
हो द्विज सायं प्रातःकाल की संध्या का उल्लंघन त्याग न करे॥१६॥ जो पुरुष अ
ज्ञान से सन्ध्या को छोड़ता है वह निश्चय कर नरक में जाता है । सायंकाल
मन्त्रों से आचमन और शरीर पर मार्जन कर के सूर्य को अंजली ॥१७।

दत्त्वाप्रदक्षिणंकुर्य्याज्जलंस्पृष्ट्वाविशुद्ध्यति ।
पूर्वांसंध्यांसनक्षत्रा-मुपासीतयथाविधि ॥ १८ ॥
गायत्रीमभ्यसेत्तावद्द यावदादित्यदर्शनम् ।
उपास्यपश्चिमांसंध्यां सादित्यांचयथाविधि ॥ १९॥
गायत्रीमभ्यसेत्तावद्यावत्ताराणिपश्यति ।
ततश्चावसथंप्राप्य कृत्वाहोमंस्वयंबुधः ॥ २० ॥
सञ्चिन्त्यपोष्यवर्गस्य भरणार्थंविचक्षणः ।
ततःशिष्यहितार्थाय स्वाध्यायंकिञ्चिदाचरेत् ॥२१॥
ईश्वरंचैवकार्यार्थ-मभिगच्छेद्द्विजोत्तमः ।
कुशपुष्पेन्धनादीनि गत्वादूरंसमाहरेत् ॥२२॥
ततोमाध्यान्हिकंकुर्याच्छुचौदेशेमनोरमे ।
विधिंतस्यप्रवक्ष्यामि समासात्पापनाशनम् ॥२३॥
स्नात्वायेनविधानेन मुच्यतेसर्वकिल्विषात् ।

देकर प्रदक्षिणा करै फिर जल का स्पर्श कर के शुद्ध होता है । प्रातःकाल
सध्या का उस समय विधि से आरम्भ करे जब आकाश में नक्षत्र दीखते
॥१८॥ फिर सूर्य का दर्शन होने समय तक खड़े हो के गायत्री का जपकरे।
काल की संध्या को सूर्य के अस्त से पूर्व ही विधि से आरम्भ करके ॥१९॥ त
गण दीखने समय तक बैठ के गायत्री का जप करे—फिर गृह्याग्नि के
म जाकर शास्त्रोक्त विधि से ज्ञानवान् द्विज स्वयं होम करे॥
विचारशील पुरुष पुत्र भृत्य आदि के खान पान के अर्थ चिन्ता करके
शिष्य के हित के लिये कुछ वेद पाठ करे ॥२१॥ और ब्राह्मण संसारी कार्य
लिये ईश्वर नाम राजा के यहां जाय । तथा दूर जाकर कुशा, फल,
समिधा आदि को लाया करे ॥ २२ ॥ फिर शुद्ध एकान्त देश में जाकर म
दोपहर का सन्ध्यादि कर्म करे । उसके पाप नाशक विधान को संक्षेप से
ं ॥ २३ ॥ जिस विधि से स्नान करके सब पापों से छूटता है—स्नान के

स्नानार्थंमृदमानीय शुद्धाक्षततिलैःसह ॥२४॥
सुमनाश्चततोगच्छेन्नदींशुद्धजलाधिकाम् ।
नद्यान्तुविद्यमानायां नस्नायादन्यवारिणि ॥२५॥
नस्नायादल्पतोयेषु विद्यमानेबहूदके ।
सरिद्वरंनदीस्नानं प्रतिस्रोतस्थितश्चरेत् ॥२६॥
तडागादिषुतोयेषु स्नायाच्चतदभावतः ।
शुचिंदेशंसमभ्युक्ष्य स्थापयेत्सकलांबरम् ॥२७॥
मृत्तोयेनस्वकंदेहं लिम्पेत्प्रक्षाल्ययत्नतः ।
स्नानादिकंचसंप्राप्य कुर्यादाचमनंबुधः ॥२८॥
सोऽन्तर्जलंप्रविश्याथ वाग्यतोनियमेनहि ।
हरिंसंस्मृत्यमनसामज्जयेच्चोरुमज्जले ॥२९॥
ततस्तीरंसमासाद्यआचम्यापःसमन्त्रतः ।
प्रोक्षयेद्वारुणैर्मन्त्रैः पावमानीभिरेवच ॥३०॥
कुशाग्रकृततोयेन. प्रोक्ष्यात्मानंप्रयत्नतः ।

अक्षत और तिलों सहित मट्टी को लाकर ॥ २४ ॥ उदार चित्त होके शुद्ध
क, जल वाली नदी पर जावे । नदी के होते अन्य जल में स्नान न करे
॥ और अधिक जल वाले जलाशय के होते अल्प जल वाले में स्नान न करे ।
न नदी में स्रोत (प्रवाह) के सम्मुख खड़ा होकर स्नान करे ॥ २६ ॥ और
ी के अभाव में तालाब आदि के जल में पूर्व या उत्तराभिमुख खड़ा होके
ान करे शुद्ध स्थान को जल से छिड़क कर सब वस्त्र रख दे ॥ २७ ॥ पहिले
ीर पर जल छोड़ के सब देह में मुख से लेकर जल में घोर के मट्टी लगावे
र स्नान करके आचमन करे । २८ ॥ फिर वह पुरुष जल के भीतर घुस के
न होकर नियम से हरि भगवान् का स्मरण करके जांघा तक जल में गोता
ावे ॥२९॥ फिर किनारे पर आकर मन्त्रों पूर्वक जल का आचमन करके व
ण देवता के मन्त्रों तथा पावमानी सूक्त से शरीर का मार्जन कुशा ले के करे
३० ॥ कुशा के अग्र भाग के जल से यत्न से देह का मार्जन करके (इयोगा

इदंविष्णुरितिद्विजाः ॥ ३१ ॥
स्योनापृथ्वीतिमृद्गात्रे
ततोनारायणंदेवं संस्मरेत्प्रतिमज्जनम् ।
निमज्ज्यांतजलेसम्यक् क्रियतेचाघमर्षणम् ॥ ३२ ॥
स्नात्वाक्षततिलैस्तद्वद्देवर्षिपितृभिःसह ।
तर्पयित्वाजलंतस्मा न्निष्पीड्यचसमाहितः ॥ ३३ ॥
जलतीरंसमासाद्य तत्रशुक्लेनवाससी ।
परिधायोतरीयंच कुर्य्यात्केशान्नधूनयेत् ॥ ३४ ॥
नरक्तमुल्वणंवासो ननीलंचप्रशस्यते ।
मलाक्तगंधहीनंच वर्जयेदंबरंबुधः ॥ ३५ ॥
ततःप्रक्षालयेत्पादौ मृत्तोयेनविचक्षणः ।
दक्षिणंतुकरंकृत्वा गोकर्णाकृतिवत्पुनः ॥ ३६ ॥
त्रिःपिबेदोक्षितंतोयमास्यंद्विःपरिमार्जयेत् ।
पादौशिरस्ततोऽभ्युक्ष्य त्रिभिरास्यमुपस्पृशेत् ॥ ३७ ॥
अंगुष्ठानामिकाभ्यांच चक्षुषीसमुपस्पृशेत् ।
तथैवपंचभिर्मूर्ध्नि स्पृशेदेवंसमाहितः ॥ ३८ ॥

पृथिवी०) इस मंत्र से अथवा (इदंविष्णुः०) इस मंत्र से देह में मट्टी लगा ॥३१॥ फिर एक गोतालगाने में नारायण-देव का स्मरण करै और जल के भीतर ता लगाये हुए अघमर्षण मंत्र (ऋतंचसत्यंचा०) को जपै ॥ ३२ ॥ स्नान क और वस्त्र को निचोड़ कर ॥३३॥ जल के किनारे पर आके सफेद वस्त्र (धोत को पहन कर अंगोछा कन्धे पर डाल के केशों को न कंपावे ॥ ३४ ॥ लाल, नील वस्त्र श्रेष्ठ नहीं कहा है तथा मैले और गंधहीन वस्त्र को ३५ फिर विचारशील पुरुष मट्टी और जल से पग धोके दहिने हाथ को कान के समान करके ॥३६॥ देखे हुए जल से तीन वार आचमन करै फिर दो मुख का मार्जन करै फिर पग और शिर पर जल का मार्जन कर बीच की अंगुलियों से मुख का स्पर्श करे ॥ ३७ ॥ अंगूठा और अनामिका से दोनों का स्पर्श करै इसी प्रकार सावधान होकर पांचों अंगुलियों से मस्तक

अनेनविधिनाचम्य ब्राह्मणःशुद्धमानसः ।
कुर्वीतदर्भपाणिस्तूदङ्मुखःप्राङ्मुखोऽपिवा ॥३९॥
प्राणायामत्रयंधीमान्यथान्यायमतंद्रितः ।
जपयज्ञंततःकुर्याद्‌ गायत्रींवेदमातरम् ॥ ४० ॥
त्रिविधोजपयज्ञःस्यात्तस्यतत्वंनिबोधत ।
वाचिकश्चउपांशुश्च मानसश्चत्रिधाकृतिः ॥ ४१ ॥
त्रयाणामपियज्ञानां श्रेष्ठःस्यादुत्तरोत्तरः ।
यदुच्चनीचोच्चरितैः शब्दैःस्पष्टपदाक्षरैः ॥४२॥
मंत्रमुच्चारयन्वाचा जपयज्ञस्तुवाचिकः ।
शनैरुच्चारयन्मंत्रं किंचिदोष्ठौप्रचालयेत् ॥४३॥
किंचिच्छ्रवणयोग्यःस्यात् सउपांशुजपःस्मृतः ।
धियापदाक्षरश्रेण्या अवर्णमपदाक्षरम् ॥४४॥
शब्दार्थचिन्तनाभ्यांतु तदुक्तंमानसंस्मृतम् ।

मन वाला ब्राह्मण इस विधि से आचमन करके कुशा हाथ में लेकर उत्तर पूर्व को मुख करके ॥३९॥ आलस्य को छोड़ के विधि पूर्वक तीन प्राणायाम फिर वेद माता गायत्री का जपयज्ञ करै ॥४०॥ तीन प्रकार का जपयज्ञ होता उस के स्वरूप को सुन सुनो। वाणी से साफ २ बोले उपांशु-धीमी वाणी से ले और मन से ये तीन उस के भेद हैं ॥४१॥ इन तीनों यज्ञों में पिछला २ उ है। जो उदात्त अनुदात्त स्वरित स्वरों सहित स्पष्ट पद और अक्षरों सहि- ॥४२॥ वाणी से मंत्र का स्पष्ट उच्चारण करते हुए जप किया जाता है वह चिक जप यज्ञ कहाता है और कुछ २ होठों को चला कर अति समीप के रुष को सुनने योग्य धीरे २ मंत्र का उच्चारण कर के ॥४३॥ जो जप किया य उसे उपांशु जप कहते हैं—और जिस में वर्ण (पदों के स्वर) प्रवीन हों केवल बुद्धि से ही पदों के अक्षरों के [illegible] से ॥४४॥ शब्द अर्थ का चार जिस में हो उस जप यज्ञ को मानस कहते हैं। जप यज्ञ से स्तुति किया

जपेनदेवतानित्यं स्तूयमानाप्रसीदति ॥४५॥
प्रसन्नेविपुलान्भोगान्प्राप्नुवन्तिमनीषिणः।
राक्षसाःश्चपिशाचाश्च महासर्पाश्चभीषणाः ॥४६॥
जपितान्नोपसर्पन्ति दूरादेवप्रयांतिते ।
छंदऋष्यादिविज्ञाय जपेन्मन्त्रमतंद्रितः ॥४७॥
जपेदहरहर्ज्ञात्वा गायत्रींमनसाद्विजः।
सहस्रपरमांदेवीं शतमध्यांदशावराम् ॥४८॥
गायत्रींयोजपेन्नित्यं सनपापेनलिप्यते ॥
अथपुष्पांजलिंकृत्वा भानवेचोर्ध्वबाहुकः ॥४९॥
उदुत्यंचजपेत्सूक्तं तच्चक्षुरितिचापरम्
प्रदक्षिणमुपावृत्य नमस्कुर्यादिवाकरम् ॥५०॥
ततस्तीर्थेनदेवादीनद्भिः संतर्पयेद्द्विजः॥
स्नानवस्त्रंतुनिष्पीड्य पुनराचमनंचरेत् ॥५१॥
तद्वद्भक्तजनस्येह स्नानंदानंप्रकीर्तितम् ॥

हुआ देवता प्रसन्न होता है ॥ ४५ ॥ देवता के प्रसन्न होने पर बुद्धिमान् [illegible] ... भोग ... ध्य बहुत भी वंश की वृद्धि को प्राप्त होते हैं । राक्षस, पिशाच, और भय ... ल बड़े२ सर्प ॥ ४६ ॥ जप करने से समीप नहीं आते किन्तु वे दूर से ही ... जाते हैं । मन्त्रों के छंद और ऋषि आदि को जान कर आलस्य को त्याग ... मंत्र को जपे ॥४७॥ ब्राह्मण छंद आदि को जानकर प्रति दिन मन से गाय ... को जपे १००० हजार गायत्रीका जप श्रेष्ठ है १०० का जपमध्यम और दश ... जप अधम है ॥४८॥ जो नित्य गायत्री को जपता है वह पापसे लिप्त नहीं ... ता । फिर ऊपर को भुजा उठाकर अर्थात पुष्पों सहित अर्घ्य देके सूर्य ... और हाथ जोड़ के ॥४९॥ (उदुत्यं०) और (तच्चक्षु:०) इन सूक्तों को जपे ... प्रदक्षिणा करके सूर्य को नमस्कार करे ॥ ५० ॥ फिर ब्राह्मण तीर्थ के ... देव आदि का तर्पण करे । पीछे स्नान के वस्त्र (धोती) को निचो ... आचमन करे ॥ ५१ ॥ इसी प्रकार यहां भक्त जन का स्नान और दान ...

दर्भासीनोदर्भपाणि-र्ब्रह्मयज्ञविधानतः ॥५२॥
प्राङ्मुखोब्रह्मयज्ञं तु कुर्य्याच्छ्रद्धासमन्वितः ॥
ततोर्घ्यंभानवेदद्यात्तिलपुष्पाक्षतान्वितम् ॥ ५३ ॥
उत्थायमूर्द्धपर्य्यंतं हंसःशुचिषदित्यृचा ।
ततोदेवंनमस्कृत्य गृहंगच्छेत्ततःपुनः ॥ ५४ ॥
विधिनापुरुषसूक्तस्य गत्वाविष्णुंसमर्चयेत् ।
वैश्वदेवंततःकुर्याद्बलिकर्मविधानतः ॥ ५५ ॥
गोदोहमात्रमाकांक्षेदतिथिंप्रतिवैगृही ।
अदृष्टपूर्वमज्ञातमतिथिंप्राप्तमर्चयेत् ॥ ५६ ॥
स्वागतासनदानेन प्रत्युत्थानेनचांबुना ।
स्वागतेनाग्नयस्तुष्टा भवन्तिगृहमेधिनः ॥ ५७ ॥
आसनेनतुदत्तेन प्रीतोभवतिदेवराट् ।
पादशौचेनपितरः प्रीतिमायान्तिदुर्लभाम् ॥ ५८ ॥
अन्नदानेनयुक्तेन तृप्यतेहिप्रजापतिः ।

(दर्भ)ओं पर बैठ कर और कुशाओं को हाथ में लेकर ॥५२॥ और पूर्वाभिमुख (हो)के श्रद्धा से ब्रह्म यज्ञ करै फिर तिल पुष्प तथा अक्षतों से युक्त अर्घ सूर्यनारा(यण)को देवै॥५३॥अंजुली में भरे अर्घ जल को मस्तक पर्यन्त उठाकर(हंसःशुचिष-‌-)इत्यादि ऋचा से सूर्य के सम्मुख छोड़े तदन्तर सूर्यदेव को नमस्कार करके (घर)को जावै ॥५४॥ घर जाकर विधि से पुरुष सूक्त (सहस्रशीर्षा०) से विष्णु का (पूज)न करै पश्चात गृह्यसूत्रोक्त विधान से देवयज्ञादि चारो महायज्ञ करै॥५५॥ (ज)तने समय में गौ दुही जाय उतने समय तक गृहस्थी अतिथि की प्रतीक्षा (क)रै। जिस को प्रथम नहीं देखा हो ऐसे अज्ञात (बेजाने) आये अतिथि को (पू)जे ॥ ५६ ॥ स्वागत करना–आसन देना–देख कर उठना–जल देना–इस प्रकार अतिथि का आदर करने से गृहस्थी के आवहनीय गार्हपत्यादि अग्नि प्रसन्न होते हैं ॥ ५७ ॥ आसन देने से इन्द्रदेव प्रसन्न होते चरणों के धोने से दु(र्ल)भ प्रीति को पितर प्राप्त होते ॥ ५८ ॥ और श्रेष्ठ अन्न के देने से प्रजा(पति) प्र-

तस्मादतिथयेकार्यं पूजनंगृहमेधिना ॥ ५९ ॥
भक्त्याचशक्तितोनित्यं पूजयेद्विष्णुमन्वहम् ।
भिक्षांचभिक्षवेदद्यात्परिव्राड्ब्रह्मचारिणे ॥ ६० ॥
अकल्पितान्नादुद्धृत्य सव्यंजनसमन्विताम् ।
अकृतेवैश्वदेवेपि भिक्षौचगृहमागते ॥ ६१ ॥
उद्धृत्यवैश्वदेवार्थं भिक्षांदत्वाविसर्जयेत् ।
वैश्वदेवाकृतान्दोषांश्छक्तोभिक्षुर्व्यपोहितुम् ॥ ६२ ॥
नहिभिक्षुकृतान्दोषान्वैश्वदेवोव्यपोहति ।
तस्मात्प्राप्तायतये भिक्षांदद्यात्समाहितः ॥ ६३ ॥
विष्णोरेवयतिश्छाया इतिनिश्चित्यभावयेत् ।
सुवासिनींकुमारींच भोजयित्वानरानपि ॥ ६४ ॥
बालवृद्धांस्ततःशेषं स्वयंभुञ्जीतवागृही ।
प्राङ्मुखोदङ्मुखोवापि मौनीचमितभाषणः ॥६५॥

सब होते हैं इस से गृहस्थों को अतिथि का पूजन अवश्य करना चा
॥ ५९ ॥ भक्ति और अपनी शक्ति से नित्य विष्णु भगवान् का पूजन करे
नन्तर संन्यासी ब्रह्मचारी भिक्षु को भिक्षा देवे ॥ ६० ॥ वैश्वदेव के लिये
न निकालने से पहिले ही यदि कोई अभ्यागत संन्यासी घर पर आजाय
वैश्वदेव किये बिना भी वैश्वदेव के लिये पृथक् पात्र में अन्न निकाल
अतिथि को शाक भाजी सहित भिक्षा देके विसर्जन करे क्यों कि वैश्वदेव
करने से जो दोष लगता उस को अतिथि दूर करने को समर्थ है ॥ ६१ । ६२
परन्तु अतिथि को भिक्षा न देने से जो अपराध गृहस्थ को लगता है उसे
श्वदेव दूर नहीं कर सकता है । इस से प्राप्त हुये अतिथि को सावधानी
भिक्षा देवे ॥ ६३ ॥ विष्णु का रूप ही संन्यासी है निश्चय से ऐसी भावना
सुवासिन (सुहागिन) और कुमारी और अन्य आये पुरुष आदि को भो
कराकर ॥ ६४ ॥ तथा घर के बालक वृद्धों को जिमा कर फिर बाकी बचे
को पूर्व वा उत्तर को मुख कर मौन हो वा परिमित बोलता हुआ
... भोजन करे कि ॥ ६५ ॥

अन्नमादौनमस्कृत्य प्रहृष्टेनान्तरात्मना ।
एवंप्राणाहुतिंकुर्यान्मन्त्रेणचपृथक्पृथक् ॥६६॥
ततःस्वादुकरान्नंच भुञ्जीतसुसमाहितः ।
आचम्यदेवतामिष्टां संस्मरन्नुदरंस्पृशेत् ॥६७॥
इतिहासपुराणाभ्यां किंचित्कालंनयेद्बुधः ।
ततःसंध्यामुपासीत वहिर्गत्वाविधानतः ॥६८॥
कृतहोमस्तुभुञ्जीत रात्रौचातिथिभोजनम् ।
सायंप्रातर्द्विजातीनामशनंश्रुतिचोदितम् ॥६९॥
नांतराभोजनंकुर्यादग्निहोत्रसमोविधि ।
शिष्यानध्यापयेच्चापि अनध्यायेविसर्जयेत् ॥७०॥
स्मृत्युक्तानखिलांश्चापि पुराणोक्तानपिद्विजः ।
महानवम्यांद्वादश्यां भरण्यामपिपर्व्वसु ॥७१॥

प्रसन्न चित्त से प्रथम अन्न को नमस्कार करके प्राणाहुति (प्राणाय स्वाहा) इत्यादि मन्त्र पढ़ २ छोटे २ पांच ग्रास पृथक् २ मुख में दे ॥ ६६ ॥ फिर भले प्रकार सावधान हुआ अन्न का स्वाद ले २ कर भोजन करै पश्चात् आचमन करके इष्ट देवता का स्मरण करता हुआ उदर का स्पर्श करै ॥ ६७ ॥ इस के अनन्तर कुछेक समय इतिहास (भारतादि) और पुराणों के कहने सुनने में बितावे फिर ग्राम से बाहर जाकर विधि से संध्योपासन करै ॥ ६८ ॥ सन्ध्या का होम कर कोई अभ्यागत मिले तो उसे भोजन कराके रात्रि को स्वयं भोजन करै सायं प्रातःकाल भोजन करना द्विजातियों को वेद में कहा है ॥६९॥ बीच में (दिन में दुबारा) भोजन न करे क्यों कि अग्निहोत्र के पश्चात् प्राणाग्निहोत्र भोजन का विधान भी दो ही बार है । शिष्यों को वेदादि पढ़ावे और अनध्याय में पढ़ाने की छुट्टी कर देवे ॥ ७० ॥ जो सब अनध्याय धर्मशास्त्र और पुराणों में कहे हैं कि महानवमी (कार्त्तिक शुदी) द्वादशी, भरणी नक्षत्र, पर्व, (अमावस पौर्णमासी आदि) ॥ ७१ ॥

तथाक्षयतृतीयायां शिष्यान्नाध्यापयेद्द्विजः ।
माघमासेतुसप्तम्यां रथाख्यायांतुवर्जयेत् ॥७२॥
अध्यापनंसमभ्यस्यन्स्नानकालेचवर्जयेत् ।
नीयमानंशवंदृष्ट्वा महीस्थंवाद्विजोत्तमाः ॥७३॥
नपठेद्रुदितंश्रुत्वा संध्यायांतुद्विजोत्तमाः ।
दानानिचप्रदेयानि गृहस्थेनद्विजोत्तमाः ॥७४॥
हिरण्यदानंगोदानं पृथिवीदानमेवच ।
एवंधर्मोगृहस्थस्य सारभूतउदाहृतः ॥ ७५ ॥
यएवंश्रद्धयाकुर्यात्सयातिब्रह्मणःपदम् ।
ज्ञानोत्कर्षश्चतस्यस्यान्नारसिंहप्रसादतः ॥ ७६ ॥
तस्मान्मुक्तिमवाप्नोति ब्राह्मणोद्विजसत्तमाः ।
एवंहिविप्राःकथितोमयावः समासतःशाश्वतधर्मराशिः॥७७॥
गृहीगृहस्थस्यसतोहिधर्म्मं कुर्वन्प्रयत्नाद्धरिमेतियुक्तम् ॥७८॥

इति हारीते धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अक्षय तृतीया (वैशाख शुदी ३) इन में भी ब्राह्मण शिष्यों को न पढ़ावे
माघ महीने की रथ सप्तमी को भी वर्जदे ॥ ७२ ॥ उबटना करते
स्नान के समय न पढ़ावे हे ऋषियो ! लेजाते हुए वा पृथ्वी पर पड़े हुए
को देख कर ॥ ७३ ॥ अथवा रोने को सुन कर और संध्या के समय
वेदाङ्गों को न पढ़े और हे ब्राह्मणो निम्न लिखित दान गृहस्थ को देने
हिये कि ॥७४॥ सुवर्ण गौ, पृथ्वी ये उत्तम दान हैं।यह गृहस्थ का सारभूत
कहाहै ॥ ७५ ॥ जो श्रद्धा से इस धर्मको करता है वह ब्रह्मपद को
होताहै और नरसिंह भगवान् की कृपा से उसको ज्ञानकी अधिकता हो
॥७६॥ हे ऋषि ब्राह्मणो ! इस ज्ञानसे ब्राह्मण मुक्तिको प्राप्त होता है हे ब्रा
इस प्रकार हमने सनातन धर्मका समूह तुमसे कहा ॥७७॥ गृहस्थी गृह
के धर्म को यत्न से करता हुआ विष्णु को अवश्य प्राप्त होता है ॥७८॥
इति हारीते धर्मशास्त्रे ४ अध्याय भाषा समाप्त ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि वानप्रस्थस्यसत्तमाः ।
धर्माश्रमंमहाभागाः कथ्यमानंनिबोधत ॥ १ ॥
गृहस्थःपुत्रपौत्रादीन्दृष्ट्वापलितमात्मनः ।
भार्यांपुत्रपुनिःक्षिप्य सहवाप्रविशेद्वनम् ॥ २ ॥
नखरोमाणिचतथा सितगात्रत्वगादिच ।
धारयन्जुहुयादग्निं वनस्थोविधिमाश्रितः ॥ ३ ॥
धान्यैश्चवनसंभूतैर्नीवाराद्यैरनिन्दितैः ।
शाकमूलफलैर्वापि कुर्यान्नित्यंप्रयत्नतः ॥४॥
त्रिकालस्नानयुक्तस्तु कुर्य्यात्तीव्रंतपस्तदा ।
पक्षांतेवासमश्नीयान्मासान्तेवास्वपक्कभुक् ॥ ५ ॥
तथाचतुर्थकालेतु भुञ्जीयादष्टमेऽथवा ।
षष्ठेचकालेऽप्यथवा वायुभक्षोऽथवाभवेत् ॥६॥
घर्मेपंचाग्निमध्यस्थस्तथावर्षेनिराश्रयः ।
हेमन्तेचजलेस्थित्वा नयेत्कालंतपश्चरन् ॥७॥

इससे आगे वानप्रस्थ के धर्म कहते हैं-हे श्रेष्ठो हे महाभाग्यशालीलोगो
रे यह वानप्रस्थ आश्रम के धर्म को सुन सुनो ॥ १ ॥ गृहस्थी पुरुष पुत्र
त्र आदिको और अपनी वृद्ध अवस्था को देखकर स्त्री को पुत्रके
धीन करके वा संग लेकर वन में चला जावे ॥ २ ॥ नख
। और सफेद गात्र वाले वृक्षकी त्वचा का वस्त्र धारण करता हुआ वन
ठहर कर शास्त्रोक्त विधि से अग्निहोत्र करे ॥३॥ वन में पैदा हुए शुद्ध
वारादि फलसे वा शाक मूल फलोंसे यत्न के साथ अपना निर्वाह और मा-
त्यः होम करे ॥४॥ उस समय वनमें सायंप्रातः मध्याह्न में त्रिकाल स्नान
ता हुआ तीव्र तप करे । पक्षके अंतमें वा महिने के अंतमें एकदिन स्वपक्ष-
का भोजन करे ॥५॥ चौथे काल (प्रहर) में अथवा आठवें प्रहर में अथवा
प्रहर में प्रतिदिन एकवार भोजन करे अथवा अन्न जल छोड़के केवल
यु का ही भक्षण करे ॥ ६ ॥ घाम ग्रीष्म ऋतु में पंचाग्नि के मध्य में वर्षा
ऋतु में निराश्रय (खुलीभूमि) में और शीतकाल में जलके मध्य में ठहर कर
तप करता हुआ कालको बितावे ॥७॥

एवंचकुर्वतायेन कृतबुद्धिर्यथाक्रमम्
अग्निंस्वात्मनिकृत्वातु प्रव्रजेदुत्तरांदिशम्॥८॥
आदेहपातंवनगो मौनमास्थायतापसः॥
स्मरन्नतीन्द्रियंब्रह्म ब्रह्मलोकेमहीयते ॥९॥
…हियःसेवतिवन्यवासःसमाधियुक्तःप्रयतांतरात्मा।
…मुक्तपापोविमलःप्रशांतः सयातिदिव्यंपुरुषंपुराणम्

इति हारीते धर्मशास्त्रे पंचमोऽध्यायः॥५॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि चतुर्थाश्रममुत्तमम् ।
श्रद्धयातमनुष्ठाय तष्ठन्मुच्येतबन्धनात्॥१॥
एवंवनाश्रमेतिष्ठन्यातयंश्चैवकिल्बिषम् ॥
चतुर्थमाश्रमंगच्छेत्संन्यासविधिनाद्विजः ॥२॥
दत्वापितृभ्योदेवेभ्यो मानुषेभ्यश्चयत्नतः ।
दत्वाश्राद्धंपितृभ्यश्च मानुषेभ्यस्तथात्मनः ॥३

…र २ से इस प्रकार करते हुए जिसने बुद्धि को स्थिर किया है …ग्नि को अपने आत्मा में मन्त्रपूर्वक समारोप करके संन्यासी हो… …न धारण किये देह के पतनपर्यंत वनमें जिसको कोई इन्द्रियों से …न सकता ऐसे ब्रह्म का स्मरण करता हुआ उत्तर दिशा को चला… …कार शरीर त्याग देने से ब्रह्मलोक में आदर पाता है ॥८॥ जो या… …वश में कर समाधि लगाके तप करता है—पापों से रहित, … …ांति रूप यह वानप्रस्थ सनातन दिव्य पुरुष को प्राप्त होता है ॥

इति हारीते धर्मशास्त्रे ५ अध्याय भाषाभाषा ॥

अब आगे उत्तम चौथे आश्रम (संन्यास) को कहते हैं उस संन्य… …ो श्रद्धा से सेवन करके टिकता हुआ पुरुष बन्धन से छूटजाता है। …कार वानप्रस्थ आश्रम में टहरता और पापको दूर करता हुआ… …्यास की विधि से चौथे आश्रम में जाय संन्यासी हो जावे ॥२॥ … …मनुष्य इन के निमित्त दान दे के और देव पितर मनुष्य पित… …ो लिये जीवित ही श्राद्ध करके ॥ ३ ॥

इष्टिंवैश्वानरींकृत्वा प्राङ्मुखोदङ्मुखोऽपिवा ।
अग्निंस्वात्मनिसंरोप्य मन्त्रवित्प्रव्रजेत्पुनः॥४॥
ततःप्रभृतिपुत्रादौ स्नेहालापादिवर्जयेत् ।
बन्धूनामभयंदद्यात्सर्वभूताभयंतथा ॥ ५ ॥
त्रिदंडंवैणवंसम्यक् संततंसमपर्वकम् ॥
वेष्टितंकृष्णगोवालरज्जुमच्चतुरंगुलम् ॥ ६ ॥
शौचार्थमासनार्थंच मुनिभिःसमुदाहृतम् ।
कौपीनाच्छादनंवासः कंथांशीतनिवारिणीम् ॥७॥
पादुकेचापिगृह्णीयात्कुर्यान्नान्यस्यसंग्रहम् ।
एतानितस्यलिंगानि यतेःप्रोक्तानिसर्वदा ॥ ७ ॥
संगृह्यकृतसंन्यासो गत्वातीर्थमनुत्तमम् ।
स्नात्वाचम्यचविधिवद्वस्त्रपूतेनवारिणा ॥ ८ ॥
तर्पयित्वातुदेवांश्च मंत्रवत्भास्करंनमेत् ।

विधि के अनुसार वैश्वानरी इष्टि करके पूर्व वा उत्तर को मुख कर मन्त्र पूर्वक गार्हपत्यादि अग्नियों को अपने शरीर में आरोप कर के [अग्नियों के समारोप की रीति यह है कि अग्निकुण्ड पेट करके (अयंते योनिर्ऋत्वियो०) मन्त्र पढ़ के कुण्डस्थ अग्नि अपने में आये मान लेवे]संन्यासी होजावे ॥ ४ ॥ तब से लेकर पुत्रादि में प्रीति और आलापादि व्यवहार को त्याग देवे और अपने भाई बंधों और सब प्राणियों को अभय दान देवे ॥ ५ ॥ ऐसा दांस का त्रिदंड ग्रहण करे जिस में चार अंगुल कपड़ा और काली गौ के बालों की रस्सी लगी हो जिस की ग्रंथि हों ॥६॥ शुद्धि के अर्थ और बिछाने के लिये मुनियों के कहे हुए कौपीन शीत को दूर करने वाली कंथा (गुदड़ी) और पादुका (खड़ाऊं) इन को ग्रहण करे इन से अधिक का संग्रह न करे। ये संन्यासी के सदैव काल चिन्ह कहे हैं ॥ ७ ॥ संन्यासी हुआ इन कौपीनादि को ग्रहण कर उत्तम तीर्थ में जाके वस्त्र से छाने जल से विधिपूर्वक स्नान और आचमन करके ॥ ८ ॥ मन्त्रों से देवताओं का तर्पण करके परमात्मरूप सूर्यदेव को नम-

आत्मानंप्राङ्मुखोमौनी प्राणायामत्रयंचरेत् ॥ ९

गायत्रींचयथाशक्ति जप्त्वाध्यायेत्परंपदम् ।
स्थित्यर्थमात्मनोनित्यं भिक्षाटनमथाचरेत् ॥ १०

सायंकालेतुविप्राणां गृहाण्यभ्यवपद्यतु ।
सम्यक्याचेच्चकवलं दक्षिणेनकरेणवै ॥ ११ ॥

पात्रंवामकरेस्थाप्य दक्षिणेनतुशोपयेत् ।
यावतान्नेनतृप्तिःस्या–त्तावद्भैक्षंसमाचरेत् ॥ १२ ॥

ततोनिवृत्यतत्पात्रं संस्थाप्यान्यत्रसंयमी ।
चतुर्भिरंगुलैश्छाद्य ग्रासमात्रंसमाहितः ॥ १३ ॥

सर्वव्यंजनसंयुक्तं पृथक्पात्रेनियोजयेत् ।
सूर्यादिभूतदेवेभ्यो दत्त्वासंप्रोक्ष्यवारिणा ॥ १४ ॥

भुञ्जीतपात्रपुटके पात्रेवावाग्यतोयतिः ।
वटकाश्वत्थपर्णेषु कुंभीतैन्दुकपात्रके ॥ १५ ॥

कोविदारकदंबेषु नभुञ्जीयात्कदाचन ।

: करे । पूर्वाभिमुख और मौन होकर तीन प्राणायाम करे ॥ ९ ॥
: गायत्री जप कर परंपद (ब्रह्म) का ध्यान करे देह की स्थिति के
भिक्षा मांगे ॥ १० ॥ सायंकाल के समय ब्राह्मणों के घरों में जाकर
से भले प्रकारकवल(ग्रास) मांगे ॥११॥बायें हाथमें पात्र को रख कर द
हाथ से पोंछे फिर उसमें मांगी हुई भिक्षा रोटी आदि धरेजितने अन्न
हो उतनी ही भिक्षा नित्य मांगे कौवे कुत्ते आदिकेलियेअधिक न मांगे
संयमी पुरुष ग्राम से लौट कर उस पात्र को दूसरी जगह रखकर
धानी से सब व्यंजनों सहित एक ग्रास अन्न लेके सूर्यादि भूत दे
हुये किसी दोना पत्ता में पृथक् धर के चार अंगुलों से ढांप कर
समर्पण करे फिर शेष अन्न को जल से छिड़क के ॥ १३ ॥ १४ ॥
ने में अथवा पात्र में मौन होकर संन्यासी भोजन करे बड़,
त, तेंदु ॥१५॥ कचनार कदंब–इनके पत्तों में वा इन से बने दोना पर

मलाक्ताःसर्वउच्यंते यतयःकांस्यभोजिनः ॥ १६ ॥
कांस्यभांडेपुयत्पाको गृहस्थस्यतथैवच ।
कांस्येभोजयतःसर्व्वं किल्विषंप्राप्नुयात्तयोः ॥ १७ ॥
भुक्त्वापात्रेयतिर्नित्यं क्षालयेन्मंत्रपूर्वकम् ।
नदुष्यतेचतत्पात्रं यज्ञेपुचमसाइव ॥ १८ ॥
अथाचम्यनिदिध्यास्य उपतिष्ठेतभास्करम् ।
जपध्यानेतिहासैश्च दिनशेषंनयेद्बुधः ॥ १९ ॥
कृतसंध्यस्ततोरात्रीं नयेद्देवगृहादिपु ।
हृत्पुण्डरीकनिलये ध्यायेदात्मानमव्ययम् ॥ २० ॥
यदिधर्मरतिःशांतः सर्वभूतसमोवशी ।
प्राप्नोतिपरमंस्थानं यत्प्राप्यननिवर्तते ॥ २१ ॥
त्रिदंडभृद्योहिपृथक्समाचरेच्छनैःशनैर्यस्तुवहिर्मुखाक्षः।

कभी भी भोजन न करे–और कांसे के पात्र में भोजन करने वाले संन्यासी मलिन कहे हैं ॥१६॥ कांसे के पात्रमें पकाने वाले और जिमाने वाले गृहस्थी को जो पाप है उन दोनों के पाप को कांसे के पात्रमें भोजन करने वाला संन्यासी प्राप्त होता है ॥१७॥ संन्यासी जिस पात्र में भोजन करे उस को मंत्रों से धोवा करे। यज्ञों में सोम पीने के चमसों के तुल्य संन्यासी का यह पात्र दूषित (अशुद्ध) नहीं होता ॥ १८ ॥ इस के अनन्तर आचमन और ध्यान कर के सूर्य देव की स्तुति करे और शेष दिन को जप ध्यान तथा उत्तम इतिहासों के कहने सुनने में बितावे ॥१९॥ फिर संध्या करके इसी प्रकार घर आदि में रात्रि को बितावे–अपने कमल रूपी हृदय में अविनाशी आत्मा का ध्यान करे ॥ २० ॥ जो संन्यासी धर्म में तत्पर, शांत, सब भूतों में सम, वशी (इन्द्रिय जिस के वश में हों ऐसा) हो तो वह उस उत्तम स्थान को प्राप्त होता है जहां जा-कर फिर नहीं लौटते ॥ २१ ॥ जो त्रिदण्डी हो वह सब से पृथक् विचरे और धीरे २ जिस के इन्द्रिय संसार के विषयों से विरक्त हुए हों वह प्रकार से इस

संमुच्य संसारसमस्तबंधनात्सयातिविष्णोरमृतात्मनः पद ॥

इति हारीतेधर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

वर्णानामाश्रमाणांच कथितंधर्मलक्षणम् ।
येनस्वर्गापवर्गांच प्राप्नुवंतिद्विजातयः ॥ १ ॥
योगशास्त्रंप्रवक्षामि संक्षेपात्सारमुत्तमम् ।
यस्य चश्रवणाद्यान्ति मोक्षंचैवमुमुक्षवः ॥ २ ॥
योगाभ्यासबलेनैव नश्येयुःपातकानितु ।
तस्माद्योगपरोभूत्वा ध्यायेन्नित्यक्रियापरः ॥ ३ ॥
प्राणायामेनवचनंप्रत्याहारेणचेन्द्रियम् ।
धारणाभिर्वशेकृत्वा पूर्वंदुर्धर्षणंमनः ॥ ४ ॥
एकाकारमनानंदबुधैरूपमलाचयम् ।
सक्ष्मात्सूक्ष्मतरंध्यायेज्जगदाधारमुच्यते ॥ ५ ॥
आत्मनोबहिरन्तस्थं शुद्धचामीकरप्रभम् ।
रहस्येकान्तमासीनो ध्यायेदामरणान्तिकम् ॥६॥

बंधनों को तोड़ कर अमृत रूपी विष्णु के पद को प्राप्त होता है ॥ २२ ॥
इति हारीते धर्मशास्त्रे ६ अध्याय भाषा समाप्त ॥
वर्ण और आश्रम के धर्मों का स्वरूप कहा द्विज लोग जिस धर्म से स्वर्ग
मोक्ष को पाते हैं ॥ १ ॥ अब संक्षेप से योग शास्त्र का उत्तम सार कह
कि जिस के सुनने से मोक्ष चाहने वाले मुक्त होते हैं ॥ २ ॥ योगाभ्या
बल से ही पाप नष्ट होते हैं इस से योग में तत्पर होकर उत्तम आच
नित्य ध्यान करे ॥ ३ ॥ प्रथम प्राणायाम से वाणी को प्रत्याहार (वि
इन्द्रियों को हटाने) द्वारा उपस्थेन्द्रिय को धारणा (किसी स्थान
मन को बांधने) से वश करने अयोग्य मन को वश में करके ॥ ४
चित्त होकर देवताओं को भी अगम्य (प्राप्ति के अयोग्य) और सू
गत् का आश्रय भगवान् तिन का ध्यान करे ॥ ५ ॥ जो ब्रह्म अपने
बाहर और भीतर स्थित है और शुद्ध सोने के समान जिस की कां
... एकान्त में एकाग्र बैठ कर ध्यान करे ॥ ६ ॥

यत्सर्वंप्राणिहृदयं सर्वेषांचहृदिस्थितम् ।
यच्चसर्वजनैर्ज्ञेयं सोऽहमस्मीतिचिंतयेत् ॥ ७ ॥
आत्मलाभसुखंयाव-त्तपोध्यानमुदीरितम् ।
श्रुतिस्मृत्यादिकंधर्मं तद्विरुद्धंनचाचरेत् ॥ ८ ॥
यथारथोऽश्वहीनस्तु यथाश्वोरथिहीनकः ।
एवंतपश्चविद्याच संयुतेभेषजंभवेत् ॥ ९ ॥
यथान्नंमधुसंयुक्तं मधुवान्नेनसंयुतम् ।
उभाभ्यामपिपक्षाभ्यां यथाखेपक्षिणांगतिः ॥ १० ॥
तथैवज्ञानकर्मभ्यां प्राप्यतेब्रह्मशाश्वतम् ।
विद्यातपोभ्यांसंपन्नो ब्राह्मणोयोगतत्परः ॥ ११ ॥
देहद्वयंविहायाशु मुक्तोभवतिबंधनात् ।
नतथाक्षीणदेहस्य विनाशोविद्यते क्वचित् ॥ १२ ॥
मयातुकथितःसर्वो वर्णाश्रमविभागशः ।

जो सब प्राणियों का हृदय है और जो सब के हृदय में स्थित है औरजो
जनों के जानने योग्य है वही मैं हूं ऐसा चिंतन (स्मरण) करै ॥ ७ ॥
तक आत्मप्राप्ति का सुख न हो तब तक ध्यान करे यह शास्त्रकारों ने
ा है। आत्मलाभ का अविरोधी जो श्रुति और स्मृति का धर्म उस को
िकिन्तु तद्विरुद्धादि का धर्म न करे ॥ ८॥ जैसे घोड़े के बिना रथ और सार-
के बिना घोड़ा नहीं चल सकते और दोनों परस्पर सहायक हैं—इसी
ार तप तथा कर्मकाण्ड विद्या (ज्ञान) दोनों मिलकर संसार रोग की
ेषध हैं ॥ ९॥ जैसे मीठे से मिला अन्न तथा मीठा और जैसे दोनों ही पंखों
आकाश में पक्षियों की गति (उड़ना) होती है ॥ १० ॥ तैसे ही ज्ञान
ौर तप से युक्त और योग में तत्पर ब्राह्मण ॥ ११ ॥ दोनों (स्थूल—
ूक्ष्म) देहों को शीघ्र छोड़कर बन्धनों से छूट जाता है । इस प्रकार
जस का देह नष्ट होगया हो उस का कभी भी नाश (दुर्गति) नहीं
ोता ॥ १२ ॥ हे ऋषि मुनियो ! हमने वर्ण और आश्रम के भेद और संक्षेप

संक्षेपेण द्विजश्रेष्ठा धर्मस्तेषां सनातनः ॥ १३ ॥
श्रुत्वैवं मुनयो धर्मं स्वर्गमोक्षफलप्रदम् ।
प्रणम्य तमृषिं जग्मुर्मुदिताः स्वंस्वमाश्रमम् ॥ १४ ॥
धर्मशास्त्रमिदं सर्वं हारीतमुखनिःसृतम् ।
अधीत्य कुरुते धर्मं स याति परमां गतिम् ॥ १५ ॥
ब्राह्मणस्य तु यत्कर्म कथितं बाहुजस्य च ।
ऊरुजस्यापि यत्कर्म कथितं पादजस्य च ॥ १६ ॥
अन्यथा वर्तमानस्तु सद्यः पतति जातितः ।
यो यस्याभिहितो धर्मः स तु तस्य तथैव च ॥ १७ ॥
तस्मात्स्वधर्मं कुर्वीत द्विजो नित्यमनापदि ।
राजेन्द्र वर्णाश्चत्वारश्चत्वारश्चापि चाश्रमाः ॥
स्वधर्मं येऽनुतिष्ठन्ति ते यान्ति परमां गतिम् ।
स्वधर्मेण यथा नृणां नारसिंहः प्रसीदति ॥ १९ ॥

से उन का सनातन सब धर्म तुम से कहा ॥ १३ ॥ स्वर्ग और मोक्ष
धर्म को इस प्रकार सुन कर उन हारीत मुनि को नमस्कार करके प्रसन्न
सब मुनि अपने २ आश्रम को चलेगये ॥ १४ ॥ हारीत मुनि के मुख से नि
इस सब धर्मशास्त्र को पढ़कर जो धर्म करता है वह परम गति (मोक्ष
प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ ब्राह्मण–क्षत्रिय वैश्य और शूद्र को जो कर्म
है ॥ १६ ॥ उस के विरुद्ध जो बर्ताव करता है वह शीघ्र जाति से पति
है । जोजिस वर्ण का धर्म कहा है वह वैसा ही उस वर्ण का धर्म है
लौट पौट कुछ भी की जाय तो वह उस का धर्म न होगा ॥
आपत्काल को छोड़ कर प्रति दिन द्विज लोग अपने २ धर्म
राजा है मुख्य जिन में ऐसे–चार वर्ण और चार ही आश्रम हैं ॥ १८ ॥
धर्म को जो करते हैं वे परम गति को प्राप्त होते हैं जैसे अपने धर्म
पर नरसिंह भगवान् प्रसन्न होते हैं ॥ १९ ॥

नतुष्यतितयान्येन कर्मणामधुसूदनः

अतःकुर्वन्निजंकर्म यथाकालमतन्द्रितः ॥२०॥

सहस्रानीकदेवेशं नारसिंहंचसालयम् ।

त्पन्नवैराग्यबलेनयोगी ध्यायेत्परंब्रह्मसदाक्रियावान् ।

पंसुखंरूपमनंतमाद्यं विहायदेहंपदमेतिविष्णोः ॥२२॥

इतिहारीते धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अन्य वर्णों के धर्मसे प्रसन्न नहीं होते इससे नित्य आलस्य को छोड़ कर र पर अपना धर्म करता हुआ मनुष्य ॥२०॥ सहस्रों देवोंके स्वामी भगवान् प्राप्त होता है ॥२१॥ उत्पन्न हुए वैराग्य के बल से जो सदाचारीधर्म कर्म ठ योगी परब्रह्म का ध्यान करता है वह देह को त्याग कर सत्य सुखरूप त (अविनाशी) आद्य जो विष्णु का पद उस को प्राप्त होता है ॥ २२ ॥

इति हारीते धर्म-शास्त्रे ७ अध्याय भाषा समाप्त ।

समाप्तं चेद धर्मशास्त्रम् ॥

अथऔशनसस्मृतिः ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि जातिवृत्तिविधानकम् ।
अनुलोमविधानंच प्रतिलोमविधिंतथा ॥१॥
सांतरालकसंयुक्तं सर्वंसंक्षिप्यचोच्यते ।
नृपाद्ब्राह्मणकन्यायां विवाहेषुसमन्वयात् ॥२॥
जातःसूतोऽत्रनिर्दिष्टः प्रतिलोमविधिर्द्विजः ।
वेदानर्हस्तथाचैषां धर्माणामनुबोधकः ॥३॥
सूताद्विप्रप्रसूतायां सुतोवेणुकउच्यते ।
नृपायामेवतस्यैव जातोयश्चर्मकारकः ॥४॥
ब्राह्मण्यांक्षत्रियाच्चौर्याद्रथकारःप्रजायते ।
वृत्तंचशूद्रवत्तस्य द्विजत्वंप्रतिषिध्यते ॥५॥
यानानांयेचवोढारस्तेषांचपरिचारकः ।

अब जाति तथा २ जातियों की और जीविका विधान कहेंगे तथा अनुलो-
। (नीच वर्ण की कन्या में ऊंचे वर्ण से उत्पन्न) की और प्रतिलोम (ऊं-
। वर्ण की कन्या में नीच वर्ण से उत्पन्न हुए) की विधि कहते हैं ॥१॥ अन्त-
रालक (जो इन के बीच में पैदा हुए हैं पुलिंद आदि) उन सहित सब
क्षेप से कहा जाता है। ब्राह्मण की कन्या में विवाह होने पर जो सन्तान
त्रिय से ॥ २ ॥ उत्पन्न होता है वह सूत कहा है यह प्रतिलोम विधि का
हुआ है। यह सूत वेदका अधिकारी नहीं वह केवल वेद के धर्मों को इति-
हासादि द्वारा उपदेष्टा (बतलानेवाला) होता है ॥३॥ सूत से ब्राह्मण
की कन्या में जो हो उसे वेणुक (बरड़) कहते हैं क्षत्रिय कन्या में जो सूत
पैदा हो वह चमार कहाता है ॥४॥ ब्राह्मण की कन्या में जो
त्रिय से गुप्त व्यभिचार द्वारा पैदा हो वह रथकार (बढ़ई) कहाता
इसका धर्म वही है जो शूद्र का और वह द्विज नहीं होता ॥५॥
जो यान (सवारी) के चलाने वाले हैं अथवा जो गाड़ी चलाने वालों के

शूद्रवृत्त्यातुजीवन्ति नक्षात्रंधर्ममाचरेत् ॥ ६ ॥
ब्राह्मण्यांवैश्यसंसर्गाज्जातोमागधउच्यते ।
वंदित्वंब्राह्मणानां च क्षत्रियाणांविशेषतः ॥ ७ ॥
प्रशंसावृत्तिकोजीवेद्वैश्यप्रेष्यकरस्तथा ।
ब्राह्मण्यांशूद्रसंसर्गाज्जातश्चांडालउच्यते ॥ ८ ॥
सीसमाभरणंतस्य कार्ष्णायसमथापिवा ।
वध्रींकण्ठेसमाबध्य मल्लरींकक्षतोपिवा ॥ ९ ॥
मलापकर्षणंग्रामे पूर्वाह्णेपरिशुद्धिकम् ।
नपराह्णे प्रविष्टोपि बहिर्ग्रामाच्चनैर्ऋते ॥ १०
पिण्डीभूताभवंत्यत्र नोचेद्वध्याविशेषतः।
चांडालाद्वैश्यकन्यायां जातःश्वपचउच्यते ॥ १
श्वमांसभक्षणंतेषां श्वानएवचतद्बलम् ।
नृपायांवैश्यसंसर्गादायोगवइतिस्मृतः ॥ ११ ।
तंतुवायाभवंत्येव वसुकांस्योपजीविनः ।
शौलिकाःकेचिदत्रैव जीवनंवस्त्रनिर्मिते ॥ १२ ॥

वह होकर शूद्र की वृत्ति से जीते हैं वेभी क्षत्रिय धर्म का आचारण ॥ ६ ॥ ब्राह्मणी में जो वैश्य के संसर्ग (मेल) से उत्पन्न हो उसे मागध (क कहते हैं वे ब्राह्मणों का तथा विशेष कर क्षत्रियों का बंदी (स्तुति वाला) होताहै ॥७॥ प्रशंसा वृत्ति (अन्यों की स्तुति प्रशंसा कर धन प्राप्त उसकी जीविकाहै अथवा वैश्य की सेवा करे ब्राह्मणी में जो शूद्र के संसर्ग (म से उत्पन्न हो उसे चांडाल कहते हैं ॥८॥ इस के सीसे अथवा लोहे के आभ (गहने) होतेहैं और कंठ में वध्री (चमड़े का पट्टा) और कोख में झालरी कर ॥९॥ दोपहर से पूर्व गांवमें शुद्धता के अर्थ मल को उठावे और मध्या पश्चात् ग्राममें न घुसे किन्तु गांव से बाहर नैर्ऋतदिशा में रहा करे ॥१०॥ वे सब एक ही जगह रहैं और जो एकत्र न रहैं तो अवश्य वध के योग्य चांडाल से जो वैश्य की कन्या में पुत्र उत्पन्न हो उसे श्वपच कहते हैं ॥ कुत्ते का मांस ही उनका भोजन है और कुत्ता ही उन का बल है क्ष की कन्या में जो वैश्य से पुत्र उत्पन्न हो वह आयोगव (कोरी) कहाता है

आयोगवेनविप्रायां जातास्ताम्रोपजीविनः ।
तस्यैवनृपकन्यायां जातःसूनिकउच्यते ॥ १४ ॥
सूनिकस्यनृपायांतु जाताउद्बंधकाःस्मृताः ।
निर्णेजयेयुर्वस्त्राणि अस्पृश्याश्चभवन्त्यतः ॥ १५ ॥
नृपायांवैश्यतश्चौर्यात् पुलिंदःपरिकीर्तितः ।
पशुवृत्तिर्भवेत्तस्य हन्युस्तान्दुष्टसत्त्वकान् ॥ १६ ॥
नृपायांशूद्रसंसर्गाज्जातः पुल्कसउच्यते ।
सुरावृत्तिंसमारुह्य मधुविक्रयकर्म्मणा ॥ १७ ॥
कृतकानांसुराणांच विक्रेतायाचको भवेत् ।
पुल्कसाद्वैश्यकन्यायां जातोरजकउच्यते ॥ १८ ॥
नृपायांशूद्रतश्चौर्य्याज्जातोरंजक उच्यते ।

वस्त्र बिनने और कांसे के व्यापार से जीविका करें तथा इन में जो वस्त्र रचे सूत रेशम आदि के कसीदे से जीते हैं वे शौलिक कहाते हैं ॥ १३ ॥ [आ]योगव (कोरी) से जो ब्राह्मण की कन्या में उत्पन्न होते हैं वे ताम्रो-[पज]ीवी (तांबे आदि से जीविका करने वाले) होते हैं और आयोगव [(]कोरी) से क्षत्रिय कन्या में जो उत्पन्न हो उसे सूनिक (सोनी) कहते [हैं] ॥ १४ ॥ सूनिक से जो क्षत्रिय की कन्या में उत्पन्न हों उन्हें उद्बंधक कहते [हैं] ये वस्त्रों को धोवें और स्पर्श करने के योग्य नहीं होते ॥ १५ ॥ क्षत्रिय [क]ी कन्या में जो छिप कर व्यभिचार द्वारा वैश्य से पैदा हो उस को पु-[लि]ंद कहते हैं और वे दुष्ट जीवों को मार पशुवृत्ति (मांसवृत्ति) होते हैं ॥ १६ ॥ [क्ष]त्रिय की कन्या में जो शूद्र से उत्पन्न हो उसे पुल्कश (कलाल) कहते हैं यह [सु]रा (मदिरा) की जीविका के निमित्त मधुर मीठा को बेचता है ॥ १७ ॥ [औ]र बनी हुई मदिरा को बेचता और पकाता भी है और पुल्कश से वैश्य [क]ी कन्या में जो पैदा हो उसे रजक कहते हैं ॥ १८ ॥ क्षत्रिय की कन्या में [शू]द्र से चोरी (व्यभिचार) से जो पैदा हो उसे रंजक (रंगरेज) कहते हैं [त]था रंजक से जो वैश्य की कन्या में पैदा हो उसे नर्तक (नट) या गायक

वैश्यायांरंजकाज्जातो नर्त्तकोगायकोभवेत् ॥ १९

वैश्यायांशूद्रसंसर्गाज्जातोवैदेहकःस्मृतः ।

अजानांपालनंकुर्य्यान्महिषीणांगवामपि ॥ २० ॥

दधिक्षीराज्यतक्राणां विक्रयाज्जीवनंभवेत् ।

वैदेहिकात्तुविप्रायां जातश्चर्मोपजीविनः ॥ २१ ॥

नृपायामेवतस्यैव सूचिकःपाचिकःस्मृतः

वैश्यायांशूद्रतश्चौर्य्याजातश्चक्रीचउच्यते ॥ २२ ॥

तैलपिष्टकजीवीतु लवणंभावयन्पुनः ।

विधिनाब्राह्मणःप्राप्य नृपायांतुसमन्त्रकम् ॥ २३ ॥

जातःसुवर्णइत्युक्तः सानुलोमद्विजःस्मृतः ।

अथवर्णक्रियांकुर्वन्नित्यनैमित्तिकींक्रियाम् ॥ २४ ॥

अश्वंरथंहस्तिनंच वाहयेद्वानृपाज्ञया ।

सैनापत्यंचभैषज्यं कुर्याज्जीवेत्तुवृत्तिषु ॥ २५ ॥

नृपायांविप्रतश्चौर्य्यात्संजातोयोभिषक्स्मृतः ।

कत्थक) कहते हैं ॥१९॥ वैश्य की कन्या में शूद्र के संसर्ग से जो पैदा हो वैदेहिक (गड़रिया) कहते हैं यह बकरी-भैंस-गौ इन को पाले ॥२०॥ दही दूध-घी-मठा इनका बेचना उस की जीविका है-वैदेहिक से ब्राह्मणी को पुत्र उत्पन्न होंवे चर्मोपजीवी होते हैं अर्थात चाम बेच कर जीते हैं ॥ वैदेहिक से क्षत्रिय की कन्यामें जो पैदा हो उसे सूचिक (दरजी) ... (रसोइया)कहते हैं शूद्र से जो वैश्य की कन्यामें चोरी से पैदा हो उसे चक्री(तेली) कहते हैं ॥२२॥ यह तिल या खल अथवा लवण से जीता है-विधि से ब्राह्मण विवाही जो क्षत्रिय की कन्या उस से जो उत्पन्न होता है ॥ २३ ॥ यह अनु... सुवर्ण द्विज कहाता है यह नित्य (संध्यादि) नैमित्तिक (श्राद्ध कर्मादि) क्रि... को करता हुआ ॥ २४ ॥ राजा की आज्ञा से घोड़ा-रथ हाथी इन को ... जाता है और सेनापति बनकर अथवा औषधों से अपना निर्वाह करै ॥ क्षत्रिय की कन्या में चोरी से जो ब्राह्मण से पुत्र उत्पन्न होता है उसे भि...

अभिषिक्तनृपस्याज्ञां परिपाल्यैत्तुवैद्यकम् ॥२६॥
आयुर्वेदमथाष्टांगं तन्त्रोक्तं धर्ममाचरेत् ।
ज्योतिषंगणितंवापि कायिकींवृत्तिमाचरेत् ॥ २७ ॥
नृपायांविधिनाविप्राज्जातोनृपइतिस्मृतः ।
नृपायांनृपसंसर्गात्प्रमादाद्गूढजातकः ॥ २८ ॥
सोऽपिक्षत्रियएवस्या-दभिषेकेचवर्जितः ।
अभिषेकंविनाप्राप्य गोजइत्यभिधायकः ॥ २९ ॥
सर्वंतुराजवृत्तस्य शस्यतेपदवंदनम् ।
पुनर्भूकरणेराज्ञानृपकालीनएवच ॥ ३० ॥
वैश्यायांविधिनाविप्राज्जातोह्यंवष्ठउच्यते ।
कृष्यजीवीभवेत्तस्य तथैवाग्नेयवृत्तिकः ॥ ३१ ॥
ध्वजिनीजीविकावापि अंवष्ठाःशस्त्रजीविनः ।
वैश्यायांविप्रतश्चौर्यात्कुंभकारसउच्यते ॥ ३२ ॥
कुलालवृत्याजीवेत्तु नापितावाभवन्त्यतः ।

रहे हैं वह राजा की आज्ञा से वैद्यक करता है ॥ २६ ॥ वह अष्टांग आयुर्वेद तथा तंत्र के कहे धर्मों को करे ज्योतिष या गणित विद्या से अपना निर्वाह करे ॥ २७ ॥ क्षत्रिय की कन्या में जो ब्राह्मण से पैदा हो वह नृप और नृप से क्षत्रिय कन्या में जो पुत्र पैदा हो वह गूढ़ कहाता है ॥ २८ ॥ और वह भी क्षत्रिय होता परन्तु अभिषेक (राज तिलक) के योग्य नहीं होता अभिषेक की अयोग्यता से इसे गोज (गोल) कहते हैं ॥ २९ ॥ सब प्रकार से राजा के चरणों की वंदना (नमस्कार) श्रेष्ठ है और यह गोज राजाओं के पुनर्भूकरण (द्वितीय विवाह करने) में राजा के समान है अर्थात् इस के यहां भी द्वितीय विवाह करते ॥ ३० ॥ विधि से विवाही वैश्य कन्या में जो ब्राह्मण से हो वह अंबष्ट कहाता है खेती अथवा आग्नेय (लकड़ी) इस की जीविका होती है ॥ ३१ ॥ सेना की अथवा शस्त्र की जीविका अंबष्टों की है और वैश्य की कन्या में जो चोरी से ब्राह्मण से पैदा हो उसे कुंभकार (कुलाल) कहते हैं ॥ ३२ ॥ यह कुलाल की वृत्ति (मट्टी के पात्र बनाने) से जीवे है।

सूतकेप्रेतकेवापि दीक्षाकालेऽथवापनम् ॥ ३३ ॥
नाभेरूर्ध्वंतुवपनं तस्मान्नापितउच्यते ।
कायस्थइतिजीवेत्तु विचरेच्चइतस्ततः ॥ ३४ ॥
काकाल्लौल्यंयमात्क्रौर्यंस्थपतेरथकृंतनम् ।
आद्यक्षराणिसंगृह्य कायस्थइतिकीर्तितः ॥ ३५ ॥
शूद्रायांविधिनाविप्राज्जातः पारशवोमतः ।
भद्रकादीन्समाश्रित्य जीवेयुःपूतकाःस्मृताः ॥ ३६
शिवाद्यागमविद्याद्यैस्तथामंडलवृत्तिभिः ।
तस्यांवैचौरसोवृत्तो निषादोजातउच्यते ॥ ३७ ॥
वनेदुष्टमृगान्हत्वा जीवनंमांसविक्रयः ।
नृपाज्जातोथवैश्यायां गृह्यायांविधिनास्मृतः ।
वैश्यवृत्यातुजीवेत क्षत्रधर्मनचारयेत् ॥ ३८ ॥
तस्यांतस्यैवचौरेण मणिकारःप्रजायते ।

इसी से नापित (नाई) होते हैं जन्मसूतक अथवा मरणसूतक में
दीक्षा (मंत्र का उपदेश) काल में ये केशों का छेदन करते हैं ॥ ३३ ॥
के ऊपर के केश काटने से नापित कहाता है और यह कायस्थ नाम से
उधर विचरता हुआ जीविका करता है ॥ ३४ ॥ काक (कौआ) से
यमराज से क्रूरता—स्थपति (कारीगर) से काटना इन तीनों अर्थ
लाने के लिये इन तीनों शब्दों के पहिले२ अक्षर लेकर इसको कायस्थ
विधि से विवाही शूद्र की कन्या में जो ब्राह्मण से पैदा हो वह
(पारधी) माना है ये भद्रक (अच्छे) आदि पहाड़ों पर रह कर
पूतक कहाते हैं ॥ ३६ ॥ शिवादि आगम विद्या (पंचरात्र आदि) अं
तथा मंडलवृत्ति से ये जीवें उसी जाति में (स्त्री पुरुष दोनों पारश
औरस पुत्र है उसे निषाद कहते हैं ॥३७॥ वन में दुष्ट मृगों को मार
बेचना उन की जीविका है विधि से विवाही वैश्य कन्या में जो
से पैदा हो वह वैश्य वृत्ति से जीवे और क्षत्रिय के धर्म को न करे ॥ ३
कन्या में क्षत्रिय से चोरी करके जो पैदा हो वह मणिकार (

मणीनांराजतांकुर्य्यान्मुक्तानांवेधनक्रियाम् ॥ ३९ ॥
प्रवालानांचसूत्रित्वं शाखानांवलयक्रियाम् ।
शूद्रस्यविप्रसंसर्गाज्जातउग्रइतिस्मृतः ॥ ४० ॥
नृपस्यदंडधारःस्याद्दंडंदंड्येपुसंचरेत् ।
तस्यैवचौर्यसंवृत्या जातःशुण्डिकउच्यते ॥ ४१ ॥
जातदुष्टान्समारोप्य शुंडाकर्मणियोजयेत् ।
शूद्रायांवैश्यसंसर्गाद्विधिनासूचिकःस्मृतः ॥ ४२ ॥
सूचकाद्विप्रकन्यायां जातस्तक्षकउच्यते ।
शिल्पकर्माणिचान्यानिप्रासादलक्षणंतथा ॥ ४३ ॥
नृपायामेवतस्यैव जातोयोमत्स्यबंधकः ।
शूद्रायांवैश्यतश्चौर्य्यात्कटकारइतिस्मृतः ॥ ४४ ॥
वशिष्ठशापात्त्रेतायां केचित्पारशवास्तथा ।

ा है मणियों का रंगना या मोतियों का बींधना इस का काम है ॥३९॥ या मूंगों की माला या कड़े बनाना इसका काम है शूद्र के घर ब्राह्मण के गे से जो पैदा हो वह उग्र कहाता है ॥४०॥ यह राजा का दंडधार होता और दंड के योग्यों को दंड देता है और जो ब्राह्मण से शूद्री में चोरी से उसे शुंडिक कहते हैं ॥ ४१ ॥ जन्मसे ही दुष्टों के ऊपर अधिपति बना- उस शुंडी को शुंडा कर्म (सूली देना) में राजा नियुक्त करे विधि से ाही शूद्र कन्या में जो वैश्य से पैदा हो उसे सूचिक (दरजी) कहते हैं॥४२ क से ब्राह्मण की कन्या में जो पैदा हो उसे तक्षक (बढ़ई) कहते हैं शिल्प (कारीगरी) या प्रासाद लक्षण (मकान बनाने का प्रकार) काम को ा है ॥ ४३ ॥ क्षत्रिय की कन्या में जो सूचिक से पैदा हो वह मत्स्यबंधक ीवर) होता है शूद्र की कन्या में चोरी से जो वैश्य से पैदा हो वह कट- कहाता है ॥ ४४ ॥ त्रेतायुग में वशिष्ठजी के शाप से भी कोई एक पार-

वैखानसेनकेचित्तु केचिद्भागवतेनच ॥ ४५ ॥
वेदशास्त्रावलम्बास्ते भविष्यंतिकलौयुगे ॥
कटकारास्ततःपश्चान्नारायणगणाः स्मृताः ॥ ४६ ॥
शाखावैखानसेनोक्तातंत्रमार्गविधिक्रियाः ।
निषेकाद्याःश्मशानांताः क्रियाःपूजांगसूचिकाः ॥४७॥
पंचरात्रेणवाप्राप्तं प्रोक्तंधर्मं समाचरेत् ।
शूद्रादेवतुशूद्रायां जातः शूद्रइतिस्मृतः ॥४८॥
द्विजशुश्रूषणपरः पाकयज्ञपरान्वितः ।
सच्छूद्रंतंविजानीयादसच्छूद्रस्ततोऽन्यथा ॥४९॥
चौर्यात्काकवचोज्ञेयश्चाश्वानांतृणवाहकः ।
एतत्संक्षेपतःप्रोक्तं जातिवृत्तिविभागशः ॥५०॥
जात्यन्तराणिदृश्यन्ते सङ्कल्पादितएवतु ॥ ५१ ॥

इत्यौशनसं धर्मशास्त्रं समाप्तम् ॥

अध होते हैं वे वैखानस (हरिगुणगाना) से अथवा परमेश्वर की भक्ति से वे भागवतो पारशव कलियुग में वेदशास्त्र के मानने वाले होंगे तिस से कटकारनाम के नारायण के गण कहावेंगे ॥४६॥ तंत्रमार्गसे विधान में जिनमें हैं ऐसी शाखा वैखानस ऋषि ने कही है और गर्भ से लेकर अंत तक १६ संस्कार भी इन के होते हैं इसीसे ये सूचिक पूज्य (श्रेष्ठ) हैं। नारद पंचरात्र में कहे हुए धर्म को ये करैं—शूद्र की कन्या में शूद्रसे शूद्र होता है ॥४८॥ जोशूद्रद्विज (तीनवर्ण) की सेवा में पाकयज्ञ के कर्म में सावधान शूद्र को उत्तम शूद्र जानो और जो न रहै उसे असत् (निंदाकेयोग्य) है ॥४९॥ शूद्रकी कन्या में चोरी से जो शूद्रसे पैदा हो वह घोड़ोंका घास ला- दनवाहक काकवच कहाता है-यह संक्षेप से जाति और जीविका के भिन्न २ हमने कहा ॥ ५०॥ मनुके संकल्प से इनमें से ही और २ जाति होती हैं ॥ ५१ ॥

इत्यौशनसं धर्मशास्त्रं समाप्तम्

श्रीगणेशायनमः

अंगिरःस्मृतिप्रारंभः

गृहाश्रमेषुधर्मेषु वर्णानामनुपूर्वशः ।
प्रायश्चित्तविधिंदृष्ट्वाअंगिरामुनिरब्रवीत् ॥१॥
अन्त्यानामपिसिद्धान्नं भक्षयित्वाद्विजातयः ।
चान्द्रंकृच्छ्रंतदर्धंतु ब्रह्मक्षत्रविशांविदुः ॥२॥
रजकश्चर्मकश्चैव नटोबुरुडएवच ।
कैवर्त्तमेदभिल्लाश्च सप्तैतेचान्त्यजाः स्मृताः ॥३॥
अन्त्यजानांगृहेतोयं भांडेपर्युषितंचयत् ।
तद्द्विजेनयदापीतं तदैवहिसमाचरेत् ॥४॥
चांडालकूपेभाण्डेषु त्वज्ञानात्पिबतेयदि ।
प्रायश्चित्तंकथंतेषां वर्णेवर्णेविधीयते ॥५॥
चरेत्सांतपनंविप्रः प्राजापत्यंतुभूमिपः ।
तदर्धंतुचरेद्वैश्यः पादंशूद्रेषुदापयेत् ॥६॥
अज्ञानात्पिबतेतोयं ब्राह्मणस्त्वंत्यजातिषु ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥७॥

गृहस्थाश्रम केधर्मोंमें यथाक्रम चारोंवर्णों के प्रायश्चित्त विधि को देख अंगि-मुनि बोले॥१॥अंत्यजोंके पकाये हुए अन्नको भक्षण कर ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य [illegible]ः चांद्रायण-कृच्छ्र-और आधाकृच्छ्र करें ॥ २॥ रजक (धोबी)-चमार-नट-[illegible]ड-कैवर्त-मेद-भील ये सात अंत्यज कहाते हैं ॥३॥ अंत्यजों के घर में जल [illegible]र उनकेपात्र में रक्खा हुआ बासा जल-उसको[जो]द्विजपीलेतो उसी समय शास्त्र [illegible]हित प्रायश्चित्त को करे ॥ ४ ॥ यदि चांडाल के कुए अथवा पात्रके जल को [अज्ञ]ान से द्विजाति पीले तो उन २ वर्णों का प्रायश्चित्त कैसे हो ! ॥ ५ ॥ [ब्राह्म]ण सांतपन-क्षत्रिय प्राजापत्य—वैश्य आधा प्राजापत्य-और शूद्र चौथाई [प्र]ाजापत्यव्रत को क्रम से करे ॥६॥ जो ब्राह्मण अज्ञानसे अंत्यज जातियों के ज-[ल] को पीले तो एक दिन उपवास करके पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥७॥

विप्रोविप्रेणसंस्पृष्ट उच्छिष्टेनकदाचन।
आचांतएवशुद्ध्येत अंगिरामुनिरब्रवीत् ॥८॥
क्षत्रियेणयदास्पृष्ट उच्छिष्टेनकदाचन।
स्नानंजप्यंतुकुर्वीत दिनस्यार्द्धेनशुद्ध्यति ॥९॥
वैश्येनतुयदास्पृष्टः शुनाशूद्रेणवाद्विजः।
उपोष्यरजनीमेकां पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥१०॥
अनुच्छिष्टेनसंस्पृष्टः स्नानंयेनविधीयते।
तेनैवोच्छिष्टसंस्पृष्टः प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥११॥
अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि नीलीशौचस्यवैविधिम्।
स्त्रीणांक्रीडार्थसंभोगे शयनीयेनदुष्यति॥ १२ ॥
पालनंविक्रयश्चैव तद्वृत्त्याउपजीवनम्।
पतितस्तुभवेद्विप्रस्त्रिभिः कृच्छ्रैर्व्यपोहति ॥ १३ ॥
स्नानंदानंजपोहोमः स्वाध्यायःपितृतर्पणम्।
स्पृष्टातस्यमहापापंनीलीवस्त्रस्यधारणम् ॥ १४ ॥

जो कभी उच्छिष्ट ब्राह्मण—ब्राह्मण का स्पर्श करले तो आचमन
शुद्ध होता है यह अंगिरा मुनि ने कहा है ॥ ८ ॥ जो कभी उच्छिष्ट क्षत्रि
-य को स्पर्श करले तो स्नान और जप करता हुआ आधे दिनमें शुद्ध।
॥९॥ जो उच्छिष्ट वैश्य, शूद्र और कुत्ता, ये तीनों ब्राह्मण को स्पर्श करले।
रात्रि भर उपवास करके पंचगव्य पीनेसे शुद्ध होता है ॥१०॥ जिस अनुच्छि
(मनुष्य हो)के स्पर्श करनेसे स्नान कहा है उसी उच्छिष्टके स्पर्श करने पर प्रा
जापत्य करे ॥११॥ इससे आगे नीली (नील) के शौच की विधि कहते हैं-
स्त्रियों की क्रीडा के अर्थ भोग करने की शय्या पर नीला कपड़ा दूषित नहीं।
नील का पालना—बेचना और नीलके व्यापार से जीविका करने से ब्राह्म
पतित होता है पुनः तीन कृच्छ्र व्रत करके उस पाप से शुद्ध होता है ॥१३॥
धारण करने वाले पुरुष का स्पर्श करके जो स्नान दान जप-होम-
और पितरों का तर्पण करता है उसको महान् (बड़ा) पाप होता है।

नीलीरक्तंयदावस्त्र-मज्ञानेनतुधारयेत् ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ १५ ॥
नीलीदारुयदाभिंद्याद् ब्राह्मणंवैप्रमादतः ।
शोणितंदृश्यतेयत्र द्विजश्चांद्रायणंचरेत् ॥ १६ ॥
नीलीवृक्षेणपक्वंतु अन्नमश्नातिचेद्द्विजः ।
आहारवमनंकृत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ १७ ॥
भक्षेत्प्रमादतोनीलीं द्विजातिस्त्वसमाहितः ।
त्रिषुवर्णेषुसामान्यं चांद्रायणमितिस्थितम् ॥ १८ ॥
नीलीरक्तेनवस्त्रेण यदन्नमुपदीयते ।
नोपतिष्ठतिदातारं भोक्ताभुंक्तेतुकिल्बिषम् ॥ १९ ॥
नीलीरक्तेनवस्त्रेण यत्पाकंश्रपितंभवेत् ।
तेनभुक्तेनविप्राणां दिनमेकमभोजनम् ॥ २० ॥
मृतेभर्तरियानारी नीलीवस्त्रंप्रधारयेत् ।
भर्तातुनरकंयाति सानारीतदनन्तरम् ॥ २१ ॥

लके रंगे वस्त्र को जो अज्ञानसे धारण करताहै वह एक रात दिन उपवास
: और पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥ १५ ॥ जो नील की लकड़ी से ब्राह्मण
शरीर में प्रमाद से घाव हो जाय और रुधिर दिखलाई दे तो ब्राह्मण चा-
ायण व्रत करे॥१६॥यदि ब्राह्मण नील की लकड़ियों से पके हुए अन्न को खावे तो
न अन्न को वमन कर पुनः पंचगव्य के पीने से शुद्ध होता है १७॥ द्विजाति
ाद और असावधानी से नील को खाले तो तीनों वर्णों को सामान्य चां-
ायण व्रत का प्रायश्चित्त होता है ॥१८॥ नील के वस्त्र को धारण कर जो अन्न
दया जाता है उस का फल दाता को नहीं मिलता और भोजन करने वाला
ी पापी होता है ॥ १९ ॥ नीले वस्त्र को धारण कर जो भोजन बनाया जाता
: उस को खाकर ब्राह्मण एक दिन (उपवास) करे ॥ २० ॥ पति के मरने
ी पश्चात् जो स्त्री नीले कपड़े धारण करती है उस का पति नरक में जाता
ौर पीछे से वह स्त्री भी नरक में जाती है ॥ २१ ॥

नीलपाचोपहतेक्षेत्रे सस्यंयत्तुप्ररोहति ।
अभोज्यंतद्द्विजातीनां भुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् ॥
देवद्रोणेवृपोत्सर्गे यज्ञेदानेतथैवच ।
अत्रस्नानंनकर्तव्यं दूपिताचवसुंधरा ॥ २३ ॥
वापितायत्रनीलीस्या—त्तावद्भूरशुचिर्भवेत् ।
यावद्द्वादशवर्पाणि अतऊर्ध्वंशुचिर्भवेत् ॥ २४ ॥
भोजनेचैवपानेच तथाचौपधभेपजैः ।
एवंम्रियन्तेयागावः पादमेकंसमाचरेत् ॥ २५ ॥
घंटाभरणदोपेण यत्रगौर्विनिपीड्यते ।
चरेदूर्ध्वंव्रतंतेषां भूषणार्थंतुयत्कृतम् ॥ २६ ॥
दमनेदामनेरोधे अवघातेचवैकृते ।
गवांप्रभवताघातैः पादोनंव्रतमाचरेत् ॥ २७ ॥
अंगुष्ठपर्वमात्रस्तु बाहुमात्रप्रमाणतः ।

पूर्व नील जिस खेत में बोया हो उस खेत में जो अन्न पैदा होता है द्विजातियों को अभक्ष्य है और उस को भक्षण करके चांद्रायण करे । देवद्रोण (तीर्थ) में वृषोत्सर्ग—यज्ञ—और दान—इन में नील के वस्त्र को कर स्नान नहीं करना चाहिये क्योंकि इतने स्थानों में नील के पृथिवी दूषित होती है ॥ २३ ॥ जिस खेत में नील बोया हो वह खेत भूमि तब तक अशुद्ध रहती है जब तक बारह वर्ष न बीतें इस के पश्चात् होती है ॥ २४ ॥ भोजन कराने से जल पिलाने से अथवा औषध देने से गौ का मरण होजाय तो गोहत्या का चतुर्थांश प्रायश्चित्त करे ॥ २५ ॥ बांधने के दोष से जहां गौ मर जाय वहां वही व्रत करे यदि उस के लिये घंटा बांधा हो तो ॥२६॥ दमन करने और कराने रोकने तथा मारने गौओं के जन्म समय के आघातों से—चौथाई व्रत करे ॥ २७ ॥ अंगुष्ठ जिस में गांठें हों दो हाथ का जिस का प्रमाण हो और पत्ते तथा अग्रभाग जिस में हों उसे दंड कहते हैं ॥ २८ ॥

सपल्लवश्चसाग्रश्च दंडइत्यभिधीयते ॥ २८ ॥
दंडादुक्ताद्यदान्येन पुरुषाःप्रहरन्तिगाम् ।
द्विगुणंगोव्रतंतेषांप्रायश्चित्तंविशोधनम् ॥ २९ ॥
शृंगभंगेत्वस्थिभंगे चर्मनिर्मोचनेतथा ।
दशरात्रंचरेत्कृच्छ्रं यावत्स्वस्थोभवेत्तदा ॥ ३० ॥
गोमूत्रेणतुसंमिश्रं यावकंचोपजायते ।
एतदेवहितंकृच्छ्र-मित्थमंगिरसास्मृतम् ॥ ३१ ॥
असमर्थस्यवालस्य पितावायदिवागुरुः ।
यमुद्दिश्यचरेद्धर्मं पापंतस्यनविद्यते ॥ ३२ ॥
अशीतिर्यस्यवर्षाणि वालोवाप्यूनषोडशः ।
प्रायश्चित्तार्द्धमर्हति स्त्रियोरोगिणएवच ॥ ३३ ॥
मूर्छितेपतितेचापि गवियष्टिप्रहारिते ।
गायत्र्यष्टसहस्रंतु प्रायश्चित्तंविशोधनम् ॥ ३४ ॥
स्नात्वारजस्वलाचैव चतुर्थेन्हिविशुद्ध्यति ।
कुर्याद्रजसिनिर्वृत्ते निवृत्तेनकथंचन ॥ ३५ ॥

दंडसे अथवा अन्य दंडसे जब पुरुषगौको ताड़ना देनेपर गोहत्या होजानेसे उन
द्विगुणगोव्रत से शुद्धि होती है॥२९॥यदि ताड़नासे गौकासींग और हाड़ टूटजाय
अथवा चमड़ा उखड़जाय तो दशरात्र तक कृच्छ्रव्रत करै वाजब तक वे सींग आदि अच्छे
॥३०॥ गोमूत्र से मिले जो जौ होते हैं यही कृच्छ्र है यह अंगिराऋषिने कहा
॥३१॥ जिस असमर्थ बालकके वदले पिता अथवा गुरु जिसको उद्देश में रखकर
का आचरण करें उस लड़के को वह पाप नहीं होता ॥३२॥ अस्सी वर्षका पुरुष
या सोलह वर्षकी अवस्था सेन्यून का बालक और स्त्री वा रोगी ये आधे प्रा-
तके योग्य हैं ।३३॥ जो लाठी के प्रहार से गौ को मूर्च्छा हो जाय अथवा गौ
पड़े तो आठ हजार गायत्री का जपरूप जो प्रायश्चित्त उससेशुद्धि होती है॥३४॥
स्वला स्त्री चतुर्थ दिन स्नान करके शुद्ध होती है और वह स्त्री रजोदर्श.
की निवृत्ति पर ही स्नान करें निवृत्ति के विना स्नान न करे ॥ ३५ ॥

रोगेणयद्रजःस्त्रीणा–मत्यर्थंहिप्रवर्त्तते ।
अशुद्धास्ताननतेनस्यु–स्तासांवैकारिकंहितत्
साध्वाचारानतावत्स्या–द्रजोयावत्प्रवर्त्तते ।
वृत्तेरजसिगम्यास्त्री–गृहकर्मणिचेंद्रिये ॥ ३७
प्रथमेहनिचांडाली द्वितीयेब्रह्मघातिनी ।
तृतीयेरजकीप्रोक्ता चतुर्थेहनिशुध्यति ॥ ३८ ॥
रजस्वलायदास्पृष्टा शुनाशूद्रेणचैवहि ।
उपोष्यरजनीमेकां पंचगव्येनशुद्धयति ॥ ३९ ॥
द्वावेतावशुचीस्यातां दंपतीशयनंगतौ ।
शयनादुत्थितानारी शुचिःस्यादशुचिःपुमान ॥४०॥
गंडूपंपादशौचंच नकुर्यात्कांस्यभाजने ।
भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं ताम्रमम्लेनशुद्ध्यति ।
रजसाशुद्ध्यतेनारी नदीवेगेनशुद्ध्यति ।

रोग से जो स्त्रियों के अत्यंत रज निकलता है उससे वे अशुद्ध न
क्योंकि वह उनका विकारी रज है ॥ ३६ ॥ जब तक रज की प्र
स्य तक उत्तम आचरण न करे और रज की निवृत्ति होने पर गृ
मंग और घरका कार्य करे ॥ ३७ ॥ रजस्वला स्त्री प्रथम दि
द्वितीय दिन ब्रह्महत्यारी–तृतीय दिन रजकी (धोबिन) हो
चौथेदिन शुद्ध होती है ॥ ३८ ॥ यदि रजस्वला स्त्रीको श्वान
स्पर्श करले तो एकरात्रि उपवास करके पंचगव्य पीने से शुद्ध होती
शय्या पर सोते समय स्त्री और पुरुष दोनों अशुद्ध होते हैं शय्या से
स्त्री शुद्ध होजाती है और पुरुष अशुद्ध होता है ॥ ४० ॥ कांसे के पात्र
कुल्ले करे और न पैर धोवे यदि करे तो वह अशुद्ध कांसे का पात्र
और तांबे का पात्र खटाई से शुद्ध होता है ॥ ४१ ॥ स्त्री रजोदर्श
नदी वेग से–तथा अत्यंत बिगड़ा वस्तु (पात्र आदि) भूमि में

भूमौनिःक्षिप्यषण्मास-मत्यंतोपहतंशुचि ॥ ४२ ॥
गवाघ्रातानिकांस्यानि शूद्रोच्छिष्टानियानितु ।
भस्मनादशभिःशुद्ध्ये-त्काकेनोपहतेतथा ॥ ४३ ॥
शौचंसौवर्णरौप्याणां वायुनार्केंदुरश्मिभिः ।
रजस्पृष्टंशवस्पृष्ट-माविकंचनशुद्ध्यति ॥ ४४ ॥
अद्भिर्मृदाचतन्मात्रं प्रक्षाल्यचविशुद्ध्यति ।
शुष्कमन्नमविप्रस्य भुक्त्वासप्ताहमृच्छति ॥ ४५ ॥
अन्नंव्यंजनसंयुक्त-मर्द्धमासेनशुद्ध्यति ।
पयोदधिचमासेन षण्मासेनघृतंतथा ॥ ४६ ॥
तैलंसंवत्सरेणैव कोष्ठेजीर्यतिमानवे ।
योभुंक्तेहिचशूद्रान्नं मासमेकंनिरंतरम् ॥ ४७ ॥
इहजन्मनिशूद्रत्वं मृतःश्वाचाभिजायते ।
शूद्रान्नंशूद्रसंपर्कः शूद्रेणचसहासनम् ॥ ४८ ॥
शूद्राद्ज्ञानागमःकश्चि-ज्जवलंतमपिपातयेत् ।

से शुद्ध होते हैं ॥ ४२ ॥ गौने जिन को सूंघलिया हो अथवा जिन में शू-
खाया हो अथवा जिनको काक ने छूलिया हो ऐसे कांसे के पात्र दश
पर्यन्त भस्म से माजने से शुद्ध होते हैं ॥ ४३ ॥ सोना और चांदी के पात्र
और सूर्य-तथा चन्द्रमा की किरणों से शुद्ध होते हैं-और स्त्री का रज
शव (मुर्दा) का स्पर्श जिस में हुआ हो ऐसा ऊन का वस्त्र शुद्ध नहींहोता ॥ ४४॥
तका और जल से जितने ऊन के वस्त्र में रक्त अशुद्धि हुई हो उतने को ही
ने से शुद्ध होता है-ब्राह्मण से भिन्न के सूखे अन्न को भक्षण कर सात दिन
करै ॥ ४५ ॥ व्यंजन (भाजी) संयुक्त अन्न खाकर पन्द्रह दिन के व्रत
और दूध या दही खाकर एक मास के व्रत से और घी खाकर छः
स के व्रत से शुद्धि होती है ॥ ४६ ॥ मनुष्य के उदर में तेल एक वर्ष में
ता है जो निरन्तर एकमास पर्यन्त शूद्र के अन्न को खाता है ॥ ४७ ॥ वह
ी जन्म में शूद्र होता है तथा मर कर कुत्ता होता है-शूद्र का अन्न शूद्र का
र और शूद्र के संग एक आसन पर बैठना ॥ ४८ ॥ तथा शूद्र से किसी विद्या

अप्रणामंगतेशूद्रे स्वस्तिकुर्वन्तियेद्विजाः ॥ ४९
शूद्रोपिनरकंयाति ब्राह्मणोपितथैवच ।
दशाहाच्छुद्ध्यतेविप्रो द्वादशाहेनभूमिपः ॥५०
पाक्षिकंवैश्यएवाहुः शूद्रोमासेनशुद्ध्यति ।
अग्निहोत्रीतुयोविप्रः शूद्रान्नंचैवभोजयेत् ॥५१॥
पंचतस्यप्रणश्यन्ति चात्मावेदास्त्रयोग्नयः ।
शूद्रान्नेनतुभुक्तेन योद्विजोजनयेत्सुतान् ॥५२॥
यस्यान्नंतस्यतेपुत्रा अन्नाच्छुक्रंप्रवर्तते ।
शूद्रेणस्पृष्टमुच्छिष्टं प्रमादादथपाणिना ॥५३॥
तद्द्विजेभ्योनदातव्य–मापस्तम्बोब्रवीन्मुनिः ।
ब्राह्मणस्यसदाभुङ्क्ते क्षत्रियस्यचपर्वसु ॥५४॥
वैश्येष्वापत्सुभुञ्जीत नशूद्रेपिकदाचन ।
ब्राह्मणान्नेदरिद्रत्वं क्षत्रियान्नेपशुस्तथा ॥५५॥

को प्रणाम करना ये तेजस्वी मनुष्य को भी पतित करते हैं शूद्र को प्रणा
ये बिना ही जो द्विज आशीर्वाद देते हैं ॥ ४९ ॥ वह शूद्र और ब्रा
दोनों नरक में जाते हैं–दशदिन में ब्राह्मण बारह दिन में क्षत्री ॥५०॥ प
दिन में वैश्य और एक मास में शूद्र जन्म और मृतक सम्बन्धी अशुद्धि
होते हैं–जो अग्निहोत्री ब्राह्मण शूद्र के अन्न को भक्षण करे।
उस का आत्मा–वेद और तीनों अग्नि–ये पांचों नष्ट होते हैं। शूद्र के अ
खाकर जो द्विज पुत्रों को उत्पन्न करता है ॥५२॥ सो वे पुत्र उस के ही हैं
का अन्न था क्योंकि अन्न से ही वीर्य उत्पन्न होता है, शूद्र ने प्रमाद से
हाथ से जिस अन्न का स्पर्श कर लिया हो उस छुये हुये को ॥५३॥ द्वि
को न दे यह आपस्तम्ब मुनि ने कहा है–ब्राह्मण के अन्न को सदा ख
और क्षत्रिय के अन्न को पर्व में ॥ ५४ ॥ आपत्तिकाल में वैश्य के अ
परन्तु शूद्र के अन्न को कदापि न खावे ब्राह्मण के अन्न भक्षण करने से द
और क्षत्रिय के अन्न खाने से पशु ॥५५॥

वैश्यान्नेनतुशूद्रत्वं शूद्रान्नेनरकंध्रुवम् ।
अमृतंब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियान्नंपयःस्मृतम् ॥५६॥
वैश्यस्यचान्नमेवान्नं शूद्रान्नंरुधिरंध्रुवम् ।
दुष्कृतंहिमनुष्याणा-मन्नमाश्रित्यतिष्ठति ॥५७॥
योयस्यान्नंसमश्नाति सतस्याश्नातिकिल्विषम् ।
सूतकेषुयदाविप्रो ब्रह्मचारीजितेन्द्रियः ॥५८॥
पिबेत्पानीयमज्ञानाद्- भुङ्क्तेभक्तमथापिवा ।
उत्तार्याचम्यउदक-मवतीर्यउपस्पृशेत् ॥५९॥
एवंहिसमुदाचारो वरुणेनाभिमन्त्रितः ।
अग्न्यागारेगवांगोष्ठे देवब्राह्मणसन्निधौ ॥६०॥
आहारेजपकालेच पादुकानांविसर्जनम् ।
पादुकासनमारूढो गेहात्पंचगृहंव्रजेत् ॥ ६१ ॥
छेदयेत्तस्यपादौतु धार्मिकःपृथिवीपतिः ।
अग्निहोत्रीतपस्वीच श्रोत्रियोवेदपारगः ॥ ६२ ॥

य के अन्नखानेसे शूद्र और शूद्र के अन्न खाने से निश्चय नरक होता है—ब्राह्
ण, अमृत के तुल्य है और क्षत्रिय का अन्न दूध के सदृश है ॥५६॥ वैश्य का अन्न अ
ो है और शूद्र का अन्न निश्चय करके रुधिर के तुल्य है मनुष्य का किया दुष्
न्न में रहता है ॥५७॥ जो जिस के अन्न को भक्षण करता है वह उस के
ा खाता है—यदि जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी ब्राह्मण सूतकों में ॥५८॥ अज्
ल पीले अथवा भात खाले तो जल निकाल (वमन) कर आचमन क
ाणायाम करके आचमन करे ॥५९॥ इस प्रकार सम्यक् वरुण के मन्त्रों
ो अभिमन्त्रित करके अग्निकी शाला, गोशाला, देव तथा ब्राह्मणोंके
६०॥ भोजन करने और जप करने के समय खड़ाऊंओं को त्या
दि खड़ाऊं पर चढ़कर सामान्य गृहस्थी दूसरे गृह से (जनपद
क जावे ॥६१॥ तो धर्मिष्ठ राजा उसके पैरों को छेदन करे क्योंकि अग्
ी, तपस्वी, वेदोक्तकर्मों का कर्ता और वेद का ज्ञाता ॥ ६२ ॥

एतेवैपादुकैर्यान्ति शेषान्दण्डेनताडयेत् ।
जन्मप्रभृतिसंस्कारे चूडांतेभोजनंनवम् ॥ ६३ ॥
असपिंडेनभोक्तव्यं चूडस्यांतेविशेषतः ।
याचकान्नंनवश्राद्ध-मपिसूतकभोजनम् ॥ ६४ ॥
नारीप्रथमगर्भेषु भुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् ।
अन्यदत्तातुयाकन्या पुनरन्यस्यदीयते ॥ ६५ ॥
तस्याश्चान्नंनभोक्तव्यं पुनर्भूःसाप्रगीयते ।
पूर्वंश्रस्राविताेयश्च गर्भोयश्चाप्यसंस्कृतः ॥ ६६ ॥
द्वितीयेगर्भसंस्कार-स्तेनशुद्धिर्विधीयते ।
राजाद्यैर्दशभिर्मासैर्यावत्तिष्ठतिगुर्विणी ॥ ६७ ॥
तावद्रक्षाविधातव्या पुनरन्योविधीयते ।
भर्तुःशासनमुल्लंघ्य याचस्त्रीविप्रवर्तते ॥ ६८ ॥
तस्याश्चैवनभोक्तव्यं विज्ञेयाकामचारिणी ।

ये ही खड़ाउं पर चलें इतर मनुष्यों को राजा दंड दे॰
करै–जन्म आदि जातकर्मादि संस्कार में चूड़ा कर्म में तथा
न में ॥ ६३ ॥ अपने असपिंड के घर भोजन न खावे और चूड़ाकर्म में तो
शेष कर न करै–भिखारी का अन्न–नवश्राद्ध और सूतकका अन्न ॥ ६४ ॥
स्त्री के पहिले गर्भाधान में भोजन कर चान्द्रायण प्रायश्चित करै–जो कन्या
न्य को देकर पुनः अन्य को दी जाती है ॥ ६५॥ उस का अन्न भी नहीं
चाहिये क्योंकि उसको पुनर्भू कहतेहैं–यदि पहिला गर्भ वा गर्भ गिरादि
जिस का संस्कार न हुआ होयह पात होजाय॥६६॥ तो द्वितीय गर्भके संस्कार
शुद्धि विहितहै जब तक वह स्त्री गर्भवती रहै तब तक राज आदि दश
तक ॥ ६७ ॥ रक्षा करनी चाहिये पुनः अन्य गर्भ होता है–पति की आज्ञा
उल्लंघन करके जो स्त्री वर्ताव करती ॥६८॥ और उस को कामचारिणी जाने

अनपत्यानुयानारी नाश्नीयात्तद्गृहेपितृ ॥ ६९ ॥
अथभुंक्तेनुयोमोहा त्पूयसंनरकंव्रजेत् ।
स्त्रियाधनंनुयेमोहा दुपजीवंतिमानवाः ॥ ७० ॥
स्त्रियायानानिवासांसि तेपापायांत्यधोगतिम् ।
राजान्नंहरतेतेजः शूद्रान्नंब्रह्मवर्चसम् ॥ ७१ ॥
सूतकेषुचयोभुंक्ते सभुंक्तेपृथिवीमलम् ॥
सूतकेषुचयोभुंक्ते सभुंक्तेपृथिवीमलम् ॥७२॥

इत्यंगिरसाप्रणीतंधर्मशास्त्रंसंपूर्णम् ॥

तथा जो स्त्री वंध्या हो उसके घर भी नहीं खावे ॥ ६९ ॥ तथा मोह न करता है तो वह पूय (पीब) नरक में जाता है स्त्री के धन मनुष्य मोह से जीते (खाते) हैं ॥ ७० ॥ जो स्त्री का यान (सवारी) वस्त्र बरतते हैं वे पापी अधोगति को प्राप्त होते हैं राजा का अन्न हरता है और शूद्र का अन्न ब्रह्मतेजको ॥ ७१ ॥ और जो सूतकों में भोजन करता है वह पृथिवी के मल को खाता है ॥

इत्यंगिरसाप्रोक्तंधर्मशास्त्रं समाप्तम्

अथयमस्मृतिप्रारंभः

श्रुतिस्मृत्युदितंधर्मं वर्णानामनुपूर्वशः ।
प्राब्रवीदृषिभिःपृष्टो मुनीनामग्रणीर्यमः ॥ १ ॥
योभुंजानोऽशुचिर्वापि चांडालपतितंस्पृशेत् ।
क्रोधादज्ञानतोवापि तस्यवक्ष्यामिनिष्कृतिम् ॥ २ ॥
षड्रात्रंवात्रिरात्रंवा यथासंख्यंसमाचरेत् ।
स्नात्वात्रिषवणंविप्रः पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
भुंजानस्यतुविप्रस्य कदाचित्स्रवतेगुदम् ।
उच्छिष्टत्वेऽशुचित्वेच तस्यशौचंविनिर्दिशेत् ॥४॥
पूर्वंकृत्वाद्विजःशौचं पश्चादापउपस्पृशेत् ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥५॥
निगिरन्यदिमेहेत भुक्त्वावामेहनेकृते ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा जुहुयात्सर्पिषाहुतिम् ॥ ६ ॥
यदाभोजनकालेस्या-दशुचिर्ब्राह्मणःक्वचित् ।

चारों वर्णों के श्रुति और स्मृति में कहे धर्म को ऋषियों के पूछने पर मुनियों [illegible] यम ने क्रम से कहा ॥१॥ जो भोजन करता हुआ अथवा अशुद्ध दशा में [illegible] चांडाल को क्रोध अथवा अज्ञान से स्पर्श करले उसका प्रायश्चित्त कहते ॥ छः दिन अथवा तीन दिन क्रमशः प्रायश्चित्त करे तीन बार स्नान क[illegible] पंचगव्य पीने से ब्राह्मण की शुद्धि होती है ॥३॥ भोजन करते हुए ब्राह्मण [illegible]दा से मल निकल जाय तो उच्छिष्ट और अशुद्धि के निवारण के लिये [illegible] करे ॥४॥ प्रथम ब्राह्मण गुद शुद्धि करके जल से स्नान करे और पुनः एक [illegible] और रात उपवास करके पंचगव्य पीनेसे शुद्ध होता है ॥५॥ भोजन करते [illegible]थवा भोजन करके शुद्धि से यदि पेशाब करे तो एक रात्रि दिन उपवास [illegible]की आहुति से होम करे ॥६॥ जो ब्राह्मण भोजन के समय कभी अशुद्ध

भूमौनिधायतद्ग्रासं स्नात्वाशुद्धिमवाप्नुयात् ॥ ७ ॥
भक्षयित्वातुतद्ग्रास-मुपवासेनशुद्ध्यति ।
अशित्वाचैवतत्सर्वं त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ ८ ॥
अश्नतश्चेद्विरेकःस्या-दस्वस्थस्त्रिशतंजपेत् ।
स्वस्थस्त्रीणिसहस्राणि गायत्र्याःशोधनंपरम् ॥९॥
चांडालैःश्वपचैःस्पृष्टो विण्मूत्रेचकृतेद्विजः ।
त्रिरात्रंतुप्रकुर्वीत भुक्त्वोच्छिष्टःषडाचरेत् ॥ १० ॥
उदक्यांसूतिकांवापि संस्पृशेदंत्यजोयदि ।
त्रिरात्रेणविशुद्धिःस्या-दितिशातातपोऽब्रवीत् ॥११॥
रजस्वलातुसंस्पृष्टा श्वमातंगादिवायसैः ।
निराहाराशुचिस्तिष्ठे त्कालस्नानेनशुद्ध्यति ॥१२॥
रजस्वलेयदानार्या-वन्योन्यंस्पृशतःक्वचित् ।
शुद्ध्यतःपंचगव्येन ब्रह्मकूर्चेनचोपरि ॥१३॥

होजावे तो उस कौर को पृथ्वी पर रखकर स्नान कर शुद्धि को प्राप्त हो। जो उस ग्रास को भी खाले तो एक उपवास कर शुद्ध होता है ॥७॥ जो उस ग्रास को खाले तो तीन दिन तक अशुद्ध रहता है ॥८॥ जो भोजन सब अन्न को खाले तो तीन दिन तक अशुद्ध रहता है ॥८॥ जो भोजन हुए वमन हो जाय तो अस्वस्थ (रोगी) तीन सौ गायत्री और (नीरोग) तीन हजार गायत्री जपे यह गायत्री से परम शुद्धि होती जो विष्ठा और मूत्र त्यागने के पश्चात् चांडाल अथवा श्वपच द्विज करलें तो तीन दिन और स्पर्श के अनन्तर भोजन करले तो छः दि वास करे ॥१०॥ रजस्वला अथवा सूतिका स्त्रीको यदि अन्त्यज स्पर्श तीन दिन व्रत करने से शुद्धि होती है यह शातातप ऋषि ने कहा है यदि रजस्वला स्त्री को कुत्ता हाथी या कौआ स्पर्श करले तो अशुद्ध में निराहार रहे और ४ थे दिन के स्नान से शुद्ध होती है ॥ १२ ॥ जो स्वला स्त्री परस्पर एकदूसरी का स्पर्श करले तो पंचगव्य के पीने तथ कूर्च (कुशाओं के मोटक) से पंचगव्य को अपने शरीर पर छिड़कते होती हैं ॥ १३ ॥

उच्छिष्टेनचसंस्पृष्टा कदाचित्स्त्रीरजस्वला ।
कृच्छ्रेणशुद्धिमाप्नोति शूद्रादानोपवासतः ॥१४॥
अनुच्छिष्टेनसंस्पृष्टे दानंयेनविधीयते ।
तेनैवोच्छिष्टसंस्पृष्टः प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥१५॥
ऋतौतुगर्भंशंकित्वा स्नानंमैथुनिनःस्मृतम् ।
अनृतौतुस्त्रियंगत्वा शौचंमूत्रपुरीषवत् ॥१६॥
उभावप्यशुचीस्यातां दंपतीशयनेगतौ ।
शयनादुत्थितानारी शुचिःस्यादशुचिःपुमान् ॥१७॥
भर्तुःशरीरशुश्रूषां दौरात्म्यादप्रकुर्वती ।
दंड्याद्वादशकंनारी वर्षंत्याज्याधनंविना ॥१८॥
त्यजन्तोऽपतितान्बंधू-न्दंड्याउत्तमसाहसम् ।
पिताहिपतितःकामं-नतुमाताकदाचन ॥१९॥

कदाचित् जो रजस्वला स्त्री को उच्छिष्ट पुरुष स्पर्श करले तो द्विजों की स्त्री कृच्छ्र व्रत करने से और शूद्र की स्त्री दान तथा उपवास से शुद्धि को प्राप्त होती है ॥ १४ ॥ जिस अनुच्छिष्ट के स्पर्श करने से स्नान करना विधान किया है यदि वही उच्छिष्ट होकर स्पर्श करले तो प्राजापत्य व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ १५ ॥ ऋतुकाल में गर्भ की इच्छा से जो मैथुन करता है उसे स्नान करना कहा है और ऋतु से भिन्न समय में स्त्री का संग करने से मल मूत्र के सदृश शुद्धि होती है। शय्या पर सोते हुए दोनों स्त्री और पुरुष अशुद्ध होते हैं शय्या से पृथक् होने पर स्त्री शुद्ध, और पुरुष अशुद्ध रहता है ॥१७॥ पति के शरीर की सेवा जो स्त्री कुबुद्धि से नहीं करती वह स्त्री बारह वर्ष तक धन के बिना त्याग देनी चाहिये ॥ १८॥ जो पतित हुये बिना ही बन्धुओं को त्याग देते हैं उन को राजा उत्तमसाहसका दंड दे और पतित पिता भी यथेच्छ त्यागने योग्य है परन्तु माता कभी भी त्यागने योग्य नहीं ॥१९॥

आत्मानंघातयेद्यस्तु रज्ज्वादिभिरुपक्रमैः ।
मृतोमेध्येनलेप्तव्यो जीवतोद्विशतंदमः ॥२०॥
दण्ड्यास्तत्पुत्रमित्राणि प्रत्येकंपणिकंदमम् ।
प्रायश्चित्तंततःकुर्यु-र्यथाशास्त्रप्रचोदितम् ॥२१॥
जलाद्युद्बंधनभ्रष्टाः प्रव्रज्यानाशनच्युताः ।
विषात्प्रपतनंप्राय: शस्त्रघातहताश्चये ॥ २२ ॥
नचैतेप्रत्यवसिताः सर्वलोकबहिष्कृताः ।
चांद्रायणेनशुद्ध्यंति तप्तकृच्छ्रद्वयेनवा ॥ २३ ॥
उभयावसितःपापः श्यामाच्छबलकाच्युतः ।
चांद्रायणाभ्यांशुद्ध्येत दत्वाधेनुंतथावृषम् ॥ २४
श्वशृगालप्लवंगाद्यै-र्मानुषैश्चरतिंविना ।
दष्टःस्नात्वाशुचिःसद्यो दिवासन्ध्यासुरात्रिषु ॥ २५
अज्ञानाद्ब्राह्मणोभुक्त्वा चांडालान्नंकदाचन ।

जो पुरुष गले में फांसी लगाकर अथवा किसी अन्य प्रकार से आत्म...
करै और वह मरजाय तो उसे मलिन स्थल में गाड़ दे और न मरे तो उ...
दोसौ रुपये दंड करना चाहिये ॥२०॥ तथा उस के पुत्र और मित्रों को...
२ पणिक (मुद्रा) दंडदे फिर वे सब शास्त्रविहित प्रायश्चित्त करें ॥२१॥ जलादि...
अथवा फांसी से जो बचगये और संन्यास धर्म के नाशक तथा उस के जो...
अथवाविष भक्षण से ऊंचे से गिरने से और शस्त्र के लगने से जो मरतेर...
॥२२॥ येपुरुष सर्व लोकों से बहिष्कृत और भोजन के योग्य नही रहते...
द्रायण अथवा तप्तकृच्छ्र व्रत से शुद्ध होते हैं ॥२३॥ उक्त पापियों के घर...
करने वाला या रहने वाला पापी पुरुष दो चान्द्रायण करै अथवा श...
शबल (कबरा) से भिन्न गौ या बैल का दान करै ॥ २४ ॥ कुत्ता-सि...
नर आदि जो मनुष्यों के संग क्रीड़ा के बिना काटैं तो उसी समय...
अथवा रात्रि में स्नान ही से शुद्ध होता है ॥ २५ ॥ कदाचित्...

गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धेनविशुद्ध्यति ॥ २६ ॥
गोब्राह्मणगृहंदग्ध्वा मृतंचोद्बन्धनादिना ।
पाशंछित्वातथातस्य कृच्छ्रमेकंचरेद्द्विजः ॥ २७ ॥
चांडालपुल्कसानांच भुक्त्वागत्वाचयोषितम् ।
कृच्छ्राब्दमाचरेज्ज्ञाना-दज्ञानादैंदवद्वयम् ॥ २८ ॥
कपालिकान्नभोक्तृणां तन्नारीगामिनांतथा ।
कृच्छ्राब्दमाचरेज्ज्ञाना-दज्ञानादैंदवद्वयम् ॥ २९ ॥
अगम्यागमनेविप्रोमद्यगोमांसभक्षणे ।
तप्तकृच्छ्रपरिक्षिप्तो मौर्वीहोमेनशुद्ध्यति ॥ ३० ॥
महापातककर्तार-श्चत्वारोथविशेषतः ।
अग्निंप्रविश्यशुद्ध्यंति स्थित्वावामहतिक्रतौ ॥ ३१ ॥
रहस्यकरणेप्येवं मासमभ्यस्यपूरुषः ।

ान के अन्न को ब्राह्मण खालेतो गोमूत्र और जौ को खाने से पंद्रह दिन में
होता है ॥ २६ ॥ गौशाला और ब्राह्मण के घर को जो जला दे तथा फां-
लगाकर जो मरा हो उस को जो जलावे अथवा उसकी फांसी का छेदन
तो वह द्विज एक कृच्छ्रव्रत करे ॥ २७ ॥ चांडाल या पुल्कस (चांडालका
) के यहां जानकर भोजन करले अथवा इन की स्त्रियों का संग करे तो
वर्ष तक कृच्छ्र व्रत करे और अज्ञान से भोजन करे तो दो चान्द्रा-
व्रत करे ॥ २८ ॥ ज्ञान से कापालिकों का अन्न खाले अथवा उनकी स्त्रियों
भोगे तो एक वर्ष तक कृच्छ्र करे औ अज्ञान से दो चान्द्रायणव्रत करे ॥२९॥
ानी आदि अगम्या स्त्री के संग गमन करने और मदिरा तथा गौ मांस के
ने पर तप्तकृच्छ्र करके मौर्वी (मूत्र) के होम से ब्राह्मण शुद्ध होता है॥३०॥
ब्रह्महत्यादि चारो महापातक करने वाले विशेष कर तो अग्नि में प्रवेश
के अथवा बड़े यज्ञ (अश्वमेध आदि) करके शुद्ध होते हैं ॥ ३१ ॥
ा कर भी इस प्रकार का महापाप को पुरुष अभ्यस्त [illegible] का एक मास

ॲघमर्षणसूक्तं या शुद्ध्यंद्ध्रंतर्जलेस्थितः ॥ ३२ ॥
रजकश्चर्मकश्चैव नटोबुरुडएवच ।
कैवर्तमेदभिल्लाश्च सप्तैतेअन्त्यजाःस्मृताः ॥३३॥
भुक्त्वाचैषांस्त्रियोगत्वा पीत्वापःप्रतिगृह्यच ।
कृच्छ्राब्दमाचरेज्ज्ञाना-दज्ञानादैंदवद्वयम् ॥ ३४ ॥
मातरंगुरुपत्नींच स्वसृंदुहितरंस्नुषाम् ।
गत्वैताःप्रविशेदग्निं नान्याशुद्धिर्विधीयते ॥ ३५ ॥
राज्ञींप्रव्रजितांधात्रीं तथावर्णोत्तमामपि ।
कृच्छ्रद्वयंप्रकुर्वीत सगोत्रामभिगम्यच ॥ ३६ ॥
अन्यासुपितृगोत्रासु मातृगोत्रगतास्वपि ।
परदारेषुसर्वेषु कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ॥ ३७ ॥
वेश्याभिगमनेपापं व्यपोहंतिद्विजातयः ।
पीत्वासकृत्सुतप्तंच पंचरात्रंकुशोदकम् ॥ ३८ ॥
गुरुतल्पव्रतंकेचि-त्केचिद्ब्रह्महणोव्रतम् ।

…पंण जल में बैठ कर जप करे तो शुद्ध होता है ॥ ३२ ॥ धोबी-चमार …रुड-कैवर्त-मेद-भील-ये सात अंत्यज कहाते हैं ॥ ३३ ॥ इन के यहां …न-इनकी स्त्रियों के संग गमन-इन के घर का जल पान-ज्ञान से करे …वा इन से दान लेकर एक वर्ष भर कृच्छ्र व्रत करे और अज्ञान से दे …न्द्रायण व्रत करे ॥ ३४ ॥ माता-गुरु की स्त्री-भगिनी पुत्री लड़के की …नके संग गमन करके अग्नि में प्रवेश करे (मर जाय) अन्य शुद्धि नहीं …रानी-संन्यासिनी-धाय-और उत्तम वर्णं की स्त्री तथा अपने गोत्र की …इन के संग गमन करके दो कृच्छ्र करे ॥ ३६ ॥ अन्य जो माता और पिता …गोत्र की स्त्री है अथवा अन्य की स्त्री, इन सब के संग गमन करके सांत… …कृच्छ्र करे ॥३७॥ वेश्या के संग गमन करने के पाप को तीनों द्विजाति व्रत… …ताये हुए कुशा के जल को पांच दिन तक प्रतिदिन एक वार पीकर व्रत… …हुए दूर करते हैं ॥ ३८ ॥ कोई ऋषि लोग गुरुपत्नी के गमन का कोई…

गोघ्नस्यकेचिदिच्छंति केचिच्चैवावकीर्णिनः ॥३९॥
दंडादूर्ध्वंप्रहारेण यस्तुगांविनिपातयेत् ।
द्विगुणंगोव्रतंतस्य प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ४०
अंगुष्ठमात्रस्थूलस्तु बाहुमात्रप्रमाणकः ।   ॥
सार्द्रश्चसपलाशश्च गोदंडःपरिकीर्तितः ॥ ४१ ॥
गवांनिपातनेचैव गर्भोपिसंपतेद्यदि ।
एकैकशश्चरेत्कृच्छ्रं यथापूर्वंतथापुनः ॥ ४२ ॥
पादमुत्पन्नमात्रेतु द्वौपादौगात्रसंभवे ।
पादोनंकृच्छ्रमाचरेद् हत्वागर्भमचेतनम् ॥ ४३ ॥
अंगप्रत्यंगसंपूर्णे गर्भेरेतःसमन्विते ।
एकैकशश्चरेत्कृच्छ्र-मेषागोघ्नस्यनिष्कृतिः ॥ ४४ ॥
बंधनेरोधनेचैव पोषणेवागवांरुजा ।
संपद्यतेचेन्मरणं निमित्तीनैवलिप्यते ॥ ४५ ॥
मूर्छितःपतितोवापि दंडेनाभिहतस्तथा ।

ा का–कोई गोहत्या के व्रत का, और कोई अवकीर्णी (जो ब्रह्मचर्य से त हो) के व्रत का प्रायश्चित्त वेश्यागामी पुरुष के लिये मानते हैं ॥३९॥ के प्रहार से जो गौ को मारे उसे गोहत्या का दूना प्रायश्चित्त बतावे॥४०॥ ठे के समान मोटा और दो हाथ का जिस का प्रमाण हो ऐसा जो गीला : पत्तों समेत दंड उसे गोदंड कहते हैं ॥ ४१ ॥ गौओं के मारने से जो गौ- गर्भ गिरजाय तो तीनों द्विजाति क्रम से एक २ कृच्छ्र करें ॥ ४२ ॥ रहते ही जो गर्भपात होजाय तो चौथाई कृच्छ्र और गर्भ की देह बने पर पात होय तो आधाकृच्छ्र और अचेतन गर्भ का पात होजाय तो पौन करै ॥ ४३ ॥ तथा यदि गौ को मारने से अंग (हाथ आदि)–प्रत्यंग ारोम आदि) से पूरा सचेत गर्भ गिरजाय तो तीनों वर्ण एक२ कृच्छ्र क- यह गोहत्या का प्रायश्चित्त कहा ॥ ४४ ॥ यदि गौओं के बांधने, रोकने, पा ा पोषण करने, से रोग हो कर यदि गौ मरजाय तो बांधना आदि करने ले को पाप नहीं लगता ॥४५॥ मूर्छाको प्राप्त अथवा (   ) के

उत्थायपदपदंगच्छे–स्सप्तपंचदशापिवा ॥ ४६ ॥
ग्रासंवायदिगृह्णीया–त्तोयंवापिपिबेद्यदि ।
पूर्वंव्याधिप्रणष्टानां प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४७ ॥
काष्ठलोष्टाश्मभिर्गाव शस्त्रैर्वानिहतायदि ।
प्रायश्चित्तंकथंतत्र शस्त्रेशस्त्रेनिगद्यते ॥ ४८ ॥
काष्ठेसांतपनंकुर्यात् प्राजापत्यंतुलोष्टके ।
तप्तकृच्छ्रंतुपाषाणे शस्त्रेचाप्यतिकृच्छ्रकम् ॥ ४९ ॥
औषधंस्नेहमाहारं दद्याद्गोब्राह्मणेषुच ।
दीयमानेविपत्तिःस्यात्प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ५० ॥
तैलभैषजपानेच भेषजानांचभक्षणे ।
निःशल्यकरणेचैव प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ५१ ॥
वत्सानांकंठबंधेन क्रिययाभेषजेनतु ।
सायंसंगोपनार्थंच नदोषोरोधबन्धयोः ॥ ५२ ॥

विनाही चलानेके अर्थ दंडसे धमकाने परगिरा कोई पशु यदि उठकर छः-ए
पांच अथवा दश पग चलदे ॥ ४६ ॥ अथवा ग्रास को खाले या जल पीले,
र पूर्व व्याधि से मर जाय तो उस का प्रायश्चित्त नहीं है ॥ ४७ ॥ काठ-
–पत्थर–वा–शस्त्रोंसे यदि गौ को मारे तो वहां शस्त्र२ के प्रति प्राय
कहते हैं ॥ ४८ ॥ काठ से मारने पर सांतपन–ढेले से प्राजापत्य–पत्थर से
कृच्छ्र करे ॥ ४९ ॥ गौ और ब्राह्मण को औषध– स्नेह (घी आदि) दे
समय वा भोजन देते समय–यदि विपत्ति (मरण या कष्ट) होजा
प्रायश्चित्त नहीं है ॥ ५० ॥ तैल अथवा औषध पिलाने–और औष
ने–अथवा कांटा आदि निकालने के समय गौ को जो कष्ट होता है उ
प्रायश्चित्त नहीं है ॥ ५१ ॥ बछड़ों के गला बांधने में औषध के दे
रक्षा के लिये संध्या को रोकने और बांधने में भी दोष नहीं है

पादेचैवास्थरोमाणि द्विपादेश्मश्रुकेवलम् ।
त्रिपादेतुशिखावर्जं मूलेसर्वंसमाचरेत्॥ ५३ ॥
सर्वान्केशान्समुद्धृत्य छेदयेदंगुलद्वयम् ।
एवमेवतुनारीणां मुंडमुंडायनंस्मृतम् ॥५४॥
नस्त्रियावपनंकार्यन्नचवीरासनंस्मृतम् ।
नचगोष्ठेनिवासोस्ति नगच्छंतीमनुव्रजेत् ॥५५॥
राजावाराजपुत्रोवा ब्राह्मणोवाबहुश्रुतः ।
अकृत्वावपनंतेषां प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥५६॥
केशानांरक्षणार्थंच द्विगुणंव्रतमादिशेत् ।
द्विगुणेतुव्रतेचीर्णे द्विगुणैवतुदक्षिणा॥ ५७॥
द्विगुणंचेन्नदत्तं हि केशांश्चपरिरक्षयेत् ।
पापंनक्षीयतेहंतुर्दाताचनरकंव्रजेत् ॥५८ ॥
अश्रौतस्मार्तविहितं प्रायश्चित्तंवदंतिये ।
तान्धर्मविघ्नकर्तॄंश्च राजादंडेनपीडयेत् ॥५९॥

पाद कृच्छ्र करने में केवल रोमों का, और अर्द्धकृच्छ्र में केवल डाढी का
पौनकृच्छ्र में चोटी के विना सब तथा पूरा कृच्छ्र करने में चोटी सहित सब
का मुंडन पुरुष करावे ॥ ५३॥ स्त्रियों का मुंडन और मुंडवाना यह क-
है कि सब केशों को ऊपर को उभार कर दो २ अंगुल काट दे ॥५४ क्योंकि
यों का मुंडन और वीरासन से बैठना—और गोशालामें वास नहीं है
र चलती गौके पीछे भी स्त्री न चलें ॥ ५५॥ राजा का पुत्र अथवा बहुश्रु
ब्राह्मण इन का मुंडन नहीं करा कर प्रायश्चित्त बता देवे ॥५६॥ केशों को
बचाने की दशा में दूना व्रत करावे और दूना व्रत पूरा करने पर दूनी दी
क्षिणा देवे ॥५७॥ दूनी दक्षिणा दिये विना यदि केशों की रक्षा करे तो मारने
ले का पाप नष्ट नहीं होता और प्रायश्चित्त देने वाला नरकमें जाता है ॥५८॥
और धर्मशास्त्र में जो प्रायश्चित्त नहीं कहा है उस को जो पुरुष बतावें
में विघ्न करने वाले उन पुरुषों को राजा दंड देवे ॥ ५९ ॥

नचेत्तान्पीडयेद्राजा कथंचित्काममोहितः ।
तत्पापंशतधाभूत्वा तमेवपरिसर्पति॥६०॥
प्रायश्चित्तेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम्।
विंशतिंगांवृषंचैकं दद्यात्तेषांचदक्षिणाम् ॥६१॥
कृमिभिर्व्रणसंभूतैर्मक्षिकाभिश्चपातितैः ।
कृच्छ्रार्द्धंसंप्रकुर्वीत शक्त्यादद्याच्चदक्षिणाम् ॥६२॥
प्रायश्चित्तंचकृत्वावै भोजयित्वाद्विजोत्तमान् ।
सुवर्णमाषकंदद्यात्ततःशुद्धिर्विधीयते ॥६३॥
चंडालश्वपचैःस्पृष्टे निशिस्नानंविधीयते ।
नवसेत्तत्ररात्रौतु सद्यःस्नानेनशुद्ध्यति ॥ ६४
अथवसेद्यदारात्रौ अज्ञानादविचक्षणः ।
तदातस्यतुतत्पापं शतधापरिवर्त्तते ॥ ६५ ॥
उद्गच्छंतिहिनक्षत्राण्युपरिष्टाच्चयेग्रहाः ।
संस्पृष्टेरश्मिभिस्तेषामुदकेस्नानमाचरेत् ॥ ६६ ॥

यदि राजा अपने मोहवश होकर उनको दण्ड न दे तो वह पाप सौगुना ...
उस राजा को लगताहै ॥६०॥ फिर प्रायश्चित्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को ...
और बीशगौ और एक बैल उन ब्राह्मणों को दक्षिणा दे ॥६१॥ यदि किसी ...
के शरीर में मक्खी बैठने से घाव में कीड़े पड़जांय तो अर्द्ध कृच्छ्र प्रायश्चि...
रे और यथाशक्ति दक्षिणा भी दे ॥ ६२ ॥ प्रायश्चित्त करके और ब्राह्म...
जिमा कर एकमाशा सोना देने से शुद्धि होती है ॥६३॥ चांडाल श्व...
पच रात में यदि छूलें तो स्नान करना चाहिये । वहां रात में न ...
शीघ्र स्नानकरनेसे शुद्ध होताहै जो॥६४॥मूर्खरात्रि को अज्ञान से बसे ...
तब वह पाप सौ गुना उसको लगता है ॥ ६५ ॥ जो तारे वा ग्रह ...
ऊपर को जाते हैं उन तारों अथवा ग्रहों की किरणों से स्पर्श हो...
जल में स्नान करे ॥ ६६ ॥

कुड्यांतर्जलवल्मीक मूषिकोत्करवर्त्मसु ।
श्मशानेशौचशेषेच नग्राह्याःसप्तमृत्तिकाः ॥६७॥
इष्टापूर्तंतुकर्त्तव्यं ब्राह्मणेनप्रयत्नतः ।
इष्टेनलभतेस्वर्गं पूर्तेमोक्षंसमश्नुते ॥६८॥
वित्तापेक्षंभवेदिष्टं तडागंपूर्तमुच्यते ।
आरामश्चविशेषेण देवद्रोण्यस्तथैवच ॥ ६९ ॥
वापीकूपतडागानि देवतायतनानिच
पतितान्युद्धरेद्यस्तु सपूर्तफलमश्नुते ॥ ७० ॥
शुक्लायामूत्रंगृह्णीया-त्कृष्णायागोःशकृत्तथा ।
ताम्रायाश्चपयोग्राह्यं श्वेतायादधिचोच्यते ॥ ७१ ॥
कपिलायाघृतंग्राह्यं महापातकनाशनम् ।
सर्वतीर्थेनदीतोये कुशैर्द्रव्यंपृथक्पृथक् ॥ ७२ ॥
आहृत्यप्रणवेनैव उत्थाप्यप्रणवेनच ।
प्रणवेनसमालोड्य प्रणवेनतुसंपिबेत् ॥ ७३ ॥

ाल के भीतर की-जल के मध्यकी-बामीकी-मूषों की खोदी-मार्ग की-
शान की और शौच की बची हुई इन सात स्थानों की मट्टी शुद्धि के लिये
य नहीं करनी चाहिये ॥६७॥ इष्ट (यज्ञ आदि) और पूर्त (कूप आदि) ब्रा-
ा को बड़े प्रयत्न से करने चाहिये। इष्ट से स्वर्ग और पूर्त से मोक्ष प्राप्त होता
६८॥ जैसा धन हो वैसा ही यज्ञ होसकता है। और तालाब और विशेष कर
: तथा देव द्रोणी (तीर्थ या प्याऊ) इन्हें पूर्त कहते हैं ॥ ६९ ॥ बावड़ी
आ-तालाब और देवमंदिर-इतने यदि पतित (टूटे फूटे) हों तो इनका जो
र (मरम्मत) कराने वाला है वह भी पूर्त के फल (मोक्ष) को भोगता
७० ॥ सफेद गौका मूत्र-कालीका गोबर-लालका दूध-श्वेतका दही॥७१॥
: कपिला का घी ले तो यह पंचगव्य महापातकों को नष्ट करता है-
तीर्थों में वा नदीके जलमें इन गोमूत्र आदि द्रव्योंको पृथक् २ कुशाओं से
: ॥ प्रणव का जपकर इकट्ठा करै प्रणव पढ़ पढ़के उठावे और प्रणव का
ारण कर के ही पीवे ॥ ७३ ॥

पलाशमध्यमपर्णे भांडेताम्रमयेतथा ।
पिबेत्पुष्करपर्णेवा ताम्रे वामृन्मयेशुभे ॥ ७४ ॥
सूतकेतुसमुत्पन्ने द्वितीयेसमुपस्थिते ।
द्वितीयेनास्तिदोषस्तु प्रथमेनैवशुद्ध्यति ॥ ७५ ॥
जातेनशुद्ध्यतेजातं मृतेनमृतकंतथा ।
गर्भसंस्रवणेमासे त्रीण्यहानिविनिर्दिशेत् ॥ ७६ ॥
रात्रिभिर्मासतुल्याभि-र्गर्भस्रावेविशुद्ध्यति ।
रजस्युपरतेसाध्वी स्नानेनस्त्रीरजस्वला ॥ ७७ ॥
स्वगोत्राद्भ्रश्यतेनारी विवाहात्सप्तमेपदे ।
स्वामिगोत्रेणकर्तव्या-स्तस्याःपिंडोदकक्रियाः ॥ ७८ ॥
द्वेपितुःपिंडदानंस्या-त्पिंडपिंडद्विनामता ।
षण्णांदेयास्त्रयःपिंडा एवंदातानमुह्यति ॥ ७९ ॥
स्वेनभर्त्रासहश्राद्धं माताभुक्त्वासदैवतम् ।

ढाक के बीचके पत्ते में वा तांबे के पात्र में वा कमल के पत्ते में अथवा माटी के पात्रमें उस पंचगव्य को पीवे ॥७४॥ सूतक के होनेपर यदि दूसरा सूतक हो तो दूसरे सूतक का दोष नहीं होता प्रथम के साथ उस की भी शुद्धि होजाती है। जन्म अशौच के संग जन्म अशौच की और मृतक अशौच के संग मृतक की शुद्धि होसकती है। एक महीने के गर्भपात में तीन दिन की अशुद्धि होती है-और जितने मास का गर्भपात हो उतनी ही रात्रियों में शुद्धि होती है ॥७७॥ रज की निवृत्ति हुये पर सुपात्रा रजस्वला स्त्री स्नान से शुद्ध होती है ... विवाह के अनन्तर सप्तपदी होने पर अपने मा बाप के गोत्र से पृथक् होजा... उस के बाद वह मर जावे तो पति के गोत्र से ही उस का पिंड और जलदान ... कर्म करना चाहिये ॥७८॥ पिता को दो पिण्ड दे और प्रत्येक पिण्ड में ... (सपत्नीक) आते हैं छः को तीन पिण्ड देने चाहिये ऐसे करने से ... दाता मोहित नहीं होता ॥ ७९ ॥ माता और पितामही (दादी) और ... तामही (परदादी) ये तीनों अपने पतियों के संग देवता (विश्वेदेव ...

पितामह्यपिस्वेनैव स्वेनैवप्रपितामही ॥ ८० ॥
वर्षेवर्षेतुकुर्वीत मातापित्रोस्तुसत्कृतिम् ।
अदैवंभोजयेच्छ्राद्धं पिंडमेकंतुनिर्वपेत् ॥ ८१ ॥
नित्यंनैमित्तिककाम्यं वृद्धिश्राद्धमथापरम् ।
पार्वणंचेतिविज्ञेयं श्राद्धंपंचविधंबुधैः ॥ ८२ ॥
ग्रहोपरागेसंक्रांती पर्वोत्सवमहालये ।
निर्वपेत्त्रीन्नरःपिण्डा–नेकमेवमृतेहनि ॥ ८३ ॥
अनूढानपृथक्कन्या पिंडेगोत्रेचसूतके ।
पाणिग्रहणमन्त्राभ्यां स्वगोत्राद्भ्रश्यतेततः ॥ ८४ ॥
येनयेनतुवर्णेन याकन्यापरिणीयते ।
तत्समंसूतकंयाति तथापिंडोदकेपिच ॥ ८५ ॥
विवाहेचैवसंवृत्ते चतुर्थेहनिरात्रिषु ।
एकत्वंसाभवेद्भर्तुः पिंडेगोत्रेचसूतके ॥ ८६ ॥
प्रथमेन्हिद्वितीयेवा तृतीयेवाचतुर्थके ।
अस्थिसंचयनंकार्यं बंधुभिर्हितबुद्धिभिः ॥ ८७ ॥

द को भोगती हैं ॥ ८० ॥ (प्रतिवर्ष) माता और पिता का सत्कार (श्राद्ध) देवता (विश्वेदेवा) के बिना श्राद्ध जिमावे और एक पिण्ड दे ॥ ८१ ॥ नित्य नैमित्तिक काम्य-वृद्धि श्राद्ध, और पार्वण यह पांच प्रकार का श्राद्ध बुद्धिमान् जाने। ग्रहण–संक्रान्ति–पर्व–उत्सव–और महालय (कनागत) इन में मनुष्य तीन पिण्ड दे और जिस दिन माता पिता आदि मरे हों उस दिन एक पिण्ड देवे ॥ ८३ ॥ बिना विवाही कन्या पिण्ड-गोत्र-और सूतकमें पृथक् नहीं है और विवाह के मन्त्रों से अपने गोत्र से पृथक् हो जाती है ॥ ८४ ॥ जिस २ वर्ण पुरुष के संग जिस कन्या का विवाह हो उसी वर्ण के समान सूतक और पिण्ड उदक को प्राप्त होती है ॥ ८५ ॥ विवाह हुये पश्चात् यह कन्या चौथे दिन रात्रि में पिण्ड–गोत्र, और सूतक में पति की एकता को प्राप्त होती (अर्थात् चतुर्थी कर्म का होम होने पर कन्या पति के गोत्र में मिल जाती है) ॥ ८६ ॥ पहिले-दूसरे–तीसरे–अथवा चौथे दिन हितकारी बन्धु अस्थिसंचयन करें ॥ ८७ ॥

चतुर्थेपंचमेचैव सप्तमेनवमेतथा ।
अस्थिसंचयनंप्रोक्तं वर्णानामनुपूर्वशः ॥ ८८ ॥
एकादशाहेप्रेतस्य यस्यचोत्सृज्यतेवृषः ।
मुच्यतेप्रेतलोकात्सः स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ८९ ॥
नाभिमात्रेजलस्थित्वा हृदयेनानुचिंतयेत् ।
आगच्छंतुमेपितरो गृह्णंत्वेतान्जलाञ्जलीन् ॥ ९०
हस्तौकृत्वातुसंयुक्तौ पूरयित्वाजलेनच ।
गोशृंगमात्रमुद्धृत्य जलमध्येजलंक्षिपेत् ॥९१॥
आकाशेचक्षिपेद्वारि वारिस्थोदक्षिणामुखः ।
पितॄणांस्थानमाकाशं दक्षिणादिक्तथैवच ॥९२॥
आपोदेवगणाःप्रोक्ता आपःपितृगणास्तथा ।
तस्मादप्सुजलंदेयं पितॄणांहितमिच्छता ॥९३ ॥
दिवासूर्यांशुभिस्तप्तं रात्रौनक्षत्रमारुतैः ।

चौथे-पांचवें-सातवें-नववें-दिन क्रम से ब्राह्मण४-क्षत्रिय ५-वैश्य
-को अस्थि संचयन करना कहा है ॥८८॥ जिस मरे पुरुष के लिये ग्यारहवें
वृषोत्सर्गकिया जाता है वह प्रेत, प्रेतलोक से छूट कर स्वर्ग लोक में पू
प्राप्त होता है ॥ ८९ ॥ नाभि (टूंडी) तक जल में घुसकर और मन
चिंता (स्मरण) करे कि मेरे पितर आवें और ये जल की अंजली ग्र
॥ ९० ॥ दोनों हाथ मिलाकर और जल से भरकर गौके सींग के
हाथ ऊंचा उठा कर जल के बीच में जल को फेंक दे ॥ ९१ ॥ दक्षिण
ओर मुख कर जल में खड़ा हुआ पुरुष आकाश में जल को फेंके क्यों
काश और दक्षिण दिशा ये दोनों पितरों का स्थान हैं ॥ ९२॥ देवता
तरों के गण जल रूप ही हैं उस से जो पितरों के हित की इच्छा
ल में ही जल दे (तर्पण करे) ॥ ९३ ॥ दिनमें सूर्य की किरणों
र रात में नक्षत्र तथा पवन से और संध्या के समय इन दोनों

ध्ययोरप्युभाभ्यांच पवित्रंसर्वदाजलम् ॥९४॥
प्रभावयुक्तमव्याप्त ममेध्येनसदाशुचिः ।
ांडस्थंधरणीस्थंवा पवित्रंसर्वदाजलम् ॥९५॥
वतानांपितृणांच जलेदद्याज्जलांजलीन् ।
यसंस्कृतप्रमीतानां स्थलेदद्याज्जलांजलीन् ॥९६॥
प्राद्धेहवनकालेच दद्यादेकेनपाणिना ।
भाभ्यांतर्पणेदद्या-दितिधर्मोव्यवस्थितः ॥ ९७ ॥

इतियमप्रणीतं धर्मशास्त्रं समाप्तम्

॥ ९४ ॥ अपवित्र वस्तु जिस में न मिली हो ऐसा स्वाभाविक जल
वत्र है पात्र का हो अथवा भूमि पर का हो जल सदा पवित्र है॥९५॥
ौर पितरों को तो जल में जल की अंजली दे और जो संस्कार (यज्ञो
से पूर्व ही मरगये हैं उन को स्थल में दे ॥९६॥
ौर होम के समय एक हाथ से अंजली दे और तर्पण में दोनों हाथों से
की व्यवस्था है ॥ ९७ ॥

इति यमप्रणीते धर्मशास्त्रे भाषार्थः समाप्तः

आपस्तंबस्मृतिप्रारंभः

आपस्तम्बंप्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तविनिर्णयम् ।
दूषितानांहितार्थाय वर्णानामनुपूर्वशः ॥ १ ॥
परेषांपरिवादेषु निवृत्तमृषिसत्तमम् ।
विविक्तदेशआसीन -मात्मविद्यापरायणम् ॥ २ ॥
अनन्यमनसंशांतं तत्वस्थंयोगवित्तमम् ।
आपस्तंबमृषिंसर्वे समेत्यमुनयोब्रुवन्
भगवन्मानवाःसर्वे असन्मार्गेस्थितायदा ।
चरेयुर्धर्मकार्याणि तेषांब्रूहिविनिष्कृतिम् ॥ ४ ॥
यतोऽवश्यंगृहस्थेन गवादिपरिपालनम् ।
कृषिकर्मादिचापत्सु द्विजामन्त्रणमेवच ॥ ५ ॥
बालानांस्तन्यपानादि कार्यंचपरिपालनम् ।
देयंचानाथकेवश्यं विप्रादीनांचभेषजम् ॥ ६ ॥

पापियों के हितके अर्थ आपस्तंब ऋषिके कहे प्रायश्चित्त के विशेष निर्ण[illegible] वर्णोंके लिये यथाक्रम कहते हैं ॥१॥ पराई निंदा से रहित और ऋषियो[illegible] उत्तम एकांत में बैठे हुये ब्रह्मज्ञान में तत्पर ॥ २ ॥ एकाग्र चित्त शांतरूप–[illegible]र तत्वज्ञानी और अत्यंत योगके जानने वाले, आपस्तंब ऋषि से इकट्ठे हो[illegible]र संपूर्ण मुनि बोले ॥ ३ ॥ हे भगवन् ? जब सब मनुष्य अधर्म में स्थित [illegible]ये धर्मके काम करनाचाहते हैं तो उन का प्रायश्चित्त कहिये ॥४॥ जिसमे गृ[illegible]स्थी को अवश्य गौ आदिका पालन आपत्काल में–कृषि आदि कर्म–ब्राह्मणों [illegible]ो भोजन कराना ॥५॥ बालकोंको स्तन्य (दूध) पिलाना आदि–बालकोंकी पा[illegible]लना करना–अनाथों को अवश्य देना–और ब्राह्मणादिकों को औषध [illegible]देना–इतने कर्म अवश्यकरने चाहिये ॥ ६ ॥

एवंकृतेकथंचित्स्या-त्प्रमादोयद्यक'मतः ।
गवादीनांततोस्माकं भगवन्ब्रूहिनिष्कृतिम् ॥ ७
एवमुक्तःक्षणंध्यात्वा प्रणिपातादधोमुखः ।
दृष्ट्वाऋषीनुवाचेद-मापस्तंबःसुनिश्चितम् ॥ ८ ॥
बालानांस्तनपानादि-कार्यंदोपोनविद्यते ।
विपत्तावपिविप्राणा-मामंत्रणचिकित्सने ॥ ९ ॥
गवादीनांप्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तंतृणादिपु ।
केचिदाहुर्नदोपोत्र स्नेहेलवणभेपजे ॥ १० ॥
औपधंलवणंचैव स्नेहंपुष्टयर्थंभोजनम् ।
प्राणिनांप्राणवृत्यर्थं प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ११
अतिरिक्तंनदातव्यं कालेस्वल्पंतुदापयेत् ।
अतिरिक्तेविपन्नानां कृच्छ्रमेवविधीयते ॥ ..
त्र्यहंनिरशनंपादः पादश्चायाचितंत्र्यहम् ।

इस प्रकार करते हुए यदि किसी प्रकार अज्ञान से गौ आदिकों का ...
(अपराध) होजाय तो हे भगवन् ! उस से हमारा प्रायश्चित्त कैसे ... क्षणभर ...
॥७॥ इस प्रकार पूछने पर नमस्कार से नीचे को मुखकर-क्षणभर ...
और ऋषियों को देखकर आपस्तंब मुनि सम्यक्प्रकार निश्चित वचन बो...
बालकों को दूध पानकराने, और ब्राह्मणों के भोजन कराने, तथा ...
करने में यदि विपत्ति (मरण) भी हो जाय तो दोष नहीं है ॥ ९ ॥ गौ...
के तृण आदि से मरने में प्रायश्चित्त की विधि कहते हैं कई आचार्य...
हैं कि स्नेह (तेल आदि) लवण औषध में अर्थात् इन के देने से गौ...
जाय तो दोष नहीं ॥ १० ॥ औषध-लवण-स्नेह-पुष्टि के लिये भोज...
यदि प्राणियों की वृत्ति (जीने) के लिये दिये जायं तो इन से मरने में प्राय...
नहीं है ॥ ११ ॥ इस से भोजन प्रमाण से अधिक न दे किन्तु समय (तुप...
पर थोड़ा दे यदि अधिक देने पर कोई प्राणी मरजाय तो कृच्छ्र करना...
है ॥ १२ ॥ तीन दिन भोजन न करना यह प्रथम पाद-और तीन दि...

सायंत्र्यहंतथापादः पादःप्रातस्तथाऽत्र्यहम् ।
प्रातःसायंदिनार्द्धंच पादोनंसायवर्जितम् ।
प्रातःपादंचरेच्छूद्रः सायंवैश्यस्यदापयेत् ॥ १४ ॥
अयाचितंतुराजन्ये त्रिरात्रंब्राह्मणस्यच ।
पादमेकंचरेद्रोधे द्वौपादौबंधनेचरेत् ॥ १५ ॥
योजनेपादहीनंच चरेत्सर्वंनिपातने ।
घंटाभरणदोषेण गौस्तुयत्रविपद्यते ॥ १६ ॥
चरेदर्द्धंव्रतंतत्र भूषणार्थंकृतंहितत् ।
दमनेवानिरोधेवा संघातेचैवयोजने ॥ १७ ॥
स्तंभशृंखलपाशैश्च मृतेपादोनमाचरेत् ।
पाषाणैर्लगुडैर्वापि शस्त्रेणान्येनवाबलात् ॥ १८ ॥
निपातयंतियेगास्तु-स्तेषांसर्वंविधीयते ।
प्राजापत्यंचरेद्विप्रः पादोनंक्षत्रियस्तथा ॥१९॥

बिना मांगे जो मिले उसे खाना यह दूसरा पाद-तीन दिन तक सायंकाल में खाना यह तीसरा पाद तथा तीन दिन तक प्रात काल में खाना चौथा पाद-कृच्छ्र का होता है ॥१३॥ प्रातःकाल और सायंकाल में तीन २ न व्रत के नियम से खाना उसे दिनार्द्ध-और सायंकाल वाले तीन दिन छो छोड़ करमी दिन के व्रत पादोन-कहते हैं। प्रायश्चित्त के विषय में शूद्र प्रातःपाद-और वैश्य सायंपाद को करे ॥ १४ ॥ क्षत्रिय अयाचित-और ब्राह्मण तीन दिन निराहार उपवास करे-रोकने में जो गाय का मरण होय एक पादव्रत और बांधने में दो पादव्रत करावे ॥ १५ ॥ योजन (गाड़ी आदि में जोड़ने) में पादोन व्रत और निपातन (गिराना या घायल करने) संपूर्ण कृच्छ्र व्रत करावे। गौके गले में घंटा बांधने से यदि गौका मृत्यु होय ॥१६॥ तो दिनार्ध कृच्छ्र व्रत करावे क्योंकि वह भूषण के लिये है-और दमन-वश में करने या रोकने के लिये काष्ठ घंटा (जो लकड़ी गौ के गले में लटका रे है) बांधने से ॥१७॥ और खूटा-सांकल-रस्सी-से गौ मर जाय तो पादोन व्रत करे। पत्थर लट्ठ अथवा अन्य शस्त्रों से वा बल से ॥१८॥ जो पापी पुरुष गौ को मारें तो संपूर्ण कृच्छ्र करे-ब्राह्मण प्राजापत्य-क्षत्रिय पादोन व्रत करे ॥१९॥

सर्वान्केशान्समुद्धृत्य छेदयेदंगुलद्वयम् ॥ ३३ ॥
एवमेवतुनारीणां सिरसोमुंडनंस्मृतम् ।
त्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥
कारुहस्तगतंपण्यं यच्चपात्राद्विनिःसृतम् ।
स्त्रीबालवृद्धचरितं सर्वमेतच्छुचिस्मृतम् ॥ १ ॥
वरण्येपुजलेपुवैगिरौ द्रोण्यांजलंकेशविनिःसृतंच
कचांडालपरिग्रहेपु पीत्वाजलंपञ्चगव्येनशुद्धिः
नदुष्येत्संततधारा वातोद्धूताश्चरेणवः ।
स्त्रियोवृद्धाश्चबालाश्च नदुष्यन्तिकदाचन ॥ ३ ॥
आत्माशय्याचवस्त्रंच जायापत्यंकमण्डलुः ॥
आत्मनःशुचीन्येतानि परेपामशुचीनितु ॥ ४ ॥
अन्यैस्तुखानिताःकूपा—स्तडागानितथैवच ।
एपुस्नात्वाचपीत्वाच पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ५ ॥
उच्छिष्टमशुचित्वेवं यच्चविष्ठानुलेपने ।

मारडालने में शिखा समेत पुरुष का मुण्डन कहा है—और सब
को उभार कर दो दो अंगुल कटादे ॥ ३३ ॥ यह स्त्रियों के
कहा है ॥ इत्यापस्तम्बीये धर्म शास्त्रे प्रथमोऽध्यायभाषा ॥
कारीगर के हाथ का वस्तु—और बेचने योग्य—तथा जो वस्तु
र निकाला हो—स्त्री, बाल वृद्ध इन का आचरण, यह
है ॥ १ ॥ प्रपा (प्याऊ) वन या जल पर्वत का—द्रोणी (
क) का केशों का निचुड़ा हुआ और श्वपाक तथा चांडाल के घर
र पंचगव्य से शुद्धि होती है ॥ २ ॥ निरन्तर पड़ती जल की धा
की उड़ाई धूल तथा स्त्री वृद्ध और बालक इतने वस्तु कभी
शुद्ध) नहीं होते ॥३॥ शरीर शय्या—वस्त्र स्त्री—संतान—पात्र—ये
होते हैं और अन्य मनुष्यों के अन्यके लिये कभी शुद्ध नहीं होते ॥४॥
क्योंके खुदवाये जो कूप अथवा तालाब हैं उनमें स्नान कर या जल पी
से शुद्धि होती है ॥५॥ उच्छिष्ट—अशुद्ध—और मल जिस में लगा हो वे

सर्वंशुद्ध्यतितोयेन तोयमर्केणशुद्ध्यति ॥ ६ ॥
सूर्यरश्मिनिपातेन मारुतस्पर्शनेनच ।
गवांमूत्रपुरीषेण तत्तोयंतेनशुद्ध्यति ॥ ७ ॥
अस्थिचर्मादियुक्तंत खरश्वानोपदूषितम् ।
उद्धरेदुदकंसर्वं शोधनंपरिमार्जनम् ॥ ८ ॥
कूपेमूत्रपुरीषेण यवनेनापिदूषितः ।
श्वशृगालखरोष्ट्रैश्च क्रव्यादैश्चजुगुप्सितः ॥ ९ ॥
उद्धृत्यैवचतत्तोयं सप्तपिंडान्समुद्धरेत् ।
पंचगव्यंमृदापूतं कूपेतच्छोधनंस्मृतम् ॥ १० ॥
वापीकूपतडागानां दूषितानांचशोधनम् ।
कुंभानांशतमुद्धृत्य पंचगव्यंततःक्षिपेत् ॥ ११ ॥
यस्तुकूपात्पिबेत्तोयं ब्राह्मणःशवदूषितात् ।
कथंतत्रविशुद्धिःस्या-दितिमेसंशयोभवेत् ॥ १२ ॥
अक्लिन्नेनचभिन्नेन केवलंशवदूषिते ।

द्ध होते हैं और वह जल किससे शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ सूर्य की किरणों के पड़ने से और पवन के लगने से तथा गौओं के मूत्र और गोबर से जल शुद्ध होता है ॥ ७ ॥ जिस जलके पात्रमें हाड़—चाम पड़ा अथवा गधा कुत्ता इनसे अपवित्र हो उसकूपादि के सब जल को निकाल कर को अच्छे प्रकार साफ करे ॥ ८ ॥ मूत्र—विष्ठा इनके पड़ने से और य-के जल भरने से—कुत्ता, गीदड़ गधा ऊंट और मांस के खाने वालों से भी दूषित (अशुद्ध) होजाता है ॥ ९ ॥ उस कूपके जलको निकाल कर मिट्टीके पिंड (ढेले) कूपमें से निकाले और पञ्चगव्य तथा पवित्र मिट्टी डालदे यह कुएका शोधन कहा है ॥ १० ॥ बावड़ी—कूप—तालाव ये अपवित्र होजायं तो सौ १०० घड़ाजल निकाल कर पंचगव्य डालदे ॥ ११ ॥ जो शव (मुर्दा) से अशुद्ध कुए के जलको पीले तब शुद्धि कैसे हो यदि यह मुझे होय तो ॥ १२ ॥ जो मुर्दा (रुधिर से भीगा नहो) जिसका कोई

पीत्वाकूपादहोरात्रं पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ १३ ॥
त्रिलन्नेभिन्नेशवेचैव तत्रस्थयदितत्पिवेत् ।
शुद्धिश्चांद्रायणंतस्य तप्तकृच्छ्रमथापिवा ॥ १४ ॥

इत्यापस्तम्बीये द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अंत्यजातिरविज्ञातो निवसेद्यस्यवेश्मनि ।
तस्यज्ञात्वातुकालेन द्विजाःकुर्वन्त्यनुग्रहम् ॥ १ ॥
चान्द्रायणंपराकोवा द्विजातीनांविशोधनम् ।
प्राजापत्यंतुशूद्रस्य शेषतदनुसारतः ॥ २ ॥
यैर्भुक्तंतत्रपक्वान्नं कृच्छ्रंतेषांप्रदापयेत् ।
तेषामपिचयैर्भुक्तंकृच्छ्रपादंप्रदापयेत् ॥ ३ ॥
कूपैकपानैर्दुष्टानां स्पर्शसंसर्गदूषणात् ।
तेषामेकोपवासेन पंचगव्येनशोधनम् ॥ ४ ॥
बालोवृद्धस्तथारोगी गर्भिणीवायुपीडिता ।

अंग टूटा हो) ऐसे मुर्दासे कूप अशुद्ध होतो उस कुएके जल को पीकर उपवास करके पंचगव्य से शुद्ध होता है ॥१३॥ यदि रुधिर से भी अंग वाला मुर्दा जिस कूप में पड़ा हो और उसके जलको पीले अथवा तप्त कृच्छ्र से शुद्धि होती है ॥१४॥ बिना जाना अन्त्यजाति जिस मनुष्य के घरमें बसे और फिर यह जान पड़े तो ब्राह्मण क्षत्रिय अंत्यज पर दया करैं अर्थात् दंड नदें ॥१॥ और द्विजाति चांद्रायण अथवा करैं और शूद्र प्राजापत्य और शेष जाति (सूत आदि) अपनी २ जाति प्रायश्चित्त करैं ॥२॥ और जिन्होंने वहां पक्वान्न खाया हो उनको कृच्छ्र चाहिये । और वहां पक्वान्न खाने वालों का जिन्होंने खाया हो उन कृच्छ्रव्रत करावें ॥३॥ नीचों के स्पर्श और समागम के दोष से तथा जल पीने से जो अशुद्ध हुये हैं उन का एक उपवास और पंचगव्य बालक,वृद्ध,रोगी,और वायु की पीड़ा वाली गर्भवती स्त्री इन को

तेषांनक्तंप्रदातव्यं बालानांप्रहरद्वयम् ॥ ५ ॥
अशीतीर्यस्यवर्षाणि बालोवाप्यूनषोडशः ।
प्रायश्चित्तार्द्धमर्हन्ति स्त्रियोव्याधितएवच ॥ ६ ॥
न्यूनैकादशवर्षस्य पञ्चवर्षाधिकस्यच ।
चरेद्गुरुःसुहृद्वापि प्रायश्चित्तंविशोधनम् ॥ ७ ॥
अथैतैःक्रियमाणेषु येषामार्त्तिःप्रदृश्यते ।
शेषसंपादनाच्छुद्धि-र्विपत्तिर्नभवेद्यथा ॥ ८ ॥
क्षुधाव्याधितकायानां प्राणोयेषांविपद्यते ।
येनरक्षन्तिवक्तार-स्तेषांतत्किल्बिषंभवेत् ॥ ९ ॥
पूर्णेपिकालनियमे नशुद्धिर्ब्राह्मणैर्विना ।
अपूर्णेष्वपिकालेषु शोधयन्तिद्विजोत्तमाः ॥ १० ॥
समाप्तमितिनोवाच्यं त्रिषुवर्णेषुकर्हिचित् ।

। और बालकों को दो प्रहर का उपवास ॥ ५ ॥ अस्सी वर्ष का वृद्ध और
ह वर्ष से न्यून अवस्था का बालक-स्त्री और रोगी-ये सब आधे प्रायश्चित्त के
होते हैं ॥६॥ ग्यारह वर्ष से कम और पांच वर्ष से अधिक जिस की अवस्था
है बालक की शुद्धि करने वाले प्रायश्चित्त को गुरु अथवा मित्र करै ॥७॥
ये (बालक) ही अपना प्रायश्चित्त करं और बीच में इन को कष्ट प्र-
होय तो शेष प्रायश्चित्त को गुरु आदि करें अथवा जैसे इन को विप-
दुःख विशेष न हो वैसे ही प्रायश्चित्त को वे करें ॥८॥ प्रायश्चित्त के करने
क्षुधा से पीड़ित होकर जिन का प्राण निकल जाय अर्थात् मर जावे तो जो
धर्म (प्रायश्चित्त आदि) के उपदेश करने वाले हैं जो उन के प्राणों की
नहीं करते अर्थात् शक्ति के अनुसार उन्हें प्रायश्चित्त नहीं बताते तो वह
उन उपदेश करने वालों को ही लगता है ॥९॥ यदि समय का नियम
भी हो जाय तो भी ब्राह्मणों के कहे बिना शुद्धि नहीं होती और काल
नियम पूरा न भी हो तो ब्राह्मण शुद्ध कर देते हैं अर्थात् शुद्धि ब्राह्मणों
वचन में है ॥ १० ॥ क्योंकि प्राणों का संशय उत्पन्न होने पर कर्म का

विप्रसंपादनंकर्म उत्पन्ने प्राणसंशये ॥ ११ ॥
संपादयन्तियेविप्राः स्नानतीर्थफलप्रदम्।
सम्यक्कर्त्तुरपापंस्याद् व्रतीचफलमाप्नुयात् ॥ १२ ॥

इत्यापस्तम्बीये तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चांडालकूपभांडेषु योऽज्ञानात्पिबतेजलम्।
प्रायश्चित्तंकथंतस्य वर्णेवर्णेविधीयते ॥ १ ॥
चरेत्सांतपनंविप्रः प्राजापत्यंतुभूमिपः।
तदर्धंतुचरेद्वैश्यः पादंशूद्रस्यदापयेत् ॥ २ ॥
भुक्तोच्छिष्टस्त्वनाचान्त-श्चांडालैःश्वपचेनवा।
प्रमादात्स्पर्शनंगच्छे-त्तत्रकुर्याद्विशोधनम् ॥ ३ ॥
गायत्र्यष्टसहस्रंतु द्रुपदांवाशतंजपेत्।
जपंस्त्रिरात्रमनश्न-न्पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥

संपादन (पूर्णता) ब्राह्मण ही कर सकता है इस से तीनों वर्ण (क्षत्रिय वैश्य शूद्र) के विषय में कभी भी कोई पुरुष किसी के कर्म को समाप्त (पूरा) हुआ ऐसे न कहे ॥ ११॥ जो ब्राह्मण तीर्थ स्नान के फल को देने वाला किसी अन्य की शुद्धि के लिये किसी अन्य पुरुष से करवाते हैं वहां करने वाला सम्यक् शुद्ध होता और व्रती (जिस को प्रायश्चित्त कराया) वह व्रत के फल को पाता है ॥ १२ ॥

इत्यापस्तम्बीये तृतीयोध्यायः ॥

चांडाल के कुए अथवा पात्र में यदि अज्ञान से जल पीले तो उस का प्रत्येक वर्ण कैसे प्रायश्चित्त करे ॥ १ ॥ ब्राह्मण सांतपन-क्षत्रिय प्राजापत्य वैश्य आधा प्राजापत्य, और शूद्र चौथाई प्राजापत्य व्रत करे ॥ २ ॥ भोजन कर उच्छिष्ट ब्राह्मण आचमन करने से पूर्व यदि चांडाल या श्वपच से छू जाय तो वहां विशोधन (प्रायश्चित्त) करे ॥ ३ ॥ आठ ८००० हजार गायत्री अथवा सौ १०० द्रुपदा मंत्र को जपे और जपता हुआ तीन दिन भोजन न करके पंचगव्य से शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ विष्ठा और मूत्र त्याग किये

चांडालेनयदास्पृष्टो विण्मूत्रेकुरुतेद्विजः ।
प्रायश्चितंत्रिरात्रंस्या-द्भुक्तोच्छिष्टःषडाचरेत् ॥ ५ ॥
पानेमैथुनसंपर्के तथामूत्रपुरीषयोः ।
संपर्कंयदिगच्छेत्तु उदक्याचांत्यजैस्तथा ॥ ६ ॥
एतैरेवयदास्पृष्टः प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ।
भोजनेचत्रिरात्रंस्या-त्पानेतुत्र्यहमेवच ॥ ७ ॥
मैथुनेपादकृच्छ्रंस्या-त्तथामूत्रपुरीषयोः ।
दिनमेकंतथामूत्रे पुरीषेतुदिनत्रयम् ॥ ८ ॥
एकाहंतत्रनिर्दिष्टं-दंतधावनभक्षणे ।
वृक्षारूढेतुचांडाले द्विजस्तत्रैवतिष्ठति ॥ ९ ॥
फलानिभक्षयंस्तस्य कथंशुद्धिंविनिर्दिशेत् ।
ब्राह्मणान्समनुज्ञाप्य सवासाःस्नानमाचरेत् ॥ १० ॥
एकरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
येनकेनचिदुच्छिष्टो ह्यमेध्यंस्पृशतिद्विजः ॥ ११ ॥

द्विज को चांडाल स्पर्श करले तो तीनदिन का उपवास और भोजन के अ-
र उच्छिष्ट को छूले तो छः दिन का उपवास करे ॥ ५ ॥ जलपान-मैथुन
विष्ठा करते हुयेइन कामों पर यदि रजस्वला वाअंत्यज इनका स्पर्शहोजाय ६॥
वा ये छूलें तो प्रायश्चित्त कैसे हो?-रजस्वला आदि का स्पर्श भोजन के समय
तो तीन दिन और जलपान में भी तीन दिन उपवास ।७॥ मैथुन में पाद
कृ वैसेहीमूत्र और विष्ठा करने में क्रम से एकदिन और तीन दिन उपवास
। और दातौन करने में एक दिन उपवास करे। जिस वृक्ष पर चांडाल चढ़ा
यदि उसी वृक्ष पर द्विज चढ़ा हुआ ॥ ९ ॥ फल खारहा हो तो उसकी कैसे
द्धि होनी चाहिये ? ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर वस्त्र सहित स्नान करे॥१०॥ और एक
न उपवास करके पंचगव्य पीने से शुद्ध होजाता है। जिस किसी वस्तु के खाने
उच्छिष्ट द्विज अपवित्र (मल आदि) वस्तु को यदि छूवे ॥ ११ ॥

वैश्येनचयदास्पृष्ट उच्छिष्टेनकदाचन ॥ १३ ॥
स्नानंजप्यंचत्रैकाल्यं दिनस्यांतेविशुध्यति ।
विप्रोविप्रेणसंस्पृष्ट उच्छिष्टेनकदाचन ॥ १४ ॥
स्नानांतेचविशुद्धिःस्या-दापस्तंम्बोब्रवीन्मुनिः ।

इत्यापस्तंबीये पंचमोऽध्यायः ॥

अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि नीलीवस्त्रस्ययोविधिः ।
स्त्रीणांक्रीडार्थसंभोगे शयनीयेनदुष्यति ॥ १ ॥
पालनेविक्रयेचैव तद्वृत्तेरुपजीवने ।
पतितस्तुभवेद्विप्र-स्त्रिभिःकृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति ॥ २ ॥
स्नानंदानंजपोहोमः स्वाध्यायःपितृतर्पणम् ।
पंचयज्ञावृथास्तस्य नीलीवस्त्रस्यधारणात् ॥ ३ ॥
नीलीरक्तंयदावस्त्रं ब्राह्मणोंगेषुधारयेत् ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥
रोमकूपैर्यदागच्छेद्रसो नील्यास्तुकर्हिचित ।

स करके पंचगव्यपीने से शुद्ध होता है। यदि कदाचित् उच्छिष्ट वैश्य छूले ॥१३॥ तो त्रिकाल स्नान और जप करके दिन के अंत में शुद्ध होता है। कदाचित् ब्राह्मण को उच्छिष्ट ब्राह्मण ही छूले ॥१४॥ तो स्नान के द्ध होता है यह आपस्तंब मुनिनेकहा है ॥ ५ ॥

इत्यापस्तम्बीयधर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥

अब आगे नीले वस्त्र की विधि कहते हैं-स्त्रियों के संग क्रीडा भोग में और शय्या पर नीले वस्त्र का दोष नहीं ॥ १ ॥ नील के चने, और जीविका से ब्राह्मण पतित होता है और वह तीन व्रतकृ शुद्ध होता है ॥ २ ॥ जो नीले वस्त्र को धारण करे उस के-स्नान-१, होम-वेद का पाठ-पितरोंका तर्पण और पंचमहायज्ञ करनेवृथा हैं॥३॥ वस्त्र को यदि ब्राह्मण अंगमें धारण करेतो एकदिनरात उपवास : शुद्ध होता है ॥४॥ यदि कदाचित् रोमकूपों के द्वारा नील का रस

पतितस्तुभवेद्विप्रस्त्रिभिः कृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति ॥ ५ ॥
नीलीदारुयदाभिंद्या-द्ब्राह्मणस्यशरीरकम् ।
शोणितंदृश्यतेतत्र द्विजश्चांद्रायणंचरेत् ॥ ६ ॥
नीलीमध्येयदागच्छे-त्प्रमादाद्ब्राह्मणःक्वचित् ।
अहोरात्रोपितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ७ ॥
नीलीरक्तेनवस्त्रेण यदन्नमुपनीयते ।
अभोज्यंतद्द्विजातीनां भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥८॥
भक्षयेद्यश्चनीलींतु प्रमादाद्ब्राह्मणःक्वचित् ।
द्रायणेनशुद्धिःस्या-दापस्तंबोब्रवीन्मुनिः ॥ ९ ॥
यत्यांवापितानीली तावतीवंऽशुचिर्मही ।
माणंद्वादशाब्दानि अतऊर्ध्वंशुचिर्भवेत् ॥ १० ॥

इत्यापस्तंबीयेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

ानंरजस्वलायास्तु चतुर्थेहनिशस्यते ।

ब्राह्मण पतित होजाता है और तीन कृच्छ्रव्रत करने से शुद्ध होता है
नील की लकड़ी ब्राह्मण के शरीर में घाव डारदे और उस घाव
निकल आवे तो चांद्रायण व्रत करे ॥ ६ ॥ यदि अज्ञान से ब्राह्मण
त के बीच में गमन करे तो एक दिनरात उपवास करके पंचगव्य से
है ॥ ७ ॥ नील से रंगे वस्त्र को पहन कर जो अन्न परसा जाता है
द्विजातियों को अभोज्य है और उसे खालें तो चांद्रायणव्रत करें ॥८॥
न से ब्राह्मण कदाचित् नील को खाले तो चांद्रायणव्रत से शुद्धिहो-
ह आपस्तम्ब मुनि ने कहा है ॥९॥ जितनी पृथ्वी में नील बोया
पृथ्वी बारह १२ वर्ष तक अशुद्ध होजाती है बाद शुद्ध होती है ॥१०॥

इत्यापस्तम्बीये षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

ी का स्नान चौथे दिन श्रेष्ठ है रज के निवृत्त होने पर स्त्री संग

अहोरात्रोपितोभूत्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ १

इत्यापस्तम्बीयेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

चांडालेनयदास्पृष्टो द्विजवर्णःकदाचन ।
अनभ्युक्ष्यपिवेत्तोयं प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १ ॥
ब्राह्मणस्तुत्रिरात्रेण पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ।
क्षत्रियस्तुद्विरात्रेण पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ २ ॥
अहोरात्रेणवैश्यस्तु पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ।
चतुर्थस्यतुवर्णस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ ३ ॥
व्रतंनास्तितपोनास्ति होमोनैवत्रविद्यते ।
पञ्चगव्यंनदातव्यं तस्यमंत्रविवर्जनात् ॥ ४ ॥
ख्यापयित्वाद्विजानांतु शूद्रोदानेनशुद्ध्यति ।
ब्राह्मणस्ययदोच्छिष्ट-मश्नात्यज्ञानतोद्विजः ॥ ५ ॥
अहोरात्रंतुगायत्र्या जपंकृत्वाविशुद्ध्यति ।

सो एक दिन रात उपवास करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध होता है ॥ १ ॥

॥ इत्यापस्तम्बीये चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

यदि कदाचित् द्विज वर्ण को चांडाल स्पर्श करले और वह [illegible] किये बिना ही जल पीले तो प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ १ ॥ ब्राह्मण ती[illegible] और क्षत्रिय दो दिन में क्रम से उपवास करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध है और वैश्य एक दिनरात उपवास करके पञ्चगव्य पीनेसे शुद्ध होता है- (शूद्र) का प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ ३ ॥ शूद्र को व्रत नहीं तप नहीं और इसको वेदका अधिकार नहोने से पञ्चगव्य भी नहीं देना [illegible] परन्तु शूद्र जिस अपराध को ब्राह्मणोंको विदित कराकर दानदेने से [illegible] ?-यदि द्विज अज्ञान से ब्राह्मण के उच्छिष्ट (जूठा) को खाले [illegible] दिन रात गायत्री का जप करके अच्छे प्रकार शुद्ध होता है

उच्छिष्टंवैश्यजातीनां भुंक्तेऽज्ञानाद्द्विजोयदि ॥ ६ ॥
शंखपुष्पीपयःपीत्वा त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ।
ब्राह्मण्यासहयोऽश्नीया-दुच्छिष्टंवाकदाचन ॥ ७ ॥
नतत्रदोषंमन्यंते नित्यमेवमनीषिणः ।
उच्छिष्टमितरस्त्रीणा-मश्नीयात्स्पृशतेपिवा ॥८॥
प्राजापत्येनशुद्धिःस्या-द्भगवानंङ्गिराब्रवीत् ।
अंत्यानांभुक्तशेषंतु भक्षयित्वाद्विजातयः॥९॥
चांद्रायणंतदर्धार्धं ब्रह्मक्षत्रविशांविधिः ।
विण्मूत्रभक्षणेविप्र-स्तप्तकृच्छ्रंसमाचरेत् ॥ १० ॥
श्वकाकोच्छिष्टगोभिश्च प्राजापत्यविधिःस्मृतः ।
उच्छिष्टःस्पृशतेविप्रो यदिकश्चिदकामतः ॥ ११ ॥
शुनःकुक्कुटशूद्रांश्च मद्यभांडंतथैवच ।
पक्षिणाधिष्ठितंयच्च यद्यनेध्यंकदाचन ॥ १२ ॥
अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ।

ों के उच्छिष्ट को अज्ञान से द्विज खाले ॥ ६ ॥ तो शंखपुष्पी के जल को र तीन दिन में शुद्ध होता है—जो कदाचित् ब्राह्मणी के संग उच्छिष्ट को अथवा खाले ॥ ७ ॥ उस में विद्वान् मनुष्य कभी भी दोष नहीं मानते—और ; अन्य स्त्रियों के उच्छिष्ट को खाले अथवा छूले ॥८॥ तो प्राजापत्य व्रत ुद्धि होती है यह भगवान् (ऐश्वर्य वाले) अंगिरा ऋषि ने कहा है—च- ाण्डालों के भोजन से बचे अन्न को द्विजाति खालें ॥९॥ तो चांद्रायण -अ- र्द्ध—पादार्द्ध—ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य क्रमशः करें—और विष्ठा वा ूत्रादिकों के भक्षण में ब्राह्मण तप्तकृच्छ्र करे ॥१०॥ कुत्ता—काक और गौओं के उच्छि- ष्ट का भक्षण करने तो प्राजापत्य करना चाहिये—यदि कोई उच्छिष्ट ब्राह्मण ाम से ॥११॥ कुत्ता मुरगा—शूद्र—मदिरा का पात्र—और जिस पर पक्षि बैठा ो अपवित्र वस्तु इन का कदाचित्स्पर्शकरले॥१२॥ तो एकदिनरात उपवा

वैश्येनचयदास्पृष्ट उच्छिष्टेनकदाचन ॥ १३ ॥
स्नानंजप्यंचत्रैकाल्यं दिनस्यांतेविशुध्यति ।
विप्रोविप्रेणसंस्पृष्ट उच्छिष्टेनकदाचन ॥ १४ ॥
स्नानांतेचविशुद्धिःस्या-दापस्तंम्बोऽब्रवीन्मुनिः ।

इत्यापस्तंबीये पंचमोऽध्यायः ॥

अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि नीलीवस्त्रस्ययोविधिः ।
स्त्रीणांक्रीडार्थसंभोगे शयनीयेनदुष्यति ॥ १ ॥
पालनेविक्रयेचैव तद्वृत्तेरुपजीवने ।
पतितस्तुभवेद्विप्र-स्त्रिभिःकृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति ॥ २ ॥
स्नानंदानंजपोहोमः स्वाध्यायःपितृतर्पणम् ।
पंचयज्ञावृथास्तस्य नीलीवस्त्रस्यधारणात् ॥ ३ ॥
नीलीरक्तंयदावस्त्रं ब्राह्मणोंगेषुधारयेत् ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥
रोमकूपैर्यदागच्छेद्रसो नील्यास्तुकर्हिचित् ।

स करके पंचगव्यपीने से शुद्ध होता है। यदि कदाचित् उच्छिष्ट वैश्य ब्रा॰
छूले ॥१३॥ तो त्रिकाल स्नान और जप करके दिन के अंत में शुद्ध होता है॥
कदाचित् ब्राह्मण को उच्छिष्ट ब्राह्मण ही छूले ॥१४॥ तो स्नान के अंत
द्ध होता है यह आपस्तंब मुनिने कहा है ॥ ५ ॥

इत्यापस्तम्बीयधर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥

अब आगे नीले वस्त्र की विधि कहते हैं-स्त्रियों के संग क्रीडा
भोग में और शय्या पर नीले वस्त्र का दोष नहीं ॥ १ ॥ नील के पा
चने,और जीविका से ब्राह्मण पतित होता है और वह तीन व्रतकृ
शुद्ध होता है ॥ २ ॥ जो नीले वस्त्र को धारण करे उस के-स्नान-द
होम-वेद का पाठ-पितरोंका तर्पण और पंचमहायज्ञ करनेवृथा हैं॥३
वस्त्र को यदि ब्राह्मण अंगमें धारण करेतो एकदिनरात उपवास करके
से शुद्ध होता है ॥४॥ यदि कदाचित् रोमकूपों के द्वारा नील का रस अं

पतितस्तुभवेद्विप्रस्त्रिभिः कृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति ॥ ५ ॥
नीलीदारुयदाभिंद्या-द्ब्राह्मणस्यशरीरकम् ।
शोणितंदृश्यतेतत्र द्विजश्चांद्रायणंचरेत् ॥ ६ ॥
नीलीमध्येयदागच्छे-त्प्रमादाद्ब्राह्मणःक्वचित् ।
अहोरात्रोपितोभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ७ ॥
नीलीरक्तेनवस्त्रेण यदन्नमुपनीयते ।
अभोज्यंतद्द्विजातीनां भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥८॥
भक्षयेद्यस्तुनीलींतु प्रमादाद्ब्राह्मणःक्वचित् ।
चांद्रायणेनशुद्धिःस्या-दापस्तंबोब्रवीन्मुनिः ॥ ९ ॥
यावत्यांवापितानीली तावतीवंऽशुचिर्मही ।
प्रमाणंद्वादशाब्दानि अतऊर्ध्वंशुचिर्भवेत् ॥ १० ॥

इत्यापस्तंबीयेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

स्नानंरजस्वलायास्तु चतुर्थेहनिशस्यते ।

य तो ब्राह्मण पतित होजाता है और तीन कृच्छ्रव्रत करने से शुद्ध होता है । यदि नील की लकड़ी ब्राह्मण के शरीर में घाव करदे और उस घाव पर रुधिर निकल आवे तो चांद्रायण व्रत करे ॥ ६ ॥ यदि अज्ञान से ब्राह्मण के खेत के बीच में गमन करे तो एक दिनरात उपवास करके पंचगव्य से होता है ॥ ७ ॥ नील से रंगे वस्त्र को पहन कर जो अन्न परसा जाता है द्विजातियों को अभोज्य है और उसे खालें तो चांद्रायणव्रत करें ॥८॥ अज्ञान से ब्राह्मण कदाचित् नील को खाले तो चांद्रायणव्रत से शुद्धिहो॰ है यह आपस्तम्ब मुनि ने कहा है ॥९॥ जितनी पृथ्वी में नील बोया उतनी पृथ्वी बारह १२ वर्ष तक अशुद्ध होजाती है बाद शुद्ध होती है ॥१०॥

इत्यापस्तम्बीये षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

ला स्त्री का स्नान चौथे दिन श्रेष्ठ है रज के निवृत्त होने पर स्त्री संग

निवृत्तेरजसिगम्यास्त्री नानिवृत्ते कथंचन ।
रोगेणयद्रजःस्त्रीणा-मत्यर्थंहिप्रवर्तते ।
अशुद्धास्तास्तुनैवेह तासांवैकारिकोमदः ॥ २ ॥
साध्वाचारानतावत्स-रजोयावत्प्रवर्त्तते ।
वृत्तेरजसिसाध्वीस्याद् गृहकर्मणिचेंद्रिये ॥ ३ ॥
प्रथमेहनिचांडाली द्वितीयेब्रह्मघातिनी ।
तृतीयेरजकीप्रोक्ता चतुर्थेहनिशुद्ध्यति ॥ ४ ॥
अंत्यजातिश्वपाकेन संस्पृष्टावैरजस्वला ।
अहानितान्यतिक्रम्य प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ॥ ५ ॥
त्रिरात्रमुपवासःस्या-त्पञ्चगव्यंविशोधनम् ।
निशांप्राप्यतुतांयोनिं प्रजाकारांचकामयेत् ॥ ६ ॥
रजस्वलांत्यजैःस्पष्टा शुनाचश्वपचनच ।

के योग्य होती है रज के निवृत्त न होने पर कभी नहीं होती ॥ १ ॥
किसी रोग से स्त्रियों के अत्यन्त रज (रुधिर) निकलता है वे स्त्री
से अशुद्ध नहीं होतीं क्योंकि वह तन का मद विकार ही है ॥ २ ॥ ज
रजोदर्शन रहै तब तक उत्तम आचरण न करै क्योंकि रजोदर्शन की नि
होने पर ही घर के काम और संग करने योग्य होती है ॥ ३ ॥ प्रथ
चांडाली संज्ञा- द्वितीय दिन ब्रह्महत्यारी तृतीय दिन रजकी (
होती और चौथे दिन शुद्ध होती है ॥ ४ ॥ यदि रजस्वला स्त्री
और श्वपाक स्पर्श करलें तो रजोदर्शन के दिनों को बिताकर प्राय
तीन दिन उपवास और पंचगव्य का पीना उसका प्रायश्चित्त है । वि
होने की रात्रि में पुरुष का संग करै ॥ ६ ॥ यदि रजस्वला स्त्री को
कुत्ता- और श्वपच ये स्पर्श करलें तो तीन दिन उपवास के अनन्तर

रात्रोपोषिताभूत्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥७॥
मेहनिषड्रात्रं द्वितीयेतुत्र्यहंस्तथा ।
ीयेचोपवासस्तु–चतुर्थेवन्हिदर्शनात् ॥८॥
वाहेविततेयज्ञे संस्कारेचकृतेतथा ।
स्वलाभवेत्कन्या संस्कारस्तुकथंभवेत् ॥९॥
ापयित्वातदाकन्या–मन्यैर्वस्त्रैरलंकृताम् ।
र्मध्याहुतिंहुत्वा शेषंकर्मसमाचरेत् ॥१०॥
स्वलातुसंस्पृष्टा प्लवकुक्कुटवायसैः ।
त्रिरात्रोपवासेन पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥११॥
स्वलातुयानारी अन्योन्यंस्पृशतेयदि ।
वत्तिष्ठेन्निराहारा स्नात्वाकालेनशुद्ध्यति ॥१२॥
च्छिष्टेनतुसंस्पृष्टा कदाचित्स्त्रीरजस्वला ।
च्छ्रेणशुद्ध्यतेविप्रा शूद्रादानेनशुद्ध्यति ॥१३॥

शुद्ध होती है ॥ ७ ॥ रजस्वला स्त्री रजोदर्शन के प्रथम दिन अस्
त्री का स्पर्श कर लें तो छः दिन, दूसरे दिन छूले तो तीन दिन, ती
र्श करले तो एक दिन, उपवास करे और यदि चौथे दिन छूले
के देखने से शुद्ध होती है ॥ ८ ॥ विवाह में यज्ञ हो रहा हो और कु
भी हो चुका हो बीच में ही यदि वह कन्या रजस्वला हो जाय
स्कार कैसे हो ॥ ९ ॥ उस समय कन्या को स्नान कराकर अन्य वस्त्रों
ाान करे और फिर पवित्र आहुति देकर शेष कर्म को करे ॥ १०
जस्वला को वानर–मुरगा कौआ छूलें तो वह तीन, दिन उपवास करने औ
य पीने से शुद्ध होती है ॥११॥ यदि दो रजस्वला स्त्री परस्पर एक दूस
ें तो शुद्धि के दिन तक उपासी रह कर स्नान से शुद्ध होती
॥ यदि कदाचित् रजस्वला स्त्री को कोई उच्छिष्ट पुरुष स्पर्श करले
ानि को स्त्री दान से शुद्ध होती है।

ब्राह्मणेनसमंतत्र सवासाःस्नानमाचरेत् ॥१४॥
रजस्वलायाःसंस्पर्शः कथंचिज्जायतेशुना।
रजोदिनानांयच्छेपं तदुपोष्यविशुद्ध्यति ॥१५॥
अशक्ताचोपवासेन स्नानंपश्चात्समाचरेत्।
तथाप्यशक्ताचैकेन पंचगव्येनशुद्ध्यति॥ १६।
उच्छिष्टस्तुयदाविप्रः स्पृशेन्मद्यंरजस्वलाम्।
मद्यंस्पृष्ट्वाचरेत्कृच्छ्रं तदर्द्धंतुरजस्वलाम् ॥ १
उदक्यांसूतिकांविप्र उच्छिष्टःस्पृशतेयदि।
कृच्छ्रार्द्धंतुचरेद्विप्रः प्रायश्चित्तंविशोधनम्॥१८॥
चांडालःश्वपचोवापि आत्रेयींस्पृशतेयदि।
शेषान्हाफालकृष्टेन पंचगव्येनशुद्ध्यति॥ १९॥
उदक्याब्राह्मणीशूद्रा-मुदक्यांस्पृशतेयदि॥

यदि एक वृक्ष की शाखा पर चांडाल-रजस्वला और ब्राह्मण
ब्राह्मण एक बार सचैल स्नान करे तब शुद्ध होता है॥ १४
ला स्त्री का कुत्ते से किसी प्रकार स्पर्श होजाय तो र
दिन हों उन में उपवास करने से सम्यक् प्रकार शुद्ध होजाती है
उपवास करनेमें अशक्त हो तो एक उपवास करके स्नान करले
में भी असमर्थ हो तो एक उपवास और पंचगव्य पीने से शु
१६॥ यदि उच्छिष्ट ब्राह्मण मदिरा को अथवा रजस्वला स्त्री को
तो क्रमसे कृच्छ्र और अर्द्ध कृच्छ्र व्रत करे॥ १७॥ यदि
रजस्वला को छूले को सूतिका (जिसके बालक जन्मा हो) हो
कृच्छ्रार्द्ध व्रत करे क्योंकि प्रायश्चित्त ही शुद्ध करने वाला है॥१८
अथवा श्वपच आत्रेयी (रजस्वला) का स्पर्श करलें तोवह रजस्व
दिन के उपवास और पंचगव्य से शुद्ध होती है॥ १९॥ यदि

ोरात्रोपिनाभूत्वा पंचगव्येनशुद्ध्यति॥ २० ॥
ंतु क्षत्रियावैश्या ब्राह्मणीचेद्रजस्वला ।
चैलप्लवनंकृत्वा दिनस्यांतेघृतंपिबेत्॥ २१ ॥
र्णपुतुनारीणां सद्यःस्नानंविधीयते ॥
प्रमेवविशुद्धिःस्या–दापस्तंबोब्रवीन्मुनिः ॥ २२ ॥

इत्यापस्तंबीयेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

म्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं सुरयायन्नलिप्यते ।
राविण्मूत्रसंस्पृष्टं शुद्ध्यतेतापलेखनैः ॥ १ ॥
वाघ्रातानिकांस्यानि शूद्रोच्छिष्टानियानितु ।
शभस्मभिःशुद्ध्यंन्ति श्वकाकोपहतानिच ॥ २ ॥
ौचंसुवर्णनारीणां वायुसूर्येन्दुरश्मिभिः ।
रेतःस्पृष्टंशवस्पृष्टं माविकंतुप्रदुष्यति ॥ ३ ॥
अद्भिर्मृदाचतन्मात्रं प्रक्षाल्यचविशुद्ध्यति ।

रजस्वला शूद्रा का स्पर्श करले तो एक दिन रात्र उपवास करके पंच॰
शुद्ध होती है ॥ २० ॥ इसी प्रकार क्षत्रिया वैश्या ब्राह्मणीये रजस्वला
स्पर एक दूसरी का स्पर्श करले तो सचैल स्नान करके संध्या को घी
२१ ॥ अपने वर्ण की रजस्वला के छूने में तत्काल ही स्नान कहा है
कार शुद्धि होती है यह आपस्तम्ब मुनिने कहा है ॥ २२ ॥

इत्यापस्तम्बीये सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

कांसे के पात्र में मदिरा का स्पर्श न हुआ हो वह भस्म से और जिस से
विष्टा मूत्र का स्पर्श हुआ हो वह तपाने और रिसयाने से शुद्ध होता
१ ॥ गौके सूंघे–शूद्र के उच्छिष्ट तथा कुत्ता काक के छूये जो कांसे के पात्र
दशवार भस्म से मांजने से शुद्ध होते हैं ॥ २ ॥ सोना और स्त्रियों की
वायु सूर्य और चन्द्रमाकी किरणोंसेहोतीहै और वीर्य तथा मुर्दा का स्पर्श
में हुआ हो ऐसा ऊनका वस्त्र दूषित (अशुद्ध] है ॥ ३ ॥ परन्तु जल औ
ट्टी से जितने में वीर्य आदि लगे हों उतने वस्त्र को धोकर सम्यक् प्रकार

शुष्कमन्नमवेद्यस्य पंचरात्रेणजीर्यति ।
अन्नंव्यंजनसंयुक्तं मर्द्धमासेमजीर्यति ।
पयस्तुदधिमासेन षण्मासेनघृतंतथा ॥
संवत्सरेणतैलंतु कोष्ठेजीर्यतिवानवा ।
भुंजतेयेतुशूद्रान्नं मासमेकंनिरंतरम् ॥६॥
इहजन्मनिशूद्रत्वं जायंतेते मृताःशुनि ।
शूद्रान्नंशूद्रसम्पर्कः शूद्रेणैवसहासनम् ॥ ७
शूद्राज्ज्ञानागमःकश्चिच्च ज्वलंतमपिपातयेत्
आहिताग्निस्तुयोविप्र शूद्रान्नान्ननिवर्तते ॥ ८
तथातस्यप्रणश्यन्ति आत्माब्रह्मत्रयोग्नयः ।
शूद्रान्नेनतुभुक्तेन मैथुनंयोधिगच्छति ॥ ९॥
यस्यान्नंतस्यतेपुत्रा अन्नाच्छुक्रस्यसंभवः ।
शूद्रान्नेनोदरस्थेन यःकश्चिन्म्रियतेद्विजः ॥ १०।
संभवेच्छूकरोग्राम्यस्तस्यवाजायतेकुले ।

शुद्धि होती है। अवेद्य [शूद्र] का सूखा अन्न पांच दिन में पचता है
व्यंजन (भाजी लवण) मिला हो वह अन्न आधे महीने में–तथा दूध दही
ने में और घी छः महीने में ॥ ५ ॥ तेल एक वर्ष में पेट में पचता है
नहीं भी और जो शूद्र के अन्न को एक मास पर्य्यन्त निरंतर खाते
वे इस संसार में शूद्र होते हैं और मरण के अनन्तर कुत्ते की योनि में
होते हैं–शूद्र का अन्न तथा संसर्ग शूद्र के संग एक आसन पर बैठना ॥
शूद्र से किसी विद्या का ग्रहण करना ये प्रतापी पुरुष को भी
गिरादेते हैं। जो अग्निहोत्री ब्राह्मण शूद्र के अन्न को नहीं त्यागता ॥ ८।
के आत्मा (जीव) वेद तीनों अग्नि ये सब नष्ट होजाते हैं शूद्र के अन्न को
जो मैथुन (स्त्री का संग) करता है ॥ ९ । जिसका यह अन्न है उसी के
हैं क्योंकि अन्न से ही वीर्य होता है–शूद्र के अन्न के पेट में रहते हुए जो द्वि
रता है ॥ १० ॥ वह गांव का सूकर होता

ब्राह्मणस्यसदाभुंक्ते क्षत्रियस्यतुपर्वणि ॥११॥
वैश्यस्ययज्ञदीक्षायां शूद्रस्यनकदाचन ।
अमृतंब्राह्मणस्यान्नं क्षत्रियस्यपयःस्मृतम् ॥ १२ ॥
वैश्यस्याप्यन्नमेवान्नं शूद्रस्यरुधिरंस्मृतम् ।
वैश्वदेवेनहोमेन देवताभ्यर्चनैर्जपैः ॥ १३ ॥
अमृतंतेनविप्रान्न–मृग्यजुःसामसंस्कृतम् ।
व्यवहारानुरूपेण धर्मेणच्छलवर्जितम् ॥ १४ ॥
क्षत्रियस्यपयस्तेन भूतानांयच्चपालनम् ।
स्वकर्मणाचवृषभै–रनुसृत्यायशक्तितः ॥ १५ ॥
खलयज्ञातिथित्वेन वैश्यान्नंतेनसंस्कृतम् ।
अज्ञानतिमिरांधस्य मद्यपानरतस्यच ॥ १६ ॥
रुधिरंतेनशूद्रान्नं विधिमंत्रविवर्जितम् ।
आमंमांसंमधुघृतं धानाःक्षीरंतथैवच ॥ १७ ॥

ह्मण का अन्न सदा खाना क्षत्रिय का पर्व (अमावस आदि) में ॥ ११ ॥
श्य का यज्ञ की दीक्षा में और शूद्र का कभी न खावे-ब्राह्मण का अन्न अ-
मृत क्षत्रिय का अन्न दूध रूप ॥ १२ ॥ वैश्य का अन्न अन्नही है और शूद्र
का रुधिर रूप है। बलिवैश्व देव होम देवताओं का पूजन जप इन से॥१३॥
ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद के मन्त्रों से संस्कृत (शुद्ध) हुआ ब्राह्मण का
अमृत है। व्यवहार के अनुकूल धर्म करने से छल रहित ॥ १४ ॥ सर्व प्रा-
णियों का पालक क्षत्रिय है इस से क्षत्रिय का अन्न दूध है। अपनी शक्ति
अनुसार अपने कर्म से, पशुओं की रक्षा से ॥१५॥ और खल (खरियान) य-
ज्ञ तथा अतिथि से संस्कार(शुद्धि) को प्राप्त हुए वैश्य का अन्न अन्न ही है। अज्ञान
रूपी अन्धकार से अन्धे और मदिरा के पीने में तत्पर ॥ १६ ॥ विधि और मन्त्र
वर्जित शूद्र का अन्न रुधिर होता है। कच्चा मांस मधु घृत धी भुने जौ और दूध॥१७॥

रेतोमूत्रपुरीषाणां प्रायश्चित्तंकथभवेत् ॥ ५ ॥
पद्मोदुंबरविल्वाश्च कुशाश्चसपलाशका: ।
एतेषामुदकंपीत्वा षड्रात्रेणविशुद्ध्यति ॥ ६ ॥
येप्रत्यवसिताविप्रा प्रव्रज्याग्निजलादिषु ।
अनाशकनिवृत्ताश्च गृहस्थत्वंचिकीर्षिता: ॥ ७ ॥
ारेयुस्त्रीणिकृच्छ्राणि त्रीणिचांद्रायणानिवा ।
ातकर्मादिभि:सर्वं पुन:संस्कारभागिन: ॥
ांसांतपनंकृच्छ्रं चांद्रायणमथापिवा ॥ ८ ॥
ंटतंकाकबलाकयोर्वा अमेध्यलिप्तंचभवेच्छरीरम्
ुखेचप्रविशेच्चसम्यक् स्नानेनलेपोपहतस्यशुद्धि: ९
ंनाभे:करौमुक्त्वा यदंगमुपहन्यते ।

सम्यक् प्रकार शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ और वे भी इतने तथा
क परथा भी एक पल भर घी और पांच पल गोमूत्र जिन में
क न खावे ॥४॥ चाटने पीने और खाने के अयोग्य रेत (वीर्य)
भक्षण में प्रायश्चित्त कैसे हो ॥ ५ ॥ कमल-गूलर-बेल-कुश
जल को छ: दिन तक पीकर सम्यक् प्रकार शुद्ध होता है
पतित हों अथवा संन्यास अग्निहोत्र और तपंण से निवृत्त
जिन ने त्यागा हो तथा जो उपवास व्रत से निवृत्त हों परन्तु
हना चाहते हों ॥ ७ ॥ वे तो तीन कृच्छ्र अथवा तीन
जातकर्म से लेकर उन का पुन: संस्कार होना चाहिये।
वा चांद्रायण करना ॥ ८ ॥ जो शरीर कौवा-बगुला से
ध्य (विष्ठा) से लिप्त हो ॥ ९ ॥ अथवा कान या मुख में
जाय तो जिस में अपवित्र वस्तु लगा हो सम्यक्

पुनर्भूःपुनरेताच रेतोधाकामचारिणी ॥ २९ ॥
आसांप्रथमगर्भेषु भुक्त्वाचांद्रायणंचरेत् ।
मातृघ्नश्चपितृघ्नश्च ब्रह्मघ्नोगुरुतल्पगः ॥ ३० ॥
विशेषाद्भुक्तमेतेषां भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ।
रजकव्याधशैलूष वेणुचर्मोपजीविनः ॥ ३१ ॥
भुक्त्वैषांब्राह्मणश्चान्नं शुद्धिश्चांद्रायणेनतु ।
उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः कदाचिदुपजायते ॥ ३२ ॥
सवर्णेनतदोत्थाय उपस्पृश्यशुचिर्भवेत् ।
उच्छिष्ठोच्छिष्टसंस्पृष्टः शुनाशूद्रेणवाद्विजः ॥ ३३ ॥
उपोष्यरजनीमेकां पंचगव्येनशुद्ध्यति ।
ब्राह्मणस्यसदाकालं शूद्रप्रेषणकारिणः ॥ ३४ ॥
भूमावन्नंप्रदातव्यं यथैवश्वातथैवसः ।

॥पी है। पुनर्भू (दूसरेको जो विवाही हो) पुनरेता (जो एक से वीर्य लेकर दूसरे ... और रेतोधा जो जहां तहां से वीर्य को धारे और व्यभिचारिणी है॥२९॥ इन ...यों के प्रथम गर्भाधान संस्कार में भोजन कर चांद्रायण व्रत करे। माता, पिता, ...ह्म इन को मारने वाला और गुरु की स्त्री के संग भोग करने वाला ॥३०॥ ...का अन्न विशेषकर खानेसे चांद्रायण व्रत करे। रजक (धोबी) व्याध, (कसाई) नट ... और चाम से जीविका करने वाले ३१ ॥ इन के अन्न को खाकर ब्रा- ... की शुद्धि चांद्रायण व्रत से होती है। यदि कदाचित् उच्छिष्ट को उच्छि- ...न का उच्छिष्ट स्पर्श करले ॥३२॥ तो उसी समय उठ कर स्नान आचमन ...से शुद्ध होजाता है और उच्छिष्ट का जिस को स्पर्श हुआ हो उस द्विज ...ता अथवा शूद्र स्पर्श करले ॥ ३३ ॥ तो एक दिन का उपवास करके पं- ...पीने से शुद्ध होता है। ब्राह्मण की प्रेरणा से कार्य (चिट्ठी आदि प- ...) करने वाला जो शूद्र है ॥ ३४ ॥ उस शूद्र को पृथ्वी पर ही अन्न खाने ... चाहिये क्योंकि जैसा कुत्ता वैसा ही वह है वहां अन्न न हो देवे

आत्मासंयमितोयेन तंयमः किंकरिष्यति ॥३॥
नतथासिस्तथातीक्ष्णः सर्पोवादुरधिष्ठितः।
यथाक्रोधोहिजंतूनां शरीरस्थोविनाशकः॥ ४ ॥
क्षमागुणोहिजंतूना मिहामुत्रसुखप्रदः।
एकःक्षमावतांदोषो द्वितीयोनोपपद्यते ॥
यदेनंक्षमयायुक्त-मशक्तं मन्यतेजनः ॥५॥
नशब्दशास्त्राभिरतस्यमोक्षो, नचैवरम्यावसथप्रियस्य
नभोजनाच्छादनतत्परस्य, नलोकचित्तग्रहणेरतस्य॥
एकान्तशीलस्यदृढव्रतस्य, मोक्षोभवेत्प्रीतिनिवर्तकस्य
आध्यात्मयोगैकरतस्यसम्यक्, मोक्षोभवेन्नित्यमहिंसक
स्वाध्याययोगागतमानसस्य ॥७॥
क्रोधयुक्तोयद्यजते यज्जुहोतियदर्चति

को ही यम कहते हैं जिस मनुष्य ने अपने को वश में करलिया उसे यमराज क्या करेगा ? ॥३॥ खड्ग भी ऐसा तीक्ष्ण [तीखा या पैना] नहीं सर्प भी ऐसा (विकराल या भयानक) नहीं जैसा मनुष्यों के शरीर में क्रोध नाश करने वाला है ॥ ४ ॥ क्षमा जो गुण है वह मनुष्य को इस लोक परलोक में सुख देने वाला है। और क्षमा वालों में एक ही दोष है दूसरा नहीं वह यह कि क्षमा वाले पुरुष को मनुष्य असमर्थ मानते हैं।५ शब्द शास्त्र (व्याकरण) ही पढ़ने पढ़ाने वाले पुरुष का, घर के प्रेमी का तथा भोजन वस्त्रों में लगे हुये का और जो जगत् के मनको वश करनेमें तत्पर हैं उनका मोक्ष नहीं हो सकता ।६॥ किंतु एकान्त वासी. दृढ़व्रत वाले प्रीति से पृथक् रहने वाले का मोक्ष होता है । तथा अध्यात्मयोग में तत्पर हुये अहिंसक और स्वाध्याय रूप योग में प्रवृत्त हुये मनवाले का नित्य सम्यक् प्रकार मोक्ष होता है ॥ ७ ॥ क्रोध युक्त मनुष्य जो यज्ञ होम पूजा करता है वह सब

तस्यशुद्धिर्विधातस्या नान्यथा...

विवाहोत्सवयज्ञेषु अंतरामृतसूतके ।
सद्यःशुद्धिर्विजानीया-त्पूर्वसंकल्पितंचतत् ॥ १५ ॥
देवद्रोण्यांविवाहेच यज्ञेपुप्रततेपुच ।
कल्पितंसिद्धमन्नाद्यं नाशौचंमृतसूतके ॥ १६ ॥

इत्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १०

समाप्तेयं स्मृतिः

...हत्या वाला है उसकी शुद्धि चान्द्रायण व्रत के बिना नहीं होती ॥ १४ ॥ ...वाह-उत्सव और यज्ञ में यदि मरण अथवा जन्म सूतक हो जावे तो ... शुद्धि होती है क्योंकि वह पूर्व संकल्प किया है ॥ १५ ॥ देव द्रोणी (... ...प्याऊ) विवाह तथा बड़े यज्ञों में मरण और जन्म के सूतक में बना... अन्न (पक्वान्न आदि) अशुद्ध नहीं होता ॥ १६ ॥

इत्यापस्तम्बीये दशमोऽध्यायः समाप्तः ॥

तिष्ठन्पूर्वंजपंकुर्या-त्सावित्रीमार्कदर्शनात् ।
आसीनःपश्चिमांसंध्यां सम्यगृक्षविभावनात् ॥ ७ ॥
अग्निकार्यंचकुर्वीत मेधावीतदनन्तरम् ।
ततोऽधीयीतवेदंतु वीक्षमाणोगुरोर्मुखम् ॥ ८ ॥
प्रणवंप्राक्प्रयुंजीत व्याहृतीस्तदनंतरम् ।
गायत्रींचानुपूर्व्येण ततोवेदंसमारभेत् ॥ ९ ॥
हस्तौतुसंयतौधार्यौ जानुभ्यामुपरिस्थितौ
गुरोरनुमतंकुर्या-त्पठन्नान्यमतिर्भवेत् ॥ १० ॥
सायंप्रातस्तुभिक्षेत ब्रह्मचारीसदाव्रती ।
निवेद्यगुरवेऽश्नीया-त्प्राङ्मुखोवाग्यतःशुचिः ॥ ११ ॥
सायंप्रातर्द्विजातीना-मशनंश्रुतिनोदितम् ।
नांतराभोजनंकुर्या-दग्निहोत्रीसमाहितः ॥ १२ ॥

हो चुके हों ॥ ६ ॥ खड़ा होकर सूर्य के दर्शन पर्यन्त प्रातः काल में गा[illegible]
का जपकरै और सायंकाल में बैठकर सम्यक् प्रकार नक्षत्रों के उदय पर्यं[illegible]
यत्री का जप करै ॥७॥ तदनन्तर ज्ञानी पुरुष कुछ नित्य होम करै। फिर गु[illegible]
के मुखको देखता हुआ वेद को पढै ॥८॥ प्रथम प्रणव*को पढ़ै तत्पश्चात्
व्याहृति पढ़ै पुनः क्रम से गायत्री को पढ़ै तदनन्तर वेद पढ़ने का आ[illegible]
करे ॥ ९ ॥ सावधानतया दोनों घोंटू के ऊपर हाथ रख कर सदा गु[illegible]
आज्ञा का पालन करना चाहिये और पढ़ते समय अन्यत्र बुद्धि को न [illegible]
॥ १० ॥ व्रत करने वाला ब्रह्मचारी सदैव सायंकाल तथा प्रातःकाल को [illegible]
मांगे और उस भिक्षा को गुरु को निवेदन कर पूर्वाभिमुख होकर भोज[illegible]
॥ ११ ॥ सायंकाल और प्रातःकाल में द्विजातियों को भोजन करना [illegible]
कहा है-इस से सावधान हो अग्निहोत्री बीच में भोजन न करै॥ १२ ॥

---

* ओंभूः । ओंभुवः । ओंस्वः । ओंतत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्यधीम[illegible]
धियोयोनःप्रचोदयात् ॥

रे पुनः भोजन करके भी आचमन करे और
करताहै वह प्रायश्चित्त का भागी होताहै॥१३
ही जल पीता है अथवा भोजन करता
मन करके सम्यक् प्रकार शुद्ध होताहै॥१४॥ पगों
बिना यज्ञोपवीत के बिना और खड़े हुए आच-
॥१५॥ यज्ञोपवीत को धारण करके उत्तराभि
करे सव्ययज्ञोपवीतकोधारेहुये और पूर्वाभिमुख
द्ध होताहै ॥१६॥ जल में बैठा जलमें और स्थल
र करे इस प्रकार बाहिर और अंतः
द्धि को प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ मणि बंध (गट्टे)
से धोवे दो बार मुख को पूंछ कर बारह १२
करे ॥ १८ ॥ स्नान-जलपान-छींक-भोजन-प्र-
य विधि से सम्यक् प्रकार आचमन करने से श्रा-

अनेनविधिनासम्य गाचांतःशुचितामियात् ॥ १९

शूद्रःशुद्ध्यतिहस्तेन वैश्योदंतेपुत्रारिभिः ।
कंठगतैःक्षत्रियस्तु आंचांतःशुचितामियात् ॥ २०॥

आसनारूढपादस्तु कृतावसक्थिकस्तथा ।
आरूढपादुकोवापि नशुद्ध्यतिकदाचन ॥ २१ ॥

उपासीतनचेत्संध्या-मग्निकार्यं नवाकृतम् ।
गायत्र्यष्टसहस्रंतु जपेत्स्नात्वासमाहितः ॥ २२॥

सूतकान्नंनवश्राद्धं मासिकान्नंतथैवच ।
ब्रह्मचारीतुयोश्नीया-त्त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ॥ २३॥

ब्रह्मचारीतुयोगच्छे-त्स्त्रियंकामप्रपीडितः ।
प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्र-मथत्वेकंसुयंत्रितः ॥ २४ ॥

ब्रह्मचारीतुयोश्नीया-न्मधुमांसंकथंचन ।
प्राजापत्यंतुकृत्वासौ मौञ्जीहोमेनशुद्ध्यति ॥ २५

त्मना शुद्ध होता है ॥१९॥ शूद्र होठों परजल का स्पर्श करके वैश्य दांतोंतक स्पर्श से क्षत्रिय कंठ तक जाने वाले आचमन से शुद्ध होता है ॥२०॥ आ[illegible] पर पग रखके और अवसक्थिक(गोड़ों को उठाये हुए) होकरतथा खड़ाऊं चढ़कर आचमन करने से कभी भी शुद्ध नहीं होता ॥ २१ ॥ जिसने संध्या और अग्निहोत्र न किया हो वह स्नान करके सावधानी से आठ हजार गायत्री का जप करे।२२॥सूतक का अन्ननवश्राद्ध और मासिक श्राद्ध का अन्न ब्रह्मचारी खाता है वह तीन दिन रातव्रतकरने से शुद्ध होता है ॥२३॥ कामदेव से सताया हुआ जो ब्रह्मचारी स्त्री का भोग करता है वह [illegible] होकर एक प्राजापत्यकृच्छ्र व्रत करे ॥२४॥ जो ब्रह्मचारी कदाचित् मद्य मांस को खाता है वह प्राजापत्यव्रत करके मौंजी मेखला का होम [illegible] शुद्ध होता है ॥ २५ ॥

त्वाशुद्ध्येदकामतः ॥२७॥
योश्चेकान्नमश्नुते ।
यत्र्यष्टशतंजपेत् ॥२८॥
गीयंवापिबेत्क्वचित् ।
ागव्येनशुद्ध्यति ॥२९॥
भुक्त्वान्नंकेशदूषितम् ।
वगव्येनशुद्ध्यति ॥३०॥
[क्त्वावाभिन्नभाजने ।
वगव्येनशुद्ध्यति ॥३१॥
ब्रह्मचारीकथंचन ।
यत्र्यष्टशतंजपेत् ॥३२॥

हाथ से होम करे और शाकल होम के
मन्त्रों से घृत का होम करे ॥ २६ ॥
र्य को निकाले तो अवकीर्णी के प्राय-
ाकाम आप तो स्नान करके शुद्ध होता
पनी स्वस्थ अवस्था में एक का अन्न खा
ाता है वह आठ सौ८०० गायत्री का जप करे
अथवा पानी पीता है वह एक दिन रात
होता है ॥२८॥ वासा उच्छिष्ट और जिस
र एक दिन रात उपवास कर पंचगव्य पीने
ारतनों में अथवा फूटे वरतन में भोजन कर
य पीने से शुद्ध होता है ॥३१॥ जो ब्रह्मचारी
त् सोवे तो स्नान करके सूर्य का दर्शन करे
ाप करे ॥ ३२ ॥ यह धर्म प्रथम आश्रमवासि

एषधर्मःसमाख्यातः प्रथमाश्रमवासिनाम् ।
एवंसंवर्तमानस्तु प्राप्नोतिपरमांगतिम् ॥३३॥
अतोद्विजःसमावृत्तः सवर्णां स्त्रियमुद्वहेत् ।
कुलेमहतिसम्भूतां लक्षणैस्तुसमन्विताम् ॥३४॥
ब्राह्मेणैवविवाहेन शीलरूपगुणान्विताम् ।
अतःपंचमहायज्ञा–न्कुर्यादहरहर्द्विजः ॥३५॥
नहापयेत्तुतान्शक्तः श्रेयस्कामःकदाचन ।
हानिंतेषांतुकुर्वीत सदामरणजन्मनोः ॥ ३६ ॥
विप्रोदशाहमासीत दानाध्ययनवर्जितः ।
क्षत्रियोद्वादशाहानि वैश्यःपंचदशैवतु ॥ ३७ ॥
शूद्रःशुद्ध्यतिमासेन संवर्त्तवचनंयथा ।
प्रेतायान्नंजलंदेयं स्नात्वातद्गोत्रजैःसह ॥ ३८ ॥

(ब्रह्मचारी) यों का कहा जो इस के अनुसार आचरण करता है वह परम गति को प्राप्त होता है ॥३३॥ इस ब्रह्मचर्य आश्रम से समावर्त्तन संस्कार कर द्विज ऐसी स्त्री के साथ विवाह करे जो अपने वर्ण की हो तथा बड़े कुल में उत्पन्न हुई हो–और शुभ लक्षणों से युक्त हो ॥ ३४ ॥ तथा शीलरूप गुणों से भी युक्त हो उस स्त्री के साथ ब्राह्म (१) विवाह करे और अनन्तर प्रतिदिन द्विज पञ्चमहायज्ञ करे ॥ ३५ ॥ अपना कल्याण चाहने वाला द्विज इन पञ्च महायज्ञों को कदाचित् भी न त्यागे परन्तु जन्म और मरण सूतक में उनको कभी न करे ॥३६॥ उक्त सूतकों में दान और वेद पढ़ने से रहित दश दिन तक ब्राह्मण क्षत्रिय बारह दिन तक वैश्य पंद्रह दिन तक रहै और संवर्त्त ऋषि के वचन के अनुसार शूद्र एक महीने में शुद्ध होता है संपूर्ण सगोत्री मिल कर प्रेत को अन्न और जल दें ॥ ३८ ॥

---

(१) उत्तम वस्त्र तथा भूषण पहनाकर विद्वान् और सुशील वर को बुलाकर कन्या को देना–यह ब्राह्म विवाह कहलाता है ॥

भूताभयप्रदानेन सर्वान्कामानवाप्नुयात् ।
दीर्घमायुश्चलभते सुखीचैवसदाभवेत् ॥ ५३ ॥
धान्योदकप्रदायीच सर्पिर्दःसुखमेधते ।
अलंकृतस्त्वलंकारं दाताप्राप्नोतितत्फलम् ॥ ५४ ॥
फलमूलानिविप्राय शाकानिविविधानिच ।
सुरभीणिचपुष्पाणि दत्वाप्राज्ञस्तुजायते ॥ ५५ ॥
तांबूलंचैवयोदद्याद्-ब्राह्मणेभ्योविचक्षणः ।
मेधावीसुभगःप्राज्ञो दर्शनीयश्चजायते ॥५६॥
पादुकोपानहौछत्रं शयनान्यासनानिच ।
विविधानिचयानानि दत्वाद्रव्यपतिर्भवेत् ॥५७॥
दद्याद्यःशिशिरेवन्हिं वहुकाष्ठंप्रयत्नतः ।
कायाग्निदीप्तिप्राज्ञत्वं रूपंसौभाग्यमाप्नुयात् ॥५८॥
औषधंस्नेहमाहारं रोगिणोरोगशान्तये ।
दत्वास्याद्रोगरहितः सुखीदीर्घायुरेवच ॥५९॥

[ण]ियों को अभयदान देने से संपूर्ण कामना प्राप्त होतीं बड़ी अवस्था और सदा [सुख] मिलते हैं॥५३॥ अन्न जल और घी का दान देने वाला सुख भोगता है और [आभू]षण वाला हो वह भूषण को देकर वह फल को प्राप्त होता है ॥ ५४ ॥ [फल मू]ल नाना प्रकार के शाक (भाजी) और सुगन्ध वाले फल इन्हें ब्राह्मण को [देकर] पंडित होता है॥५५॥जो विद्वान् पुरुष ब्राह्मणों को पान देता है वह बुद्धिमान् [सुन्दर] तथा दर्शनीय और भाग्यशाली होता है॥५६॥खड़ाऊं-जूता-छाता-शय्या [आस]न और नाना प्रकार के यान (सवारी) इनको देकर द्रव्यपति (धनी) होता [है]॥५७॥ जो शिशिर(जाड़े)में बहुत सी लकड़ी सहित अग्नियत्न से देता है वह [जठ]राग्नि की दीप्ति वाला, पंडित. रूपवान् और भाग्यवान् होता है ॥५८॥ [औ]षध स्नेह [घी] मिला भोजन इन को रोगियों के रोग दूर करने के लिये [देक]र रोग रहित तथा सुखी और बड़ी अवस्था वाला होता है ॥ ५९ ॥ औ

इन्धनानिचयोदद्या—द्विप्रेभ्यःशिशिरागमे ।
नित्यंजयतिसंग्रामे श्रियायुक्तस्तुदीव्यते ॥६०॥
अलंकृत्यतुयःकन्यां वरायसदृशायवै ।
ब्राह्मेणतुविवाहेन दद्यात्तांतुसुपूजिताम् ॥६१॥
सकन्यायाःप्रदानेन श्रेयोविन्दतिपुष्कलम् ।
साधुवादंसर्वैसद्भिः कीर्त्तिंप्राप्नोतिपुष्कलाम् ॥६२॥
ज्योतिष्टोमातिरात्राणां शतंशतगुणीकृतम् ।
प्राप्नोतिपुरुषोदत्वा होममन्त्रैश्चसंस्कृताम् ॥६३॥
वांदत्त्वातुपिताकन्यां भूषणाच्छादनाशनैः ।
पूजयन्स्वर्गमाप्नोति नित्यमुत्सववृद्धिषु ॥६४॥
रोमकालेतुसम्प्राप्ते सोमोभुंक्तेऽथकन्यकाम् ।
रजोदृष्ट्वातुगन्धर्वा कुचौदृष्ट्वातुपावकः ॥६५॥
अष्टवर्षाभवेद्गौरी नववर्षातुरोहिणी ।

पुरुष जाड़े के दिनों में ब्राह्मणों को इन्धन देता है वह युद्ध में शत्रु जीतता और लक्ष्मी युक्त होकर देदीप्यमान होता है ॥६०॥ जो सवर्ण कन्या को भूषण और वस्त्र पहना कर कन्या के समान वर को ब्राह्म विधि से सत्कार करके देता है ॥ ६१॥ वह कन्याके देनेसे महान् श्रे... को प्राप्त होता है और सज्जनों में साधुवाद [भलाई] तथा बड़ी की... प्राप्त होता है ॥६२॥ होम के मन्त्रों से संस्कार को प्राप्त हुई कन्या को... दश सहस्र ज्योतिष्टोम और अतिरात्र यज्ञ के फल को प्राप्त होता है भूषण और वस्त्रों से कन्या को उत्सव तथा वृद्धि (पुत्र जन्म) में नित्य... करता हुआ पिता स्वर्ग को प्राप्त होता है ॥६४॥ रोम फूटने के समय क... चन्द्रमा रजोदर्शनके समय गन्धर्व और कुचाओंको देखकर अग्नि भोगता... रोम रज और कुच बाहर निकले लेने इष्ट नहीं किन्तु भीतर शरीर में अंकुरित हुए लेने हैं क्योंकि रजोदर्शन से पहिले विवाह न हो तो ... यह सब धर्मशास्त्रोंकी एकसम्मति है) ॥६५॥ आठ वर्ष की कन्या गौरी न...

ावर्पाभवेत्कन्या अतऊर्द्ध्वंरजस्वला ॥ ६६ ॥
ाताचैवपिताचैव ज्येष्ठोभ्रातातथैवच ।
यस्तेनरकंयान्ति दृष्ट्वाकन्यांरजस्वलाम् ॥६७॥
स्माद्विवाहयेत्कन्यां यावन्नर्तुमतीभवेत् ।
वेवाहोह्यष्टवर्षायाः कन्यायास्तुप्रशस्यते ॥ ६८ ॥
ालामलकदाताच स्नानाभ्यंगप्रदायकः ।
रः प्रहृष्टश्चासीत सुभगश्चोपजायते ॥ ६९ ॥
अनड्वाहौतुयोदद्यात् द्विजेधौरेणसंयुतौ ।
अलंकृत्ययथाशक्त्या धूर्वहौशुभलक्षणौ ॥ ७० ॥
सर्वपापविशुद्धात्मा सर्वकामसमन्वितः ।
वर्षाणिवसतेस्वर्गे रोमसंख्याप्रमाणतः ॥ ७१ ॥
धेनुंचयोद्विजेदद्याद्‌ लंकृत्यपयस्विनीम् ।
कांस्यवस्त्रादिभिर्युक्तां स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ७२ ॥
भूमिंसस्यवतींश्रेष्ठां ब्राह्मणेवेदपारगे ।

रजस्वला होती है ॥ ६६ ॥
ाहिणी दश वर्ष की कन्या और इस के पश्चात् रजस्वला कन्या को देखकर
पिता और जेठा भाई ये तीनों रजस्वला कन्या को देखकर
में जाते हैं ॥ ६७ ॥ इस लिये जब तक रजस्वला न हो तब तक
कन्या का विवाह करदे और आठ वर्ष की कन्या का विवाह श्रेष्ठ
है ॥६८॥ तेल आंवले स्नान का जल और उबटना इनको जो देता है वह
ाय सदा आनंद में मग्न रहता है और भाग्यवान् होता है ॥ ६९ ॥ जो
व जोतने के योग्य अच्छे लक्षण वाले दो बैल यथाशक्ति सजाकर
ासहित ब्राह्मण को देता है ॥ ७० ॥ सब पापों से शुद्ध होकर सर्व कामना
हुत वह पुरुष उतने वर्ष तक स्वर्ग में बसता है जितने रोम बैलों के देहपर
ाे ॥ ७१ ॥ जो दूध देती तथा कांसे का पात्र (लोटा) और वस्त्र सहित गौ
ा भूषित (सजा करके) ब्राह्मण को देता है वह स्वर्गलोक में महत्व को प्रा-
होता है ॥ ७२॥ अन्न जिस में खड़ा हो ऐसी श्रेष्ठ पृथ्वी और धार्मी

गांदत्वाद्धं प्रसूतांच स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ७३ ॥
यावंतिसस्यमूलानि गोरोमाणिचसर्वशः ।
नरस्तावंतिवर्षाणि स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ७४॥
योददातिशफैरौप्यैर्हैमशृङ्गीमरोगिणीम्।
सवत्सांवाससावीतां सुशीलांगांपयस्विनीम् ॥७५
तस्यांयावन्तिरोमाणि सवत्सायांदिवंगतः ।
तावंतिवत्सरांतानि सनरोब्रह्मणोंतिके ॥ ७६
योददातिबलीवर्दं मुक्तेनविधिनाशुभम् ।
अव्यंगंगोप्रदानेन दत्तंदशगुणंफलम् ॥ ७७ ॥
अग्नेरपत्यंप्रथमंसुवर्णं भूर्वै... सू... च
लोकास्त्रयस्तेनभवन्तिदत्ताः,यःकांचनंगांचमहींचदद्यात्
सर्वेषामेवदानाना–मेकजन्मानुगंफलम् ।
हाटकक्षितिगौरीणां सप्तजन्मानुगंफलम् ॥ ७९ ॥

व्यानी गौ इन्हें वेदज्ञ ब्राह्मणको देकर स्वर्गलोकमें पूजाको प्राप्त होता है
जितनी अन्न के पौदों की जड़ हैं और जितने गौ के रोम हैं उतने व..
मनुष्य स्वर्ग में पूजित होता है ॥७४॥ चांदी के खुरों वाली सोने के सींग वा
जिस के बछड़ा अथवा बछिया हो, जिसे कोई रोग न हो जो वस्त्र से
नगा जो सुशीला हो और दूध देती हो ऐसी गौ को जो देता है।
उस गौ और बछड़े के जितने रोम हैं उतने ही वर्षों के अन्त तक
ब्रह्मा के समीप ब्रह्मलोक में रहता है ॥७६॥ पूर्वोक्त विधि से जो सावय
मनुष्य बैलको देता है वह गौ के दान से दश गुणे फल को प्राप्त होता
सुवर्ण प्रथम पुत्र अग्नि का है पृथ्वी वैष्णवी (विष्णु की पुत्री) है गौ
की पुत्री हैं इस से जो मनुष्य सोना गौ–पृथ्वी इन को देता है वह ति..
को ही मानो देता है ॥ ७८ ॥ सम्पूर्ण दानों का फल अगले एक ही
जन्मता और सुवर्णपृथ्वी गौ इन का फल सात जन्म तक मिलता है।

अन्नदस्तुभवेन्नित्यं सुतृप्तोनिभृतःसदा ।
अंबुदश्चसुखीनित्यं सर्वकर्मसमन्वितः ॥ ८० ॥
सर्वेषामेवदानाना-मन्नदानंपरंस्मृतम् ।
सर्वेषामेवजंतूनां यतस्तज्जीवितंपरम् ॥ ८१ ॥
यस्मादन्नात्प्रजाःसर्वाः कल्पेकल्पेसृजत्प्रभुः ।
तस्मादन्नात्परंदानं विद्यतेनहिकिंचन ॥ ८२ ॥
अन्नाद्भूतानिजायन्ते जीवन्तिचनसंशयः ।
मृत्तिकागोशकृद्दर्भा-नुपवीतंतथोत्तरम् ॥ ८३ ॥
दत्वागुणाढ्यविप्राय कुलेमहतिजायते ।
मुखवासन्तुयोदद्या-द्दन्तधावनमेवच ॥ ८४ ॥
शुचिगन्धसमायुक्तो अवाग्दुष्टस्सदाभवेत् ।
पादशौचंतुयोदद्या-त्तथाचगुदलिंगयोः ॥ ८५ ॥
यःप्रयच्छतिविप्राय शुद्धबुद्धिःसदाभवेत् ।
औषधंपथ्यमाहारं स्नेहाभ्यंगंप्रतिश्रयम् ॥ ८६ ॥

का दाता नित्य तृप्त तथा पुष्ट रहता है और जल का दाता सुखी तथा सब
ों से युक्त रहता है ॥८०॥ सब दानों में अन्न का दान उत्तम कहा है क्यों
सब प्राणियों का अन्न ही जीवन है ॥ ८१ ॥ जिस अन्न से ही ब्रह्मा ने
प २ में संपूर्ण प्रजा रची इस लिये अन्नसे उत्तम और कोई दान नहीं है
॥ अन्न से प्राणी पैदा होते हैं तथा अन्न से ही जीते हैं इसमें संशय नहीं
ी गोबर कुशा और उत्तम यज्ञोपवीत ॥ ८३ ॥ इनको अनेक गुण वाले
ण को देकर बड़े कुल में उत्पन्न होता है । जो मनुष्य ब्राह्मण को मुख
(पान या सुपारी वा इलायची) अथवा दातौन देता है ॥ ८४ ॥ वही
वाला होता है और कभी भी वाग्दुष्ट (तोतला या गूंगा) नहीं होता जो
प पैर गुदा लिंग इनके शौच के लिये जल ॥८५॥ ब्राह्मण को देता है वह
ा शुद्ध बुद्धि होता है । जो औषध-पथ्य भोजन तेल का उबटना और
ने को स्थान ॥ ८६ ॥

यःप्रयच्छतिरोगिभ्यः सभवेद्व्याधिवर्जितः ।
गुडमिक्षुरसंचैव लवणंव्यंजनानिच ॥ ८७ ॥
सुरभीणिचपानानि दत्वात्यंतंसुखीभवेत् ।
दानैश्चविविधैःसम्यक् फलमेतदुदाहृतम् ॥ ८८ ।
विद्यादानेनसुमति-र्ब्रह्मलोकेमहीयते ।
अन्योन्यान्नप्रदाविप्रा अन्योन्यप्रतिपूजकाः ॥ ८९ ।
अन्योन्यंप्रतिगृह्णन्ति तारयंतितरंतिच ।
दानान्येतानिदेयानि तथान्यानिविशेषतः ॥ ९० ।
दानार्द्धंकृपणार्थिभ्यः श्रेयस्कामेनधीमता ।
ब्रह्मचारियतिभ्यस्तु वपनंयस्तुकारयेत ॥ ९१ ॥
नखकर्मादिकंचैव चक्षुष्मान्जायतेनरः ।
देवागारेद्विजातीनां दीपंदद्याच्चतुष्पथे ॥ ९२ ॥
मेधावीज्ञानसंपन्न-श्चक्षुष्मान्ससदाभवेत् ।

ये वस्तु रोगियों को देता है वह व्याधिसे रहित होताहै। गुड़ गन्नाकार
व्यंजन दही आदि ॥८७॥ और सुगंध युक्त पीनेके वस्तु इन को देकर अत्य
रहता है। यहनाना प्रकार के दानोंका फल कहा है ॥८८॥ विद्याके दान
बुद्धि वाला पुरुष ब्रह्मलोक में पूजा को प्राप्त होता है। परस्पर अन्न
और परस्पर सत्कार करने वाले ॥८९॥ तथा परस्पर दान लेने वाले
अन्य को पार करते और आप भी पार होते हैं, ये [पूर्वोक्त] दान अ
भी दान विशेष कर ॥ ९० ॥ दीन अभ्यागतों को कल्याण का अभिला
दानार्द्ध [शास्त्रोक्त से आधा] दे-ब्रह्मचारी और संन्यासी का जो मुं
वाता है ॥९१॥ अथवा नख कटवाता है वह मनुष्य नेत्रों वाला होता
ता और ब्राह्मणों के मंदिर में तथा चतुष्पथ [चौराहा] में जो दीप
है । ९२ ॥ वह सदा बुद्धिमान् तथा ज्ञानी और नेत्रों वाला होता

नित्येनैमित्तिकेकाम्ये तिलान्दत्वास्वशक्तितः ॥९३॥
प्रजावान्पशुमांश्चैव धनवान्जायतेनरः ।
योयदाभ्यर्थितोविप्रै-र्यद्यत्संप्रतिपादयेत् ॥ ९४ ॥
तृणकाष्ठादिकंचैव गोप्रदानसमंभवेत् ।
नवैशयीततमसा नयज्ञेनानृतंवदेत् ॥ ९५ ॥
अपवदेन्नविप्रस्य नदानंपरिकीर्तयेत् ।
यज्ञोनृतेनक्षरति तपःक्षरतिविस्मयात् ॥ ९६ ॥
आयुर्विप्रापवादेन दानंचपरिकीर्तनात् ।
चत्वार्येतानिकर्माणि संध्यायांवर्जियेद्बुधः ॥ ९७॥
आहारंमैथुनंनिद्रां तथासंपाठमेवच ।
आहाराज्जायतेव्याधि-र्गर्भोवैरौद्रमैथुनात् ॥ ९८ ॥
निद्रातोजायतेऽलक्ष्मी संपाठादायुषःक्षयः ।
ऋतुमतींतुयोभार्यां संनिधौनोपगच्छति ॥ ९९ ॥
तस्यारजसितन्मासं पितरस्तस्यशेरते ।
कृत्वागृह्याणिकर्माणि स्वभार्यापोषणेरतः ॥ १०० ॥

मित्तिक और काम्य कर्म में शक्ति के अनुसार तिलों को देकर ॥ ९३ ॥ मनु- प्रजा-पशु और धनवाला होता है-जो पुरुष ब्राह्मणों के मांगने से जि- समय जो २ देदे ॥९४॥ तृण वा काठ आदि यह सब गोदान के तुल्य है। अंध- र में न सोवे और यज्ञ में झूठ न बोले ॥९५॥ ब्राह्मण की निंदा न करे और पने दिये को प्रसिद्ध करे झूठसे यज्ञ और अभिमान से तप नष्ट होते हैं॥९६॥ब्राह्मण- की निन्दासे अवस्था और कथन से दान नष्ट होते हैं-चार कार्मोंको ज्ञानवान् ध्यासमय न करे।९७॥ भोजन-मैथुन-सोना और पढ़ना भोजन से व्याधि मैथुन रौद्र [भयंकर गर्भ] ॥९८॥ सोने से दरिद्रता और पढ़ने से अवस्था का नाश होता है। जो ऋतुमती स्त्री के समीप नहीं जाता ॥ ९९ ॥ उस मनुष्य के पि- तर उस महीने में उस स्त्री के रज में सोते हैं। जो मनुष्य गृहस्थ के कर्म करके अपनी स्त्री के पोषण में तत्पर हैं ॥ १०० ॥

ऋतुकालाभिगामीच प्राप्नोतिपरमांगतिम् ।
उषित्वैवंगृहेविप्रो द्वितीयादाश्रमात्परः ॥ १०१ ॥
वलीपलितसंयुक्त—स्तृतीयंतुसमाश्रयेत् ।
वनंगच्छेत्ततःप्राज्ञः सभार्यस्त्वेकएववा ॥ १०२ ॥
गृहीत्वाचाग्निहोत्रंच होमंतत्रनहापयेत् ।
कृत्वाचैवपुरोडाशं वन्यैर्मेध्यैर्यथाविधि ॥ १०३ ॥
भिक्षांचभिक्षवेदद्या—च्छाकमूलफलादिभिः ।
कुर्याद्ध्ययनंनित्य=मग्निहोत्रपरायणः ॥ १०४ ॥
इष्टिंपार्वायणीयांतु प्रकुर्यात्प्रतिपर्वसु ।
उषित्वैवंवनेविप्रो विधिज्ञःसर्वकर्मसु ॥ १०५ ॥
चतुर्थमाश्रमंगच्छे-ज्जितक्रोधोजितेन्द्रियः ।
अग्निमात्मनिसंस्थाप्य द्विजःप्रव्रजितोभवेत् ॥ १०६ ॥
वेदाभ्यासरतोनित्य-मात्मविद्यापरायणः ।

और ऋतुकाल में स्त्री संग का कर्त्ता परमगति को प्राप्त होता है॥ इसप्रकार द्वि
में तत्पर ब्राह्मण घर में रहकर॥१०१॥ वली और पलित (श्वेत केश) से यु
हुआ तीसरे आश्रम (वानप्रस्थ) का आश्रय ले पुनः एकाकी अथवा स्त्री
वन में चला जाय॥ १०२॥ पुनः वन में अग्निहोत्र को ग्रहण करके।
न त्यागे तथा वन के कंद मूलों से पुरोडाश को विधि से बनाकर॥१०
मूल फलादिक को भिक्षु को भिक्षा दे—और अग्निहोत्र में तत्पर हो।
वेद का अध्ययन करे॥१०४॥ सब पर्वों में पर्व (अमावास्या आदि) में
करि करे संपूर्ण कर्मों को विधि जानने वाला ब्राह्मण इसप्रकार वन में
॥१०५॥ क्रोध और इन्द्रियों को जीत कर चौथे आश्रम (संन्यास) को
में अग्नि को रखकर संन्यासी हो जाय॥ १०६॥ वेद के अभ्यास में

अष्टौभिक्षाःसमादाय समुनिःसप्तपंचवा ॥१०७॥
अद्भिःप्रक्षाल्यताःसर्वा भुंजीतसुसमाहितः ।
अरण्येनिर्जनेतत्र पुनरासीतमुक्तवान् ॥ १०८ ॥
एकाकीचिंतयेन्नित्यं मनोवाक्कायकर्मभिः ।
मृत्युंचनाभिनंदेत जीवितंवाकथंचन ॥ १०९ ॥
कालमेवप्रतीक्षेत यावदायुः समाप्यते ।
संसेव्यचाश्रमान्सर्वान् जितक्रोधोजितेन्द्रियः ॥११०॥
ब्रह्मलोकमवाप्नोति वेदशास्त्रार्थविद्द्विजः ।
आश्रमेषुचसर्वेषु प्रोक्तोयंप्राश्निकोविधिः ॥१११॥
अतःपरंप्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तविधिंशुभम् ।
ब्रह्मघ्नश्चसुरापश्च स्तेयीचगुरुतल्पगः ॥ ११२ ॥
महापातकिनस्त्वेते तत्संयोगीचपंचमः ।
ब्रह्मघ्नश्चवनंगच्छे-द्वल्कवासाजटीध्वजी ॥११३॥

ग में तत्पर और विचारवान् हो वह संन्यासी आठ वा सात वा पांच भिक्षा ग्रहण करके ॥ १०७ ॥ उन सब भिक्षाओं को जल से धोकर साव- से भोजन करे और फिर जहां कोई जन न हो ऐसे वन में मुक्ति भिलाषी संन्यासी बैठे ॥ १०८ ॥ मन वाणी देह और कर्म से एकाकी ब्रह्म का विचार करे मरने और जीने की कभी भी प्रशंसा न करै ॥ १०९॥ कार जब तक अवस्था समाप्त हो काल की प्रतीक्षा करै क्रोध और इ- को जीतकर चारों आश्रमों का सेवन करके ॥ ११० ॥ वेद और के अर्थ का जानने वाला ब्राह्मण ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है- रों आश्रमों के प्रश्न [जो तुमने पूछा था) की विधि कही ॥ १११ ॥ आगे प्रायश्चित्त के उत्तम विधान को कहते हैं ब्रह्महत्यारा पीने वाला और गुरु की शय्या पर गमन करने वाला ॥ ११२ ॥ ये और पांचवां इनका संगी महापातकी होते हैं ब्रह्महत्यारा वन में चला र वल्कल जटा तथा सिरकटे पुरुष की तस्वीर ध्वजा में छपीहो उन हे ॥ ११३॥

वन्यान्येवफलान्यश्नन् सर्वकामविवर्जितः।
भिक्षार्थीविचरेद्ग्रामं वन्यैर्यदिनजीवति॥११
चातुर्वर्ण्यैचरेद्भैक्ष्यं बद्धांगीसंयतःसदा।
भिक्षास्त्वेवंसमादाय वनंगच्छेत्ततःपुनः॥ ११६
वनवासीसपापःस्या–त्सदाकालमतंद्रितः।
ख्यापयन्मुच्यतेपापा–द्ब्रह्महापापकृत्तमः॥ ११
अनेनतुविधानेन द्वादशाब्दव्रतंचरेत्।
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वभूतहितेरतः॥ ११७॥
ब्रह्महत्यापनोदाय ततोमुच्येतकिल्विषात्।
अतःपरंसुरापस्य निष्कृतिंश्रोतुमर्हथ॥ ११८॥
गौडीमाध्वीचपैष्टीच विज्ञेयात्रिविधासुरा।
यथैवैकातथासर्वा नपातव्याद्विजोत्तमैः॥ ११९
सुरापस्तुसुरांतप्तां पिबेत्तत्पापमोक्षकः।

संपूर्ण कामों को त्याग कर वन के ही फल मूल खावे यदि उनसे नि
निर्वाह न हो तो भिक्षा के अर्थ गांव में भ्रमण करे॥ चारों वर्णों से
मांगे तथा हत्या के चिन्ह को बांधे रहै और मन को सदा वश में र
प्रकार भिक्षा लेकर फिर वन में चला जाय॥ ११६॥ व
(हत्यारा) आलस्य को छोड़ कर सदा वन में ही वास करे
पापी अपने पाप को प्रसिद्ध करता हुआ पाप से छुटता है
इस रीति से बारह वर्ष का व्रत करे और सब इन्द्रियों को रोक कर
तों के हित में तत्पर रहै॥ ११७॥ ब्रह्महत्या के दूर करने के लिये
आचरण करे पुनः पाप से मुक्त होता है। अब मदिरा पीने वाले का
न सुनो॥ ११८॥ गौड़ी (गुड़ की) माध्वी[महुआ की] पैष्टी(पिसी दवा
आदि की)यह तीन प्रकार की मदिरा होतीहै इन में जैसी एक वैसी
इस से ब्राह्मणादि उत्तम द्विज मदिरा को कदापि न पीवें॥ ११९॥
पीने वाला ब्राह्मण उस के पीने के पाप से छूटा चाहे तो तपाई हु

गोमूत्रमग्निवर्णंवा गोमयंवातथाविधम् ॥ १२० ॥
घृतंवात्रीणिपेयानि सुरापोव्रतमाचरेत् ।
मुच्यतेतेनपापेन प्रायश्चित्तेकृतेसति ॥ १२१ ॥
अरण्येवावसेत्सम्यक् सर्वकामविवर्जितः ।
चांद्रायणानिवात्रीणि सुरापोव्रतमादिशेत् ॥ १२२ ॥
एवंशुद्धिःसुरापस्य भवेदितिनसंशयः ।
मद्यभांडोदकंपीत्वा पुनःसंस्कारमर्हति ॥ १२३ ॥
स्तेयंकृत्वासुवर्णस्य स्तेयंराज्ञेनिवेदयेत् ।
ततोमुशलमादाय स्तेनंहन्यात्सकृन्नृपः ॥ १२४ ॥
यदिजीवतिसस्तेन-स्ततःस्तेयाद्विमुच्यते ।
अरण्येचीरवासावा चरेद्ब्रह्महणोव्रतम् ॥ १२५ ॥
एवंशुद्धिःकृतास्तेये संवर्तवचनंयथा ।
गुरुतल्पेशयानस्तु तप्तेस्वप्यादयोमये ॥१२६॥

यथा अग्नि से तपाये गोमूत्र या गोबर को पीवे ॥ १२० ॥ अथवा तपा गोमूत्रादि तीन ही पीने योग्य हैं अर्थात् तपायी हुई मदिरा पीना नहीं । गोमूत्रादि किसी को पीकर मर जावे मद्य पीने वाला इस को करे इस प्रायश्चित्त के कर लेने पर मद्यपान के पाप से छूट जाता है ॥ अथवा सम्यक् प्रकार सर्वकामनाओं को छोड़ कर वन में बसे मद्य पीने वाला तीन चांद्रायण प्रायश्चित्त करे ॥ १२२ ॥ इस प्रकार पीने वाले की शुद्धि होती है इस में संदेह नहीं है । मदिरा के पात्र पीकर फिर उपनयन संस्कार के योग्य होता है ॥१२३॥ सोने की चोरी उस चोरी का अपराध राजा से निवेदन कर तब राजा मूशल लेकर एक उस चोर के मार दे ॥ १२४ ॥ यदि वह चोर जीवित हो जावे तो चोरी प से मुक्त हो जाता है अथवा वन में जाकर पड़े हुये फटे वस्त्र पहन ब्रह्महत्या का व्रत करे ॥ १२५ ॥ संवर्तऋषि के वचनानुसार इस प्रकार चोरी की शुद्धि विहित है गुरु की शय्या पर गमन करके तपाये हुए के पात्र [कड़ाही] में शयन करके शरीर को छोड़े ॥ १२६ ॥

समालिंगेत्स्त्रियंवापि दीप्तांकार्ष्णायसींकृताम्।
चान्द्रायणानिकुर्याच्च चत्वारित्रीणिवाद्विजः॥
मुच्यतेचततःपापात् प्रायश्चित्तेकृतेसति।
एभिःसम्पर्कमायाति यःकश्चित्पापमोहितः॥
तत्तत्पापविशुद्ध्यर्थं तस्यतस्यव्रतंचरेत्।
क्षत्रियस्यवधंकृत्वा त्रिभिःकृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति।
कुर्याच्चैवानुरूपेण त्रीणिकृच्छ्राणिसंयतः।
वैश्यहत्यान्तुसंप्राप्तः कथंचित्काममोहितः॥१३०॥
कृच्छ्रातिकृच्छ्रौकुर्वीत मनरोवैश्यघातकः।
कुर्याच्छूद्रवधेविप्र-स्तप्तकृच्छ्रंयथाविधि॥१३१॥
एवंशुद्धिमवाप्नोति संवर्त्तवचनंयथा।
गोघ्नस्यातःप्रवक्ष्यामि निष्कृतिंतत्वतःशुभाम्॥

अथवा लोहे की स्त्री बना कर और उसे लाल तपा कर लिपट करके अ द्विज चार वा तीन चान्द्रायण व्रत करे ॥१२७॥ पुनः प्रायश्चित्त करने से उस पापसे मुक्त होता है। जो कोई पाप से मोहित पुरुष इनसे सम्प है ॥१२८॥ वह भी उस पाप की शुद्धि के लिये उसी २ पाप का प्रायश्चि क्षत्रिय को मार कर ब्राह्मण तीन कृच्छ्रों से सम्यक् प्रकार शुद्ध होता है यथोचित तीन कृच्छ्र सावधान होकर करे। जो काम से मोहित कदाचित् वैश्य की हत्या करे॥१३०॥ जो वैश्य का घातक वह मनुष्य कृ अतिकृच्छ्र व्रत करे और शूद्र के मारने में ब्राह्मण विधि से तप्तकृच्छ्र ॥१३१॥ संवर्त के वचनानुसार इस प्रकार शुद्धि को प्राप्त होता है अब मारने वाले का यथार्थ उत्तम प्रायश्चित्त कहते हैं ॥१३२॥ गौ को गौशाला में और गौ के समीप अथवा संस्कार करे और गौशाला में स्त्रियों को घर में रख कर पन्द्रह दिन तक पृथिवी पर सोवे ॥१३३॥

गोध्नःकुर्वीतसंस्कारं गोष्ठेगोरूपसन्निधौ ।
तत्रैवक्षितिशायीस्या-न्मासार्द्धंसंयतेन्द्रियः ॥१३३॥
स्नानंत्रिषवणंकुर्या-न्नखलोमविवर्जितः ।
सक्तुयावकभिक्षाशी पयोदधिशकृन्नरः ॥१३४॥
एतानिक्रमशोश्नीयाद् द्विजस्तत्पापमोक्षकः ।
गायत्रींचजपेन्नित्यं पवित्राणिचशक्तितः ॥१३५॥
पूर्णेचैवार्द्धमासेच सविप्रान्भोजयेद्द्विजः ॥
भुक्तवत्सुचविप्रेषु गांचदद्याद्विचक्षणः ॥ १३६ ॥
व्यापन्नानांवहूनांतु रोधनेवन्धनेपिवा ।
भिषङ्मिथ्योपचारेच द्विगुणंव्रतमाचरेत् ॥ १३७ ॥
एकाचेद्बहुभिःकाचि-द्दैवाद्व्यापादिताक्वचित् ।
पादंपादंतुहत्याया-श्चरेयुस्तेपृथक्पृथक् ॥ १३८ ॥
यंत्रणेगोश्चिकित्सार्थे गूढगर्भविमोचने ।
यदितत्रविपत्तिःस्या-न्नसपापेनलिप्यते ॥ १३९ ॥
औषधंस्नेहमाहारं दद्याद्गोब्राह्मणेषुच ।

मनुष्य तीन काल स्नान करे और नख तथा लोम इन को न रक्खे-
की दूध-दही और गोवर ॥ १३४ ॥ इन को क्रम से गोहत्या के पाप
क्ति चाहने वालाद्विज भोजन करे-और यथाशक्ति गायत्री तथा अन्य
त्र मंत्रों को नित्य जपे ॥ १३५ ॥ जब आधा महीना व्य-
। होजाय तब वह द्विज ब्राह्मणों को भोजन करावे जब ब्राह्मण
न कर चुकें उस समय गोदान भी करे ॥ १३६ ॥ रोकने अथवा
ने में अथवा विरुद्ध चिकित्सा से बहुत गौ मर जांय तो गोहत्या
द्विगुण व्रत करे ॥ १३७ ॥ यदि कदाचित् कोई एक गौ बहुतों से मारजा-
यें तो वे पृथक् २ गोहत्या का चौथाई प्रायश्चित्त करें ॥ १३८ ॥ चिकि-
। के अर्थ वश करने में अथवा गूढ़ [मरे हुए] गर्भ के निकालने में य-
किसी से गौ मरजाय तो वह पाप का भागी नहीं होता ॥ १३९ ॥

दीयमानेविपत्तिःस्या – त्पुण्यमेवनपातकम् ॥१४०॥
प्रायश्चित्तस्यपादंतु रोधेपुत्रतमाचरेत् ।
द्वौपादौबंधनेचैव पादोनंयंत्रणेतथा ॥ १४१ ॥
पाषाणैर्लगुडैर्दण्डै–स्तथाशस्त्रादिभिर्नरः ।
निपातनेचरेत्सर्वं प्रायश्चित्तंदिनत्रयम् ॥ १४२ ॥
हस्तिनंतुरगंहत्वा महिषोष्ट्रंकपिन्तथा ।
एषांवधेद्विजःकुर्या–त्सप्तरात्रमभोजनम् ॥ १४३ ॥
व्याघ्रंश्वानंखरंसिंहं ऋक्षंसूकरमेवच ।
एतान्हत्वाद्विजोमोहाद्द त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ॥१४४॥
सर्वासामेवजातीनां मृगाणांवनचारिणाम् ।
अहोरात्रोषितस्तिष्ठे–ज्जपन्वैजातवेदसम् ॥ १४५ ॥
हंसंकाकंबलाकाञ्च बर्हिकारंडवावपि ।
सारसंचापभासौच हत्वात्रिदिवसंक्षिपेत् ॥१४६॥
चक्रवाकंतथाक्रौंचं सारिकाशुकतित्तिरीन् ।

औषध घी अथवा भोजन देने से यदि गौ वा ब्राह्मण मृत्यु को प्राप्त होजावे तो पुण्य ही होता है पाप नहीं ॥ १४० ॥ रोकने से गौ मरे तो चौथाई प्रायश्चित्त और बांधने से आधा और वश में करने से मरे तो पादोन [पौन] करै ॥ १४१॥ पत्थर सोटा दंडा और शस्त्र इन से मारने से गौ मर जाय तो तीन दिन तक पूरा प्रायश्चित्त करे ॥ १४२ ॥ हाथी-घोड़ा-भैंस-ऊंट-और वानर-इनके मारने पर द्विज सात दिन तक भोजन न करे ॥ १४३ ॥ बाघ कुत्ता-गधा-सिंह-रीछ और सूकर इनको अज्ञान से मार कर तीन दिनकेव्रतसेरात्रमें शुद्ध होताहै ॥१४४॥ वनमें विचरते संपूर्ण जातियों के मृगों के मारनेमें एक दिनरात उपवास करके अग्नि देवता वाले मन्त्रका जप करता हुआ खड़ा रहे॥१४५॥हंस कौआ बगला मोर कारंडव(हंसभेद)सारस और भास इन पक्षियोंको मारकर तीन दिन उपवास करे ॥ १४६ ॥ चकवा-कूंज-मैना

श्येनगृध्रानुलूकांश्च पारावतमथापिवा ॥ १४७ ॥
टिट्टिभंजालपादंच कोकिलंकुक्कुटंतथा ।
एषांवधेनरःकुर्या-देकरात्रमभोजनम् ॥ १४८ ॥
पूर्वोक्तानांतुसर्वेषां हंसादीनामशेषतः ।
अहोरात्रोषितस्तिष्ठे-ज्जपन्वैजातवेदसम् ॥ १४९ ॥
मण्डूकंचैवहत्वाच सर्पमार्जारमूषकान् ।
त्रिरात्रोपोषितस्तिष्ठे-त्कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥१५०॥
अनस्थीन्ब्राह्मणोहत्वा प्राणायामेनशुद्ध्यति ।
अस्थिमतांवधेविप्रः किंचिद्दद्याद्विचक्षणः ॥१५१॥
यश्चांडालींद्विजोगच्छे-त्कथंचित्काममोहितः ।
त्रिभिःकृच्छ्रैस्तुशुद्ध्येत्प्राजापत्यानुपूर्वकैः ॥१५२॥
पुंश्चलीगमनंकृत्वा कामतोकामतोपिवा ।
कृच्छ्रंचांद्रायणंतस्य पावनंपरमंस्मृतम् ॥ १५३ ॥

॥–तीतर,श्येन–गीध–उल्लू–कबूतर ॥ १४७ ॥ टिट्टिभ (टटीरी) जालपाद
भेद) कोयल और मुरगा इन के मारने में मनुष्य एक दिन उपवास करे ॥१४८॥
कहे सर्व जीव तथा विशेष कर हंस आदि के मारने में एक दिन रात उ-
वास करके अग्निमंत्र का जप करता हुआ खड़ा रहे ॥ १४९ ॥ मेंडक–सांप–
बिलाव और मूसा–इन को मार कर तीन उपवास करेतथा ब्राह्मणों कोभोजन
करावे॥१५०॥जिन में हड्डी न हो ऐसे मक्खीमच्छरआदि जीवों को हनन कर ब्राह्मण
प्राणायाम से शुद्ध होता है और जिन में हड्डी हैं ऐसे क्षुद्र जीवों के मारने में
कुछ दान करे ॥१५१॥ जो काम से मोहित हुआ द्विज चांडाली के संग गमन करे
वह क्रम से प्राजापत्य आदि तीन कृच्छ्रों से शुद्ध होता है ॥ १५२ ॥ ज्ञान से
अथवा अज्ञानसे जो व्यभिचारिणी के संग गमन करे उसके कृच्छ्र तथा चांद्रायण
ये दोनों व्रत परम संशोधक हैं ॥१५३॥ नटिनी–धोबिन–बांस और चमड़े से
काम करने वाली इन के संग प्रमाद से गमन करके द्विज चांद्रायण व्रत करे ॥१५४॥

ृन्यदारगमने भ्रातुर्भार्यागमेतथा ।
तलपव्रतंकुर्या-न्निष्कृतिर्नान्यथाभवेत् ॥ १६२ ॥
तृभार्यांसमारुह्य मातृवर्जं नराधमः ।
गिनींमातुलसुतां स्वसारंचान्यमातृजाम् ॥ १६३ ॥
तास्तिस्त्रस्त्रियोगत्वा तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ।
मारीगमनेचैव व्रतमेतत्समाचरेत् ॥ १६४ ॥
शुवेश्याभिगमने प्राजापत्यंविधीयते ।
खिभार्यांकुमारींच श्वश्रूंवाश्यालिकांतथा ॥१६५॥
तरंयोधिगच्छेच्च स्वसारंपुरुषोधमः ।
तस्यनिष्कृतिंदृष्टा-स्त्वांचैवतनुजांतथा ॥ १६६ ॥
नपमत्यांव्रतस्थांवा योभिगच्छेत्स्त्रियंद्विजः ।
उकुर्यात्प्राकृतंकृच्छ्रं धेनुंदद्यात्पयस्विनीम् ॥ १६७ ॥
रजस्वलांतुयोगच्छेद् गर्भिणींपतितांतथा।

ी स्त्री भाभी और भौजाई इनके संग भोग करने में गुरु की स्त्री के गमन
ायश्चित्त करे अन्यथा पाप की निवृत्ति नहीं होती ॥१६२॥ माता के अतिरिक्त
ी स्त्री-और मामा की पुत्री अपनी बहिन-तथा दूसरी माता से उ-
ई अपनी भगिनी ॥ १६३ ॥ इन तीनों स्त्रियों के साथ कोई भोग क-
पुरुष भोग करे तो तप्तकृच्छ्र व्रत करे और कुमारी (बिना विवाह
हुई) के गमन में भी यही कृच्छ्र करे ॥१६४॥ पशु और वेश्या के ग-
मन में प्राजापत्य व्रत करे-मित्र की स्त्री-सासु और साले की स्त्री ॥ १६५ ॥
बहिन-और अपनी लड़की इनके संग जो पुरुष भोग करता
का प्रायश्चित्त नहीं है ॥१६६॥ निषम तथा व्रतों स्त्रियों से जो द्विज
करता है वह प्राकृतकृच्छ्रव्रत करे और दूध देनेवाली गौ का दान करे ॥१६७॥
गा-गर्भिणी और पतित स्त्री के साथ जो पुरुष भोग करता है उस को

तस्यपापविशुद्धयर्थ-मतिकृच्छ्रोविधीयते ॥१६८॥
वैश्यजांब्राह्मणोगत्वा कृच्छ्रमेकंसमाचरेत् ।
एवंशुद्धिःसमाख्याता संवर्तस्यवचोयथा ॥१६९॥
कथंचिद्ब्राह्मणींगत्वा क्षत्रियोवैश्यएवच ।
गोमूत्रयावकाहारो मासेनैकेनशुद्धयति ॥१७०॥
शूद्रस्तुब्राह्मणींगच्छे-त्कदाचित्काममोहितः
गोमूत्रयावकाहारो मासेनैकेनशुद्धयति ॥१७१॥
ब्राह्मणीशूद्रसंपर्कं कदाचित्समुपागता ।
कृच्छ्रचांद्रायणंतस्याः पावनंपरमंस्मृम् ॥ १७२॥
चांडालंपुल्कसंचैव श्वपाकंपतितंतथा ।
एताःश्रेष्ठःस्त्रियोगत्वा कुर्याच्चान्द्रायणंत्रयम् ।
अतःपरंप्रदुष्टानां निष्कृतिंश्रोतुमर्हथ ।
संन्यस्यदुर्मतिःकश्चि-दपत्यार्थंस्त्रियंव्रजेत ॥१७४॥

पाप निवृत्ति के अर्थ अतिकृच्छ्र व्रत कहा है ॥ १६८ ॥ वैश्य की कन्या भोग करके ब्राह्मण एक कृच्छ्र व्रत करे। संवर्त ऋषि के वचन के ... शुद्धि कही है ॥ १६९ ॥ क्षत्रिय और वैश्य कदाचित् ब्राह्मणी के संग ... तो गोमूत्र और जौंको खाकर एक मास में शुद्ध होते हैं ॥ १७० ॥ यदि ... चित् काम से मोहित हुआ शूद्र ब्राह्मणी के संग गमन करे तो गोमूत्र को खाकर एक महीने में शुद्ध होता है ॥१७१॥ कदाचित् ब्राह्मणी ही ... भोग करे तो उस ब्राह्मणी का पवित्र करने वाला कृच्छ्र चांद्रायण व्रत ॥ १७२ ॥ चांडाल पुल्कस श्वपाक और पतित इन की स्त्रियों के सं... (द्विजाति) पुरुष गमन करके तीन चांद्रायण व्रत करे ॥ १७३ ॥ इस ... अत्यंत दुष्टों का प्रायश्चित्त सुनो । यदि कोई दुष्ट बुद्धि पुरुष संन्या... संतान के लिये स्त्री का संग करता है ॥ १७४ ॥

र्वोत्कृच्छ्रं समानं तत् षण्मासांस्तदनंतरम् ।
षाग्निश्यामशवला स्तेषामपिविनिर्दिशेत्॥१७५॥
णांच तथाचरणे गहर्याभिगमनेषु ।
तनेष्वप्ययंदृष्टः प्रायश्चित्तविधिःशुभः ॥१७६॥
णांविप्रतिपत्तौच पावनःप्रेत्यचेहच ।
गोविप्रप्रहतेचैव तथाचैवात्मघातिनि ॥ १७७ ॥
नैवाश्रुपतनंकार्यं सद्भिःश्रेयोभिकांक्षिभिः ।
एषामन्यतमंप्रेतं योवहेतदहेतवा ॥ १७८ ॥
कृत्वाचोदकदानंतु चरेच्चांद्रायणंव्रतम् ।
तच्छवंकेवलंस्पृष्ट्वा अश्रुनोपातितंयदि ॥ १७९ ॥
पूर्वकेप्यपकारोचे-देकाहंक्षपणंतथा ।
महापातकिनांचैव तथाचैवात्मघातिनाम् ॥ १८० ॥
उदकंपिंडदानंच श्राद्धंचैवहियत्कृतम् ।
नोपतिष्ठतितत्सर्वं राक्षसैर्विप्रलुप्यते ॥ १८१ ॥

ो वह निरंतर छः मास पर्यन्त कृच्छ्रव्रत करे और विष तथा अग्निसे जो
और कपरे हो जाय वे भी पूर्वोक्त कृच्छ्रव्रत ही करैं ॥ १७५ ॥ स्त्री को
ारिणी रहने व्रत करने का नियम करके संतान के लिये पुनः गृहस्थ को
ा हो तथा निन्दित नीचों के साथ व्यभिचार करनेपर स्त्रियोंको भी पूर्वो
ी प्रायश्चित्त कहाहै। जाति से पतित होने के कामों में भी ऋषियों ने यही
श्चित्त अच्छाकहा है ॥ १७६ ॥ मनुष्यों के परस्पर विरोध में पूर्वोक्त कृच्छ्र
लोक और परलोक में पवित्र करने वाला है। गौ और ब्राह्मण से मरा
ा जो आत्मघात से मरा हो ॥ १७७ ॥ इनका मरण होने पर अपने
नके अभिलाषी सज्जन आंसू न गिरावें और इन में से किसी मुर्दाको जो
ग्राममें लेजाय अथवा जलावे ॥ १७८ ॥ उसने यदि आंसू न गिराये हों तो
दान तथा उस मुर्दे का केवल स्पर्श करके चान्द्रायण व्रत करे ॥१७९॥ तथा
र्वोक्त प्रायश्चित्त न कर सकता हो तो एक दिन उपवास करै महापातकी
ौर आत्मघाती ॥ १८० ॥ इनको जल दान पिंडदान श्राद्ध जो किया हो वह
न नहीं मिलता उसे राक्षस नष्ट करदेते हैं ॥ १८१ ॥

चांडालैस्तुहताचेतु द्विजादंष्ट्रिसरीसृपैः।
श्राद्धंतेषांनकर्त्तव्यं ब्रह्मदंडहताश्चये ॥ १८२ ॥
कृत्वामूत्रपुरीषेतु भुक्त्वोच्छिष्टस्तयाद्विजः।
श्वादिस्पृष्टोजपेद्देव्याः सहस्रंस्नानपूर्वकम् ॥ १८३ ॥
चांडालंपतितंस्पृष्ट्वा शवमंत्यजमेवच।
उदक्यांसूतिकांनारीं सवासाःस्नानमाचरेत् ॥ १८४ ॥
स्पृष्टेनसंस्पृशेद्यस्तु स्नानंतस्यविधीयते।
ऊर्ध्वमाचमनंप्रोक्तं द्रव्याणांप्रोक्षणंतथा ॥ १८५ ॥
चांडालाद्यैस्तुसंस्पृष्ट उच्छिष्टश्चेद्द्विजोत्तमः।
गोमूत्रयावकाहार स्त्रिरात्रेणविशुद्ध्यति॥ १८६ ॥
शुनापुष्पवतीस्पृष्टा पुष्पवत्यान्ययातथा।
शेषाण्यहान्युपवसे-त्स्नात्वाशुद्ध्येद्घृताशना॥

जो चांडाल दाढ़वाले (कुत्ता आदि) सांप और ब्राह्मण का शाप इनसे द्विज मरे हों उनके लिये श्राद्ध नहीं करना चाहिये॥१८२॥ भोजनसे उच्छिष्ट ब्राह्मण को तथा जिसने मूत्र और मल का त्याग किया हो उसको यदि श्वा आदि स्पर्श कर लें तोवह स्नान करके एक सहस्र गायत्री का जप करे। चांडाल-पतित, मुर्दा अंत्यज रजस्वला और दश दिन के भीतर सूतिका इनका स्पर्श करके सचैल स्नान करे ॥ १८४ ॥ इनसे स्पर्श करने वाले जिसका स्पर्श किया हो वह स्नान ही करे पुनः आचमन करे और द्रव्य (वस्त्र आदि) को जल से छिड़क ले ॥ १८५ ॥ यदि उच्छिष्ट ब्राह्मण को चांडाल आदि स्पर्श करले तो गोमूत्र और जौको खाकर तीनदिनमें शुद्ध होता है ॥१८६॥ यदि रजस्वला स्त्री को कुत्ता या अन्य रजस्वला स्त्री स्पर्श करे तो शुद्धि के जो दिन बाकी हों उन में उपवास करे फिर स्नान करके घी खाने से शुद्धि होती है ॥ १८७ ॥

चांडालभांडसंस्पृष्टं पित्वेत्कूपगतंजलम् ।
गोमूत्रयावकाहार-स्त्रिरात्रेणविशुद्ध्यति ॥१८८॥
अन्त्यजैःस्वीकृतेतीर्थे तडागपुनदीषुच ।
शुद्ध्यतेपञ्चगव्येन पीत्वातोयमकामतः ॥१८९॥
सुराघटप्रपातोयं पीत्वानासाजलंतथा ।
अहोरात्रोषितोभूत्वा पञ्चगव्यंपिबेद्द्विजः ॥१९०॥
कूपेविण्मूत्रसंस्पृष्टाः प्राश्यचापोद्विजातयः ।
त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यन्ति कुम्भेसान्तपनंस्मृतम् ॥१९१॥
वापीकूपतडागाना-मुपहतानांविशोधनम् ।
अपांघटशतोद्धारः पञ्चगव्यंचनिक्षिपेत् ॥१९२॥
स्त्रीक्षीरमाविकम्पीत्वा सन्धिन्याचैवगोःपयः ।
तस्यशुद्धिस्त्रिरात्रेण द्विजानांचैवभक्षणे ॥१९३॥
विण्मूत्रभक्षणेचैव प्राजापत्यंसमाचरेत् ।

[illegible]डाल के पात्र का जिस में स्पर्श हुआ हो ऐसे कुये के जल को पीकर [illegible]और जौं को खाकर तीन दिन में शुद्ध होता है ॥ १८८ ॥ नदी तथा [illegible] के जिस घाट पर भंगी आदि अन्त्यज स्नानादि सदा करते हों वहां [illegible] को भूल से पीकर पंचगव्य से शुद्ध होता है ॥ १८९ ॥ द्विज पुरुष [illegible]के घड़े तथा प्याऊ के और नासिका से जल को पीकर एक दिन उपवास [illegible]चगव्य पीवे॥१९०॥ द्विज लोग विष्ठा मूत्र मिश्रित कूप के जल को पीकर [illegible]न के उपवास से शुद्ध होते और विष्ठादि मिले घड़े के जल को पीने [illegible]तपन कृच्छ्र व्रत से शुद्ध होते हैं ॥१९१॥ अपवित्र वस्तु जिन में पड़ा हो [illegible]वड़ी-कूप और तालाब इन का संशोधन इस प्रकार होता है कि सौ [illegible]न के निकाल कर उस में पंचगव्य डाल दे ॥१९२॥ मनुष्य स्त्री, भेड़ और [illegible] (जो गर्भवती हो परन्तु दूध भी देती हो ऐसी) गौ इन के दूध को [illegible]ने उस की शुद्धि तीन दिन उपवास और ब्राह्मणों को भोजन कराने से [illegible]है ॥ १९३ ॥ विष्ठा और मूत्र के भक्षण में प्राजापत्य व्रत करे तथा कुत्ता

श्वकाकं चिच्छष्टगोच्छिष्ट भक्षणेतुत्र्यहाद्द्विज॥
विडालमूषिकोच्छिष्टे पञ्चगव्यंपिवेद्द्विजः।
शूद्रोच्छिष्टंतथाभुक्त्वा त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति॥
पलाण्डुलशुनंजग्ध्वा तथैवग्रामकुक्कुटम्।
छत्राकंविड्वराहञ्च चरेत्सान्तपनंद्विजः॥१९६॥
श्वविडालखरोष्ट्राणां कपिगोमायुकाकयोः।
प्राश्यमूत्रपुरीषेच चरेच्चान्द्रायणंव्रतम्॥१९७॥
अन्नंपर्युषितंभुक्त्वा केशकीटैरुपद्रुतम्।
पतितैःप्रेक्षितंवापि पंचगव्यंद्विजःपिवेत्॥१९८॥
अन्त्यजाभाजनेभुक्त्वा ह्युदक्याभाजनेतथा।
गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धेनविशुद्ध्यति॥१९९॥
गोमांसंमानुषंचैव शुनोहस्तात्समाहृतम्।
अभक्ष्यंतद्भवेत्सर्वं भुक्त्वाचांद्रायणंचरेत्॥२००॥

कौआ और गौ इन के उच्छिष्ट को भक्षण करके द्विज तीन दिन ... ॥१९४॥ बिलाव और मूसा इन के उच्छिष्ट को भक्षण कर द्विज पंच ... तथा शूद्र के उच्छिष्ट को खाकर तीन दिन के उपवास करने से शु... ॥१९५॥ पलांडु (प्याज) लहसन और गांव के मुरगा का मांस-छत्राक (जिस के ऊपर छत्रीसी होती है बर्षा में पैदा होता है) और विष्ठा ... सूकर के मांस को खाकर द्विज सांतपन व्रत करे ॥१९६॥ कुत्ता-बि... ऊंट-बानर-गीदड़ और कौआ इन के मूत्र वा बिठा को खाकर चां... करे ॥१९७॥ जो अन्न बासा हो-अथवा जिस में केश वा कीड़े पड़े हों ... को पतितों ने देखा हो उस अन्न को भक्षणकर द्विज एक दिन पञ्चगव्य ... अंत्यजस्त्री के अथवा रजस्वला के पात्र में खाकर गोमूत्र और ... पंद्रह दिन में शुद्ध होता है ॥१९९॥ गौका वा मनुष्य का मांस ... मुख से आया हो वह अभक्ष्य है उसे खाकर चांद्रायण व्रत ...

चांडालेसंकरेविप्रः श्वपाकेपुल्कसेपिवा ।
गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धंनविशुद्ध्यति ॥२०१॥
पतितेनतुसंपर्कं मासंमासार्द्धमेववा ।
गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धंनविशुद्ध्यति ॥२०२॥
पतिताद्द्रव्यमादत्ते भुंक्तेवाब्राह्मणोयदि ।
कृत्वातस्यसमुत्सर्गं-मतिकृच्छ्रंचरेद्द्विजः ॥ २०३ ॥
यत्रयत्रचसंकीर्ण मात्मानंमन्यतेद्विजः ।
तत्रतत्रतिलैर्होमो गायत्र्याप्रत्यहद्विजः ॥ २०४ ॥
एषएवमयाप्रोक्तः प्रायश्चित्तविधिःशुभः
अनादिष्टेषुपापेषु प्रायश्चित्तंनचोच्यते ॥ २०५ ॥
दानैर्होमैर्जपैर्नित्यं प्राणायामैर्द्विजोत्तमः ।
पातकेभ्यःप्रमुच्येत वेदाभ्यासान्नसंशयः ॥२०६॥
सुवर्णदानंगोदानं भूमिदानंतथैवच ।
नाशयंत्याशुपापानि ह्यन्यजन्मकृतान्यपि ॥२०७॥

—वर्णसंकर—श्वपाक—और पुल्कस इन के भोजन को खाकर पन्द्रह दिन होता है ॥ २०१ ॥ एक मास अथवा पंद्रह दिन पतित का संसर्ग(मेल) गोमूत्र और जौं को खाकर पंद्रह दिन में शुद्ध होता है ॥ २०२ ॥ ब्राह्मण पतित के द्रव्य को ग्रहण करता है अथवा खाता है यह उस का त्याग (वमन) करके अतिकृच्छ्र व्रत करे ॥ २०३ ॥ जिस २ कर्म में द्विज को संकीर्ण (पतित) समझे उसी २ कर्म में गायत्री मन्त्र से तिलों का प्रयोग करे ॥२०४॥ यह हमने प्रायश्चित्त का श्रेष्ठ विधान कहा और जो अनादिष्ट (शास्त्र में नहीं कहे) हैं उनका प्रायश्चित्त भी नहीं कहा है॥२०५॥ होम जप—प्राणायाम—और वेद पाठ—इनके करने से ब्राह्मण सदैव पाप से मुक्त होता है ॥२०६॥ सोना—गौ और पृथ्वी इनका दान अन्य जन्म [illegible] दूर देता है ॥ २०७ ॥

तिलंधेनुंचयोदद्या-त्संयतायद्विजातये ।
ब्रह्महत्यादिभिःपापै-र्मुच्यतेनात्रसंशयः ॥ २०८॥
माघमासेतुसंप्राप्ते पौर्णमास्यामुपोषितः।
ब्राह्मणेभ्यस्तिलान्दत्वा सर्वपापैःप्रमुच्यते
उपवासीनरोभूत्वा पौर्णमास्यांतुकार्तिके।
हिरण्यंवस्त्रमन्नंच दत्वातरतिदुष्कृतम् ॥२१०॥
अयनेविषुवेचैव व्यतीपातेदिनक्षये ।
चन्द्रसूर्यग्रहेचैव दत्तंभवतिचाक्षयम् ॥ २११ ॥
अमावास्याचद्वादश्यां संक्रांतौचविशेषतः ।
एताःप्रशस्तास्तिथयो भानुवारस्तथैवच ॥२१२॥
तत्रस्नानंजपोहोमो ब्राह्मणानांचभोजनम् ।
उपवासस्तथादान-मेकैकंपावयेन्नरम् ॥ २१३ ॥
स्नातःशुचिर्धौतवासाः शुद्धात्माविजितेंद्रियः ।

जो जितेन्द्रिय ब्राह्मण को तिल तथा गौ को देता है वह ब्रह्म आदि पापों से निर्मुक्त हो जाता है इस में संशय नहीं है ॥२०८॥माघ की पूर्णमासी को उपवास करके जो तिलों का दान ब्राह्मणों को देता सब पापों से मुक्त होजाता है ॥ २०९ ॥ कार्तिक की पूर्णमासी को उप रके सोना-वस्त्र और अन्न इन का दान देकर पापसागर से तरजाता है दक्षिणायन,उत्तरायण-विषुव(तुल मेष)की संक्रान्ति,व्यतिपात योग-हानि, चन्द्र और सूर्य के ग्रहण-में दिया हुआ दान अक्षय होता है। अमावस,द्वादशी,संक्रान्ति विशेष कर,ये तिथी और रविवार ये दान के लिये श्रेष्ठ हैं॥२१२॥इन में किये हुये स्नान,जप, होम और ब्राह्मणों को भोजन तथा दान प्रत्येक मनुष्य को पवित्र करते हैं ॥ २१३ ॥ स्नान करके धोकर धुले हुये श्वेत वस्त्र धारणकर शुद्ध मन हो इन्द्रियों को जीत

ा दिव्यकर्मभावमास्थाय दानंदद्याद्विचक्षणः ॥२१४ ॥
सप्तव्याहृतिभिःकार्या द्विर्जैर्होमोजितात्मभिः ।
उपपातकशुद्ध्यर्थं सहस्रपरिसंख्यया ॥२१५॥
महापातकसंयुक्तो लक्षहोमंसदाद्विजः ।
मुच्यतेसर्वपापेभ्यो गायत्र्याचैवपावितः ॥ २१६ ॥
अभ्यसेच्चतथापुण्यां गायत्रींवेदमातरम् ।
गत्वारण्येनदीतीरे सर्वपापविशुद्धये ॥ २१७ ॥
स्नात्वाचविधिवत्तत्र प्राणानायम्यवाग्यतः ।
प्राणायामैस्त्रिभिःपूतो गायत्रींतुजपेद्द्विजः ॥२१८॥
अक्लिन्नवासाःस्थलगः शुचौदेशेसमाहितः ।
पवित्रपाणिराचान्तो गायत्र्याजपमारभेत् ॥२१९॥
ऐहिकामुष्मिकंपापं सर्वंनिरवशेषतः ।
पञ्चरात्रेणगायत्रीं जपमानोव्यपोहति ॥२२०॥
गायत्र्यास्तुपरंनास्ति शोधनंपापकर्मणाम् ।

स्वभाव (सुशील) होकर ज्ञानवान् पुरुष दानदे ॥ २१४ ॥ मन को ...ाले द्विज लोग उपपातकों की शुद्धि के अर्थ सात व्याहृतियों से एक ...ाहुति होम करें ॥ २१५ ॥ तथा महापातकी गायत्री से लक्ष (लाख) होम करे क्योंकि गायत्री से पवित्र किया ब्राह्मण सब पापों से मुक्त ... है ॥२१६॥ सर्वपापों की शुद्धि के लिये वेदों की माता पवित्र गायत्री ... में जाकर वा नदी के तट पर जप करे ।२१७॥ नदी तालाब आदि में ...क स्नान तथा आचमन करके तीन प्राणायामों से पवित्र हुआ द्विज ...का जप करे॥२१८॥ विलच (गीले) वस्त्र न पहनकर शुद्ध स्थान पर स्थल ...के सावधान होकर कुशाओं की पवित्री धारण कर आचमन के पश्चात् ...के जप का आरम्भ करे॥२१९॥ पांच दिन तक गायत्री का जप करता हुआ, ...स जन्म और अन्य जन्म के संपूर्ण पापों को नष्ट करता है ॥२२०॥ पा- ...को शुद्ध करने वाला गायत्री से परे अन्य उपाय नहीं है महाव्याहृति और

श्रीगणेशायनमः

्यायनस्मृतिप्रारम्भः

ातोगोभिलोक्तानामन्येषांचैवकर्मणाम् ।
स्पष्टानांविधिंसम्य-ग्दर्शयिष्येप्रदीपवत् ॥ १ ॥
वृदूर्ध्ववृतंकार्यं तंतुत्रयमधोवृतम् ।
ावृतंचोपवीतंस्या त्तस्यैकोग्रन्थिरिष्यते ॥ २ ॥
ठवंशेचनाभ्यांच धृतंयद्विन्दतेकटिम् ।
ार्यमुपवीतंस्यान्नातोलंबंनचोच्छ्रितम् ॥ ३ ॥
दोपवीतिनाभाव्यं सदाबद्धशिखेनच ।
शिखोऽयुपवीतश्च यत्करोतिनतत्कृतम् ॥ ४ ॥
ः प्राश्यापोद्विरुन्मृज्य मुखमेतान्युपस्पृशेत् ।
ास्यनासाक्षिकर्णांश्च नाभिवक्षःशिरोंसकान् ॥५॥
हिताभिस्त्र्यंगुलिभि-रास्यमेवमुपस्पृशेत् ।
अंगुष्ठेनप्रदेशिन्या घ्राणंचैवमुपस्पृशेत् ॥६॥
अंगुष्ठानामिकाभ्यांच चक्षुःश्रोत्रंपुनःपुनः ।

के अनंतर गोभिल ऋषि के कहे तथा अन्य ऋषियों के कहपोक्त क-
विधि दीपक के समान भली प्रकार दिखाते हैं ॥ १ ॥ त्रिवृत् तीन
। सूत के ऊपर को बटे और फिर वे तीनों त्रिवृत [तिगुने] नीचे
ऐसा त्रिवृत् उपवीत (जनेऊ) होता है उसकी एक ग्रन्थि (गांठ)
॥ २ ॥ पीठ की हड्डी और नाभि पर से धारण किया जो कटि तक
उस जनेऊ को धारे किन्तु न बहुत लंबा हो और न बहुत छोटा ॥३॥
ानेऊ पहने और शिखा में गांठ सदैव लगावे जिस के शिखा में गांठ
नेऊ नहीं वह जो काम करता है वह न किये के समान है ॥ ४ ॥
ों में प्रथम तीन बार जल पीके दो बार मुख पूंछ कर मुख नासिका
न नाभि हृदय शिर और कंधे इन का स्पर्श करे ॥ ५ ॥
ाओ जुड़े बीच की तीन अंगुलियों से मुख का, अंगूठा और प्रदेशिनी
।) से प्राण नासिका का स्पर्श करे।६॥ अंगूठा और अनामिका अंगुली

कनिष्ठांगुष्ठयोर्नाभिं हृदयन्तुतलेनवै ॥७॥
सर्वाभिस्तुशिरःपश्चा–द्बाहूचाग्रेणसंस्पृशेत्।
यत्रोपदिश्यतेकर्म कर्तुरंगंनतूच्यते ॥८॥
दक्षिणस्तत्रविज्ञेयः कर्मणांपारगःकरः।
यत्रदिङ्नियमोनस्या–ज्जपहोमादिकर्मसु ॥
तिस्रस्तत्रदिशःप्रोक्ता ऐन्द्रीसौम्यापराजिता।
तिष्ठन्नासीनःप्रह्वोवा नियमोयत्रनेदृशः ॥१०॥
तदासीनेनकर्त्तव्यं नप्रह्वेणनतिष्ठता।
गौरीपद्माशचीमेधा सावित्रीविजयाजया ॥
देवसेनास्वधास्वाहा मातरोलोकमातरः।
धृतिःपुष्टिस्तथातुष्टि–रात्मदेवतयासह ॥१२॥
गणेशेनाधिकाह्येता वृद्धौपूज्याश्चतुर्दश।
कर्म्मादिषुतुसर्वेषु मातरःसगणाधिपाः ॥१३॥

से नेत्र और कानों का स्पर्श करे पहिले दहिने फिर बायें का ह(अना-
गुनी) और अंगूठे से नाभि का. और हाथ तल से हृदय का.
पीछे सब अंगुलियों से शिर का और हाथ के अग्रभाग से भुजाओं
करे। जहां शास्त्र में कर्म करना कहा हो और करने वाले का कौ
अवयव] न कहा हो कि इस अंग से करे ॥८॥ तो वहां दहिना हाथ
को पूर्ण करता है जानना। जहां जप होम आदि कर्मों में दिशा
न हो ॥९॥ तो वहां तीन दिशा कहीं जानो पूर्व. उत्तर. ईशान।
में यह नियम नहीं किया कि अमुक कर्म को खड़ा होके वा बैठ
झुका हुआ करे ॥१०॥ उस कर्म को बैठकर करना चाहिये किंतु
वा झुक कर न करे। गौरी. पद्मा. शची. मेधा. सावित्री. विजय
देवसेना. स्वधा. स्वाहा. धृति. पुष्टि. तुष्टि. और आत्म देवता
अधिक जिन में ऐसी ये सब लोगों की माता चौदह मातृ का
श्राद्ध (नांदीमुख जो पुत्र जन्मादि के समय किया जाता है) में
ताओं का पूजन करे अर्थात् गणेश जी सहित इन मातृकाओं
की आदि में ॥१३॥

नीयाःप्रयत्नेन पूजिता.पूजयन्तिताः ।
तमासुचशुभ्रासु लिखित्वावापटादिषु ॥१४॥
पिवाक्षतपुंजेषु नैवेद्यैश्चपृथग्विधैः ।
कुड्यलग्नांवसोर्द्धारां सप्तधारांघृतेनतु ॥१५॥
रयेत्पञ्चधारांवा नातिनीचांनचोच्छ्रिताम् ।
युष्याणिचशान्त्ययं जप्त्वातत्रसमाहितः ॥१६॥
ड्भ्यःपितृभ्यस्तदनुभक्त्याश्राद्धमुपक्रमेत् ।
निष्ट्वातुपितृञ्छ्राद्धे नकुर्यात्कर्मवैदिकम् ॥१७॥
त्रापिमातरःपूर्वं पूजनीयाःप्रयत्नतः ।
शिष्टोक्तोविधिःकृत्स्नो द्रष्टव्योऽत्रनिरामिषः ॥१८॥
अतःपरंप्रवक्ष्यामिविशेषइहयोभवेत् ॥१८॥
इति श्रीकात्यायनस्मृतौ प्रथमखंडः समाप्तः ॥१॥
प्रातरामंत्रितान्विप्रान्युग्मानुभयतस्तथा ।
उपवेश्यकुशान्दद्यादृजुनैवहिपाणिना ॥१॥

पूजन करे क्योंकि पूजा को प्राप्त हुईं ये पूजनेवालों को पुजवाती हैं इन
द मूर्त्तियों में अथवा पट्टे पर लिख कर ॥१४॥ अथवा अक्षतों के पुंजों
ों) में पृथक् २ नैवेद्यों से पूजे । और घी छोड़कर भीतमें सात वसोर्धारा
॥१५॥ वा पांच धारा करवावे और वे धारा न बहुत नीची हों न ऊंची और
के लिये अवस्था बढ़ने की प्रार्थना अर्थ वाले मंत्र सावधानी से जप
६॥ तिस पीछे छः पितरों के नान्दी श्राद्ध का भक्ति से प्रारम्भ करे। श्राद्ध
रों के बिना पूजे वेदोक्त कर्म न करे ॥१७॥ यहां भी यत्न से–माता[यो-
ातृका] सब से पहिले पूजनी चाहिये और इस श्राद्ध में वर्जित आमिषा
सब विधान देखना चाहिये ॥ १८ ॥ इस से आगे श्राद्ध विषय में जो वि-
क्तव्य है सो हम कहेंगे ॥

यह प्रथम खंड समाप्त हुआ ॥

प्रातःकाल दिया है निमन्त्रण जिन ... दोनों पक्ष
(और पिता) के बैठाकर ... । देवे ॥१॥

हरितायज्ञियादर्भाः पीतकापाकयज्ञियाः।
समूलाःपितृदैवत्याः कल्मापावैश्वदेविकाः॥२॥
हरितावैसपिञ्जलयाः शुष्काःस्निग्धाःसमाहिताः
रत्निमात्रप्रमाणेन पितृतीर्थेनसंस्तृताः॥३॥
पिण्डार्थयेस्तृतादर्भास्तर्पणार्थंतथैवच।
धृतैःकृतेचविण्मूत्रे त्यागस्तेषांविधीयते॥४॥
दक्षिणांपातयेज्जानुं देवान्परिचरन्सदा।
पातयेदितरंजानुं पितॄन्परिचरन्नपि॥५॥
निपातोनहिसव्यस्य जानुनोविद्यतेक्वचित्।
सदापरिचरेद्भक्त्यापितॄनप्यत्रदेववत्॥६॥
पितृभ्यइतिदत्तेषुउपवेश्यकुशेपुतान्।
गोत्रनामभिरामंत्र्य पितॄनर्घ्यंप्रदापयेत्॥७॥
नात्रापसव्यकरणं नपित्र्यंतीर्थमिष्यते।

यज्ञ के दाभ हरे और पाकयज्ञ नाम वैश्वदेवादि के पीले पितृ
लिये जड़ सहित-और विश्वे देवताओं के लिये चित कबरे रंग के
श्राद्ध में हरे कुश हों वा सूखे हों पर वे अन्तर्गर्भित (जिन के भी
निकाले हों) ऐसे चिकने बराबर करके रक्खे हाथ भर लम्बे लेकर
से पितृब्राह्मणों के बैठने को बिछावे ॥३॥ पिंड और तर्पण के लिये भी
प्रकार के दाभ बिछाने चाहिये। यदि दाभों को हाथ में लिये
त्याग करे तो उन कुशाओं को त्याग देवे ॥४॥ देवताओं की
मनुष्य दहिने गोड़े को और पितरों को पूजता हुआ बायें गोड़े को
बायें गोड़े का नवाना इस नान्दीमुख श्राद्ध में कहीं भी नहीं कहा
दहिने गोड़े को नवा कर पितरों का देवताओं के समान पूजन
पितृभ्य इदं कुशासनंस्वधा-इस मन्त्र से बिछाये कुशाओं पर उन
यों को बैठा कर और नाम और गोत्र से बुलाकर पितरों को अर्घ
पात्रों के पूरण आदि कर्म देवतीर्थ से ही करे इस से इस श्रा

पात्राणांपूरणादीनि दैवेनैवहिकारयेत् ॥ ८॥
ज्येष्ठोत्तरकरान्युग्मान्कराग्राग्रपवित्रकान् ।
कृत्वार्घ्यंसंप्रदातव्यं नैकैकस्यात्रदीयते ॥ ९ ॥
अनन्तर्गर्भिणंसाग्रं कौशंद्विदलमेवच ।
प्रादेशमात्रंविज्ञेयं पवित्रंयत्रकुत्रचित् ॥ १० ॥
एतदेवहिपिंजल्या लक्षणंसमुदाहृतम् ।
आज्यस्योत्पवनार्थंय–त्तदप्येतावदेवतु॥ ११ ॥
एतत्प्रमाणामेवैके–कौशीमेवार्द्रमंजरीम् ।
शुष्कांवाशीर्णकुसुमां पिंजलींपरिचक्षते ॥ १२ ॥
पित्र्यमंत्रानुद्रवणआत्मालंभेऽधमेक्षणे ।
अधोवायुसमुत्सर्गे प्रहासेऽनृतभाषणे ॥ १३ ॥
मार्जारमूषकस्पर्शे आक्रुष्टेक्रोधसंभवे ।

भक्ष्य करना और पितृतीर्थ से काम लेना इष्ट नहीं है ॥ ८ ॥ दक्षिणा है आगे जिन के ऐसे दोनों हाथ और हाथों के आगे पवित्र कुश करके ों को एक साथ अर्घ देवे किन्तु पृथक् २ पितरों के नाम से अर्घ नहीं देवे जिस कुशा के भीतर अन्य कुश न हो और जिस का अग्रभाग बना हो दो कुशा का बना हुआ प्रादेशमात्र (बिलस्त) भर का पवित्र सभी कर्मों ानना चाहिये यह पवित्र की परिभाषा है ॥१०॥ यही अगर्भ कुशा का ल- कहा है और घी के पवित्र करने का कुशा भी इतना ही बड़ा होता है ॥११॥ कितनेक ऋषि इतने ही प्रमाण की हरे कुशा की पवित्री कहते हैं। गीली ाया सूखी परन्तु फल उस के गिर गये हों उस को पिंजली कहते हैं ॥१२॥ ं अपराधी मन्त्रों का उच्चारण करने पर, हृदय स्पर्श करने पश्चात्, ीच के देख लेने पर, अधोवायु निकल जाने पर, हंसी आजाने पर, झूठ े पर. ॥१३॥ बिलाव मूंसा इन के छू लेने पर, गाली देने वा अपशब्द जाने पर इन सब निमित्तों में कर्म करता हुआ

निमित्तेष्वेपुसर्वत्र कर्म्मकुर्वन्नपःस्पृशेत् ॥ १४ ।

इति कात्यायनस्मृतौ द्वितीयः खंडः ॥ २ ॥

अक्रियात्रिविधाप्रोक्ता विद्वद्भिःकर्म्मकारिणाम् ।
अक्रियाचपरोक्ताच तृतीयाचान्यथाक्रिया ॥ १ ॥
स्वशाखाश्रयमुत्सृज्य परशाखाश्रयंचयः ।
कर्तुमिच्छतिदुर्मेधा मोघंतत्तस्यचेष्टितम् ॥ २ ॥
यन्नाम्नातंस्वशाखायां परोक्तमविरोधिच ।
विद्वद्भिस्तदनुष्ठेय-मग्निहोत्रादिकर्म्मवत् ॥ ३ ॥
प्रवृत्तमन्यथाकुर्य्याद्यदिमोहात्कथंचन ।
यतस्तदन्यथाभूतं ततएवसमापयेत् ॥ ४ ॥
समाप्तेर्यदिजानीयान्मयैतदयथाकृतम् ।
तावदेवपुनःकुर्यान्नावृत्तिःसर्व्वकर्म्मणः ॥ ५ ॥
प्रधानस्याक्रियायत्र सांगंतत्क्रियतेपुनः ।

हुने हाथ से जल का स्पर्श करे ॥१४॥ यह दूसरा खण्ड पूरा हुआ
रने वालों का अकर्म (निन्दित कर्म) विद्वानों ने तीन प्रका
अक्रिया (कर्म को न करना) २ अपनी से भिन्न अन्य शाखा
कर्म करना ३ अन्यथा किया जैसे चाहिये वैसे न करना विधा
माना करे ॥१॥ जो कुबुद्धिपुरुष अपनी शाखा के कर्मों को छो
शाखा में कहे कर्म करने की इच्छा करता है वह उस का परि
निष्फल है ॥२॥ जो कर्म वा कर्मांग अपनी शाखा में नहीं
नी शाखा से विरुद्ध भी जो न हो समझदार मनुष्य दूसरी
हुए उस कर्म को अग्निहोत्र के तुल्य स्वीकार करे ॥ ३ ॥ प्रारंभ
दि किसी प्रकार अज्ञान से अन्यथा करै तो जहां से वह कर्म
वहां बीच में ही समाप्त करदे ॥ ४ ॥ यदि समाप्त होने पर
के मैंने यह काम अन्यथा किया तो जितना कर्म अन्यथा
ही फिर करदे-संपूर्ण कर्म को फिर न करै ॥ ५ ॥ जहां प्रधान
हीं किया हो वा विपरीत किया हो तो वहां उस कर्म फिर
वे—और उस कर्म का कोई अंग न किया हो तो ॥

तदंगस्याक्रियायांच नावृत्तिर्नैवतत्क्रिया ॥ ६ ॥
मधुमध्वितियस्तत्र त्रिर्जपोऽशितुमिच्छताम् ।
गायत्र्यनंतरंसोऽत्र मधुमन्त्रविवर्जितः ॥ ७ ॥
नचाश्नत्सुजपेदत्र कदाचित्पितृसंहिताम् ।
अन्यएवजपःकार्य्यः सोमसामादिकःशुभः ॥ ८ ॥
यस्तत्रप्रकरोऽन्नस्य तिलवद्यववत्तथा ।
उच्छिष्टसन्निधौसोऽत्र तृप्तेषुविपरीतकः ॥ ९ ॥
संपन्नमितितृप्ताःस्थ प्रश्नस्थानेविधीयते ॥
सुसंपन्नमितिप्रोक्ते शेषमन्नंनिवेदयेत् ॥ १० ॥
प्रागग्रेष्वथदर्भेषु आद्यमामंत्र्यपूर्ववत् ।
अपःक्षिपेन्मूलदेशेऽवनेनिक्ष्वेतिपात्रतः ॥ ११ ॥
द्वितीयंचतृतीयंच मध्यदेशाग्रदेशयोः ।
मातामहप्रभृतींस्त्रीनेतेषामेववामतः ॥ १२ ॥

। सब कर्म की आवृत्ति न करे किन्तु उस अंग को ही करे ॥ ६ ॥ मधु मधु
, यह जो भोजन करने वालों का तीन बार जप है वह यहां (श्राद्ध में)
त्री के पीछे मधुवाता इत्यादि मन्त्र के विना ही करना चाहिये ॥ ७ ॥
र ब्राह्मणों के भोजन करते समय श्राद्ध में पितृसंहिता न जपे किन्तु अन्य
सोम देवता वाले मन्त्रों और सामवेद आदि का शुभ पाठ करे ॥८॥ तिल
र जौ के समान जो अन्न का प्रकर (विकिर पिण्ड) है वह उच्छिष्ट के समी-
देना और ब्राह्मणों के तृप्त होने पर विपरीत (जहां उच्छिष्ट न हो) न-
देना चाहिये॥६॥ सम्पन्न (अच्छी तरह किया) तृप्त हुए यह तो यजमान प्रश्न
करे) के समय कहे–जब ब्राह्मण लोग [भले प्रकार तृप्त हुये] यह कहदें
र शेष अन्न को यजमान उन के सामने निवेदन करे और जैसी आज्ञा दें वैसा
॥ १० ॥ पूर्व को है अग्रभाग जिन का ऐसा कुशाओं पर आद्य (पिता)
पूर्व के समान आमंत्रण करके पात्र में से अवनेनिक्ष्व इस मन्त्र से कुशाओं
जड़ में जल डाले ॥ ११ ॥ पितामह को कुशा के मध्य में और प्रपितामह
कुशा के अग्रभाग में जल छोड़ मातामह (नाना) आदि तीनों को भी इन
बांई ओर जल दे ॥ १२ ॥

सर्वस्मादन्नमुद्धृत्य व्यंजनैरुपसिच्यच।
संयोज्ययवकर्कन्धूदधिभिः प्राङ्मुखस्ततः ॥ १३ ॥
अवनेजनवत्पिण्डान्दत्वाबिल्वप्रमाणकान्।
तत्पात्रक्षालनेनाथ पुनरप्यवनेजयेत् ॥ १४ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ तृतीयः खण्डः ॥ ३ ॥
उत्तरोत्तरदानेन पिंडानामुत्तरोत्तरः।
भवेदधरचाधराणा–मधरःश्राद्धकर्मणि ॥ १ ॥
तस्माच्छ्राद्धेषुसर्व्वेषुवृद्धिमत्स्वितरेषुच।
मूलमध्याग्रदेशेषु ईषत्सक्तांश्चनिर्वपेत् ॥ २ ॥
गन्धादीन्निःक्षिपेत्तूष्णीं ततआचामयेद्द्विजान्।
अन्यात्राप्येषएवस्याद्यवादिरहितोविधिः ॥ ३ ॥
दक्षिणाप्लवनेदेशे दक्षिणाभिमुखस्यच।
दक्षिणाग्रेषुदर्भेषु एषोऽन्यत्रविधिःस्मृतः ॥ ४ ॥

सब अन्न में से भोजन का भाग निकाल कर और मट्ठा आदि सेचन करके त-था जौ,बेर दही,मिलाकर–फिर पूर्वाभिमुख होकर ॥ १३ ॥ बेलके समान बड़े पिंडों को अवनेजन जहां २ दिया था वहां २ देकर अवनेजन के पात्रको धोकर प्रत्यवनेजन छोड़े ॥ १४ ॥

यह तीसरा खण्ड समाप्त हुआ ॥३॥

उत्तर २ क्रमशः पिंडों के देने से पिछला २ अधः (नीचे) होता है इस से श्राद्ध कर्म में पिछले २ पिण्ड को नीची २ जगह में देना चाहिये ॥१॥ तिससे वृद्धि के (आभ्युदयिक) श्राद्ध वा अन्य श्राद्धों में कुशा की जड़ मध्यभाग तथा अग्रभाग में कुछ लगे हुए पिंड देने चाहिये ॥ २ ॥ बिना मंत्र गंध आ-दि दे और फिर द्विजों को आचमन करावे अन्य श्राद्धों (पार्वणआदि) में जौ को छोड़ अन्य यही विधि होता है ॥३॥ जो देश दक्खिन को नीचा हो उस में यजमान भी दक्षिणाभिमुख बैठे और दक्षिणाग्रही कुशों पर पिंड आदि देवे यह विधि अन्य पार्वणादि श्राद्धों में कही है ॥ ४ ॥ फिर यजमान

अथाग्रभूमिमासिंचेत् सुसंप्रोक्षितमस्त्विति ।
शिवाआपःसन्त्वितिच युग्मानेयोदकेनच ॥ ५ ॥
सौमनस्यमस्त्वितिच पुष्पदानमनन्तरम् ।
अक्षतञ्चारिष्टंचास्त्वित्यक्षतान्प्रतिपादयेत् ॥ ६ ॥
अक्षय्योदकदानंतु अर्घ्यदानवदिष्यते ।
षष्ठ्यैवनित्यंतत्कुर्यान्नचतुर्थ्याकदाचन ॥ ७ ॥
अर्घ्येऽक्षय्योदकेचैव पिण्डदानेऽवनेजने ।
तंत्रस्यतुनिवृत्तिःस्यात् स्वधावाचनएवच ॥ ८ ॥
प्रार्थनासुप्रतिप्रोक्ते सर्वास्वेवद्विजोत्तमैः ।
पवित्रांतर्हितान्पिण्डान् सिंचेदुत्तानपात्रकृत् ॥ ९ ॥
युग्मानेवस्वस्तिवाच्यमङ्गुष्ठाग्रग्रहंसदा ।
कृत्वाधुर्यस्यविप्रस्य प्रणम्यानुव्रजेत्ततः ॥ १० ॥
एषश्राद्धविधिःकृत्स्न उक्तःसंक्षेपतोमया ।

से अपने आगे की पृथ्वी को-(सुसंप्रोक्षितमस्तु) ऐसा कहकर और
वा आपः संतु) इस मंत्र से दो ब्राह्मणों को आप ही जल से सींचे ॥५॥
मनस्यमस्तु) इस मंत्र से ब्राह्मणों को पुष्प समर्पण करे और (अक्षतं-
ष्टमस्तु) इस मंत्र से अक्षत निवेदन करे ॥ ६ ॥ अर्घ देने के समान
य जल का देना कहा है और उस अक्षय्योदक को षष्ठी (पितुः)
क्ति बोलकर देवे किन्तु चतुर्थी (पित्रे) बोल कर कभी न देवे ॥ ७ ॥
र्घ अक्षय्योदक—पिंडदान—अवनेजन और स्वधा के वचन—इन कर्मों
न्त्र (एक संकल्प से सब को अर्घ आदि न देवे किन्तु पृथक् २) से
दि देने चाहिये ॥ ८ ॥ ब्राह्मणों ने दिया जो यजमान को प्रार्थं-
का उत्तर उस के अनंतर अर्घ के पात्रों को सीधे करके पवित्रियों
के हुए पिंडों को सींचे ॥ ९ ॥ दो २ पिंडों को सींच के स्वस्तिवाचन
र अंगूठों के अग्रभाग का ग्रहण प्रथम मुख्य ब्राह्मण का करे फिर नमस्का-
रके ब्राह्मणों के पीछे चले ॥ १० ॥ यह श्राद्ध की संपूर्ण विधि संक्षेप से
हमने कही जो लोग इस विधि को जानते हैं वे कभी भी श्राद्ध कर्म में मूढ़-

येविदंतिनमुह्यन्ति श्राद्धकर्मसुतेक्वचित् ॥ ११ ॥
इदंशास्त्रंचगुह्यंच परिसंख्यानमेवच ।
वसिष्ठोक्तंचयोवेद सश्राद्धंवेदनेतरः ॥ १२ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ चतुर्थः खंडः ॥ ४ ॥
असकृद्यानिकर्माणि क्रियरन्कर्मकारिभिः ।
प्रतिप्रयोगंनैताःस्युर्मातरःश्राद्धमेवच ॥ १ ॥
आधानेहोमयोश्चैव वैश्वदेवेतथैवच ।
बलिकर्म्मणिदर्शेच पौर्णमासेतथैवच ॥ २ ॥
नवयज्ञेचयज्ञज्ञा वदन्त्येवंमनीषिणः ।
एकमेवभवेच्छ्राद्धमेतेपुनपृथक्पृथक् ॥ ३ ॥
नाष्टकासुभवेच्छ्राद्धं नश्राद्धेश्राद्धमिष्यते ।
नसोष्यन्तीजातकर्म्म प्रोषितागतकर्म्मसु ॥ ४ ॥
विवाहादिःकर्म्मगणोयउक्तो गर्भाधानंशुश्रुमयस्यचान्ते ।
विवाहादावेकमेवात्रकुर्यात्श्राद्धंनादौकर्म्मणःकर्म्मणःस्यात् ।

ता को प्राप्त नहीं होते ॥११॥ इस धर्मशास्त्र को वेदान्त को और वसिष्ठ जी के कहे धर्म शास्त्र को जो जानता है वही श्राद्ध को जानता है अन्य नहीं ॥१२॥

यह चौथा खण्ड पूर्ण हुआ ।

वारंवार जिन कर्मों को कर्म करने वाले करते हों उन प्रत्येक कर्मों में से षोडशमातृका और श्राद्ध (नांदी मुख) नहीं होते ॥ १ ॥ अग्नि स्थापन के आरम्भ में सायं प्रातः काल के अग्निहोत्रके आरम्भमें, चातुर्मास्य यज्ञोंके वैश्वदेव पर्व में, बलिदान में श्रौतदर्शेष्टि तथा पौर्णमासेष्टि के आरम्भ में ॥ २ ॥ और नवान्नेष्टि के आरम्भ में यज्ञके जानने वाले विद्वान् याज्ञिक लोग ऐसा कहते हैं कि इनमें से एक साथ सम्पन्न होने वाले कामों में एकही श्राद्ध होता है पृथक् २ नहीं ॥ ३ ॥ अष्टकाओं में और एक श्राद्ध के समय में दूसरा (आभ्युदयिक) श्राद्ध नहीं होता-परदेश में गये हुये सोष्यंती (जिसके बालक हुआ हो) उसके लौट आनेपर जातकर्मादि में नान्दी श्राद्ध न करे-॥ ४ ॥ विवाह आदि कर्म का जो समूह कहा है कि जिसके अन्त में गर्भाधान सुनते हैं उस विवाह के आदि में एकही नान्दी श्राद्ध होता है प्रति कर्म की आदिमें नहीं करे ॥ ५ ॥

प्रदोषेश्राद्धमेकंस्याद् गोनिष्क्रामप्रवेशयोः ।
नश्राद्धेयुज्यतेकर्त्तुं प्रथमेपुष्टिकर्मणि ॥ ६ ॥
हलाभियोगादिषुतु षट्सुकुर्यात्पृथक्पृथक् ।
प्रतिप्रयोगमप्येषा मादावेकन्तुकारयेत् ॥ ७ ॥
गृहत्पक्षिक्षुद्रपशुस्वस्त्यर्थंपरिविष्यतोः ।
सूर्य्येन्द्वोःकर्मणोयेतु तयोःश्राद्धंनविद्यते ॥ ८ ॥
नदशाग्रन्थिकेचैव विषवद्दष्टकर्मणि ।
कृमिदष्टचिकित्सायां नैवशेषेषुविद्यते ॥ ९ ॥
गणशःक्रियमाणेषु मातृभ्यःपूजनंसकृत् ।
सकृदेवभवेच्छ्राद्ध-मादौनपृथगादिषु ॥ १० ॥
यत्रयत्रभवेच्छ्राद्धं तत्रतत्रचमातरः ।

रात में विवाह का मुहूर्त अथवा सायंप्रातः काल में सन्तान उत्पन्न हो तो यही एक नान्दीश्राद्ध सायंकाल प्रदोष के समय वा प्रातःकाल होता है और यदि प्रातःकाल में करना पड़े तो गौओं के चरने को निकलने के समय और सायंकाल में करना हो तो गौओं के घर आने समय करे ॥ ६ ॥ हलका अभियोग (प्रथम जोतना) आदि गृह्यसूत्रोक्त छः कर्मों में पृथक् २ श्राद्ध होता है इस से प्रत्येक कर्म के आदि में एक नान्दीश्राद्ध करावे ॥ ७ ॥ बड़े २ पक्षी और छोटे २ पशु इन के कल्याण के लिये किये कर्म में सूर्य और चन्द्रमा के परिवेष [चारों ओर मण्डलाकार होने] के समय में किये कर्म में नान्दीश्राद्ध न करे ॥ ८ ॥ दशाग्रन्थि कर्म में—विषवाले जीव के काटलेने पर जो कर्म होता है उस में कीड़े के काटलेने की चिकित्सा में और जो कर्म बाकी रहजाने वाले हों उन में नान्दी श्राद्ध नहीं है ॥ ९ ॥ समूह से [एक बार] किये कर्मों में षोडश मातृकाओं का पूजन और कर्म की आदि में एक बार श्राद्ध करे पृथक् २ कर्म की आदि में नहीं ॥ १० ॥ जहां २ नान्दी होता है वहां [illegible]

प्रासङ्गिकमिदंप्रोक्त-मतःप्रकृतमुच्यते ॥ ११ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ पञ्चमः खण्डः ॥ ५ ॥

आधानकालायेप्रोक्तास्तथायेचाग्नियोनयः ।
तदाश्रयोग्निमादध्यादग्निमानग्रजोयदि ॥ १ ॥
दाराधिगमनाधाने यःकुर्यादग्रजाग्रिमः ।
परिवेत्तासविज्ञेयः परिवित्तिस्तुपूर्वजः ॥ २ ॥
परिवित्तिपरिवेत्तारौ नरकंगच्छतोध्रुवम् ।
अपिचीर्णप्रायश्चित्तौ पादोनफलभागिनौ ॥ ३ ॥
देशान्तरस्थक्लीवैकवृषणानसहोदरान् ।
वेश्यातिसक्तपतितशूद्रतुल्यातिरोगिणः ॥ ४॥
जडमूकान्धबधिरकुब्जवामनकुंडकान् ।
अतिवृद्धानभार्यांश्च कृषिसक्तान्नृपस्यच ॥ ५ ॥

[प्रसङ्ग में आया] कहा अब प्रकृत (जिस का प्रकरण था) कहते हैं ॥ ११ ॥

यह पांचवां खंड पूरा हुआ ॥ ५ ॥

जो अग्नि के आधान के समय कहे हैं और जो अग्नि के कारण हैं उन्हीं में जेठा भाई अग्निहोत्र ले चुका हो तो छोटा अग्न्याधान पूर्वक अग्निहोत्र का प्रा[रम्भ] करे॥१॥ जो छोटा भाई बड़े भाई से पहिले विवाह और अग्न्याधान करता है व[ह] परिवेत्ता और जेठा भाई परिवित्ति कहाता है ॥२॥ परिवित्ति और परिवे[त्ता] दोनों निश्चय नरक में जाते हैं यदि वे दोनों प्रायश्चित्त करलें तो पादो[न] [तीन भाग] फल के भागी होते हैं॥३॥ यदि जेठा भाई परदेश में हो वा नपुंस[क] हो वा जिस के एक ही अंडकोश हो वा अपना सहोदर [सगा] भाई न हो वा वेश्यागामी हो वा पतित हो-वा शूद्र के समान हो-वा अत्यन्त रोगी हो ॥४॥ जड़ महाअज्ञानी हो वा गूंगा हो वा अंधा हो वा बहरा कुबड़ा हो [वा] विलन्दिया बौना हो वा पिता के जीते ही जार से पैदा हुआ हो वा अत्य[न्]त बड्ढा हो वा जिस के स्त्री न हो वा जो राजा की खेती कराता हो ॥५॥

धनवृद्धिप्रसक्तांश्च कामतःकारिणस्तथा ।
कुलटोन्मत्तचोरांश्च परिविन्दन्नदुष्यति ॥ ६ ॥
धनवार्द्धुषिकंराजसेवकंकर्म्मकस्तथा ।
प्रोषितञ्चप्रतीक्षेत वर्षत्रयमपित्वरन् ॥ ७ ॥
प्रोषितंयद्यशृण्वानमब्दादूर्ध्वंसमाचरेत् ।
आगतेतुपुनस्तस्मिन्पादंतच्छुद्धयेचरेत् ॥ ८ ॥
क्षणेप्राग्गतायाग्तु प्रमाणंद्वादशाङ्गुलम् ।
मूलसक्तायोदीची तस्याएतन्नवोत्तरम् ॥ ९ ॥
ग्गतायाःसंलग्नाः शेषा प्रादेशमात्रिकाः ।
सप्ताङ्गुलांस्त्यक्त्वा कुशेनैवसमुल्लिखेत् ॥१०॥
क्रियायामुक्तायामनुवर्तमानकर्त्तरि ।

ढ़ाने में आसक्त हो वा अपनी इच्छा के अनुसार जो कर्म क-
र २ में जो फिरे वा उन्मत्त वा चोर इतने जेठे भाइयों से पहिले
र अग्निहोत्र लेने में छोटा भाई दोषभागी नहीं होता ॥ ६ ॥
याज से धन को बढ़ाने वाला हो वा राजा का सेवक हो वा
ऐसे को शीघ्रता करने वाला भी अग्निहोत्रादि कर्म
वा छोटा भाई तीन वर्ष तक उस बड़े भाई की बाट
रदेश में रहने की खबर न हो कि कहां है तो एक वर्ष पी-
रसे यदि जेठा भाई फिर आजाय तो उस पाप की शुद्धि के
ायश्चित्त करे ॥ ८ ॥ अग्निकुण्ड बनाने के लिये जो चिह्न
ी रेखा पूर्व को खींचे वह बारह अंगुल की हो और उस
उत्तर की रेखा दश अंगुल की खींचे ॥ ९ ॥ उत्तर को गई
ष रेखा प्रादेश मात्र दश २ अंगुल की हों । उन को आ-
शेष भाग में उल्लेखन संस्कार कुशों से करे ॥ १० ॥ जहां
हो पर नाम का करने वाला न कहा हो वहां विद्वानों

मानकृद्यजमानःस्याद्विदुषामेपनिश्चयः ॥ ११ ॥
पुण्यवानादधीताग्निं सहिसर्वैःप्रशस्यते ।
अनदुर्धुकत्वंयत्तस्य काम्यैस्तन्नीयतेशमम् ॥ १२ ॥
यस्यदत्ताभवेत्कन्या वाचासत्येनकेनचित् ।
सोऽन्त्यांसमिधमाधास्यन्नादधीतैवनान्यया ॥ १३ ॥
अनूढैवतुसाकन्या पञ्चत्वंयदिगच्छति ।
नतयाव्रतलोपोऽस्य तेनैवान्यांसमुद्वहेत् ॥ १४ ॥
अथचेन्नलभेतान्यां याचमानोऽपिकन्यकाम् ।
तमग्निमात्मसात्कृत्वाक्षिप्रंस्यादुत्तराश्रमी ॥ १५ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ षष्ठः खंडः ॥ ६ ॥

अश्वत्थोयःशमीगर्भः प्रशस्तोर्वीसमुद्भवः ।

का यह निश्चय है कि माप का कर्त्ता यजमान होता है अर्थात् यजमान की अंगुलियों से माप करना चाहिये ॥ ११ ॥ धनवान् न होने पर भी धर्मात्मा पुण्य शील पुरुष अग्नि को विधि पूर्वक स्थापन करे क्योंकि धर्मात्मा की ही सब प्रशंसा करते हैं । और जो उस की निर्धनता है वह काम्य कर्मों के अनुष्ठान से शान्त हो कर धनी हो जाता है ॥ १२ ॥ यदि किसी ने सत्यवाणी से किसी को कन्या दी हो अर्थात् सगाई करदी हो वह वर यदि उस कन्या के जीवन पर्यन्त अग्निहोत्र करना चाहता हो तो उसी के साथ विवाह करके अवश्य अग्न्याधान करे किन्तु अन्य स्त्री के साथ अग्निहोत्र न लेवे ॥ १३ ॥ यदि वह कन्या बिना विवाही मरजाय तो उस से उस पुरुष के व्रत (अग्निहोत्र लेने की प्रतिज्ञा) का नाश नहीं होता उसी अग्नि से दूसरी स्त्री को विवाह लेवे ॥ १४ ॥ यदि मांगने से भी अन्य कन्या न मिले तो विधिपूर्वक आत्मा में उस अग्नि का समारोप करके संन्यासी हो जावे ॥ १५ ॥

यह छठा खण्ड पूरा हुआ ॥६॥

शमीनाम छोंकर जिस में मिलकर जम गयी हो ऐसा शुद्ध भूमि में उत्पन्न जो पीपल है उस की जो पूर्व को वा उत्तर को अथवा ऊपर को शा

तस्ययाप्राङ्मुखीशाखा योदीचीयोर्द्ध्वगापिवा ॥ १ ॥
अरणिस्तन्मयीप्रोक्ता तन्मयेवोत्तरारणिः ।
सारवद्दारवञ्चात्र मोविलीचप्रशस्यते ॥ २ ॥
संसक्तमूलोयःशम्याः सशमीगर्भउच्यते ।
अलाभेत्वशमीगर्भादुद्धरेदविलम्बितः ॥ ३ ॥
चतुर्विंशतिरंगुष्ठदैर्घ्यंषडपिपार्थिवम् ।
चत्वारउच्छ्रयेमानमरण्योःपरिकीर्त्तितम् ॥ ४ ॥
अष्टाङ्गुलःप्रमन्थःस्याच्चात्रंस्याद्द्वादशाङ्गुलम ॥
ओविलीद्वादशैवस्यादेतन्मंथनयंत्रकम् ॥ ५ ॥
अङ्गुष्ठाङ्गुलमानन्तु यत्रयत्रोपदिश्यते ।
तत्रतत्रबृहत्पर्वग्रंथिभिर्मिनुयात्सदा ॥ ६ ॥

ढाली शाखा है ॥ १ ॥ उस की नीचली और ऊपर की अधरारणी उत्तरा-रणी (जिस में धर्मे को दबाकर धर्मा फेरते हैं) बनानी चाहिये और दृढ़ काठ का चात्र और ओविली [जो धर्मे के नीचे ऊपर की छोटी २ लकड़ी होती हैं] श्रेष्ठ कहे हैं ॥ २ ॥ शमी-छोंकरकी जड़ से जिस की जड़ मिली हो उस पीपल को शमीगर्भ कहते हैं । यदि शमीगर्भ पीपल न मिले तो जो श-मीगर्भ नहीं उसी केवल पीपल से अरणी के लिये शीघ्र शाखा को काटलेवे ॥ ३ ॥ चौबीस अंगुल की लंबाई छः अंगुल की चौड़ाई चार अंगुल की मुटाई वा ऊंचाई का प्रमाण दोनों अरणियों का कहा है ॥ ४ ॥ आठ अंगुल का प्र-मंथ (उत्तरारणी का टुकड़ा जिस को अधरारणी में लगाकर मन्थन करते हैं) होता है बारह अंगुल का चात्र (जिस लकड़ी में रस्सी लपेट कर खेंचते हैं वह चात्र कहाता है) और ओविली (जिस लकड़ी को ऊपर से टिकाकर रख-कर दोनों हाथ से दबाते वह ओविली कहाती है) होते हैं ये सब मिल कर अग्नि मथने का सामान है ॥ ५ ॥ जहां २ अंगूठे के अंगुल का नाम कहा है वहां २ बीच की गांठ से सदैव नापे ॥ ६ ॥

गोबालैःशणसंमिश्रैस्त्रिवृत्तममलात्मकम् ।
व्यामप्रमाणंनेत्रंस्या-त्प्रमथ्यस्तेनपावकः ॥ ७ ॥
मूर्द्धाक्षिकर्णवक्त्राणि कन्धराचापिपञ्चमी ।
अङ्गुष्ठमात्राण्येतानि द्व्यंगुष्ठंवक्षउच्यते ॥ ८ ॥
अंगुष्ठमात्रंहृदयं त्र्यंगुष्ठमुदरंस्मृतम् ।
एकांगुष्ठाकटिर्ज्ञेयाद्वौवस्तिर्द्वौचगुह्यकम् ॥ ९ ॥
ऊरूजंघेचपादौचचतुस्त्र्येकैर्यथाक्रमम् ।
अरण्यवयवाह्येते याज्ञिकैःपरिकीर्तिताः ॥ १० ॥
यत्तद्गुह्यमितिप्रोक्तं देवयोनिस्तुसोच्यते ।
अस्यांयोजायतेवन्हिः सकल्याणकृदुच्यते ॥ ११ ॥
अन्येषुयेतुमथ्नन्ति तेरोगभयमाप्नुयुः ।
प्रथमेमन्थनेत्वेषा नियमोनोत्तरेषुच ॥१२ ॥

शण जिन में मिला हो ऐसे गौ के बालों से तिगुना ऐंठा हु[आ]
निर्मल साढ़े तीन हाथ लम्बा नेत्र नामक रस्सी बनावे उस से अ[ग्नि]
को मथे ॥ ७ ॥ शिर–नेत्र–कान–मुख–गला ये पांचों एक २ अं[गुठे]
के प्रमाण कल्पना करे दो अंगुठे प्रमाण छाती ॥ ८ ॥ एक अंगूठा हृ[दय]
–तीन अंगूठे प्रमाण उदर हो–एक अंगूठे नाभि से निचला भाग [पेंड़]
और दो अंगुष्ठ प्रमाण उपस्थेन्द्रिय ॥ ९ ॥ ऊरू [घोंटूसे ऊपर का भाग] [ज]
घा [घोंटसे नीचेका भाग]और पग ये तीनों क्रमसे चार तीन एक अंगुल [प्रमाण]
कल्पना कर वहां २ चिह्नकर देवे ये सब यज्ञ कर्ताओंने अरणी के अवयव क[हे]
हैं ॥ १० ॥ जो पूर्व गुह्यस्थल–उपस्थ कहा है उसे देव (अग्नि) की यो[नि]
[कारण] कहते हैं इसमें जो अग्नि उत्पन्न होता है वह कल्याण करने वा[ला]
कहा है बीच में गुह्यस्थल जानने के लिये अरणी के सब अंगोंकी कल्पना [की]
गई है । अग्न्याधानके समय प्रथम अवश्य ही गुह्यस्थल में मन्थन कर अ[ग्नि]
[अ]ग्निको निकाले ॥ ११ ॥ अन्य जगह जो अग्नि को मथते हैं वे रोग और भ[य]
को प्राप्त होते हैं । पहिले पहिल मथने में ही यह नियम है आगे अग्नि
मथनेमें गुह्यस्थल का नियम नहीं है ॥ १२ ॥

उत्तरारणिनिष्पन्नः प्रमंथःसर्वदाभवेत् ।
योनिसंकरदोषेण युज्यतेह्यन्यमन्थकृत् ॥ १३ ॥
आर्द्रासशुषिराचैव घूर्णाङ्गीपाटितातथा ।
नहितायजमानानामरणिश्चोत्तरारणिः ॥ १४ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ सप्तमः खंडः ॥ ७ ॥

परिधायाहतंवासः प्रावृत्यचयथाविधि ।
बिभृयात्प्राङ्मुखोयन्त्रमावृतावक्ष्यमाणया ॥ १ ॥
चात्रबुध्नेप्रमन्थाग्रं गाढंकृत्वाविचक्षणः ।
कृत्वोत्तराग्रामरणिं तद्बुध्नमुपरिन्यसेत् ॥२॥
चात्राधःकीलकाग्रस्थामोविलीमुदगग्रकाम् ।
विष्टंभाद्धारयेद्यन्त्रं निष्कम्पंप्रयतःशुचिः ॥३॥
त्रिवृद्वेष्ट्याथनेत्रेण चात्रंपत्न्योहतांशुकाः ।

ऊपर की अरणी से निकाला टुकड़ा ही सदा प्रमंथ हो यदि अन्य लकड़ी का थ बनावेगा तो यजमानको योनि संकर दोष लगेगा ॥१३॥ गीली छिद्रों-ली, घुनी, फटी ऐसी ये दोनों अरणी यजमान के लिये हित नहीं हैं ॥१४॥

यह सातवां खण्ड पूरा हुआ ॥७॥

जो किसी धानमें से फाड़ी न हो ऐसी चीरेदार नई धोती पहनकर और र से वैसीही एक धोती ओढ़के पूर्वाभिमुख हो आगे कहे अनुसार अग्नि :थन का सामान स्वीकार करे॥१॥ विचारशील पुरुष चात्र के छिद्र में प्रमन्थ अग्रभाग को मजबूतीसे गाढ़के उत्तर को जिस का अग्रभाग हो ऐसी अधरारणी रखे उसके गुप्तस्थलमें प्रमन्थका छोर धरे ॥२॥ तब शुद्ध हुआ यजमान चात्रके चे की कीलके अग्रभाग में उत्तरको अग्रभाग जिस का हो ऐसी ओविली को रखे और बड़े जोरसे ऐसा सावधान होकर दोनों हाथसे ओविली को दबावे जबसे हिले नहीं ॥३॥ और चीरेदार नयी साड़ी पहन कर यजमान की पत्नी त्र में नेत्र नामक रस्सी को तीन बार लपेट के स्त्रियां पहिले इस प्रकार अग्निको

पूर्वंमन्थन्त्यरण्यान्ताः प्राच्यग्नेःस्याद्यथाच्युतिः ॥४॥
नैकयापिविनाकार्यमाधानंभार्ययाद्विजैः ।
अकृतंतद्विजानीयात्सर्वान्वाचारमन्तियत् ॥५॥
वर्णज्येष्ठ्येनबह्वीभिः सवर्णाभिश्चजन्मतः ।
कार्यमग्निच्युतेराभिः साध्वीभिर्मन्थनंपुनः ॥६॥
नात्रशूद्रींप्रयुञ्जीत नद्रोहद्वेषकारिणीम् ।
नचैवाव्रतस्थांनान्यपुंसाचसहसङ्गताम् ॥७॥
ततःशक्ततरापश्चादासामन्यतरापिवा ।
उपेतानांवान्यतमामन्थेदग्निंनिकामतः ॥८॥
जातस्यलक्षणंकृत्वा तंप्रणीयसमिध्यच ।
आधायसमिधंचैव ब्रह्माणंचोपवेशयेत् ॥९॥
ततःपूर्णाहुतिंहुत्वा सर्वमन्त्रसमन्वितम् ।
गांदद्याद्यज्ञवानन्ते ब्रह्मणेवाससीतथा ॥१०

मथें जिस से अरणी में से पूर्व दिशा में अग्नि निकल के गिरे ॥४॥ ब्राह्मणादि द्विज एक भी पत्नी न हो तो अग्नि का आधान न करे यदि करे तो उस [illegible] नहीं किया जाने, जिस से स्त्री सब मनुष्यों को वार्णी से वश में करती हैं ॥ यदि बहुत स्त्री हों तो जो उत्तम वर्ण हो उस के साथ और यदि उत्तम व[illegible] की ही बहुत हों तो जो अवस्था में बड़ी हो उसके साथ अग्नि का आधा[न] करे यदि भचित अग्नि नष्ट होजाय तो सीधे स्वभाव वाली स्त्रियां फि[र म]थन करें ॥६॥ अग्नि के स्थापन में इन स्त्रियों को नियुक्त न करे—शूद्री, क्रो[ध]धिनी, लड़ाका, जो किसी नियम में स्थित न हो. और जिस ने अन्य पु[रुष] का संग किया हो ॥ ७ ॥ फिर उन दो प्रकार की सवर्णा असवर्णा स्त्रियों [में] जो अत्यन्त समर्थ बलवती हो अथवा एक वर्ण की प्राप्त हुई बहुत स्त्रियों [में] कोई अवस्था में छोटी भी हो तो वह इच्छापूर्वक अग्नि को मथे ॥८॥ [उत्पन्न] हुए अग्नि के लक्षण प्रकाश कर अग्निशाला में लाके प्रज्वलित करके और [स]मिधा ढांक की लकड़ी अग्नि में रख के अग्निकुण्ड से दक्षिण में विधिपू[र्वक आ]सन करके ब्रह्मा को बैठावे ॥९॥ फिर पूर्णाहुति के सब मन्त्रों से पूर्णाहु[ति] देकर अन्त में ब्रह्मा को दो वस्त्र और गौ दान देवे ॥१०॥

होमपात्रमनादेशे द्रवद्रव्येस्रुवःस्मृतः ।
पाणिरेवेतरस्मिंस्तु स्रुचैवात्रतुहूयते ॥ ११ ॥
खादिरोवाथपालाशो द्विवितस्तिःस्रुवःस्मृतः ।
स्रुग्बाहुमात्राविज्ञेया वृत्तस्तुप्रग्रहस्तयोः ॥ १२ ॥
स्रुवाग्रेघ्राणवत्खातं द्व्यंगुष्ठपरिमंडलम् ।
जुह्वाःशराववत्खातं सनिर्व्वाहंषडङ्गुलम् ॥ १३ ॥
तेषांप्राक्शःकुशैःकार्य्यः संप्रमार्गोजुहूषता ।
प्रतापनञ्चलिप्तानां प्रक्षाल्योष्णेनवारिणा ॥ १४ ॥
प्राञ्चंप्राङ्मुदगग्नेरुदगग्रंसमीपतः ।
तत्तथासादयेद्द्रव्यं यद्यथाविनियुज्यते ॥ १५ ॥
आज्यहव्यमनादेशे जुहोतिषुविधीयते ।
मन्त्रस्यदेवतायाश्च प्रजापतिरितिस्थितिः ॥१६॥

जहां गीले वस्तुका होम करना हो और कोई होमपात्र न कहा हो तो वहां स्रुवा को होम का पात्र समझना चाहिये अन्य पूर्वे शाकल्य में हाथ से होम और यहां अग्निहोत्र में स्रुक् से ही होम होता है ॥११॥ खैर अथवा ढाक का दो बिलस्त लंबा स्रुव कहा है और एक भुजाभर लम्बी स्रुच् होती है इन दोनों का ग्रहण [पकड़नेकी जगह] वृत्त [गोल] होती है ॥ १२ ॥ स्रुव के अग्रभाग में नासिका के समान दो गर्त होते दो अंगूठे की बराबर गहरे गोलाकार बनावे और जुहू (होमपात्र) के अग्रभाग में शराव (सरवा) के समान प्रनिर्वाह (पनाले के समान) छः अंगुल का गर्त करना चाहिये ॥१३॥ इनके पहिले भागमें कुशाओंसे प्रमार्ग(अच्छी सफाई)हवन करना चाहता हुआ करै—यदि ये तीनों घी आदि से लिपे हों तो उष्ण जलसे धोकर इनको तपाय ले ॥ १४ ॥ अग्नि से उत्तर में पूर्व को अग्नि के समीप ही उत्तर को अग्रभाग कर २ पात्रासादन कर्म करे जिस २ पात्रादि का जैसा २ आगे पीछे काम पड़े उस २ को वैसा २ क्रम से स्थापित करे ॥१५॥ सब होमों में जहां किसी होम के वस्तु का नाम नहीं कहा वहां गौ के घी को ही द्रव्य जानो जहां किसी मंत्र का देवता नहीं कहा वहां प्रजापति देवता जानो यही मर्यादा है ॥१६॥

नांगुष्ठादधिकाग्राह्या समित्स्थूलतयाक्वचित् ।
नवियुक्तात्वचाचैव नसकीटानपाटिता ॥१७॥
प्रादेशान्नाधिकानोना नतथास्याद्विशाखिका ।
नसपर्णाननिर्वीर्या होमेपुचविजानता ॥१८॥
प्रादेशद्वयमिध्मस्य प्रमाणंपरिकीर्तितम् ।
एवंविधाःस्युरेवेह समिधःसर्वकर्मसु ॥१९॥
समिधोऽष्टादशेध्मस्य प्रवदन्तिमनीषिणः ।
दर्शेचपौर्णमासेच क्रियास्वन्यासुविंशतिः ॥ २० ॥
समिधादिषुहोमेषु मंत्रदैवतवर्जिता ।
पुरस्ताच्चोपरिष्टाच्च होन्धनार्थंसमिद्भवेत् ॥ २१ ॥
इध्मोऽप्येधार्थमाचार्य्यैर्हविराहुतिषुस्मृतः ।
यत्रचास्यनिवृत्तिःस्यात्तत्स्पष्टीकरवाण्यहम् ॥ २२ ॥

जो अंगूठे से अधिक मोटी हो जिस के त्वचा (वक्कल) न हो जिस में कीड़े हों—और जो फटी हो ऐसी समिधा किसी होम में नहीं लेनी चाहिये ॥ जो प्रादेश (अंगूठा और तर्जनी की लम्बाई प्रमाण) से अधिक लम्बी या कम हो और जिसके शाखा(डाली)न हों—और जिसके पत्ते हों—और जो निर्बल भी हो—ज्ञानवान् पुरुष होम में ऐसी समिधा न लेवे ॥१८॥ दो हस्तप्रादेश होम जलाने के इन्धन का प्रमाण कहा है सब कर्मों में ऐसी ही समिधा होनी चाहिये ॥१९॥ विद्वान् लोग दर्शपौर्णमास की इष्टियों में इध्मसंज्ञक अठारह १८ समिधा कहते हैं जिन में पञ्चदश सामिधेनी की दो परिधि परिधान के अन्त चढ़ाने की और एक अनुयाजों की ये १८ हुईं और अन्य इष्टियों में सप्त सामिधेनी होने से बीश होती हैं ॥ २० ॥ जो होम समिधों से किये जाते उन के पहिले अथवा पीछे इंधन के लिये जो समिधा होती है उस का मन्त्र और देवता कोई भी नहीं होता ॥ २१ ॥ एध (इंधन) के लिये इध्म [अठारह समिध] को भी आचार्य कहते हैं कि यह भी पुरोडाशादि हविष् की आहुतियों में संमिलित है । और जिस कर्म में यह इध्म नहीं उस का स्पष्ट करेंगे ॥ २२ ॥

अंगहोमसमित्तन्त्र सोष्यन्त्याख्येषुकर्म्मसु ।
येषांचैतदुपर्य्युक्तं तेषुतत्सदृशेषुच ॥ २३ ॥
अक्षभंगादिविपदि जलहोमादिकर्म्मणि ।
सोमाहुतिषुसर्व्वासुनैतेष्विध्मोविधीयते ॥ २४ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ अष्टमः खण्डः ॥ ८ ॥
सूर्य्येऽस्तशैलमप्राप्ते षट्त्रिंशद्भिःसदांगुलैः ।
प्रादुष्करणमग्नीनां प्रातर्भासांचदर्शनात् ॥ १ ॥
हस्तादूर्ध्वंरविर्यावद् गिरिंहित्वानगच्छति ।
तावद्धोमविधिःपुण्यो नात्येत्युदितहोमिनाम् ॥ २ ॥
यावत्सम्यग्नभाव्यंते नभस्यृक्षाणिसर्वतः ।
नचलौहित्यमापैति तावत्सायंचहूयते ॥ ३ ॥
रजोनीहारधूमाभ्रवृक्षाग्रान्तरितेरवौ ।

अंग होम (बड़े यज्ञ में कर्तव्य छोटे यज्ञ में जो होता है) समित्तन्त्र गर्भाधान आदि संस्कार—और जिन में पहिले कहा है उन में और उन के समान कर्मों में ॥ २३ ॥ गाड़ी की धुरी टूट जाने आदि विपत्ति में जल के निमित्त जो होम तिस में और संपूर्ण सोम की आहुतियों में इध्म नहीं कहा है ॥ २४ ॥

यह आठवां खंड पूरा हुआ ॥८॥

जिस समय सूर्य अस्ताचल पर्वत से छत्तीस अंगुल ऊपर हों उस समय संध्या को और प्रातःकाल किरणों के दीखने पर अग्नियों को प्रज्वलित करे॥१॥ सूर्योदय हो जाने पर होम करने वालों का होमविधि तब तक भ्रष्ट नहीं होता जब तक उदयाचल से एक हाथ से ऊपर सूर्य न पहुंचे अर्थात् एक हाथ सूर्य के चढ़ने तक उदय काल ही रहता है यह विचार उदित होम करने वालों के लिये है ॥ २ ॥ जब तक सर्व आकाश में भले प्रकार नक्षत्र न दीखें और आकाश की लाली दूर न हो तब तक संध्या को होम कर सकता है ॥३॥ यदि धूली कोहरा धुआं—मेघ और वृक्ष—इन की

संध्यामुद्दिश्यजुहुयाद्धुतमस्यनलुप्यते ॥ ४ ॥
नकुर्यात्क्षिप्रहोमेषु द्विजःपरिसमूहनम् ।
वैरूपाक्षंचनजपेत्प्रपदंचविवर्जयेत् ॥ ५ ॥
पर्य्युक्षणंचसर्वत्रकर्तव्यमुदितेन्विति ।
अंतेचवामदेव्यस्य गानंकुर्य्यादृचस्त्रिधा ॥ ६ ॥
अहोमकेष्वपिभवेद्यथोक्तंचंद्रदर्शनम् ।
वामदेव्यंगणेष्वन्ते वल्यन्तेवैश्वदेविके ॥ ७ ॥
यान्यधस्तरणान्तानि नतेपुस्तरणंभवेत् ।
एककार्यार्थसाध्यत्वात्परिधीनपिवर्जयेत् ॥ ८ ॥
बर्हिःपर्य्युक्षणंचैव वामदेव्यजपस्तथा ।
कृत्वाहुतिषुसर्व्वासु त्रिकमेतन्नविद्यते ॥ ९ ॥
हविष्येषुयथामुख्यास्तदनुव्रीहयःस्मृतः ।

आड़ में होनेसेसूर्य न दीखेंतो,संन्ध्या समय समझ कर जो होम करे उसका नष्ट नहीं होता ॥४॥ द्विज पुरुष शीघ्रता के होमों में परिसमूहन न करे- विरूपाक्ष मंत्र न जपे प्रपद नामक कर्म भी छोड़ देवे ॥ ५ ॥ सब होमों आदि में पर्य्युक्षण (ईशान कोण से प्रदक्षिण अग्नि कुंड के सब ओर सेचन करना) और अंत में वामदेव्य साम का तीन प्रकार से गान करे जिन कर्मों में होम नहीं होता उन में चन्द्रमा का दर्शन जैसे होता है ऐसे गणों (कर्मों के समूहों) के अंत में और बलिदान के अन्त में वैश्वदेव के में वामदेव्य साम का गान करना चाहिये ॥ ७ ॥ नीचे स्थल में बिछाये ! तक जिन कर्मों की समाप्ति होती है उन में अलग २ कुश नहीं बिछाने चाहिये और एक ही कार्य की सिद्धि के लिये होने से पृथक् २ बने अग्निकु में अलग २ परिधि नामक लकड़ी भी स्थापित न करे ॥ ८ ॥ बर्हिः [मुट्ठी कुशों के बिछाने का विनियोग] पर्य्युक्षण वामदेव्य साम का गा तीन कर्म यज्ञों की आहुतियों में नहीं होते ॥ ९ ॥ सब हविष्यों में जो धान व जौ हैं वे न मिलें तो अन्य कोई अन्न ले लेवे परन्तु उड़द-कोदों

कोद्रवगौरादिसर्वालाभेऽपिवर्जयेत् ॥ १० ॥
पाण्याहुतिर्द्वादशपर्व्वपूरिका
कंसादिनाचेत्स्रुवमात्रपूरिका ।
दैवेनतीर्थेनचहूयतेहविः
स्वंगारिणिस्वर्च्चिपितच्चपावके ॥ ११ ॥
योऽनर्च्चिपिजुहोत्यग्नौ व्यंगारिणिचमानवः ।
मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्चसजायते ॥ १२ ॥
तस्मात्समिद्धेहोतव्यं नासमिद्धेकदाचन ।
आरोग्यमिच्छतायुश्च श्रियमात्यंतिकींपराम् ॥१३॥
होतव्येचहुतेचैव पाणिशूर्पस्फ्यदारुभिः ।
नकुर्यादग्निधमनं कुर्याद्वाव्यजनादिना ॥ १४ ॥
मुखेनैकेधमन्त्यग्निंमुखाद्ध्येषोऽध्यजायत ।

को सदा ही वर्जदे और तिल आदि की आहुति दे देवे ॥१०॥ मुट्ठी चांवल
कादि से होम करने में हाथ से जो आहुति देनी हो तो इतने की देवे जिस ॥
रह पर्व (अंगुल) चारों अंगुलियों के भर जायं यदि पात्र से देतो स्रुवेको
के दे और शाकल्य को देवतीर्थ [अंगुलियों के अग्रभाग में होता है] से
गारों वाले अच्छे प्रज्वलित अग्नि में आहुति देवे ॥ ११ ॥ जिस में ज्वाला
और अंगार नहीं ऐसे अग्नि में जो मनुष्य होम करता है वह
मंदाग्नि वाला रोगी और दरिद्री होता है ॥ १२ ॥ तिस से नीरो-
गता बड़ी अवस्था-और अत्यन्त श्रेष्ठ लक्ष्मी की इच्छा करने वाला पुरुष
अच्छे जलते हुए अग्नि में होम करे-जो अग्नि न जलता हो उस में कभी
न करे ॥ १३ ॥ जिस अग्नि में होम करना हो या कर चुका हो उस को
हाथ-सूप-स्फ्य [वज्र के तुल्य बना] तथा लकड़ी से न धौंके किन्तु बीजने
आदि से ही जलावे ॥ १४ ॥ कोई आचार्य मुख से अग्नि को जलाना कहते
हैं क्योंकि यह अग्नि मुख से ही पैदा हुआ है यदि कोई यह कहे कि अग्नि

नाग्निंमुखेनेतिचयल्लौकिकेयोजयन्तितत् ॥ १५ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ नवमः खंडः ॥ ९ ॥

यथाहनितथाप्रातर्नित्यंस्नायादनातुरः ।
दन्तान्प्रक्षाल्यनद्यादौ गृहेचेत्तदमन्त्रवत् ॥ १
नारदाद्युक्तवार्क्षंयदष्टाङ्गुलमपाटितम् ।
सत्वचंदन्तकाष्ठंस्यात्तदग्रेणप्रधावयेत् ॥ २ ॥
उत्थायनेत्रेप्रक्षाल्य शुचिर्भूत्वासमाहितः ।
परिजप्यचमन्त्रेण भक्षयेद्दंतधावनम् ॥ ३ ॥
आयुर्वलंयशोवर्च्चः प्रजाःपशून्वसूनिच ।
ब्रह्मप्रज्ञाञ्चमेधाञ्च तन्नोधेहिवनस्पते ॥ ४ ॥
मासद्वयंश्रावणादिसर्व्वानद्योरजस्वलाः ।
तासुस्नानंनकुर्वीत वर्जयित्वासमुद्रगाः ॥ ५ ॥

जो मुख से न फूंके ऐसा मनु ने कहा है तो यह मनु जी का कथ
(साधारण) अग्नि के लिये है ॥ १५ ॥

यह नवां खंड पूरा हुआ ॥ ९ ॥

नीरोग मनुष्य जैसे दिन में स्नान करे तैसे ही प्रातःकाल भी करे न
के समीप दातौन करके स्नान करे और घर में करे तो मन्त्रों के बिना
नारद आदि ऋषियों ने कहे जो वृक्ष उन की आठ अंगुल लम्बी वि
और वल्कल सहित–दातौन होनी चाहिये उस के अग्रभाग से दांतों
इसी तरह शुद्ध करे ॥२॥ प्रातःकाल सोते से उठ कर-नेत्रों को धोके प
से शुद्ध होकर और (आयुर्बलंयशोवर्च्चः) इत्यादि मन्त्र को जप के
करे॥३॥ और वनस्पति से प्रार्थना करे कि हे वृक्ष तू मुझे आयुर्बल–यश
तेज,प्रजा, पशु, धन, वेद और उत्तम बुद्धि इन को दे ॥४॥ श्रावण आदि
महीनों में सब नदी रजस्वला [मलिन जल वाली] होजाती हैं जो न
मुद्र तक जाती हैं उन को छोड़ कर रजस्वला नदियों में स्नान न करे

:सहस्राण्यष्टौतु गतिर्यासांनविद्यते ।
ानदीशब्दवहा गर्तास्ताःपरिकीर्तिताः ॥ ६ ॥
पाकर्मणिचोत्सर्गे प्रेतस्नानेतथैवच ।
न्द्रसूर्यग्रहेचैव रजोदोषोनविद्यते ॥७॥
दास्छन्दांसिसर्वाणि ब्रह्माद्याश्चदिवौकसः ।
जलार्थिनोऽथपितरो मरीच्याद्यास्तथर्षयः ॥८॥
उपाकर्मणिचोत्सर्गे स्नानार्थंब्रह्मवादिनः ।
पिपासूननुगच्छन्ति सन्तुष्टाःस्वशरीरिणः ॥९॥
समागमस्तुयत्रैषां तत्रहत्यादयोमलाः ।
नूनंसर्वेक्षयंयान्ति किमुतैकंनदीरजः ॥१०॥
ऋषीणांसिच्यमानाना–मन्तरालंसमाश्रितः ।
सम्पिबेद्यःशरीरेण पर्षन्मुक्तजलच्छटाः ।११॥
विद्यादीन्ब्राह्मणःकामान्वरादीन्कन्यकाध्रुवम् ।

ठ हजार धनुष तक जो नहीं जातीं उन को नदी नहीं कहते किन्तु उनका नाम
तें है ॥६॥ उपाकर्म नाम श्रावणी के दिन होने वाला वेदारम्भ और उत्सर्ग
ाम वेद समाप्ति का स्नान प्रेत के निमित्त स्नान चन्द्रमा और सूर्य के ग्रहण का
नान इन में नदी के रजस्वला होने का दोष नहीं है ॥७॥ वेद, संपूर्ण छंद ब्र-
आदिक देवता और जल के अभिलाषी पितर और मरीचि आदि ऋषी ॥ ८ ॥
ये सब अपना २ सूक्ष्म शरीर धारण कर उस समय उन के पीछे चलते हैं जिस
समय सन्तोषी वेद के ज्ञाता देहधारी उपाकर्म और उत्सर्ग के स्नान के निमित्त
जाते हैं ॥ ९ ॥ जहां इन वेद आदिकों का समागम है वहां जब हत्या आदि
बड़े २ सब पाप निश्चय से नष्ट होजाते हैं तब नदी का रज नष्ट क्यों न होगा?॥१०॥
सींचे जाते (हुए) ऋषियों के मध्य में ठहरा जो मनुष्य अपने शरीर के द्वा-
रा शिष्य समुदाय से छुटीं जल की छटाओं (बूदों) को पीता है अर्थात् ऋ-
षि आदि के तर्पण जल के छींटे अपने शरीर पर लेता है ॥ ११ ॥

आमुष्मिकान्यपिसुखान्याप्नुयात्सनसंशयः ॥१२॥
अशुच्यशुचिनादत्त मामन्नतर्जलादिना ।
अनिर्गतदशाहात्तु प्रेतारक्षांसिभुञ्जते ॥१३॥
स्त्रर्धुन्यंभःसमानिस्युः सर्वाण्यम्भांसिभूतले ।
कूपस्थान्यपिसोमार्क ग्रहणेनात्रसंशयः ॥१४॥
इति कात्यायनस्मृतौ चतुर्दशः खण्डः ॥ इतिकर्म
दीपे परिशिष्टे कात्यायनविरचिते प्रथमः प्रपाठक
अतऊर्द्ध्वंप्रवक्ष्यामि संन्ध्योपासनकंविधिम् ।
अनर्हःकर्मणांविप्रः सन्ध्याहीनोयतःस्मृतः ॥१॥
सव्यपाणौकुशान्कृत्वाकुर्य्यादाचमनक्रियाम् ॥
ह्रस्वाःप्रचरणीयाःस्युः कुशादीर्घास्तुवर्हिषः ॥२॥
दर्भाःपवित्रमित्युक्तमतःसनध्यादिकर्मणि ।
सव्यःसोपग्रहःकार्यो दक्षिणःसपवित्रकः ॥३॥

यह यदि ब्राह्मण हो तो विद्या आदि मनोरथों को यदि कन्या हो तो उत्त
आदि को प्राप्त होती हैं और परलोक के सुखों को भी प्राप्त होते हैं इ
संशय नहीं ॥ १२ ॥ मरे के दश दिन के भीतर अशुद्ध पुरुष ने दिया जो
मंग अन्न और जलादि है उस को प्रेत और राक्षस भोगते हैं इस से दश
के भीतर अन्न दानादि न करे ॥ १३ ॥ सम्पूर्ण पृथ्वी पर के और कुये के
चन्द्रमा और सूर्य के ग्रहण में गंगा जल के समान हैं इस में सन्देह नहीं।

यह चौदहवां खंड पूरा हुआ—

और कात्यायन के रचे परिशिष्ट कर्म प्रदीप में प्रथम प्रपाठक पूरा हुआ

इस से आगे संध्या वंदन की विधि कहते हैं जिस से संध्या हीन ब्रा
सब कर्मों के अयोग्य कहा ॥१॥ बांये हाथ में कुशा रख कर आचमन करै छोटे
कुश कहातेहैं और बड़े कुश वर्हिं कहातेहैं ॥२॥ इससे सन्ध्या आदि कर्मों द
पवित्र कहे हैं बांये हाथ में उपग्रह (१६कुशा) ले और दहिने में पवित्री॥

द्वारिणात्मानं परिक्षिप्यसमंततः ।
सोमार्जनंकुर्य्यात्कुशैः सोदकविन्दुभिः ॥ ४ ॥
वोभूर्भुवःस्वश्च सावित्रीचतृतीयिका ।
ऽदैवत्यंत्र्यृचञ्चैव चतुर्थमितिमार्जनम् ॥ ५ ॥
राद्यास्तिस्रएवैता महाव्याहृतयोऽव्ययाः ।
हर्जनस्तपःसत्यं गायत्रीचशिरस्तथा ॥ ६ ॥
आपोज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवःस्वरितिशिरः ।
प्रतिप्रतीकंप्रणवमुच्चारयेदन्तेचशिरसः ॥ ७ ॥
एताएतांसहानेनतथैभिर्दशभिःसह ।
त्रिर्जपेदायतप्राणःप्राणायामःसउच्यते ॥ ८ ॥
करेणोद्धृत्यसलिलंघ्राणमासज्यतत्रच ।
जपेदनायतासुर्व्वात्रिःसकृद्वाघमर्षणम् ॥ ९ ॥
उत्थायार्कंप्रतिप्रोहेत्त्रिकेणाञ्जलिनाम्भसः ।

ने शरीर के चारों ओर जल भ्रमा के अपनी रक्षा करे और जल को लेकर
ओं से शिर का मार्जन करे ।४। ओंकार भूः, भुवः, स्वः, और तीसरी गा॰
ी, जल है देवता जिन का ऐसी तीन ऋचा (आपो हिष्ठा आदि) यह
या मार्जन है ॥ ५ ॥ भूः भुवः स्वः ये तीन नित्य अविनाशी महाव्याहृती
हैं महाजनः तपः सत्य और गायत्री और शिरः ॥ ६ ॥ (आपोज्योती रसोमृतं
ब्रह्म भूर्भुवःस्वः) यह शिर मंत्र है । भूः आदि प्रत्येक के साथ और शिरः मंत्र
के पीछे ओंकार का उच्चारण करे ॥ ७ ॥ ये सात व्याहृति गायत्री यह शि॰
[illegible] और ओंकार इन सबों का प्राणों को रोक कर तीन बार जो जपता
है इसे प्राणायाम कहते हैं ॥ ८ ॥ हाथ में जल को उठा के और नासिका में
लगाकर तीन बार वा एकबार प्राणों को रोके हुए वा न रोके हुए अघमर्षण
(ऋतं च सत्यं च) इत्यादि मंत्र को जपे ॥ ९ ॥ उठकर सूर्य को अंजलि से
सूर्य के सन्मुख हो अर्थात् गायत्री मंत्र पढ़ के अंजली देवे ॥ १० ॥ (उदुत्यं

उच्चित्रमृग्द्वेनाथचोपतिष्ठेदनन्तरम् ॥ १० ॥
संध्याद्वयेऽप्युपस्थानमेतदाहुर्मनीषिणः ।
मध्यंत्वन्हउपर्यस्यविभ्राडादीच्छयाजपेत् ॥ ११
तदसंसक्तपार्ष्णिर्वाएकपाददूपादपि ।
कुर्यात्कृताञ्जलिर्वापि ऊर्ध्वबाहुरथापिवा ॥१२
यत्रस्यात्कृच्छ्रभूयस्त्वं श्रेयसोऽपिमनीषिणः ।
भूयस्त्वंब्रुवतेतत्रकृच्छ्राच्छ्रेयोह्यवाप्यते ॥ १३ ॥
तिष्ठेदुदयनात्पूर्वांमध्यमामपिशक्तितः ।
आसीनउद्गमाच्चान्त्यां संध्यांपूर्वेत्रिकंजपन् ॥ १४
एतत्संध्यात्रयंप्रोक्तं ब्राह्मण्यंयत्रतिष्ठति ।
यस्यनास्त्यादरस्तत्र नसब्राह्मणउच्यते ॥ १५ ॥
सन्ध्यालोपाच्चचकितः स्नानशीलश्चयःसदा ।

जात० (चित्रंदेवानां०) इत्यादि दो ऋचाओं से सूर्य की स्तुति करे।
दोनों संध्याओं में यही सूर्य का उपस्थान है ऐसा मुनीश्वर लोग क
और मध्यान्ह में स्तुति के पीछे अपनी इच्छा हो तो (विभ्राड्)इत्
याकादि को जपे ॥ ११ ॥ इस स्तुति के समय ऐड़ी धरती पर न लगे
एक ही पैर से खड़ा रहे अथवा आधे पैर से- फिर हाथ जो
अथवा ऊपर को भुजा करके सूर्य की स्तुति करे ॥१२॥ एक पग से ख
आदि जिस प्रकार करने में कष्ट बहुत हो उसी में कल्याण भी बहुत
है यह बुद्धिमान् कहते हैं क्योंकि कष्ट से ही कल्याण प्राप्त होता है ॥
उदय से पूर्व प्रातःकाल और मध्यान्ह की संध्या में यथाशक्ति यथा
पूर्वाभिमुख खड़े होके गायत्री जपे और सायंकाल में सूर्यास्त होने पर पूर्व
गायत्री जपे ॥ १४ ॥ ये जो तीन संध्या कही हैं इन्हीं में ब्राह्मण्य (ब्र
पन) ठहरता है जिस को इन तीनों में आदर श्रद्धा नहीं वह ब्राह्मण न
हीं है ॥ १५ ॥ जो सन्ध्या के न करने में पाप से भयभीत है और स्नान

तन्दोपानोपसर्पन्ति गरुत्मन्तमिवोरगाः ॥ १६ ॥
वेदमादितआरभ्यशक्तितोऽहरहर्जपेत् ।
उपतिष्ठेत्ततोरुद्रं सर्वाद्वावैदिकज्जपात् ॥ १७ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ एकादशः खंडः ॥ ११ ॥
अथाद्भिस्तर्पयेद्देवान्सतिलाभिःपितॄनपि ।
नमोऽन्तेतर्पयामीति आदावोमितिचब्रुवन् ॥ १ ॥
ब्रह्माणंविष्णुंरुद्रंप्रजापतिंवेदान्देवाञ्छन्दांस्यृषीन् पुराणाचार्यान्गंधर्वानितरान्मासंसंवत्सरंसावयवं देवीरप्सरसो देवानुगान्नागान्सागरान्पर्वतान्सरितो दिव्यान्मनुष्यानितरान्मनुष्यान्यक्षान्रक्षांसिसुपर्णान्पिशाचान् भूतानिपृथिवीमोषधीःपशून्वनस्पतीन्भूतग्रामंचतुर्विधमित्युपवीतीप्राचीनावीतियमंयमपुरुषान्कव्यवाडनलंसोमंयमम-

---

सदा स्वभाव वाला है उस से पांप ऐसे ही भागते हैं जैसे गरुड़ के डर से भागते हैं ॥ १६ ॥ प्रति दिन प्रथम से आरम्भ करके शक्ति के अनुसार का पाठ करे उस के पीछे व पहिले वेद के रुद्राध्याय महादेव जी की ते करे अथवा सब वेद का पाठ न करके केवल रुद्री का ही पाठ करे॥१७॥

यह ग्यारहवां खंड पूरा हुआ ॥ ११ ॥

आदि में ओं और नमस्के अन्त में तर्पयामि (ओं ब्रह्मणे नमो ब्रह्माणं ामि)इत्यादिनाम मन्त्र कहताहुआमनुष्यजलोंसे देवताओं- और तिल सहि- लोंसेपितरों का तर्पण करे[तर्पयामि आश्वलायनादि गृह्यसूत्रकारों ायहै।पर शुक्ल यजु के पारस्करगृह्यानुसार (ब्रह्मा तृप्यताम्)इत्यादिप्रकार ा चाहिये] ॥ १ ॥ उस का यह क्रम है-ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, प्रजापति, देव, छन्द, ऋषि, पुराणाचार्य, गंधर्व, इतराचार्य, मास, संवत्सरमावयव, , अप्सरा, देवानुग, नाग, सागर, पर्वत, सरित, दिव्यमनुष्य, इतरमनुष्य, क्षः, सुपर्ण,पिशाच भूत, पृथिवी,ओषधी, पशु,वनस्पति, भूतग्रामचतुर्विध- का तर्पण सव्य होकर करे फिर अपसव्य होकर यम, यम पुरुष, कव्यवा-

र्य्यमणमग्निष्वात्तान् सोमपीथान् वर्हिपदोऽथस्वा
तृन्सकृन्सकृन्मातामहांश्चेतिप्रतिपुरुषमभ्यस्येज्ज्ये
श्वशुरपितृव्यमातुलश्च पितृवंशमातृवंशौयेचान्ये
कमर्हन्तितांस्तर्पयामीत्ययमवसानाञ्जलिरथ श्लोक
छायांयथेच्छेच्छरदातपार्तः पयःपिपासुःक्षुधितोऽलम
बालोजनित्रींजननीचबालं योषित्पुमांसंपुरुषश्चयोष

तथासर्वाणिभूतानि स्थावराणिचराणिच ।
विप्रादुदकमिच्छन्ति सर्वाभ्युदयकृद्धिसः ॥ ४॥
तस्मात्सदैवकर्त्तव्यमकुर्वन्महतैनसा ।
युज्यतेब्राह्मणःकुर्वन्विश्वमेतद्बिभर्तिहि ॥ ५ ॥
अल्पत्वाद्धोमकालस्य बहुत्वात्स्नानकर्म्मणः ।
प्रातर्नतनुयात्स्नानं होमलोपोहिगर्हितः ॥ ६ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ द्वादशः खण्डः ॥१२ ॥

कुनल, सोम, यम, अर्यमा, अग्निष्वात्ता, सोमपीथ, बर्हिषद्, इन के प्र
अपने पितरों का और मातामहों का एक २ बार तर्पण करे और प्रत्ये
तरों का नाम ले ज्येष्ठ भ्राता श्वशुर चाचा, मामा फिर पिता माता
में जो मरे हों अथवा और जो मेरे से जल की इच्छा करते हैं उन को
करता हूं यह सब से पीछे अंजलि दे ॥ ३ ॥ अब श्लोक कहते हैं जैसे
दुःखी हुआ मनुष्य छाया चाहता है प्यासा मनुष्य जल भूखा अन्न
माता को और माता बालक को स्त्री पुरुष को और पुरुष स्त्री को चा
है ॥ ३ ॥ तिसी प्रकार स्थावर और जङ्गम सब प्राणी ब्राह्मण से जल च
हैं क्योंकि ब्राह्मण सब को सुख देने वाला है ॥ ४ ॥ इस से ब्राह्मण सदैव
पंण करे जो नहीं करता वह बड़े पाप से युक्त होता है और जो ब्राह्मण
यम से तर्पण करता है वह जानो इस जगत् को पालता है ॥ ५ ॥ होम
समय थोड़ा है और स्नान का कृत्य बहुत इस से प्रातःकाल में स्ना विध
से न करे क्योंकि होम का लोप निन्दित है ॥ ६ ॥

यह बारहवां खंड पूरा हुआ ॥१२॥

पंचानामथसत्राणां महतामुच्यतेविधिः ।
गैरिष्ट्वासततंविप्रः प्राप्नुयात्सद्मशाश्वतम् ॥ १ ॥
देवभूतपितृब्रह्ममनुष्याणामनुक्रमात् ।
महासत्राणिजानीयात्तएवेहमहामखाः ॥ २ ॥
अध्यापनंब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तुतर्पणम् ।
होमोदैवोबलिर्भौतो नृयज्ञोतिथिपूजनम् ॥३॥
श्राद्धंवापितृयज्ञःस्यात्पित्र्योबलिरथापिवा ।
यश्चश्रुतिजपःप्रोक्तो ब्रह्मयज्ञःसचोच्यते ॥४॥
सचार्वाक्तर्पणात्कार्यः पश्चाद्वाप्रातराहुतेः ।
वैश्वदेवावसानेवा नान्यत्रर्तोनिमित्तकात् ॥५॥
अप्येकमाशयेद्विप्रं पितृयज्ञार्थसिद्धये ।
अदैवंनास्तिचेदन्यो भोक्ताभोज्यमथापिवा ।
अप्युद्धृत्ययथाशक्त्या किंचिदन्नंयथाविधि ।

इन के अनन्तर उत्तम जो पांच महायज्ञ उन की विधि कहते हैं । जिन को ब्राह्मण निरन्तर अनुष्ठान करके सनातन स्थान[वैकुण्ठ]को प्राप्त होताहै।१। देवयज्ञ भूतयज्ञ, पितृयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, इन पांचों को क्रम से महासत्र जानो और ये ही पांच महामख (बड़े यज्ञ) कहे हैं ॥२ ॥ विधिपूर्वक वेद का पढ़ाना ब्रह्मयज्ञ है तर्पण पितृयज्ञ है होम दैवयज्ञ बलि रखना भूतयज्ञ है और अतिथि का पूजन मनुष्ययज्ञ है ॥ ३ ॥ अथवा नित्य श्राद्ध को वा पितरों के नाम से जो एक बलि (पितृभ्यः स्वधानमः) से दिया जाता है वह पितृयज्ञ है और श्रुति वेद मन्त्रादि का जो जप कहा है वह ब्रह्मयज्ञ है ॥४॥ उस ब्रह्मयज्ञ को तर्पण से पहिले अथवा प्रातःकाल के होम से पीछे अथवा वैश्वदेव के पीछे करे किसी निमित्त के विना अन्य समय में न करे ।।५॥ यदि भोजन करने वाला दूसरा कोई न मिले वा भोजन न मिले तो विश्वेदेवाओं के विना ही एक ब्राह्मण को पितृयज्ञ की सिद्धि के निमित्त जिमा देवे ॥६॥ यथाशक्ति थोड़ासा अन्न निकाल कर विधिसे पितरों

पितृभ्योऽथमनुष्येभ्यो दद्यादहरहर्द्विजे ॥७॥
पितृभ्यइदमित्युक्त्वा स्वधाकारमुदीरयेत् ।
हन्तकारंमनुष्येभ्यस्तदर्धेनिनयेदपः ॥८॥
मुनिभिर्द्विरशनमुक्तं विप्राणांमर्त्यवासिनांनित्य
अहनिचतथातमस्विन्यां सार्द्धप्रथमयामान्तः ॥९॥
सायंप्रातर्वैश्वदेवः कर्तव्योबलिकर्म्मच ।
अनश्नतापिसततमन्यथाकिल्विषीभवेत् ॥१०॥
अमुष्मैनमइत्येवं बलिदानंविधीयते ।
बलिदानप्रदानार्थं नमस्कारःकृतोयतः ॥११॥
स्वाहाकारवषट्कारनमस्कारादिवौकसाम् ।
स्वधाकारःपितृणांच हन्तकारोनृणांकृतः ॥१२॥
स्वधाकारेणनिनयेत्पित्र्यंबलिमतःसदा ।
तदप्येकेनमस्कारं कुर्वतेनेतिगौतमः ॥ १३ ॥

और मनुष्यों के निमित्त ब्राह्मण को प्रतिदिन दे देवे तो भी पितृयज्ञ म
यज्ञ पूरे होजाते हैं ॥७॥ पितृभ्यइदं ऐसा कह कर स्वधा कह दे मनुष्यों
भोजन देते समय (हन्ततइदमन्नम्) ऐसा कहे और पितरों को दिये अ
पीछे से जल छोड़ देवे ॥८॥ भूलोक के वासी ब्राह्मणों को दो समय (एक
दिन में एक बार रात्रि में) डेढ़ पहर दिन चढ़े वा रात गये तक मुनि
ने भोजन करना कहा है तीसरी बार नहीं ॥९॥ भोजन न करे तो
सायंप्रातःकाल को बलि वैश्वदेव करे जो न करे तो पाप भागी होता है ॥
(इन्द्रायनमः) इत्यादि मन्त्रों से बलि देना कहा है क्योंकि बलि के
नमः शब्द बोलना ही मुख्य है ॥११॥ देवताओं को स्वाहा, वषट्, नमस्
पितरों को स्वधा और मनुष्यों को हन्तकार कहना चाहिये ॥१२
इस से स्वधा कह कर पितरों को सदैव बलि देवे उस के पीछे नमस्कार
यह कोई ऋषि कहते हैं और गौतम ऋषि कहते हैं कि न करे ॥ १३ ॥

अग्न्यादिर्गौतमाद्युक्तो होमःशाकलएवच ।
अनाहिताग्नेरप्येष युज्यतेवलिभिःसह ॥ ४ ॥
स्पृष्ट्वापोवीक्ष्यमाणोऽग्निं कृतांजलिपुटस्ततः
वामदेव्यजपात्पूर्वंप्रार्थयेद्द्रविणोदयम् ॥ ५ ॥
आरोग्यमायुरैश्वर्यं धीर्धृतिःशवलंयशः ।
ओजोवर्च्चःपशून्वीर्यंब्रह्मब्राह्मण्यमेवच ॥ ६ ॥
सौभाग्यंकर्मसिद्धिंच कुलज्यैष्ठ्यं सुकर्तृताम् ।
सर्वमेतत्सर्वसाक्षिन्द्रविणोदरिरीहितः ॥ ७ ॥
नब्रह्मयज्ञादधिकोस्तियज्ञो नतत्प्रादानात्परमस्तिदा
सर्वेतदंताःक्रतवःसदानानान्तोदृष्टःकैश्चिदस्यद्विकस्य
ऋचःपठन्मधुपयःकुल्याभिस्तर्पयेत्सुरान् ।
घृतामृतौघकुल्याभिर्यजूंष्यपिपठन्सदा ॥ ९ ॥
सामान्यपिपठन्सोमघृतकुल्याभिरन्वहम् ।

गौतम आदि ऋषि का कहा अग्नि आदि के आज्यभाग और शाकल (देवकृतस्यैन०) इत्यादि छः मन्त्रों से होम और बलि कर्म भूत यज्ञ इनको ब्राह्मण भी करै जो अग्निहोत्री न हो ॥ ४ ॥ आचमन करके अग्नि को देखता हुआ हाथ जोड़कर और वामदेव्य सूक्त के जप से पहिले-धन वृद्धिकी प्रार्थना करै ॥ ५ ॥ आरोग्य, अवस्था, ऐश्वर्य, बुद्धि, धैर्य, सुख, बल बुद्धि, ओज, (पराक्रम) वर्च (तेज) पशु, वेद, ब्राह्मणत्व ॥ ६ ॥ सौभाग्य, कर्मों की सिद्धि, उत्तम कुल, उत्तमकर्तृता, ये सब जो पदार्थ हैं सबके साक्षी द्रविणोद (कुबेर) हमको दीजिये । ७ ॥ ब्रह्मयज्ञ से अधिक यज्ञ और वेद दान से अधिक दान नहीं है । दान सहित सब यज्ञ वहांतक ही कहे हैं से इन दोनों (ब्रह्मयज्ञ और वेद के दान) के फल का अंत किसी ने देखा ॥ ८ ॥ ऋग्वेद के पढ़ने से शहत और दूध की कुल्याओं (छोटी नालियों) से देवताओं को और सदैव यजुर्वेद के पढ़ने से घृत और अमृत की कुल्याओं से ॥ ९ ॥ सामवेद के पढ़ने से सोम (अमृत की लता के रस

मेदःकुल्याभिरपिच अथर्वाङ्गिरसःपठन् ॥ १० ॥
मांसक्षीरौदनमधुकुल्याभिस्तर्पयेत्पठन् ।
याकोवाक्यंपुराणानि इतिहासानिचान्वहम् ॥ ११ ॥
ऋगादीनामन्यतममेतेषांशक्तितोऽन्वहम् ।
पठन्मध्वाज्यकुल्याभिः पितॄनपिचतर्पयेत् ॥ १२ ॥
तेतृप्तास्तर्पयन्त्येनं जीवन्तंप्रेतमेवच ।
कामचारीचभवति सर्वेपुसुरसद्मसु ॥ १३ ॥
गुर्वप्येनोनतंस्पृशेत् पंक्तिञ्चैवपुनातिसः ।
यंयंक्रतुञ्चपठति फलभाक्तस्यतस्यच ॥ १४ ॥
वसुपूर्णावसुमती त्रिर्दानफलमाप्नुयात् ।
ब्रह्मयज्ञादपिब्रह्मदानमेवातिरिच्यते ॥ १५ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ चतुर्दशः खंडः ॥

ब्रह्मणेदक्षिणादेया यत्रयापरिकीर्त्तिता ।
कर्मान्तेऽनुच्यमानापि पूर्णपात्रादिकाभवेत् ॥ १ ॥

र घृत की कुल्याओं से-और आंगिरस अथर्व वेद के पढ़ने से मेद की कु- ल्याओं से ॥ १० ॥ याकोवाक्य पुराण और इतिहास इन को प्रति दिन पढ़ ने से मांस दूध ओदन (भात) और मधु इन की कुल्याओं से पुरुष देवताओं को तृप्त करता है ॥११॥ इन ऋग्वेद आदि में से किसी एक को यथाशक्ति प्रति दिन पढ़ने से शहत और घी की कुल्याओं से पितरों को भी तृप्त करता है ॥ १२ ॥ तृप्त हुये ये पितर इस मनुष्य को जीते और मर जाने पर भी तृप्त करते हैं और वह पुरुष सब देवताओं के स्वर्गस्थ घरों में इच्छा पूर्वक जाने वाला हो ता है ॥१३॥ बड़ा भी पाप उस को नहीं लगता और जिस पंक्ति में वह बैठता उस को भी पवित्र कर देता है जिस २ यज्ञ को वह पढ़ता है उस २ के फल का भागी होता है॥१४॥ और धन से भरी हुई पृथ्वी के तीनवार दान के फल को प्राप्त होता है। इस ब्रह्मयज्ञ से अधिक एक ब्रह्म (विद्या) का दान ही है ॥१५॥

यह १४ खण्ड पूरा हुआ॥

जहां २ जो २ दक्षिणा कही है वही दक्षिणा ब्रह्मा को देनी चाहिये यदि किसी कर्म के अन्त में न कही हो तो वहां पूर्णपात्र दक्षिणा देवे ॥ १ ॥

यावताबहुभोक्तुस्तु तृप्तिःपूर्णनविद्यते।
नावराद्धर्य्यमतःकुर्यात् पूर्णपात्रमितिस्थितिः ॥२॥
विदध्याद्धौत्रमन्यश्चेद्दक्षिणार्द्धहरोभवेत्।
स्वयंचेदुभयंकुर्य्यादन्यस्मैप्रतिपादयेत् ॥ ३ ॥
कुलर्त्त्विजमधीयानं सन्निकृष्टंतथागुरुम्।
नातिक्रामेत्सदादित्सन्यइच्छेदात्मनोहितम् ॥४॥
अहमस्मैददामीति एवमाभाप्यदीयते।
नैतावपृष्ट्वाददतः पात्रेऽपिफलमस्तिहि ॥ ५ ॥
दूरस्थाभ्यामपिद्वाभ्यां प्रदायमनसावरम्।
इतरेभ्यस्ततोदेया देपदानविधिःपरः ॥ ६ ॥
सन्निकृष्टमधीयानं ब्राह्मणंयोव्यतिक्रमेत्।
यद्ददातितमुल्लंघ्य ततःस्तेयेनयुज्यते ॥ ७ ॥
यस्यत्वेकगृहेमूर्खो दूरस्थश्चगुणान्वितः।

बहुत खाने वाले मनुष्य की तृप्ति जिस भरे हुए पात्र से हो सके उ
पूर्णपात्र न करे यह मर्यादा है ॥ २ ॥ यदि ब्रह्मा से भिन्न होता का
अन्य ब्राह्मण करे तो आधी दक्षिणा उसको तथा आधी ब्रह्मा को
होता और ब्रह्मा का कर्म आप ही करे तो किसी और सुपात्र ब्राह्म
पात्र दक्षिणा देदेवे ॥ ३ ॥ कुलका ऋत्विज यदि पठित हो अथवा
में होय तो अपने कल्याण को चाहता हुआ मनुष्य दान देने के समय
का उलंघन न करे अर्थात् इन्हीं को देवे ॥ ४ ॥ मैं इस को देता
कर दिया जाता है इन पुरोहित गुरु के विना पूछे सुपात्र को देने
को फल नहीं होता ॥ ५ ॥ यदि ये दोनों दूरदेश में हों तो उत्तम
इन दोनों को देकर अन्य मनुष्यों को देवे यह उत्तम दान की विधि
समीप के पठित ब्राह्मण को छोड़कर जो दूरस्थ को जितना द्रव्य दे
द्रव्य की चोरी के फल को वह भोगता है ॥ ७ ॥ जिस के घर में
गुणी दूर है तो वहां गुणीको ही देवे क्योंकि यहां मूर्खका

गुणान्वितायदातव्यं नास्तिमूर्खव्यतिक्रमः ॥ ८ ॥
ब्राह्मणातिक्रमोनास्ति विप्रेवेदविवर्जिते ।
ज्वलन्तमग्निमुत्सृज्य नहिभस्मनिहूयते ॥ ९ ॥
आज्यस्थालीचकर्तव्या तैजसद्रव्यसंभवा ।
महीमयीवाकर्तव्या सर्वास्वाज्याहुतीषुच ॥ १० ॥
आज्यस्थाल्याःप्रमाणंतु यथाकामन्तुकारयेत् ।
सुदृढामव्रणांभद्रामाज्यस्थालींप्रचक्षते ॥ ११ ॥
तिर्यगूर्ध्वंसमिन्मात्रा दृढानातिबृहन्मुखी ।
मृन्मय्यौदुंवरीवापि चरुस्थालीप्रशस्यते ॥ १२ ॥
स्वशाखोक्तःप्रसुस्विन्नो ह्यदग्धोऽकठिनःशुभः ।
नचातिशिथिलःपाच्यो नचरुश्चारसस्तथा ॥ १३ ॥
इध्मजातीयमिध्मार्धप्रमाणंमेक्षणंभवेत् ।
वृत्तंचाङ्गुष्ठपृथ्वग्रमवदानक्रियाक्षमम् ॥ १४ ॥
एषैवदर्वीयस्तत्र विशेषस्तमहंब्रुवे ।

ना जायगा ॥ ८ ॥ वेद से रहित ब्राह्मण का उलंघन नहीं है क्योंकि जलते अग्नि को छोड़कर भस्म में आहुति नहीं दी जाती है ॥ ९ ॥ घी की सब आहुतियों में सोने चांदी कांसा तांबादि की वा मिट्टी की आज्यस्थाली (घी का पात्र) बनाना चाहिये ॥ १० ॥ आज्यस्थाली का प्रमाण अपनी इच्छा के अनुसार रक्खे परन्तु छिद्र रहित दृढ दर्शनीय पात्र को ही विद्वान् आज्यस्थाली कहते हैं ॥ ११ ॥ जो तिरछी और ऊंची समिधा की बराबर दृढ और अधिक चौड़ा जिसका मुख न हो ऐसी चरुस्थाली (भात पकाने का पात्र) श्रेष्ठ होता है ॥ १२ ॥ जो अपनी शाखा में कहा हो जिसमें जल न टपके जला न कड़ा न हो- सुन्दर हो-बहुत गला न हो-रस वाला हो ऐसे चरु को ॥ १३ ॥ जिस काठ का इध्म हो उसी काठ का और इध्म का आधा प्रमाण -और गोल-और अंगूठा के समान जिसका अग्रभाग मोटा हो वह चरु के लेने में समर्थ हो ऐसा मेक्षण होता है ॥ १४ ॥ इसी को

यवानामिवगोधूमा व्रीहीणामिवशालयः ॥ २१ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ पञ्चदशः खण्डः ॥ १५ ॥

पिण्डान्वाहार्य्यकंश्राद्धं क्षीणेराजनिशस्यते ।
वासरस्यतृतीयांशे नातिसन्ध्यासमीपतः ॥ १ ॥
यदाचतुर्द्दशीयामं तुरीयमनुपूरयेत् ।
अमावास्याक्षीयमाणा तदैवश्राद्धमिष्यते ॥ २ ॥
यदुक्तंयदहस्त्वेव दर्शनंनैतिचन्द्रमाः ।
अनयापेक्षयाज्ञेयं क्षीणेराजनिचेत्यपि ॥ ३ ॥
यच्चोक्तंदृश्यमानेपितच्चतुर्द्दश्यपेक्षया ।
अमावास्यांप्रतीक्षेत तदन्तेवापिनिर्वपेत् ॥ ४ ॥
अष्टमेंऽशेचतुर्द्दश्याः क्षीणोभवतिचन्द्रमाः ।
अमावास्याष्टमांशेच पुनःकिलभवेदणु ॥ ५ ॥
आग्रहायण्यमावस्या तथाज्यैष्ठस्ययाभवेत् ।
विशेषमाभ्यांब्रुवते चन्द्रचारविदोजनाः ॥ ६ ॥
अत्रेन्दुराद्येप्रहरेवतिष्ठते चतुर्थभागोनकलावशिष्टः ।

जौ के सदृश गेहूं हैं और व्रीहि (धान) के समान शालि (चावल सपेद) होते हैं ॥ २१ ॥ यह १५ वां खण्ड पूरा हुआ ॥

पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध (जो मावस को होता है) जिस दिन चन्द्रमा क्षीण हो तब करे तीसरे प्रहर में कुछ सन्ध्या काल के अति निकट न हो ऐसे अवसर में करना उत्तम होता है ॥१॥ जब अमावस्या की हानि हो तो चतुर्दशी के चौथे प्रहर में श्राद्ध करना कहा है ॥ २ ॥ जो यह कहा है कि जिस दिन चन्द्रमा न दीखे उसी अपेक्षा से अमावस की हानि होने पर चतुर्दशी को श्राद्ध करे ॥ ३ ॥ और जो श्रुति में कहा है कि चन्द्रमा के दीखने पर भी श्राद्ध करे सो चतुर्दशी के अनुरोध से है परन्तु मावस की प्रतीक्षा करे अथवा चतुर्दशी के अन्त में पिण्ड देदेवे ॥४॥ चौदश के आठवें भाग में ही चन्द्रमा क्षीण होजाता है और अमावस्या के आठवें भाग में अणु (सूक्ष्म) रूप होता है ॥५॥ अगहन और जेठकी जो मावस हैं इन दोनों में चन्द्रमा की गति के जानने वाले कुछ विशेषता कहते हैं ॥६॥ इन दोनों मावसों के पहिले प्रहर में सोलहवें भाग से चतुर्थांश कम चन्द्रमा

दर्व्वीद्व्यङ्गुलपृथ्वग्रा तुरीयोनन्तुमेक्षणम् ॥ १५ ॥
मुसलोलूखलेवार्क्षे स्वायत्तेसुदृढेतथा ।
इच्छाप्रमाणेभवतः शूर्पं वैणवमेवच ॥ १६ ॥
दक्षिणंवामतोवाह्यमात्माभिमुखमेवच ।
करंकरस्यकुर्वीत करणेन्यञ्चकर्मणः ॥ १७ ॥
कृत्वाग्न्यभिमुखौपाणी स्वस्थानस्थौसुसंयतौ ।
प्रदक्षिणंतथासीनः कुर्यात्परिसमूहनम् ॥ १८ ॥
वाहुमात्राःपरिधय ऋजवःसत्वचोऽव्रणाः ।
त्रयोभवन्तिशीर्णाग्रा एकेपान्तुचतुर्द्दिशम् ॥ १९ ॥
प्रागग्रावलिभिःपश्चादुदगग्रमथापरम् ।
न्यसेत्परिधिमन्यंचेदुदगग्रःसपूर्वतः ॥ २० ॥
यथोक्तवस्त्वसंपत्तौग्राह्यं तदनुकारयेत् ।

दर्वि कहते हैं। इस में जो विशेषता है उसे हम कहते हैं दर्वि का दो मोटा अग्रभाग होता है मेक्षण उससे आधा अंगुल मुटाई में कम होता है। मुसल और ऊखल काठ के होते हैं अच्छे चौड़े—और दृढ और अपनी नुसार प्रमाण वाले बनावे और सूप बांस का होता है॥ १६ ॥ नीचे को कोई करना हो तो प्रथम दहिने हाथ को अपने सम्मुख औंधा रक्खे और बांयां हाथ से ऊपर सीधा रक्खे ॥ १७ ॥ अग्नि के सन्मुख दोनों हाथ आगे दहिना बांयां सम्यक् तत्पर करके प्रदक्षिण क्रम से परिसमूहन करे ॥ १८ ॥ भुजा बराबर लम्बी—कोमल—वक्कल सहित—जो घुनी न हो आगे से फटी तीन होती हैं किन्हीं ऋषियों के मत में चारो दिशाओं में चार होती हैं ॥ तीन परिधि रखने के पक्ष में अग्नि कुण्ड की उत्तर दक्षिण मेखलाओं पर परिधि पूर्व को अग्रभाग करके धरे तथा पश्चिम मेखला पर उत्तराग्र धरे ॥ चौथी रक्खे तो पूर्वकी मेखला पर उत्तराग्र धरे। या पूर्व में खाली रक्खे ॥ यदि शास्त्र में कही हुई वस्तु न मिले तो उस के सदृश को ग्रहण

यवानामिवगोधूमा व्रीहीणामिवशालयः ॥ २१ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ पञ्चदशः खण्डः ॥ १५ ॥
पिण्डान्वाहार्य्यकंश्राद्धंक्षीणेराजनिशस्यते।
वासरस्यतृतीयांशे नातिसन्ध्यासमीपतः ॥ १ ॥
यदाचतुर्द्दशीयामं तुरीयमनुपूरयेत्।
अमावास्याक्षीयमाणा तदैवश्राद्धमिष्यते ॥ २ ॥
यदुक्तंयदहस्त्वेव दर्शनंनैतिचन्द्रमाः।
अनयापेक्षयाज्ञेयं क्षीणेराजनिचेत्यपि ॥ ३ ॥
यच्चोक्तंदृश्यमानेपितच्चतुर्द्दश्यपेक्षया।
अमावास्यांप्रतीक्षेत तदन्तेवापिनिर्वपेत् ॥ ४ ॥
अष्टमेऽंशेचतुर्द्दश्याः क्षीणोभवतिचन्द्रमाः।
अमावास्याष्टमांशेच पुनःकिलभवेदणु ॥ ५ ॥
आग्रहायण्यमावस्या तथाज्यैष्ठस्ययाभवेत्।
विशेषमाभ्यांब्रुवते चन्द्रचारविदोजनाः ॥ ६ ॥
अत्रेन्दुराद्यमहरेवतिष्ठते चतुर्थभागोनकलावशिष्टः।

ी के सदृश गेहूं हैं और व्रीहि (धान) के समान शालि (चावल सपेद) ोते हैं ॥ २१ ॥ यह १५ वां खण्ड पूरा हुआ ॥

पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध (जो मावस को होता है) जिस दिन चन्द्रमा क्षीण हो तब रे तीसरे प्रहर में कुछ सन्ध्या काल के अति निकट न हो ऐसे अवसर में करना ाम होता है ॥१॥ जब अमावस्या की हानि हो तो चतुर्दशी के चौथे प्रहर में ाद्ध करना कहा है ॥ २ ॥ जो यह कहा है कि जिस दिन चन्द्रमा न दीखे ी अपेक्षा से अमावस की हानि होने पर चतुर्दशी को श्राद्ध करे ॥ ३ ॥ ौर जो श्रुति में कहा है कि चन्द्रमा के दीखने पर भी श्राद्ध करे सो चतुर्दशी ी अनुरोध से है परन्तु मावस की प्रतीक्षा करे अथवा चतुर्दशी के अन्त में ्पण देदेवे ॥४॥ चौदस के आठवें भाग में ही चन्द्रमा क्षीण होजाता है और मावस्या के आठवें भाग में अणु (सूक्ष्म) रूप होता है ॥५॥ अगहन और जेठकी जो ावस हैं इन दोनों में चन्द्रमा की गति के जानने वाले कुछ विशेषता कहते हैं ॥६॥ न दोनों मावसों के पहिले प्रहर में सोलहवें भाग से चतुर्थांश कम चन्द्रमा

तदन्तएवक्षयमेतिकृत्स्नमेवंज्योतिश्चक्रविदोवदन्ति॥७॥
यस्मिन्नब्देद्वादशैकश्चयव्यस्तस्मिंस्तृतीययापरिदृश्योनोपज
एवंचारंचन्द्रमसोविदित्वाक्षीणेतस्मिन्नपराण्हेचदद्यात्॥८

सम्मिश्रायाचतुर्दश्याअमावस्याभवेत्क्वचित्।
खर्विकांतांविदुःकेचिद्गताध्वामितिचापरे॥९॥
वर्द्धमानाममावस्यां लभेच्चेदपरेहनि।
यामांस्त्रीनधिकान्वापि पितृयज्ञस्ततोभवेत्॥१०॥
पक्षादावेवकुर्वीत सदापक्षादिकंचरुम्।
पूर्वाण्हएवकुर्वन्ति विद्धेऽप्यन्येमनीषिणः॥११॥
सपितुःपितृकृत्येषु ह्यधिकारोनविद्यते।
नजीवन्तमतिक्रम्य किंचिद्दद्यादितिश्रुतिः॥१२॥
पितामहेजीवतिच पितुःप्रेतस्यनिर्वपेत्।
पितुस्तस्यचवृत्तस्य जीवेच्चेत्प्रपितामहः॥१३॥
पितुःपितुःपितुश्चैव तस्यापिपितुरेवच।

रहता है फिर एक प्रहर के वाद सब क्षय होजाता है ऐसे ज्योतिष के
कहते हैं ॥ ७ ॥ जिस संवत् में तेरह महीने होते हैं उस में तीसरे पा
पीछे चौदस को चन्द्रमा नहीं दीखे इस प्रकार चन्द्रमा की गति जानकर
चन्द्रमा के समय मध्यान्ह के पीछे पिण्ड देवे ॥ ८ ॥ यदि कभी चौदस
मावस होय तो उसे कोई खर्विका और कोई गताध्वा कहते हैं ॥ ९ ॥
अगले दिन तीन पहर या अधिक मावस मिले तो उस दिन पि
(श्राद्ध) होता है ॥ १० ॥ पक्ष याग का चरु पक्ष की आदि (१ में) हि
विद्ध होने भी मध्यान्ह से पूर्व ही करे यह कोई कहते हैं ॥ ११ ॥ जि
पिता जीवित हो उसको पितृ कर्म में श्राद्ध का अधिकार नहीं है क्योंकि
हुए का उलंघन करके अर्थात् जीवते पिता को छोड़ के पितामहादि
न देवे यह वेद में लिखा है ॥ १२ ॥ पिता-पितामह-प्रपिता मह इन
को ३ पिण्ड देवे। यदि पिता मर गया हो और पितामह जीवित हो तो
पिताको पिण्ड देवे। यदि प्रपितामह जीवित हो तथा पिता पितामह
मर गये हों ॥ १३ ॥ तो वृद्ध प्रपितामह (बूढ़ा परदादा)

कुर्य्यात्पिण्डत्रयंयस्य संस्थितःप्रपितामहः ॥ १४ ॥
जीवन्तमतिदद्याद्वा प्रेतायान्नोदकेद्विजः ।
पितुःपितृभ्योवादद्यात्सपितेत्यपराश्रुतिः ॥ १५ ॥
पितामहःपितुःपश्चात्पञ्चत्वंयदिगच्छति ।
पौत्रेणैकादशाहादिकर्तव्यंश्राद्धषोडशम् ॥ १६ ॥
नैतत्पौत्रेणकर्तव्यं पुत्रवांश्चेत्पितामहः ।
पितुःसपिण्डनंकृत्वा कुर्यान्मासानुमासिकम् ॥ १७ ॥
असंस्कृतौनसंस्कार्य्यौ पूर्वौपौत्रप्रपौत्रकैः ।
पितरंतत्रसंस्कुर्यादितिकात्यायनोऽब्रवीत् ॥ १८ ॥
पापिष्ठमपिशुद्धेन शुद्धं पापकृतापिवा ।
पितामहेनपितरंसंस्कुर्यादितिनिश्चयः ॥ १९ ॥
ब्राह्मणादिहतेताते पतितेसंगवर्जिते ।
व्युत्क्रमाच्चमृतेदेयं येभ्यएवददात्यसौ ॥ २० ॥
मातुःसपिण्डीकरणं पितामह्यासहोदितम् ।

पितामह और अपना पिता इन के लिये तीन पिण्ड वह पुरुष करे ॥ १४ ॥ जीवते हुए का उलंघन करके मरे हुए को भी द्विज अन्न और जल देवे अथवा जिस का पिता जीवित हो वह अपने पिता के पितरों को देवे यह दूसरी श्रुति है ॥ १५ ॥ यदि पिता से पीछे पितामह मरे तो पोता एकादश आदि सोलह श्राद्ध करै ॥१६॥ यदि पितामह के कोई अन्य पुत्र होय तो पोता श्राद्ध न करै किन्तु पुत्र पिता की सपिंडी करके महीने २ में मासिक श्राद्ध करै॥१७॥ पितामह आदि यदि संस्कार हीन होंय तो पोते वा प्रपोते उनका संस्कार (दाह आदि) न करैं यदि पिता संस्कार हीन होय तो उसका संस्कार पुत्र करै यह कात्यायन ऋषि ने कहा है ॥ १८ ॥ और यह निश्चय है कि पापी भी शुद्ध के संग शुद्ध हो जाता है पापी भी पितामह के संग पिता का संस्कार (श्राद्ध आदि) पुत्र करै ॥ १९ ॥ यदि पिता ब्राह्मण आदि से मरा हो वा पतित हो वा सत्संग से हीन हो अथवा फांसी से मरा हो तो भी उसे और जिनको यह देता है सब को पिण्ड देवे ॥ २० ॥ माता की सपिंडी दादी के

यथोक्तेनैवकल्पेन पुत्रिकायानचेत्सुतः ॥ २१ ॥
नयोपितृभ्यःपृथग्दद्यादवसानदिनाहृते ।
स्वभर्तृपिण्डमात्राभ्यस्तृप्तिरासांयतःस्मृता ॥ २२ ॥
मातुःप्रथमतःपिण्डं निर्व्वपेत्पुत्रिकासुतः ।
द्वितीयंतुपितुस्तस्यास्तृतीयन्तुपितुःपितुः ॥ २३ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ षोडशः खण्डः ॥ १६ ॥
पुरतोयात्मनःकुर्युःसापूर्वापरिकीर्त्यते ।
मध्यमादक्षिणेनास्यास्तद्दक्षिणतउत्तमा ॥ १ ॥
वायव्यग्निदिङ्मुखान्तास्ताः कार्य्याःसार्द्धांगुलान्तराः ।
तीक्ष्णान्तायवमध्याश्च मध्यंनावइवोत्किरेत् ॥ २ ॥
शंकुश्चखादिरःकार्य्यो रजतेनविभूपितः ।
शंकुश्चैवोपवेपश्च द्वादशाङ्गुलइप्यते ॥ ३ ॥
अग्न्याशाग्रैः कुशैःकार्य्यं कर्पूणांस्तरणंघनैः ।

संग शास्त्रोक्त विधि से करै यदि पुत्रिका (जो इस प्रतिज्ञा से विवाही जा[ती] है कि जो इस के लड़का हो सो मैं लूंगा) का पुत्र न हो ॥ २१ ॥ मर[ने के] दिन से विना स्त्रियों को पति से पृथक् (पिण्डादि) न देवे क्योंकि स्त्रियों [की] तृप्ति पति के पिंड के लेश से ही कही है ॥ २२ ॥ जो पुत्रिका का पुत्र है [वह] पहिला पिण्ड माता को दूसरा नाना को तीसरा परनाना को देवे ॥ २३ ॥

यह १६ खण्ड पूरा हुआ ॥

जो रेखा अपने सामने की जाती है उसे पूर्वा और पूर्वा से जो द[क्षिण] की तरफ़ की जाती है उसे मध्यमा—और मध्यमा से दक्षिण की त[रफ़] हो उसे उत्तमा कहते हैं ॥ १ ॥ इन तीनों को ऐसे क्रम से करै जैसे वा[यव्य] दिशा से आरम्भ करके आग्नेय दिशा में अग्र भाग हो और डेढ़ अंगुल [का] बीच रहै और इन तीनों का अग्रभाग पैना और बीच का भाग जौ के स[मान] मोटा हो जैसा कि नाव का आकार होता है ॥ २ ॥ चांदी जिसमें लगी [हो] और खैर का हो ऐसा शंकु नाम (नाप करने को गाढ़ने की खूंटी) करना [और] शंकु और उपवेप नाम हाथ के तुल्य पांच अंगुलि वाला यज्ञ पात्र ये दो[नों] बारह २ अंगुल के बनावे ॥ ३ ॥ अग्नि की दिशा में है अग्रभाग जिनका [ऐसे]

क्षणान्तंतदग्रैस्तु पितृयज्ञेपरिस्तरेत् ॥ ४ ॥
गरंसुरभिज्ञेयं चन्दनादिविलेपनम् ।
वीराञ्जनमित्युक्तं पिञ्जलीनांयदञ्जनम् ॥ ५ ॥
स्तरेसर्वमासाद्य यथावदुपयुज्यते ।
देवपूर्व्वंततःश्राद्धमत्वरःशुचिरारभेत् ॥ ६ ॥
आसनाद्यर्घपर्यन्तं वसिष्ठेनयथेरितम् ।
कृत्वाकर्माथपात्रेषु उक्तंदद्यात्तिलोदकम् ॥ ७ ॥
तूष्णींपृथगपोदत्वा मन्त्रेणतुतिलोदकम् ।
गन्धोदकंचदातव्यं सन्निकर्षक्रमेणतु ॥ ८ ॥
आसुरेणतुपात्रेण यस्तुदद्यात्तिलोदकम् ।
पितरस्तस्यनाश्नन्ति दशवर्षाणिपञ्चच ॥ ९ ॥
कुलालचक्रनिष्पन्नमासुरंमृन्मयंस्मृतम् ।
तदेवहस्तघटितं स्थाल्यादिदैविकंभवेत् ॥ १० ॥
गन्धान्ब्राह्मणसात्कृत्वा पुष्पाण्यृतुभवानिच ।

ग्रों से कर्षू नाम उक्त तीनों रेखाओं का आच्छादन करे । और पितरों के
ग्रादु में दक्षिण को है अग्रभाग जिनका ऐसे कुशों का परिस्तरण करे ॥ ४ ॥
रों. सुगन्ध वाले चन्दन आदि के लेपन को उगर और पिङ्गलियों के अ-
ञ्जनों को सौवीराञ्जन कहते हैं ॥ ५ ॥ अच्छे कुशों के आसन पर सब वस्तुओं को
यथोचित रख कर शीघ्रता न करके देवताओं का पूजन आदि पूर्वक शुद्ध हो-
कर श्राद्ध का प्रारम्भ करे ॥ ६ ॥ आसन से लेकर अर्घ पर्यन्त कर्म वसिष्ठ जी
ने जैसा कहा है उस प्रकार करके पात्र में पूर्वोक्त तिलोदक देवे ॥ ७ ॥ प्रथम म-
न्त्र के बिना पृथक् २ जल देकर मन्त्र द्वारा तिल जल देवे और समीप के
क्रम से फिर गन्धोदक देवे ॥ ८ ॥ आसुर पात्र से जो पुरुष तिलोदक देता है
पन्द्रह वर्ष तक उसके यहां पितर नहीं खाते ॥ ९ ॥ कुलाल के चाक से जो मिट्टी
का पात्र बनता है उसे आसुर (राक्षसों का) पात्र कहते हैं और वही मट्टी का
वह थाली आदि हाथ से बनता है उसे दैविक (देवताओं का) पात्र कहते
हैं ॥ १० ॥ गन्ध और ऋतु में पैदा हुवे फूल और धूप ब्राह्मणों को क्रम से

धूपंचैवानुपूर्व्येण ह्यग्नौकुर्यादनन्तरम् ॥ ११ ॥
अग्नौकरणहोमश्च कर्त्तव्य उपवीतिना ।
प्राङ्मुखेनैवदेवेभ्यो जुहोतीतिश्रुतिःश्रुता ॥ १२
अपसव्येनवाकार्यो दक्षिणाभिमुखेनच ।
निरुप्यहविरन्यस्मा अन्यस्मैनहिहूयते ॥ १३ ॥
स्वाहाकुर्यान्नचात्रान्ते नचैवजुहुयाद्धविः ।
स्वाहाकारेणहुत्वाग्नौ पश्चान्मन्त्रंसमापयेत् ॥
पित्र्येयःपङ्क्तिमूर्द्धन्यस्तस्यपाणावनग्निमान् ।
हुत्वामन्त्रवदन्येषां तूष्णींपात्रेपुनःक्षिपेत् ॥ १५
नोंकुर्याद्धोममन्त्राणां पृथगादिषुकुत्रचित् ।
अन्येषांचाविकृष्टानां कालेनाचमनादिना ॥ १६
सव्येनपाणिनेत्येवं यदत्रसमुदीरितम् ।
परिग्रहणमात्रंतत् सव्यस्यादिशतिव्रतम् ॥ १७ ॥
पिञ्जल्याद्यभिसंगृह्य दक्षिणेनेतरात्करात् ।

देकर क्रम से सब को धूप देवे ॥११॥ अग्नौकरण नामक श्राद्ध सम्बन्धी
होकर करे और पूर्व को मुख करके ही देवताओं के लिये होम करे
लिखा है ॥ १२ ॥ अथवा दक्षिण को मुख करके अपसव्य होकर करे
देवता के नाम से हविष् ग्रहण करके किसी अन्य के नाम से होम न
और इस अग्नौकरण होम में मन्त्र के अन्त में स्वाहा न कहे न
होम करे किन्तु पहिले केवल स्वाहा कह कर होम करके पीछे
पढ़ै ॥१४॥ पितृ कर्म में जो ब्राह्मण पंक्ति में मुख्य हो उसके हाथ में
अग्नि स्थापन न करने वाला ब्राह्मण मन्त्र पढ़कर आहुति देवे और शेष
के पात्रमें विना मन्त्र हविष्को वह रक्खै जो अग्निहोत्री न हो ॥१५
मन्त्रोंकी आदि में कहीं भी पृथक् २ ओं न कहै—और आचमनादि काल
के अन्य मन्त्रों में भी आदि में प्रणव का उच्चारण न करे ॥ १६ ॥
श्राद्ध में वाम हाथ से कर्म करना कहा है सो दहिने हाथ को वाम से
से ग्रहण करके वह कर्म करे किन्तु केवल वाम से नहीं ॥१७॥ पिञ्जूलि
कुशों को दहिने हाथ से ग्रहण करके वांएं हाथ से दहिने हाथ को

न्वारभ्यचसव्येन कुर्यादुल्लेखनादिकम् ॥ १८ ॥
वदर्थमुपादाय हविषोऽर्भकमर्भकम् ।
रुणासहसन्नीय पिण्डान्दातुमुपक्रमेत् ॥ १९ ॥
पितुरुत्तरकर्ष्वंशे मध्यमेमध्यमस्यतु ।
दक्षिणेतत्पितुश्चैव पिण्डान्पर्वणिनिर्वपेत् ॥ २० ॥
वाममावर्तनंकेचिदुदगन्तंप्रचक्षते ।
सर्वंगौतमशाण्डिल्यौ शाण्डिल्यायनएवच ॥ २१ ॥
आवृत्यप्राणमायम्य पितॄन्ध्यायन्यथार्थतः ।
जपंस्तेनैवचावृत्य ततःप्राणंप्रमोचयेत् ॥ २२ ॥
शाकंचफाल्गुनाष्टम्यां स्वयंपत्न्यपिवापचेत् ।
यस्तुशाकादिकोहोमः कार्योऽपूपाष्टकावृतः ॥ २३ ॥
आन्वष्टक्यांमध्यमायामितिगोभिलगौतमौ ।
वार्कखंडिश्चसर्वासु कौत्सोमेनेष्टकासुच ॥ २४ ॥
स्थालीपाकंपशुस्थाने कुर्याद्यद्यनुकल्पितम् ।

में उल्लेखन आदि कर्म करे॥१८॥ थोड़ा २ प्रयोजन मात्र हविष् लेकर चरु
ंग मिला के पिण्ड देने का प्रारम्भ करे ॥ १९ ॥ पिण्ड देने के लिये दक्षिण
विछाये कुशों के उत्तर भाग में पिता के नाम से, उस से दक्षिण मध्य कु-
पर पितामह के नाम से और उस से भी दक्षिण में प्रपितामह के नाम
पिण्ड देवे ॥ २० ॥ वामावर्तन (दक्षिण दिशा से प्राणों को रोक कर उत्त-
क ले जाना) को उत्तर दिशा तक करना यह गौतम शांडिल्य और
डिल्यायन सब ऋषि कहते हैं ॥ २१ ॥ प्राणों को रोक कर ठीक २
तरों का ध्यान करता तथा प्राणायाम के मन्त्र को जपता हुआ उत्तर
जाकर लौट आके श्वास को छोड़े ॥ २२ ॥ फाल्गुन की अष्टमी के
न स्वयं पुरुष अथवा पत्नी शाक को पकावे और जो शाक आदि का
म है वह आठ अपूपों सहित श्राद्ध में करे ॥ २३ ॥ और अन्वष्टका (न-
मी) का श्राद्ध मध्यमा (बीच की) अष्टका पर करे यह गोभिल और गौ-
न ऋषि कहते हैं । वार्कखण्डि और कौत्स ऋषि यह कहते हैं कि सब तीनों
ष्टकाओं में अन्वष्टका श्राद्ध करे ॥२४॥ और जहां अष्टकादि श्राद्ध में पशु का

क्षपयेत्तं सवत्सायास्तरुण्यागोपयस्यनु ॥ २५ ॥

इति कात्यायनस्मृतौ सप्तदशः खण्डः ॥ १७ ॥

सायमादिप्रातरन्तमेकंकर्मप्रचक्षते ।
दर्शान्तंपौर्णमास्याद्यमेकमेवमनीषिणः ॥ १ ॥
ऊर्ध्वंपूर्णाहुतेर्दर्शः पौर्णमासोऽपिवाग्रिमः ।
यआयातिसहोतव्यः सएवादिरितिश्रुतिः ॥ २ ॥
ऊर्ध्वंपूर्णाहुतेःकुर्यात् सायंहोमादनन्तरम् ।
वैश्वदेवंतुपाकान्ते वलिकर्मसमन्वितम् ॥ ३ ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चादभिरूपान्स्वशक्तितः ।
यजमानस्ततोऽश्नीयादितिकात्यायनोऽब्रवीत् ॥ ४ ॥
वैवाहिकाग्नौकुर्वीत सायंप्रातस्त्वतन्द्रितः ।
चतुर्थीकर्मकृत्वैतदेतच्छाट्यायनेर्मतम् ॥ ५ ॥
ऊर्ध्वंपूर्णाहुतेःप्रातर्हुत्वातांसायमाहुतिम् ।

लेख हो वहां पशु के स्थान में स्थालीपाक बना के श्राद्ध करे और उसे वाली तरुण गौके दूध में पकावे ॥ २५ ॥

यह १७ सत्रहवां खण्ड पूरा हुआ ॥

सायंकाल से लेकर प्रातःकाल तक दो भाग में विभक्त एक ही कर्म जाता है और पौर्णमासेष्टि से लेकर दर्शेष्टि तक दो भाग में विभक्त एक कर्म कहाता है ॥ १ ॥ श्रौत अग्न्याधान में कही पूर्णाहुति के पश्चात् दर्श पौर्णमास जिस इष्टि का समय आवे उसी को पहिले करे वही प्रथम होगी–ऐसा श्रुति में कहा है ॥ २ ॥ अग्निस्थापन की पूर्णाहुति हो जाने जब तक स्थापित अग्नि में सायंकाल का अग्निहोत्र न हो चुके तब तक वैश्वदेवादि न करे किन्तु सायं होम के बाद पाक बनने पर वैश्वदेव तथा बलिकर्म करे ॥३॥ फिर अपनी शक्ति के अनुसार जो पण्डित हों ऐसे ब्राह्मणों को जिमा के यजमान भोजन करे यह कात्यायन ऋषि कहते हैं ॥ चतुर्थीकर्म होजाने पर गृहस्थ पुरुष निरालस्य हो के सायं प्रातःकाल विवाह की अग्नि में अग्निहोत्र करे यह शाट्यायन ऋषि का मत है ॥ ५ ॥ पूर्णाहुति के उपरान्त उस सायंकाल की आहुति को एक बार प्रातःकालीन होम के ।

प्रातर्होमस्तदैवस्यादेपएवोत्तरोविधिः ॥ ६ ॥
पौर्णमासात्ययेहव्यं होतावायदहर्भवेत् ।
तदहर्जुहुयादेवममावास्यात्ययेपिच ॥ ७ ॥
अहूयमानेनग्नंश्चेन्नयेत्कालंसमाहितः ।
सम्पन्नेतुयथातत्र हूयतेतदिहोच्यते ॥ ८ ॥
अहुताःपरिसंख्याय पात्रेकृत्वाहुतीःसकृत् ।
मन्त्रेणविधिवद्धुत्वाधिकमेवापराअपि ॥ ९ ॥
यत्रव्याहृतिभिर्होमः प्रायश्चित्तात्मकोभवेत् ।
चतस्रस्तत्रविज्ञेयाः स्त्रीपाणिग्रहणेयथा ॥ १० ॥
अपिवाज्ञातमित्येषा प्राजापत्यापिवाहुतिः ।
होतव्यात्रिविकल्पोऽयं प्रायश्चित्तविधिःस्मृतः ॥ ११ ॥
यद्यग्निरग्निनान्येन संभवेदाहितःक्वचित् ।
अग्नयेविविचयइति जुहुयाद्वाघृताहुतिम् ॥ १२ ॥

करके आगे सायं प्रातःकाल की आहुति अपने २ समय में किया करे
विधान जानो ॥ ६ ॥ पौर्णमासेष्टि और दर्शेष्टि का नियत समय किसी
। निकल जाय तो जिस दिन पुरोडाशादि हविष् या होता मिले उसीदिन
ष्टियों को विधि पूर्वक करे ॥ ७ ॥ यह कयकरे जब जितने दिन होम न
हो उतने दिन विना भोजन किये विताये हों—और सम्पन्न (यदि भोजन
। हो) हो तो जैसे होम करे यह रीति यहां कहते हैं ॥ ८ ॥ जितनी
ति न दी हों उतनी गिन कर एक पात्र में रक्खे या कुछ अधिक रख के
सब को मन्त्र से विधि पूर्वक अग्नि में होम करके पश्चात् उस दिन की
हुति देवें ॥ ९ ॥ जहां प्रायश्चित्त के निमित्त व्याहृतियों से होम कहा हो
। विवाह के तुल्य चार आहुति जाने अर्थात् तीन पृथक् २ और एक तीनों
हृति मिला के देवें ॥ १० ॥ अथवा (अज्ञातं०) इस मन्त्र से वा प्रजापति
मन्त्र से आहुति देवें इस प्रकार यह प्रायश्चित्त विधि तीन विकल्प युक्त
ा है ॥ ११ ॥ यदि स्थापित किया अग्नि दूसरे लौकिक अग्नि से कहीं मिल
यतो (अग्नये विविचये०) इस मन्त्र से चावल आदि निरुप्त किये हविष्
। आहुति अथवा प्रायश्चित्तार्थ घी से ही आहुति देवें ॥ १२ ॥

अग्नयेऽप्सुमतेचैव जुहुयाद्वैघृतेनचेत्।
अग्नयेशुचयेचैव जुहुयाच्चदुरग्निना ॥ १३ ॥
गृहदाहाग्निनाग्निस्तु यष्टव्यःक्षामवांद्विजैः।
दावाग्निनाचसंसर्गे हृदयंयदितप्यते ॥ १४ ॥
द्विर्भूतोयदिसंसृज्येत् संसृष्टमुपशामयेत्।
असंसृष्टंजागरयेद्गिरिशर्मैवमुक्तवान् ॥ १५ ॥
नस्वेऽग्नावन्यहोमःस्यान् मुक्त्वैकांसमिदाहुतिं
स्वर्गवासक्रियार्थांश्च यावन्नासौप्रजायते ॥ १६
अग्निस्तुनामधेयादौ होमेसर्वत्रलौकिकः।
नहिपित्रासमानीतः पुत्रस्यभवतिक्वचित् ॥ १७
यस्याग्नावन्यहोमःस्यात् सवैश्वानरदैवतम्।
चरुंनिरुप्यजुहुयात् प्रायश्चित्तंतुतस्यतत् ॥ १८ ॥
परेणाग्नौहुतेस्वार्थं परस्याग्नौहुतेस्वयम्।

किसी निकृष्ट अग्नि के साथ स्थापित अग्नि के मिल जाने पर यदि आहुति देवे तो (अग्नयेऽप्सुमते०) इस मन्त्र से और (अग्नये शुचये०) प्रायश्चित्तार्थ होम करे ॥१३॥ यदि घर में लगे हुए अग्नि से आदित जाय तो द्विज लोग (क्षामवां०) मन्त्र से होम करें। यदि दावाग्नि अग्नि का संसर्ग होजाय और उस से हृदय में दुःख हो तो भी उक्त प्रायश्चित्त होम करे॥१४॥ दो वार करके संसर्ग हो तो अग्नि को शान्त और संसर्ग न हुआ होय तो अग्नि को जगा लेवे ऐसा गिरिशर्मा ने कहा अपने अग्नि में एक समिधा की आहुति को छोड़ के अन्य पुत्रादि नि भी होम न करे चाहे वे अन्य के होम स्वर्गवासार्थ भी हों तो भी अग्नि में तब तक न करे कि जब तक पुत्र उत्पन्न न हो ॥ १६ ॥

नामकरण आदि संस्कारों में सब जगह लौकिक अग्नि लेना चाहिये कि पिता ने जिस अग्नि को स्थापित किया है वह कभी भी पुत्र का नहीं होता ॥ १७ ॥ जिस अग्निहोत्री के अग्नि में दूसरे मनुष्य का होम हो वह वैश्वानर देवता वाले चरु को बनाकर होम करे यही उसका प्रायश्चित्त है ॥ १८ ॥ अन्य कोई अपने लिये अग्निहोत्री के स्थापित अग्नि में हो

पितृयज्ञात्ययेचैव वैश्वदेवद्वयस्यच ॥ १९ ॥
अनिष्ट्वानवयज्ञेन नवान्नप्राशनेतथा ।
भोजनेपतितान्नस्य चरुर्वैश्वानरोभवेत् ॥ २० ॥
स्वपितृभ्यःपितादद्यात् सुतसंस्कारकर्मसु ।
पिण्डानोद्वहनात्तेषां तस्याभावेतुतत्क्रमात् ॥ २१ ॥
भूतिप्रवाचनेपत्नी यद्यसन्निहिताभवेत् ।
रजोरोगादिनातत्र कथंकुर्वन्तियाज्ञिकाः ॥ २२ ॥
महानसेऽन्नंयाकुर्यात् सवर्णातांप्रवाचयेत् ।
प्रणवाद्यपिवाकुर्यात् कात्यायनवचोयथा ॥ २३ ॥
यज्ञवास्तुनिमुष्ट्यांच स्तंबेदर्भवटौतथा ।
दर्भसंख्यानविहिता विष्टरास्तरणेषुच ॥ २४ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ अष्टादशः खण्डः ॥ १८ ॥

अन्य के अग्नि में अग्निहोत्री स्वयं होम करे, पितृयज्ञ और दो बार वैश्वदेव के छूट
ने पर ॥१९॥ नवान्नेष्टि किये विना नया अन्न खा लेनेपर तथा पतित मनुष्य का
अ भोजन करलेने पर इतने कर्मों में वैश्वानर चरु से प्रायश्चित्त होम करे ॥२०॥
ों के नामकरण आदि संस्कारों में पिता अपने पितरों को पिण्ड आदि
 जब तक पुत्रों का विवाह न हो और विवाह हो जाने पर पुत्र भी मृत
तरों को पिण्ड देवें। पिता के मरजाने पर जो अधिकारी हो वही
ण्ड देवे ॥ २१ ॥ यदि भूतिप्रवाचन (ऋत्विजों से आशीर्वाद आदि लेना)
रजोदर्शन या रोग आदि कारण पत्नी समीप में न होय तो यज्ञ करने वाले
सा करें ? ॥२२॥ महानस (रसोई खाने) में जो स्त्री अन्न पकावे और यह
पत्नी सजातीय भी होय तो उसे भूतिप्रवाचन के समय पत्नी के स्थाना-
न करलेवे अथवा कात्यायन के कथनानुसार ओंकार आदि कर लेवे ॥ २३ ॥
ज्ञ के वास्तु (घर) में मुट्ठी में यूपादिस्तंब में दर्भ के वटु में और विष्टर
 आस्तरण में कुशों की गिनती नहीं की जाती है ॥ २४ ॥

यह १८ खंड पूरा हुआ ॥

निःक्षिप्याग्निंस्वदारेषु परिकल्प्यर्त्त्विजंतथा।
प्रवसेत्कार्य्यवान्विप्रो वृथैवनचिरंक्वचित् ॥ १ ॥
मनसानैत्यिकंकर्म्म प्रवसन्नप्यतन्द्रितः।
उपविश्यशुचिःसर्वं यथाकालमनुव्रजेत् ॥ २॥
पत्न्याचाप्यवियोगिन्या शुश्रूष्योऽग्निर्विनीतया।
सौभाग्यवित्तावैधव्यकामयाभर्तृभक्तया ॥३॥
यावास्याद्वीरसूरासामाज्ञासंपादिनीप्रिया।
दक्षाप्रियंवदाशुद्धा तामत्रविनियोजयेत् ॥४॥
दिनत्रयेणवाकर्म्म यथाज्यैष्ठंस्वशक्तितः।
विभज्यसहवाकुर्य्युर्यथाज्ञानंचशास्त्रवत् ॥५॥
स्त्रीणांसौभाग्यतोज्यैष्ठ्यं विद्ययैवद्विजन्मनाम्।
नहिस्यात्यानतपसा भर्तातुष्यतियोषिताम् ॥६॥
भर्तुरादेशवर्त्तिन्या यथोमावहुभिर्व्रतैः।

अपनी स्त्री को अग्नि सौंप कर और एक ऋत्विज नियत करके इ वाला ब्राह्मण विदेश में जावे किन्तु चिरकाल तक कहीं व्यर्थ विदेश में नहीं ठहरे ॥१॥ विदेश में गया हुआ भी अग्निहोत्री स्नानादि करके बैठ कर अ सब नित्य कर्म को आलस्य छोड़कर नियत समय पर मन से किया करे।। पति के वियोग को न चाहती हुई सौभाग्य, धन विधवा न होना इन कामना के लिये पति में है भक्ति जिस की ऐसी पत्नी भी पति के विदेश पर नम्र होकर अग्नि की सेवा करे ॥ ३ ॥ जिस के बहुत स्त्री हों वह पु अग्नि की सेवा में उस स्त्री को नियुक्त करे जो वीरसू (वीर पुत्र उत्पन्न क वाली) आज्ञाकारिणी प्यारी चतुर प्रियवचन कहने वाली-और शुद्ध हो अथवा सब स्त्रियां तीन दिन में बड़ी स्त्री के क्रम से अपनी शक्ति के अनु सार विभाग (पारी २ से) वा एक साथ मिल के अग्नि की सेवा करें अ जैसा शास्त्र का ज्ञान उन को हो वैसे सब करें ॥ ५ ॥ स्त्रियों का बड़प्पन भाग्यवती होने से है और ब्राह्मणों की बड़ाई विद्या से क्योंकि अ और तप से स्त्रियों पर पति प्रसन्न नहीं होता ॥ ६ ॥ किन्तु पति की आ

अग्निश्वतापितोऽमुत्र साध्वीसौभाग्यमाप्नुयात्॥७॥
विनयावनतापिस्त्री भर्तुर्यादुर्भगाभवेत्।
अमुत्रोमाग्निभर्तॄणामवज्ञातिकृतातया॥८॥
श्रोत्रियंसुभगांगांच अग्निमग्निचितिन्तथा।
प्रातरुत्थाययःपश्येदापद्भ्यःसप्रमुच्यते ॥ ९ ॥
पापिष्ठंदुर्भगामन्त्यं नग्नमुत्कृत्तनासिकम्।
प्रातरुत्थाययःपश्येत्सकलेरुपयुज्यते ॥ १० ॥
पतिमुल्लङ्घ्यमोहात्स्त्री किंकिन्ननरकंव्रजेत्।
कृच्छ्रान्मनुष्यतांप्राप्य किंकिंदुःखंनविन्दति ॥११॥
पतिशुश्रूषयैवस्त्री कान्नलोकान्समश्नुते।
दिवःपुनरिहायाता सुखानामम्बुधिर्भवेत् ॥१२॥
सदारोन्यान्पुनर्दारान् कथंचित्कारणान्तरात्।
यइच्छेदग्निमान्कर्तुं क्वहोमोऽस्यविधीयते ॥१३॥
स्वेग्नावेवभवेद्धोमो लौकिकेनकदाचन।

। वाली पर प्रसन्न होता है कि जैसे पार्वती जी ने शिव जी को प्रसन्न
ा है। जिसने अग्नि को प्रसन्न किया है वह स्त्री परलोक में सौभाग्य को
त होती है ॥७॥ पति में प्रेम से नवती हुई भी स्त्री जो दुर्भागिन हो जिस
ुत्रादि नहीं उस ने पूर्व जन्म में पार्वती, अग्नि, और पति, इन का तिरस्कार
या जानो ॥८॥ वेदपाठी, सुहागिन स्त्री, गौ, अग्निहोत्र, और अग्निचयन यज्ञ
। को प्रातःकाल उठ कर जो देखे वह विपत्तियों से छूट जाता है ॥९॥ पाप-
ल, दुर्भागिन वंध्या वा (विधवा) चमार भंगी आदि अन्त्यज नंगा, नकटा, इन
। जो प्रातःकाल उठकर देखता है वह कलियुग को प्राप्त होता है ॥१०॥ अज्ञान
पति का उलंघन करके स्त्री किस२ नरक में नहीं जाती?। फिर बड़े कष्ट से
नुष्य योनि को प्राप्त होकर किस २ दुःख को नहीं प्राप्त होती है? ॥११॥
ौर पति की सेवा से स्त्री कौन २ लोक (स्वर्गादि) के सुख नहीं भोगती
र्थात् सभी लोकों के सुख पाती है और स्वर्ग से फिर भूलोक में आकर सुखों
॥ समुद्र बनती है ॥ १२ ॥ जो एक स्त्री वाला अग्निहोत्री पुरुष किसी का-
ण से अन्य स्त्री से विवाह करने की इच्छा करे तो इस का होम किस अग्नि
। होवे? यह शंका है ॥ १३ ॥ समाधान यह है कि अपने अग्नि में ही होम

नह्याहिताग्नेःस्वंकर्म लौकिकेऽग्नौविधीयते ॥१४॥
षडाहुतिकमन्येन जुहुयाद्ध्रुवदर्शनात् ।
नह्यात्मनोऽर्थंस्यात्तावद्यावन्नपरिणीयते ॥१५॥
पुरस्तात्त्रिविकल्पं यत्प्रायश्चित्तमुदाहृतम् ।
तत्षडाहुतिकंशिष्टैर्यज्ञविद्भिःप्रकीर्तितम् ॥१६॥
इति कात्यायनस्मृतावेकोनविंशः खण्डः ॥१९॥
इति कात्यायनविरचिते कर्मप्रदीपे द्वितीयः प्रपाठकः ॥
असमक्षन्तुदम्पत्योर्होतव्यंनर्त्विगादिना ।
द्वयोरप्यसमक्षंहि भवेद्धुतमनर्थकम् ॥१॥
विहायाग्निंसभार्यश्चेत्सीमामुल्लङ्घ्यगच्छति ।
होमकालात्ययेतस्य पुनराधानमिष्यते ॥२॥
अरण्योःक्षयनाशाग्निदाहेष्वग्निंसमाहितः ।
पालयेदुपशान्तेस्मिन् पुनराधानमिष्यते ॥३॥

करे लौकिक अग्नि में कदापि नहीं क्योंकि अग्निहोत्री का निज कर्म लौ[illegible] अग्नि में करना शास्त्र में विहित नहीं है ॥ १४ ॥ विवाह में होने वाले [illegible] दर्शन कर्म के पश्चात् प्रायश्चित्त की छः आहुति का भी अन्य अग्नि में न करे । पाणिग्रहण और सप्तपदी से पहिले का होम पत्नी भाव न हो[illegible] कारण अपने लिये नहीं माना जायगा ॥ १५ ॥ पहिले जो त्रिविकल्प [illegible] प्रायश्चित्त कह आये हैं उस को ही यज्ञ के जानने वाले शिष्ट (सज्जन) [illegible] षडाहुतिक कहते हैं ॥ १६ ॥ यह १९ वां खण्ड पूरा हुआ ॥

कात्यायन के रचे कर्म प्रदीप में २ द्वितीय प्रपाठक पूरा हुआ ॥

स्त्री पुरुष दोनों के परोक्ष में ऋत्विज् आदि कोई स्थापित अग्नि में हो[illegible] करे क्योंकि पति पत्नी दोनों की अनुपस्थिति में होम निष्फल होता है [illegible] यदि अग्नि को छोड़ कर पत्नी को साथ लेके पुरुष ग्राम की सीमा को [illegible] कर चला जाय और उस के होम का समय बीत जाय तो वह फिर से वि[illegible] पूर्वक अग्नि का आधान करे ॥ २ ॥ अरणियों का नाश हो जाने वा अ[illegible] जल जाने पर सावधानी से अग्नि की रक्षा करे तथापि यदि अग्नि शा[illegible] जाय तो फिर से विधिपूर्वक अग्नि का आधान करे ॥ ३ ॥

ज्येष्ठाचेद्बहुभार्य्यस्य अतिचारेणगच्छति ।
पुनराधानमत्रैक इच्छन्तिनतुगौतमः ॥ ४ ॥
दाहयित्वाग्निभिर्भार्य्यां सदृशींपूर्वसंस्थिताम् ।
पात्रैश्चाथाग्निमादध्यात्कृतदारोऽविलम्बितः ॥ ५ ॥
एवंवृत्तांसवर्णांस्त्रीं द्विजातिःपूर्वमारणीम् ।
दाहयित्वाग्निहोत्रेण यज्ञपात्रैश्चधर्म्मवित् ॥ ६ ॥
द्वितीयांचैवयःपत्नीं दहेद्वैतानिकाग्निभिः ।
जीवन्त्यांप्रथमायांतु ब्रह्मघ्नेनसमंहितत् ॥ ७ ॥
मृतायांतुद्वितीयायां योऽग्निहोत्रंसमुत्सृजेत् ।
ब्रह्मोज्झंतंविजानीयाद्यश्चकामात्समुत्सृजेत् ॥ ८ ॥
मृतायामपिभार्य्यायां वैदिकाग्निंनहित्यजेत् ।
उपाधिनापितत्कर्म्म यावज्जीवंसमापयेत् ॥ ९ ॥
रामोऽपिकृत्वासौवर्णीं सीतांपत्नींयशस्विनीम् ।
ईजेयज्ञैर्बहुविधैः सहभ्रातृभिरच्युतः ॥ १० ॥

यदि बहुत स्त्री वाले पुरुष की जेठी स्त्री व्यभिचार आदि से चली जाय जाय तो ऐसी अवस्था में कोई ऋषि फिर अग्नि का आधान कहते हैं गौतम ऋषि नहीं कहते ॥ ४ ॥ अपने वर्ण की और पहिले जो मरी स्त्री को स्थापित अग्नियों से पात्रों सहित जला करके शीघ्र ही विवाह विधि पूर्वक अग्नि का फिर आधान करे ॥५॥ धर्मनिष्ठ धर्मज्ञ द्विजाति पुरुष आचरण वाली पूर्व मरी सवर्णा स्त्री को अग्निहोत्र के अग्नि से यज्ञपात्रों [illegible] दग्ध करके फिर से अग्निहोत्र लेवे ॥ ६ ॥ पीछे विवाही दूसरी स्त्री को [illegible]पित अग्नि से जो पुरुष पहिली स्त्री के विद्यमान होने पर जलाता है वह [illegible] हत्यारे के समान है॥७॥ पीछे से विवाहित दूसरी स्त्री के मर जाने पर जो [illegible] इच्छा पूर्वक अग्निहोत्र को त्यागता है उस को वेद त्यागने का अपराधी [illegible]नो ॥ ८ ॥ मुख्य स्त्री के मर जाने पर भी वैदिक अग्नि का परित्याग न [illegible]रे उपाधि (कुशा वा धातु की स्त्री बनाकर) से भी अपने जीवने तक अग्निहोत्र [illegible]र्म को पूरा करे॥९॥ महाराजा अच्युत भगवान् श्री रामचन्द्र जी ने भी यश- [illegible] सोने की—सीता स्त्री को बना कर भाइयों सहित बड़े २ यज्ञ किये ॥१०॥

योदहेदग्निहोत्रेण स्वेनभार्य्यांकथंचन ।
स्त्रीसंपद्यतेतेन भार्य्यावास्यपुमान्भवेत् ॥ ११ ॥
भार्य्यामरणमापन्ना देशान्तरगतापिवा ।
अधिकारीभवेत्पुत्रो महापातकिनिद्विजे ॥ १२ ॥
मान्याचेन्म्रियतेपूर्वं भार्य्यापतिविमानिता ।
त्रीणिजन्मानिसापुंस्त्वं पुरुषःस्त्रीत्वमर्हति ॥ १३ ॥
पूर्ववयोनिःपूर्वावृत् पुनराधानकर्म्मणि ।
विशेषोवाग्न्युपस्थानमाज्याहुत्यष्टकंतथा ॥ १४ ॥
कृत्वाव्याहृतिहोमान्तमुपतिष्ठेतपावकम् ।
अध्यायःकेवलाग्नेयः कस्तेजामिरमानसः ॥ १५ ॥
अग्निमीडेअग्नआयाह्यग्नआयाहिवीतये ।
तिस्रोऽग्निज्योतिरित्यग्निं दूतमग्नेमृडेतिच ॥ १६ ॥
इत्यष्टावाहुतीर्हुत्वायथाविध्यनुपूर्वशः ।
पूर्णाहुत्यादिकंसर्वमन्यत्पूर्ववदाचरेत् ॥ १७ ॥

जो अपने अग्निहोत्र के अग्नि से कदाचित् पीछे विवाही अप्र-
स्त्री का दाह करे तो वह पुरुष जन्मान्तर में स्त्री होता और वह स्त्री पु
बनती है ॥ ११ ॥ यदि स्त्री मर गई हो वा विदेश में चली गई हो अ
अग्निहोत्री पुरुष को ही महापातक लगगया हो तो अग्निहोत्र का अधि
री पुत्र होता है ॥ १२ ॥ यदि पति के तिरस्कार करने से मान के यो
पहिली ज्येष्ठा स्त्री पहिलें मर जाय तो वह स्त्री तीन जन्म तक पुरुष बन
और पुरुष तीन जन्म तक स्त्री बनता है ॥ १३ ॥ दूसरे अग्नि के आधान
पहिले ही योनि (अरणी) और आवृत् होते हैं केवल अग्नि का उपस्
और आठ घी की आहुतियों की विशेषता है ॥ १४ ॥ व्याहृतियों से हो
तक कृत्य करके अग्नि का उपस्थान करे और उस स्तुति में केवल अग्नि
अध्याय १ (कस्तेजामिरमानसः २) ॥ १५ ॥ और (अग्निमीडे ३) (अग्न
यास्यग्निभिः ४ । ऋ० अ० ६ । अ० ४ । य० १४) (अग्न आयाहिवीतये ५
४ । ५ । २२) (अग्निज्योतिः० ६) (अग्निंदूतं वृणीमहे० ७ ऋ० । १ । १ । २२
(अग्नेमृडमहाँअसि० ८ ऋ० ३ । ५ । ९) ॥ १६ ॥ इन आठ आहुतियों को
से विधि पूर्वक देकर पूर्णाहुति आदि सब अन्य कर्म पूर्व के समान करे ॥ १७ ॥

अरण्योरल्पमप्यङ्गं यावत्तिष्ठतिपूर्वयोः ।
नतावत्पुनराधानमन्यारण्योर्विधीयते ॥ १८ ॥
विनष्टस्रुकस्रुवन्युब्जं प्रत्यक्स्थलमुदर्चिपि ।
प्रत्यगग्रं चमुसलं प्रहरेज्जातवेदसि ॥ १९ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ विंशतितमः खण्डः ॥ २० ॥
स्वयंहोमासमर्थस्य समीपमुपसर्पणम् ।
तत्राप्यसक्तस्यततः शयनाच्चोपवेशनम् ॥ १ ॥
हुतायांसायमाहुत्यां दुर्लभश्चेद्गृहीभवेत् ।
प्रातर्होमस्तदैवस्याज्जीवेच्चेत्सपुनर्नवा ॥ २ ॥
दुर्बलंस्नापयित्वातु शुद्धचेलाभिसंवृतम् ।
दक्षिणाशिरसंभूमौ बर्हिष्मत्यांनिवेशयेत् ॥ ३ ॥
घृतेनाभ्यक्तमाप्लाव्य सवस्त्रमुपवीतिनम् ।
चन्दनोक्षितसर्वाङ्गं सुमनोभिर्विभूपितम् ॥ ४ ॥

ब तक पहिली दोनों अरणियों का थोड़ा भी भाग शेष रहै तब तक अन्य
यी अरणियों द्वारा अग्नि का पुनराधान कदापि न करे ॥१८॥ नष्ट हुये सुक्
व को औंधा करके और नष्ट हुए मुशल को पश्चिमाग्र करके अच्छे जलते
ए अग्नि में छोड़ के जला देवे ॥ १९ ॥

यह २० वां खण्ड पूरा हुआ ॥

यदि अग्निहोत्री को स्वयं होम करने का सामर्थ्य न हो तो अग्नि के स-
ीप जा बैठे यदि समीप भी न जाया जाय तो शय्या से नीचे उतर बैठे ॥१॥
यदि सायंकाल का होम किये पीछे गृहस्थ दुर्बल (मरने के समान) होजाय
ो प्रातःकाल का होम उसी समय हो जाय यदि फिर भी वह प्रातःकाल तक
ीवित बना रहे तो फिर भी प्रातःकाल हो वा न बचे तो न हो ॥ २॥ दुर्बल
मरने के समीप जो हो) को स्नान कराकर शुद्ध वस्त्र पहनावे और दक्षिण
देशा की तरफ शिर करके कुश बिछायी पृथवी में लिटा देवे ॥ ३ ॥ मरजाने
र सब शरीर में घी लगा के सवस्त्र स्नान करावे फिर सव्य जनेऊ पहना के
उब अङ्गों पर चन्दन छिड़के और पुष्पों से शोभित करे ॥ ४ ॥

हिरण्यशकलान्यस्य क्षिप्त्वाच्छिद्रेपुसप्तसु ।
मुखेष्वथापिधायैनं निर्हरेयुःसुतादयः ॥ ५ ॥
आमपात्रेऽन्नमादाय प्रेतमग्निपुरःसरम् ।
एकोऽनुगच्छेत्तस्यार्द्धमर्द्धंपथ्युत्सृजेद्भुवि ॥ ६ ॥
अर्धमादहनंप्राप्त आसीनोदक्षिणामुखः ।
सव्यंजान्वाच्यशनकैः सतिलंपिण्डदानवत् ॥ ७ ॥
अथपुत्रादिराप्लुत्य कुर्य्याद्दारुचयंमहत् ।
भूप्रदेशेशुचौदेशे पश्चाच्चित्यादिलक्षणे ॥ ८ ॥
तत्रोत्तानंनिपात्यैनं दक्षिणाशिरसंमुखे ।
आज्यपूर्णांस्रुचंदद्याद्दक्षिणाग्रांनसिस्रुवम् ॥ ९ ॥
पादयोरधरांप्राचीमरणीमुरसीतराम् ।
पार्श्वयोःशूर्पचमसे सव्यदक्षिणयोःक्रमात् ॥ १० ॥
मुसलेनसहन्युब्जमन्तरूर्वोरुलूखलम् ।

और सुवर्ण के टुकड़े सातो छिद्रों (मुख आदि) में गेरै और मुख को ढांक कर पुत्र आदि श्मशान में ले जायं ॥ ५ ॥ कच्चे मट्टी में अन्न लेकर एक मनुष्य मृत के पीछे २ चले और अग्निहोत्र के अग्नि को आगे २ ले चले प्रेत को पीछे ले चले और उस अन्न में से आधे अन्न और श्मशान के बीच मार्ग में पृथ्वी पर पुत्र छोड़ देवे ॥ ६ ॥ और श्मशान भूमि में मुर्दा पहुंचजाय तब दक्षिण को मुख करके बैठा हुआ घोंटू पृथिवी में टेक कर धीरे २ तिल सहित उस अन्न को पिण्डदान विधि से पृथिवी पर छोड़ देवे ॥ ७ ॥ इस के पश्चात् जो चिता के योग्य भूमि के शुद्ध स्थल में जो स्थान ग्राम से पश्चिम या दक्षिण दिशा में हो पुत्र आदि स्नान करके चिता बना के उस पर बहुत लकड़ी चिने ॥ ८ ॥ चिता पर दक्षिण की ओर जिस का शिर हो ऐसे इस अग्निहोत्री को को मुख करके लिटावे और दक्षिण को अग्र भाग करके घी से भरी स्रुचा को मुख पर और घी से भरे स्रुव को नाक पर रख देवे ॥ ९ ॥ अधरारणी पगों पर पूर्वाग्र धरे और उत्तरारणी को छाती पर पूर्वाग्र धरे और बाईं पसलियों पर सूपको तथा दहिनी पर चमस को क्रम से रख देवे ॥ १० ॥

चात्रौवीलीकमत्रैवमनश्रुनयनोविभीः ॥ ११ ॥
अपसव्येनकृत्वैतद्वाग्यतःपितृदिङ्मुखः ।
अथाग्निंसव्यजान्वक्तो दद्याद्दक्षिणतःशनैः ॥ १२ ॥
अस्मात्त्वमधिजातोऽसि त्वदयंजायतांपुनः ।
असौस्वर्गायलोकाय स्वाहेतियजुरीरयन् ॥ १३ ॥
एवंगृहपतिर्दग्धः सर्वंतरतिदुष्कृतम् ।
यश्चैनंदाहयेत्सोपि प्रजांप्राप्नोत्यनिन्दिताम् ॥ १४ ॥
यथास्वायुधधृक्पान्थोह्यरण्यान्यपिनिर्भयः ।
अतिक्रम्यात्मनोभीष्टं स्थानमिष्टंचविन्दति ॥ १५ ॥
एवमेषोऽग्निमान्यज्ञपात्रायुधविभूषितः ।
लोकानन्यानतिक्रम्य परंब्रह्मैवविन्दति ॥ १६ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ एकविंशतिमःखण्डः ॥ २१ ॥

ी ओखली, चात्र तथा ओविली को जंघाओं के बीच में भय रहित
र न रोता हुआ पुत्र रखदेवे ॥ ११ ॥ दक्षिण की ओर मुख कर मौन हुआ
। सव्य होके पूर्वोक्त पात्रचयन कर्म करके वांये घोंटू को भूमि में लगा के
ता में दक्षिण दिशा की ओर धीरे से अग्नि जलावे ॥ १२ ॥ और उस सम
स यजुर्वेद के मन्त्र को पढ़े कि (अस्मात्त्वमधि०) हे जीव ! और हे देह
स अग्नि से पैदा हुआ था । और हे अग्नि ! तेरे से यह देह आदि फिर
ा हो इस से प्रज्वलित अग्नि में इस प्राणी को स्वर्ग लोक की प्राप्ति के
मित्त यह स्वाहा है ॥ १३ ॥ इस उक्त प्रकार जिस का दाह कर्म किया जाय
ह गृहस्थ सब पापों से छूट जाता है और जो दाह करता है वह भी उत्तम
तानों को प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ जैसे अपने उत्तम शस्त्रों को ले कर पथिक
रण निर्भय होकर वनों को भी लांघ कर अपने वांछित स्थान को पहुंचता
और अपने मनोरथ को प्राप्त हो जाता है ॥ १५ ॥ इसी प्रकार अपने यज्ञ
त्ररूप शस्त्रों से शोभित यह अग्निहोत्री भी स्वर्ग आदि लोकों को लांघ कर
ब्रह्म को प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

यह २१ इक्कीसवां खण्ड पूरा हुआ ॥

अथानवेक्षमेत्यापः सर्वएवशवस्पृशः ।
स्नात्वासचैलमाचम्य दद्युरस्योदकंस्थले ॥ १ ॥
गोत्रनामानुवादान्ते तर्पयामीत्यनन्तरम् ।
दक्षिणाग्रान्कुशान्कृत्वा सतिलन्तुपृथक्पृथक् ॥ २ ॥
एवंकृतोदकान्सम्यक् सर्वान्शाद्वलसंस्थितान् ।
आप्लुत्यपुनराचान्तान् वदेयुस्तेऽनुयायिनः ॥ ३ ॥
माशोकंकुरुतानित्ये सर्वस्मिन्प्राणधर्मणि ।
धर्म्मंकुरुतयत्नेन योवःसहगमिष्यति ॥ ४ ॥
मानुष्येकदलीस्तंभे निःसारेसारमार्गणम् ।
यःकरोतिससंमूढो जलबुद्बुदसन्निभे ॥ ५ ॥
गन्त्रीवसुमतीनाशमुदधिर्दैवतानिच ।
फेनप्रख्यःकथन्नाशं मर्त्यलोकोनयास्यति ॥ ६ ॥

इस के अनन्तर चिता की ओर न देखते हुए मुर्दे को स्पर्श करने [illegible] सब लोग सचैल स्नान और आचमन करके इस प्रेत को स्थल (जहां [illegible] हो ऐसी भूमि) पर जल देवें ॥ १ ॥ गोत्र और प्रेत के नाम के अन्त में [illegible] यामि" कहें जैसे (वसिष्ठगोत्रं चैत्रशर्माणं तर्पयामि) और दक्षिण को [illegible] जिन का हो ऐसे कुशों को करके उन कुशों और तिल सहित जल [illegible] सब लोग देवें यही तिलाञ्जलि कहाती है ॥ २ ॥ उत्तम प्रकार से शास्त्रा[illegible]नुसार दिया है जल जिन्हों ने और जो हरी घास पर बैठे हों तिन[illegible] देने पश्चात् फिर स्नान कर के किया है आचमन जिन्हों ने ऐसे प्रेत के [illegible] कुटुम्बियों को उन के संग श्मशान में कोई विद्वान् या संसार गति के [illegible] वाले विचार शील गये हों वे निम्न प्रकार उपदेश करें कि ॥ ३ ॥ [illegible] अनित्य हैं इस से शोक मत करो किन्तु बड़े यत्न और सावधानी से धर्म [illegible] जो धर्म तुम्हारे संग चलेगा ॥ ४ ॥ जैसे केला के खम्भा में छिलके उतारे [illegible] तो भीतर कुछ सार नहीं निकलता वैसे ही संसारी विषयों में [illegible] के सच्चे सुख का खोज करें तो कहीं लेशमात्र भी नहीं दीखता । [illegible] [illegible] जल बुलों को पकड़ने के समान जगत् में सुख खोजने [illegible] है ॥ ५ ॥ जब कि पृथ्वी, समुद्र, देवता; ये भी नष्ट होने वाले [illegible] तो फेन के तुल्य लीन होने वाले मनुष्य लोगों का नाश किस [illegible]

[illegible]

पञ्चधासम्भृतःकायो यदिपञ्चत्वमागतः ।
कर्मभिःस्वशरीरोत्थैस्तत्रकापरिदेवना ॥ ७ ॥
सर्वेक्षयान्तानिचयाः पतनान्ताःसमुच्छ्रयाः ।
संयोगाविप्रयोगान्ता मरणान्तंहिजीवितम् ॥ ८ ॥
श्लेष्माश्रुबान्धवैर्मुक्तं प्रेतोभुङ्क्तेयतोऽवशः ।
अतोनरोदितव्यंहि क्रियाःकार्य्याःप्रयत्नतः ॥ ९ ॥
एवमुक्त्वाव्रजेयुस्ते गृहाँल्लघुपुरःसराः ।
स्नानाग्निस्पर्शनाज्याशैः शुध्येयुरितरेकृतैः ॥ १० ॥
इति कात्यायनस्मृतौ द्वाविंशतितमः खण्डः ॥ २२ ॥
एवमेवाहिताग्नेस्तु पात्रन्यासादिकम्भवेत् ।
कृष्णाजिनादिकश्चात्र विशेषःसूत्रचोदितः ॥ १ ॥

दे पांच भूतों से बना देह अपने देह से किये कर्मों के कारण मृत्यु (मरण) प्राप्त होगया तो इस में शोक वा आश्चर्य ही क्या है? ॥ ७ ॥ संसार में संचय वृद्धि का अन्तपरिणाम नाश है । ऊपर को चढ़ने वालों का अन्तपरिणाम गिरना है । तथा सब मेल वा संयोगों का अन्त वियोग और जीवन अन्त परिणाम मरण है ॥ ८ ॥ जिन आंसुओं को भाई बन्धु छोड़ते हैं विवश हुआ प्रेत खाता है इस से रोना उचित नहीं किन्तु यत्न से औ-र्ध्वदैहिक कर्म करना चाहिये ॥ ९ ॥ मुर्दा को लेजाते समय सब से बड़ी आयु वाला सब से आगे चले उस से कम २ आयु वाले क्रम से पीछे २ चलें सब से छोटा सब से पीछे चले । बराबर कोई न चले । और उक्त प्रकार श्मशान के समीप उपदेश कर लौटते समय सब से छोटा सब से आगे चले और सब से अधिक बूढ़ा सब से पीछे २ आवे । और जो कुटुम्बियों से भिन्न मनुष्य मरघट में गये हों उनकी शुद्धि स्नान अग्निस्पर्श और घी खाने से होती है ॥१०॥

यह २२ बाईसवां खण्ड पूरा हुआ ॥

इसी प्रकार आहिताग्नि (अग्निहोत्री) का पात्रचयनादि अन्त्येष्टि कर्म किया जाय । और जिन कृष्णाजिन आदि यज्ञ सम्बन्धी पदार्थों के लिये यहां कुछ नहीं कहा उन का कृत्य कल्प सूत्रों में कहे अनुसार जानो ॥ १ ॥

विदेशमरणेस्थीनि ह्याहृत्याभ्यज्यसर्पिषा ।
दाहयेदूर्णयाच्छाद्य पात्रन्यासादिपूर्ववत् ॥ २ ॥
अस्थ्नामलाभेपर्णानि सकलान्युक्तयावृता ।
भर्जयेदस्थिसंख्यानि ततःप्रभृतिसूतकम् ॥ ३ ॥
महापातकसंयुक्तो दैवात्स्यादग्निमान्यदि ।
पुत्रादिःपालयेदग्नीन्युक्तआदोषसंक्षयात् ॥ ४ ॥
प्रायश्चितंनकुर्याद्यः कुर्वन्वाम्रियतेयदि ।
गृह्यं निर्वापयेच्छ्रौतमप्स्वस्येत्सपरिच्छदम् ॥ ५ ॥
सादयेदुभयंवाप्सु ह्यद्भ्योऽग्निरभवद्यतः ।
पात्राणिदद्याद्विप्राय दहेदप्स्वेववाक्षिपेत् ॥ ६ ॥
अनयैवावृतानारी दग्धव्यायाव्यवस्थिता ।
अग्निप्रदानमन्त्रोस्या नप्रयोज्यइतिस्थितिः ॥ ७ ॥

यदि कोई विदेश में मरजाय तो वहां से उस की हड्डी लेकर उन में घी के और ऊन के वस्त्र से ढांक कर दाह करे और यज्ञ पात्रों का रखना पूर्व के समान यहां भी जानो ॥२॥ यदि विदेश में मरे की हड्डी भी न मिलें तो शरीर में जितनी हड्डियां होती हैं उतने पत्ते किसी यज्ञाई ढांक आदि वृक्ष के लेकर उन्हें भूंज कर मुर्दे की तरह श्मशान में लेजाकर पूर्वोक्त प्रकार पात्रचयन दाह पर्यन्त कर्म करे और तभी से सूतक माने ॥३॥ यदि अग्निहोत्री को दैव से ब्रह्महत्यादि महापातक लग जाय तो प्रायश्चित्त द्वारा दोष की निवृत्ति तक पुत्रादि सावधान होकर अग्नि की रक्षा तथा विधि के साथ नित्य होमादि कृत्य करे ॥४॥ यदि महापातकी प्रायश्चित्त न करे या प्रायश्चित्त करता २ ही मर जाय तो गृह्य नाम आवसथ्याग्नि को बुता देवे और यज्ञपात्रों सहित श्रौत अग्नि को किसी उत्तम जलाशय में छोड़ देवे ॥ ५ ॥ अथवा श्रौतस्मार्त दोनों अग्नि जल में छोड़ देवे क्योंकि जिस कारण जल से ही अग्नि उत्पन्न हुआ है। और या पात्र ब्राह्मण को देदेवे वा जलादे अथवा जल में ही गेर देवे ॥ ६ ॥ शास्त्रोक्त रीति से जो अग्निहोत्री की स्त्री अपने धर्म पर स्थित रहती हुई मरे तो उसका भी दाह कर्म करे परन्तु अग्नि देने का मन्त्र न पढ़े यह शास्त्र की मर्यादा है ॥ ७ ॥ यदि स्त्री किसी कारण पति से पृथक् स्वतन्त्र होगई

ऽग्निनैवदहेद्भार्यां स्वतन्त्रापतितानचेत् ।
दुत्तरेणपात्राणि दाहयेत्पृथगन्तिके ॥ ८ ॥
अपरेद्युस्तृतीयेवा अस्थ्नांसञ्चयनंभवेत् ।
यस्तत्रविधिरादिष्ट ऋषिभिःसोधुनोच्यते ॥ ९ ॥
स्नानान्तंपूर्ववत्कृत्वा गव्येनपयसाततः ।
सिञ्चेदस्थीनिसर्वाणि प्राचीनावीत्यभाषयन् ॥ १० ॥
शमीपलाशशाखाभ्यामुद्धृत्योद्धृत्यभस्मनः ।
आज्येनाभ्यज्यगव्येन सेचयेद्गन्धवारिणा ॥ ११ ॥
मृत्पात्रसंपुटंकृत्वा सूत्रेणपरिवेष्ट्यच ।
श्वभ्रंखात्वाशुचौभूमौ निखनेद्दक्षिणामुखः ॥ १२ ॥
पूरयित्वावटंपङ्कपिण्डशैवालसंयुतम् ।
दत्त्वोपरिसमंशेषं कुर्यात्पूर्वाह्लकर्मणा ॥ १३ ॥
एवमेवागृहीताग्नेः प्रेतस्यविधिरिष्यते ।

व्यभिचारादि द्वारा पतित न हुई हो तो उस का भी अग्निहोत्र के अग्नि
ही दाह कर्म करे परन्तु यज्ञ के पात्र स्त्री से उत्तर दिशा में समीप पृथक्
ा देवे किन्तु उक्त प्रकार चयन न करे ॥ ८ ॥ दूसरे वा तीसरे दिन अस्थि
यन कर्म करे उस का जो विधान ऋषियों ने कहा है उसे हम कहते हैं ॥९॥
वत् स्नान पर्यन्त कर्म करके तदनन्तर गौके दूध से सब हड्डियों को छिड़के
रहे, मौन भी धारण करे ॥ १० ॥ शमी (छयोंकर) और ढाक की
ओं से भस्म में से हड्डियों को निकाल २ कर गौ का घी उन में लगा २ के
न्ध जल से छिड़के ॥ ११ ॥ घट को संपुट (सीधा) करे और उस में
ड्डियों को भरकर रंगे सूत से लपेट के शुद्ध भूमि स्थल में गढ़ा खोद कर उस
घड़े को धरके दक्षिण को मुख कर गाड़ देवे ॥ १२ ॥ और उस गढ़े में
जितना खाली हो उसे गीली मट्टी और नदी की घास सिवार नामक से भर
र उस के ऊपर कुछ रखकर सम (एकसा) करदे और यह सब काम पूर्वोक्त
धि करे ॥ १३ ॥ इसी प्रकार जो अग्निहोत्री नहीं उसका भी दाह विधि करना
स्त्रानुकूल यह है। परन्तु स्त्री के तुल्य मन्त्र पढ़े विना ही इस अनाहिता-

स्त्रीणामिवाग्निदानंस्यादथातोऽनुक्तमुच्यते ॥ १

इति कात्यायनस्मृतौ त्रयोविंशतितमः खण्डः ॥

सूतकेकर्मणांत्यागः सन्ध्यादीनांविधीयते ।
होमःश्रौतेतुकर्तव्यः शुष्कान्नेनापिवाफलैः ॥ १ ॥
अकृतंहावयेत्स्मार्त्ते तदभावेकृताकृतम् ।
कृतंवाहावयेदन्नमन्वारम्भविधानतः ॥ २ ॥
कृतमोदनसक्त्वादि तण्डुलादिकृताकृतम् ।
व्रीह्यादिचाकृतंप्रोक्तमितिहव्यंत्रिधाबुधैः ॥ ३ ॥
सूतकेचप्रवासेषु चाशक्तौश्राद्धभोजने ।
एवमादिनिमित्तेषु हावयेदितियोजयेत् ॥ ४ ॥
नत्यजेत्सूतकेकर्म ब्रम्हचारीस्वकंक्वचित् ।
नदीक्षणयात्परंयज्ञे नकृच्छ्रादितपश्चरन् ॥ ५ ॥
पितर्य्यपिमृतेनैषां दोषोभवतिकर्हिचित् ।

अग्नि को भस्म करे। अब जो पूर्व नहीं कहा सो अनाहिताग्नि के लिये कहते हैं ॥ १४ ॥

यह २३ तेईसवां खण्ड पूरा हुआ ॥

सूतक में संध्या आदि कर्मों का त्याग कहा है परन्तु सूखे अन्न वा से गार्हपत्यादि श्रौत अग्नियों में सूतक के दिनों में भी होम करना चाहि आवसथ्य नामक स्मार्त्त अग्नि में अकृत की वा अकृत न मिले तो कृता अथवा कृत अन्न की आहुति ब्रह्मा के अन्वारम्भ करनेपर दिया करे ओदन (भात) और सत्तू आदि पीसा पकाया अन्न कृत, कचे चावलों ताकृत और बिनकुटे धान आदि अकृत कहाते हैं यह तीन प्रकार का व्यान्न विद्वानों ने कहा है ॥ ३ ॥ सूतक में, परदेश में, रोगादि से अ होने पर, श्राद्ध भोजन करने पर इत्यादि निमित्तों में स्वयं होम न करे अन्य किसी द्वारा होम करावे ॥ ४ ॥ सूतक में ब्रह्मचारी अपने कर्म को न छोड़े और दीक्षणीया इष्टि से आगे यज्ञ में और दो आदि दिन में वाले कृच्छ्र सान्तपन आदि तप करता हुआ भी सूतक में न छोड़े ॥ पिता के भी मरजाने पर इन ब्रह्मचारी आदि को दोष नहीं लगता अ

आशौचंकर्मणोऽन्तेस्यात् त्र्यहंवाब्रह्मचारिणः ॥ ६ ॥
श्राद्धमग्निमतःकार्यं दाहादेकादशेऽहनि ।
प्रत्याब्दिकंनुकुर्वीत प्रमीताहनिसर्व्वदा ॥ ७ ॥
द्वादशप्रतिमास्यानि आद्यंपाण्मासिकेतथा ।
सपिण्डीकरणञ्चैव एतद्वैश्राद्धषोडशम् ॥ ८ ॥
एकाहेनतुषण्मासा यदास्युरपिवात्रिभिः ।
न्यूनाःसंवत्सरश्चैव स्यातांषाण्मासिकेतदा ॥ ९ ॥
यानिपञ्चदशाद्यानि अपुत्रस्येतराणितु ।
एकस्मिन्नहिदेयानि सपुत्रस्यैवसर्वदा ॥ १० ॥
नयोषायाःपतिर्दद्यादपुत्रायाअपिक्वचित् ।
नपुत्रस्यपितादद्यान्नानुजस्यतथाग्रजः ॥ ११ ॥
एकादशेऽह्निनिर्वर्त्य अर्वाग्दर्शाद्यथाविधि ।
प्रकुर्वीताग्निमान्पुत्रो मातापित्रोःसपिण्डताम् ॥ १२ ॥

चारी को प्रारम्भ किये कर्म के समाप्त होजाने पर तीन दिन सूतक मा- चाहिये ॥ ६ ॥ अग्निहोत्री का श्राद्ध दाह के दिन से ग्यारहवें दिन करे प्रति वर्ष में भी मरने के दिन सदैव श्राद्ध करे ॥ ७ ॥ एक वर्षतक बारह के प्रत्येक अमावास्या के बारह श्राद्ध, ग्यारहवें दिन का १ एक पहिला छः २ महिने पूरे होने पर दो श्राद्ध और एक सपिंडीकरण श्राद्ध ये होत्री के सोलह श्राद्ध कहाते हैं ॥ ८ ॥ ये दो छः २ मास वाले श्राद्ध तब हैं जब छः महीने वा १ वर्ष में एक वा तीन दिन शेष रहें तब छठे २ ने में दो वार श्राद्ध करे ॥९॥ पहिले जो पन्द्रह श्राद्ध हैं वे जिसके पुत्र न उसके एक ही दिन में करदे और जिसके पुत्र हो उसके सर्वदा (पृथक् २) २ समय में करे ॥ १० ॥

जिस स्त्री के पुत्र न हो उस का पति उस को श्राद्ध में पिण्ड न देवे पुत्र पेता पिण्ड न दे तथा छोटे भाई को बड़ा भाई पिण्ड न देवे ॥ ११ ॥ हवें दिन मावस से पहिले कर्म को पूर्ण करके अग्निहोत्री पुत्र माता पिता सपिण्डी विधि पूर्वक करे ॥ १२ ॥ सपिण्डी किये पीछे प्रति महीने एको-

पिण्डीकरणादूर्ध्वं नदद्यात्प्रतिमासिकम्।
कोद्दिष्टेनविधिना दद्यादित्याहगौतमः ॥ १३ ॥
र्पूसमन्वितमुक्त्वा तथाद्यंश्राद्धषोडशम्।
त्याब्दिकंचशेषेषु पिण्डाःस्युःषडितिस्थितिः ॥ १४ ॥
र्घेऽक्षय्योदकेचैव पिण्डदानेऽवनेजने।
न्त्रस्यतुनिवृत्तिःस्यात्स्वधावाचनएवच ॥ १५ ॥
ब्रह्मदण्डादियुक्तानां येषांनास्त्यग्निसत्क्रिया।
श्राद्धादिसत्क्रियाभाजो नभवन्तीहतेक्वचित् ॥ १६ ॥
इति कात्यायनस्मृतौचतुर्विंशतितमः खण्डः ॥ २४ ॥
मन्त्राम्नायेऽग्नइत्येतत् पञ्चकंलाघवार्थिभिः।
पठ्यतेतत्प्रयोगेस्यान्मन्त्राणामेवविंशतिः ॥ १ ॥
अग्नेःस्थानेवायुचन्द्रसूर्यावहुवदूह्यच।
समस्यपञ्चमीसूत्रे चतुश्चतुरितिश्रुतेः ॥ २ ॥

श्राद्ध न करे और गौतम ऋषि यह कहते हैं कि सपिण्डी के पश्चात् ही
द्दिष्ट की विधि से ही प्रति महीने श्राद्ध करे॥ १३ ॥ कर्पू (अर्था) शक्ति
हले श्राद्ध को षोडश १६ श्राद्धों को और वार्षिक (तयाह) श्राद्ध को छोड़ क
पार्वणादि श्राद्धों में छः २ पिण्ड देने चाहिये यह मर्यादा है॥ १४ ॥ अ
क्षय्योदक, पिण्डदान, अवनेजन,-और स्वधावाचन इतने कामों में तन्त्र
रे। अर्थात् किसी को किसी के साथ मिला के न करे ॥ १५ ॥ ब्रह्मदण्ड (इ
) आदि से मरे जिन पुरुषों का अग्नि में दाह रूप सत्कर्म नहीं हुआ है
ाद्ध आदि सत्कर्म के भागी इस लोक में कभी नहीं होते ॥ १६ ॥

यह २४ चौवीशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

मन्त्र संहिता में (अग्ने०) इत्यादि जो पांच मन्त्र लाघव चाहने वाले
ऋषियों ने पढ़े हैं उन मन्त्रों के प्रयोग में वीस मन्त्र होते हैं॥ १ ॥ कर्म
(अग्ने) इस पद के स्थान में (वायो) (चन्द्र) (सूर्य) इन का ऊह
लेने से एक २ के चार २ मन्त्र हो जाते हैं। फिर पांचवां मन्त्र पूरा करने
लिये अग्नि आदि चारो देवताओं का समास कर लेना चाहिये। क्योंकि
२ देवताओं को एक २ आहुति देवे यह श्रुति में कहा है॥ २॥ पहिले

प्रथमेपञ्चकेपापीलक्ष्मीरितिपदंभवेत्।
अपिपञ्चसुमन्त्रेषु इतियज्ञविदोविदुः ॥ ३ ॥
द्वितीयेतुपतिघ्नीस्यादपुत्रेतितृतीयके।
चतुर्थेत्वपसव्येति इदमाहुतिविंशकम् ॥ ४ ॥
धृतिहोमेनप्रयुञ्ज्याद्गोनामसुतथाष्टसु।
चतुर्थ्यामघ्न्यइत्येतद्गोनामसुहिहूयते ॥ ५ ॥
लताग्रपल्लवोगूढः शुङ्गेतिपरिकीर्त्यते।
पतिव्रताव्रतवती ब्रह्मबन्धु स्तथाऽश्रुतः ॥ ६ ॥
शलाटुनीलमित्युक्तं ग्रन्थःस्तवकउच्यते।
कपुष्णिकाभितःकेशा मूर्धनिपश्चात्कमुच्छलम् ॥ ७॥
श्वाविच्छलाकाशलली तथावीरतरःशरः।
तिलतण्डुलसम्पक्कः कृसरःसोभिधीयते॥ ८॥
नामधेयेमुनिवसुपिशाचावहुवत्सदा।
यक्षाश्चपितरोदेवा यष्टव्यास्तिथिदेवताः॥९॥
आग्नेयाद्येऽथसर्पाद्ये विशाखाद्येतथैवच।

पापी लक्ष्मी पद पांचों मन्त्रों में लगावे यह यज्ञ का तत्व जानने वालों
स्थिर किया है ॥ ३ ॥ दूसरे पंचक में पतिघ्नी पद तीसरे पंचक में अपु-
त्रा पद और चौथे पञ्चक में अपसव्या पद लगावे ये बीस आहुति हैं ॥ ४ ॥
धृति के होम में और आठों गोनाम के होमों में प्रयोग न करे गो नामों में
चौथी आहुति पर (अघ्न्ये) इस मन्त्र से आहुति देवे ॥५॥ लता के आगेका
जो पत्ता गुप्त है उसे शुंगा कहते, हैं पतिव्रता को व्रतवती और जो वेद न
पढ़ा हो उस ब्राह्मण को ब्रह्मबन्धु कहते हैं ॥६॥ नील को शलाटु, स्तवक (गुच्छा)
को ग्रन्थ कहते हैं । स्त्री के सिर पर दोनों तरफ के केशों को कपुष्णिका
और पीछे केश के जूड़े को कपुच्छल कहते हैं ॥७॥ सेही के कांटे को शलली,
शर को वीरतर कहते और इकट्ठे पके तिल चावलों को कृसर नाम खिचड़ी
कहते हैं ॥ ८ ॥ मुनि, वसु, पिशाच, यक्ष, पितर, देव और तिथियों के देवता
इन सब को बहुवचनान्त नाम लेकर पूजे (जैसे मुनिभ्योनमः इत्यादि) ॥९॥
इतने नक्षत्र द्वन्द्व (दो २) हैं इन को मद्य बहुवचन पद से यथा (कृत्तिकाभ्यः

आषाढाद्ये धनिष्ठाद्ये अश्विन्याद्ये तथैवच ॥
द्वन्द्वान्येतानिवहुवद्ध क्षाणांजुहुयात्सदा।
द्वन्द्वद्वयंद्विवच्छेपमवशिष्टान्यथैकवत् ॥ ११ ॥
देवतास्वपिहूयन्ते वहुवत्सार्वपित्तयः।
देवाश्चवसवश्चैव द्विपद्ददेवाश्विनौसदा ॥ १२ ॥
ब्रह्मचारीसमादिष्टो गुरुणाव्रतकर्मणि।
वाढमोमिवाब्रूयात्तथैवानुपपालयेत् ॥ १३ ॥
सशिखंवपनंकार्यमास्नानाद्ब्रह्मचारिणा।
आशरीरविमोक्षाय ब्रह्मचर्य्यंनचेद्भवेत् ॥ १४ ॥
नगात्रोत्सादनंकुर्य्यादनापदिकदाचन।
जलक्रीडामलंकारान्व्रतीदण्डइवाप्लवेत् ॥ १५ ॥
देवतानांविपर्य्यासे जुहोतिपुकथम्भवेत्।
सर्वंप्रायश्चित्तंहुत्वा क्रमेणजुहुयात्पुनः ॥ १६ ॥
संस्काराअतिपत्येरन् स्वकालाच्चेत्कथ्चन।

स्वाहा इत्यादि) आहुति दे और शेषदो द्वन्द्वों को द्विवचनान्त पद बाकी के नक्षत्रों को एक वचनान्त पद से आहुति देवे ॥११॥ देवतार्ज सार्वपित्ति देव, वसु, द्विपद्देव, अश्विनीकुमार इन को बहुवचनान्त उच्चारण करे ॥ १२ ॥ जिस व्रत के काम में ब्रह्मचारी को गुरु आज्ञा में वाढं (सत्य है) अथवा ओं (अङ्गीकार है) ऐसे कहे और गुरु के को वैसी ही ज्यों की त्यों पालन करे ॥ १३ ॥

यदि जीवन भर के लिये नैष्ठिक ब्रह्मचर्य धारण न किया हो तं वर्त्तन संस्कार होने पर्यन्त ब्रह्मचारी को शिखा सहित मुण्डन सदा चाहिये ॥१४॥ ब्रह्मचारी आपत्ति के विना अपने शरीर को किसी से वावे। जल में क्रीड़ा, आभूषण धारण इन को भी न करे और जल डुबकी लगा के स्नान न करे किन्तु दण्ड के तुल्य जल पर तर लेवे यदि कभी होम में देवताओं का विपर्यास (आगे का पीछे या पीछे होजाय तो प्रायश्चित्त की सब आहुति देकर फिर क्रम से होम करे यदि यज्ञोपवीत से पहिले संस्कारों (जात कर्मादि) की अ

हुत्वातदेवकर्तव्या येतूपनयनादधः ॥ १७ ॥
अनिष्ट्वानवयज्ञेन नवान्नंयोऽत्त्यकामतः ।
वैश्वानरश्चरुस्तस्य प्रायश्चित्तंविधीयते ॥ १८ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ पञ्चविंशतितमः खण्डः ॥ २५ ॥
चरुःसमशनीयोयस्तथागोयज्ञकर्मणि ।
वृषभोत्सर्जनेचैव अश्वयज्ञेतथैवच ॥ १ ॥
श्रावण्यांवाप्रदोषेयः कृष्यारम्भेतथैवच ।
कथमेतेपुनिर्वापाः कथञ्चैवजुहोतयः ॥ २ ॥
देवतासंख्ययाग्राह्या निर्वापास्तुपृथक्पृथक् ।
तूष्णींद्विरेवगृण्हीयाद्धोमश्चापिपृथक्पृथक् ॥ ३ ॥
यावताहोमनिर्वृत्तिर्भवेद्वायत्रकीर्तिता ।
शेषञ्चैवभवेत्किञ्चित्तावन्तंनिर्वपेच्चरुम् ॥ ४ ॥
चरौसमशनीयेतु पितृयज्ञेचरौतथा ।

ठीक समय पर न होना) हो जाय तो प्रायश्चित्त की सब आहुति देकर २ संस्कारों को समय निकल जाने पर भी करे ॥ १७ ॥ जो पुरुष अज्ञान यायेष्टि किये विना नवीन अन्न को खा लेवे उस का प्रायश्चित्त वैश्वानर ग्नि का) चरु है अर्थात् वैश्वानर देवता के नाम से चरु बना कर होम ॥ १८ ॥

यह २५ पच्चीशवां खण्ड पूरा हुआ ॥

जो समशनीय (खाने योग्य) चरु है वह और गोयज्ञ कर्म में वृषोत्सर्ग अश्वमेध में ॥१॥ श्रावणी में, प्रदोष में, कृषि (खेती) के आरम्भ में इतनी रों में निर्वाप और आहुति कैसे होनी चाहिये सो कहते हैं ॥२॥ जितने ा हों उतने ही पृथक् २ निर्वाप लेने चाहिये-और प्रत्येक देवता के लिये २ वार मन्त्र से दो २ वार तूष्णीं हविष्यान्न का ग्रहण करे और सब दे- ताओं के लिये होम भी पृथक् २ करे ॥ ३ ॥ जितना होम जहां कहा हो जितने से होम हो सके और कुछ शेष भी रह जाय उतना ही चरु वे॥ ४ ॥ समशनीय चरु में पितृयज्ञ के चरु में इन में तो मेक्षण नाम

होतव्यम्मेक्षणेनान्य उपस्तीर्याभिघारितम् ॥ ५ ॥
कालःकात्यायनेनोक्तो विधिश्चैवसमासतः ।
वृपोत्सर्गेयतोनोऽत्र गोभिलेनतुभापितः ॥ ६ ॥
पारिभापिकएवस्यात् कालोगोवाजियज्ञयोः ।
अन्यस्मादुपदेशात्तु स्वस्तरारोहणस्यच ॥ ७ ॥
अथवामार्गपाल्येऽन्हि कालोगोयज्ञकर्मणः ।
नीराजनेऽह्निवाश्वानामितितन्त्रान्तरेविधिः ॥ ८ ॥
शरद्वसन्तयोःकेचिन्नवयज्ञंप्रचक्षते ।
धान्यपाकवशादन्ये श्यामाकोवनिनःस्मृतः ॥ ९ ॥
आश्वयुज्यान्तथाकृष्यां वास्तुकर्मणियाज्ञिकाः ।
यज्ञार्थतत्त्ववेत्तारो होममेवंप्रचक्षते ॥ १० ॥
द्वेपञ्चद्वेक्रमेणैता हविराहुतयःस्मृताः ।
शेषाआज्येनहोतव्या इतिकात्यायनोऽब्रवीत् ॥ ११

काष्ठ के यज्ञपात्र से होम करे और अन्य चरु में घी का उपस्तरण (आ-
हुति देने से प्रथम स्रुवादि में घी चुपड़ना) और आहुति के लिये
लिये चरु पुरोडाशादि पर ऊपर से घी डालना अभिघार कहाता है।
काल और विधि संक्षेप से कात्यायन ने कहे हैं परन्तु वृषोत्सर्ग में गो
ऋषि ने काल और विधि नहीं कहे॥६॥ गोमेध और अश्वमेध यज्ञ में समय
है जो पारिभाषिक (परिभाषा सूत्रों में नियत किया) हो। अन्य उप
स्वस्तरारोहण गृह्यकर्म का काल भी पारिभाषिक जानो॥७॥ अथवा
पाल्य दिन में गोयज्ञ कर्म का और नीराजन (दिवाली) के दिन अश्व
का काल होता है यह शास्त्रान्तरों की विधि है॥८॥ कोई ऋषि शरद्
वसन्त में नवान्नेष्टियज्ञ कहते और कोई अन्न के पकने पर कहते हैं
वानप्रस्थ को श्यामाक (समा) पकने पर वर्षा ऋतु में नवान्नेष्टि यज्ञ
है॥९॥ आश्विन की पूर्णिमा के दिन, कृषि कर्म के आरम्भ में और
प्रतिष्ठा में इन में यज्ञ का तत्त्व जानने वाले याज्ञिक लोग इस आगे कहे
कार से होम कहते हैं॥१०॥ दो, पांच, फिर दो, इस क्रम से आ
हविष्यान्न की और शेष आहुति घी की देनी चाहिये यह कात्यायनने कहा है।

पयोयदाज्यसंयुक्तं तत्पृषातकमुच्यते ।
दध्येकेतदुपासाद्य कर्त्तव्यःपायसश्चरुः ॥ १२ ॥
व्रीहयःशालयोमुद्गा गोधूमाःसर्षपास्तिलाः ।
यवाश्चौषधयःसप्त विपदंघ्नन्तिधारिताः ॥ १३ ॥
संस्काराःपुरुषस्यैते स्मर्य्यन्तेगौतमादिभिः ।
अतोऽष्टकादयःकार्य्याः सर्वकालक्रमोदिताः ॥ १४ ॥
सकृदप्यष्टकादीनि कुर्यात्कर्माणियोद्विजः ।
सपङ्क्तिपावनोभूत्वा लोकान्प्रैतिघृतश्च्युतः ॥ १५ ॥
एकाहमपिकर्मस्थो योऽग्निशुश्रूषकःशुचिः ।
नयत्यत्रतदेवास्य शताहंदिविजायते ॥ १६ ॥
यस्त्वाधायाग्निमाशास्य देवादीन्नैभिरिष्टवान् ।
निराकर्त्तामरादीनां सविज्ञेयोनिराकृतिः ॥ १७ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ षड्विंशतितमः खण्डः ॥ २६ ॥

घी जिस में मिला है ऐसे दूध को पृषातक कहते हैं और कोई [illegible]न् यह कहते हैं कि उस दूध में दधि मिलाकर पायस चरु बना लेवे॥१२॥ [illegible]ह धान शालि बासमती, मूंग, गेहूं, सरसों, तिल, जौ,—ये सात औषधी [illegible] करने से विपत्ति को दूर करती हैं ॥ १३ ॥ गौतम आदि ऋषियों ने ये [illegible]कर्म पुरुष को शुद्ध करने वाले कहे हैं इससे अष्टका आदि सब कर्म जिस [illegible] में कहे हैं उसी समय करने चाहिये ॥ १४ ॥ जो द्विज पुरुष [illegible]का अष्टका आदि कर्मों को एक वार भी श्रद्धा और विधि से ठीक२ करता है [illegible] पंक्तिपावन (पांत का पवित्र करने वाला) होकर उत्तम लोकों (स्वर्ग- [illegible]) को प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ जो धर्म कर्म में तत्पर शुद्धि के साथ स्थापित [illegible] का सेवक पुरुष एक दिन भी ऐसी दशा में बिताता है वही दिन स्वर्ग [illegible] १०० गुणा फल दायक हो जाता है ॥ १६ ॥ जो अग्नि का आधान स्था- [illegible] करके और देवतादि को आशा देकर इन पदार्थों से देवताओं का पूजन [illegible] करता इस से उन देवताओं को तिरस्कार करने वाले को निराकृति (ना- [illegible]क) जानना चाहिये ॥ १७ ॥

यह २६ छब्बीसवां खण्ड पूरा हुआ ॥

यच्छ्राद्धंकर्मणामादौ याचान्तेदक्षिणाभवेत्।
अमावास्यांद्वितीयंयदन्वाहार्य्यंतदुच्यते ॥ १ ॥
एकसाध्येष्ववर्हिःषु नस्यात्परिसमूहनम्।
नोदगासादनञ्चैव क्षिप्रहोमाहितेमताः ॥ २ ॥
अभावेव्रीहियवयोर्दध्नावापयसापिवा।
तदभावेयवाग्वावा जुहुयादुदकेनवा ॥ ३ ॥
रौद्रन्तुराक्षसंपित्र्यमासुरञ्चाभिचारिकम्।
उक्त्वामन्त्रंस्पृशेदाप आलभ्यात्मानमेवच ॥ ४
यजनीयेन्हिसोमश्चेद्वारुण्यांदिशिदृश्यते।
तत्रव्याहृतिभिर्हुत्वा दण्डंदद्याद्द्विजातये ॥ ५ ॥
लवणंमधुमांसंच क्षारांशोयेनहूयते।
उपवासेनभुञ्जीत नोरुरात्रौनकिंचन ॥ ६ ॥
स्वकालेसायमात्याह अप्राप्तौहोतृहव्ययोः।

कर्मों के आदि में जो आभ्युदयिक श्राद्ध होता है और कर्मों के जो दक्षिणा दीजाती है और अमावस को जो दूसरा श्राद्ध होता है उसे हार्य्य कहते हैं ॥ १ ॥ एक साथ होने वाले, जिन में बर्हिनामक कुश गये हों ऐसे होमों में परिसमूहन और उत्तर २ पात्रों का रखना नहीं क्योंकि वे शीघ्र होने वाले होम कहाते हैं ॥ २ ॥ व्रीहि और जौ के में दही या दूध से और उन के भी अभाव में ढीले रांधे हुए चावलों से, यदि न मिलें तो केवल जल से होम करै ॥ ३ ॥ रुद्र, राक्षस, पितर, असुर और अभिचार नाम शत्रु वध का जिन में विशेष कर वर्णन हो ऐसे मन्त्रों का उच्चारण करके अपने हृदय का स्पर्श कर दहिने हाथ से जल स्पर्श करे ॥ ४ ॥ दर्शेष्टि के दिन संध्या के समय पश्चिम दिशा में चन्द्रमा दीख पड़े तो व्याहृति [भूः आदि] यों से होम करके किसी ब्राह्मण को एक बड़ी द देवे ॥ ५ ॥ लवण, शहत, मांस, और खार इन का अग्नि में जो होम करे वह दिन में उपवास करे और रात्रि में भी मध्यम भोजन करे न थोड़ा न अधिक ॥ ६ ॥ सायंकाल की आहुति के समय पर यदि होता और हविष्यान्न

प्राक्प्रातराहुतेःकालः प्रायश्चित्तेहुतेसति ॥ ७
प्राक्सायमाहुतेः प्रातर्होमकालानतिक्रमः ।
प्राक्पौर्णमासाद्दर्शस्य प्राग्दर्शादितरस्यतु ॥ ८ ॥
वैश्वदेवेत्वतिक्रान्ते अहोरात्रमभोजनम् ।
प्रायश्चित्तमथोहुत्वा पुनःसन्तनुयाद्व्रतम् ॥ ९ ॥
होमद्वयात्ययेदर्शपौर्णमासात्ययेतथा ।
पुनरेवाग्निमादध्यादितिभार्गवशासनम् ॥ १० ॥
अनूचोमाणवोज्ञेय एणःकृष्णमृगःस्मृतः ।
रुरुर्गौरमृगःप्रोक्तस्तम्बलःशोणउच्यते ॥ ११ ॥
केशान्तिकोब्राह्मणस्य दण्डःकार्यःप्रमाणतः ।
ललाटसम्मितोराज्ञः स्यात्तुनासान्तिकोविशः ॥ १२ ॥
ऋजवस्तेतुसर्वेस्युरव्रणाःसौम्यदर्शनाः ।
अनुद्वेगकरानृणां सत्वचोऽनाग्निदूषिताः ॥ १३ ॥
गौर्विशिष्टतयाविप्रैर्वेदेष्वपिनिगद्यते ।

प्रातःकाल की आहुति देने से पहिले प्रायश्चित्त की आहुति के पीछे सायं[काल] का होम कर देवे और प्रातःकाल का होम छूट जाय तो सायंकाल की [आ]हुति से पहिले प्रायश्चित्तपूर्वक उस के कर लेने का समय है। यदि कोई [पौर्ण]मासेष्टि समय पर न हो पावे तो दर्शेष्टि से पहिले २ उस को प्रायश्चित्त [पूर्व]क कर लेवे और दर्शेष्टि छूट जावे तो अगली पौर्णमासेष्टि से पहिले उसे [भी] कर लेवे ॥ ८ ॥ एक दिन का वैश्वदेव छूट जाने पर एक दिन रात भोजन [न] करे तदनन्तर प्रायश्चित्त होम करके विस्तार के साथ नियम का पालन करे ॥९॥ [य]दि दो वार का होम छूट जाय या दर्शपूर्णमास दोनों इष्टि छूट जायं तो [फि]र से अग्नि का आधान करे यह भार्गव का मत है ॥ १० ॥ यज्ञोपवीत न [हु]ए बालक को अनूच कहते और काले मृग को एण और गोरे मृग को रुरु [औ]र लाल को तम्बल कहते हैं ॥ ११ ॥ केशों की उंचाई तक ब्राह्मण का, म[स्त]क तक क्षत्रिय का और नासिका तक वैश्य ब्रह्मचारी का दण्ड होना चाहिये॥१२॥ [औ]र वे दण्ड कोमल हों, घुने न हों, देखने में सुन्दर हों, मनुष्यों को डरपाने वाले [न] हों, वक्कल सहित हों और जले न हों ॥ १३ ॥ ब्राह्मणों ने और वेदों में

यस्मात्तस्माद्गौर्वरमुच्यते ॥ १४ ॥
येषांव्रतानामन्तेषु दक्षिणानविधीयते ।
वरंतत्रभवेद्दानमपिवाच्छादयेद्गुरुम् ॥ १५ ॥
अस्थानोच्छ्वासविच्छेदघोषणाध्यापनादिकम् ।
प्रमादिकंश्रुतीयत्स्यायातयामत्वकारितत् ॥ १६
प्रत्यब्दंयदुपाकर्म सोत्सर्गंविधिवद्द्विजैः ।
क्रियतेछन्दसान्तेन पुनराप्यायनंभवेत् ॥ १७ ॥
अयातयामैश्छन्दोभिर्यत्कर्म्मक्रियतेद्विजैः ।
क्रीडमानैरपिसदा तत्तेषांसिद्धिकारकम् ॥ १८ ॥
गायत्रींचसगायत्रां वार्हस्पत्यमितित्रिकम् ।
शिष्येभ्योऽनूच्यविधिवदुपाकुर्य्यात्ततःश्रुतिम् ॥ १९
छन्दसामेकविंशानां संहितायांयथाक्रमम् ।
तच्छन्दस्काभिरेवर्ग्भिराद्याभिर्होमइष्यते ॥ २० ॥

को उत्तम कहा है जिस कारण गौ से श्रेष्ठ दक्षिणा अन्य कोई नहीं
रण वर शब्द से कही गोदान की दक्षिणा ही सर्वोत्तम जानो ॥ १
तों के अन्त में कोई दक्षिणा नहीं कही वहां वर (गौ) को ही द
अथवा गुरु को वस्त्र दान देवे ॥१५॥ अस्थान, (जिस स्थान से बोल
स से वर्णों को न बोलना) ऊंचे स्वांस से बोलना सन्धि न क
वसान देकर बोलना, अति ऊंचे शब्द से बोलना, और पढ़ाने
, यदि ऐसे दोष प्रमाद से होजांय तो वेदाध्ययनरूप धर्म
रहीन होजाता है ॥१६॥ प्रतिवर्ष जो उत्सर्ग के सहित उपाकर्म
लोग करते हैं उस से फिर वेदों की आप्यायन नाम पूर्ति हो
यातयाम [सार वाले] वेदों द्वारा जो कर्म खेल करते हुवे
ते हैं वह कर्म उन के मनोरथ की सिद्धि करने वाला होता
सहित गायत्री और वार्हस्पत्य (बृहस्पति देवता का मन्त्र,
यों को पढ़ा के तदनन्तर वेद का उपाकर्म करे ॥ १९ ॥
यत्री आदि इक्कीस छन्द हैं, उन छन्दों वाली सनातन
है ॥ २० ॥

पञ्चभिरर्चेषगानेषु ब्राह्मणेपूत्तरादिभिः ।
अङ्गेषुचर्चामन्त्रेषु इतिषष्टिर्जुहोतयः ॥२१ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ सप्तविंशतितमःखण्डः ॥ २७ ॥
अक्षतास्तुयवाःप्रोक्ता भृष्टाधानाभवन्तिते ।
भृष्टास्तुव्रीहयोलाजा घटःखाण्डिकउच्यते ॥ १ ॥
नाधीयीतरहस्यानि सोत्तराणिविचक्षणः ।
नचोपनिषदश्चैव षण्मासान्दक्षिणायनान् ॥ २ ॥
उपाकृत्योदगयने ततोऽधीयीतधर्म्मवित् ।
उत्सर्गश्चैकएवैषां तैष्यांप्रोष्ठपदेऽपिवा ॥ ३ ॥
अजातव्यञ्जनालोम्नी नतयासहसंविशेत् ।
अयुगूःकाकवन्ध्याया जातातांनविवाहयेत् ॥ ४ ॥
संसक्तपदविन्यासस्त्रिपदःप्रक्रमःस्मृतः ।
स्मार्त्तकर्म्मणिसर्वत्र श्रौतेत्वध्वर्य्युणोदितः ॥ ५ ॥

(सामवेद) में पर्वों से और ब्राह्मण वेद में उत्तरादि से और अङ्गों
ा और मन्त्रों में जो कही हैं वेही साठ ६० आहुति हैं ॥ २१ ॥

यह सत्ताईसवां २७ खण्ड पूरा हुआ ॥

येन कुटे जौ को अक्षत कहते हैं और वेही भुंजे हुए जौ धाना कहाते
ा भुंजे धानों को लाजा (खीलें) कहते हैं और घड़े को खाण्डिक कहते
॥ दक्षिणायन के छः महीनों में विद्वान् पुरुष उत्तर भागों सहित वेद
भी रहस्य ग्रन्थों को और उपनिषदों को न पढ़े ॥ २ ॥ उपाकर्म करके
यण में धर्म का ज्ञाता पुरुष रहस्यादि वेद भागों को पढ़े । द्विजों के
पौष वा भाद्रपद की पौर्णमासी पर एक ही वार उत्सर्ग कर्म कहा
॥ जिस स्त्री के शरीर पर जब तक सर्वथा ही लोम न उगे हों और जिस
स्थल में कुच प्रकट न हुए हों, उसके साथ धर्मनिष्ठ पुरुष संयोग न करे
के अंग उत्पत्ति से ही विगड़े हों और जो काकवन्ध्या हो उस के साथ
ह न करे ॥४॥ सर्वत्र स्मार्त्त कर्म में मिला२ के नापे तीन पग लंबा १ प्रक्रम
ा है। और श्रौतकर्मों में यजुर्वेद के ब्राह्मणकल्प में कहा प्रक्रम का
जानो ॥ ५ ॥

...दिशिवलिंदद्यात्तामेवाभिमुखोवलिम्।
श्रवणाकर्म्माणिभवेन्न्यञ्चकर्मनसर्वदा॥६॥
वलिशेषस्यहवनमग्निप्रणयनन्तथा।
प्रत्यहंनभवेयातामुल्मुकन्तुभवेत्सदा॥७॥
पृषातकप्रेषणयोर्नवस्यहविषस्तथा।
शिष्टस्यप्राशनेमन्त्रस्तत्रसर्वेऽधिकारिणः॥८॥
ब्राह्मणानामसान्निध्ये स्वयमेवपृषातकम्।
अवेक्षेद्धविषःशेषं नवयज्ञेऽपिभक्षयेत्॥९॥
सफलावदरीशाखा फलवत्यभिधीयते।
घनाविसिकताःशङ्काः स्मृताजातशिलास्तुताः॥१०॥
नष्टोविनष्टोमणिकः शिलानाशेतथैवच।
तदेवाहृत्यसंस्कार्य्यो नापेक्षेदाग्रहायणीम्॥११॥
श्रवणाकर्म्मलुप्तंचेत्कथंचित्सूतकादिना।
आग्रहायणिकंकुर्याद्वलिवर्जमशेषतः॥१२॥

...व दिशा में वलि देनी हो उसी दिशा के सम्मुख बैठे-और ...
...चे को अधोमुख कर्म सदा ही न करे॥६॥ वलि के शेष भाग ...
... अग्नि का प्रणयन-(लाना) ये प्रतिदिन होते और उल्मुक ...
...दिन होता ही है॥७॥ पृषातक [मिलाये हुये दूध घी] ...
...ः और हविः शेष के भोजन में जो मन्त्र है उसमें सब द्विज ...
...॥ यदि ब्राह्मण समीप में न हों तो क्षत्रियादि पुरुष आप ही ...
...देखले और नवयज्ञ में भी हविः शेषः का भक्षण भी करे।
...ली वेरिया की शाखा को फलवती कहते और सघन कंकड़ ...
... जैसी जम गई हो, जिस में वालू न हो, उसे शंका कहते हैं ...
...ा नष्ट भ्रष्ट हो जावे तो उसी समय नया लाकर संस्कार ...
...की पौर्णमासी की वाट न देखे॥११॥ यदि किसी प्रकार ...
... का कर्म न हुआ हो तो वलि कर्म को छोड़ कर आग्र...
...दी १५) को सब कर्म करे॥१२॥

ऊर्ध्वंस्वस्तरशायीस्यान्मासमर्द्धमथापिवा ।
सप्तरात्रंत्रिरात्रंवा एकांवासद्यएववा ॥ १३ ॥
नोर्ध्वंमन्त्रप्रयोगःस्यान्नाग्न्यागारं नियम्यते ।
नाहतास्तरणंचैव नपार्श्वंचापिदक्षिणम् ॥ १४ ॥
दृढश्चेदाग्रहायण्यामावृत्यावापिकर्म्मणः ।
कुम्भीमन्त्रवदासिञ्चेत्प्रतिकुम्भमृचंपठेत् ॥ १५ ॥
अल्पानांयोविघातःस्यात् सबाधोबहुभिःस्मृतः ।
प्राणसम्मितइत्यादि वसिष्ठं बाधितंयथा ॥ १६ ॥
विरोधोयत्रवाक्यानां प्रामाण्यंतत्रभूयसाम् ।
तुल्यप्रमाणकत्वेतु न्यायएवंप्रकीर्तितः ॥ १७ ॥
त्रैयम्बकंकरतलमपूपामण्डकाःस्मृताः ।
पालाशागोलकाश्चैव लोहचूर्णचचीवरम् ॥ १८ ॥
स्पृशन्ननामिकाग्रेण क्वचिदालोकयन्नपि ।
अनुमन्त्रणीयंसर्वत्र सदैवमनुमन्त्रयेत् ॥ १९ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ अष्टाविंशतितमः खण्डः ॥ २८ ॥

र एक महीने वा पन्द्रह दिन वा सात दिन वा तीन दिन वा एक
र अथवा उसी समय अपने २ गृह्यकल्प में कहे अनुसार स्वस्तरारोहण कर्म
॥ १३ ॥ फिर स्वस्तरारोहण के पीछे सोने में मन्त्र प्रयोग, अग्न्यागार के
ट सोने का नियम, अहतवस्त्र बिछाने का नियम और दहिने करवट से
ने का नियम नहीं रक्खा जाता है ॥ १४ ॥ यदि मनुष्य मार्गशिर की
मासी को बार२ कर्म की आवृत्ति करने में समर्थ हो तो कुआ में से जल
र कर मही के घड़े२ दो पात्रों में प्रत्येक बार मन्त्र पढ़ २ के जल भरे ॥१५॥
कर्मों का जो विघात (नाश) है उसे बहुत अपि बाध कहते हैं जैसे
सम्मित (शक्ति के अनुसार) इत्यादि वशिष्ठ ... हां विचार
धत है ॥ १६ ॥ जहां वचनों का परस्पर विरो... त ऋषियों
वचन प्रमाण होता है और जहां दोनों ... य हों वहां
आगे कहा निर्णय जानो ॥ १७ ... अपूपों को
क, ढाकों को ... ॥ १८ ॥ प-
मका के ... के कामों में
करता ... १७ अनुमन्त्रण
।

क्षालनंदर्भकूर्च्चेन सर्वत्र स्रोतसांपशोः ।
तूष्णीमिच्छाक्रमेणस्या द्वपार्थपार्णदारुणी ॥ १ ॥
सप्ततावन्मूर्धन्यानि तथास्तनचतुष्टयम् ।
नाभिःश्रोणिरपानंच गोस्रोतांसिचतुर्दश ॥ २ ॥
क्षुरोमांसावदानार्थः कृत्वास्विष्टकृदावृता ।
वपामादायजुहुयात्तत्र मन्त्रंसमापयेत् ॥ ३ ॥
हृज्जिव्हाक्रोडमस्थीनि यकृद्वृक्कौगुदंस्तनाः ।
श्रोणिस्कन्धसटापार्श्वं पश्वङ्गानिप्रचक्षते ॥ ४ ॥
एकादशानामङ्गानामवदानानिसंख्यया ।
पार्श्वस्यवृक्कसक्थ्नोश्च द्वित्वादाहुश्चतुर्दश ॥ ५ ॥
चरितार्थाश्रुतिःकार्य्या यस्मादप्यनुकल्पशः ।
अतोऽष्टर्चेनहोमःस्याच्छागपक्षेचरावपि ॥ ६ ॥
अवदानानियावन्ति क्रियेरन्प्रस्तरेपशोः ।
तावतःपायसान्पिण्डान्पश्वभावेपिकारयेत् ॥ ७ ॥

यज्ञ सम्बन्धी पशु के इन्द्रिय वा छिद्रों का दाभ के कूंचे से अपनी इ नुकूल क्रम से (तूष्णीं) विना मन्त्र पढ़े प्रक्षालन करे। और वपाश्रपणी न यज्ञपात्र [जिस पर रख के वपा पकाई जाती है] ढांक के पत्तों की वा का होनी चाहिये गौ के शरीर में चौदह छिद्र होते हैं सात तो ऊपर, शिर में यन, नाभी, (डोंडी) योनी और गुदा ॥२॥ मांस के टुकड़े करने के लिये होता है । प्रधान के बाद क्रम से वपा को लेकर सब स्विष्टकृत् पर्यन्त करे और उस समय मन्त्र को समाप्त करे अर्थात् प्रधान याग और दोनों मन्त्रों को मिलाकर एकही वार वपा की आहुति देवे ॥ ३ ॥ जिह्वा, गोड़, हड्डी, जिगर, वृषण, गुदा, स्तन, श्रोणी, कन्धे और (ठाठे) के दोनों पार्श्व ये पशु के अंग कहाते हैं ॥ ४ ॥ इन के अवदान नाम टुकड़े लेखानुसार गिनती से होते हैं और पार्श्व [अण्डकोश] और सक्थी जांघ, ये दो २ होते हैं इस से पशु के कहे हैं ॥ ५ ॥ प्रत्येक कल्पोक्त कामों में श्रुति को चरितार्थ करना इस से बकरा और चरुदोनों पक्षों में आठ ऋचाओं से होम करना चाहिये यज्ञ पशु के अंगों के जितने अवदान नाम टुकड़े, प्रस्तर नामक कुशों दा के रक्खे जांय उतने ही पायस नाम खीर के पिण्ड पशु न हो, तब भी

ऊहनव्यञ्जनार्थंतु पश्वभावेऽपिपायसम् ।
सद्रवंश्रपयेत्तद्वदन्वष्टक्येऽपिकर्म्मणि ॥ ८ ॥
प्राधान्यंपिण्डदानस्य केचिदाहुर्मनीषिणः ।
गयादौपिण्डमात्रस्य दीयमानत्वदर्शनात् ॥ ९ ॥
भोजनस्यप्रधानत्वं वदन्त्यन्येमहर्षयः ।
ब्राह्मणस्यपरीक्षायां महायत्नप्रदर्शनात् ॥ १० ॥
आमश्राद्धविधानस्य विनापिण्डैःक्रियाविधिः ।
तदालभ्याप्यनध्यायविधानश्रवणादपि ॥ ११ ॥
विद्वन्मतमुपादाय ममाप्येतद्धृदिस्थितम् ।
प्राधान्यमुभयोर्यस्मात्तस्मादेषसमुच्चयः ॥ १२ ॥
प्राचीनावीतिनाकार्य्यं पित्र्येषुप्रोक्षणंपशोः ।
दक्षिणोद्वासनान्तंच चरोर्निर्वपणादिकम् ॥ १३ ॥
सञ्चयश्चावदानानां प्रधानार्थोनहीतरः ।

ऊहन और व्यञ्जन कर्म के लिये भी पशु के अभाव में पायस ही करे : अन्वष्टका श्राद्ध कर्म में उस पायस को सद्रव नाम ढीला पकावे ॥ ८ ॥ य कोई विद्वान् ऋषि श्राद्ध में पिण्डदान को ही प्रधान कहते हैं क्योंकि गया दि तीर्थों में केवल पिण्ड ही दिया जाता है ॥ ९ ॥ और कोई ऋषि ब्रा- णों को भोजन कराने को ही मुख्य कहते हैं क्योंकि ब्राह्मण की परीक्षा मनु आदि धर्म शास्त्र में बहुत प्रयत्न किया देख जाता है ॥१०॥ अग्नि में न ये कन्द फलादि से होने वाले श्राद्ध का विधान यह है कि विना पिंड दिये कर्म करना श्रेष्ठ है। क्योंकि ब्राह्मण के मिलने पर भी अनध्याय की विधि ख से सुनी जातीहै ॥११॥ विद्वानों के मत को स्वीकार करके हमारे भी हृदय यही निश्चय हुआ है कि जिस कारण दोनों की प्रधानता है इस से यह समुच्चय र्गत् पिण्डदान और श्रेष्ठ ब्राह्मण को भोजन देना ये दोनों होने चाहिये ॥१२॥ व कर्मों में पशु का प्रोक्षण (मन्त्रों से छिड़कना) अपसव्य होकर करे र चरु के लिये चावल ग्रहण करने से लेकर पका के उतारने पर्यन्त सब ये अपसव्य होकर करे ॥ १३ ॥ चरु के अवदानों का सञ्चय नाम संग्रह भी

प्रधानंहवनंचैव शेषंप्रकृतिवद्भवेत् ॥ १४ ॥
द्वीपमुन्नतमाख्यातं शादाचैवेष्टकास्मृता ।
कीलिनंसजलंप्रोक्तं दूरखातोदकोमरुः ॥ १५ ॥
द्वारंगवाक्षस्तम्भैः कर्द्दमभित्यन्तकोणवेधैश्च ।
नेष्टंवास्तुद्वारंविद्धमनाक्रान्तिमार्य्यैश्च ॥ १६ ॥
वशंगमावितित्रीहींञ्छंखश्चेतियवांस्तथा ।
असावित्यत्रनामोक्त्वा जुहुयात्क्षिप्रहोमवत् ॥ १
साक्षतंसुमनोयुक्तमुदकंदधिसंयुतम् ।
अर्घ्यंदधिमधुभ्यांच मधुपर्कोविधीयते ॥ १८ ॥
कांस्येनैवार्हणीयस्य निनयेदर्घ्यमञ्जलौ ।
कांस्यापिधानंकांस्यस्थं मधुपर्कंसमर्पयेत् ॥ १९ ॥
इति कात्यायनस्मृतौ एकोनत्रिंशत्तमःखण्डः ॥ २९ ॥
इति कात्यायनविरचिते कर्मप्रदीपे तृतीयः प्रपाठक
समाप्ता चेयं कात्यायनसंहिता ॥ शुभंभूयात् ॥

धान कृत्य है किन्तु अन्य कोई प्रधान नहीं। प्रधान तथा होम शेष
कृति यज्ञ के समान होता है ॥ १४ ॥ ऊंचे को द्वीप कहते इटका
शादा, जल सहित को कीलिन और जहां दूर खोदने से जल निकले
(मारवाड़) कहते हैं ॥१५॥ ऐसा घर का द्वार इष्ट (अच्छा) नहीं
स में गवाक्ष (खिड़की) वा झरोखे तथा खम्भ न हों और (कर्द्दम) गारा की
स में हो, कोण का जिस में वेध हों अथवा जिस में सज्जन नहीं
यंगमौ०) इस मंत्र से व्रीहि और (यंसश्च) इस मंत्र से जौ का
मान होम करे परन्तु जो मंत्र में असौ पद है उसके स्थान में
ाम बोले ॥१७॥ अक्षत, फूल, दही, जिसमें मिलाये हों ऐसा जल
लये अर्घ्य कहाता है और दही तथा मधु जिसमें मिलाये हों उसे मधुपर्क
हैं ॥ १८ ॥ जिस अपने पूजने योग्य को अर्घ देना हो उसकी
से के पात्र से अर्घ छोड़े और कांसे के पात्र से ढके हुए कांसे के पात्र
मधुपर्क का समर्पण करे ॥ १९ ॥

यह २९ उन्तीसवां खण्ड पूरा हुआ ॥
और कात्यायन ऋषि के रचे कर्म प्रदीप में तीसरा प्रपाठक पूरा हुआ।
इति कात्यायनस्मृतिः समाप्ता. ॥

श्रीगणेशायनमः । अथ बृहस्पतिस्मृतिप्रारम्भः ॥

इष्ट्वाक्रतुशतंराजा समाप्तवरदक्षिणम् ।
मघवावाग्विदांश्रेष्ठं पर्यपृच्छद्बृहस्पतिम् ॥ १ ॥
भगवन्केनदानेन सर्वतःसुखमेधते ।
यद्दत्तंयन्महार्घंच तन्मेब्रूहिमहत्तम? ॥ २ ॥
एवमिन्द्रेणपृष्टोऽसौ देवदेवपुरोहितः ।
वाचस्पतिर्महाप्राज्ञो बृहस्पतिरुवाचह ॥ ३ ॥
सुवर्णदानंगोदानं भूमिदानंचवासव? ।
एतत्प्रयच्छमानस्तु सर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ ४ ॥
सुवर्णरजतंवस्त्रं मणिरत्नंचवासव? ।
सर्वमेवभवेद्दत्तं वसुधांयःप्रयच्छति ॥ ५ ॥
फालकृष्टांमहींदत्त्वा सबीजांसस्यशालिनीम् ।
यावत्सूर्यकरालोके तावत्स्वर्गेमहीयते ॥ ६ ॥

श्रेष्ठ दक्षिणा जिन में दी हो ऐसे सौ यज्ञों को समाप्त करके राजा इन्द्र विद्वानों में श्रेष्ठ बृहस्पति जी से पूछा ॥ १ ॥ कि हे भगवन् ! किस दान मनुष्य को सब ओर से सुख बढ़ता है। और जो २ वस्तु दिया जाय और । सर्वोपरि बहु मूल्य हो उस दान को हे बड़ों में बड़े मुझ से कहो ॥ २ ॥ इस प्रकार इन्द्र ने पूछा है जिनको ऐसे इन्द्र के पुरोहित और वाणी के पति और महान् विद्वान् बृहस्पति बोले कि ॥ ३ ॥ हे इन्द्र! सुवर्ण, पृथ्वी, गौ, इन को जो देता है वह सब पापों से छूट जाता है ॥४॥ हे इन्द्र? जो मनुष्य पृथ्वी का दान देता है उसने सुवर्ण, चांदी, वस्त्र, मणि, रत्न, इन सबका दान दिया जानो ॥ ५ ॥ जो हल से जुती हो, जिसमें बीज बोया हो और जो हरे अन्न से शोभायमान हो, ऐसी पृथिवी को देनेवाला इतने काल तक स्वर्ग में वास करता है कि जब तक सूर्य का जगत् में प्रकाश है ॥ ६ ॥

यत्किञ्चित्कुरुतेपापं पुरुषोवृत्तिकर्षितः।
अपिगोचर्ममात्रेण भूमिदानेनशुद्ध्यति ॥ ७ ॥
दशहस्तेनदण्डेन त्रिंशद्दण्डानिवर्त्तनम्।
दशतान्येवविस्तारो गोचर्मैतन्महाफलम् ॥ ८ ॥
सवृषंगोसहस्रन्तु यत्रतिष्ठत्यतन्द्रितम्।
वालवत्साप्रसूतानां तद्गोचर्मइतिस्मृतम् ॥ ९ ॥
विप्रायदद्याच्चगुणान्विताय तपोनियुक्तायजितेन्द्रियाय।
यावन्महीतिष्ठतिसागरान्ता तावत्फलंतस्यभवेदनन्तम् ॥
यथावीजानिरोहन्ति प्रकीर्णानिमहीतले।
एवंकामाः प्ररोहन्ति भूमिदानसमर्जिताः ॥ ११ ॥
यथाप्सुपतितःसद्यस्तैलविन्दुःप्रसर्पति।
एवंभूमिकृतंदानं सस्येसस्येप्ररोहति ॥ १२ ॥
अन्नदाःसुखिनोनित्यं वस्त्रदश्चैवरूपवान्।
सनरस्सर्वदोभूप? योददातिवसुन्धराम् ॥ १३ ॥

आजीविका से दुःखी मनुष्य जो कुछ पाप करता है, वह गौ के चर्म की बर
बर पृथिवी का दान देकर शुद्ध होजाता है ॥ ७ ॥ दश हाथ के दण्ड से ती
दण्ड भर जिस की लम्बाई और चौड़ाई हो यह महान् फल का देने वा
गोचर्म का नाप कहाता है ॥ ८ ॥ जितने भूभाग में हजार गौ और हजार
आनन्द से ठहर सकें तथा उन गौओं में जो व्यानी हों उन के
बछड़े भी जिस में आसकें उसे गोचर्म प्रमाण कहते हैं ॥ ९ ॥ जो इस पृथ्वी
को ऐसे ब्राह्मण को देवे जो गुणी हो, तपस्वी हो, जितेन्द्रिय हो, उस पुरुष
को, समुद्र पर्यन्त पृथ्वी जब तक रहेगी तब तक अनन्त फल होता है ॥ १०
जैसे पृथ्वी पर बोये हुए वीज जमते हैं वैसे ही पृथ्वी के दान से कामनाओं
की सिद्धियां बढ़ती हैं ॥ ११ ॥ हे इन्द्र! जैसे जल में पड़ी तेल की बूंद फैलती
है ऐसे ही किया हुआ भूमि का दान शाख २ में जमता है ॥ १२ ॥ अन्न
दाता सदा सुखी, वस्त्र का दाता सुन्दर रूपवाला होता है और हे राजन्
वह मनुष्य सब कुछ देने वाला होता है जो पृथ्वी को देता है ॥ १३ ॥

यथागौभंरतेवत्सं क्षीरमुत्सृज्यक्षीरिणी ।
स्वयंदत्तासहस्राक्ष ? भूमिर्भरतिभूमिदम् ॥ १४ ॥
शंखम्भद्रासनंछत्रं चरस्थावरवारणाः ।
भूमिदानस्यपुण्यानि फलंस्वर्गःपुरन्दर ! ॥ १५ ॥
आदित्योवरुणोवन्हिर्ब्रह्मासोमोहुताशनः ।
शूलपाणिश्चभगवानभिनन्दतिभूमिदम् ॥ १६ ॥
आस्फोटयन्तिपितरः प्रहर्षन्तिपितामहाः ।
भूमिदाताकुलेजातः सचत्राताभविष्यति ॥ १७ ॥
त्रीण्याहुरतिदानानि गावःपृथ्वीसरस्वती ।
तारयन्तीहदातारं सर्वपापादसंशयम् ॥ १८ ॥
प्रावृतावस्त्रदायान्ति नग्नायान्तित्ववस्त्रदाः ।
तृप्तायान्त्यन्नदातारः क्षुधितायान्त्यनन्नदाः ॥ १९ ॥
काङ्क्षन्तिपितरःसर्वे नरकाद्भयभीरवः ।

दूध देती गौ दूध को छोड़कर बछड़े को संतुष्ट करती है हे इन्द्र ! ही अपने हाथ से दी हुई पृथ्वी भी अपने दाता को पुष्ट सन्तुष्ट करती १४ ॥ शंख, भद्रासन, (राजगद्दी) छाता, चर प्राणी, स्थावर वृक्षादि, हाथी हे इन्द्र ! ये पृथ्वी के दान के पुण्य हैं और स्वर्ग फल है ॥१५॥ वरुण, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा,होम का अग्नि-और भगवान शिवजी ये के दाता की प्रशंसा करते हैं ॥ १६ ॥

पृथिवी दाता के पितृ पितामह लोग अच्छे प्रकार आनन्द मनाते हैं हमारे कुल में पृथिवी दाता सन्तान जन्मा हैं वही हमारी रक्षा करने होगा ॥ १७ ॥ गौ, पृथिवी और विद्या ये तीन सब से बड़े तथा श्रेष्ठ दान हैं,ये तीनों दाता को निःसन्देह पापों से पार कर देते है ॥ १८ ॥ के दाता ढके हुये सुरक्षित, जिन्होंने वस्त्र नहीं दिये वे नंगे, अन्न के दाता हुये और जिन्हों ने अन्न नहीं दिया वे भूखे जाया करते हैं ॥१९॥ नरक से डरते हुये पितर यह इच्छा करते हैं कि जो पुत्र गया में जायगा

गयांयास्यतियःपुत्रः सनस्त्राताभविष्यति ॥ २० ॥
एष्टव्यावहवःपुत्रा यद्येकोपिगयांव्रजेत् ।
यजेतवाश्वमेधेन नीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥ २१ ॥
लोहितोयस्तुवर्णेन पुच्छाग्रेयस्तुपाण्डुरः ।
श्वेतःखुरविषाणाभ्यां सनीलोवृषउच्यते ॥ २२ ॥
नीलःपाण्डुरलाङ्गूलस्तृणमुद्धरतेतुयः ।
षष्टिवर्षसहस्राणि पितरस्तेनतर्पिताः ॥ २३ ॥
यस्यशृङ्गगतंपङ्कं कूलात्तिष्ठतिचोद्धृतम् ।
पितरस्तस्यचाश्नन्ति सोमलोकंमहाद्युतिम् ॥ २४
पृथोर्यदोर्दिलीपस्य नृगस्यनहुषस्यच ।
अन्येषांचनरेन्द्राणां पुनरन्योभविष्यति ॥ २५ ॥
बहुभिर्वसुधादत्ता राजभिःसगरादिभिः ।
यस्ययस्ययथाभूमिस्तस्यतस्यतथाफलम् ॥ २६ ॥
यस्तु ब्रह्मघ्नःस्त्रीघ्नोवा यस्तुवैपितृघातकः ।

वही हमारी रक्षा करने वाला होगा ॥ २० ॥ मनुष्य बहुत से पुत्रों की
करे यदि उन में से एक भी गया को जाय व अश्वमेध यज्ञ करे वा नी
का वृषोत्सर्ग करे ॥ २१ ॥ नील बैल उस को कहते हैं जिस का रंग ल
जो पूंछ के अग्रभाग में पीला हो और खुर तथा सींग जिस के सफेद
नील जिसका रंग हो, पीली जिस की पूंछ हो और जो घास तृणों
उखाड़ २ के चरे, ऐसे बैल के उत्सर्ग से साठ हजार वर्ष तक पितर तृ
॥ २३ ॥ नदी आदि के किनारे से उखाड़ा हुआ पंक (कीचड़) जिस
पर लगा हो ऐसे बैल के उत्सर्ग कर्त्ता के पितर प्रकाशमान चन्द्रमा के
भोगते हैं ॥ २४ ॥ राजा पृथु, यदु, दिलीप, नृग, नहुष, और अन्य रा
से कोई राजा यह वृषोत्सर्ग करने वाला मरे पीछे फिर होता है
बहुत से सगर आदि राजाओं ने पृथिवी का दान किया जि
जैसी २ पृथिवी दान हुई उस २ को वैसा २ ही फल हुआ ॥ २६ ॥
ब्रह्म हत्यारा या स्त्री को मारने वाला और पितृ घातक, है

गवांशतसहस्राणां हन्ताभवतिदुष्कृती ॥ २७ ॥
स्वदत्तांपरदत्तांवा योहरेतवसुन्धराम् ।
श्वविष्ठायांक्रमिर्भूत्वा पितृभिःसहपच्यते ॥ २८ ॥
आक्षेप्ताचानुमन्ताच तमेवनरकंव्रजेत् ।
भूमिदोभूमिहर्ताच नापरंपुण्यपापयोः ॥ २९ ॥
ऊर्ध्वंचाधोवतिष्ठेत यावदाभूतसंप्लवम् ।
अग्नेरपत्यंप्रथमंसुवर्णं भूर्वैष्णवीसूर्यसुताश्चगावः ॥३०॥
लोकास्त्रयस्तेनभवन्तिदत्ता यःकाञ्चनंगांचमहींचदद्यात् ।
षडशीतिसहस्राणां योजनानांवसुन्धरा ॥ ३१ ॥
स्वयंदत्तातुसर्वत्र सर्वकामप्रदायिनी ।
भूमिंयःप्रतिगृह्णाति भूमिंयश्चप्रयच्छति ॥ ३२ ॥
उभौतौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ ।
सर्वेषामेवदानानामेकजन्मानुगंफलम् ॥ ३३ ॥
हाटकक्षितिगौरीणां सप्तजन्मानुगंफलम् ।

लाख गौओं को मारने वाला होता है ॥२७॥ जो पुरुष अपनी या पराई हुई पृथ्वी को छीन लेता है वह कुत्ते की विष्ठा में कीड़ा होकर पितरों हेत पकाया जाता है ॥ २८ ॥ आक्षेप करने और अनुमति देने वाला एक नरक में जाते हैं। पृथ्वी का दाता और पृथ्वी का हरने वाला अपने २ [illegible]प या पाप से ॥ २९ ॥ क्रम से स्वर्ग में या नरक में प्रलय पर्यन्त ठहरते हैं। [illegible]प्नि का प्रथम पुत्र सुवर्ण है, पृथ्वी विष्णु की पत्नी है और सूर्य की पुत्री गौ ॥३०॥ जो पुरुष सुवर्ण गौ और पृथ्वी को दान में देता है उस ने मानो तीनों [illegible]क दिये। छयासी हजार योजन पृथिवी का विस्तार है ॥३१॥ उस को जिस ने [illegible]र्व दिया है वह पृथ्वी उसकी सब कामना पूरण करती है। पृथ्वी का दान जो [illegible]ता है और जो पृथ्वी को देता है॥३२॥ ये दोनों पुण्यात्मा निरन्तर स्वर्ग में [illegible]त हैं। अन्य सब दानों का फल एक ही जन्म में मिलता है ॥ ३३ ॥ सुवर्ण, [illegible]थ्वी, गौ, इनका फल सात जन्म तक मिलता है। जो पुरुष यह समझता हुआ

योनहिंस्याद्हंह्यात्मा भूतग्रामञ्चतुर्विधम् ॥ ३४ ॥
तस्यदेहाद्वियुक्तस्य भयन्नास्तिकदाचन ।
अन्यायेनहृताभूमिर्यैर्नरैरपहारिता ॥ ३५ ॥
हरन्तोहारयन्तश्च हन्युस्तेसप्तमंकुलम् ।
हरतेहारयेद्यस्तु मन्दबुद्धिस्तमोवृतः ॥ ३६ ॥
सबद्धोवारुणैःपाशैस्तिर्यग्योनिपुजायते ।
अश्रुभिःपतितैस्तेषां दानानामपकीर्तनम् ॥ ३७ ॥
ब्राह्मणस्यहृतेक्षेत्रे हन्तित्रिपुरुषंकुलम् ।
वापीकूपसहस्रेण अश्वमेधशतेनच ॥ ३८ ॥
गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्तानशुद्ध्यति ।
गामेकांस्वर्णमेकंवा भूमेरप्यर्धमंगुलम् ॥ ३९ ॥
हरन्नरकमायाति यावदाभूतसंप्लवम् ।
हुतंदत्तंतपोधीतं यत्किंचिद्धर्मसंचितम् ॥ ४० ॥
अर्धांगुलस्यसीमायां हरणेनप्रणश्यति ।

कि चार प्रकार के भूत समुदाय में मैं एक ही आत्मा विद्यमान हूं ऐसे
से चार प्रकार (अंडज, स्वेदज, उद्भिज्ज, जरायुज) के भूतों को दुःख नहीं देत
देह से जुदे होने पर उस जीवात्मा को कभी भी भय नहीं है। जिन
ने अन्याय से पृथ्वी छीनी वा छिनवाई है ॥ ३५ ॥ वे दोनों छीनने
छिनवाने वाले अपने सात कुलों को नष्ट करते हैं। जो मन्द बुद्धि
अज्ञानी पृथिवी छीनते हुए को प्रेरणा करता है ॥ ३६ ॥ वह वरुण के
से बंधा हुआ पशु आदि तिर्यग्योनि में पैदा होता है। जिनकी
आदि छीनी गयी उनके आंसू पड़ने से दाता का दान भी नष्ट हो
है ॥ ३७ ॥ ब्राह्मण के खेत को जो छीन लेता है उसकी तीन पीढ़
होती हैं। हजार बावड़ी तथा कूपों के बनाने से, सौ अश्वमेध यज्ञ
से ॥ ३८ ॥ तथा एक किरोड़ गौओं के देने से भी पृथ्वी को हरने वाल
नहीं होता। एक गौ एक सोना (अशरफ़ी) और पृथ्वी का आधा
इसके ॥ ३९ ॥ हरलेने से प्रलय तक नरक में जाता है। होम, दान, तप
का पढ़ना और जो कुछ पगय धर्म से संचित किया है वह सब ॥ ४० ॥

गोवीथींग्रामरथ्यांच श्मशानंगोपितंतथा ॥ ४१ ॥
संपीड्यनरकंयाति यावदाभूतसंप्लवम् ।
ऊपरेनिर्जलेस्थाने प्रास्तंसस्यंविसर्जयेत् ॥ ४२ ॥
जलाधारश्चकर्तव्यो व्यासस्यवचनंयथा ।
पञ्चकन्यानृतेहन्ति दशहन्तिगवानृते ॥ ४३ ॥
शतमश्वानृतेहन्ति सहस्रंपुरुषानृते ।
हन्तिजातानजातांश्च हिरण्यार्थेनृतंवदन् ॥ ४४ ॥
सर्वंभूम्यनृतेहन्ति मास्मभूम्यनृतंवदीः ।
ब्रह्मस्वेनरतिंकुर्यात्प्राणैःकण्ठगतैरपि ॥ ४५ ॥
अनौषधमभैषज्यं विषमेतद्धलाहलम् ।
नविषंविषमित्याहुर्ब्रह्मस्वंविषमुच्यते ॥ ४६ ॥
वेषमेकाकिनंहन्ति ब्रह्मस्वंपुत्रपौत्रकम् ।

ूमि की सीमा हरने से नष्ट हो जाता है—गौओं का मार्ग, ग्राम की ली, श्मशान और गोपित (रखाया हुआ खेत) ॥ ४१ ॥ इनके बिगाड़ने से लय तक नरक में जाता है। ऊपर और जहां जल न हो वहां खेत न बोवे॥४२॥ यास जी के वचन के अनुसार कूपादि जलाशय खेत भरने आदि के लिये क- ना चाहिये। कन्या के निमित्त झूठ बोलने में पांच को, गौ के निमित्त झूंठ बोलने में दश को ॥ ४३ ॥ घोड़े के निमित्त मिथ्या बोलने में सौ को, पुरुष के निमित्त झूंठ बोलने में हज़ार को, सुवर्ण के निमित्त झूंठ बोलने में जो पैदा हुए हैं तथा जो पैदा होंगे उन सबको ॥ ४४ ॥ और पृथ्वी के निमित्त झूठ बोलने में सब को मारता है इससे पृथ्वी के निमित्त झूंठ मत बोलो। चाहें प्राण कंठ में आजांय, तो भी ब्राह्मण के धन में प्रीति न करे अर्थात् लेने की इच्छा न करे ॥ ४५ ॥ यह ब्राह्मण का धन लेलेना हलाहल विष है, जिसकी औषधि या चिकित्सा नहीं है। क्योंकि बुद्धिमान् लोग कहते हैं कि विष, विष नहीं है किन्तु ब्राह्मण का धन मारलेना सर्वोपरि विष है ॥४६॥ क्योंकि विष एकको ही मारता है परन्तु ब्राह्मण का धन छीन लेना त्र पौत्रों को भी मारता है। लोहे तथा पत्थर का चूर्ण और विष इन को

लोहचूर्णाश्मचूर्णंच विषञ्जरयेन्नरः ॥ ४७ ॥
ब्रह्मस्वंत्रिपुलोकेषु कःपुमान्जरयिष्यति ।
मन्युप्रहरणाविप्रा राजानःशस्त्रपाणयः ॥ ४८ ॥
शस्त्रमेकाकिनंहन्ति ब्रह्ममन्युःकुलत्रयम् ।
मन्युप्रहरणाविप्राश्चक्रप्रहरणोहरिः ॥ ४९ ॥
चक्रात्तीव्रतरोमन्युस्तस्माद्विप्रन्नकोपयेत् ।
अग्निदग्धाःप्ररोहन्ति सूर्यदग्धास्तथैवच ॥ ५० ॥
मन्युदग्धस्यविप्राणामङ्कुरोनप्ररोहति ।
तेजसाग्निश्चदहति सूर्योदहतिरश्मिना ॥ ५१ ॥
राजादहतिदण्डेन विप्रोदहतिमन्युना ।
ब्रह्मस्वेनतुयत्सौख्यं देवस्वेनतुयारतिः ॥ ५२ ॥
तद्धनंकुलनाशाय भवत्यात्मविनाशनम् ।
ब्रह्मस्वंब्रह्महत्याच दरिद्रस्यचयद्धनम् ॥ ५३ ॥
गुरुमित्रहिरण्यंच स्वर्गस्थमपिपीडयेत् ।

भी मनुष्य पचा सकता है ॥४७॥ पर तीनों लोकों में ऐसा कोई पुरुष नहीं जो ब्राह्मण के धन को पचासके। ब्राह्मणों का शस्त्र क्रोध है, राजाओं के हाथ शस्त्र है ॥ ४ ॥ वह हाथ का शस्त्र एक को ही मारता है और ब्राह्मण का शोक तीन कुल को नष्ट करता है । ब्राह्मणों का प्रहार (शस्त्र) क्रोध और विष्णु का प्रहार चक्र है ॥ ४९ ॥ चक्र से क्रोध बड़ा पैना है, इससे ब्राह्मण को कुपित न करे वा न करावे अग्नि और सूर्य के जले भी जम आते हैं ॥ ५० ॥ और ब्राह्मणों के क्रोध से दग्ध हुओं का अङ्कुर भी नहीं जमता, अग्नि अपने तेज से और सूर्य अपनी किरणों से दग्ध करते हैं ॥ ५१ ॥ राजा दण्ड से और ब्राह्मण क्रोध से दग्ध करता है। ब्राह्मण के धन से जो सुख भोग होता, देवता के धन से जो रति (क्रीड़ा) होती है ॥ ५२ ॥ वह धन, कुल और आत्मा को नष्ट करता है । ब्राह्मण का धन ब्राह्मण की हत्या और दरिद्र का जो धन ॥ ५३ ॥ गुरु और मित्र का सुवर्ण, ये स्वर्ग में रहने वाले को भी पीडित करते हैं।

ब्रह्मस्वेनतुयच्छिद्रं तच्छिद्रंनप्ररोहति ॥ ५४ ॥
प्रच्छादयतितच्छिद्रमन्यत्रतुविसर्पति ।
ब्रह्मस्वेनतुपुष्टानिसाधनानिबलानिच ॥ ५५ ॥
संग्रामेतानिलीयन्ते सिकतासुयथोदकम् ।
श्रोत्रियायकुलीनाय दरिद्रायचवासव ! ॥ ५६ ॥
संतुष्टायविनीताय सर्वभूतहितायच ।
वेदाभ्यासस्तपोज्ञानमिन्द्रियाणांचसंयमः ॥ ५७ ॥
ईदृशायसुरश्रेष्ठ ! यद्दत्तंहितदक्षयम् ।
आमपात्रेयथान्यस्तं क्षीरंदधिघृतंमधु ॥ ५८ ॥
विनश्येत्पात्रदौर्बल्यात्तच्चपात्रंविनश्यति ।
एवंगांचहिरण्यंच वस्त्रमन्नंमहींतिलान् ॥ ५९ ॥
अविद्वान्प्रतिगृह्णाति भस्मीभवतिकाष्ठवत् ।
यस्यचैवगृहेमूर्खो दूरेचापिबहुश्रुतः ॥ ६० ॥
बहुश्रुतायदातव्यं नास्तिमूर्खव्यतिक्रमः ।

र ब्राह्मण के धन को मार लेने से जो छिद्र नाम दोष लगता है वह नहीं टता ॥ ५४ ॥ यदि कोई उस छिद्र को छिपाता है तो भी वह छिपता नहीं। ह्मण के धन से पुष्ट हुए अङ्गरूप साधन और सेना ॥ ५५ ॥ संग्राम में ऐसे न होजाते हैं जैसे रेत (बालू) में जल। हे इन्द्र! कुलीन और दरिद्री वेद ठी ब्राह्मण को ॥ ५६ ॥ जो सन्तोषी, नम्र, और सब प्राणियों का हितकारी , जो वेद का अभ्यासी हो, तपस्वी हो और इन्द्रियों का जीतने वाला ॥ ५७ ॥ हे देवताओं में उत्तम इन्द्र! जो ऐसे ब्राह्मण को दिया जाय वह न अक्षय पुण्यवाला होता है। कच्चे मट्टी के पात्र में रक्खा दूध, दही, घी हत ॥ ५८ ॥ जैसे पात्र की दुर्बलता से नष्ट होता है और वह पात्र भी नष्ट हो ता है। इसी प्रकार गौ, सुवर्ण, वस्त्र, अन्न, पृथिवी, तिल इन को ॥ ५९ ॥ मूर्ख ब्राह्मण दान लेता है वह काष्ठ के समान भस्म होता है। जिस पुरुष घर में मूर्ख ब्राह्मण हो और बहुश्रुत (पण्डित) दूर हो ॥ ६० ॥ तो पण्डितको न देवे किन्तु मूर्ख का उलंघन न माने। क्योंकि पण्डित को देने से हे इन्द्र!

कुलंतारयतेधीरः सप्तसप्तचवासव ! ॥ ६१ ॥
यस्तडागंनवंकुर्यात्पुराणंवापिखानयेत् ।
ससर्वंकुलमुद्धृत्य स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ६२ ॥
वापीकूपतडागानि उद्यानोपवनानिच ।
पुनःसंस्कारकर्ताच लभतेमौलिकंफलम् ॥ ६३ ॥
निदाघकालेपानीयं यस्यतिष्ठतिवासव ! ।
सदुर्गंविपमंकृत्स्नं नकदाचिदवाप्नुयात् ॥ ६४ ॥
एकाहंतुस्थितंतोयं पृथिव्यांराजसत्तम ! ।
कुलानितारयेत्तस्य सप्तसप्तपराण्यपि ॥ ६५ ॥
दीपालोकप्रदानेन वपुष्मान्सभवेन्नरः ।
प्रेक्षणीयप्रदानेन स्मृतिंमेधांचविन्दति ॥ ६६ ॥
कृत्वापिपापकर्माणि योदद्यादन्नमर्थिने ।
ब्राह्मणायविशेषेण नसपापेनलिप्यते ॥ ६७ ॥
भूमिर्गावस्तथादाराः प्रसह्यह्रियतेयदा ।
नचावेदयतेयस्तु तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥ ६८ ॥

वह अपने इक्कीस कुलों को तारता है ॥ ६१ ॥ जो पुरुष नया तालाब बन[illegible] वा पुराने को खुदवावे, वह सब कुल का उद्धार करके स्वर्ग में पूजा जाता है॥ वावड़ी, कूप, तड़ाग, बाग, और उपवन (छोटा बगीचा) इन का जो [illegible] संस्कार (मरम्मत) करता कराता है वह नये बनाने के फल को प्राप्त हो[illegible] है ॥ ६३ ॥ ग्रीष्म ऋतुकाल में जिस के यहां जल रहता है वह कठोर वि[illegible] दुःख को कभी नहीं भोगता है ॥ ६४ ॥ जिस की खोदी हुई पृथिवी में [illegible] दिन भी जल ठहरता है। हे राजाओं में उत्तम इन्द्र ! उस के अगले [illegible] सात २ कुलों को तारता है ॥ ६५ ॥ दीपक के देने से सुन्दर शरीर वाला [illegible] नुष्य होता है और दर्शनीय वस्तु दान से स्मृति और बुद्धि को प्राप्त होता है॥

निन्दित पाप कर्म करके भी जो अभ्यागत वा भिक्षुक को और विशे[illegible] ब्राह्मण को अन्न देता है, वह पाप से दूषित नहीं होता ॥ ६७ ॥ जो [illegible] बल पूर्वक पृथिवी, गौ और स्त्री इन को बिन कहे हर लेता है उस को

निवेदितश्चराजावै ब्राह्मणैर्मन्युपीडितैः ।
ननिवारयतेयस्तु तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥ ६९ ॥
उपस्थितेविवाहेच यज्ञेदानेचवासव ! ।
मोहाच्चरतिविघ्नंयः समृतोजायतेकृमिः ॥ ७० ॥
धनंफलतिदानेन जीवितंजीवरक्षणात् ।
रूपमारोग्यमैश्वर्यमहिंसाफलमश्नुते ॥ ७१ ॥
फलमूलाशनात्पूजां स्वर्गस्सत्येनलभ्यते ।
प्रायोपवेशनाद्राज्यं सर्वंचसुखमश्नुते ॥ ७२ ॥
गवाढ्यःशक्रदीक्षायाः स्वर्गगामीतृणाशनः ।
स्त्रियस्त्रिपवणस्नायी वायुंपीत्वाक्रतुंलभेत् ॥ ७३ ॥
नित्यस्नायीभवेदर्कं संध्येद्वेचजपन्द्विजः ।
नवंसाधयतेराज्यं नाकपृष्ठमनाशके ॥ ७४ ॥
अग्निप्रवेशेनियतं ब्रह्मलोकेमहीयते ।

क्रोध से दुःखित पीड़ित ब्राह्मणों की प्रार्थना करने पर भी जो
...श उस हरने वाले को नहीं रोकता उस को ब्रह्महत्यारा कहते हैं ॥ ६९ ॥
...इन्द्र ! विवाह, दान, यज्ञ इन के समय में जो मोह से विघ्न करता है वह
...ने के अनन्तर कीड़ा होता है ॥७०॥ दान से धन और जीवों की रक्षा करने
...जीवन फलता (बढ़ता) है। और रूप, आरोग्य, ऐश्वर्य, ये जो हिंसा न कर-
...के फल हैं, इन को भोगता है ॥ ७१ ॥ फल और मूल खाने से मनुष्य पूजा
...प्रतिष्ठा को और सत्य से स्वर्ग को प्राप्त होता है। और मरण के निमित्त तीर्थ आदि
...बैठने से राज्य और संपूर्ण सुखों को भोगता है ॥७२॥ हे इन्द्र ! दीक्षा का
...देश लेने से मनुष्य गौओं से युक्त होता और जो तृणों को खाता है वह
...र्ग को प्राप्त होता है। तीन काल में जो स्नान करता है वह स्त्रियों को
...प्राप्त होता है। और वायु भक्षण करता हुआ तप करने वाला यज्ञों के फल
...प्राप्त होता है ॥ ७३ ॥ जो मनुष्य नित्य स्नान करता और दोनों सं-
...ध्याओं में सूर्य नारायण को जपता है वह नये राज्य और सुरेन्द्र स्वर्गधाम को
...प्राप्त होता है ॥ ७४ ॥ जो अग्नि में प्रवेश करता है वह ब्रह्मलोक में पूजा

रसनाप्रतिसंहारे पशून्पुत्रांश्चविन्दति ॥ ७५ ॥
नाकेचिरंसवसते उपवासीचयोभवेत् ।
सततंचैकशायीयः सलभेदीप्सितांगतिम् ॥ ७६ ॥
वीरासनंवीरशय्यां वीरस्थानमुपाश्रितः ।
अक्षय्यास्तस्यलोकाःस्युः सर्वकामागमास्तथा ॥ ७७ ॥
उपवासंचदीक्षांच अभिषेकंचवासव ! ।
कृत्वाद्वादशवर्षाणि वीरस्थानाद्विशिष्यते ॥ ७८ ॥
अधीत्यसर्ववेदान्वै सद्योदुःखात्प्रमुच्यते ।
पावनंचरतेधर्मं स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ७९ ॥
बृहस्पतिमतंपुण्यं येपठन्तिद्विजातयः ।
चत्वारितेषांवर्द्धन्तेआयुर्विद्यायशोबलम् ॥ ८० ॥
इति श्रीबृहस्पतिप्रणीतं धर्मशास्त्रं समाप्तम् ॥

जाता है, जो अपनी जिह्वा को वश में रखता है वह पशु और पुत्रों को होता है ॥ ७५ ॥ जो उपवास व्रत करता है वह चिरकाल तक स्वर्ग में व जो निरन्तर एक शय्या पर सोता अर्थात् एक ही स्त्री को भोगता है वह गति को चाहता उसी को प्राप्त होता है ॥ ७६ ॥ जो वीरासन, वीर श और वीरस्थान का आश्रय लेता है उसके लिये सब लोक और सब काम क्षय प्राप्त होते हैं ॥ ७७ ॥ उपवास, दीक्षा, और अभिषेक इनको जो १२ वर्ष तक निरन्तर करता है वह वीरस्थान के फल से अधिक उत्तम पाता है ॥ ७८ ॥ सब वेदों को पढ़कर शीघ्र ही दुःख से छूटता, पवित्र धर्म रता और स्वर्ग लोक में पुजता है ॥ ७९ ॥ बृहस्पति के पवित्र मत को द्विजाती लोग पढ़ते हैं उनकी अवस्था विद्या, यश, और बल, ये चारों बढ़ते हैं ॥

यह बृहस्पति का रचा धर्मशास्त्र समाप्त हुआ ॥ ८० ॥

—:*:—

श्रीगणेशायनमः ॥

थ पाराशरस्मृतिप्रारम्भः

अथातोहिमशैलाग्रे देवदारुवनालये ।
व्यासमेकाग्रमासीनमपृच्छन्नृषयःपुरा ॥ १ ॥
मानुषाणांहितंधर्मं वर्तमानेकलौयुगे ।
शौचाचारंयथावच्च वदसत्यवतीसुत ! ॥ २ ॥
तच्छ्रुत्वाऋषिवाक्यंतु सशिष्योऽग्न्यर्कसन्निभः ।
प्रत्युवाचमहातेजाः श्रुतिस्मृतिविशारदः ॥ ३ ॥
नचाहंसर्वतत्वज्ञः कथंधर्मंवदाम्यहम् ।
अस्मत्पितैवप्रष्टव्य इतिव्यासःसुतोऽवदत् ॥ ४ ॥
ततस्तेऋषयःसर्वे धर्मतत्त्वार्थकाङ्क्षिणः ।
ऋषिंव्यासंपुरस्कृत्य गताबदरिकाश्रमम् ॥ ५ ॥
नानापुष्पलताकीर्णं फलपुष्पैरलङ्कृतम् ।

देवदारु वृक्षों के वन में हिमालय पर्वत के ऊपर एकाग्र बैठे हुए व्यास से पूर्वकाल में ऋषियों ने पूछा ॥ १ ॥ हे सत्यवती के पुत्र व्यासजी ! वर्त्तमान कलियुग में मनुष्यों का हितकारी धर्म शौच और आचार हमसे कहो ॥२॥ ऋषियों के वाक्य को सुनकर शिष्यों सहित अग्नि और सूर्य के तुल्य बड़े तेज वाले श्रुति और स्मृति में चतुर व्यासजी ऋषियों के प्रति बोले ॥ ३ ॥ हम सब तत्वों को नहीं जानते तब कैसे धर्म को कहें । हमारे पिता को यह विषय पूछो यह पराशर के पुत्र व्यास ने कहा ॥४॥ तिसके अनन्तर धर्म तत्त्व को चाहते हुए वे सब ऋषि लोग व्यास ऋषि को आगे लेकर बदरिकाश्रम (बद्रीनारायण) को गये ॥ ५ ॥ जो अनेक प्रकार के पुष्प लताओं

नदीप्रस्रवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् ॥ ६ ॥
मृगपक्षिनिनादाढ्यं देवतायतनावृतम् ।
यक्षगन्धर्वसिद्धैश्च नृत्यगीतैरलङ्कृतम् ॥ ७ ॥
तस्मिन्नृषिसभामध्ये शक्तिपुत्रंपराशरम् ।
सुखासीनंमहातेजामुनिमुख्यगणावृतम् ॥ ८ ॥
कृताञ्जलिपुटोभूत्वा व्यासस्तुऋषिभिःसह ।
प्रदक्षिणाभिवादैश्च स्तुतिभिःसमपूजयत् ॥ ९ ॥
अथसन्तुष्टहृदयः पराशरमहामुनिः ।
आहसुस्वागतंब्रूहीत्यासीनोमुनिपुंगवः ॥ १० ॥
व्यासःसुस्वागतंयेच ऋषयश्चसमन्ततः ।
कुशलंसम्यगित्युक्त्वा व्यासःपृछत्यनन्तरम् ॥
यदिजानासिमेभक्तिं स्नेहाद्वाभक्तवत्सल ! ॥ ११ ॥
धर्मंकथयमेतात ! अनुग्राह्योह्यहंतव ।
श्रुतामेमानवाधर्मा वासिष्ठाःकाश्यपास्तथा ॥ १२ ॥
गार्गीयागौतमीयाश्च तथाचौशनसाःस्मृताः ॥

से युक्त, फल फूलों से शोभायमान, नदियों तथा झरनों से युक्त, पवित्र से जिस की शोभा है ॥ ६ ॥ मृग तथा पक्षियों के सुहावने शब्दों से युक्त में देवालय विद्यमान हैं, और जो यक्ष, गन्धर्व, सिद्ध, तथा अप्सरादि के और गीतों से शोभा है ॥ ७ ॥ ऐसे बदरिकाश्रम में ऋषियों की बीच सुखपूर्वक बैठे तथा बड़े २ नामी अनेक मुनीश्वर जिन के चारों बैठे हैं ऐसे शक्ति के पुत्र पाराशर का ॥८॥ ऋषियों सहित बड़े तेजस्वी जी ने हाथ जोड़ कर परिक्रमा अभिवादन और स्तुतियों से पूजन किया ॥ [illegible] के अनन्तर मन से संतुष्ट हुए मुनियों में उत्तम पराशर महामुनि [illegible] से बोले कि तुम भली प्रकार स्वागत (आनन्द से आना) कहो ॥ [illegible] तब व्यास जी तथा अन्य ऋषियों ने कुशल पूर्वक आना कह कर [illegible] जी ने यह पूछा कि हे भक्तवत्सल! जो आप मेरी भक्ति को जानते हो [illegible] से वा स्नेह से ॥ ११ ॥ हे पिता मुझ से धर्म कहिये क्योंकि मैं आप के [illegible]

अत्रेर्विष्णोश्चसांवर्ता दाक्षाआङ्गिरसास्तथा ॥ १३ ॥
शातातपाश्चहारीता याज्ञवल्क्यकृताश्चये ।
आपस्तम्बकृताधर्माः शंखस्यलिखितस्यच ॥ १४ ॥
कात्यायनकृताश्चैव तथाप्राचेतसान्मुनेः ।
श्रुताह्येतेभवत्प्रोक्ताः श्रौतार्थामेनविस्मृताः ॥ १५ ॥
अस्मिन्मन्वन्तरेधर्माः कृतत्रेतादिकेयुगे ।
सर्वेधर्माःकृतेजाताः सर्वेनष्टाःकलौयुगे ॥ १६ ॥
चातुर्वर्ण्यसमाचारं किंचित्साधारणंवद ।
चतुर्णामपिवर्णानां कर्त्तव्यंधर्मकोविदैः ॥ १७ ॥
ब्रूहिधर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मंस्थूलञ्चविस्तरात् ।
व्यासवाक्यावसानेतु मुनिमुख्यःपराशरः ॥ १८ ॥
धर्मस्यनिर्णयंप्राह सूक्ष्मंस्थूलञ्चविस्तरात् ।
शृणुपुत्रप्रवक्ष्यामि शृण्वन्तुमुनयस्तथा ।
कल्पेकल्पे क्षयोत्पत्तौ ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ २० ॥
श्रुतिस्मृतिसदाचार निर्णेतारश्चसर्वदा ।

, विष्णु, संवर्त, दक्ष, अंगिरा, ॥१३॥ शातातप, हारीत, याज्ञवल्क्य, आ-
म्ब, शंख, लिखित, ॥ १४ ॥ कात्यायन प्रचेता इन सब ऋषि मुनियों के
बनाये धर्मशास्त्र मैंने सुने हैं तथा आप के कहे वेद के अर्थ भी हम ने
और उन को हम भूले भी नहीं हैं ॥ १५ ॥ इस मन्वन्तर सदा कृत त्रेता
दि युगों में जो धर्म किये गये थे वे सब कलियुग में नष्ट हो गये ॥ १६ ॥
का, धर्म जानने वालों को जो चारो वर्णों को कर्त्तव्य है वह चारों वर्णों
किंचित्साधारण आचार कहिये ॥ १७ ॥ हे धर्म के स्वरूप को जानने वा[illegible]
 और स्थूल आचार को विस्तार से कहिये । इस प्रकार व्यास जी [illegible]
नों के पूर्ण होने पर मुनियों में मुख्य पराशर जी ने ॥ १८ ॥ [illegible]
 धर्म का निर्णय विस्तार से कहा ॥ १९ ॥ हे पुत्र ! व्यास जी [illegible]
यो ! तुम सुनो कल्प २ में प्रलय तथा सृष्टि होने पर ब्रह्मा विष्णु-
 शिव ये तीनों ॥२०॥ श्रुति, स्मृति, और सदाचार के निर्णय करने वा[illegible]

नकश्चिद्वेदकर्त्ताच वेदस्मर्त्ताचतुर्मुखः ॥ २१

तथैवधर्मान्स्मरति मनुःकल्पान्तरान्तरे।

अन्येकृतयुगेधर्मा स्त्रेतायांद्वापरेपरे ॥ २२ ॥

अन्येकलियुगेनृणां युगरूपाऽनुसारतः।

तपःपरंकृतयुगे त्रेतायांज्ञानमुच्यते ॥ २३

द्वापरेयज्ञमेवाहु र्दानमेकंकलौयुगे।

कृतेतुमानवाधर्मास्त्रेतायांगौतमाःस्मृताः ॥ २४

द्वापरेशंखलिखिताः कलौपाराशराःस्मृताः।

त्यजेद्देशंकृतयुगे त्रेतायांग्राममुत्सृजेत् ॥ २५ ।

द्वापरेकुलमेकन्तु कर्त्तारंतुकलौयुगे।

कृतेसंभाषणादेव त्रेतायांचैवदर्शनात् ॥ २६ ॥

द्वापरेत्वन्नमादाय कलौपततिकर्मणा।

कृतेतात्क्षणिकःशापस्त्रेतायांदशभिर्द्दिनैः ॥२७॥

रन्तु वेद का बनाने वाला कोई नहीं है (इसी से वेद अपौरुषेय क
चतुर्मुख ब्रह्मा जी पूर्व कल्प के अभ्यास किये वेद का सर्गारम्भ में
वाले हैं ॥२१॥ उसी प्रकार मनु जी कल्प २ में तथा प्रत्येक मन्वन्त
र स्मरण करते हैं। सतयुग, त्रेता, और द्वापर में मनुष्यों का धर्म भि
र बदलता रहता है ॥२२॥ युग के अनुसार कलियुग में अन्य धर्
। सतयुग में तप, त्रेता में ज्ञान, ॥२३॥ द्वापर में यज्ञ और क
को ही मुख्य कहते हैं (इसी बात को चाहे यों कहो या मानो।
और दान ये धर्म के चार पग हैं उन में से सद्युगी तप को,
को, द्वापरयुगी यज्ञ को और कलियुगी धर्मात्मा दान को मु
ते हैं) सतयुग में मनु के कहे त्रेता में गौतम के कहे धर्म वि
॥२४॥ द्वापर में शंख और लिखित के तथा कलियुग में पराश
ने उचित हैं। सतयुग में धर्महीन देश को और त्रेता में धर्मा
द्वापर में धर्म विरोधी कुल को और कलियुग में अधर्म करने
और सतयुग में अधर्मी के साथ संभाषण करने से, त्रेता में
॥ द्वापर में अन्न लेकर और कलियुग में कर्म करने से
में उसी समय और त्रेता में दशदिन में शाप लगता

द्वापरेचैकमासेन कलौसंवत्सरेणतु ।
अभिगम्यकृतेदानं त्रेतास्वाहूयदीयते ॥ २८ ॥
द्वापरेयाचमानाय सेवयादीयतेकलौ ।
अभिगम्योत्तमंदानमाहूयैवतुमध्यमम् ॥ २९ ॥
अधमंयाच्यमानंस्यात् सेवादानन्तुनिष्फलम् ।
जितोधर्मोह्यधर्मेणसत्यंचैवानृतेनच ॥ ३० ॥
जिताश्चौरैश्चराजानः स्त्रीभिश्चपुरुषाजिताः ।
सीदन्तिचाग्निहोत्राणि गुरुपूजाप्रणश्यति ॥३१॥
कुमार्यश्चप्रसूयन्तेतस्मिन्कलियुगेसदा ।
कृतेत्वस्थिगताःप्राणास्त्रेतायांमांसमाश्रिताः ॥३२॥
द्वापरेरुधिरंयावत्कलौत्वन्नादिषुस्थिताः ।
युगेयुगेचयेधर्मास्तत्रतत्रचयेद्विजाः ॥ ३३ ॥
तेषांनिन्दानकर्तव्या युगरूपाहितेद्विजाः ।
युगेयुगेतुसामर्थ्यंशेषंमुनिविभाषितम् ॥ ३४ ॥

ापर में एक महीने में और कलियुग में एक वर्ष में शाप लगता है सतयुग
। ब्राह्मण के समीप जाकर त्रेता में ब्राह्मण को अपने घर पर बुलाकर॥२८॥
ापर में मांगने पर और कलियुग में जो सेवा करै उसे दान देते हैं अर्थात्
ान के ये चार दर्जे हैं। ब्राह्मण के समीप जाकर दान देना सद्गुगी सर्वो-
्म है। समीप जाकर दिया जो दान है वह उत्तम और बुलाकर जो दिया
ह मध्यम ॥ २९ ॥ मांगने वाले को जो दिया वह अधम और सेवक को जो
दया यह निष्फल है । कलियुग में अधर्म से धर्म, झूठ से सत्य ॥ ३० ॥
ोरों से राजा और स्त्रियों से पुरुष जीत लिये जाते अर्थात् दब जाते हैं।
अग्निहोत्र बन्द हो जाते गुरू पूजा नष्ट हो जाती है ॥ ३१ ॥ कुमारी कन्याओं
के सन्तान होते यह काम सदैव प्रत्येक कलियुग में होते हैं। सतयुग में प्राण
हाड़ों में रहते त्रेता में मांस में ॥ ३२ ॥ द्वापर में रुधिर में और कलियुग में
अन्न आदि में रहते हैं जिस २ युग में जो २ धर्म होते हैं और उस २ युग में
जो द्विज हैं ॥३३॥ उनकी निन्दा न करनी चाहिये क्योंकि ये युग के अनुसारी
हैं। और युग २ में जो सामर्थ्य मुनियों ने कहा है ॥ ३४ ॥

पराशरेणचाप्युक्तं प्रायश्चित्तंविधीयते ।
अहमद्यैवतत्सर्वमनुस्मृत्यब्रवीमिवः ॥ ३५ ॥
चातुर्वर्ण्यसमाचारं शृण्वन्तुऋषिपुङ्गवाः ।
पराशरमतंपुण्यं पवित्रंपापनाशनम् ॥ ३६ ॥
चिन्तितंब्राह्मणार्थाय धर्मसंस्थापनायच ।
चतुर्णामपिवर्णाना माचारोधर्मपालकः ॥ ३७ ॥
आचारभ्रष्टदेहानां भवेद्धर्मःपराङ्मुखः ।
षट्कर्माभिरतोनित्यं देवतातिथिपूजकः ।
हुतशेषन्तुभुञ्जानो ब्राह्मणोनावसीदति ॥ ३८ ॥
सन्ध्यास्नानञ्जपोहोमः स्वाध्यायोदेवतार्चनम्
आतिथ्यंवैश्वदेवंच षट्कर्माणिदिनेदिने ॥ ३९
प्रियोवायदिवाद्वेष्यो मूर्खःपण्डितएववा ।
संप्राप्तोवैश्वदेवान्ते सोऽतिथिःस्वर्गसंक्रमः ॥ ४० ।
राचोपगतंश्रान्तं वैश्वदेवउपस्थितम् ॥

ी ने भी जो कहा है उसके अनुसार प्रायश्चित्त का विधान
। उस सब को अभी स्मरण करके हम कहते हैं ॥ ३५ ॥ है
उत्तम पुरुषो चारो वर्णों का आचरण सुनो क्योंकि पराशर
का उत्पादक पवित्र तथा पापों का नाशक है ॥ ३६ ॥ जो मत
ये तथा धर्म की स्थिति के लिये विचारा है–चारो वर्णों का
ही धर्म का रक्षक जानो ॥ ३७ ॥ जिन का देह आचार से भ्रष्ट
ी पराङ्मुख होता पीठ फेर लेता है। जो छः कर्मों में नित्य
देवता और अतिथि का पूजन करता है और जो होम
ो खाता है वह ब्राह्मण दुःखी नहीं होता ॥३८॥ सन्ध्या
पूर्वक वेदाध्ययन और देवताओं का पूजन अतिथि
े छः कर्म प्रति दिन करे । सन्ध्या स्नान जप ये
ह हैं ॥ ३९ ॥ पियारा हो या शत्रु हो मूर्ख हो या पण्डित
त में प्राप्त हो वह अतिथि स्वर्ग में पहुंचाने वाला है
ो थक गया हो वैश्वदेव के समय उपस्थित हो उस

अतिथिंतंविजानीयान्नातिथिःपूर्वमागतः ॥ ४१ ॥
नैकग्रामीणमतिथिं विप्रंसाङ्गमिकंतथा ।
अनित्यंह्यागतोयस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ ४२ ॥
अतिथिंतत्रसंप्राप्तं पूजयेत्स्वागतादिना ।
तथासनप्रदानेन पादप्रक्षालनेनच ॥ ४३ ॥
श्रद्धयाचान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेणच ।
गच्छतश्चानुयानेन प्रीतिमुत्पादयेद्गृही ॥ ४४ ॥
अतिथिर्यस्यभग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्त्तते ।
पितरस्तस्यनाश्नन्ति दशवर्षाणिपञ्चच ॥ ४५ ॥
काष्ठभारसहस्रेण घृतकुंभशतेनच ।
अतिथिर्यस्यभग्नाशस्तस्यहोमोनिरर्थकः ॥ ४६ ॥
सुक्षेत्रेवापयेद्बीजं सुपात्रेनिःक्षिपेद्धनम् ।
सुक्षेत्रेचसुपात्रेच ह्युप्तंदत्तंननश्यति ॥ ४७ ॥
नपृच्छेद्गोत्रचरणे नस्वाऽध्यायंश्रुतंतथा ।
हृदयेकल्पयेद्देवं सर्वदेवमयोहिसः ॥ ४८ ॥

तिथि जाने वैश्वदेव से पहिले आये ठहरे हुए को नहीं ॥ ४१ ॥ एक गांव मे
ने वाले ब्राह्मण को तथा मेली ब्राह्मण को अतिथि कभी न माने जिस
नित्य जो न आवे उसे ही अतिथि कहा जाता है ॥४२॥ उस समय (वैश्वदेव
आये अतिथि का (स्वागत) आदि से पूजन करे । तथा वैसे ही आसन देने
धोने ॥४३॥ श्रद्धा से अन्न देने प्रिय तथा मधुर प्रश्न और उत्तरों से जाते के
छे चलने से गृहस्थी पुरुष अतिथि को प्रसन्न करे ॥४४॥ जिस के घर से निराश
कर अतिथि चला जाता है उस के यहां पितर पन्द्रह वर्ष तक नहीं खाते
५॥ काष्ठ के हजार बोझों से सौ घी के घड़ों से भी उसका होम वृथा है जिस
यहां से अतिथि निराश होकर लौट जाता है ॥४६॥ अच्छे खेत में बीज बोवे
और सुपात्र को धन देवे क्योंकि अच्छे खेत में बोया बीज और सुपात्र को
या दान नष्ट नहीं होता ॥ ४७ ॥ गोत्र वा चरण (नाम कठ कौथुमादि)
ध्ययन और वेदाध्ययन इनको भी न पूछे अपने हृदय में अतिथि को दे-
ता समझे क्योंकि अतिथि सब देवताओं का रूप है ॥ ४८ ॥

अपूर्वःसुव्रतोविप्रोह्यऽपूर्वश्चातिथिस्तथा ।
वेदाभ्यासरतोनित्यं त्रयोऽपूर्वादिनेदिने ॥ ४९ ॥
वैश्वदेवेतुसंप्राप्ते भिक्षुकेगृहमागते ।
उद्धृत्यवैश्वदेवार्थं भिक्षांदत्वाविसर्जयेत् ॥ ५० ॥
यतिश्चब्रह्मचारीच पक्वान्नस्वामिनावुभौ ।
तयोरन्नमदत्वाच भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥ ५१ ॥
दद्याच्चभिक्षात्रितयं परिव्राट्ब्रह्मचारिणाम् ।
इच्छयाचततोदद्याद्विभवेसत्यवारितम् ॥ ५२ ॥
यतिहस्तेजलंदद्याद्भैक्षंदद्यात्पुनर्जलम् ।
तद्भैक्षंमेरुणातुल्यं तज्जलंसागरोपमम् ॥ ५३ ॥
यस्यछत्रंहयश्चैवकुंजरारोहमृद्धिमत् ।
ऐंद्रस्थानमुपासीत तस्मात्तंनविचारयेत् ॥ ५४ ॥
वैश्वदेवकृतंपापं शक्तोभिक्षुर्व्यपोहितुम् ।
नहिभिक्षुकृतंदोषं वैश्वदेवोव्यपोहति ॥ ५५ ॥

अच्छे व्रत नियम वाला ब्राह्मण—और ऐसा ही अतिथि और नित्य२वेद वाला ये तीनों प्रति दिन भी अपूर्व (नवीन) ही समझे जाते हैं ॥४९॥ के समय यदि भिक्षुक घर में आवे तो वैश्वदेव के लिये पृथक् अन्न कर भिक्षा देके विदा करै ॥ ५० ॥ यति संन्यासी और ब्रह्मचारी ये दो अन्न के अधिकारी हैं उन दोनों को विना अन्न दिये जो भोजन करै द्रयण व्रत का प्रायश्चित्ती होता है ॥ ५१ ॥ संन्यासी और ब्रह्मचारी तीन खुराक तक भिक्षा देवे यदि धन होय तो अपनी इच्छा से देवे ॥ ५२ ॥ पहिले संन्यासी के हाथ में जल दे फिर अन्न दे पीछे भी में फिर जल देवे वह भिक्षा मेरु पर्वत के और वह जल समुद्र के समा है ॥ ५३ ॥ जिसके छत्र—घोड़ा और चढ़ने के लिये उत्तम हाथी है व इन्द्र के स्थान का भोग करता है तिससे संन्यासी के देने में वह भी न करे ॥ ५४ ॥ संन्यासी का सत्कार अवश्य करै वैश्व देव के भूल जाने को भिक्षु दूर कर सकता है पर भिक्षु के लौट जाने से हुए पाप को दूर नहीं कर सकता ॥ ५५ ॥

अकृत्वावैश्वदेवंतु भुञ्जतेयेद्विजाधमाः ।
सर्वतेनिष्फलाज्ञेयाः पतन्तिनरकेऽशुचौ ॥ ५६ ॥
वैश्वदेवविहीनाये आतिथ्येनवहिष्कृताः ।
सर्वतेनरकंयान्ति काकयोनिंव्रजन्तिच ॥ ५७ ॥
शिरोवेष्ट्यतुयोभुङ्क्ते दक्षिणाभिमुखस्तुयः ।
वामपादेकरंन्यस्य तद्वैरक्षांसिभुञ्जते ॥ ५८ ॥
यतयेकाञ्चनंदत्त्वा ताम्बूलंब्रह्मचारिणे ।
चोरेभ्योप्यभयंदत्त्वा दातापिनरकंव्रजेत् ॥ ५९ ॥
शुक्लवस्त्रंचयानंच ताम्बूलंधातुमेवच ।
प्रतिगृह्यकुलंहन्यात्प्रतिगृह्णातियस्यच ॥ ६० ॥
चोरोवायदिचाण्डालः शत्रुर्वापितृघातकः ।
वैश्वदेवेतुसंप्राप्ते सोऽतिथिःस्वर्गसंक्रमः ॥ ६१ ॥
नगृह्णातितुयोविप्रो ह्यतिथिंवेदपारगम् ।
अदत्त्वान्नमात्रंतु भुक्त्वाभुङ्क्तेतुकिल्विषम् ॥ ६२ ॥

...द्विजों में नीच पुरुष वैश्वदेव कर्म किये विना भोजन करते हैं उनका ...। जीवन निष्फल है और वे अशुद्ध नरक में पड़ते हैं ॥ ५६ ॥ जो वैश्वदेव ...रहित हुए अतिथि का सत्कार नहीं करते वे सब नरक में जाते हैं तद- ...तर कौवे की योनि को प्राप्त होते हैं ॥ ५७ ॥ जो मनुष्य शिर में पगड़ी ...दि बांध कर वा दक्षिण को मुख करके भोजन करता है तथा बांये पग ...हाथ रख कर खाता है उस अन्न को राक्षस खा जाते हैं ॥ ५८ ॥ संन्यासी ...सुवर्ण ब्रह्मचारियों को पान और चोरों को अभय दान देकर दाता भी ...रक में जाता है ॥ ५९ ॥ सफेद वस्त्र, सवारी, पान, और धातु इनका दान ...ने वाला और देने वाला अपने कुल का नाश करता है ॥ ६० ॥ चोर हो ...चाण्डाल हो और चाहे पिता को मारने वाला शत्रु भी हो परन्तु वैश्व- ...के समय आया हो तो वह अतिथि स्वर्ग में ले जाने वाला है ॥६१॥ जो ...तथ वेद का पार जानने वाले अतिथि का नहीं ग्रहण करता अर्थात् ऐसे ...तिथि का पूजन नहीं करता वह अतिथि को नहीं दिये अन्न जल को खाकर ...का भागी होता है ॥ ६२ ॥

ब्राह्मणस्यमुखंक्षेत्रं निरुदकमकण्टकम् ।
वापयेत्सर्वबीजानि साकृषिःसर्वकामिका ॥ ६३ ॥
सुक्षेत्रेवापयेद्बीजं सुपात्रेनिःक्षिपेद्धनम् ।
सुक्षेत्रेचसुपात्रेच ह्युप्तंदत्तंनश्यति ॥ ६४ ॥
अव्रताह्यनधीयाना यत्रभैक्षचराद्विजाः ।
तंग्रामंदण्डयेद्राजा चौरभक्तप्रदोहिसः ॥ ६५ ॥
क्षत्रियोहिप्रजारक्षन् शस्त्रपाणिःप्रचण्डवत् ।
निर्जित्यपरसैन्यानि क्षितिंधर्मेणपालयेत् ॥ ६६ ॥
नश्रीःकुलक्रमायाता भूपणोल्लिखिताऽपिवा ।
खड्गेनाक्रम्यभुञ्जीत वीरभोग्यावसुन्धरा ॥ ६७ ॥
पुष्पं पुष्पंविचिन्वीत मूलच्छेदंनकारयेत् ।
मालाकारइवाऽऽरामे नयथाङ्गारकारकः ॥ ६८ ॥
लाभकर्मतथारत्नं गवांचपरिपालनम् ।

ब्राह्मण का मुख कांटे रहित और जल विहीन सर्वोत्तम खेत है उसी में बोवे क्योंकि यही खेती सब कामनाओं को देने वाली है ॥६३॥ अच्छे खेत बोवे और सुपात्र को धन देवे। अच्छे खेत में बोया अन्न और सुपात्र को दि नष्ट नहीं होता ॥६४॥ जिस ग्राम में व्रतों को न करते और वेद को न पढ़े हुए भिक्षा मांगते हैं उस ग्राम को राजा दण्ड दे क्योंकि यह ग्राम चोरों देता है ॥६५॥ क्रोधी के तुल्य शस्त्र को हाथ में लिये प्रजा की रक्षा कर क्षत्रिय शत्रुओं की सेनाओं को जीत कर धर्मानुकूल प्रजा की पालना क क्योंकि लक्ष्मी कुल क्रम परम्परा से नहीं आती और भूपणों से भी नहीं आती किन्तु अपने खड्गबल से शत्रुओं को दबा कर पृथ्वी को भोगे पृथ्वी शूरवीरों के भोगने योग्य है ॥ ६७ ॥ राजा को चाहिये कि जैसे बगीचे के वृक्षों की रक्षा करता हुआ फूल २ तोड़ लेता है वैसे ही प्र रक्षा करता हुआ राजा उस से धनादि लिया करे किन्तु कोयला बनाने वा जड़ से वृक्षों को काट डालता है वैसे प्रजा की जड़ न बिगाड़े ॥ ६८ ॥ का काम, रत्नादि की परीक्षा तथा बेचना, गौओं की अच्छी रक्षा

कृषिकर्मचवाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ ६९ ॥
शूद्राणांद्विजशुश्रूषा परमोधर्मउच्यते ।
अन्यथाकुरुतेकिंचित्तद्भवेत्तस्यनिष्फलम् ॥ ७० ॥
लवणंमधुतैलंच दधितक्रंघृतंपयः ।
नदुष्येच्छूद्रजातीनां कुर्यात्सर्वेषुविक्रयम् ॥ ७१ ॥
विक्रीणन्मद्यमांसानि ह्यभक्ष्यस्यचभक्षणम् ।
कुर्वन्नगम्यागमनं शूद्रःपततितत्क्षणात् ॥ ७२ ॥
कपिलाक्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेनच ।
वेदाक्षरविचारेण शूद्रस्यनरकंध्रुवम् ॥ ७३ ॥
इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥
अतःपरंगृहस्थस्य धर्माचारंकलौयुगे ।
धर्मसाधारणंशक्यं चातुर्वर्ण्याश्रमागतम् ॥ १ ॥
संप्रवक्ष्याम्यहंपूर्वं पराशरवचोयथा ।
षट्कर्मसहितोविप्रः कृषिकर्माणिकारयेत् ॥२॥

व्यापार ये वैश्य की वृत्ति (जीविका) कही हैं ॥ ६९ ॥ और शूद्रों का र धर्म द्विजों की सेवा करना कहा है । इस से भिन्न जो कुछ धर्मसम्बन्धी । शूद्र करता है वह उस का निष्फल है ॥ ७० ॥ लवण, सहत, तेल, दही, , घी, और दूध ये शूद्रों के दूषित नहीं हैं इन को शूद्र सब जातियों में ॥ ७१ ॥ मदिरा और मांस को वेचता, अभक्ष्य का भक्षण करता और ग- करने के अयोग्य ब्राह्मणी आदि स्त्री के संग गमन करके शूद्र उसी क्षण पतित हो जाता है ॥ ७२ ॥ कपिला गौ का दूध पीने, ब्राह्मणी के संग न करने, और वेद के अक्षरों का विचार करने से शूद्र को निश्चय नरक ता है ॥ ७३ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे १ अध्यायः ॥

इस के अनन्तर कलियुग में गृहस्थ का धर्म आचार और चारों वर्णों तथा श्रमों का यथाशक्ति साधारण धर्म जो है ॥ १ ॥ उस को हम पहिले पराशर वचनानुसार कहेंगे । छः कर्मों सहित ब्राह्मण खेती के काम भी करावें ॥२॥

क्षुधितंतृपितंश्रान्तं वलीवर्द्दंनयोजयेत् ।
हीनाङ्गंव्याधितंक्लीवं वृषंविप्रोनवाहयेत् ॥३॥
स्थिराङ्गंनीरुजंदृप्तं सुनर्द्दंपण्ढवर्जितम् ।
वाहयेद्दिवसस्यार्द्धं पश्चात्स्नानंसमाचरेत् ॥४॥
जपंदेवार्चनंहोमं स्वाध्यायंसाङ्गमभ्यसेत् ।
एकद्वित्रिचतुर्विप्रान् भोजयेत्स्नातकान्द्विजः ॥५॥
स्वयंकृष्टेतथाक्षेत्रेधान्यैश्चस्वयमर्जितैः ।
निर्वपेत्पञ्चयज्ञांश्च क्रतुदीक्षांचकारयेत् ॥६॥
तिलारसानविक्रेया विक्रेयाधान्यतत्समाः ।
विप्रस्यैवंविधावृत्तिस्तृणकाष्ठादिविक्रयः ॥७॥
ब्राह्मणस्तुकृषिंकृत्वामहादोषमवाप्नुयात् ।
अष्टागवंधर्म्यहलं षड्गवंवृत्तिलक्षणम् ॥८॥
चतुर्गवंनृशंसानां द्विगवंगोजिघांसिनाम् ।
द्विगवंवाहयेत्पादं मध्यान्हंतुचतुर्गवम् ॥९॥

ऐसे बैल को न जुतवावे जो भूखा प्यासा थका किसी अंग से हीन रोगी नपुंसक हो ॥३॥ जो स्थिरांग (जिस के अंग सब पुष्ट हों) रोग रहित-द्व शब्द करता हो-जो बधिया न किया गया हो-ऐसे बैल को आधे दिन जु और पीछे स्नान करे ॥४॥ जप देवताओं की पूजा होम और छः अङ्गों सहि का पाठ इन का अभ्यास करे और एक, दो, तीन, वा चार ब्राह्मणों (जो ब्र समाप्त करके गृहाश्रम में आये हों उन्हीं) को भोजन करावे ॥५॥ आप जोते और आप ही पैदा किये अन्नों से पंच यज्ञ करे और यज्ञ की दीक्षा भी करा तिल तथा छः रसों को न बेंचे। अन्न और जो अन्न के समान हैं उन को, और काठ आदि को बेंचे। ब्राह्मण की यह जीविका वैश्यवृत्तियों में है ॥७॥ खेती करे तो महादोष को प्राप्त हो-आठ जिसमें बैल हों वह हल धर्म छः जिस में हों वह मध्यम जीविका के लिये है ॥८॥ चार जिस में बैल हैं हिंसकों का है और जिस में दो बैल हों वह हल गोहत्यारे के समान है। दो वाले हल को चौथाई दिन जोते चार बैल के हल को मध्यान्ह तक जो

…नियमाहता ॥

षड्गवंतुत्रियामाहेऽष्टभिःपूर्णंतुवाहयेत् ।
नयातिनरकेष्वेवं वर्त्तमानस्तुवैद्विजः ॥१०॥
दानंदद्याच्चवैतेषां प्रशस्तंस्वर्गसाधनम् ।
संवत्सरेणयत्पापं मत्स्यघातीसमाप्नुयात् ॥११॥
अयोमुखेनकाष्ठेन तदेकाहेनलाङ्गली ।
पाशकोमत्स्यघातीच व्याधःशाकुनिकस्तथा ॥ १२ ॥
अदाताकर्षकश्चैव पञ्चैतेसमभागिनः ।
कण्डनीपेषणीचुल्ही उदकुम्भीचमार्जनी ॥ १३ ॥
पञ्चसूनागृहस्थस्य अहन्यहनिवर्त्तते ।
वैश्वदेवोबलिर्भिक्षा गोग्रासोहन्तकारकः ॥ १४ ॥
गृहस्थःप्रत्यहंकुर्यात्सूनादोषैर्नलिप्यते ।
वृक्षान्छित्वामहींभित्त्वा हत्वाचकृमिकीटकान् ॥ १५ ॥
कर्षकःखलुयज्ञेन सर्वपापैःप्रमुच्यते ।

…लों के हल को दिन के तीन पहर और आठ बैल के हल को सब दिन
…ऐसे वर्तता हुआ द्विज नरक में नही जाता ॥१०॥ स्वर्ग का उत्तम साधन
…ाह्मणों को ही देवे। मच्छियों को मारने वाला एक वर्ष में जिस पाप
…गी होता है ॥११॥ लोहा है मुख में जिसके ऐसे काठ (हल) से हल वाला
… एक दिन में उस पापका भोगने वाला होता है। १–पाशक (फांसी
…रने वाला,) २–मच्छियों का मारने वाला, ३–हिरणादि को मारने
…धिक ४–पक्षियों को पकड़ने वाला ॥ १२ ॥ तथा पांचवां जो दान न
…खेती करने वाला हो–ये पांचो एकही प्रकार के समान पाप भागी
…ी, चक्की, चूल्हा, जल के घड़े, मार्जनी (बुहारी) ॥१३॥ ये पांच हत्या
…प को नित्य २ लगती हैं। वैश्वदेव (देवयज्ञ) बलि (भूतयज्ञ) भिक्षा देना,
…ीर हंतकार नाम अतिथियज्ञ ॥ १४ ॥ इन पांचों को जो गृहस्थी
…करता है वह पूर्वोक्त पांच हत्याओं के दोष से लिप्त नहीं होता।
…ाटने, पृथ्वी के खोदने, कृमि और कीड़ों के मारने से जो पाप
…ता है ॥ १५ ॥ खेती करने वाला यज्ञ करने से उन सब पापों से

योनदद्याद्द्विजातिभ्यो राशिमूलमुपागतः ॥ १६
सचौरःसचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नंतंविनिर्द्दिशेत् ।
राज्ञेदत्वातुषड्भागं देवानांचैकविंशकम् ॥ १७॥
विप्राणांत्रिंशकंभागं कृषिकर्त्तानलिप्यते ।
क्षत्रियोपिकृषिंकृत्वा देवान्विप्रांश्चपूजयेत् ॥ १८
वैश्यःशूद्रस्तथाकुर्यात्कृषिवाणिज्यशिल्पकम् ।
विकर्मकुर्वतेशूद्रा द्विजशुश्रूषयोज्झिताः ॥ १९ ॥
भवन्त्यल्पायुषस्तेवै निरयंयान्त्यसंशयम् ।
चतुर्णामपिवर्णाना मेषधर्मःसनातनः ॥ २० ॥
इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
अतःशुद्धिंप्रवक्ष्यामि जननेमरणेतथा ।
दिनत्रयेणशुद्ध्यन्ति ब्राह्मणाःप्रेतसूतके ॥ १ ॥
क्षत्रियोद्वादशाहेन वैश्यःपञ्चदशाहकैः ।
शूद्रःशुद्ध्यतिमासेन पराशरवचोयथा ॥ २ ॥
उपासनेतुविप्राणामङ्गशुद्धिश्चजायते ।

छूट जाता है । जिसके अन्न की राशि हुई हो और वह समीप में आये ब्राह्मणों को न दे तो ॥ १६ ॥ वह चौर और पापी है उसे ब्रह्महत्यारा कहते हैं । छठा भाग राजा को और इक्कीसवां भाग देवताओं को ॥ १७ ॥ और तीसवां भाग ब्राह्मणों को जो देता है वह खेती के दोष से लिप्त नहीं होता । क्षत्रिय भी खेती करे तो देवता और ब्राह्मणों की पूजा करे ॥ १८ ॥ तिसी प्रकार वैश्य और शूद्र भी खेती वाणिज्य (व्यापार) और कारीगरी-शिल्प करें । द्विजों की सेवा को छोड़कर शूद्र लोग जो कर्म करते हैं वह खोटा है ॥ १९ ॥ और वे शूद्र थोड़ी अवस्था वाले होते हैं और नरक में जाते हैं इसमें संशय नहीं चारों वर्णों का यह सनातन धर्म है ॥ २० ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे २ अध्यायः ॥

अब जन्म और मरण समय में शुद्धि को कहते हैं । सूतक में मध्यकोटि के धर्मनिष्ठ ब्राह्मण तीन दिन में शुद्ध होते हैं । क्षत्रिय बारह दिन में वैश्य पन्द्रह दिन में शूद्र एक महीने में पराशर-वचनानुसार शुद्ध होते हैं ॥ २ ॥ ब्राह्मणों की सेवा करने से सेवक का ॥

ब्राह्मणानांप्रसूतौतु देहस्पर्शोविधीयते ॥ ३ ॥
जातेविप्रोदशाहेन द्वादशाहेनभूमिपः ।
वैश्यःपञ्चदशाहेन शूद्रोमासेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥
एकाहाच्छुद्ध्यतेविप्रो योग्निवेदसमन्वितः ।
त्र्यहात्केवलवेदस्तु द्विहीनोदशभिर्दिनैः ॥ ५ ॥
जन्मकर्मपरिभ्रष्टः संध्योपासनवर्जितः ।
नामधारकविप्रस्तु दशाहंसूतकोभवेत् ॥ ६ ॥
अजागावोमहिष्यश्च ब्राह्मणीनवसूतिका ।
दशरात्रेणसंशुद्ध्येद् भूमिस्थंचनवोदकम् ॥ ७ ॥
एकपिण्डास्तुदायादाः पृथग्दारनिकेतनाः ।
जन्मन्यपिविपत्तौच तेषांतत्सूतकंभवेत् ॥ ८ ॥
उभयत्रदशाहानि कुलस्यान्नं न भुञ्जते ।
दानंप्रतिग्रहोहोमः स्वाध्यायश्चनिवर्त्तते ॥ ९ ॥

ता है। और जन्म सूतक में शूद्र को ब्राह्मण के देह का स्पर्श कहा है। शूद्र के यहां होमादि से शुद्धि नहीं है । किन्तु शुद्धि के दिन पूरे हों स्नानादि करके ब्राह्मणों के चरणस्पर्श करके शूद्र शुद्ध होते हैं ॥ ३ ॥ सूतक में ब्राह्मण दशदिन में, क्षत्री बारह दिन में, वैश्य पन्द्रह दिन में, शूद्र महीने में शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥ अग्निहोत्र और वेदपाठ दोनों धर्म कृत्य करने वाला ब्राह्मण एक दिन में, केवल वेदपाठी तीन दिन में जो इन दोनों से हीन हो वह ब्राह्मण दश दिन में शुद्ध होता है ॥५॥ य जन्म से जातकर्मादि संस्कार तथा कर्म से हीन-और संध्योपासन जो ता हो ऐसा जो नाम धारने वाला ब्राह्मण वह दश दिन के सूतक का होता है ॥६॥ बकरी-गौ-भैंस-नवसूतिका (जिस के प्रथम ही सन्तान हो) ऐसी ब्राह्मणी और पृथ्वी पर ठहरा जल ये दश दिन में शुद्ध होते ७ ॥ जो पिता के अंश के भागी हैं एक मा बाप से उत्पन्न हुए जिन के २ स्त्री और घर हैं जन्म और मरण का सूतक उन सब को होता है॥८॥ प्रकार के सूतकों में सूतक वालों का अन्न दश दिन तक नहीं खाना हिये। दान देना, दान लेना, ब्रह्मयज्ञ और होम भी सूतक में नहीं करना हिये ॥ ९ ॥

तावत्तत्सूतकंगोत्रे चतुर्थपुरुषेणतु ।
दायाद्विच्छेदमाप्नोति पञ्चमोवात्मवंशजः ॥ १० ॥
चतुर्थेदशरात्रंस्यात्षण्निशाःपुंसिपञ्चमे ।
षष्ठेचतुरहाच्छुद्धिः सप्तमेतुदिनत्रयम् ॥ ११ ॥
शृङ्ग्यङ्ग्निमरणेचैवदेशान्तरमृतेतथा ।
बालेप्रेतेचसंन्यस्ते सद्यःशौचंविधीयते ॥ १२ ॥
पञ्चभिःपुरुषैर्युक्ता अश्रद्धेयाःसगोत्रिणः ।
ततःषट्पुरुषाद्यश्च श्राद्धेभोज्याःसगोत्रिणः ॥ १३ ॥
दशरात्रेष्वतीतेषु त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते ।
ततःसंवत्सरादूर्ध्वं सचैलंस्नानमाचरेत् ॥१४॥
देशान्तरमृतःकश्चित्सगोत्रःश्रूयतेयदि ।
नत्रिरात्रमहोरात्रं सद्यःस्नात्वाशुचिर्भवेत् ॥१५॥
आत्रिपक्षात्त्रिरात्रंस्यादाषण्मासाच्चपक्षिणी ।
अहःसंवत्सरादर्वाक्सद्यःशौचंविधीयते ॥ १६ ॥

उस गोत्र में चौथी पीढ़ी तक ही वह सूतक भी होता है। अपने वंश का पांचवां पुरुष बांट हो जाने से पृथक् हो जाता है॥१०॥ चौथी पीढी तक दश दिन पांचवीं पीढी में छः दिन रात-छठी पीढी में चार और सातवीं पीढी में तीन दिन में शुद्धि होती है॥ ११ ॥ सींग वाले पशु से-वा अग्नि से मरने में वा देशान्तर के मरने में-बालक के मरने में और अपने कुटुम्बी संन्यासी के मरने में उसी समय शुद्धि हो जाती है॥१२॥ पांच पुरुषों से युक्त सगोत्री पुरुष श्रद्धा करने योग्य नहीं हैं। परन्तु जिन में सुपात्र छठा वाहरी हो ऐसे सगोत्री श्राद्ध में भोजन कराने योग्य माने गये ॥१३॥ दश दिन वीत जाने पर विदेश में सगोत्री का मरण सुने तो तीन दिन में शुद्धि और एक वर्ष वाद सुने तो तत्काल सचैल स्नान करने से शुद्धि होती है॥१४॥ यदि देशान्तर में मरा सगोत्री सुना जाय तो न तीन दिन और न एक रात अशौच माने किन्तु शीघ्र ही स्नान करने से तत्काल शुद्धि होती है। डेढ़ महिने तक सुनने पर तीन दिन में शुद्धि, छः महीने में सुने तो १ रात शुद्धि माने, वर्ष भर के भीतर सुने तो एक दिन मात्र में शुद्धि और बाद् वर्ष बीत जाने पर तत्काल शुद्धि कर लेवे ॥ १६ ॥

देशान्तरगतोविप्रः प्रयासात्कालकारितात् ।
देहनाशमनुप्राप्तस्तिथिर्नज्ञायतेयदि ॥ १७ ॥
कृष्णाष्टमीत्वमास्या कृष्णाचैकादशीचया ।
उदकंपिण्डदानंच तत्रश्राद्धंचकारयेत् ॥१८॥
अजातदन्तायेबाला येचगर्भाद्विनिःस्सृताः ।
नतेषामग्निसंस्कारो नाशौचंनोदकक्रिया ॥१९॥
यदिगर्भोविपद्येत स्रवतेवापियोषिताम् ।
यावन्मासंस्थितोगर्भो दिनंतावत्तुसूतकम् ॥२०॥
आचतुर्थाद्भवेत्स्रावः पातःपञ्चमषष्ठयोः ।
अतऊर्ध्वंप्रसूतिःस्याद्दशाहंसूतकंभवेत् ॥२१॥
प्रसूतिकालेसंप्राप्ते प्रसवेयदियोषिताम् ।
जीवापत्येतुगोत्रस्य मृतेमातुश्चसूतकम् ॥२२॥
रात्रावेवसमुत्पन्ने मृतेरजसिसूतके ।
पूर्वमेवदिनंग्राह्यं यावन्नोदयतेरविः ॥२३॥

यदि देशान्तर में गया ब्राह्मण काल से प्रकट हुए परिश्रम से मर जाय मरने की तिथि मालूम न हो ॥ १७ ॥ तो कृष्ण पक्ष की आठैं, मावस, ा कृष्ण एकादशी में जलदान, पिण्डदान और श्राद्ध करे ॥ १८ ॥ जो के निकलने से पहिले वा गर्भ से निकसते ही मर गये हों उन को का दाह, अशौच और जलदान (तिलांजलि) नहीं करना चाहिये ॥१९॥ गर्भ में विपत्ति (मरना) हो जाय वा स्त्री का गर्भ ही गिर जाय तो ने महीने का गर्भ हो उतने ही दिन का सूतक होता है ॥ २० ॥ चार ने तक का जो गर्भ गिरे उसे स्राव कहते हैं, पांच और छठे महीने का तो उसे गर्भपात कहते हैं इस से आगे प्रसूति होती है उस का सूतक. दिन का होता है ॥२१॥ स्त्रियों के प्रसव समय में यदि जीवित सन्तान हो तो चार पीढ़ी तक के गोत्र वालों को आशौच लगता और मरा हो तो केवल माता को अशुद्धि लगती है ॥ २२ ॥ यदि रात्रि में मरा सन्तान पैदा हो तो सूर्योदय से पहिले बीते हुए दिन से ही गणना ी चाहिये ॥ २३ ॥

...जातेनुजातेच कृतचूड़ेचसंस्थिते ।
अग्निसंस्करणंतेषां त्रिरात्रंसूतकंभवेत् ॥ २४ ॥
आदन्ताजननात्सद्यआचूडान्नैशिकीस्मृता ।
त्रिरात्रमाव्रतात्तेषांदशरात्रमतःपरम् ॥ २५ ॥
गर्भेयदिविपत्तिःस्याद्दशाहंसूतकंभवेत् ।
जीवन्जातोयदिमेतः सद्यएवविशुध्यति ॥ २६ ॥
स्त्रीणांचूडान्नआदानात्संक्रमात्तदधःक्रमात् ।
सद्यःशौचमथैकाहं त्रिरहःपितृवन्धषु ॥ २७ ॥
ब्रह्मचारीगृहेयेषां हूयतेचहुताशनः ।
संपर्कंचेन्नकुर्वन्ति नतेषांसूतकंभवेत् ॥ २८ ॥
संपर्काद्दुष्यतेविप्रो जननेमरणेतथा ।
संपर्काच्चनिवृत्तस्य नप्रेतंनैवसूतकम् ॥ २९ ॥

...उगने के पीछे वा दांत निकलते ही अथवा मुण्डन हो जाने पर ...य तो उसका अग्नि से दाह करै और तीन दिन रात अशुद्धि मानें ...मे निकलने से पहिले जो बालक मरै तो उसी समय, चूड़ाकर्म से ...रै तो एक दिन रात और यज्ञोपवीत से पहिले मरे तो तीन दि... अशौच होता है इससे परे दश दिन का होता है ॥ २५ ॥ यदि ... हो जाय अर्थात् जीवित बच्चा पैदा हो कर मर जाय तो दश... हुआ पैदा हो तो तत्काल शुद्धि होती ॥ २६ ॥ चूड़ाकर्म ... मरे तो तत्काल शुद्धि होती, सगाई से पहिले मरे तो ...और वाग्दान होने पर सप्तपदी से पहिले मरे तो पितृगोत्र ...न रात शुद्धि माननी चाहिये ॥ २७ ॥ जिन के घर में होम ...री रहता हो और वह यदि मर जाय तो जिन लोगों ने स्पर्श ...या उन्हें सूतक नहीं लगता ॥ २८ ॥ जन्म और मरण सम्बन्धी ... पीढ़ी वालों से भिन्न ब्राह्मण स्पर्श करने से दूषित हैं ...करै तो दोनों ही सूतक नहीं लगते ॥ २९ ॥

नःकारुकावैद्या दासीदासाश्चनापिताः ।
नःश्रोत्रियाश्चैव सद्यःशौचाःप्रकीर्तिताः ॥ ३० ॥
नःश्रोत्रियाश्चैव सद्यःशौचाःप्रकीर्तिताः ।
मन्त्रपूतश्च आहिताग्निश्चयोद्विजः ।
श्चसूतकंनास्ति यस्यचेच्छतिपार्थिवः ॥ ३१ ॥
तोनिधनेदानेआर्तोविप्रोनिमन्त्रितः ।
वऋपिभिर्दृष्टं यथाकालेनशुद्ध्यति ॥ ३२ ॥
वेगृहमेधीतु नकुर्यात्सङ्करंयदि ।
याहाच्छुद्ध्यतेमाता त्ववगाह्यपिताशुचिः ॥ ३३ ॥
वैषांशावमाशौचं मातापित्रोस्तुसूतकम् ।
सूतकंमातुरेवस्या दुपस्पृश्यपिताशुचिः ॥ ३४ ॥
यदिपत्न्यांप्रसूतायां संपर्ककुरुतेद्विजः ।
सूतकंतुभवेत्तस्य यदिविप्रःषडङ्गवित् ॥ ३५ ॥
संपर्काज्जायतेदोषो नान्योदोषोस्तिवैद्विजे ।

शिल्पी (चित्र बनाने वाले) कारीगर, वैद्य दासी (टहलनी) दास,नाई,राजा,
र, वेदपाठी, इन की उसी समय तत्काल शुद्धि होती है ॥ ३० ॥ जिस ने
र, वेदपाठी, इन की उसी समय तत्काल शुद्धि होती है ॥ ३० ॥ जिस ने
नी नियत काल तक व्रत ले रक्खा हो, वेदमन्त्रों के जप से जो पवित्र हैं,
द्विज विधिपूर्वक अग्नि स्थापन करके अग्निहोत्री है, राजा को और जिस
क को राजा न चाहे उस को सूतक नहीं लगता है ॥ ३१ ॥ दान में
(सर्वपार) मनुष्य यदि मरजाय और आर्त्त (दुःखी) ब्राह्मण को दान
का न्योता दे रक्खा हो तो उसी दान के समय पर शुद्ध होता है यह
षियों ने आना अर्थात् कहा है ॥ ३२ ॥ यदि जन्मसूतक में ब्राह्मण सूतिका
सङ्कर (स्पर्श) न करै तो माता दश दिन में और पिता स्नान करके
द्ध होता है ॥ ३३ ॥ शाव (मुर्दे का) आशौच सात पीढी तक सब को और
न्मसूतक माता पिता को ही लगता है और उन दोनों में भी माता ही
शेष कर अशुद्ध होती है पिता तो स्नान करने से ही शुद्ध हो जाता है ॥३४॥
स ब्राह्मण की स्त्री प्रसूता हो और वह पत्नी का स्पर्श करै तो चाहै वह
द के छः अंग का पण्डित भी हो तो भी उसे सूतक लगता है ॥३५॥ ब्राह्मण को संपर्क

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संपर्कंवर्जयेद्बुधः ॥ ३६ ॥
वियाहोत्सवयज्ञेषु त्वन्तरामृतसूतके ।
पूर्वसंकल्पितंद्रव्यं दीयमानंनदुष्यति ॥ ३७ ॥
अन्तरातुदशाहस्य पुनर्मरणजन्मनी ।
तावत्स्यादशुचिर्विप्रो यावत्तत्स्यादनिर्दशम् ॥ ३८ ॥
ब्राह्मणार्थंविपन्नानां वन्दिगोग्रहणेतथा ।
आहवेषुविपन्नानामेकरात्रमशौचकम् ॥ ३९ ॥
द्वाविमौपुरुषौलोके सूर्यमण्डलभेदिनौ ।
परिव्राड्योगयुक्तश्च रणेचाभिमुखोहतः ॥ ४० ॥
यत्रयत्रहतःशूरः शत्रुभिःपरिवेष्टितः ।
अक्षयांल्लभतेलोकान् यदिक्लीवंनभाषते ॥ ४१ ॥
संन्यस्तंब्राह्मणंदृष्ट्वा स्थानाच्चलतिभास्करः ।
एषमेमण्डलंभित्त्वा परंस्थानंप्रयास्यति ॥ ४२ ॥

से दोष लगताहै अन्य कुछ दोष नहीं है तिससे बड़े यत्न से ज्ञानवान् द्विज[illegible]
न करे ॥ ३६ ॥ विवाह, उत्सव, यज्ञ, इन के बीच यदि मरण वा जन्म[illegible]
जांय तो पूर्व संकल्पित किये द्रव्य के देने का दोष नहीं है ॥ ३७ ॥[illegible]
सूतक के दश आदि दिन पूरे होने से पहिले दूसरा मरण वा जन्म हो[illegible]
तो ब्राह्मण तभी तक अशुद्ध होता है कि जब तक पहिले दश दिन[illegible]
हों ॥ ३८ ॥ ब्राह्मण के लिये, भागे (कैदी) के तथा गौ के पकड़ने में[illegible]
संग्राम में जो मरे हैं उनको अशौच एक दिन रात का लगता है ॥ ३९ ॥[illegible]
पुरुष जगत् में सूर्य मण्डल के भेदन करने वाले हैं एक तो योग युक्त[illegible]
[illegible]न्यासी संन्यासी और दूसरा जो संग्राम में सन्मुख मरा हो ॥ ४० ॥ शत्रु[illegible]
से युद्ध में घेरा हुआ शूरवीर पुरुष जहां २ मारा जाता है वह अक्षय लो[illegible]
को प्राप्त होता है यदि वह क्लीव (कातर के वचन न कहै) ॥ ४१ ॥[illegible]
संन्यासी ब्राह्मण को देखकर सूर्य नारायण भी अपने स्थान से[illegible]
हो जाते हैं क्योंकि सूर्यनारायण को भय हो जाता है कि यह संन्यासी
मण्डल को लंघकर परम स्थान (ब्रह्मलोक) को जायगा ॥ ४२ ॥

यस्तुभग्नेषुसैन्येषु विद्रवत्सुसमन्ततः ।
परित्रातायदागच्छेत्सचक्रतुफलंलभेत् ॥ ४३ ॥
यस्यच्छेदक्षतंगात्रं शरमुद्गरयष्टिभिः ।
देवकन्यास्तुतंवीरं हरन्तिरमयन्तिच ॥ ४४ ॥
देवाङ्गनासहस्राणि शूरमायोधनेहतम् ।
त्वरमाणाःप्रधावन्ति ममभर्त्ताममेतिच ॥ ४५ ॥
यंयज्ञसंघैस्तपसाचविप्राः स्वर्गैषिणोवात्रयथैवयान्ति ।
क्षणेनयान्त्येवहितत्रवीराः प्राणान्सुयुद्धेनपरित्यजन्तः॥४६॥
जितेनलभ्यतेलक्ष्मीर्मृतेनापिवराङ्गनाः ।
क्षणध्वंसिनिकायेस्मिन्काचिन्तामरणेरणे ॥ ४७ ॥
ललाटदेशाद्रुधिरंस्रवच्च यस्याहवेतुप्रविशेतवक्त्रम् ।
तत्सोमपानेनकिलास्यतुल्यं संग्रामयज्ञेविधिवच्चदृष्टम्॥४८॥
अनाथंब्राह्मणंप्रेतं येवहन्तिद्विजातयः ।
पदेपदेयज्ञफलमानुपूर्व्याल्लभन्तिते ॥ ४९ ॥
नतेषामशुभंकिञ्चिद् द्विजानांशुभकर्मणि ।

शत्रुओं ने मारी पीटी और चारों तरफ़ भागती हुई सेना के मनुष्यों की
[illegible] के लिये जाताहै वह यज्ञ के फल को पाता है ॥४३॥ जिसका शरीर वाण
[illegible]गर–लाठी इनके छिद्रों से घायल हुआ है उस मनुष्य को देवताओं की
[illegible]ा बुला ले जातीं और रमण करातीं हैं ॥ ४४ ॥ संग्राम में मारे गये शूर-
[illegible]र के सन्मुख हजारों देवताओं की कन्या शीघ्रता करतीं हुईं दौड़ती हैं
यह मेरा भर्ता यह मेरा भर्त्ता हो ॥ ४५ ॥ यज्ञों के समूह और तप करके
[illegible]ं की इच्छा करने वाले ब्राह्मण जिस लोक में जिस प्रकार जाते हैं उसी
[illegible]क में क्षणमात्र में ही वे शूरवीर जाते हैं जो युद्ध में प्राणों को त्यागते हैं
[illegible]६ ॥ जब युद्ध में जय होने से लक्ष्मी और मरने से अप्सरा मिलती हैं तो
[illegible]मात्र में नष्ट होने वाली काया के रण में मरने की क्या चिन्ता है ॥ ४७ ॥
[illegible]ाम में मस्तक से गिरता रुधिर जिस के मुख में प्रवेश करता है वह मुख
[illegible]ाम रूपी यज्ञ में विधिपूर्वक सोमपान करने वाले मुख के तुल्य है ॥४८॥
द्विजाति लोग मरे हुए अनाथ ब्राह्मण को श्मशान में ले जाते हैं वे क्रम
[illegible]पग २ में यज्ञ के फल को प्राप्त होते हैं ॥ ४९ ॥ और उन द्विजों को शुभ

...तोऽभिगाहनात्तेषां सद्यःशौचंविधीयते ॥
असगोत्रमबन्धुंच प्रेतीभूतंद्विजोत्तमम् ।
नीत्वाचदाहयित्वाच प्राणायामेनशुद्ध्यति ।
अनुगम्येच्छयाप्रेतं ज्ञातिमज्ञातिमेववा ।
स्नात्वासचैलंस्पृष्ट्वाग्निं घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥
क्षत्रियंमृतमज्ञानाद् ब्राह्मणोयोऽनुगच्छति ।
एकाहमशुचिर्भूत्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ५३ ॥
शवंचवैश्यमज्ञानाद् ब्राह्मणोह्यनुगच्छति ।
कृत्वाशौचंद्विरात्रंच प्राणायामान्षडाचरेत् ॥ ५४ ॥
प्रेतीभूतंतुयःशूद्रं ब्राह्मणोज्ञानदुर्बलः ।
अनुगच्छेन्नीयमानं त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ ५५ ॥
त्रिरात्रेतुततःपूर्णे नदींगत्वासमुद्रगाम् ।
प्राणायामशतंकृत्वा घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ५६ ॥
विनिर्वर्त्ययदाशूद्रा उदकान्तमुपस्थिताः ।

कर्म करने में कुछ भी अशुभ या दोष नहीं है क्योंकि जल में स्ना... उन की उसी समय शुद्धि हो जाती है ॥ ५० ॥ जो ब्राह्मण अपने... न हो और अपना बन्धु भी न हो वह मरजाय तो श्मशान में ले... और दाह करके प्राणायाम करने से शुद्ध हो जाता है ॥५१॥ अपने कु... या अन्य कुटुम्ब के मुर्दों के संग जाकर वस्त्रों सहित स्नान, अग्नि का... और थोड़ा घी खाकर शुद्ध होता है ॥५२॥ मरे हुए क्षत्रिय के संग जो... श्मशान में जाता है वह एक दिन अशुद्ध रहकर पञ्चगव्य सेवन करने से... होता है ॥५३॥ जो ब्राह्मण मरे हुए वैश्य के संग अज्ञान से जावे वह दो... रात का अशौच करके छः प्राणायाम करे ॥ ५४ ॥ जो अज्ञानी ब्राह्मण... हुए शूद्र के संग जाता है वह तीन दिन रात अशुद्ध होता है ॥ ५५ ॥ तीन... दिन के पीछे जो समुद्र में जाने वाली हो उस नदी में जाके स्नान कर... प्राणायाम कर और घी खाके शुद्ध होता है ॥ ५६ ॥ जब श्मशान से... शूद्र लोग जल के समीप तिलाञ्जलि देने को आवें तब द्विज लोग उन के...

द्विजैस्तदानुगन्तव्या एषधर्मःसनातनः ॥ ५७ ॥
तस्माद्द्विजोमृतंशूद्रं नस्पृशेन्नचदाहयेत् ।
दृष्टेसूर्यावलोकेन शुद्धिरेषापुरातनी ॥ ५८ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥

अतिमानादतिक्रोधात्स्नेहाद्वायदिवाभयात् ।
उद्बध्नीयात्स्त्रीपुमान्वा गतिरेषाविधीयते ॥ १ ॥
पूयशोणितसंपूर्णे त्वन्धेतमसिमज्जति ।
षष्टिंवर्षसहस्राणि नरकंप्रतिपद्यते ॥ २ ॥
नाशौचंनोदकंनाग्निं नाश्रुपातंचकारयेत् ।
वोढारोऽग्निप्रदातारः पाशच्छेदकरास्तथा ॥ ३ ॥
तप्तकृच्छ्रेणशुद्ध्यन्तीत्येवमाहप्रजापतिः ।
गोभिर्हतंतथोद्बद्धं ब्राह्मणेनतुघातितम् ॥ ४ ॥
संस्पृशन्तितुयेविप्रा वोढारश्चाग्निदाश्चये ।

जांय यही सनातन धर्म की रीति है ॥ ५७ ॥ तिस से द्विज लोग मरे शूद्र का न तो स्पर्श करें और न दाह करावें यदि मरे शूद्र को देख ले तो [illegible]रायण के दर्शन से शुद्धि होती है यह शुद्धि पुरातन धर्म की मर्यादा है ॥५८॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र का तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥

अत्यन्त मान से या अत्यन्त क्रोध से वा किसी के साथ अधिक प्रेम होने [illegible] यया पुरुष परस्पर फांसी दें तो उन की निम्न लिखित [illegible] पीब और रुधिर से भरे नरक में साठ हजार वर्ष तक [illegible]। न उन का अशौच, न जलदान, न अग्निदाह, और न [illegible] के लिये कोई रोवे जो उन्हें गंगा आदि में ले जांय या [illegible]रे और जो उन की फांसी को काटे ॥ ३ ॥ वे लोग तप्त[illegible] शुद्ध होते हैं ऐसा प्रजापति ने कहा है—जो पुरुष गौओं से [illegible]न्धन (फांसी) से मरा हो या जिस को ब्राह्मण ने मारा हो ॥४॥ [illegible]र्श करें या उसके मृत देह को श्मशान में लेजांय या जो

अन्येऽपिवाऽनुगन्तारः पाशच्छेदकराश्रये ॥ ५ ॥
तप्तकृच्छ्रेणशुद्धास्ते कुर्युर्ब्राह्मणभोजनम् ।
अनडुत्सहितांगांच दद्युर्विप्रायदक्षिणाम् ॥ ६ ॥
त्र्यहमुष्णंपिवेद्वारि त्र्यहमुष्णंपयःपिवेत् ।
त्र्यहमुष्णंपिवेत्सर्पिर्वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥७॥
षट्पलंतुपिवेदंभस्त्रिपलन्तुपयःपिवेत् ।
पलमेकंपिवेत्सर्पिस्तप्तकृच्छ्रंविधीयते ॥ ८ ॥
योवैसमाचरेद्विप्रः पतितादिष्वकामतः ।
पञ्चाहंवादशाहंवा द्वादशाहमथापिवा ॥ ९ ॥
मासार्द्धमासमेकंवा मासद्वयमथापिवा ।
अब्दार्द्धमब्दमेकंवा भवेदूर्ध्वंहितत्समः ॥ १० ॥
त्रिरात्रंप्रथमेपक्षे द्वितीयेकृच्छ्रमाचरेत् ।
तृतीयेचैवपक्षेतु कृच्छ्रंसान्तपनंचरेत् ॥ ११ ॥
चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पराकःपञ्चमेमतः ।

अग्नि में दाह करे और जो उस के संग जाय वा जो फांसी काटे
कृच्छ्र व्रत से शुद्ध हुए ब्राह्मणों को भोजन करावें और एक बैल
ब्राह्मण को दक्षिणा देवें ॥ ६ ॥ तीन दिन गर्म जल पीवे फिर ती
दूध पीवे फिर तीन दिन गर्म घी पीवे फिर तीन दिन वायु को
रहे ॥७॥ छः पल जल, तीन पल दूध, एक पल घी, इस को तप्त कृ
(पांच तोला चारमासे का एक पल होता है) ॥ ८ ॥ जो ब्राह्
आदिकों के साथ अज्ञान से पांच, दश, वा बारह दिन व्यवहार क
पन्द्रह दिन, वा एक महीना; वा दो महीने, वा चार महीने, वा
तक पतित के साथ व्यवहार करे वह उस प्रायश्चित्त को करे जो आगे
एक वर्ष से अधिक व्यवहार करे तो वह भी उसी पतित के तुल्य (
जाता है ॥ १० ॥ पांच दिन पतित का संग करने में तीन दिन उप
दिन करने में एक कृच्छ्र, बारह दिन के संग में सान्तपन कृच्छ्र क
पन्द्रह दिन के संग में दश दिन का व्रत एक महीने के संग में प

कुर्याञ्चान्द्रायणंपष्ठे सप्तमेत्वैन्दवद्वयम् ॥ १२ ॥
शुद्ध्यर्थमष्टमेचैव षण्मासान्कृच्छ्माचरेत् ।
पक्षसंख्याप्रमाणेन सुवर्णान्यपिदक्षिणा ॥ १३ ॥
ऋतुस्नातातुयानारी भर्त्तारंनोपसर्पति ।
सामृतानरकंयाति विधवाचपुनःपुनः ॥ १४ ॥
ऋतुस्नातांतुयोभार्यां सन्निधौनोपगच्छति ।
घोरायांभ्रूणहत्यायां युज्यतेनात्रसंशयः ॥ १५ ॥
अदुष्टापतितांभार्यां यौवनेयःपरित्यजेत् ।
सप्तजन्मभवेत्स्त्रीत्वं वैधव्यंचपुनःपुनः ॥ १६ ॥
दरिद्रंव्याधितंमूर्खं भर्त्तारंयावमन्यते ।
सामृताजायतेव्याली वैधव्यंचपुनःपुनः ॥ १७ ॥
पत्यौजीवतियानारी उपोष्यव्रतमाचरेत् ।
आयुष्यंहरतेभर्तुः सानारीनरकंव्रजेत् ॥ १८ ॥

महीने के संग में चान्द्रायण और चार महीने के संग में दो चान्द्रायण करे ॥१२॥ एक वर्ष के संग में छः महीने तक कृच्छ्रव्रत करे और एक पक्ष संख्या के प्रमाण से सुवर्ण दान की संख्याओं का प्रमाण जानो । अर्थात् एक महीने के संग का प्रायश्चित्त हो तो दो सुवर्ण दक्षिणा देवे (सोलह मासा सोने को ' सुवर्ण ' कहते हैं) ॥ १३ ॥ जो स्त्री ऋतु काल में चौथे दिन स्नान करके छठे आदि दिन पति के समीप नहीं जाती वह मर कर नरक में जाती और बार बार विधवा होती है ॥ १४ ॥ जो पुरुष ऋतु में स्नान किये हुई स्त्री हो उस अपनी पत्नी के समीप नहीं जाता उसे घोर भ्रूण हत्या लगती है ॥ १५ ॥ जो पतित न हुई हो ऐसी निर्दोष पत्नी को युवावस्था में जो पुरुष छोड़ देता है वह सात जन्म तक स्त्री योनि में जन्म लेता और बार २ विधवा होता है ॥ १६ ॥ दरिद्री, रोगी मूर्ख भी जो अपना पति हो उस का जो अपमान करती है वह मर कर सांपिन होती और बार बार विधवा होती है ॥ १७ ॥ पति के जीवते जो स्त्री उपवास तथा व्रत करती है वह अपने पति की अवस्था घटाती और आप नरक में जाती है ॥ १८ ॥

अपृष्ट्वाचैवभर्त्तारं यानारीकुरुतेव्रतम् ।
सर्वंतद्राक्षसान्गच्छेदित्येवंमनुरब्रवीत् ॥
वान्धवानांसजातीनां दुर्वृत्तंकुरुतेतुया ।
गर्भपातंचयाकुर्यान्न तांसंभाषयेत्क्वचित् ॥
यत्पापंब्रह्महत्याया द्विगुणंगर्भपातने ।
प्रायश्चित्तंनतस्यास्ति तस्यास्त्यागोविधीयते
नकार्यमावसथ्येन नाग्निहोत्रेणवापुनः ।
सभवेत्कर्मचाण्डालो यस्तुधर्मपराङ्मुखः ॥ २२
ओघवाताहृतंवीजं यस्यक्षेत्रेप्ररोहति ।
सक्षेत्रीलभतेवीजं नवीजीभागमर्हति ॥ २३ ॥
तद्वत्परस्त्रियःपुत्रौ द्वौसुतौकुण्डगोलकौ ।
पत्यौजीवतिकुण्डस्तु मृतेभर्तरिगोलकः ॥ २४ ॥
औरसःक्षेत्रजश्चैव दत्तःकृत्रिमकःसुतः ।

…ो स्त्री अपने पति को पूछे बिना व्रत करती है वह सब राक्षसों को
…ह मनुजी ने कहा है ॥१९॥ जो स्त्री अपने सजातीय बांधवों के संग
…रण वा गर्भपात करती है उस के संग कभी भी पति न बोले ॥
…य ब्रह्महत्या का है उस से दूना गर्भ के पात (गिराने) में है;
…लिनी का प्रायश्चित्त कुछ नहीं है किन्तु उस का त्याग कर देवे।
…गर्भपात करने वाली पत्नी के त्याग से श्रौत स्मार्त अग्निहोत्र
…ाय कुछ चिन्ता न करे किन्तु उस स्त्री के साथ अग्निहोत्र करे
…विरोधी होने से कर्मचाण्डाल माना जायगा ॥ २२ ॥
…ांधी रूप वायु के वेग से उड़कर आया बीज यदि दूसरे के खेत
…वे तो वह खेत वाले का ही भाग होगा और बीज वाले को उस
…लना योग्य नहीं ॥ २३ ॥ इसी प्रकार अन्यपुरुष के बीज से दूसरे
…ो पुत्र उत्पन्न हो वह भी उस का होगा जिस की वह स्त्री होगी
… गोलक दो पुत्र होते हैं एक पति के जीते जो
…और पति के मरे पीछे होय तो गोलक कहाता
…, और कृत्रिम ये चार पुत्र …

दद्यान्मातापितावापि सपुत्रोदत्तकोभवेत् ॥ २५ ॥
परिवित्तिःपरीवेत्ता ययाचपरिविद्यते ।
सर्वेतेनरकंयान्ति दातृयाजकपञ्चमाः ॥ २६ ॥
दाराग्निहोत्रसंयोगं कुरुतेयोऽग्रजेसति ।
परिवेत्तासविज्ञेयः परिवित्तिस्तुपूर्वजः ॥ २७ ॥
द्वौकृच्छ्रौपरिवित्तेस्तु कन्यायाःकृच्छ्रएवच ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रौदातुस्तु होताचान्द्रायणं चरेत् ॥२८॥
कुब्जवामनपण्ढेषु गद्गदेषुजडेषुच ।
जात्यन्धेबधिरेमूके नदोषःपरिविन्दतः ॥ २९ ॥
पितृव्यपुत्रःसापत्नः परनारीसुतस्तथा ।
दाराग्निहोत्रसंयोगे नदोषःपरिवेदने ॥ ३० ॥
ज्येष्ठोभ्रातायदातिष्ठेदाधानंनैवकारयेत् ।
अनुज्ञातस्तुकुर्वीत शंखस्यवचनंयथा ॥ ३१ ॥

दत्तक पुत्र होता है ॥ २५ ॥ परिवित्ति (परिवेत्ता का बड़ा भाई) (बड़े भाई से पहिले जो छोटा विवाह करै) वह कन्या जिस के विवाह करने से वह परिवेत्ता हुआ है, कन्या का दाता और याजक (पढ़ने वाला) ये सब नरक में जाते हैं ॥२६॥ ज्येष्ठ भाई से पहिले जो विवाह करे वा अग्निहोत्र ग्रहण करे वह परिवेत्ता और ज्येष्ठ भाई परिवित्ति कहाता है ॥ २७ ॥ परिवित्ति दो कृच्छ्र व्रत करे कन्या एक कृच्छ्र कन्याका दाता कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र दोनों व्रत करे तथा विवाह का पुरोहित चांद्रायण व्रत करै ॥ २८ ॥ कुबड़ा, विलंदिया (बौना) हकला, महा मूर्ख, जन्मान्ध, बहरा, गूंगा, इन ऐसे जेठे भाइयों के परिवेदन (पहिले विवाह वा अग्निहोत्र लेने) में दोष नहीं है ॥ २९ ॥ भाई चाचा का पुत्र हो, वा सौतेली माता का पुत्र हो, वा दूसरे का पुत्र हो तो उस से पहिले विवाह करने और अग्निहोत्र लेने से परिवेदन में दोष नहीं है ॥३०॥ जेठा भाई विद्यमान हो पर स्वयं अग्निहोत्र न लेवे तो शंख ऋषि के वचनानुसार उस बड़े भाई की आज्ञा से छोटा भाई अग्निहोत्र को ग्रहण करले ॥ ३१ ॥

नष्टेमृतेप्रव्रजिते क्लीवेचपतितेपतौ।
पञ्चस्वापत्सुनारीणां पतिरन्योविधीयते ॥ ३२॥
मृतेभर्त्तरियानारी ब्रह्मचर्यव्रतेस्थिता।
सामृतालभतेस्वर्गं यथातेब्रह्मचारिणः ॥ ३३ ॥
तिस्रःकोट्योर्द्धकोटीच यानिलोमानिमानवे।
तावत्कालंवसेत्स्वर्गे भर्त्तारंयाऽनुगच्छति ॥ ३४।
व्यालग्राहीयथाव्यालं बलादुद्धरतेबिलात्।
एवंस्त्रीपतिमुद्धृत्य तेनैवसहमोदते ॥ ३५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

वृकश्वानशृगालादि दष्टोयस्तुद्विजोत्तमः।
स्नात्वाजपेत्सगायत्रीं पवित्रांवेदमातरम् ॥ १ ॥
गवांशृङ्गोदकस्नानान्महानद्योस्तुसंगमे।

जिस से सगाई हुई हो वह पति नष्ट (परदेश में गया हो खबर न हो) हो जाय, वा मर जाय, वा संन्यासी हो जाय, वा निकले, वा पतित हो जाय, तो इन पांच आपत्तियों में दूसरा पति अर्थात् सगाई हुये पीछे दूसरे के संग सगाई करके विवाह कर देवे। पति के मरे पीछे जो स्त्री ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहती है। वह स्वर्ग में इस प्रकार जाती है जैसे वे ब्रह्मचारी गये ॥ ३३ ॥ जो स्त्री संग अनुगमन (सती होना) करती है वह साढ़े तीन करोड़ मनुष्य रीर में जो लोम हैं उतने ही वर्ष तक स्वर्ग में बसती है ॥३४॥ सांप को वाला जैसे बिले में से सांप को निकाल लेता है ऐसे ही वह स्त्री भी अपने पतिका उद्धार करके उस पतिके संग ही स्वर्गमें आनन्द भोगती है।

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ४ चौथा अध्याय पूरा हुआ

भेड़िया, कुत्ता, गीदड़, आदि जिस ब्राह्मण को काटें वह स्नान वेदों की माता पवित्र गायत्री का जप करे ॥ १ ॥ कुत्ता जिसे काटे वह के सींग के जलस्नान से वा गङ्गादि महानदियों के सङ्गम में स्नान

समुद्रदर्शनाद्वापि शुनादष्टःशुचिर्भवेत् ॥ २ ॥
वेदविद्याव्रतस्नातः शुनादष्टोद्विजोयदि ।
सहिरण्योदकेस्नात्वा घृतंप्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
सव्रतस्तुशुनादष्टस्त्रिरात्रंसमुपोषितः ।
घृतंकुशोदकंपीत्वा व्रतशेषंसमापयेत ॥ ४ ॥
अव्रतःसव्रतोवापि शुनादष्टोभवेद्द्विजः ।
प्रणिपत्यभवेत्पूतो विप्रैश्चानुनिरीक्षितः ॥ ५ ॥
शुनाघ्राताऽवलीढस्य नखैर्विलिखितस्यच ।
अद्भिःप्रक्षालनंप्रोक्तमग्निनाचोपचूलनम् ॥ ६ ॥
ब्राह्मणीतुशुनादष्टा जम्बुकेनवृकेणवा ।
उदितंसोमनक्षत्रं दृष्ट्वासद्यःशुचिर्भवेत् ॥ ७ ॥
कृष्णपक्षेयदासोमो नदृश्येतकदाचन ।
यांदिशंव्रजतेसोमस्तांदिशंचाऽवलोकयेत् ॥ ८ ॥
असद्ब्राह्मणकेग्रामे शुनादष्टोद्विजोत्तमः ।

। समुद्र के दर्शन से शुद्ध होता है ॥ २ ॥ वेद विद्या पढ़े या ब्रह्मचर्य व्रत करके समावर्त्तन स्नान किये गृहस्थ ब्राह्मण को यदि कुत्ता काटे तो वह [सु]वर्ण सहित जल से स्नान कर और घी खाके शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ यदि व्रत [वाले] ब्राह्मण को कुत्ता काटे तो तीन दिन रात उपवास करे फिर घृत और कुशों[के ज]ल को पीकर शेष व्रत को पूरा करदेवे ॥ ४ ॥ व्रत वाले वा विना व्रत [वाले] कैसे ही द्विज को कुत्ता काटे तो ब्राह्मणों को प्रणिपात (नमस्कार) [करे] और तपस्वी ब्राह्मणों के देखनेसे शुद्ध होताहै॥५॥ जो वस्तु कुत्तेने सूंघा, [चा]टा हो, वा नखों से खोदा हो वह जल से धोने और अग्नि में तपाने [से शु]द्ध होताहै ॥६॥ यदि ब्राह्मणी को कुत्ता वा गीदड़ वा भेड़िया काटे तो [उदय हो]ए हुए चन्द्रमा और नक्षत्रों को देख कर शुद्ध होती है ॥७॥ यदि कृष्णपक्ष [में क]भी चन्द्रमा न दीखे तो जिस दिशा को चन्द्रमा उदय हो कर जाता है [उस] दिशा को देख लेवे ॥ ८ ॥ जिस में ब्राह्मण कोई न हो वा ब्रह्मतेज से [हीन] दुराचारी ब्राह्मण रहते हों ऐसे ग्राम में यदि ब्राह्मण को कुत्ता काटे

वृषंप्रदक्षिणोकृत्य सद्यःस्नात्वाशुचिर्भवेत् ॥ ९ ॥
चण्डालेनश्वपाकेन गोभिर्विप्रैर्हतोयदि ।
आहिताग्निर्मृतोविप्रो विषेणात्माहतोयदि ॥ १० ॥
दहेत्तं ब्राह्मणंविप्रो लोकाग्नौमन्त्रवर्जितम् ।
स्पृष्ट्वाचोह्यचदग्ध्वाच सपिण्डेषुचसर्वदा ॥ ११ ॥
प्राजापत्यंचरेत्पश्चाद्विप्राणामनुशासनात् ।
दग्ध्वास्थीनिपुनर्गृह्य क्षीरैःप्रक्षालयेद्द्विजः ॥ १२ ॥
स्वेनाऽग्निनास्वमन्त्रेण पृथगेतत्पुनर्दहेत् ।
आहिताग्निर्द्विजः कश्चित्प्रवसेत्कालचोदितः ॥ १३
देहनाशमनुप्राप्तस्तस्याऽग्निर्वसतेगृहे ।
श्रौताग्निहोत्रसंस्कारः श्रूयतांमुनिपुङ्गवाः ! ॥ १४ ॥
कृष्णाजिनंसमास्तीर्य कुशैस्तुपुरुषाकृतिम् ।
पट्शतानिशतंचैव पलाशानांचवृन्तकम् ॥ १५ ॥

तो शिव जी के वाहन बैल (नन्दी) की प्रदक्षिणा कर शीघ्र स्नान क शुद्ध होता है ॥ ९ ॥ यदि किसी ब्राह्मण को चाण्डाल, श्वपाक (महतर जाति डोम) गौ, वा ब्राह्मण, मारडाले वा विष खा कर स्वयं मरजाय वह आहिताग्नि नाम अग्निहोत्री होय तो ॥ १० ॥ उस ब्राह्मण का लौकि अग्नि से दाह करे । और यदि सपिण्ड के लोग उस का स्पर्श करें, श्मश में ले जांय वा दाह करें तो क्रिया करने पश्चात् सदैव ॥ ११ ॥ ब्राह्मणों आज्ञा से प्राजापत्य व्रत करें और उस के फूंके हुये हाड़ों को फिर बीन द्विज लोग दूधसे धोवें ॥ १२ ॥ फिर अपने अग्नि और अपनी शाखा के मन्त्र से दूसरी जगह विधिपूर्वक उस चाण्डालादि के हाथ से मरे ब्राह्मण के हाड़ का दाह करें। यदि अग्निहोत्री ब्राह्मण परदेश में काल वश ॥ १३ ॥ मरण को प्राप्त हो जाय और अग्नि उस के घर में विद्यमान होय तो हे मुनियो में श्रेष्ठ लोगो ! उस प्रेत का वेदोक्त अन्त्येष्टि संस्कार तुम सुनो ॥ १४ काली मृगछाला बिछाकर कुशाओं से पुरुष का आकार बनावें सातसौ ढाकके पत्ते डंडी सहित इस निम्न लिखित प्रकार से उसमें लगावे ॥ १५ ॥

चत्वारिंशच्छिरेदद्यात्पष्टिंकण्ठेतुविन्यसेत् ।
वाहुभ्यांचशतंदद्यादङ्गुलीषुदशैवतु ॥ १६ ॥
शतंचोरसिसंदद्याच्छतंचैवोदरेन्यसेत् ।
दद्यादष्टौवृपणयोःपञ्चमेढ्रेतुविन्यसेत् ॥ १७ ॥
एकविंशतिमूरुभ्यां जानुजङ्घेचविंशतिम् ।
पादाङ्गुल्योःशतार्द्धंच यज्ञपात्रंततोन्यसेत् ॥ १८ ॥
शम्यांशिश्नेविनिक्षिप्य अरणिंमुष्कयोरपि ।
जूहूंचदक्षिणेहस्ते वामेतूपभृतंन्यसेत् ॥ १९ ॥
कर्णेतूलूखलंदद्यात्पृष्ठे चमुसलंन्यसेत् ।
उरसिक्षिप्यदृषदं तण्डुलाज्यतिलान्मुखे ॥ २० ॥
श्रोत्रेचप्रोक्षणींदद्यादाज्यस्थालींचचक्षुषोः ।
कर्णनेत्रमुखेघ्राणे हिरण्यशकलंन्यसेत् ॥ २१ ॥
अग्निहोत्रोपकरणमशेषंतत्रविन्यसेत् ।
असौस्वर्गायलोकायस्वाहेतिचघृताहुतिम् ॥ २२ ॥

तीस शिर में,साठ पत्ते कंठ में, दोनों भुजाओं में सौ २ पत्ते,और दश २ (पचास) अंगुलियों में लगावे ॥१६॥ सौ पत्ते छाती में, सौ पत्ते उदर में,और आठ दोनों वृषणों (अण्डकोशों) में, और पांच मेढ़ (लिङ्ग) में, रक्खे ॥१७॥ ...स २ पत्ते घोंटू से ऊपर दोनों जाघों में,घोंटू से नीचे गोड़ों में वीश २ पत्ते, ...र पगों की अङ्गुलियों में पचाश पत्ते रक्खे। फिर यज्ञ के पात्रों का विनि-...ग निम्न लिखित रीति से करे ॥१८॥ शम्या नामक यज्ञ पात्र को लिंग पर, ...णी को अंडकोशों पर, दहिने हाथ पर जुहू को, वांयें हाथ में उपभृत् को ...खै ॥ १९ ॥ दहिने कान पर ऊखल को, पीठ पर मूसल को रक्खे, छाती पर ...दृ (हविष्पीषने की शिल) तंडुल, घी, और तिल मुख पर रक्खे ...२० ॥ कान पर प्रोक्षणी पात्र, नेत्रों में आज्य स्थाली को रक्खै, कान, नेत्र, ...ख, नाक, इन के छिद्रों में सुवर्ण के टुकड़े डाले ॥ २१ ॥ और अग्निहोत्र के ...र बचे सब औजार यहां चितापर रखदे फिर (असौस्वर्गाय लोकाय स्वाहा) ...। मंत्र से घृत की एक आहुति छोड़े ॥२२॥

दद्यात्पुत्रोऽथवाभ्राताप्यन्योवापिचबान्धवः।
यथादहनसंस्कारस्तथाकार्यंविचक्षणैः ॥ २३ ॥
ईदृशंतुविधिंकुर्याद्ब्रह्मलोकगतिःस्मृता।
दहन्तियेद्विजास्तंतु तेयान्तिपरमांगतिम् ॥ २४
अन्यथाकुर्वतेकर्म त्वात्मबुद्धिप्रचोदिताः।
भवन्त्यल्पायुपस्तेवै पतन्तिनरकेऽशुचौ ॥२५॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि प्राणिहत्यासुनिष्कृतिम्।
पराशरेणपूर्वोक्तां मन्वर्थेपिचविस्तृताम् ॥ १ ॥
क्रौंचसारसहंसांश्च चक्रवाकंचकुक्कुटम्।
जालपादंचशरभं हत्वाऽहोरात्रतःशुचिः ॥ २ ॥
बलाकाटिट्टिभौवापि शुकपारावतावपि।
अटीनवकघातीचशुद्ध्यतेनक्तभोजनात् ॥ ३ ॥
वृककाककपोतानां सारीतित्तिरिघातकः।

पुत्र, भाई,अथवा अन्य कोई बांधव इस आहुति को देवे। फिर जै
से दाह करते हैं वैसे ही विद्वान् लोग सब कर्म करैं ॥ २३ ॥ जिस म
ऐसे पूर्वोक्त विधान से दाह कर्म किया जाय उस को ब्रह्मलोक प्राप्त ह
और जो ब्राह्मणादि द्विज उस अग्निहोत्री का दाह करते हैं वे भी
गति को प्राप्त होते हैं ॥२४॥ जो लोग अपनी बुद्धि से अन्यथा शास्त्र
कर्म करते हैं वे अल्प अवस्था वाले होते हैं और अशुद्ध नरक में पड़ते ह

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूराहुआ

यहां से प्राणियों की हत्याओं का प्रायश्चित्त कहतेहैं। जो प्रथममहर्षि प
ने कहा और जिसे मनु जी ने भी विस्तार से कहाहै ॥१॥ क्रौंच, सारस,हं
कवा,मुरगा,जालपाद,शरभ (एक प्रकारका मृग) इनको मारकर एक दिन
व्रत करने से शुद्ध होता है ॥२॥ बलाका, टिट्टिभ, तोता, कबूतर, अटी
(जो बगला उड़ता फिरे) इन के मारने पर दिन भर व्रत कर रात्रि को भ
करने से शुद्ध होताहै ॥ ३ ॥ भेड़िया, कौआ, कपोत, सारी (पक्षिभेद)

अन्तर्जलउभेसंध्ये प्राणायामेनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥
गृध्रश्येनशशादीनामुलूकस्यचघातकः ।
अपक्वाशीदिनंतिष्ठे त्त्रिकालंमारुताशनः ॥ ५ ॥
वल्गुणीचटकानांच कोकिलाखञ्जरीटकान् ।
लावकान्रक्तपादांश्च शुद्ध्यतेनक्तभोजनात् ॥ ६ ॥
कारण्डवचकोराणां पिङ्गलाकुररस्यच ।
भारद्वाजादिकंहत्वा शिवंसंपूज्यशुद्ध्यति ॥ ७ ॥
भेरुण्डचापभासांश्च पारावतकपिञ्जलौ ।
पक्षिणांचैवसर्वेषामहोरात्रमभोजनम् ॥ ८ ॥
हत्वामूषकमार्जारसर्पाऽजगरडुण्डुभान् ।
कृसरंभोजयेद्विप्रान्लोहदण्डंचदक्षिणाम् ॥ ९ ॥
शिशुमारंतथागोधां हत्वाकूर्मंचशल्लकम् ।
वृन्ताकफलभक्षीवाऽप्यहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ १० ॥
वृकजम्बुकऋक्षाणां तरक्षूणांचघातकः ।

इन को जो मारे वह दोनों संध्या (प्रातःकाल और सायंकाल) ओं में
के भीतर प्राणायाम करने से शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ गीध, बाज, खरहा,
उल्लू इन को जो मारे वह दिनभर पका अन्न न खावे किन्तु तीनों
वायु भक्षण करता हुआ खड़ा रहे ॥५॥ वल्गुणी, चटका, कोइल, खंजरीट,
मन) लावक (लवा) रक्तपग वाले इन को मार कर दिन को
व्रत तथा रात को भोजन करने से शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ कारंडव (हंस
ई) चकोर, पिंगला, (छोटा उल्लू) कुरर (कुररी) भारद्वाज (व्याघ्राट)
 को मार कर शिव जी का पूजन करने से शुद्ध होता है ॥ ७ ॥ भेरुन्ड
) पपीहा, भास, पारावत, कपिंजल, और अन्य सब पक्षियों को मार
एक दिन रात भोजन न करे ॥ ८ ॥ मूसा, बिलाव, सांप, अजगर, डुंडुभ,
मारने वाला ब्राह्मणों को खिचड़ी जिमाकर लोहे का डंडा दक्षिणा में देवे
॥ शिशुमार, गोह, कछुआ, सेही, इनको जो मारे वह और जो बैंगन
वह एक दिन रात व्रत उपवास करने से शुद्ध होता है ॥ १० ॥ भेड़िया,
ड़, रीछ, तरक्षु (चीता) इन को जो मारे वह ब्राह्मण को एक सेर भर तिल

तिलप्रस्थंद्विजेदद्याद्वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥ ११ ॥
गजस्यचतुरङ्गस्य महिषोष्ट्रनिपातने ।
प्रायश्चित्तमहोरात्रं त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ १२ ॥
कुरङ्गंवानरंसिंहं चित्रंव्याघ्रञ्चघातयेत् ।
शुद्ध्यतेसत्रिरात्रेण विप्राणांतर्पणेनच ॥ १३ ॥
मृगरोहिद्वराहाणामवेर्वस्तस्यघातकः ।
अफालकृष्टमश्नीयादहोरात्रमुपोष्यसः ॥ १४ ॥
एवंचतुष्पदानांच सर्वेषांवनचारिणाम् ।
अहोरात्रोषितस्तिष्ठेज्जपन्वैजातवेदसम् ॥ १५
शिल्पिनंकारुकंशूद्रं स्त्रियंवायस्तुघातयेत् ।
प्राजापत्यद्वयंकृत्वा वृषैकादशदक्षिणा ॥ १६ ॥
वैश्यंवाक्षत्रियंवापि निर्दोषंयोऽभिघातयेत् ।
सोऽतिकृच्छ्रद्वयंकुर्याद्द गोविंशंदक्षिणांददेत् ॥
वैश्यंशूद्रंक्रियासक्तं विकर्मस्थंद्विजोत्तमम् ।

देवे और तीन दिन वायु मात्र का भक्षण करे अर्थात् उपवास
हाथी, घोड़ा, भैंसा, ऊंट, इन को जो मारे वह एक दिन रात
और त्रिकाल स्नान करे ॥ १२ ॥ कुरंग मृग, वानर, सिंह, चीता, व
जो मारै वह तीन दिन रात व्रत करने और ब्राह्मणों को भोजन
शुद्ध होता है ॥ १३॥ हरिण, लालमृग, सूकर, भेड़, बकरा, इनको जो
एक दिन रात उपवास करके उस अन्न को खाय जो विना जोते
हो ॥ १४ ॥ इसी प्रकार सब चौपाये और सब वन के विचरने वा
को मार कर जातवेदस अग्नि के मंत्र का जप करता हुआ एक दिन
रह के उपवास करे॥१५॥ शिल्पी, कारीगर, शूद्र, और स्त्री इनको जो
वह दो प्राजापत्य करके दश गौ ग्यारहवां बैल दक्षिणा में देवे ॥१६
वैश्य वा क्षत्रिय को जो मार डाले वह दो अतिकृच्छ्र व्रत करे
गौ दक्षिणा में देवे ॥१७॥ शुभ कर्म में तत्पर वैश्य या शूद्र को और
कर्म करने वाले ब्राह्मण को जो मार डाले वह चांद्रायण व्रत करे

...नियसंहिता ॥

हत्वाचान्द्रायणंकुर्यात् त्रिंशद्गाश्चैवदक्षिणा ॥ १८ ॥
चाण्डालंहतवान्कश्चिद् ब्राह्मणोयदिकञ्चन ।
प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं गोद्वयंदक्षिणांददेत् ॥ १९ ॥
क्षत्रियेणापिवैश्येन शूद्रेणैवेतरेणच ।
चाण्डालेवधसंप्राप्ते कृच्छ्रार्द्धेनविशुद्ध्यति ॥२०॥
चौरःश्वपाकश्चाण्डालो विप्रेणाभिहतोयदि ।
अहोरात्रोपितःस्नात्वा पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ २१ ॥
श्वपाकंचापिचाण्डालं विप्रःसंभाषतेयदि ।
द्विजैःसंभाषणंकुर्यात्सावित्रींसकृज्जपेत् ॥ २२॥
चाण्डालैःसहसुप्तंतु त्रिरात्रमुपवासयेत् ।
चाण्डालैकपथंगत्वा गायत्रीस्मरणाच्छुचिः ॥ २३ ॥
चाण्डालदर्शनेसद्य आदित्यमवलोकयेत् ।
चाण्डालस्पर्शनेचैव सचैलंस्नानमाचरेत् ॥ २४ ॥
चाण्डालखातवापीषु पीत्वासलिलमग्रजः ।
अज्ञानाच्चैकनक्तेन त्वहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ २५ ॥
चाण्डालभाण्डसंस्पृष्टं पीत्वाकूपगतंजलम् ।

...णा में देवे ॥ १८ ॥ यदि कोई ब्राह्मण किसी चाण्डाल को मार डाले ...प्राजापत्य व्रत करै और दो गौ दक्षिणा में देवे ॥ १९ ॥ ...य वा शूद्र वा अन्य कोई वर्णसंकर ये चाण्डाल को मार डालें तो आधा ...करने से शुद्ध होते हैं ॥ २० ॥ यदि कोई ब्राह्मण, चौर श्वपाक, चां- ...को मार डाले तो एक दिन रात उपवास पूर्वक स्नान करके पञ्च- ...से शुद्ध होता है ॥ २१ ॥ यदि श्वपाक और चाण्डाल इन के संग ...षण करे तो ब्राह्मणों के साथ संभाषण करके एक बार गायत्री ...जो ब्राह्मण चाण्डाल के संग सोवे तो तीन दिन उपवास करने ...ल के संग एक मार्ग में चले तो गायत्री के स्मरण से शुद्ध होता ...ण्डाल का दर्शन करे तो शीघ्र ही सूर्य का दर्शन करै और चांडा... ...रे तो सचैल स्नान करे ॥ २४ ॥ चाण्डाल की खोदी बावड़ी वा ...न से ब्राह्मण जल पीवे तो एक रात भर और जान कर पीवे तो ...व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २५ ॥ जिस कूप में चाण्डाल के

गोमूत्रयावकाहारस्त्रिरात्राच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥ २

चाण्डालघटसंस्थंतु यत्तोयंपिबतिद्विजः ।
तत्क्षणात्क्षिपतेयस्तु प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २

यदिनक्षिपतेतोयं शरीरेयस्यजीर्यति ।
प्राजापत्यंनदातव्यं कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ॥ २८ ॥

चरेत्सांतपनंविप्रः प्राजापत्यंतुक्षत्रियः ।
तदर्धंतुचरेद्वैश्यः पादंशूद्रस्यदापयेत् ॥ २९ ॥

भाण्डस्थमन्त्यजानांतु जलंदधिपयःपिबेत् ।
ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यः शूद्रश्चैवप्रमादतः ॥ ३० ॥

ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनांतुनिष्कृतिः ।
शूद्रस्यचोपवासेन तथादानेनशक्तितः ॥ ३१ ॥

भुङ्क्तेऽज्ञानाद्द्विजश्रेष्ठः चाण्डालान्नंकथंचन ।
गोमूत्रयावकाहारो दशरात्रेणशुद्ध्यति ॥ ३२ ॥

एकैकंग्रासमश्नीयाद् गोमूत्रयावकस्यच ।
दशाहंनियमस्थस्य व्रतंतत्तुविनिर्दिशेत् ॥ ३३ ॥

वर्त्तन का स्पर्श हुआ हो उस कुए का जल पिया होतो गोमूत्र औ
को खाकर एक दिन रात व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ यदि
के घट का जल ब्राह्मण पीलेवे और उस जल को उसी क्षण में वम
तो एक प्राजापत्य व्रत करे ॥ २७ ॥ यदि वमन न करदे और उस
पचाजाय तो प्राजापत्य न करै किन्तु सांतपन कृच्छ्र व्रत करे ॥ २८ ॥
कृच्छ्र सांतपन व्रत,क्षत्रिय प्राजापत्य, वैश्य आधाप्राजापत्य और शूद्र
प्राजापत्य व्रत करे ॥ २९ ॥ यदि अन्त्यजों के पात्र में रक्खा जल, दह
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वा शूद्र भूल कर के पी लेवें तो ॥ ३० ॥ ब्रह्मकू
वास से द्विजातियों की और एक उपवास तथा यथाशक्ति किये दान
की शुद्धि होती है ॥ ३१ ॥ यदि किसी प्रकार अज्ञान से ब्राह्मण चां
अन्न को खालेवे तो गोमूत्र और कुलत्थ को खाकर दश दिन में शुद्ध
है ॥ ३२ ॥ और गोमूत्र में कुलत्थ को दश दिन तक एक २ ग्रास
और नियम से रहे यही व्रत ,उस ब्राह्मण के लिये बताना चाहिये।

अविज्ञातस्तुचाण्डालो यत्रवेश्मनितिष्ठति ।
विज्ञातउपसंन्यस्य द्विजाःकुर्युरनुग्रहम् ॥३४॥
मुनिवक्त्रोद्गतान्धर्मान् गायन्तोवेदपारगाः ।
पतन्तमुद्धरेयुस्ते धर्मज्ञाःपापसंकटात् ॥ ३५ ॥
दध्नाचसर्पिपाचैव क्षीरगोमूत्रयावकम् ।
भुञ्जीतसहभृत्यैश्च त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ ३६ ॥
त्र्यहंभुञ्जीतदध्नाच त्र्यहंभुञ्जीतसर्पिषा।
त्र्यहंक्षीरेणभुञ्जीत एकैकेनदिनत्रयम् ॥३७ ॥
भावदुष्टंनभुञ्जीत नोच्छिष्टंकृमिदूषितम् ।
दधिक्षीरस्यत्रिपलं पलमेकंघृतस्यतु ॥ ३८ ॥
भस्मनातुभवेच्छुद्धिरुभयोःकांस्यताम्रयोः ।
जलशौचेनवस्त्राणां परित्यागेनमृन्मयम् ॥ ३९ ॥

: बिना जाने कोई चांडाल द्विजों के घर में ठहरे तो जान लेने पर उसे
ास कर द्विज ब्राह्मण लोग उस ब्राह्मण पर दया कर उसे शुद्ध करें ॥३४॥
ापों के मुख से निकले धर्मों को गाते हुये वेद के पार पहुंचे हुए धर्म के
ा विद्वान् लोग पतित हुए उस ब्राह्मण को प्रायश्चित्त कराके पाप
ट से उद्धार करें ॥ ३५ ॥ वह ब्राह्मण जिस के घर में अज्ञात चाण्डाल
ा कुल के रहा हो दही, घी, दूध, गोमूत्र,और कुलत्थ इन को भृत्यों और
पुत्रादि के सङ्ग निम्न प्रकार से खावे और त्रिकाल स्नान करे ॥ ३६ ॥
ा दिन दही से, तीन दिन घी से,और तीन दिन दूध से (यावक) नाम
माष-(कुलथी) खावे और तीन दिन एक २ दही आदि खावे ॥ ३७ ॥
ष में कोई दोषारोपण हो गया हो या दूषित होने की शंका हो गयी हो,
किसी का झूठा हो, जिस में कृमि पड़ गये हों,उसे न खावे । दही और
ऊपर कहे व्रत में तीन २ पल (अर्थात् चार तोला का एक पल होता
। १२ तोले के तीन पल हुए) और घी एक पल खावे ॥ ३८ ॥ जिस के
: में चाण्डाल रह चुका हो उस घर के कांसे और तांबे के पात्रों की शुद्धि
म से, जलमें धोने से वस्त्रों की शुद्धि होती और मट्टी के पात्र अशुद्ध हों
: त्याग देने चाहिये ॥ ३९ ॥

कुसुम्भगुडकार्पासलवणंतैलसर्पिषी ।
द्वारेकृत्वातुधान्यानि दद्याद्वेश्मनिपावकम् ॥
एवंशुद्धस्ततःपश्चात्कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ।
त्रिंशतंगावृषंचैकं दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४१ ॥
पुनर्लेपनखातेन होमजाप्येनशुद्ध्यति ।
आधारेणचविप्राणां भूमिदोषोनविद्यते ॥ ४२ ।
चाण्डालैःसहसंपर्कं मासंमासार्द्धमेववा ।
गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धेनविशुद्ध्यति ॥ ४३ ।
रजकीचर्मकारीच लुब्धकीवेणुजीविनी ।
चातुर्वर्ण्यस्यतुगृहे त्वविज्ञातानुतिष्ठति ॥ ४४ ॥
ज्ञात्वातुनिष्कृतिंकुर्यात् पूर्वोक्तस्यार्द्धमेवतु ।
गृहदाहंनकुर्वीत शेषंसर्वंचकारयेत् ॥ ४५ ॥
गृहस्याभ्यन्तरंगच्छेच्चाण्डालोयदिकस्यचित् ।
तमागाराद्विनिःसार्य मृद्भाण्डंतुविसर्जयेत् ॥ ४६ ॥
रसपूर्णंतुमृद्भाण्डं नत्यजेत्तुकदाचन ।

फिर घर के द्वारपर कुसुम, गुड़, कपास, लवण, तेल, घी अन्न निकाल कर घर में अग्नि लगा देवे ॥ ४० ॥ इस प्रकार शुद्ध हो ब्राह्मणों को भोजन कराके तृप्त करै और तीस गौ एक बैल ब्राह्मणों को देवे ॥ ४१ ॥ दुवारा लीपना, खोदना, होम, जप, और ब्राह्मणों के पृथ्वी शुद्ध होती है फिर उस भूमि में कुछ दोष नहीं रहता ॥ ४२ चांडालों के संग एक महीना वा पन्द्रह दिन संसर्ग रहे तो पन्द्र दिन तक गोमूत्र और कुलथी खाकर शुद्ध होता है ॥ ४३॥ रजकी (धो चमारी, व्याधनी, बांस के पात्र बना के जीवि का करने वाले की स्त्री अज्ञान से चारों वर्णों के घर में निवास करें तो ॥ ४४॥ जानने पीछे का आधा प्रायश्चित्त करै घर को जलावे नहीं और सब कृत्य आधा करे यदि किसी के घर के भीतर चांडाल चला जाय तो उस को घर से दूर निकाल कर मिट्टी के पात्रों को फेंक देवे ॥ ४६ ॥ परंतु रस से भरे

गोमयेनतुसंमिश्रैर्जलैःप्रोक्षेद्गृहंतथा ॥ ४७ ॥
ब्राह्मणस्यव्रणद्वारे पूयशोणितसंभवे ।
कृमिरुत्पद्यतेयस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ ४८ ॥
गवांमूत्रपुरीषेण दध्नाक्षीरेणसर्पिषा ।
त्र्यहंस्नात्वाचपीत्वाच कृमिदष्टःशुचिर्भवेत् ॥ ४९ ॥
क्षत्रियोऽपिसुवर्णस्य पञ्चमाषान्प्रदायतु ।
गोदक्षिणांतुवैश्यस्याप्युपवासंविनिर्दिशेत् ॥ ५० ॥
शूद्राणांनोपवासः स्याच्छूद्रोदानेनशुद्ध्यति ।
ब्राह्मणांस्तुनमस्कृत्य पञ्चगव्येनशुध्यति ॥ ५१ ॥
अच्छिद्रमितियद्वाक्यं वदन्तिक्षितिदेवताः ।
प्रणम्यशिरसाग्राह्यमग्निष्टोमफलंहितत् ॥ ५२ ॥
जपच्छिद्रं तपश्छिद्रं यच्छिद्रंयज्ञकर्मणि ।
सर्वंभवतिनिश्छिद्रं ब्राह्मणैरुपपादितम् ॥ ५३ ॥
व्याधिव्यसनिनिश्रान्ते दुर्भिक्षेडामरेतथा ।

पात्रों को कदापि न त्यागे और गोबर मिले जल से घर को लीपे वा छिड़
॥ ४७ ॥ राध (पीव) और रुधिर से भरे ब्राह्मण के घाव में यदि कृमि
कीड़े) पड़ जांय तो प्रायश्चित्त कैसे हो सो कहते हैं ॥ ४८ ॥ गोमूत्र, गोबर
गोदही गोदूध गोघृत इन को मिला कर तीन दिन स्नान और इन
को तीन दिन पीकर वह कीड़ों का काटा हुआ पुरुष शुद्ध होता है ॥ ४९ ॥
क्षत्रिय भी पांच मासे सुवर्ण का दान देवे । वैश्य एक गौ की दक्षिणा देवे इसं
उपवास से वह शुद्ध होता है ॥ ५० ॥ शूद्रों को उपवास का निषेध है इस
शूद्र दान से शुद्ध होता है । शूद्र दान देने पश्चात् ब्राह्मणों को प्रणाम क
और पञ्चगव्य का प्राशन करने से शुद्ध होता है ॥ ५१ ॥ जिस काम को ब्राह्म
ण लोग (अच्छिद्रमस्तु) ऐसा कह देवें । उस वाक्य को सब लोग शि
रोधार्य मानकर ग्रहण करें क्योंकि उससे अग्निष्टोम यज्ञ का फल होता है ॥ ५२
जप का छिद्र तप का छिद्र और यज्ञ कर्म का छिद्र नाम जो कुछ त्रुटि है । ब्रा
ह्मणों के कहने से वह सब छिद्र रहित हो जाता है ॥ ५३ ॥ यदि शूद्र मनुष
व्याधियों से पीड़ित दुःखित हो, वा दुर्भिक्ष से पीड़ित हो, वा लूट खसो

चाण्डालेनशुनादृष्टं भोजनंपरिवर्जयेत् ॥६७॥
पक्वान्नंप्रतिपिद्धंस्यादन्नशुद्धिस्तथैवच ।
यथापराशरेणोक्तं तथैवाहंवदामिवः ॥ ६८ ॥
मितंद्रोणाढकस्यान्नं काकश्वानोपघातितम् ।
केनेदंशुद्ध्यतेचेति ब्राह्मणेभ्योनिवेदयेत् ॥ ६९
काकश्वानावलीढंतु द्रोणान्नंनपरित्यजेत् ।
वेदवेदाङ्गविद्विप्रैर्धर्मशास्त्रानुपालकैः ॥ ७० ॥
प्रस्थाद्वात्रिंशतिर्द्रोणः स्मृतोद्विप्रस्थआढकः ।
ततोद्रोणाऽढकस्यान्नं श्रुतिस्मृतिविदोविदुः ॥
काकश्वानावलीढंतु गवाघ्रातंखरेणवा ।
स्वल्पमन्नंत्यजेद्विप्रः शुद्धिर्द्रोणाढकेभवेत् ॥ ७२
अन्नस्योद्धृत्यतन्मात्रं यच्चलालाहतंभवेत् ।
सुवर्णोदकमभ्युक्ष्य हुताशेनैवतापयेत् ॥ ७३ ॥
हुताशनेनसंस्पृष्टं सुवर्णसलिलेनच ।

भोजन न करे । कुत्ते और चांडाल के देखे हुये भोजन को त्याग देवे॥
या हुआ कोई अन्न निषिद्ध है वा किसी अन्न की शुद्धि हो सकती
जो कहते हैं कि इस उक्त विषय में महर्षि पराशर ने जैसा विचार
हम कहतेहैं ॥६८॥ द्रोण वा आढक भर पकाये अन्न को यदि कौआ
विगाड़ देवे तो यह अन्न कैसे शुद्ध हो ऐसा ब्राह्मणों से कहे ॥६९॥
धर्मशास्त्र की मर्यादा के रक्षक और वेद वेदाङ्ग के जानने वाले ब्राह
यह आज्ञा देवें कि काक वा कुत्ते ने विगाड़े द्रोण भर अन्न को
॥ ७० ॥ बत्तीस प्रस्थ (अंजली) का एक द्रोण और दो प्रस्थ का ए
कहाता है । तिस से श्रुति स्मृति के ज्ञाता विद्वान् लोग द्रोणान्न तथ
कान्न को शुद्ध मानते हैं ॥ ७१ ॥ यदि कौआ वा कुत्ता ने चाटा और
गधे ने सूंघा थोड़ा अन्न हो तो त्याग देवे और यह पकाया अन्न
आढक भर होतो उस की शुद्धि हो सकती है ॥ ७२ ॥ जितने अन्न
आदि का मुख लगा हो उतना निकाल देने बाद सुवर्ण के जल से छि
अग्नि से तपावे तब शुद्ध हो जाता है ॥ ७३ ॥ क्योंकि जिस अन्न में

विप्राणांब्रह्मघोषेण भोज्यंभवतितत्क्षणात् ॥ ७४ ॥
स्नेहोवागोरसोवाऽपि तत्रशुद्धिःकथंभवेत् ।
अल्पंपरित्यजेत्तत्र स्नेहस्योत्पवनेनच ॥
अनलज्वालयाशुद्धिर्गोरसस्यविधीयते ॥ ७५ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथातोद्रव्यशुद्धिस्तु पराशरवचोयथा ।
दारवाणांतुपात्राणां तत्क्षणाच्छुद्धिरिष्यते ॥ १ ॥
मार्जनाद्यज्ञपात्राणां पाणिनायज्ञकर्मणि ।
चमसानांग्रहाणांच शुद्धिःप्रक्षालनेनच ॥ २ ॥
चरूणांस्रुक्स्रुवाणांच शुद्धिरुष्णेनवारिणा ।
भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं ताम्रमम्लेनशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
रजसाशुद्ध्यतेनारी विकलंयानगच्छति ।
नदीवेगेनशुद्ध्येत लेपोयदिनदृश्यते ॥ ४ ॥

यों के जल का स्पर्श होता है उससे तथा ब्राह्मणों के वेद पाठ की यह अन्न उसी समय खाने योग्य शुद्ध हो जाता है ॥ ७४ ॥ यदि ी आदि) हो या गोरस (दूध आदि) होय तो उस की शुद्धि कैसे में से थोड़ा सा निकाल देवे और घी आदि स्नेह को छान लेवे को अग्नि की ज्वाला से तपा लेने से शुद्धि कही है ॥ ७५॥

ाशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥६॥

अब महर्षि पराशर भगवान् के वचनानुसार द्रव्य की शुद्धि कहते हैं। ात्रों की तो उसी समय शुद्धि करनी इष्ट है ॥ १ ॥ यज्ञ कर्म में यज्ञ की शुद्धि हाथ से मांजने से होती सोम याग के चमस और सोम शुद्धि जल में धोने से होती है ॥ २ ॥ चरुस्थाली, स्रुक्, स्रुवा, इन की उष्णजल से, कांसे के पात्र की भस्म से और तांबे के पात्र की मांजने पर शुद्धि होती है ॥ ३ ॥ यदि स्त्री ने पर पुरुष से व्यभिचार ो किन्तु केवल मन से चलायमान हुई हो तो वह रजोदर्शन (मा- होने) ही से शुद्ध होजाती है और यदि नदी में कहीं अधिक न- लग्न न हो तो उस की साधारण अशुद्धि प्रवाह के वेग से शुद्ध हो ॥ ४ ॥

रोगेणयद्रजःस्त्रीणामन्वहंतुप्रवर्त्तते।
नाऽशुचिःसाततस्तेन तत्स्याद्वैकारिकंमतम् ॥१८॥
साध्वाचारानतावत्स्याद्रजोयावत्प्रवर्त्तते।
रजोनिवृत्तौगम्यास्त्री गृहकर्म्मणिचैवहि ॥१९॥
प्रथमेऽहनिचाण्डाली द्वितीयेब्रह्मघातिनी।
तृतीयेरजकीप्रोक्ता चतुर्थेऽहनिशुद्ध्यति ॥२०॥
आतुरेस्नानउत्पन्ने दशकृत्वोह्यनातुरः।
स्नात्वास्नात्वास्पृशेदेनं ततःशुद्ध्येत्सआतुरः ॥२१॥
उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः शुनाशूद्रेणवाद्विजः।
उपोष्यरजनीमेकां पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥२२॥
अनुच्छिष्टेनशूद्रेण स्पर्शेस्नानंविधीयते।
तेनोच्छिष्टेनसंस्पृष्टः प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥२३॥

होती है वह रज के निवृत्त होने पर देवता तथा पितृआदि में अपने पति के साथ संमिलित हो सकती है ॥१७॥ जो रोग के का दिन स्त्रियों के रजोधर्म होता है उस रज से वह स्त्री अशुद्ध नहीं वह विकार जन्य माना गया है ॥ १८ ॥ जबतक रजोदर्शन रहता क शुद्ध आचरण न करे रज की निवृत्ति होने पर ही स्त्री गृहस्थीके संग करने योग्य होती है ॥१९॥ पहिले दिन चांडाली के तुल्य दि दिन ब्रह्महत्यारी के तुल्य, तीसरे दिन रजकी (धोबिन) के तुल्य नना और चौथे दिन शुद्ध होती है ॥ २० ॥ यदि रोगी को स्नान पड़े तो नीरोग मनुष्य दशवार स्नान कर २ उस रोगी का स्पर्श इ स्नान कियेके तुल्यशुद्ध होजाताहै॥२१॥यदि ब्राह्मण जूठन खाते हुए का स्पर्शकरले तो एक दिन रात उपवास करके पञ्चगव्य पीने से शुद्ध जो उच्छिष्ट नहो ऐसा शूद्र ब्राह्मण का स्पर्श कर लेवे तो स्ना दपि उच्छिष्ट शूद्र स्पर्श करले तो प्राजापत्य व्रत करे ॥ २३

भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यं सुरयायन्नलिप्यते ।
सुरामात्रेणसंस्पृष्टं शुद्ध्यतेऽग्न्युपलेखनैः ॥ २४ ॥
गवाघ्रातानिकांस्यानि श्वकाकोपहतानिच ।
शुद्ध्यन्तिदशभिःक्षारैः शूद्रोच्छिष्टानियानिच ॥ २५
गण्डूषंपादशौचंच्च कृत्वावैकांस्यभाजने ।
षण्मासान्भुविनिक्षिप्य उद्धृत्यपुनराहरेत् ॥ २६ ॥
आयसेष्वपसारेण सीसस्याग्नौविशोधनम् ।
दन्तमस्थितथाशृङ्गं रौप्यंसौवर्णभाजनम् ॥ २७ ॥
मणिपाषाणशंखाश्च एतान्प्रक्षालयेज्जलैः ।
पाषाणेतुपुनर्घर्ष एषाशुद्धिरुदाहृता ॥ २८ ॥
अद्भिस्तुप्रोक्षणंशौचं बहूनांधान्यवाससाम् ।
प्रक्षालनेनत्वल्पानामद्भिःशौचंविधीयते ॥ २९ ॥
मृद्भाण्डदहनाच्छुद्धिर्धान्यानांमार्जनादपि ।
वेणुवल्कलचीराणां क्षौमकार्पासवाससाम् ॥

रा का संसर्ग न हुआ हो ऐसा कांसे का पात्र भस्म से, और जिस में मदि-
लग गई हो वह अग्नि में तपाने से, और घिसने छीलने से, शुद्ध होता है
४ ॥ गौ के सूंघे, कुत्ता और कौआ के छूए, और शूद्र ने जिन में खाया हो
कांसे के पात्र दश खारी वस्तु लगाने से शुद्ध होते हैं ॥ २५ ॥ कांसे के
में कुरला करे या पग धोवे तो उसे छः महीने तक पृथ्वी में गाड़ रक्खे
निकाले तब भोजनादि के योग्य शुद्ध होता है ॥२६॥ लोहे के पात्र स्था-
नतर में कर देने ही से शुद्ध हो जाते हैं । और सीसे के पात्रों की शुद्धि
में तपाने से होती है । दांत, हड्डी सींग, और चांदी सोने के पात्र
, पत्थर-और शंख इनको जल से धोके शुद्ध करे परन्तु पत्थर के पात्र॥२७॥
फिर से घिसे तब शुद्ध होता है॥२८॥ बहुत से धान्य की राशि तथा बहुत से
किसी कारण अशुद्ध हो जांय तो कुशों द्वारा जल छिड़कने से, तथा थोड़े वस्त्र
धान्य हों तो जल में धोने से शुद्ध होते हैं॥२९॥ मिट्टी के पात्र को अग्नि में फिर
पकाने पर, अन्नों को मार्जन (जल सेचन) से, बांस, बक्कल, चीर (छिथड़ा

स्त्रियोवृद्धाश्चबालाश्च नदुष्यन्तिकदाचन ॥ ३७ ॥
क्षुतेनिष्ठीवनेचैव दन्तोच्छिष्टेतथाऽनृते ।
पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ ३८ ॥
अग्निरापश्चवेदाश्च सोमसूर्यानिलास्तथा ।
एतेसर्वेऽपिविप्राणां श्रोत्रेतिष्ठन्तिदक्षिणे ॥ ३९ ॥
प्रभासादीनितीर्थानि गङ्गाद्याःसरितस्तथा ।
विप्रस्यदक्षिणेकर्णे सान्निध्यंमनुरब्रवीत् ॥ ४० ॥
देशभङ्गेप्रवासेवा व्याधिषुव्यसनेष्वपि ।
रक्षेदेवस्वदेहादि पश्चाद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ४१ ॥
येनकेनचधर्मेण मृदुनादारुणेनवा ।
उद्धरेद्दीनमात्मानं समर्थोधर्ममाचरेत् ॥ ४२ ॥
आपत्कालेतुसम्प्राप्ते शौचाऽऽचारंनचिन्तयेत् ।
शुद्धिंसमुद्धरेत्पश्चात्स्वस्थोधर्मंसमाचरेत् ॥ ४३ ॥
इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥
गवांबन्धनयोक्त्रेतु भवेन्मृत्युरकामतः ।

से बड़ी हुई धूलि, (रजस्वला होने से भिन्न) स्त्रियां, बालक, वृद्ध, ये स्नानादि बिना भी कभी दूषित नहीं होते ॥ ३७ ॥ छींकने, थूकने, दांतों में जूठन लगने, झूठ बोलने, और पतितों के संग बोलने पर दहिने कान का स्पर्श ॥ ३८ ॥ अग्नि, जल, वेद, चन्द्रमा, सूर्य, और वायु, ये सब देवता ब्राह्मण दहिने कान में निवास करते हैं ॥ ३९ ॥ प्रभासक्षेत्र आदि तीर्थ और गंगा दि नदी, ये सब ब्राह्मण के दहिने कान में वास करते हैं यह मनु जी ने है ॥ ४० ॥ देश में गदर होने, परदेश गमन, रोग, तथा व्यसन विपत्तियों समय में अपने शरीरादि की रक्षा करे और पीछे स्वस्थ दशा होने पर धर्म आचार विचार कर लेवे ॥ ४१ ॥ कोमल वा कठोर जिस किसी धर्म से अपना समर्थ दीन दशा का उद्धार करे और समर्थ होजाने पर फिर धर्म करे ॥ ४२ ॥ आपत्काल आ जाने पर शौच तथा आचार के बिगड़ने की चिन्ता न करे। के स्वस्थ दशा प्राप्त होने पर शुद्धि और धर्म का आचरण कर लेवे ॥ ४३ ॥ इस पाराशरीय धर्म शास्त्र के भाषानुवाद में सातवां अध्याय पूरा हुआ ॥

यदि अज्ञान से बांधने वा जोड़ने से गौओं की मृत्यु हो जाय तो

अकामकृतपापस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ १ ॥
वेदवेदाङ्गविदुषां धर्मशास्त्रंविजानताम्।
स्वकर्मरतविप्राणां स्वकंपापंनिवेदयेत् ॥ २ ॥
अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि उपस्थानस्यलक्षणम्।
उपस्थितोहिन्यायेन व्रतादेशनमर्हति ॥ ३ ॥
सद्योनिःसंशयेपापे नभुञ्जीतानुपस्थितः।
भुञ्जानोवर्द्धयेत्पापं पर्षद्यत्रनविद्यते ॥ ४ ॥
संशयेतुनभोक्तव्यं यावत्कार्यविनिश्चयः।
प्रमादस्तुनकर्त्तव्यो यथैवासंशयस्तथा ॥ ५ ॥
कृत्वापापंनगूहेत गूह्यमानंविवर्द्धते।
स्वल्पंवाथप्रभूतंवा धर्मविद्भ्योनिवेदयेत् ॥ ६ ॥
तेहिपापकृतांवैद्या हन्तारश्चैवपाप्मनाम्।
व्याधितस्ययथावैद्या बुद्धिमन्तोरुजापहाः ॥ ७ ॥
प्रायश्चित्तेसमुत्पन्ने ह्रीमान्सत्यपरायणः।

सो कहते हैं ॥१॥
अनिच्छा से किये पाप का प्रायश्चित्त कैसे हो ? सो कहते हैं ॥१॥ और जो अपने कर्म में तत्पर
और धर्मशास्त्र को जो जानते हों और जो अपने कर्म में तत्पर
ब्राह्मणों से अपना पाप निवेदन करे ॥ २ ॥ इस से आगे विद्वानों
उपस्थित (हाजिर) होने का स्वरूप कहते हैं क्योंकि जो न्याय
होता है वही व्रत के उपदेश योग्य है ॥ ३ ॥ यदि शीघ्र ही पाप
हो जाय तो प्रायश्चित्त के लिये विद्वत्सभा में उपस्थित हुये वि
करे। जहां सभा न हो वहां भी पहिले जो भोजन करता है वह
ढ़ाता है ॥४॥ यदि संशय होय कि मुझ से अपराध हुआ है वा नहीं
के निश्चय तक भोजन न करे और अपराध के निश्चय करने में प्र
भी न करे किन्तु जिस प्रकार सन्देह मिट जाय वैसा ही करे
को करके कदापि न छिपावे, क्योंकि छिपाया हुआ पाप बढ़ता
पाप हो वा बहुत हो उसे धर्म के ज्ञाताओं को निवेदन करके
॥ ६ ॥ क्योंकि वे ही लोग पाप करने वाले रोगियों के वैद्य हैं
नाश करने वाले हैं—जैसे कि बुद्धिमान् वैद्य रोगी के रोगको
होते हैं ॥७॥ प्रायश्चित्त के समय, लज्जा युक्त हो सत्य धर्ममें तत्प
वार नम्रता कोमलता को धारण करने वाला क्षत्रिय या वैश्य

मुहुराजवसंपन्नः शुद्धिंगच्छतिमानवः ॥ ८ ॥
सचेलंवाग्यतःस्नात्वा क्लिन्नवासाःसमाहितः ।
क्षत्रियोवाथवैश्योवा ततःपर्षदमाव्रजेत् ॥ ९ ॥
उपस्थायततःशीघ्रमार्तिमान्धरणींव्रजेत् ।
गात्रैश्चशिरसाचैव नचकिंचिदुदाहरेत् ॥ १० ॥
सावित्र्याश्चापिगायत्र्याः संध्योपास्त्यग्निकार्ययोः ।
अज्ञानात्कृपिकर्त्तारो ब्राह्मणानामधारकाः ॥ ११ ॥
अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् ।
सहस्रशःसमेतानां परिषत्त्वंनविद्यते ॥ १२ ॥
यद्वदन्तितमोमूढा मूर्खाधर्ममतद्विदः ।
तत्पापंशतधाभूत्वा तद्वक्तॄनधिगच्छति ॥ १३ ॥
अज्ञात्वाधर्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तंददातियः ।
प्रायश्चित्तीभवेत्पूतः किल्बिषंपर्षदिव्रजेत् ॥ १४ ॥
चत्वारोवात्रयोवापि यंब्रूयुर्वेदपारगाः ।
सधर्मइतिविज्ञेयो नेतरैस्तुसहस्रशः ॥ १५ ॥

प्राप्त हो जाता है ॥ ८ ॥ मौन धारण कर सचेल स्नान करके गीले वस्त्र पहिने हुये सावधान हो कर पर्षद (धर्म सभा) में जावे ॥ ९ ॥ फिर शीघ्र उसके समीप जाकर दुःखी हुआ गात्र और शिरसे (साष्टांग) पृथ्वी में पड़ जाय और कुछ न कहै ॥ १० ॥ सूर्यनारायण जिस के देवता हैं ऐसी गायत्री और संध्यावंदन और अग्निहोत्र इन कामों को जो नहीं जानते और न करते हों और जो खेती करते हों वे नाम मात्र के ब्राह्मण हैं ॥११॥ जिन के सन्ध्यादि करने का नियम नहीं, जो वेद मन्त्रोंको नहीं जानते और जातिमात्र से जो ब्राह्मण बने हैं ऐसे चाहे हजारों भी जिस में इकट्ठे हों वह परिषत (धर्मसभा) नहीं है ॥ १२ ॥ धर्म के मर्म को न जानने वाले अज्ञानी मूर्ख ब्राह्मण लोग जो (प्रायश्चित्त आदि) बतलाते हैं वह पाप सौ गुणा होकर उन धर्मकी व्यवस्था देने वालों को प्राप्त होता है ॥१३॥ जो धर्मशास्त्रों को न जानकर प्रायश्चित्त देते हैं तो वह पापी पवित्र होजाता है और उस प्रायश्चित्ती का प्रायश्चित्त देने वालेको लगता है ॥१४॥ चार वा तीन वेदोंको पूर्ण रूपसे ठीक २ जाननेवाले जिस को कहें वही धर्म जानो और अन्य हजार भी जिसे कहें वह धर्म नहीं ॥१५॥

अकामकृतपापस्य प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥१॥
वेदवेदाङ्गविदुषां धर्मशास्त्रंविजानताम्।
स्वकर्मरतविप्राणां स्वकंपापंनिवेदयेत् ॥२॥
अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामि उपस्थानस्यलक्षणम्।
उपस्थितोहिन्यायेन व्रतादेशनमर्हति ॥३॥
सद्योनिःसंशयेपापे नभुञ्जीतानुपस्थितः।
भुञ्जानोवर्द्धयेत्पापं पर्षद्यत्रनविद्यते ॥४॥
संशयेतुनभोक्तव्यं यावत्कार्यविनिश्चयः।
प्रमादस्तुनकर्त्तव्यो यथैवासंशयस्तथा ॥५॥
कृत्वापापंनगूहेत गूह्यमानंविवर्द्धते।
स्वल्पंवाथप्रभूतंवा धर्मविद्भ्योनिवेदयेत् ॥६॥
तेहिपापकृतांवैद्या हन्तारश्चैवपाप्मनाम्।
व्याधितस्ययथावैद्या बुद्धिमन्तोरुजापहाः ॥७॥
प्रायश्चित्तेसमुत्पन्ने ह्रीमान्सत्यपरायणः।

अनिच्छा से किये पाप का प्रायश्चित्त कैसे हो ? सो कहते हैं ॥१॥ और धर्मशास्त्र को जो जानते हों और जो अपने कर्म में तत्पर [illegible] ब्राह्मणों से अपना पाप निवेदन करे ॥ २ ॥ इस से आगे विद्वानों [illegible] उपस्थित (हाजिर) होने का स्वरूप कहते हैं क्योंकि जो न्याय [illegible] होता है वही व्रत के उपदेश योग्य है ॥ ३ ॥ यदि शीघ्र ही पाप हो जाय तो प्रायश्चित्त के लिये विद्वत्सभा में उपस्थित हुये बिना [illegible] करे । जहां सभा न हो वहां भी पहिले जो भोजन करता है वह [illegible] बढ़ाता है ॥४॥ यदि संशय होय कि मुझ से अपराध हुआ है वा नहीं [illegible] के निश्चय तक भोजन न करे और अपराध के निश्चय करने में प्रमा[द] भी न करे किन्तु जिस प्रकार सन्देह मिट जाय वैसा ही करे ॥ [पाप] को करके कदापि न छिपावे, क्योंकि छिपाया हुआ पाप बढ़ता है [थोड़ा] पाप हो वा बहुत हो उसे धर्म के ज्ञाताओं को निवेदन करके ॥ ६ ॥ क्योंकि वे ही लोग पाप करने वाले रोगियों के वैद्य हैं और नाश करने वाले हैं—जैसे कि बुद्धिमान् वैद्य रोगी के [illegible] होते हैं ॥८॥ प्रायश्चित्त के समय, लज्जा युक्त हो

हुराजवसंपन्नः शुद्धिंगच्छतिमानवः ॥ ८ ॥
चैलंवाग्यतःस्नात्वा क्लिन्नवासाःसमाहितः ।
क्षत्रियोवाथवैश्योवा ततःपर्षदमाव्रजेत् ॥ ९ ॥
उपास्थायततःशीघ्रमार्तिमान्धरणींव्रजेत् ।
गात्रैश्चशिरसाचैव नचकिंचिदुदाहरेत् ॥ १० ॥
सावित्र्याश्चापिगायत्र्याः संध्योपास्त्यग्निकार्ययोः ।
अज्ञानात्कृपिकर्त्तारो ब्राह्मणानामधारकाः ॥ ११ ॥
अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् ।
सहस्रशःसमेतानां परिषत्त्वंनविद्यते ॥ १२ ॥
यद्वदन्तितमोमूढा मूर्खाधर्ममतद्विदः ।
तत्पापंशतधाभूत्वा तद्वक्तॄनधिगच्छति ॥ १३ ॥
अज्ञात्वाधर्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तंददातियः ।
प्रायश्चित्तीभवेत्पूतः किल्बिषंपर्षदिव्रजेत् ॥ १४ ॥
चत्वारोवात्रयोवापि यंब्रूयुर्वेदपारगाः ।
धर्मइतिविज्ञेयो नेतरैस्तुसहस्रशः ॥ १५ ॥

हो जाता है ॥ ८ ॥ मौन धारण कर सचैल स्नान करके गीले वस्त्र सावधान हो कर पर्षद (धर्म सभा) में जावे ॥ ९ ॥ फिर शीघ्र ीप जाकर दुःखी हुआ गात और शिरसे (साष्टांग) पृथ्वी में पड़ कुछ न कहै ॥ १० ॥ सूर्यनारायण जिन के देवता हैं ऐसी गायत्री न और अग्निहोत्र इन कामों को जो नहीं जानते और न करते हों ती करते हों वे नाम मात्र के ब्राह्मण हैं ॥११॥ जिन के सन्ध्यादि नियम नहीं,जो वेद मन्त्रोंको नहीं जानते और जातिमात्र से जी हैं ऐसे चाहे हजारोंभी जिस में इकट्ठे हों वह परिषत (धर्मसभा) २ ॥ धर्म के मर्म को न जानने वाले अज्ञानी मूर्ख ब्राह्मण लोग त आदि) बतलातेहैं वह पाप सौगुणा होकर उन धर्मको बतलाने को प्राप्त होताहै ॥१३॥ जो धर्मशास्त्रों को न जानकर प्रायश्चित वह पापी पवित्र होजाताहै और उस प्रायश्चित्ती का प्रायश्चित देने ताहै ॥१४॥ चार या तीन वेदोंको पूर्ण रूपसे टीक२ जाननेवाले जिस धर्म जानो और अन्य हजार भी जिसे कहैं वह धर्म नहीं ॥१५॥

अतऊर्द्ध्वंतुयेविप्राः केवलंनामधारकाः ।
परिपत्त्वंनतेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ॥ २३ ॥
यथाकाष्ठमयोहस्ती यथाचर्ममयोमृगः ।
ब्राह्मणास्त्वनधीयानास्त्रयस्तेनामधारकाः ॥ २४ ॥
ग्रामस्थानंयथाशून्यं यथाकूपस्तुनिर्जलः ।
यथाहुतमनग्नौच अमन्त्रोब्राह्मणस्तथा ॥२५॥
यथापण्ढोऽफलःस्त्रीपु यथागौरूपराऽफला ।
यथाचाज्ञेऽफलंदानं तथाविप्रोऽनृचोऽफलः ॥ २६ ॥
चित्रंकर्मयथानेकै रङ्गैरुन्मील्यतेशनैः ।
ब्राह्मण्यमपितद्वद्धि संस्कारैर्मन्त्रपूर्वकैः ॥ २७ ॥
प्रायश्चित्तंप्रयच्छन्ति येद्विजानामधारकाः ।
तेद्विजाःपापकर्माणः समेतानरकंययुः ॥ २८ ॥
येपठन्तिद्विजावेदं पञ्चयज्ञरताश्चये ।
त्रैलोक्यंतारयन्त्येव पञ्चेन्द्रियरताअपि ॥ २९ ॥
संप्रणीतःश्मशानेपु दीप्तोऽग्निःसर्वभक्षकः ।

इन से भिन्न जो ब्राह्मण केवल नाम के धारण करने वाले हैं वे चाहैं
ार गुणे भी हों तो उन की धर्मसभा नहीं होती ॥ २३ ॥ जैसे काठ का
ी जैसे चाम का हिरण हिरण नहीं वैसे ही वेद के विना पढ़े
ह्मण हैं ये तीनों नाम के ही धारण करने वाले हैं ॥ २४ ॥ जैसा नि-
ा (जिस में कोई मनुष्य न हो वह) ग्राम, जैसा जल के विना कूप (अंधीला)
ा अग्नि विना भस्मादि में होम करना है ऐसा ही वेद मन्त्रों को पढ़े विना
ह्मण भी शून्य मात्र है ॥ २५ ॥ जैसे स्त्रियों में नपुंसक वृथा है जैसे वंध्या
वृथा है और जैसे मूर्ख ब्राह्मण को दान देना वृथा है ऐसे ही वेद हीन
ह्मण वृथा है ॥ २६ ॥ जैसे चित्र खींचने वालों की चित्रकारी अनेक
ों से शनैः २ अति शोभायमान चमकीली होती है इसी प्रकार मंत्रों से
ा हुए अनेक संस्कारों से ब्राह्मणपन भी उज्ज्वल प्रकाशमान होता है
॥ जो विद्या और तप से हीन नामधारी ब्राह्मण प्रायश्चित्त देते हैं वे सब
ों के कर्ता इकट्ठे होकर नरक में जाते हैं ॥ २८ ॥ जो ब्राह्मण वेद को प-
हैं या जो पंच महायज्ञों के करने में तत्पर हैं वे पांचों इन्द्रियों के वि-
में आसक्त हों तो भी त्रिलोकी को तारने वाले ही हैं ॥२९। जैसे जलता
ग्नि श्मशानों में मुर्दा का भक्षक होने पर भी संसार का उद्धार कर्ता

तत्पापंशतधाभूत्वा राजानमनुगच्छति ॥ ३७ ॥
प्रायश्चित्तंसदादद्याद्देवतायतनाग्रतः ।
आत्मकृच्छ्रंततःकृत्वा जपेद्वैवेदमातरम् ॥ ३८ ॥
सशिखंवपनंकृत्वा त्रिसंध्यमवगाहनम् ।
गवांमध्येवसेद्रात्रौ दिवागाश्चाप्यनुव्रजेत् ॥ ३९ ॥
उष्णेवर्षतिशीतेवा मारुतेवातिवाभृशम् ।
नकुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वातुशक्तितः ॥ ४० ॥
आत्मनोयदिवाऽन्येषां गृहेक्षेत्रेऽथवाखले ।
भक्षयन्तींनकथयेत्पिबन्तंचैववत्सकम् ॥ ४१ ॥
पिबन्तीषुपिबेत्तोयं संविशन्तीषुसंविशेत् ।
पतितांपङ्कलग्नांवा सर्वप्राणैःसमुद्धरेत् ॥ ४२ ॥
ब्राह्मणार्थेगवार्थेवा यस्तुप्राणान्परित्यजेत् ।
मुच्यतेब्रह्महत्याया गोप्तागोर्ब्राह्मणस्यच ॥ ४३ ॥
गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यंविनिर्दिशेत् ।

ब्राह्मणों का उलंघन करके राजा स्वयं किया चाहै तो वह पाप सौ गुणा र राजा को लगता है ॥ ३७ ॥ सदैव देवता के मन्दिर के आगे प्रायश्चित्त वे। फिर वह विद्वान् भी अपना कृच्छ्र व्रत (प्रायश्चित्त) करके वेदकी माता त्री का जप करे ॥ ३८ ॥ प्रायश्चित्त करने वाला शिखा सहित वालों का न कराके त्रिकाल स्नान करै। रात्रि को गौओं के बीच गोशाला में वसे दिन में चरने को निकली गौओं के पीछे २ जंगल में भ्रमण करै ॥३९॥ पंत उष्णकाल (गर्मी) में, वर्षा में, शीतकाल में, और अत्यन्त पवन (आंधी) अपनी रक्षा का उपाय तब करै जब शक्ति भर गौओं की रक्षा पहिले लेवे ॥४०॥ अपने अथवा अन्य के घर में, खेत में अथवा खलियान में खाती गौ को न स्वयं हटावे तथा न अन्य से हटाने को कहे और दूध पीते बछड़े को भी किसी को न बतावे ॥ ४१ ॥ गौ ओं के जल पीने पर पं जल पीवे, गौओं के बैठने पर स्वयं बैठे और गढ़े आदि में गिरी पड़ी कीचड़ में फसी गौ को संपूर्ण बल से उठावे निकाले ॥४२॥ जो कोई मनुष्य ह्मण वा गौओं की रक्षा करने के लिये अपने प्राणों को देकर गौ और ब्राह्मण रक्षा करै वह ब्रह्महत्यादि महापापों से भी शीघ्र ही छूट जाता है ॥४३॥ वध पाप के अनुसार निम्न चतुर्विधों में से उचित प्राजापत्य व्रत बतावे। उस

तत्पापंशतधाभूत्वा राजानमनुगच्छति ॥ ३७ ॥
प्रायश्चित्तंसदादद्यादेवतायतनाग्रतः ।
आत्मकृच्छ्रंततःकृत्वा जपेद्वैवेदमातरम् ॥ ३८ ॥
सशिखंवपनंकृत्वा त्रिसंध्यमवगाहनम् ।
गवांमध्येवसेद्रात्रौ दिवागाश्चाप्यनुव्रजेत् ॥ ३९ ॥
उष्णेवर्षतिशीतेवा मारुतेवातिवाभृशम् ।
नकुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वातुशक्तितः ॥ ४० ॥
आत्मनोयदिवाऽन्येषां गृहेक्षेत्रेऽथवाखले ।
भक्षयन्तींनकथयेत्पिबन्तंचैववत्सकम् ॥ ४१ ॥
पिबन्तीषुपिबेत्तोयं संविशन्तीषुसंविशेत् ।
पतितांपङ्कलग्नांवा सर्वप्राणैःसमुद्धरेत् ॥ ४२ ॥
ब्राह्मणार्थेगवार्थेवा यस्तुप्राणान्परित्यजेत् ।
मुच्यतेब्रह्महत्याया गोप्तागोर्ब्राह्मणस्यच ॥ ४३ ॥
गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यंविनिर्दिशेत् ।

ब्राह्मणों का उलंघन करके राजा स्वयं किया चाहै तो वह पाप सौ गुणा र राजा को लगता है ॥ ३७ ॥ सदैव देवता के मन्दिर के आगे प्रायश्चित्त वे। फिर वह विद्वान् भी अपना कृच्छ्र व्रत (प्रायश्चित्त) करके वेदकी माता त्री का जप करे ॥ ३८ ॥ प्रायश्चित्त करने वाला शिखा सहित बालों का न कराके त्रिकाल स्नान करै। रात्रि को गौओं के बीच गोशाला में बसे दिन में चरने को निकली गौओं के पीछे २ जंगल में भ्रमण करै ॥३९॥ पंत उष्णकाल (गर्मी) में, वर्षा में, शीतकाल में, और अत्यन्त पवन (आंधी) अपनी रक्षा का उपाय तब करै जब शक्ति भर गौओं की रक्षा पहिले लेवे ॥४०॥ अपने अथवा अन्य के घर में, खेत में अथवा खलियान में खाती गौ को न स्वयं हटावे तथा न अन्य से हटाने को कहे और दूध पीते बछड़े को भी किसी को न बतावे ॥ ४१ ॥ गौ ओं के जल पीने पर यं जल पीवे, गौओं के बैठने पर स्वयं बैठे और गढ़े आदि में गिरी पड़ी कीचड़ में फसी गौ को संपूर्ण बल से उठावे निकाले ॥४२॥ जो कोई मनुष्य ह्मण वा गौओं की रक्षा करने के लिये अपने प्राणों को देकर गौ और ब्राह्मण रक्षा करै वह ब्रह्महत्यादि महापापों से भी शीघ्र ही छूट जाता है ॥४३॥ वध पाप के अनुसार निम्न चतुर्विधों में से उचित प्राजापत्य व्रत बतावे। उस

तत्पापंशतधाभूत्वा राजानमनुगच्छति ॥ ३७ ॥
प्रायश्चित्तंसदादद्याद्देवतायतनाग्रतः ।
आत्मकृच्छ्रंततःकृत्वा जपेद्वैवेदमातरम् ॥ ३८ ॥
सशिखंवपनंकृत्वा त्रिसंध्यमवगाहनम् ।
गवांमध्येवसेद्रात्रौ दिवागाश्चाप्यनुव्रजेत् ॥ ३९ ॥
उष्णेवर्षतिशीतेवा मारुतेवातिवाभृशम् ।
नकुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वातुशक्तितः ॥ ४० ॥
आत्मनोयदिवाऽन्येषां गृहेक्षेत्रेऽथवाखले ।
भक्षयन्तींनकथयेत्पिबन्तंचैववत्सकम् ॥ ४१ ॥
पिबन्तीषुपिबेत्तोयं संविशन्तीषुसंविशेत् ।
पतितांपङ्कलग्नांवा सर्वप्राणैःसमुद्धरेत् ॥ ४२ ॥
ब्राह्मणार्थेगवार्थेवा यस्तुप्राणान्परित्यजेत् ।
मुच्यतेब्रह्महत्याया गोप्तागोर्ब्राह्मणस्यच ॥ ४३ ॥
गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यंविनिर्दिशेत् ।

ब्राह्मणों का उलंघन करके राजा स्वयं किया चाहै तो वह पाप सौ गुणा
र राजा को लगता है ॥ ३७ ॥ सदैव देवता के मन्दिर के आगे प्रायश्चित्त
वे। फिर वह विद्वान् भी अपना कृच्छ्र व्रत (प्रायश्चित्त) करके वेदकी माता
त्री का जप करे ॥ ३८ ॥ प्रायश्चित्त करने वाला शिखा सहित वालों का
न कराके त्रिकाल स्नान करै। रात्रि को गौओं के बीच गोशाला में वसे
दिन में चरने को निकली गौओं के पीछे २ जंगल में भ्रमण करै ॥३९॥
पंच उष्णकाल (गर्मी) में, वर्षा में, शीतकाल में, और अत्यन्त पवन (आंधी)
अपनी रक्षा का उपाय तब करै जब शक्ति भर गौओं की रक्षा पहिले
लेवे ॥४०॥ अपने अथवा अन्य के घर में, खेत में अथवा खलियान में खाती
गौ को न स्वयं हटावै तथा न अन्य से हटाने को कहे और दूध पीते
वछड़े को भी किसी को न वतावे ॥ ४१ ॥ गौ ओं के जल पीने पर
पं जल पीवे, गौओं के वैठने पर स्वयं वैठे और गढ़े आदि में गिरी पड़ी
कीचड़ में फसी गौ को संपूर्ण वल से उठावे निकाले ॥४२॥ जो कोई मनुष्य
ह्मण वा गौओं की रक्षा करने के लिये अपने प्राणों को देकर गौ और ब्राह्मण
रक्षा करै वह ब्रह्महत्यादि महापापों से भी शीघ्र ही छूट जाता है ॥४३॥
वध पाप के अनुसार निम्न चतुर्विधों में से उचित प्राजापत्य व्रत वतावे। वस

प्राजापत्यंतुयत्कृच्छ्रं विभजेत्तच्चतुर्विधम् ॥ ४४॥
एकाहमेकभक्ताशी एकाहंनक्तभोजनः।
अयाचितश्चैकमहरेकाहंमारुताशनः ॥ ४५ ॥
दिनद्वयंचैकभक्तो द्विदिनंनक्तभोजनः।
दिनद्वयमयाचीस्याद् द्विदिनंमारुताशनः ॥ ४६॥
त्रिदिनंचैकभक्ताशी त्रिदिनंनक्तभोजनः।
दिनत्रयमयाचीस्यात्त्रिदिनंमारुताशनः ॥ ४७ ॥
चतुरहंत्वेकभक्ताशी चतुरहंनक्तभोजनः।
चतुर्दिनमयाचीस्याच्चतुरहंमारुताशनः ॥ ४८ ॥
प्रायश्चित्तेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम्।
विप्राणांदक्षिणां दद्यात्पवित्राणिजपेद्द्विजः ॥ ४९ ।
ब्राह्मणान्भोजयित्वातु गोघ्नःशुद्ध्येन्नसंशयः ॥ ५० ।

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ।

कृच्छ्र व्रत को चार भाग में बांटे ॥ ४४ ॥ एक दिन प्रातः एक परिमित अन्न खावे, और एक दिन रात में भोजन करै, एक दिन मांगे जो मिलै उसे खावे और एक दिन सर्वथा निराहार रहे यह छोटा कृच्छ्र या पादकृच्छ्र व्रत है ॥ ४५ ॥ दो दिन एकवार प्रातःकाल खावे, दो दिन रातमें परिमित भोजन करै, दो दिन बिना मांगे जो मिले उसे फिर दो दिन निराहार उपवास करे यह द्वितीय कक्षा का कृच्छ्र व्रत वा अर्द्ध जानो ॥ ४६ ॥ तीन दिन एकवार प्रातः खावे, तीन दिन रात में भोजन करै, तीन दिन विना मांगे जो मिले उसे खावे फिर तीन दिन निराहार यह तीसरा वा पौन कृच्छ्र व्रत है ॥ ४७ ॥ चार दिन एक वार प्रातः चार दिन रात में एक वार भोजन करै फिर चार दिन विना मांगे जो मिले उसे खावे और चार दिन निराहार रहे यह पूरा कृच्छ्र व्रत है ॥ प्रायश्चित्त के पूर्ण हुए पीछे यह द्विज ब्राह्मणादि अन्य सुपात्र ब्राह्मणों को भोजन करावे दक्षिणा देवे और पवित्र वेद मन्त्रों (गायत्री आदि) जपे ॥ ४९ ॥ ब्राह्मणों को भोजन करा कर गोवध का करने वाला शुद्ध होता है इस में संदेह नहीं है ॥५०॥

यह पाराशरीय धर्म शास्त्र के भाषानुवाद में आठवां अध्याय पूरा हुआ।

हलेवाशकटेपङ्क्तौ भारेवापीडितोनरैः ॥ ७ ॥
गोपतिर्मृत्युमाप्नोति यौक्त्रोभवतितद्वधः ।
मत्तःप्रमत्तउन्मत्तश्चेतनोवाऽप्यचेतनः ॥ ८ ॥
कामाकामकृतक्रोधो दण्डैर्हन्यादथोपलैः ।
प्रहृतावांमृतावापि तद्धिहेतुर्निपातने ॥ ९ ॥
अङ्गुष्ठमात्रस्थूलस्तु बाहुमात्रःप्रमाणतः ।
आर्द्रस्तुसपलाशश्च दण्डइत्यभिधीयते ॥ १० ॥
मूर्छितःपतितोवापि दण्डेनाभिहतःसतु ।
उत्थितस्तुयदागच्छेत्पञ्चसप्तदशाथवा ॥ ११ ॥
ग्रासंवायदिगृण्हीयात्तोयंवापिपिबेद्यदि ।
पूर्वव्याध्युपसृष्टश्चे त्प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ १२ ॥
पिण्डस्थेपादमेकंतु द्वौपादौगर्भसंमिते ।
पादोनंव्रतमुद्दिष्टं हत्वागर्भमचेतनम् ॥ १३ ॥
पादेऽङ्गरोमवपनं द्विपादेश्मश्रुणोऽपिच ।

दो चार बैलों की पांति में बांधने पर, बोझा लादने पर, मनुष्यों से को प्राप्त हुआ ॥७॥ बैल मरजाय तो उस वध को यौक्त्र कहा है। जो मत्त, प्रमत्त, उन्मत्त,चेतन वा अचेतन दशा में हो ॥ ८ ॥ समझ कर वा समझे क्रोध करके दंडों से वा पत्थरों से गौ पर प्रहार करै और वह गौ रजाय तो उसे निपातन (मरण) का हेतु कहते हैं ॥ ९ ॥ अंगूठे भा और भुजा की बराबर लंबा, गीला,और पत्तों वाला जो हो उसे दंड कहते हैं।

मूर्छा को प्राप्त हुआ, वा पड़ा हुआ, वा दंड से ताड़ा हुआ वह फेर पांच वा सात अथवा दश पग तक उठकर चले॥ ११ ॥ अथवा एक ग्रास लेवे वा जल पीले वे और पहिले से उस को कोई रोग हो तो ऐसी ति का प्रायश्चित्त नहीं है ॥ १२ ॥ यदि गोलाकार पिंडी मात्र बने गर्भ को राये तो पाद कृच्छ्र व्रत,कुछ २ गर्भ का आकार बनजाने पर गर्भपात क में आधा कृच्छ्र व्रत, और ठीक २ बने अचेतन गर्भ को गिरावे तो पौन च्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ १३ ॥ पादकृच्छ्र प्रायश्चित्त में शरीर के रोम मुं

यवसश्चोपहर्तव्यो यावद्दृढबलोभवेत् ॥ २० ॥
यावत्संपूर्णसर्वाङ्गस्तावत्तंपोषयेन्नरः ।
गोरूपंब्राह्मणस्याग्रे नमस्कृत्वाविसर्जयेत् ॥ २१ ॥
यद्यसंपूर्णसर्वाङ्गो हीनदेहोभवेत्तदा ।
गोघातकस्यतस्यार्द्धं प्रायश्चित्तंविनिर्द्दिशेत् ॥ २२ ॥
काष्ठलोष्टकपाषाणैः शस्त्रेणैवोद्धतोबलात् ।
व्यापादयतियोगांतु तस्यशुद्धिंविनिर्दिशेत् ॥ २३ ॥
चरेत्सांतपनंकाष्ठे प्राजापत्यंतुलोष्टके ।
तप्तकृच्छ्रंतुपाषाणे शस्त्रेचैवातिकृच्छ्रकम् ॥ २४ ॥
पञ्चसान्तपनेगावः प्राजापत्येतथात्रयः ।
तप्तकृच्छ्रेभवन्त्यष्टावतिकृच्छ्रेत्रयोदश ॥ २५ ॥
प्रमापणेप्राणभृतां दद्यात्तत्प्रतिरूपकम् ।
तस्यानुरूपंमूल्यंवा दद्यादित्यब्रवीन्मनुः ॥ २६ ॥

और जब तक बैल बलवान् हो तबतक घास खिलाया करे काम कुछ न ले
जब तक ठीक घाव पूरा होके हृष्ट पुष्ट हो जाय तब तक मनुष्य
पोषण करे। फिर गौ रूप बैल को ब्राह्मण के आगे नमस्कार करके छो
॥ २१ ॥ यदि उस बैल का कोई अंग ठीक अच्छा न हो किन्तु लूला
ही रहे और हीनदेह (दुबला) होजाय तो गौ के मारने वाले को
आधा प्रायश्चित्त बतावे ॥ २२ ॥ लकड़ी, ढेला, पत्थर, वा किसी
से बल पूर्वक मारी हुई गौ मरजावे तो उस का निम्न लिखित प्रा
जानो ॥ २३ ॥ लकड़ी से मरने पर कृच्छ्र सान्तपन, ढेला से मरने पर
पत्य, पत्थर से मरने पर तप्तकृच्छ्र, और हथियार (बर्छी भालादि) से
रने पर अतिकृच्छ्र व्रत करे ॥ २४ ॥ सान्तपन में पांच, प्राजापत्य में
तप्त कृच्छ्र में आठ और अतिकृच्छ्र व्रत करने में तेरह गौ दक्षिणा देवे ।
प्राणियों के मारने पर उन २ की प्रतिमा सुवर्ण की बनवा के दान क
थवा उस २ प्राणी का जितना २ उचित मूल्य हो उतना दान करे यह
मनु जी ने कही है ॥ २६

अन्यत्राङ्कनलक्ष्मभ्यां वहनेदोहनेतथा ।
सायंसंगोपनार्थंच नदुष्येद्रोधवन्धयोः ॥२७ ॥
अतिदाहेऽतिवाहेच नासिकाभेदनेतथा ।
नदीपर्वतसंचारे प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ २८ ॥
अतिदाहेचरेत्पादं द्वौपादौवाहनेचरेत् ।
नासिक्येपादहीनंतु चरेत्सर्वंनिपातने ॥२९ ॥
दहनात्तुविपद्येत अनड्वान्योक्त्रयन्त्रितः ।
उक्तंपराशरेणैव ह्येकंपादंयथाविधि ॥ ३० ॥
रोधनंबन्धनंचैव भारःप्रहरणंतथा ।
दुर्गप्रेरणयोक्त्रंच निमित्तानिवधस्यषट् ॥ ३१ ॥
वन्धपाशसुगुप्ताङ्गो म्रियतेयदिगोपशुः ।
भुवनेतस्यनाशस्य पापेकृच्छ्रार्द्धमर्हति ॥ ३२ ॥

देने (अङ्कित करने) वा चिह्न लगाने, जोतने तथा दुहने में और सायं-रात्रि में रक्षा करने के लिये रोकने बांधने में गौओं को जो कुछ कष्ट हो या कोई गौ दैवयोग से मर भी जाय तो दोष नहीं लगेगा ॥ २७ ॥ दाग देने में अत्यन्त जलाने, या बहुत काल तक सख्ती से हलादि में जोतने पर, नाथने में और नदी में घुसाने तथा पर्वत पर चढ़ाने पर यदि बैल मर जाय तो निम्न लिखित प्रायश्चित्त जानो ॥ २८ ॥ दाग ने से मरने पर चौथाई, जोतने से मरने पर आधा, नाथने से मरने पर पौना और नदी पर्वत पर घुसाने चढ़ाने से मरने पर पूरा प्रायश्चित्त करे ॥ २९ ॥ यदि रस्सी से बंधे हुए बैल को गिरा कर दाग देने मात्र से मर जाय तो महर्षि पराशर के मतानुसार चौथाई प्रायश्चित्त करे ॥ ३० ॥ रोकना, बांधना, बोझ लादना, लकड़ी आदि से मारना पीटना, किसी कठिन जगह नदी आदि में ले जाना या चढ़ाना, और नाथ डालने आदि के लिये गिराने को रस्सी आदि से बांधना इन छः निमित्तों से बैल आदि पशु की हिंसा होती है ॥ ३१ ॥ घर पर बांधा हुआ रस्सी की फांसी लग कर यदि बैल मर जाय । तब उस बैल के मारने का पाप लगने पर आधा कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥ ३२ ॥

[illegible] व [illegible] पम [illegible]

एतैस्तुगावोननिबन्धनीया [illegible]

कुशैःकाशैश्चबध्नीयाद्गोपशुंदक्षिणामुखम्।
पाशलग्नाग्निदग्धेषु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ३४ ॥
यदितत्रभवेत्काण्डं प्रायश्चित्तंकथंभवेत।
जपित्वापावनींदेवीं मुच्यतेतत्रकिल्बिषात् ॥ ३५ ॥
प्रेरयन्कूपवापीषु वृक्षच्छेदेषुपातयन्।
गवाशनेषुविक्रीणंस्ततःप्राप्नोतिगोवधम् ॥ ३६ ॥
आराधितस्तुयःकश्चिद् भिन्नकक्षोयदाभवेत्।
श्रवणंहृदयंभिन्नं मग्नोवाकूपसंकटे ॥ ३७ ॥
कूपादुत्क्रमणेचैव भग्नोवाग्रीवपादयोः।
सएवम्रियतेतत्रत्रीन्पादांस्तुसमाचरेत ॥ ३८ ॥

नारियल की, शण की, बालों की, मूंज की, तथा बक्कल की रस्सी से लोहे की सांकल से इन सब से गौ को नहीं बांधना चाहिये। यदि कदाचित् इन से बांधे तो हाथ में फरसा लिये गौ के समीप रक्षार्थ खड़ा रहे ॥ ३३ ॥ किन्तु कुशों तथा कांसों की रस्सी से दक्षिण को मुख करके गौ को बांधे। कुशादि की रस्सी से रक्षार्थ बांधने पर फ़ांसी लगजाय वा अग्नि कर गौ बैल जल जाय तो प्रायश्चित्त नहीं करने पड़ेगा क्योंकि का दोष नहीं है ॥ ३४ ॥ यदि वहां सरपता का ढेर लगा हो और अग्नि लगकर गौ जल जावे तो प्रायश्चित्त कैसे हो? इस का उत्तर यह है कि वहां जगत्पावनी गायत्री का जप करके उस पाप से छूट जाता है ॥ ३५ ॥ कुआ वा बावली में घुसाने की प्रेरणा करता हुआ, कटे हुए पड़े वृक्षों में घेर २ कर गिराते हुए गौ मर जावे वा गोभक्षक कसाई आदि के हाथ बेचने पर गोहत्या लगती है ॥ ३६ ॥ यदि उक्त हालत में गौके बचाने का उपाय करने पर भी उस की कोख फटजाय, कान टूट जाय, हृदय फटजाय, वा कुए में डूब कर मरजाय ॥ ३७ ॥ अथवा कुए पर इधर से उधर फंदाने से भी गौ बैल की गर्दन वा टांग टूट जावे और इसी कारण यदि वह मर जाय तो तीन पाद (तीन हिस्सा) प्रायश्चित्त करे ॥ ३८ ॥

कूपखातेतटीबन्धे नदीबन्धेप्रपासुच ।
पानीयेपुविपन्नानां प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ३९ ॥
कूपखातेतटीखाते दीर्घखातेतथैवच ।
अन्येपुधर्मखातेपु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४० ॥
वेश्मद्वारेनिवासेपु योनरःखातमिच्छति ॥
स्वकार्यगृहखातेपु प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥
निशिबन्धनिरुद्धेपु सर्पव्याघ्रहतेपुच ।
अग्निविद्युद्विपन्नानां प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४२ ॥
ग्रामघातेशरौघेण वेश्मबन्धनिपातने ।
अतिवृष्टिहतानांच प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४३ ॥
संग्रामेऽपहतानांच येदग्धावेश्मकेपुच ।
दावाग्निग्रामघातेपु प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४४ ॥

कुए, गढे, वा पोखरेमें, बांधपर, नदी में, प्याऊ में पानी पिलाते समय
गौ वा बैल मरजावे तो प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥३९॥ कुए के समीप खो-
[illegible] गढ़े में,नदी के गढे में वा बहुत काल से खोदे हुए गढे में अथवा धर्मार्थ
[illegible] हुए तालाब आदि में जल पिलाने को घुसाये गौ वा बैल के मरजाने
[illegible]ो प्रायश्चित्त नहीं लगता है ॥ ४० ॥ घर के द्वार पर, गोशाला में, वा
[illegible] किसी प्रयोजन से घर के भीतर कोई गढ़ा खोदा हो और उन में गि-
[illegible]र यदि गौ वा बैल मर जावे तो यथोचित प्रायश्चित्त करै ॥ ४१ ॥ रक्षा
[illegible]लये रात्रि में बांधने वा रोकने पर यदि सांप काट ले, अथवा बाघ आ-
[illegible]जानवर मार डाले, अकस्मात् आग लग जाय अथवा बिजली गिरकर मर-
[illegible] तो प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥ ४२ ॥ गांव में लूट हो, डांका पड़े और अने-
[illegible]बाण चलने से गोहत्या हो, वा घरकी भीत गिरजाने से मरे अथवा अत्य-
[illegible]वर्षा होने से गौ वा बैल मरैं उनका भी प्रायश्चित्त नहीं लगेगा ॥ ४३ ॥
[illegible] के समय पर, घर में आग लगजाने पर, वन के अग्नि से, अथवा गांव के
[illegible] होने पर जो गौ मरजावैं उनका प्रायश्चित्त किसी को नहीं लगेगा ॥४४॥

यन्त्रितागौश्चिकित्सार्थं मूढगर्भविमोचने।
यत्नेकृतेविपद्येत प्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ४५ ॥
व्यापन्नानांबहूनांचरोधनेबन्धनेपिवा।
भिषङ्मिथ्याप्रचारेण प्रायश्चित्तंविनिर्दिशेत् ॥ [illegible]
गोवृपाणांविपत्तौच यावन्तःप्रेक्षकाजनाः।
अनिवारयतांतेषां सर्वेषांपातकंभवेत् ॥ ४७ ॥
एकोहतोयैर्बहुभिःसमेतैर्नज्ञायतेयस्यहतोभिघातात्
दिव्येनतेषामुपलभ्यहन्ता,निवर्त्तनीयोनृपसंनियुक्तैः
एकाचेद्बहुभिःकाचिद्दैवाद्व्यापादिताक्वचित्।
पादंपादंतुहत्यायाश्चरेयुस्तेपृथक्पृथक् ॥ ४९ ॥
हतेतुरुधिरंदृश्यं व्याधिग्रस्तःकृशोभवेत्।
ग्रासार्थंचोदितोवापि अध्वनंनैवगच्छिति।

यदि दवाई करने के लिये गौ को रस्सी से बांध कर गिराने मे, और [illegible] हुए गर्भ को निकालने से उपाय करने पर भी गौ मरजाय तो [illegible] दोष नहीं लगेगा ॥ ४५ ॥ यदि बहुतों को एक साथ थोड़ी जगह में [illegible] बांधने पर अनेक गौ मरजावें। अथवा वैद्य डाक्टरादि की [illegible] रक दी ओषधि से गौ मरजाये तो प्रायश्चित्त यथोचित करना [illegible] जहां गौ या बैल मारे पीटे वा वध किये जाते हों तब जितने देखने [illegible] गादि सनातनधर्मी देखते रहें या सुनते जानते रहें और गोहत्या [illegible] रण न करें तो गोहत्या का पाप सब को लगता है ॥ ४७ ॥ [illegible] पशु को इकट्ठे हुए बहुतों ने मारा हो पर यह न जानपड़े कि [illegible] से मारा गया तो वहां अग्नि का गोला हाथ पर रखना आदि [illegible] से अपराधी को जानकर राजकर्मचारी राजदण्ड दिलावें ॥ ४८ ॥ [illegible] गौ को बहुत मनुष्यों ने मिलकर मारा हो तो हत्या का चौथाई [illegible] सब करें ॥ ४९ ॥ कोई गौ मारी पीटी गई हो तो रुधिर निकलने [illegible] से दुबली हो जाये, या दाना घास आदि खिलाने पर भी [illegible] पर भी न चले और फेन गिरावे तो [illegible] गौ को [illegible]

चातुर्वर्ण्येषुसर्वेषु हितांवक्ष्यामिनिष्कृतिम् ।
अगम्यागमनेचैव शुद्धौचान्द्रायणंचरेत् ॥ १ ॥
एकैकंह्रासयेद्ग्रासं कृष्णेशुक्लेचवर्द्धयेत् ।
अमावास्यांनभुञ्जीत ह्येषचान्द्रायणेविधिः ॥ २ ॥
कुक्कुटाण्डप्रमाणंतु ग्रासंवैपरिकल्पयेत् ।
अन्यथाभावदुष्टस्य नधर्मोनचशुद्ध्यति ॥ ३ ॥
प्रायश्चित्तेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
गोद्वयंवस्त्रयुग्मंच दद्याद्विप्रेषुदक्षिणाम् ॥ ४ ॥
चाण्डालींवाश्वपाकींवा अनुगच्छतियोद्विजः ।
त्रिरात्रमुपवासीस्याद् विप्राणामनुशासनात् ॥ ५ ॥
सशिखंवपनंकृत्वा प्राजापत्यत्रयंचरेत् ।
ब्रह्मकूर्चंततःकृत्वा कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् ॥ ६ ॥
गायत्रींचजपेन्नित्यं दद्याद्गोमिथुनद्वयम् ।

अथ ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये हितकारी प्रायश्चित्त इस अगले द-
ं अध्याय में हम कहेंगे । अगम्या स्त्री के साथ गमन करने पर शुद्धि के
ये चान्द्रायण व्रत करे ॥ १ ॥ जिस मास में चान्द्रायण करे तब पौर्णमासी
१५ ग्रास खाकर कृष्ण प्रतिपदा से एक २ ग्रास घटाता जाय फिर अमा-
या को कुछ न खावे निराहार रहे फिर शुक्ल प्रतिपदा को एक द्विती-
को दो ग्रास खावे ऐसे ही प्रति दिन एक २ बढ़ा के पौर्णमासी को फिर
ग्रास खावे यही चान्द्रायण का विधान है ॥२॥ मुरगा के अण्डा के बराबर
क ग्रास का प्रमाण जानो। जिस का मन छलकपटादि से दूषित हो वह धर्म
रने योग्य नहीं और न उस की प्रायश्चित्तों से शुद्धि होती है ॥ ३ ॥ प्राय-
श्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे । तथा दो गौ और दो वस्त्र
ाह्मणों को दक्षिणा देवे ॥ ४ ॥ चाण्डाली वा डोमिनी स्त्री से जो ब्राह्मण
मागम करै वह ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर प्रथम तीन दिन रात उपवास
रे ॥ ५ ॥ फिर शिखा सहित शिर के बाल मुंडा के दो प्राजापत्य व्रत करे ।
दनन्तर ब्रह्मकूर्च व्रत करके ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ६ ॥ नित्य गायत्री

विप्रायदक्षिणांदद्याच्छुद्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ७ ॥
क्षत्रियोवाऽथवैश्योवा चाण्डालींगच्छतोयदि ।
प्राजापत्यद्वयंकुर्यात् दद्याद्गोमिथुनंतथा ॥ ८ ॥
श्वपाकीमथचाण्डालीं शूद्रोवैयदिगच्छति ।
प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं चतुर्गोमिथुनंददेत् ॥ ९ ॥
मातरंयदिगच्छेत्तु भगिनींस्वसुतांतथा ।
एतास्तुमोहितोगत्वा त्रीणिकृच्छ्राणि संचरेत् ॥ १० ॥
चान्द्रायणत्रयंकुर्याच्छिश्नच्छेदेनशुद्ध्यति ।
मातृष्वसृगमेचैव आत्ममेढ्रनिकृन्तनम् ॥ ११ ॥
अज्ञानेनतुयोगच्छेत्कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ।
दशगोमिथुनंदद्याच्छुद्धिंपाराशरोऽब्रवीत् ॥ १२ ॥
पितृदारान्समारुह्य मातुराप्तांचभ्रातृजाम् ।

का जप किया करे । दो गौ दो बैल ब्राह्मण को दक्षिणा में देवे तो प्रायश्चित्त से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है ॥ ७ ॥ क्षत्रिय वा वैश्य पुरुष चाण्डाली से गमन करें तो दो प्राजापत्य व्रत करके दो गौ दो बैल दक्षिणा देवें और ब्रह्मभोज करावें ॥ ८ ॥ डोमिनी या चाण्डाली के साथ यदि शूद्र पुरुष गमन करे तो एक प्राजापत्य कृच्छ्र व्रत करे और चार गौ चार बैल दक्षिणा देवे ॥ ९ ॥ माता, भगिनी, तथा अपनी पुत्री से जो पुरुष मोहग्रस्त हो के गमन करे तो तीन कृच्छ्रव्रत करे ॥ १० ॥ फिर तीन चान्द्रायण व्रत तीन मास तक करे तब शिश्न (लिङ्गेन्द्रिय) को काट डालने पर शुद्ध होता है । और मातृष्वसा (मौसी) से गमन करने पर भी अपने इन्द्रिय का छेदन करे काट डाले ॥ ११ ॥ और यदि अज्ञान से ऐसा पूर्वोक्त काम करे तो दो मास तक दो चान्द्रायण व्रत करे और दश गौ दश बैल दक्षिणा में देवे । यह शुद्धि महर्षि पराशर ने कही है ॥ १२ ॥ जो पुरुष पिता की अन्य किसी स्त्री (जो अपनी उत्पादिका माता न हो) से गमन करे वा माता की सगी भतीजी से गमन करे वा गुरुपत्नी, पुत्रवधू, भ्रा

विप्रायदक्षिणांदद्याच्छुद्धिमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ७ ॥
क्षत्रियोवाऽथवैश्योवा चाण्डालींगच्छतोयदि ।
प्राजापत्यद्वयंकुर्याद् दद्याद्गोमिथुनंतथा ॥ ८ ॥
श्वपाकीमथचाण्डालीं शूद्रोवैयदिगच्छति ।
प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं चतुर्गोमिथुनंददेत् ॥ ९ ॥
मातरंयदिगच्छेत्तु भगिनींस्वसुतांतथा ।
एतास्तुमोहितोगत्वा त्रीणिकृच्छ्राणि संचरेत् ॥ १०
चान्द्रायणत्रयंकुर्याच्छिश्नच्छेदेनशुद्ध्यति ।
मातृष्वसृगमेचैव आत्ममेढ्रनिकृन्तनम् ॥ ११ ॥
अज्ञानेनतुयोगच्छेत्कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् ।
दशगोमिथुनंदद्याच्छुद्धिंपाराशरोऽब्रवीत् ॥ १२ ॥
पितृदारान्समारुह्य मातुराप्तांचभ्रातृजाम् ।

का जप किया करे । दो गौ दो बैल ब्राह्मण को दक्षिणा में देवे ... प्रायश्चित्त से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है ॥ ७ ॥ क्षत्रिय वा वैश्य पुरुष चाण्डाली से गमन करें तो दो प्राजापत्य व्रत करके दो गौ दो बैल ... देवें और ब्रह्मभोज करावें ॥ ८ ॥ डोमिनी वा चाण्डाली के साथ यदि ... पुरुष गमन करे तो एक प्राजापत्य कृच्छ्र व्रत करे और चार गौ ... दक्षिणा देवे ॥ ९ ॥ माता, भगिनी, तथा अपनी पुत्री से जो पुरुष ... ज्ञानग्रस्त हो के गमन करे तो तीन कृच्छ्रव्रत करे ॥ १० ॥ फिर ... चान्द्रायण व्रत तीन मास तक करे तब शिश्न (लिङ्गेन्द्रिय) को ... डालने पर शुद्ध होता है । और मातृष्वसा (मौसी) से गमन करने पर भी अपने इन्द्रिय का छेदन करे काट डाले ॥ ११ ॥ और यदि अज्ञान ... ऐसा पूर्वोक्त काम करे तो दो मास तक दो चान्द्रायण व्रत करे और दश ... दश बैल दक्षिणा में देवे । यह शुद्धि महर्षि पराशर ने कही है ॥ १२ ॥ ... पुरुष पिता की अन्य किसी स्त्री (जो अपनी उत्पादिका माता न हो) से ... गमन करे या माता की सगी भतीजी से गमन करे या गुरुपत्नी, पुत्रवधू, भा...

सशिखंवपनंकृत्वा भुञ्जीयाद्यावकौदनम्।
त्रिरात्रमुपवासित्वा त्वेकरात्रंजलेवसेत ॥ २०॥
शंखपुष्पीलतामूलं पत्रंवाकुसुमंफलम्।
सुवर्णंपञ्चगव्यंच क्वाथयित्वापिवेज्जलम् ॥२१॥
एकभक्तंचरेत्पश्चाद्यावत्पुष्पवतीभवेत्।
व्रतंचरतितद्यावत्तावत्संवसतेवहिः ॥ २२ ॥
प्रायश्चित्तेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम्।
गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिंपाराशरोऽब्रवीत् ॥ २३॥
चातुर्वर्ण्यस्यनारीणां कृच्छ्रंचान्द्रायणव्रतम्।
यथाभूमिस्तथानारी तस्मात्तांनतुदूषयेत् ॥ २४॥
वन्दिग्राहेणयाभुक्ता हत्वाबद्ध्वाबलाद्भयात्।
कृत्वासांतपनंकृच्छ्रं शुद्ध्येत्पाराशरोऽब्रवीत् ॥ २५॥
सकृद्भुक्तातुयानारी नेच्छन्तीपापकर्मभिः।

फिर शिखा सहित सब बाल मुंडा के कुलथी और भात खावे। फिर तीन दिन रात उपवास करके एक दिन रात जल के भीतर बसे॥२०॥ फिर शंखपुष्पी घास की जड़, पत्ते, फूल वा फलों को और सुवर्ण तथा पञ्चगव्य इन सब का काढा बनाकर जल पीवे ॥ २१ ॥ फिर जबतक रजस्वला हो तब तक एक बार भोजन करे भूमि पर सोवे। और जबतक इस व्रत को करे तबतक घर के किसी भाग में बसे ॥ २२ ॥ फिर प्रायश्चित्त पूरा होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे और दो गौ दक्षिणा में देवे यह शुद्धि महर्षि पराशर ने कही है।२३। चारो वर्णों की स्त्रियों के लिये दोष लगने पर कृच्छ्रचान्द्रायणव्रत है क्योंकि स्त्री भूमि के समान है इस से यह सर्वथा त्याज्य नहीं होती। यदि किसी पुरुष ने मारपीट कर या बांधकर या मारडालने का भय दिखा या जबरदस्ती से हाथ पांव बांध कर स्त्री से दुराचार किया हो तो सान्तपन कृच्छ्र व्रत करके शुद्ध होती है यह पाराशर जी ने कहा है। पापकर्मी व्यभिचारियों ने जिस इच्छा न रखती हुई शुद्ध स्त्री से एक बार दुराचार किया हो वह प्राजापत्य व्रत कर और रजस्वला होने

प्राजापत्येनशुद्ध्येत ऋतुप्रस्रवणेनच ॥ २६ ॥
पतत्यर्द्धंशरीरस्य यस्यभार्यासुरांपिबेत् ।
पतितार्द्धशरीरस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥ २७ ॥
गायत्रींजपमानस्तु कृच्छ्रंसांतपनंचरेत् ।
गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ॥ २८ ॥
एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रंसांतपनंस्मृतम् ॥ २९ ॥
जारेणजनयेद्गर्भं मृतेत्यक्तेगतेपतौ ।
तांत्यजेदपरेराष्ट्रे पतितांपापकारिणीम् ॥ ३० ॥
ब्राह्मणीतुयदागच्छेत्परपुंसासमन्विता ।
सातुनष्टाविनिर्दिष्टा नतस्यागमनंपुनः ॥ ३१ ॥
कामान्मोहाच्चयागच्छेत्त्यक्त्वाबन्धून्सुतान्पतिम् ।
साऽपिनष्टापरेलोके मानुषेषुविशेषतः ॥ ३२ ॥

है ॥२६॥ जिस द्विज की स्त्री मद्य पीतीहै उसका आधा अङ्ग पतित हो
है। और जिस का आधा शरीर पतित हो गया उस का यद्यपि कोई
चित्त नहीं है॥२७॥ तथापि गायत्री को जपता हुआ कृच्छ्र सान्तपन व्रत करे
॥ गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, और कुश पीसकर निकाला
इन सब को मिलाकर एकदिन खावे और एकदिन उपवास करे तो यह
सान्तपन व्रत कहाता है ॥२९॥ जो स्त्री अपने पति के त्याग देने पर,
के कहीं चले जाने पर, या पति के मर जाने पर, अन्य जार पुरुष से
भिचार द्वारा सन्तान पैदा कर लेवे उस पतित हुई पापिनि स्त्री को राजा
से निकाल दे अन्य किसी राज्य में भेज देवे ॥ ३० ॥ यदि कोई ब्रा-
णी अन्य पुरुष के साथ मेल करके अपने घर से भाग जावे तो उस को नष्ट
जानो। वह फिर प्रायश्चित्त द्वारा भी ग्राह्य नहीं है ॥३१॥ जो स्त्री किसी
प पर कामासक्त होके वा अज्ञान रूप मोह से, अपने पति, पुत्रों और
धुओं को त्याग के किसी अन्य पुरुष के साथ निकल जावे वह भी परलोक
नष्ट होती उस का परलोक बिगड़ जाता और विशेष कर यह लोक तो
बिगड़ता ही है ॥ ३२ ॥

मदमोहगतानारी क्रोधाद्दण्डादिताडिता।
अद्वितीयंगताचैव पुनरागमनंभवेत् ॥ ३३ ॥
दशमेतुदिनेप्राप्ते प्रायश्चित्तंनविद्यते।
दशाहंनत्यजेन्नारीं त्यजेन्नष्टश्रुतांतथा ॥ ३४ ॥
भर्त्ताचैवचरेत्कृच्छ्रं कृच्छ्रार्द्धंचैवबान्धवाः।
तेषांभुक्त्वाचपीत्वा अहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ ३५ ॥
ब्राह्मणीतुयदागच्छेत्परपुंसाविवर्जिता।
गत्वापुंसांशतंयाति त्यजेयुस्तांतुगोत्रिणः ॥ ३६ ॥
पुंसोयदिगृहंगच्छेत्तदशुद्धंगृहंभवेत्।
पितृमातृगृहंयच्च जारस्यैवतुतद्गृहम् ॥ ३७ ॥
उल्लिख्यतद्गृहंपश्चात्पञ्चगव्येनसेचयेत्।
त्यजेच्चमृन्मयंपात्रं वस्त्रंकाष्ठंचशोधयेत् ॥ ३८ ॥

मद्यादि नशा पीकर वा अज्ञानाहंकार से बिगड़ती हुई स्त्री को क्रोध से पति आदि ने पीटाहो और घरसे निकल जावे परन्तु अन्य पुरुष से [illegible] होने का पक्का प्रमाण मिले तो उसे फिर अपने घर में रख लेना चाहिये यदि स्त्री को घर से निकले दश दिन बीत जावें तो उस का प्रायश्चित्त [illegible] होसकता। अर्थात् दश दिन तक न त्यागे और दश दिन के भीतर भी [illegible] से नष्ट हुई सुन ले तो अवश्य त्याग देवे ॥ ३४ ॥ जिस की स्त्री बाहर [illegible] गयी हो वह पति एक कृच्छ्रव्रत करे और स्त्री के भाई आदि [illegible] कृच्छ्रव्रत करें। तब उन के घर अन्य बिरादरी के लोग खा पीकर एक [illegible] रात में शुद्ध करें ॥ ३५ ॥ यदि कोई ब्राह्मणी पति आदि के रोकने [illegible] अन्य पुरुष के साथ कहीं चली जावे और जाकर सैकड़ों पुरुषों से मेल करे [illegible] भी लौट आना चाहे तो कुटुम्बी लोग उस का त्याग ही कर देवें। [illegible] यदि वह ब्राह्मणी पति के घर में आवे तो वह घर अशुद्ध हो जायगा। यदि अपने मा बाप के घर में जाके रहे तो वह भी व्यभिचारी [illegible] कहावेगा ॥ ३७ उस घर को ऊपर २ से छील कर फिर से लेपन करे [illegible] पञ्चगव्य का सेचन करे। उस घर में जितने मट्टी के पात्र हों सब [illegible] फेंक देवे तथा वस्त्रों और काष्ठ के पात्रों की शुद्धि करे ॥ ३८ ॥

भाराञ्छोधयेत्सर्वान्गोकेशैश्चफलोद्भवान् ।
ताम्राणिपञ्चगव्येन कांस्यानिदशभस्मभिः ॥ ३९ ॥
प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रो ब्राह्मणैरुपपादितम् ।
गोद्वयंदक्षिणांदद्यात्प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ४० ॥
इतरेषामहोरात्रं पञ्चगव्येनशोधनम् ।
सपुत्रःसहभृत्यश्च कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥ ४१ ॥
उपवासैर्व्रतैःपुण्यैः स्नानसंध्यार्चनादिभिः ।
जपहोमदयादानैः शुद्ध्यन्तेब्राह्मणादयः ॥ ४२ ॥
आकाशंवायुरग्निश्च मेध्यंभूमिगतंजलम् ।
नदुष्यन्तिचदर्भाश्च यज्ञेषुचमसायथा ॥ ४३ ॥
इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥
अमेध्यरेतोगोमांसं चाण्डालान्नमथापिवा ।
यदिभुक्तंतुविप्रेण कृच्छ्रंचान्द्रायणंचरेत् ॥ १ ॥

घर के सब सामान की शुद्धि करे तथा फल सम्बन्धी लेजादि की शुद्धि बालों से करे । तामे के पात्रों की पञ्चगव्य के मर्दन से और कांसे के को दश प्रकार के भस्मों से शुद्धि करे ॥ ३९ ॥ फिर वह ब्राह्मण विद्वान् णों की आज्ञानुसार प्रायश्चित्त करे । अर्थात् दो प्राजापत्य व्रत करे और ै दक्षिणा में देवे ॥ ४० ॥ उस घर के अन्य लोग एक दिन रात पञ्चगव्य उपवास द्वारा शुद्धि करें। फिर पुत्र और भृत्यादि सहित ब्राह्मणों को न करावे ॥ ४१ ॥ सामान्य कर उपवास, व्रत, पुण्य, तीर्थादि में स्नान, जा, जप, होम, दया, दान, इत्यादि कामों के द्वारा ब्राह्मणादि शुद्ध होते ।२॥ आकाश, वायु, अग्नि, शुद्धभूमि में भरा वा नदी में बहता हुआ जल, दाभ ये पदार्थ नीच के स्पर्शादि से दूषित नहीं होते कि जैसे यज्ञों में रस के चमस उच्छिष्ट नहीं होते ॥ ४३ ॥

ह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में दशवां अध्याय पूरा हुआ ॥

उन आदि अभक्ष्य, वीर्य, गो मांस, चाण्डाल का अन्न, यदि ब्राह्मण इन थों को खालेवे तो कृच्छ्र चान्द्रायण व्रत करे ॥ १ ॥

तथैवक्षत्रियोवैश्यस्तदर्द्धंतुसमाचरेत् ।
शूद्रोऽप्येवंयदाभुङ्क्ते प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २ ॥
पञ्चगव्यंपिबेच्छूद्रो ब्रह्मकूर्चंपिबेद्द्विजः ।
एकद्वित्रिचतुर्गावो दद्याद्विप्राद्यनुक्रमात् ॥ ३ ॥
शूद्रान्नंसूतकस्यान्नमभोज्यस्यान्नमेवच ।
शङ्कितंप्रतिषिद्धान्नं पूर्वोच्छिष्टंतथैवच ॥ ४ ॥
यदिभुक्तंतुविप्रेण अज्ञानादापदापिवा ।
ज्ञात्वासमाचरेत्कृच्छ्रं ब्रह्मकूर्चंतुपावनम् ॥ ५ ॥
व्यालैर्नकुलमार्जारैरन्नमुच्छिष्टितंयदा ।
तिलदर्भोदकैःप्रोक्ष्य शुद्ध्यतेनात्रसंशयः ॥ ६ ॥
शूद्रोप्यभोज्यंभुक्त्वान्नं पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ।
क्षत्रियोवापिवैश्यश्च प्राजापत्येनशुद्ध्यति ॥७॥
एकपङ्क्त्युपविष्टानां विप्राणांसहभोजने ।
यद्येकोऽपित्यजेत्पात्रं शेषमन्नंनभोजयेत् ॥ ८ ॥

वैसे ही क्षत्रिय वा वैश्य उक्त पदार्थों को खावे तो उस से आधा व्रत करे। श[ूद्र]
भी उक्त पदार्थों को खावे तो एक प्राजापत्य व्रत करे ॥२॥ फिर शूद्र पञ्चग[व्य]
और द्विज ब्रह्म कूर्च पीवे । एक,दो,तीन, तथा चार गौओं का दान ब्रा[ह्मणादि]
क्रमसे करें ॥ ३ ॥ शूद्र का, सूतक वाले का, जिसर के अन्न का निषेध [है]
उसका, जिसमें अपवित्र होने की शंका होगयी हो, जिस (बासी आदि)
खाना मना किया हो, और जो पहिले भोजन करने से बचा हो ॥४॥
पूर्वोक्त शूद्रादि का अन्न ब्राह्मण ने अज्ञान से या आपत्काल में यदि खा[या]
तो जानलेने पर कृच्छ्रव्रत करे और ब्रह्मकूर्च भी पवित्र करने वाला है ।
जिस अन्नमें से सांप, न्योला और बिलाव ने कुछ खाके उच्छिष्ट कर दि[या]
उस पर तिल और दाभ मिलाये जल से मार्जन करने से निःसन्देह शु[द्ध हो]
जाताहै ॥ ६ ॥ शूद्र भी अभोज्य अन्न को खाले तो पञ्चगव्य से शुद्ध हो[ता है]
तथा क्षत्रिय और वैश्य भी अशुद्ध वा वर्जित अन्न को खावें तो प्राजाप[त्य]
व्रत करने से शुद्ध होते हैं ॥७॥ एक पांति में बैठ कर एक साथ भोजन [करते]
हुए ब्राह्मणों में से यदि एक मनुष्य भी पत्तल को त्याग देवे तो पङ्क्ति[के]
सभी शेष अन्न को उच्छिष्ट समझ कर न खावें ॥८॥ यदि कोई ब्राह्मण [...]

मोहाद्भुञ्जीतयस्तत्र पंक्तावुच्छिष्टभोजने ।
प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रः कृच्छ्रंसांतपनंतथा ॥ ९ ॥
पीयूषंश्वेतलशुनं वृन्ताकफलगृञ्जने ।
पलाण्डुंवृक्षनिर्यासान्देवस्वंकवकानिच ॥ १० ॥
उष्ट्रीक्षीरमवीक्षीरमज्ञानाद्भक्षयेद्द्विजः ।
त्रिरात्रमुपवासेन पञ्चगव्येनशुद्ध्यति ॥ ११ ॥
मण्डूकंभक्षयित्वातु मूषिकामांसमेवच ।
ज्ञात्वाविप्रस्त्वहोरात्रं यावकान्नेनशुद्ध्यति ॥ १२ ॥
क्षत्रियश्चापिवैश्यश्च क्रियावन्तौशुचिव्रतौ ।
तद्गृहेषुद्विजैर्भोज्यं हव्यकव्येषुनित्यशः ॥ १३ ॥
घृतंक्षीरंतथातैलं गुडंतैलेनपाचितम् ।
गत्वानदीतटेविप्रो भुञ्जीयाच्छूद्रभाजने ॥ १४ ॥
मद्यमांसरतंनित्यं नीचकर्मप्रवर्तकम् ।

...पांतिमें उच्छिष्ट अन्नको खावे तो ब्राह्मण कृच्छ्र सान्तपन व्रत प्रायश्चित्त ...॥ गिजरी, (दशदिनके भीतरका गोदुग्ध) सफेद लहसुन, बैंगन, गाजर, ..., वृक्षोंका गोंद, देवताका धन, कठफूल ॥१०॥ ऊंटिनीका दूध, भेड़का दूध इन ...को जो ब्राह्मण अज्ञानसे खावे वह तीन उपवास करके पञ्चगव्य से शुद्ध होता ...॥ मेंढक, चूहा इन का मांस ब्राह्मण जान कर खालेवे तो एक दिन रात ...यौ अन्न खाने से शुद्ध होता है ॥ १२ ॥ जो क्षत्रिय और वैश्य बाहरी भी... सब प्रकार की शुद्धि नियम से रखते हुए सन्ध्या तर्पण पञ्चमहायज्ञा... कर्म यथावत् करते हों उन के घरों में देव पितर सम्बन्धी कामों के स... ब्राह्मणों को सदा भोजन करना चाहिये ॥१३॥ घी, दूध, तेल, गुड़, और ...से पकाया कोई पदार्थ हो शूद्र के घर के इन सब को नदी किनारे ला... शूद्र के पात्र में भी ब्राह्मण खा सकता है ॥ १४ ॥ जो मद्य मांस खाने ...में तत्पर तथा नीच कर्मों का प्रवर्त्तक हो ऐसे शूद्र को चाण्डाल के तुल्य

तंशूद्रंवर्जयेद्विप्रः श्वपाकमिवदूरतः ॥ १५ ॥
द्विजशुश्रूषणरतान्मद्यमांसविवर्जितान् ।
स्वकर्मनिरतान्नित्यं ताञ्छूद्रान्नत्यजेद्द्विजः ॥१६॥
अज्ञानाद्भुञ्जतेविप्राः सूतकेमृतकेऽपिवा ।
प्रायश्चित्तंकथंतेषां वर्णवर्णेविनिर्दिशेत् ॥ १७ ॥
गायत्र्यष्टसहस्रेण शुद्धिःस्याच्छूद्रसूतके ।
वैश्येपञ्चसहस्रेण त्रिसहस्रेणक्षत्रिये ॥ १८ ॥
ब्राह्मणस्ययदाभुङ्क्ते प्राणायामेनशुद्ध्यति ।
अथवावामदेव्येन साम्नाचैकेनशुद्ध्यति ॥ १९ ॥
शुष्कान्नंगोरसंस्नेहं शूद्रवेश्मनआगतम् ।
पक्वंविप्रगृहेपूतं भोज्यंतंमनुरब्रवीत ॥ २० ॥
आपत्कालेतुविप्रेण भुक्तंशूद्रगृहेयदि ।
मनस्तापेनशुद्ध्येत द्रुपदांवाशतंजपेत् ॥ २१ ॥

नीच समझ कर ब्राह्मण दूर से त्याग देवे ॥१५॥ मद्य मांस जिन ने त्या
हो ब्राह्मणों की सेवा शुश्रूषामें जो तत्पर हों ऐसे स्वकर्मनिष्ठ
त्याग ब्राह्मण न करे ॥ १६ ॥ जो ब्राह्मण लोग अज्ञान से जन्म
वा मृतक अशुद्धि में किसी के यहां भोजन करते हैं उन का प्राय
श्चित्त कैसे हो ?॥ १७ ॥ शूद्र के सूतक में किये भोजन पर आठ हजार
जपने से शुद्धि होती, वैश्य के घर में भोजन करने से पांच हजार गा
और क्षत्रिय के घर में सूतक के समय भोजन करे तो तीन हजार
का जप करने से शुद्धि होती है ॥ १८ ॥ और ब्राह्मण के घर में सूतक
मय खावे तो प्राणायाम करने से ही शुद्ध हो जाता है। अथवा एक वा
देव्य साम का गान करने से शुद्ध हो जाता है ॥ १९ ॥ सूखा अन्न,
घी, तेल, इन को शूद्र के घर से लाकर ब्राह्मण के घर में पकाने पर
करने योग्य पवित्र होजाता है यह मनु जी ने कहा है ॥२०॥ यदि
में ब्राह्मण ने शूद्र के घर में भोजन कर लिया हो तो मन में पश्चात् ताप
शुद्ध हो जाता है अथवा (द्रुपदादिव०) मन्त्र को एक सौ बार जपे

दासनापितगोपाल-कुलमित्रार्द्धसीरिणः ।
एतेशूद्रेषुभोज्यान्ना यश्चात्मानंनिवेदयेत् ॥ २२ ॥
शूद्रकन्यासमुत्पन्नो ब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ।
संस्कृतस्तुभवेद्दासो ह्यसंस्कारैस्तुनापितः ॥ २३ ॥
क्षत्रियाच्छूद्रकन्यायां समुत्पन्नस्तुयःसुतः ।
सगोपालइतिख्यातो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २४ ॥
वैश्यकन्यासमुद्भूतो ब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ।
सह्यार्द्धिकइतिज्ञेयो भोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २५ ॥
भाण्डस्थितमभोज्येषु जलंदधिघृतंपयः ।
अकामतस्तुयोभुङ्क्ते प्रायश्चित्तंकथंभवेत् ॥ २६ ॥
ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यः शूद्रोवाप्युपसर्पति ।

दास नाम कहार, नाई, आभीर (अहीर) अपने कुल का मित्र, (कुल शब्द का अपभ्रंश-कुर्मी हुआ हो यह भी सम्भव है) खेती में आधा ी, ये सब शूद्रों में भोजन करने योग्य हैं अर्थात् इन का तथा शरणागत का सूखा अन्न आटा दाल आदि भोजनार्थ लेने में ब्राह्मण को दोष नहीं ता है ॥ २१ ॥ ब्राह्मण से शूद्र की कन्या में जो सन्तान पैदा हो उस का कार यदि ब्राह्मण ने कराया हो तो वह दास (कहार) माना जावे और ई संस्कार न हो तो वह नाई होगा । (यहां संस्कार पद से ब्राह्मण रा पालन पोषण अर्थ लेना चाहिये) ॥ २३ ॥ क्षत्रिय पुरुष से शूद्र की क- ा में जो सन्तान पैदा हो उस को गोपाल कहते हैं । ब्राह्मण लोग उस गो- ल का अन्न खा सकते हैं इस में सन्देह नहीं ॥ २४ ॥ क्षत्रिय से वैश्य की न्या में जो सन्तान पैदा हो और ब्राह्मण उस का संस्कार करे तो वह र्द्धिक कहाता है और ब्राह्मण लोग उस का अन्न निःसन्देह खावें ॥ २५ ॥ न का अन्न खाना वर्जित है उन के पात्र में रक्खा जल, दही, घी, वा दूध न को जो कामना के विना खाता है उस का प्रायश्चित्त कैसे हो ? ॥ २६ ॥ ाह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र यदि उक्त अपराध का प्रायश्चित्त धर्म सभा से

ब्रह्मकूर्चोपवासेन यथावर्णस्यनिष्कृतिः ॥ २७ ॥
शूद्राणांनोपवासःस्याच्छूद्रोदानेनशुद्ध्यति।
ब्रह्मकूर्चमहोरात्रं श्वपाकमपिशोधयेत् ॥ २८ ॥
गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम्।
निर्दिष्टंपञ्चगव्यंच पवित्रंपापशोधनम् ॥ २९ ॥
गोमूत्रंकृष्णवर्णायाः श्वेतायाश्चैवगोमयम्।
पयश्चताम्रवर्णाया रक्तायागृह्यतेदधि ॥ ३० ॥
कपिलायाघृतंग्राह्यं सर्वंकापिलमेववा।
मूत्रमेकपलंदद्यादङ्गुष्ठार्द्धंतुगोमयम् ॥ ३१ ॥
क्षीरंसप्तपलंदद्याद्दधित्रिपलमुच्यते।
घृतमेकपलंदद्यात्पलमेकंकुशोदकम् ॥ ३२ ॥
गायत्र्यादायगोमूत्रं गन्धद्वारेतिगोमयम्।

चाहें तो ब्रह्मकूर्च रूप उपवास से यथा योग्य भिन्न २ प्रकार वर्णों का प्राय-
श्चित्त जानो ॥२७॥ शूद्रों के लिये ब्रह्मकूर्चादि का पान वा उपवास
निषिद्ध है किन्तु शूद्रदान करने से शुद्ध हो जाता है। ब्राह्मणादि द्वि-
रूप एक दिन रात ब्रह्मकूर्च उपवास करे तो चाण्डाल के तुल्य लगे पाप को
भी यह व्रत शुद्ध कर देता है ॥ २८ ॥ (अब तक पूर्व में कई बार ब्रह्मकूर्चोप-
वास का प्रसंग आचुका है सो अब यहां से ४० श्लोक तक ब्रह्मकूर्च का
विधान कहते हैं सो जहां २ ब्रह्मकूर्च कहा है वहां २ इसी विधान को
लेना) गो मूत्र, गोवर, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, और कुशों को धो कर
थोड़ा जल इस प्रकार कुशोदक और पञ्चगव्य का निम्न रीति से सेवन
परम पवित्र होने से पापों का शोधन करने वाला है ॥ २९ ॥ काली गौ का
गोमूत्र लेवे, श्वेत गौ का गोवर लेवे, ताम्र वर्ण गौ का दूध लेवे, लाल
का दही ॥ ३० ॥ कपिला गौ का घी लेना चाहिये। अथवा गौ मूत्रादि
कपिला गौ का लेवे। एक पल (चार तोला) गोमूत्र, अपने आधे अंगूठे
गोबर ॥ ३१ ॥ सात पल (अट्ठाईस तोला) गौ का दूध लेवे, तीन पल
तोला) दही, एक पल (४ तोला) घी और एक पल कुशोदक मे
(तत्सवितु०) गायत्री से गोमूत्र, (गन्धद्वारां०) लक्ष्मीसूक्त के

आप्यायस्वेतिचक्षीरं दधिक्राव्णस्तथादधि ॥ ३३ ॥
तेजोसिशुक्रमित्याज्यं देवस्यत्वाकुशोदकम् ।
पञ्चगव्यमृचापूतं स्थापयेदग्निसन्निधौ ॥ ३४ ॥
आपोहिष्ठेतिचालोड्य मानस्तोकेतिमन्त्रयेत् ।
सप्तावरास्तुयेदर्भा अच्छिन्नाग्राःशुकत्विषः ॥ ३५ ॥
एतैरुद्धृत्यहोतव्यं पञ्चगव्यंयथाविधि ।
इरावतोइदंविष्णुर्मानस्तोकेचशंवती ॥ ३६ ॥
एताभिश्चैवहोतव्यं हुतशेषंपिबेद्द्विजः ॥ ३७ ॥
आलोड्यप्रणवेनैव निर्मथ्यप्रणवेनतु ।
उद्धृत्यप्रणवेनैव पिबेच्चप्रणवेनतु ॥ ३८ ॥
यत्त्वगस्थिगतंपापं देहेतिष्ठतिदेहिनाम् ।
ब्रह्मकूर्चोदहेत्सर्वं यथैवाग्निरिवेन्धनम् ॥ ३९ ॥

र, (आप्यायस्व समेतु० यजु० अ०१२ । ११२) मन्त्रसे दूध, (दधिक्राव्णोअका० । अ० २३ । ३२) मन्त्रसे दही, (तेजोऽसिशुक्रमस्य० यजु०१ । ३१) मन्त्र से घी, स्यत्वा०-हस्ताभ्यां गृह्णामि । यजु०अ० १।१०) मन्त्र से कुशोदक लेवे । इस र ऋचाओं से पवित्र किये पञ्चगव्य तथा कुशोदक को लेकर अग्निकुण्ड के प स्थापित करे ॥ ३३।३४ ॥ फिर (आपोहिष्ठा० यजु० अ० ११ । ५०) इत्या- तीन मन्त्रों से गोमूत्रादि सब को मिलाके (आलोडन करके) (मानस्तो यजु० अ० १६ । १६) मन्त्र से अभिमन्त्रण करे अर्थात् मन्त्र पढ़ना हुआ दुग्धादि को देखे । फिर जिनका अग्रभाग न टूटा हो ऐसे ठीकर इरे कम से । सात दाभों से ॥ ३५ ॥ कुशोदक सहित पञ्चगव्य को लेर कर निम्न मन्त्रों यथाविधि होम करे । (इरावती धेनुमती० यजु०अ० ५।१६) (इदं विष्णुर्वि० ः० अ०५ । १५) (मानस्तोकेतनये० यजु० अ० १६ । १६) और यजु० अ० के (शंनो मित्रः०) इत्यादि शं शब्द वाले मन्त्रों से ॥३६॥ होम करे फिर होमसे प बचे भागको निम्न प्रकार पीवे ॥३७॥ ओंकार से आलोडन कर ओंकार से न्थन कर ओंकार से ही उठाकर तथा ओंकार पढ़ के ही पीवे ॥ ३८ ॥ जो प मनुष्यों के शरीर की त्वचा तथा हड्डियों में भी पैठ गया हो उस सब ो यह ब्रह्मकूर्च ऐसे ही भस्म कर देता है जैसे कि इंधन को अग्नि जलावे ॥ ३९॥

पवित्रंत्रिषुलोकेषु देवताभिरधिष्ठितम् ।
वरुणश्चैवगोमूत्रे गोमयेहव्यवाहनः ।
दध्निवायुःसमुद्दिष्टः सोमःक्षीरेघृतेरविः ॥ ४० ॥
पिबतःपतितंतोयं भाजनेमुखनिःसृतम् ।
अपेयंतद्विजानीयाद् भुक्त्वाचान्द्रायणंचरेत् ॥४[१॥]
कूपेचपतितंदृष्ट्वा श्वशृगालौचमर्कटम् ।
अस्थिचर्मादिपतिताः पीत्वामेध्याअपोद्विजः ॥४[२॥]
नारंतुकुणपंकाकं विड्वराहंखरोष्ट्रकम् ।
गावयंसौप्रतीकंच मायूरंखाड्गकंतथा ॥ ४३ ॥
वैयाघ्रमार्क्षंसैंहंवा कूपेयदिनिमज्जति ॥ ४४ ॥
तडागस्याऽपिदुष्टस्य पीतंस्यादुदकंयदि ॥
प्रायश्चित्तंभवेत्पुंसः क्रमेणैतेनसर्वशः ॥ ४५ ॥
विप्रःशुद्ध्येत्त्रिरात्रेण क्षत्रियस्तुदिनद्वयात् ।
एकाहेनतुवैश्यश्च शूद्रोनक्तेनशुद्ध्यति ॥ ४६ ॥
परपाकनिवृत्तस्य परपाकरतस्यच ।

यह ब्रह्मकूर्च अनेक देवताओं से अधिष्ठित होने से तीनों लोकों में [illegible]
त्र है। गो मूत्र में वरुण देवता, गोबर में अग्नि, दही में वायु, दूध में [illegible]
घी में सूर्य नारायण विराजते हैं ॥ ४० ॥ जल पीते समय मुख से [illegible]
जलपात्र में झूठा जल गिरजाय तो वह पात्र का जल पीने योग्य नहीं है
उस को पीलेवे तो चान्द्रायण व्रत करे ॥४१॥ यदि कुए में कुत्ता, गीदड़,
बांदर, चाम आदि गिरे हुए देखकर भी द्विज पुरुष उस अशुद्ध जल को पीवे [illegible]
मनुष्य का मुर्दा देह, कौवा, विष्ठा खाने वाला सूअर, गधा, ऊंट [illegible]
बनाव) हाथी, मोर, गैंडा, ॥ ४३ ॥ बाघ, रीछ, सिंह, ये यदि [illegible]
जाय ॥ ४४ ॥ और तालाब का बिगड़ा हुआ खराब दुर्गंधयुक्त [illegible]
पीया जाय तो पुरुषों का क्रमसे यह भिन्न प्रायश्चित है कि [illegible]
तीन दिन रात, क्षत्रिय दो दिन रात, के उपवास से वैश्य एक दिन
उपवास से और शूद्र रातभर के उपवास से शुद्ध होता है ॥ ४६ ॥
परपाक से निवृत्त हो और जो परपाक रत हो इन दोनों को [illegible]

स्नात्वातिष्ठन्नहःशेषमभिवाद्यप्रसादयेत् ॥ ५३ ॥
ताडयित्वातृणेनापि कण्ठेबध्वापिवाससा।
विवादेनापिनिर्जित्य प्रणिपत्यप्रसादयेत् ॥ ५४ ॥
अवगूर्यत्वहोरात्रं त्रिरात्रंक्षितिपातने।
अतिकृच्छ्रंचरुधिरे कृच्छ्रमन्तरशोणिते ॥ ५५ ॥
नवाहमतिकृच्छ्रंस्यात्पाणिपूरान्नभोजनम्।
त्रिरात्रमुपवासःस्यादतिकृच्छ्रःसउच्यते ॥ ५६ ॥
सर्वेपामेवपापानां संकरेसमुपस्थिते।
शतंसाहस्रमभ्यस्ता गायत्रीशोधनंपरम् ॥ ५७ ॥
इति पाराशरीये धर्म्मशास्त्र एकादशोऽध्यायः।
दुःस्वप्नंयदिपश्येत्तु वान्तेवाक्षरकर्मणि।
मैथुनेप्रेतधूमेच स्नानमेवविधीयते ॥ १ ॥
अज्ञानात्प्राश्यविण्मूत्रं सुरासंस्पृष्टमेवच।

जितना दिन शेष हो उतने कालतक स्नान करके खड़ा रहे फिर प्र
रके प्रसन्न (राजी) करे॥५३॥ तृण से भी ब्राह्मण को ताड़ना करके
के कण्ठ में वस्त्र भी बांधकर अथवा ब्राह्मण को शास्त्रार्थ में जीत
करके प्रसन्न करे ॥५४॥ ब्राह्मण की ओर गुर्रा कर वा ऐंठ दिन
रात और पृथिवी पर पटक देकर तीन दिन रात उपवास करे
रुधिर निकालने पर अतिकृच्छ्र व्रत करे और रुधिर न निकले
चोट लगे तो कृच्छ्रव्रत करे ॥५५॥ जो नौ ९ दिन तक पकाया हुआ
अन्न खावे वह अतिकृच्छ्र होता है। या तीन दिन रात उपवास
तिकृच्छ्र कहते हैं ॥ ५६ ॥ यदि सब पापों का संकर होजाय
प्रकार के अनेक पाप जिस ने किये हों वह भी हजार (एक ला
लाख गायत्री का अभ्यास जप करे यह अनुष्ठान परम शुद्धि करने
यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ग्यारहवां अध्याय
वमन, क्षौरकर्म, मैथुन, प्रेत का धूम, इन विषयों में या दुः
स्वप्न देखे तो तत्काल स्नान करना कहा है ॥ १ ॥ अज्ञान से विष

स्नानानिपञ्चपुण्यानि कीर्त्तितानिमनीषिभिः।
आग्नेयंवारुणंब्राह्मं वायव्यंदिव्यमेवच ॥ ९ ॥
आग्नेयंभस्मनास्नानमवगाह्यतुवारुणम्।
आपोहिष्ठेतिचब्राह्मं वायव्यं गोरजःस्मृतम्॥ १०
यत्तुसातपवर्षेण स्नानंतद्दिव्यमुच्यते।
तत्रस्नात्वातुगंगायां स्नातोभवतिमानवः॥ ११ ॥
स्नातुंयान्तंद्विजंसर्वे देवाःपितृगणैःसह।
वायुभूतास्तुगच्छन्ति तृषार्त्ताःसलिलार्थिनः॥ १२
निराशास्तेनिवर्तन्ते वस्त्रनिष्पीडनेकृते।
तस्मान्नपीडयेद्वस्त्रमकृत्वापितृतर्पणम्॥ १३॥
रोमकूपेष्ववस्थाप्य यस्तिलैस्तर्पयेत्पितॄन्।
तर्पितास्तेनतेसर्वे रुधिरेणमलेनच॥ १४॥
अवधूनोतियःकेशान् स्नात्वाप्रस्रवतोद्विजः।

मुनि लोगों ने पांच स्नान पवित्र कहे हैं १ आग्नेय,२ वारुण, ३ ब्राह्म
व्य, ५ दिव्य, ॥९॥ भस्म से किया स्नान आग्नेय,जल से किये को वारुण
हिष्ठा०) इन तीन आदि मंत्रों से किये स्नान को ब्राह्म, गौओं के
उड़ी धलि से किये को वायव्य स्नान कहते हैं॥१०॥ और जो वर्षा में
भी निकल रही हो उस समय मेघ की बूंदों से जो स्नान करे उसे दि
कहते हैं क्योंकि उस वर्षा में स्नान करके मनुष्य को गंगा के स्नान
होता है ॥ ११ ॥ जिस समय ब्राह्मण स्नान करने को जाता है उस
य देवता, पितरों के सहित तृषा से पीड़ित हुए जल के लिये वायु
धारण करके ब्राह्मण के पीछे२ चलते हैं॥१२॥ यदि वह ब्राह्मण तर्पण
पहिले वस्त्र (धोती) निचोड़ ले तो वे निराश होकर लौट जाते हैं।
से देव, ऋषि, पितरों का तर्पण किये विना वस्त्र को न निचोड़े॥१३॥
पर तिलों को रखकर जो मनुष्य पितरों का तर्पण करता है उसने
धिर और मल से उन सब पितरों को तृप्त किया जानो॥१४॥ जो द्विज
य स्नान करके टपकते हुए केशों को झाड़ता है और जल के भीतर

आचामेद्वाजलस्थोपि वाह्यःसपितृदैवतैः ॥ १५ ॥
शिरःप्रावृत्यकण्ठंवा मुक्तकच्छशिखोपिवा ।
विनायज्ञोपवीतेन आचान्तोप्यशुचिर्भवेत् ॥ १६ ॥
जलेस्थलस्थोनाचामेज्जलस्थश्चवहिस्थले ।
उभेस्पृष्ट्वासमाचामेदुभयत्रशुचिर्भवेत् ॥ १७ ॥
स्नात्वापीत्वाक्षुतेसुप्ते भुक्त्वारथ्योपसर्प्पणे ।
आचान्तःपुनराचामेद्वासोविपरिधायच ॥ १८ ॥
क्षुतेनिष्ठीवनेचैव दन्तोच्छिष्टेतथाऽनृते ।
पतितानांचसंभाषे दक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ १९ ॥
ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्च सोमःसूर्योऽनिलस्तथा ।
तेसर्वेह्यपितिष्ठन्ति कर्णेविप्रस्यदक्षिणे ॥ २० ॥
भास्करस्यकरैःपूतं दिवास्नानंप्रशस्यते ।
अप्रशस्तंनिशिस्नानं राहोरन्यत्रदर्शनात् ॥ २१ ॥
मरुतोवसवोरुद्रा आदित्याश्चाथदेवताः ।

॰ आचमन करता है वह मनुष्य पितर और देवताओं से वाह्य (देव कर्म ॰र कर्म के अयोग्य) है ॥ १५ ॥ शिर वा कंठ को बांध कर कांछ खोल के वा ॰खा को खोलकर, अथवा जनेऊ के विना जो आचमन करता है वह आचमन ॰के भी अशुद्ध ही रहता है ॥१६॥ स्थल में बैठा मनुष्य जल में और जल में बैठा ॰ल में आचमन न करै किन्तु स्थल में बैठा हो तो स्थल में ही आचमन करै ॰र जल में बैठा हो तो जल में ही आचमन करे तो शुद्ध होता है ॥ १७ ॥ ॰चमन किये पीछे यदि स्नान करे, जल पीवे, छींक आवे, सोवे, खावे, अथ॰ मार्ग में चले, वस्त्र पहने, (कपड़ा बदले) तो, फिर से आचमन करै ॥ १८ ॥ ॰कना, थूकना, दांतों में उच्छिष्ट (जूठन) निकलना, अथवा झूंठ बो॰ ॰ना, या पतितों के संग संभाषण करना, इन के होने पर ब्राह्मण अपने द॰ ॰ने कान का स्पर्श करे ॥ १९ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सोम, सूर्य, वायु, ये सब ॰वता ब्राह्मण के दहिने कान में रहते हैं ॥ २० ॥ सूर्य की किरणों से पवित्र ॰आ जो दिनमें स्नान करना है वहउत्तम है और राहु के द्वारा हुए चन्द्र ॰हण को छोड़ कर रात्रि का स्नान अधम कहा है ॥ २१ ॥ उनचास मरुत, ॰ाठ वसु, ग्यारह रुद्र, और बारह आदित्य, ये सब देवता चन्द्रग्रहण के समय

सर्वेसोमेप्रलीयन्ते तस्मात्स्नानंतुतद्ग्रहे ॥ २२ ॥
खलयज्ञेविवाहेच संक्रान्तौग्रहणेतथा ।
शर्वर्य्यांदानमस्त्येव नाऽन्यत्रतुविधीयते ॥ २३ ॥
पुत्रजन्मनियज्ञेच तथाचात्ययकर्मणि ।
राहोश्चदर्शनेदानं प्रशस्तंनान्यदानिशि ॥ २४ ॥
महानिशातुविज्ञेया मध्यस्थंप्रहरद्वयम् ।
प्रदोषपश्चिमौयामौ दिनवत्स्नानमाचरेत् ॥ २५ ॥
चैत्यवृक्षश्चितिस्थश्च चाण्डालःसोमविक्रयी ।
एतांस्तुब्राह्मणःस्पृष्ट्वा सवासाजलमाविशेत् ॥ २६ ॥
अस्थिसंचयनात्पूर्वं रुदित्वास्नानमाचरेत् ।
अन्तर्दशाहेविप्रस्य ह्यूर्ध्वमाचमनंस्मृतम् ॥ २७ ॥
सर्वंगंगासमंतोयं राहुग्रस्तेदिवाकरे ।
सोमग्रहेतथैवोक्तं स्नानदानादिकर्मसु ॥ २८ ॥

चंद्रमा में लीन होते (छिप जाते हैं) तिससे चन्द्रग्रहण का स्नान होने पर अवश्य करे ॥ २२ ॥ खलियान में होने वाले खलयज्ञ, विवाह, संक्रान्ति, चन्द्र ग्रहण इन में रात्रि में भी दान कहा ही है अन्यत्र नहीं ॥ २३ ॥ पुत्र जन्म होने पर, यज्ञ में, मृतक के कर्म में, राहु के दर्शन (ग्रहण) के अवसरों पर रात्री में दान करना उत्तम कहा है अन्यत्र नहीं ॥ २४ ॥ रात्रि के बीच के दो पहरों को महानिशा कहते हैं। इस से सायंकाल तथा प्रातः काल की रात के दो पहरों में दिन के समान स्नान दानादि करे ॥ २५ ॥ चैत्य का वृक्ष जो मरघट पर उगा हो, चिता, चांडाल, यज्ञ में सोम का बेचने वाला, इन का स्पर्श करके ब्राह्मण सचैल स्नान करे ॥ २६ ॥ अस्थिसंचयन (मरे के फूल इकट्ठे करने) से पहिले रोवे तो स्नान करे। ब्राह्मण को दशाहिन के भीतर रोने पर स्नान करना और दशाहिन बीते पर आचमन करना कहा है ॥ २७ ॥ जिस समय राहु, सूर्य वा चंद्रमा को ग्रसे तब स्नान दान आदि कर्मों में सब जल गंगा जल के समान कहे हैं।

कुशैःपूतंभवेत्स्नानं कुशेनोपस्पृशेद्द्विजः ।
कुशेनचोद्धृतंतोयं सोमपानसमंभवेत् ॥ २९ ॥
अग्निकार्यात्परिभ्रष्टाः संध्योपासनवर्जिताः ।
वेदंचैवानधीयानाः सर्वेतेवृषलाःस्मृताः ॥ ३० ॥
तस्माद्वृषलभीतेन ब्राह्मणेनविशेषतः ।
अध्येतव्योप्येकदेशो यदिसर्वंनशक्यते ॥ ३१ ॥
शूद्रान्नरसपुष्टस्याप्यधीयानस्यनित्यशः ।
जपतोजुह्वतोवापि गतिरूर्ध्वानविद्यते ॥ ३२ ॥
शूद्रान्नंशूद्रसंपर्कः शूद्रेणतुसहासनम् ।
शूद्राज्ज्ञानागमश्चापि ज्वलन्तमपिपातयेत् ॥ ३३ ॥
यःशूद्र्यापाचयेन्नित्यं शूद्रीचगृहमेधिनी ।
वर्जितःपितृदेवेभ्यो रौरवंयातिसद्विजः ॥ ३४ ॥
मृतसूतकपुष्टाङ्गं द्विजंशूद्रान्नभोजिनम् ।

से मार्जन पूर्वक स्नान करना पवित्र कारक होता है और कुशों से ही [illegible]
[illegible] द्विज आचमन करे क्योंकि कुशों से उठाया जल सोम के पान के तुल्य
[illegible] होता है ॥२९॥ जो ब्राह्मण अग्निहोत्र से भ्रष्ट और संध्योपासन से वर्जित
[illegible] विधिपूर्वक वेद को भी नहीं पढ़ते वे सब शूद्र के तुल्य कहे हैं ॥३०॥
[illegible] शूद्र होजाने के भयसे विशेष कर ब्राह्मणको चाहिये कि यदि सब वेद [illegible]
[illegible] सके तो वेद का कोई एक भाग ही पढ़े ॥३१॥ जो ब्राह्मण शूद्र के [illegible]
[illegible] को खाके पुष्ट हुआ हो वह प्रतिदिन वेद का अध्ययन जप सदा होम
[illegible] हुआ भी स्वर्ग को प्राप्त नहीं होता ॥३२॥ शूद्र का अन्न शूद्र का संपर्क, सन
[illegible] के संग एक जगह निवास करना, शूद्र से विद्या लेना, ये काम [illegible]
[illegible] ब्राह्मण को भी पतित करदेते हैं ॥ ३३ ॥ जो द्विज शूद्री स्त्री से भो-
[illegible] जनबनाता हो और जिस के घर में शूद्री ही स्त्री हो वह द्विज [illegible]
[illegible] देवताओं से वर्जित हुआ रौरव नरक को प्राप्त होता है ॥३४॥ मरण [illegible]
[illegible] के सूतक का अन्न खा २ के जिन का शरीर पुष्ट हुआ हो और जो शूद्र

अहंतन्नविजानामि कांकांयोनिंगमिष्यति ॥ ३५ ॥

गृध्रोद्वादशजन्मानि दशजन्मानिसूकरः ।

श्वयोनौसप्तजन्मानि इत्येवंमनुरब्रवीत् ॥ ३६ ॥

दक्षिणार्थंतुयोविप्रः शूद्रस्यजुहुयाद्धविः ।

ब्राह्मणस्तुभवेच्छूद्रः शूद्रस्तुब्राह्मणोभवेत् ॥ ३७ ॥

मौनव्रतंसमाश्रित्य आसीनोनवदेद्द्विजः ।

भुञ्जानोहिवदेद्यस्तु तदन्नंपरिवर्जयेत् ॥ ३८ ॥

अर्द्धभुक्तेतुयोविप्रस्तस्मिन्पात्रेजलंपिवेत् ।

हतंदैवंचपित्र्यंच आत्मानंचोपघातयेत् ॥ ३९ ॥

भुञ्जानेषुतुविप्रेषु योऽग्रेपात्रंविमुञ्चति ।

समूढःसचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नःसखलूच्यते ॥ ४० ॥

भाजनेषुचतिष्ठत्सु स्वस्तिकुर्वन्तियेद्विजाः ।

नदेवास्तृप्तिमायान्ति निराशाःपितरस्तथा ॥ ४१ ॥

के अन्न को खाता हो हम नहीं जानते कि वह ब्राह्मण किस २ योनि जायगा? ॥३५॥ परन्तु मनुजी ने ऐसा कहा है कि बारह जन्म तक गीध दश जन्मतक सूकर और सात जन्म तक कुत्तेकी योनियों जन्म लेता ॥३६॥ जो ब्राह्मण दक्षिणा के लिये शूद्र के हविष्य का होम करे वह ब्राह्मण जन्मान्तर में शूद्र होता और वह शूद्र ब्राह्मण कुल में जन्मता है ॥३७॥ मौनव्रत को धारण करके जो ब्राह्मण बैठा हुआ न बोले और वह भोजन करता हुआ बोले उस के अन्न को त्याग देना चाहिये ॥ ३८ ॥ आधा भोजन किये पीछे जो ब्राह्मण उसी भोजन के पात्र में जल पीवे उस के देव और पितरों का कर्म नष्ट होता और वह अपने को भी नष्ट करता है ॥३९॥ भोजन पाती पांति में ब्राह्मणों के भोजन करते हुए जो पहिले पात्र को छोड़ देवे वह मूढ़ बड़ा पापी और ब्रह्महत्यारा कहाता है ॥ ४० ॥ भोजन पात्रों के उठाने से पहिले जो ब्राह्मण स्वस्ति (कल्याण हो) कहते हैं उन पर देवता तृप्त नहीं होते और पितर भी निराश हो के लौट जाते हैं ॥ ४१ ॥

नात्वावेनभुञ्जीत द्विजश्चाग्निमपूज्यच ।
र्णपृष्ठे भुञ्जीत रात्रौदीपंविनातथा ॥ ४२ ॥
स्यस्तुदयायुक्तो धर्ममेवानुचिन्तयेत् ।
यवर्गार्थसिद्ध्यर्थं न्यायवर्तीसबुद्धिमान् ॥ ४३ ॥
ायोपार्जितवित्तेन कर्त्तव्यंह्यात्मरक्षणम् ।
न्यायेनतुयोजीवे त्सर्वकर्मबहिष्कृतः ॥ ४४ ॥
ेनचित्कपिलासत्री राजाभिक्षुर्महोदधिः ।
मात्राःपुनन्त्येते तस्मात्पश्येत्तु नित्यशः ॥ ४५ ॥
णिंकृष्णमार्जारं चन्दनंसुमणिंघृतम् ।
लान्कृष्णाजिनं छागंगृहेचैतानिरक्षयेत् ॥ ४६ ॥
ांशतंसैकवृषं यत्रतिष्ठत्ययन्त्रितम् ।
क्षेत्रंदशगुणितं गोचर्मपरिकीर्तितम् ॥ ४७ ॥
ह्महत्यादिभिर्मर्त्यो मनोवाक्कायकर्मभिः ।
तद्गोचर्मदानेन मुच्यतेसर्वकिल्बिषैः ॥ ४८ ॥

ब्राह्मण को चाहिये कि-स्नान किये विना और अग्नि को पूजे विना करै, पत्तों की पीठ (उलटी पत्तल) पर और रात्रि में दीपक के ना अंधेरे में भोजन न करे॥४२॥ दया युक्त हुआ गृहस्थ पुरुष धर्म की करे। अपने पोष्यवर्ग (पुत्र वा भृत्य आदि) के निर्वाह की सिद्धि बुद्धिमान् सदैव न्याय से अन्न धनादि का संचय करे ॥ ४३ ॥ न्याय धर्मानुकूल संचय किये धन से अपनी रक्षा करे। क्योंकि जो पुरुष अ-ाय से जीविका करता है वह सब कर्म धर्मों से बाहर (अनधिकारी) है ॥ ४४ ॥ यजन यज्ञ करने वाला, कपिला गौ, सत्रयज्ञ करने वाला, क्षु, (संन्यासी) समुद्र, ये सब दर्शन से ही दर्शन कर्त्ता को पवित्र । तिससे इन का नित्य दर्शन करे॥४५॥ अरणि, काला विलाव, चन्दन, णि, घी, तिल, काला मृगचर्म, बकरा, इन को घर में रक्खा करे ॥४६॥ जगह में सौ गौ और एक बैल विना बांधे खड़े हो सकें उस से द-जगह भूमि को गोचर्म कहते हैं ॥४७॥ इस गोचर्ममात्र भूमि के दान से मनुष्य ाणी, और शरीर से किये ब्रह्महत्या आदि पापों से छूट जाता है ॥४८॥

कुटुंबिनेदरिद्राय श्रोत्रियायविशेषतः ।
यद्दानंदीयतेतस्मै तद्दानंशुभकारकम् ॥ ४९ ॥
वापीकूपतडागाद्यैर्वाजपेयशतैर्मखैः ।
गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्तानशुद्ध्यति ॥५०
आषोडशदिनादर्वाक् स्नानमेवरजस्वला ।
अतऊर्ध्वंत्रिरात्रंस्यादुशनामुनिरब्रवीत् ॥ ५१॥
युगंयुगद्वयंचैव त्रियुगंचचतुर्युगम् ।
चाण्डालसूतिकोदक्या पतितानामधःक्रमात् ॥ ५२॥
ततःसन्निधिमात्रेण सचैलंस्नानमाचरेत् ।
स्नात्वावलोकयेत्सूर्यमज्ञानात्तत्स्पृशतेयदि ॥ ५३॥
वापीकूपतडागेषु ब्राह्मणोज्ञानदुर्बलः ।
तोयंपिबतिवक्त्रेण श्वयोनौजायतेध्रुवम् ॥ ५४॥
यस्तुक्रुद्धःपुमान्भार्य्यां प्रतिज्ञाप्याप्यगम्यताम् ।
पुनरिच्छतितांगन्तुं विप्रमध्येतुश्रावयेत् ॥ ५५ ॥

जो ब्राह्मणकुटुम्ब वाला हो, दरिद्रहो, और विशेष कर वेदपाठी हो, दान दिया जाता है वही दान उस दाता के लिये शुभ करने वाला ॥४९॥ दी हुई भमि को हर लेने वाला मनुष्य बावड़ी, कूप, तालाव आदि बनवाने से, सौ १०० वाजपेय यज्ञों के करने से, और कोटि गौओं के दान देने से भी शुद्ध नहीं हो सक्ता ॥ ५० ॥ यदि रजोदर्शन से सोलहवें दिन के बीच कोई स्त्री फिर से रजस्वला हो तो स्नान ही से शुद्ध हो, सोलहवें दिन के बाद रजोधर्म हो तो तीन दिन में शुद्धि होगी, मुनि ने कहाहै ॥५१॥ जानकर चाण्डाल के छूनेपर दो दिन में, सूतिका के छूने पर चार दिनमें, रजस्वला के छूने पर छः दिनमें, और पतित के छूने पर आठ दिनमें शुद्ध होताहै ॥५२॥ चाण्डालादि के समीप बैठे तो स्नान करे। यदि अज्ञान से चाण्डालादि को छू लेवे तो स्नान करके सूर्य दर्शन करे ॥ ५३ ॥ हाथों के विद्यमान रहते भी जो अज्ञानी ब्राह्मण कुआ या तालाव में मुख लगाकर जल पीता है वह निश्चय करके कुत्ता होता है ॥ ५४ ॥ जो मनुष्य क्रुद्ध होके अपनी स्त्री से प्रति... दूषित होने से गमन करने योग्य नहीं है और फिर उस स्त्रीका... वो इस बात को ब्राह्मणों की मण्डली वा सभा में सुना देवे ॥ ५

सहस्रंतुजपेद्देव्याः प्राणायामैस्त्रिभिःसह ॥ ६२॥
चातुर्वेद्योपपन्नस्तु विधिवद्ब्रह्मघातके।
समुद्रसेतुगमनं प्रायश्चित्तंसमादिशेत् ॥ ६३॥
सेतुबन्धपथेभिक्षां चातुर्वर्ण्यात्समाचरेत्।
वर्जयित्वाविकर्मस्थान् छत्रोपानद्विवर्जितः ॥ ६४॥
अहंदुष्कृतकर्मावै महापातककारकः।
गृहद्वारेषुतिष्ठामि भिक्षार्थीब्रह्मघातकः ॥ ६५॥
गोकुलेषुवसेच्चैव ग्रामेषुनगरेषुच।
तपोवनेषुतीर्थेषु नदीप्रस्रवणेषुच ॥ ६६ ॥
एतेषुख्यापयन्नेनः पुण्यंगत्वातुसागरम्।
दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम् ॥ ६७॥
रामचन्द्रसमादिष्टं नलसंचयसंचितम्।
सेतुंदृष्ट्वासमुद्रस्य ब्रह्महत्यांव्यपोहति।
सेतुंदृष्ट्वाविशुद्धात्मा त्ववगाहेतसागरम् ॥ ६८॥
यजेतवाश्वमेधेन राजातुपृथिवीपतिः।

भूमि पर गिरावे तो वह तीन प्राणायाम के साथ एक हजार गायत्री करे ॥ ६२ ॥ विधिपूर्वक जिसने चारों वेद पढ़े जाने हों वह यदि करे तो सेतुबंध रामेश्वर पर जाना प्रायश्चित्त बतावे ॥ ६३ ॥ और छित्री जूता और छाता का धारण न करके सेतुबन्ध के मार्ग में व्यभिचारादि दुष्कर्मियों को छोड़ के शेष चारों वर्णों से भिक्षा मांगता [illegible] ॥ ६४ ॥ वह भिक्षा मांगते समय ऐसे कहा करे कि "मैं खोटा कर्म करने वाला और महापातक कर्त्ता हूं। मुझे ब्रह्महत्या लगी है भिक्षा के लिये [illegible] पर खड़ा हूं" ॥६५॥ ग्राम, या नगरों की गोशाला धर्मशालादि में रात को [illegible] वनों में, तीर्थों में, नदी के सोताओं पर ॥६६॥ इन सब स्थानों में [illegible] प्रकट करता हुआ दश योजन चौड़े और सौ योजन लंबे पवित्र समुद्र [illegible] ॥ ६७ ॥ महाराजा भगवान् रामचन्द्र जी की आज्ञा से नल [illegible] समुद्र के सेतु को देखकर ब्रह्महत्या को दूर करता है। सेतु के दर्शन [illegible] शुद्ध मन हुआ सागर में स्नान करे ॥६८॥ और पृथ्वी का पति राजा अश्व

पुनःप्रत्यागतोवेश्म वासार्थमुपसर्पति ॥ ६९ ॥
सपुत्रःसहभृत्यश्च कुर्याद्‌ब्राह्मणभोजनम् ।
गाश्चैवैकशतंदद्याच्चातुर्विद्येपुदक्षिणाम् ॥ ७० ॥
ब्राह्मणानांप्रसादेन ब्रह्महातुविमुच्यते ।
विन्ध्यादुत्तरतोयस्य संवासःपरिकीर्त्तितः ॥ ७१ ॥
पराशरमतंतस्य सेतुबन्धस्यदर्शनात् ।
सवनस्थांस्त्रियंहत्वा ब्रह्महत्याव्रतंचरेत् ॥ ७२ ॥
सुरापश्चद्विजःकुर्यान्नदींगत्वासमुद्रगाम् ।
चान्द्रायणेततश्चीर्णे कुर्याद्‌ब्राह्मणभोजनम् ॥ ७३ ॥
अनडुत्सहितांगांच दद्याद्विप्रेपुदक्षिणाम् ॥ ७४ ॥
सुरापानंसकृत्कृत्वा अग्निवर्णांसुरांपिबेत् ।
सपावयेदिहात्मानमिहलोकेपरत्रच ॥ ७५ ॥
अपहृत्यसुवर्णंतु ब्राह्मणस्यततःस्वयम् ।
गच्छेन्मुशलमादाय राजानंस्ववधायतु ॥ ७६ ॥

स्वमेधयज्ञ करे। फिर तीर्थ यात्री लौटकर घर में बसने के लिये आवे ॥ तब पुत्र और भृत्यों सहित ब्राह्मणों को जिमावे और चारो वेदों के जानने वाले ब्राह्मणों को सौ १०० गौ दक्षिणा में देवे ॥ ७० ॥ तब ब्राह्मणों को प्रसन्न सन्तुष्ट करने से ब्रह्महत्या से छूटजाता है। विन्ध्याचल से उत्तर जो बसता है॥७१॥ उस के लिये पाराशर ऋषिने सेतुबन्ध का दर्शन कहा है। जिस के शीघ्र सन्तान होने वाला हो ऐसी स्त्री को मार डाले ब्रह्महत्या का व्रत करे ॥ ७२ ॥ मदिरा पीने वाला ब्राह्मण समुद्र तक जाने वाली नदी पर जाके चान्द्रायण व्रत करे फिर व्रत के पूरे होने पर ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ७३ ॥ एक बैल सहित एक गौ ब्राह्मणों को दक्षिणा दे ॥ ७४ ॥ अथवा जो शुद्ध ब्राह्मण एक बार भी मदिरा को पीवे वह अग्नि (अत्यन्त उष्ण) मदिरा पीकर प्राण त्याग करे तो इस लोक और परलोक में अपने को पवित्र कर लेता है ॥७५॥ ब्राह्मण के सुवर्ण को चुराकर आप मुसल को हाथ में लेके अपने मारने के लिये राजा के समीप जाय ॥७६॥

हतःशुद्धिमवाप्नोति राज्ञाऽसौमुक्तएवच ।
कामतस्तुकृतंयत्स्यान्नान्यथावधमर्हति ॥ ७७ ॥
आसनाच्छयनाद्यानात्संभाषात्सहभोजनात् ।
संक्रामन्तीहपापानि तैलविन्दुरिवाम्भसि ॥ ७८ ॥
चान्द्रायणंयावकंच तुलापुरुषएवच ।
गवांचैवानुगमनं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ७९ ॥
एतत्पाराशरंशास्त्रं श्लोकोनांशतपञ्चकम् ।
द्विनवत्यासमायुक्तं धर्मशास्त्रस्यसंग्रहः ॥ ८० ॥
यथाध्ययनकर्माणि धर्मशास्त्रमिदंतथा ।
अध्येतव्यंप्रयत्नेन नियतंस्वर्गकामिना ॥ ८१ ॥
इति श्रीपाराशरीये धर्म्मशास्त्रे सकलप्रायश्चित्त
निर्णयो नाम द्वादशोऽध्यायः समाप्तः
समाप्ता च पाराशरसंहिता ॥

तब यदि राजा मरवा, डाले वा उचित समझ के छोड़ देवे तो दो
नों हालत में पाप से छूट जाता है ॥ यदि जान कर चोरी की हो तो
के योग्य है अन्यथा वध करने योग्य नहीं है ॥ ७७ ॥ एक जगह बैठने,
एक सवारी में बैठ कर चलने, पास २ बैठ कर वार्त्तालाप करने और
बैठ कर भोजन करने से पापियों के पाप अच्छे लोगों को लगते हैं;
जल में तेल का बिन्दु फैलजाता है ॥ ७८ ॥

चान्द्रायण, यावक (जौ को ही खाना,) और तुला पुरुष ...
गौओं के पीछे गमन करना,अर्थात् तन मन धन, से गोरक्षा में तत्पर।
काम सब पापों को नाश करने वाले हैं ॥ ७९ ॥ यह पाराशर ऋषि
धर्मशास्त्र जिसमें पांच सौ बानवे ५९२ श्लोक हैं। सो यह धर्मशास्त्र
क्षेप से संग्रह कियाहै ॥ ८० ॥ जैसे वेद के अध्ययन सम्बन्धी कर्म
हैं वैसा ही यह धर्मशास्त्र है इसलिये स्वर्ग की इच्छा रखने वाले
धर्मशास्त्र यत्न से पढ़ना चाहिये ॥ ८१ ॥

यह पाराशरीय धर्मशास्त्र के पं० भीमसेन शर्मकृत भाषानुवाद में
प्रायश्चित्त निर्णय नामक बारहवां १२ अध्याय पूरा हुआ॥
और यह ११ वीं पाराशरस्मृति समाप्त हुई॥

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

थ व्यासस्मृतिप्रारम्भः

ाराणस्यांसुखासीनं वेदव्यासंतपोनिधिम् ।
मच्छुर्मुनयोऽभ्येत्य धर्मान्वर्णव्यवस्थितान् ॥ १ ॥
पृष्टःस्मृतिमान्स्मृत्वा स्मृतिंवेदार्थगर्भिताम् ।
वाचाथप्रसन्नात्मा मुनयःश्रूयतामिति ॥ २ ॥
त्रयत्रस्वभावेन कृष्णसारोमृगःसदा ।
रतेतत्रवेदोक्तो धर्मोभवितुमर्हति ॥ ३ ॥
ुतिस्मृतिपुराणानां विरोधोयत्रदृश्यते ।
त्रश्रौतंप्रमाणन्तु तयोर्द्वैधेस्मृतिर्वरा ॥ ४ ॥
ाह्मणक्षत्रियविशस्त्रयोवर्णाद्विजातयः ।
ुतिस्मृतिपुराणोक्त धर्मयोग्यास्तुनेतरे ॥ ५ ॥
ूद्रोवर्णश्चतुर्थोपि वर्णत्वाद्धर्ममर्हति ।

शी में सुख पूर्वक बैठे बड़े तपस्वी वेदव्यास जी के समीप जा कर
ने वर्ण व्यवस्था सम्बन्धी धर्म पूछे ॥ १ ॥ मुनियों से पूछे हुए बुद्धि-
व्यास जी वेदार्थगर्भित धर्मशास्त्र का स्मरण कर और प्रसन्न होके सुम
ा बोले ॥२॥ जिस २ देश में स्वभाव से ही कृष्ण मृग सदैव विचरता
श में वेदोक्त धर्म का प्रचार या अनुष्ठान ठीक २ हो सकता है ॥३॥
पय में श्रुति स्मृति-और पुराण का परस्पर विरोध दीख पड़े वहां
ा प्रमाण मानो तथा स्मृति और पुराण के विरोध में स्मृति उत्तम
, स्मृति का कहा कर्म करना चाहिये ॥ ४ ॥ ब्राह्मण,क्षत्रिय, वैश्य, ये
ं द्विजाति कहाते हैं और विशेष कर ये ही तीनों वेद स्मृति, और
में कहे धर्म के अधिकारी हैं अन्य नहीं ॥ ५ ॥ चौथा शूद्र भी वर्ण
वेद मन्त्र, स्वधा, स्वाहा, वषट्कार आदि को छोड़ के शेष स्मृति-

वेदमन्त्रस्वधास्वाहा

विप्रवद्विप्रविन्नासु क्षत्रविन्नासुक्षत्रवत्।
जातकर्मादिकुर्वीत ततःशूद्रासुशूद्रवत् ॥ ७ ॥
वैश्यासुविप्रक्षत्राभ्यां ततःशूद्रासुशूद्रवत्।
अधमादुत्तमायातु जातःशूद्राधमःस्मृतः ॥ ८ ॥
ब्राह्मण्यांशूद्रजनितश्चाण्डालोधर्मवर्जितः।
कुमारीसम्भवस्त्वेकः सगोत्रायांद्वितीयकः ॥ ९ ॥
ब्राह्मण्यांशूद्रजनितश्चाण्डालस्त्रिविधःस्मृतः।
वर्द्धकीनापितोगोप आशापःकुम्भकारकः ॥ १० ॥
वणिक्किरातकायस्थ मालाकारकुटुम्बिनः।
वरटोमेदचाण्डाल दासश्वपचकोलकाः ॥ ११ ॥
एतेऽन्त्यजाःसमाख्याता येचान्येचगवाशनाः।

पुराणोक्त प्रतिमा पूजनादि धर्म का अधिकारी है ॥ ६ ॥ ब्राह्मण से
वाही क्षत्रिय कन्या के पुत्रादि के जातकर्मादि संस्कार ब्राह्मण के तु
से विवाही वैश्यकन्या के संस्कार क्षत्रिय के तुल्य और ब्राह्मण
विवाही शूद्रकन्या के सन्तान के संस्कार शूद्र के तुल्य करे ॥ ७ ॥
ह्मण क्षत्रिय से विवाही वैश्यकन्या के सन्तानों के संस्कार वैश्य के,
और वैश्य से विवाही शूद्रकन्या में उत्पन्न हुओं के जातकर्मादि
शूद्र के ही तुल्य करे। निचले वर्ण से उत्तम वर्ण की कन्या में जो पै
शूद्र से भी नीच कहा है ॥ ८ ॥ ब्राह्मणी में जो शूद्र से पैदा हो
धर्मों से वर्जित चाण्डाल कहाता है सो वह दो प्रकार का है, ए
कुमारी कन्या से पैदा हो, दूसरा वह जो सगोत्रा (विवाही) से पै
ब्राह्मणी में शूद्र से पैदा हुआ चाण्डाल तीन प्रकार का होता
नाई, गोप, आशा से जो घड़े बनावे वह (कुम्हार) ॥ १० ॥ वणिक्
करै और निषिद्ध जाति हो) किरात, कायस्थ, माली, कुटुम्बी
चण्डाल, दास, श्वपच, कोलक, ॥ ११ ॥ ये सब और जो गो
अन्त्यज कहाते हैं इन के संग बोलने से स्नान करे और इन के (स

ंसम्भाषणात्स्नानं दर्शनादर्कवीक्षणम् ॥ १२ ॥
भाधानंपुंसवनं सीमन्तोजातकर्मच ।
ामक्रियानिष्क्रमणेऽन्नाशनंवपनक्रिया ॥ १३ ॥
र्णवेधोव्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः ।
ःशान्तःस्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः ॥ १४ ॥
ताग्निसंग्रहश्चेति संस्काराःषोडशस्मृताः ।
वैताःकर्णवेधान्ता मन्त्रवर्जंक्रियाःस्त्रियः॥ १५
ववाहोमन्त्रतस्तस्याः शूद्रस्यामन्त्रतोदश ।
भाधानंप्रथमतस्तृतीयेमासिपुंसवः ॥ १६ ॥
ीमन्तश्चाष्टमेमासि जातेजातक्रियाभवेत् ।
कादशेऽन्हिनामार्कस्येक्षामासिचतुर्थके ॥ १७ ॥
ाष्ठेमास्यन्नमश्नीयाच्चूडाकर्मकुलोचितम् ।
ृतचूडेचबालेच कर्णवेधोविधीयते ॥ १८ ॥
विप्रोगर्भाष्टमेवर्षे क्षत्रएकादशेतथा ।

न करे ॥ १२ ॥ १-गर्भाधान, २-पुंसवन, ३-सीमन्त, ४-जातकर्म,-५-रण, ६-निष्क्रमण, ७-अन्नप्राशन, ८-मुण्डन, ९-कर्णवेध, १०-यज्ञोपवीत, ारम्भ, १२-केशान्त, १३-समावर्त्तन, १४-विवाह, १५-आवसथ्याध्यान, ापत्य, आहवनीय, और दक्षिणाग्नि इन तीनों श्रौत अग्नियों का स्था-गर्भाधान आदि सोलह संस्कार कहाते हैं। कर्णवेध तक जो नौ ९ सं-ं वे स्त्री के बिना मन्त्र होते हैं ॥ १५ ॥ विवाह स्त्री का भी मन्त्रों ा है और शूद्रों के ये दशों संस्कार बिना वेद मन्त्रों के होने चाहिये॥ न प्रथम (पहिले गर्भस्थापन के समय) होता, तीन मास का गर्भ तब पुंसवन संस्कार करे ॥ १६ ॥ आठवें महीने में सीमन्तोन्नयन सं-करे, सन्तान के पैदा हुए पर जात कर्म, ग्यारहवें दिन नामकरण, चौथे अर्कसा (निष्क्रमण) अर्थात् बाहर निकाल कर बालक को सूर्यनारा-दर्शन करावे ॥ १७ ॥ छठे महीने अन्नप्राशन और मुण्डन कुल की के अनुसार करे, जब बालक का मुण्डन हो चुके तब कर्णवेध कान का संस्कार करे ॥ १८ ॥ गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण के, ग्यारहवें

द्वादशेवैश्यजातिस्तु व्रतोपनयमर्हति ॥ १९ ॥
तस्यप्राप्तव्रतस्यायं कालःस्याद्द्विगुणाधिकः।
वेदव्रतच्युतोव्रात्यः सव्रात्यस्तोममर्हति ॥ २० ॥
द्वेजन्मनीद्विजातीनां मातुःस्यात्प्रथमन्तयोः।
द्वितीयंछन्दसांमातुर्ग्रहणाद्विधिवद्गुरोः ॥ २१ ॥
एवं द्विजातिमापन्नो विमुक्तोवान्यदोषतः।
श्रुतिस्मृतिपुराणानां भवेदध्ययनक्षमः ॥ २२ ॥
उपनीतोगुरुकुले वसेन्नित्यंसमाहितः।
विभृयाद्दण्डकौपीनोपवीताजिनमेखलाः ॥ २३ ॥
पुण्येन्हिगुर्वनुज्ञातः कृतमन्त्राहुतिक्रियः।
स्मृत्वोङ्कारंचगायत्री मारभेद्वेदमादितः ॥ २४ ॥
शौचाचारविचारार्थं धर्मशास्त्रमपिद्विजः।

वर्ष क्षत्रिय के और बारहवें वर्ष वैश्य के बालक व्रतोपनयन (जनेऊ) के होते हैं ॥१९॥ इन के उपनयन संस्कार का जो समय है उससे दूने से समय यदि बीत जाय और संस्कार न हो तो वे तीनों वर्ण के बालक व्रत से पतित "व्रात्य" हो जाते हैं तब वे व्रात्यस्तोम [प्रायश्चित्त] करने के योग्य हो जाते हैं ॥ २० ॥ द्विजातियों के दो जन्म होते हैं, उन में पहिला माता से और दूसरा गुरु से वेदों की माता (गायत्री) के विधिपूर्वक ग्रहण करने से ॥ २१ ॥ ऐसे द्विजत्व को प्राप्त हुआ और अन्य दुराचारादि दोषों से मुक्त होकर श्रुतिस्मृति पुराण इन के पढ़ने के योग्य होता है ॥२२॥ यज्ञोपवीत होने पर गुरु के कुल में सावधान होकर बसे और दण्ड, कौपीन, यज्ञोपवीत, मृगछाला, और मेखला (करधनी) इन सब ब्रह्मचर्य के शास्त्रोक्त चिन्हों को धारण करे ॥२३॥ फिर पुण्य दिन शुभ मुहूर्त में गुरु की आज्ञा से, मन्त्रों से आहुति देकर तथा ओंकार और गायत्री का स्मरण करके आदि से अपने वेद का पढ़ना आरम्भ करे ॥ २४ ॥ द्विज ब्रह्मचारी शौच तथा आचार को सम्यक् जानने के लिये गुरु से धर्मशास्त्र को भी पढ़े और धर्मशास्त्र में कहे कर्म को ॥

पठेतगुरुतःसम्यक् कर्मतद्दिष्टमाचरेत् ॥ २५ ॥
ततोभिवाद्यस्थविरान् गुरुंचैवसमाश्रयेत् ।
स्वाध्यायार्थंतदापन्नः सर्वदाहितमाचरेत् ॥ २६ ॥
नापक्षिप्तोऽपिभाषेत नाव्रजेत्ताडितोऽपिवा ।
विद्वेषमथपैशुन्यं हिंसनंचार्कवीक्षणम् ॥ २७ ॥
तौर्य्यत्रिकानृतोन्मादपरिवादानलङ्क्रियाम् ।
अञ्जनोद्वर्त्तनादर्शस्रग्विलेपनयोषितः ॥ २८ ॥
वृथाटनमसन्तोषं ब्रह्मचारीविवर्जयेत् ।
ईषच्चलितमध्यान्हेऽनुज्ञातोगुरुणास्वयम् ॥ २९ ॥
अलोलुपश्चरेद्भैक्षं व्रतिपूत्तमवृत्तिषु ।
सद्योभिक्षान्नमादाय वित्तवत्तदुपस्पृशेत् ॥ ३० ॥
कृतमाध्यान्हिकोऽश्नीयादनुज्ञातोयथाविधि ।
नाद्यादेकान्नमुच्छिष्टं भुक्त्वाचाचामितामियात् ॥ ३१ ॥

नुसार भली प्रकार करे ॥ २५ ॥ फिर वृद्धों को नमस्कार करके गुरु का
य ले और वेद पढ़ने के लिये सावधानी से गुरु के हित का आचरण करे
॥ निन्दा करने पर भी गुरु के सन्मुख न बोले और गुरु की ताड़ना से
वहां से कहीं न जावे। वैर, पैशुन्य, (चुगलपन) हिंसा, सूर्य को बिना प्र-
न देखना ॥ २७ ॥ तौर्यत्रिक (गाना, बजाना, नाचना) झूठ बोलना, उ-
द, निन्दा, भूषण पहरना, अंजन, उबटन, आदर्श (शीशा) का देखना
माला, चन्दन आदि सुगन्ध का लगाना और स्त्री का स्मरण, देखना,
आदि॥२८॥वृथा फिरना—असन्तोष नाम लोभ लालच इन को ब्रह्मचारी
म कर देवे और जब कुछ मध्यान्ह ढले उस समय गुरु की आज्ञासे आप
॥ २९ ॥ चंचलता को त्याग कर उत्तम आचरण वाले वेदाध्ययन जिन के
ते और जो पञ्चमहायज्ञादि करते हों, ऐसे ब्राह्मणादि द्विजों के घरों से ब्रह्म-
री भिक्षा मांगे और शीघ्र भिक्षा के अन्न को लाकर लब्ध वस्तु के समान
का संस्कार करे ॥ ३० ॥ फिर मध्यान्ह का कर्म करके गुरु की आज्ञा ले
धि पूर्वक भोजन करे और एक घर का भिक्षा अन्न और उच्छिष्ट [जूठा
] इन को न खावे यदि खावे तो आचमन करे ॥३१॥

नान्यद्भिक्षितमादद्यादापन्नोद्रविणादिकम्।
अनिन्द्यामन्त्रितःश्राद्धे पैत्रेऽद्याद्गुरुचोदितः ॥ ३२ ॥
एकान्नमप्यविरोधे व्रतानांप्रथमाश्रमो।
भुक्त्वागुरुमुपासीत कृत्वासन्धुक्षणादिकम् ॥ ३३ ॥
समिधोऽग्नावादधीत ततःपरिचरेद्गुरुम्।
शयीतगुर्व्वनुज्ञातः प्रह्वश्चप्रथमंगुरोः ॥ ३४ ॥
एवमन्वहमभ्यासी ब्रह्मचारीव्रतंचरेत्।
हितोपवादःप्रियवाक् सम्यग्गुर्वर्थसाधकः ॥ ३५ ॥
नित्यमाराधयेदेनमासमाप्तश्रुतिग्रहात्।
अनेनविधिनाधीतो वेदमन्त्रोद्विजंनयेत् ॥ ३६ ॥
शापानुग्रहसामर्थ्यमृषीणांचसलोकताम्।
पयोऽमृताभ्यांमधुभिः साज्यैःप्रीणन्तिदेवताः ॥ ३७ ॥
तस्मादहरहर्वेदमनध्यायमृतेपठेत्।

नियम बद्ध रहता हुआ ब्रह्मचारी भिक्षा में भोजन से अन्य पदार्थ किसी के आदर वा आग्रह पूर्वक देने पर भी न लेवे और (शुद्ध) पुरुष के निमन्त्रण देने पर भी पितरों के श्राद्ध में गुरु की होने पर भोजन करे ॥ ३२ ॥ यदि ब्रह्मचर्याश्रम के अन्य नियम व्रतों में न होती हो तो ब्रह्मचारी किसी एक गृहस्थ के भिक्षान्न को खाकर भी सन्धुक्षण (अग्ने सुश्रवः) आदि कर्म करके गुरु की सेवा किया करे ॥ ३३ ॥ प्रतिदिन विधि पूर्वक समिदाधान कर्म करके गुरु की सेवा किया करे प्रथम गुरु को नमस्कार करके गुरु की आज्ञा से शयन करे ॥ ३४ ॥ दिन अभ्यास करता हुआ ब्रह्मचारी व्रतों को करे-और हित की प्यारी वाणी रक्खे और भली प्रकार गुरु के कार्य को साधे ॥ ३५ ॥ पढ़ने की समाप्ति तक नित्य गुरु की आराधना (सेवा) करे। पढ़ा हुआ वेद का मन्त्र, द्विज को ऐसा करता है कि वह ॥ ३६ ॥ वरदान देने में समर्थ और ऋषियों के लोक में जाने योग्य होजाता है। ब्रह्मचारी ने विधि पूर्वक किये वेदाध्ययन से; दूध, अमृत, मधु और इनसे तृप्ति होने के तुल्य देवता प्रसन्न होते हैं ॥ ३७ ॥ जिससे

यदङ्गंतदनध्याये गुरोर्वचनमाचरन् ॥ ३८ ॥
व्यतिक्रमादसम्पूर्णमनहंकृतिराचरेत् ।
परत्रेहचतद्ब्रह्म अनधीतमपिद्विजम् ॥ ३९ ॥
यस्तूपनयनादेतदा मृत्योर्व्रतमाचरेत् ।
सनैष्ठिकोब्रह्मचारी ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ४० ॥
उपकुर्व्वाणकोयस्तु द्विजःषड्विंशवार्षिकः ।
केशान्तकर्मणातत्र यथोक्तचरितव्रतः ॥ ४१ ॥
समाप्यवेदान्वेदौवा वेदंवाप्रसभंद्विजः ।
स्नायीतगुर्वनुज्ञातः प्रवृत्तोदितदक्षिणः ॥ ४२ ॥
ति श्रीवेदव्यासीये धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥
एवंस्नातकतांप्राप्तो द्वितीयाश्रमकाङ्क्षया ।
प्रतीक्षेतविवाहार्थमनिन्द्यान्वयसम्भवाम् ॥ १ ॥

छोड़ कर प्रतिदिन विधिपूर्वक वेद को पढ़े और गुरु की आज्ञा पालन
ता हुआ वेद के जो अंग (व्याकरण आदि) हैं उन्हें अनध्यायों में पढ़े ।३८।
नमों का व्यतिक्रम करने से वेदाध्ययन असंपूर्ण (पूरा नहीं होता) रहता
सिसे अहंकार को छोड़कर यही आचरण करे, वह वेद चाहे द्विज न पढ़े
र्थात् बहुत कम पढ़े) तो भी गुरु सेवादि नियम को सम्यक् पूरा करने
से ब्रह्मचारी को इस लोक और परलोक में सुख देता है ॥३९॥ जो यज्ञो-
त संस्कार से लेकर मृत्यु पर्यंत इस व्रत को करै वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी
ह्मसायुज्य मुक्ति को प्राप्त होता है ॥ ४० ॥ केशांत कर्म तक शास्त्र में कहे
अनुसार किये हैं व्रत जिसने ऐसा जो छब्बीस वर्ष का द्विज हो वह यदि
आश्रम करके अपना वा भिक्षादि देने द्वारा गरीयों का उपकार करना
हता हो तो ॥४१॥ तीनों वेदों को या दो वेदों को वा एक वेद को शीघ्र
प्राप्त करके और गुरु की आज्ञा से गुरु को दक्षिणा देकर विधि पूर्वक स-
मावर्त्तन संस्कार करे ॥ ४२ ॥

श्रीवेदव्यासीयधर्मशास्त्र के प्रथम अध्याय का यह अनुवाद पूरा हुआ ॥

द्वितीय गृहस्थ आश्रमकी इच्छा से ऐसे स्नातकरूप को प्राप्त हुआ द्विज
उ वंश में पैदा हुई स्त्री की विवाह के लिये प्रतीक्षा (अन्वेषण) करे ॥ १ ॥

अरोगदुष्टवंशोत्था मशुल्कादानदूषिताम्।
सवर्णामसमानार्पाममातृपितृगोत्रजाम् ॥२॥
अनन्यपूर्विकांलघ्वीं शुभलक्षणसंयुताम्।
धृताधोवसनांगौरीं विख्यातदशपूरुषाम् ॥३॥
ख्यातनाम्नःपुत्रवतः सदाचारवतः सतः
दातुमिच्छोर्दुहितरं प्राप्यधर्मेणचोद्वहेत् ॥४॥
ब्राह्मोद्वाहविधानेन तदभावेपरोविधिः।
दातव्यैपासदृक्षाय वयोविद्यान्वयादिभिः ॥५॥
पितृतत्पितृभ्रातृपु पितृव्यज्ञातिमातृपु।
पूर्वाभावेपरोदद्यात्सर्वाभावेस्वयंव्रजेत् ॥६॥
यदिसादातृवैकल्याद्रजः पश्येत्कुमारिका।

और जिस स्त्री के कुष्ठादि कोई बड़ा असाध्य वा कष्ट साध्य न हो–दुष्ट वंश की न हो, जिस का बाप धन लेकर विवाह करता न हो, अपने वर्ण की हो–अपने प्रवर की न हो–तथा जो माता वा पिता के गोत्र की न हो ॥ २ ॥ जिस का अन्य के साथ पहिले विवाह न हुआ हो जो विशेष मोटी न हो, शुभलक्षणों वाली हो, अधोवस्त्र (लहंगा) पहिने हो, गौरी (८ वर्ष की) हो और जिस के कुल में पूर्वज दश पुरुष तक ख्यात कुलीन हों ॥३॥ जिस का नाम विख्यात हो ऐसे पुत्रवाले और सदाचरण वाले की पुत्री हो जो अपनी कन्या का विवाह कर देना चाहता हो ऐसे की कन्या मिलती हो तो धर्मानुसार शास्त्रोक्त विधि से विवाह करे ॥४॥ ब्राह्मविवाह की विधि से विवाहे और ब्राह्मविवाह के न हो सकने पर दूसरी (देव आदि विवाहों की) विधि करे और यह पुरुष अवस्था विद्या और कुलीनता में समान या कुछ बड़ा हो उस वर के साथ कन्या का विवाह करे ॥ ५ ॥ पिता, पितामह, भाई, चाचा, कुटुम्ब के मनुष्य, माता, इन में पहिले २ के अभाव में अगला २ कन्या का विवाह करे। यदि इन में से कोई भी न हो तो कन्या आप ही योग्य पति के साथ विवाह कर लेवे ॥६॥ यदि वह कन्या देने वालों की असावधानी या ढील ढाल से विवाह से पहिले ही रजस्वला होने लगे तो जितने वर्षों तक रजस्वला होती रहे उतनी

णहत्याश्वयावत्यः पतितःस्यात्तदप्रदः ॥ ७ ॥
भ्यंदास्याम्यहमिति ग्रहीष्यामीतियस्तयोः ।
त्वासमयमन्योन्यं भजतेनसदण्डभाक् ॥ ८ ॥
यजन्नदुष्टांदण्ड्यःस्याद्दूषयंश्चाप्यदूषिताम् ।
ऊढायांहिसवर्णायामन्यांवाकाममुद्वहेत् ॥ ९ ॥
स्यामुत्पादितःपुत्रो नसवर्णात्प्रहीयते ।
उद्वहेत्क्षत्रियांविप्रो वैश्यांचक्षत्रियोविशाम् ॥ १० ॥
नतुशूद्रांद्विजःकश्चिन्नाधमःपूर्ववर्णजाम् ।
नानावर्णासुभार्य्यासु सवर्णासहचारिणी ॥ ११ ॥
धर्म्याधर्म्मेषुधर्मिष्ठा ज्येष्ठातस्यस्वजातिषु ।
पादितोऽयंद्विजाःपूर्वमेकदेहःस्वयंभुवा ॥ १२ ॥

गर्भों के पाप से कन्या का विवाह न करने वाला पतित होता है ॥७॥
को दूंगा और मैं उस को ग्रहण करूंगा ऐसे परस्पर समय की प्रतिज्ञा
र दाता दोनों करके यदि उन दोनों में से जो अपनी प्रतिज्ञा को पूरी
वही राजदण्ड का भागी होता है ॥ ८ ॥ जो स्त्री दूषित न हो उसे
गे वह और जो निर्दोष कन्या को दूषण लगाये वे दोनों राजदण्ड के
होते हैं। यदि अपने वर्ण की एक कन्या के साथ विवाह कर लिया हो तो
क्षत्रियादि वर्ण की अन्य स्त्री के साथ विशेष काम भोगेच्छा होने पर
ह कर लेवे ॥ ९ ॥ उस अन्य वर्ण की स्त्री में जो पुत्र उत्पन्न होता है
वर्ण ही अर्थात् पिता के वर्ण का होता है। ब्राह्मण, क्षत्रिया और
कन्या के साथ विवाह करे और क्षत्रिय पुरुष वैश्य कन्या के साथ कर
१० ॥ कोई भी द्विज, शूद्र कन्या के साथ विवाह न करे और नीच वर्ण
रुप अपने से उत्तम वर्ण की कन्या के साथ विवाह न करे। अनेक वर्ण
स्त्रियों से विवाह किया हो तो जो सवर्णा हो वही अग्निहोत्रादि धर्म
ों में सहचारिणी रहे ॥ ११ ॥ जिस पुरुष ने कई सवर्णा स्त्रियों से विवाह
। हो तो अग्निहोत्रादि धर्म के कामों में जो अधिक श्रद्धावती हो वही
नुकूल बड़ी होने से सहचारिणी होनी चाहिये। हे द्विजो ! स्त्री पुरुष मिल
ह एक ही देह पहिले था जिस को ब्रह्मा जी ने स्त्री पुरुष रूप दो
किया है ॥ १२ ॥

पतयोर्द्धेनचार्द्धेन पत्न्योऽभूवन्निति श्रुतिः।
यावन्नविन्दतेजायां तावदर्द्धोभवेत्पुमान् ॥ १३
नार्द्धंप्रजायतेसर्वं प्रजायेतेत्यपिश्रुतिः।
गुर्वीसाभूस्त्रिवर्गस्य वोढुंनान्येनशक्यते ॥ १४
यतस्ततोन्वहंभूत्वास्ववशोविभृयात्तुताम्।
कृतदारोऽग्निपत्नीभ्यां कृतवेश्मागृहंवसेत् ॥ १५
स्वकृतंवित्तमासाद्य वैतानाग्निंनहापयेत्।
स्मार्तवैवाहिकेवन्हौ श्रौतंवैतानिकाग्निषु ॥ १६
कर्मकुर्यात्प्रतिदिनं विधिवत्प्रीतिपूर्वतः।
सम्यग्धर्मार्थकामेषु दम्पतिभ्यामहर्निशम् ॥ १७
एकचित्ततयाभाव्यं समानव्रतवृत्तितः।
नपृथग्विद्यतेस्त्रीणां त्रिवर्गविधिसाधनम् ॥ १८
भावतोह्यतिदेशाद्वा इतिशास्त्रविधिःपरः।

आधे देह से पति और आधे से स्त्री हुई है यह श्रुति है इसलिये जब तक पुरुष स्त्री को न विवाहे तब तक आधा है इसी कारण पत्नी अर्द्धाङ्गिनी कहाती है ॥ १३ ॥ वेद में लिखा है पुरुष को सन्तानोत्पत्ति करनी चाहिये। और विना पत्नी के न पुत्रोत्पत्ति कर नहीं सकता इस से सवर्णा के साथ विवाह करना है। वह स्त्री, धर्म, अर्थ; और काम की बड़ी भारी भूमि (पैदा करने उस त्रिवर्ग की प्राप्ति पत्नी के विना अन्य साधन से नहीं हो सकती तहां के व्यभिचारादि से बच कर अपने शरीरेन्द्रियों को वश किये हुआ गृहस्थ पुरुष उस स्त्री का भरण पोषण करे; विवाह करके पत्नी के सहित पुरुष घर को बना कर उस में बसे ॥ १५ ॥ अपने पैदा किये धन को प्राप्त हो कर विधि से स्थापित किये श्रौत अग्नि को न त्यागे। स्मृति में कहे कर्मों को विवाह सम्बन्धी गृह्य अग्नि में और श्रौत कर्मों को श्रौत अग्नियों में किया करे ॥१६॥ प्रतिदिन विधि और प्रीति से उक्त कर्मों को करे—स्त्री पुरुषों को धर्म, अर्थ, कामों में रात दिन एक मन, एक व्रत, एकवृत्ति से रहना चाहिये स्त्रियों को धर्म आदि प्राप्त करने का पति से पृथक् कोई साधन नहीं है॥१८॥ भाव (प्रीति से)

मुत्थाय देहशुद्धिंविधायच ॥ १९ ॥
यनाद्यानि कृत्वाविश्मविशोधनम् ।
नैःप्राप्य साग्निशालांस्वमङ्गणम् ॥ २० ॥
ग्निकार्याणि स्निग्धान्युष्णेनवारिणा ।
तिलान्येव यथास्थानंप्रकल्पयेत् ॥ २१ ॥
णिसर्वाणि नकदाचिद्वियोजयेत् ।
ातुपात्राणि पूरयित्वातुधारयेत् ॥ २२ ॥
ल्यपात्राणि बहिःप्रक्षाल्यसर्वथा ।
ोधयेच्चुल्लीं तत्राग्निंविन्यसेत्ततः ॥ २३ ॥
ियोगपात्राणि रसांश्चद्रविणानिच ।
ण्हकार्यांच स्वगुरूनभिवादयेत् ॥ २४ ॥
र्तृपितृभ्यांवा भ्रातृमातुलबान्धवैः ।

ा से स्त्री धर्मादि को जाने तथा करे वही शास्त्र की उत्तम पति से पहले उठ कर और देह की शुद्धि करके ॥ १९ ॥ को उठाकर और भाड़ू आदि से घर का शोधन (सफाई) बुहारने) और लीपने से अग्नि की शाला और अपने आंगन करे और अग्नि के कार्य जिनसे होमादि होते हों ऐसे (यज्ञ) जो चिकने हों उनको (शोऽदर्च्छ०) इस मन्त्र से गर्म जल से उन्हें जहां के तहां रख दे ॥२१॥ शूर्प-अग्निहोत्र हवनी, मुस-मुसल, दृषत्-उपला इत्यादि एक साथ काम आने वाले जो उनको कदापि पृथक् २ न रक्खे । फिर पात्रों को शुद्ध करके दि से भर कर रखदे ॥ २२ ॥ घोके से बाहर महानस (रसोई) धोकर पोता मट्टी से चूल्हे को पोत कर उस में अग्नि को स्था- ॥२३॥ बर्तने के पात्रों को और रसों तथा द्रव्यों को स्मरण (याद) स २ धातु आदि के पात्र में कौन २ रसादि रखना है ऐसा स्म- र २ पात्रों में यह २ रसादि धर देवे । पुरुष [illegible] काम करके अपने गुरु (पति) को [illegible]
पिता, वा पति के माता पिता

वस्त्रालङ्काररत्नानि प्रदत्तान्येवधारयेत् ॥ २५ ॥
मनोवाक्कर्मभिःशुद्धा पतिदेशानुवर्तिनी ।
छायेवानुगतास्वच्छा सखीवहितकर्मसु ॥ २६ ॥
दासीवादिष्टकार्येषु भार्याभर्तुःसदाभवेत् ।
ततोऽन्नसाधनंकृत्वा पतयेविनिवेद्यतत् ॥ २७ ॥
वैश्वदेवकृतैरन्नैर्भोजनीयांश्चभोजयेत् ।
पतिंचैवाभ्यनुज्ञाता सिद्धमन्नादिनात्मना ॥ २८ ॥
भुक्त्वानयेदहः शेषमायव्ययविचिन्तया ।
पुनःसायंपुनःप्रातर्गृहशुद्धिंविधायच ॥ २९ ॥
कृतान्नसाधनासाध्वी सुभृशंभोजयेत्पतिम् ।
नातितृप्त्यास्वयंभुक्त्वा गृहनीतिंविधायच ॥ ३० ॥
आस्तीर्यसाधुशयनं ततःपरिचरेत्पतिम् ।
सुप्तेपत्यौतदभ्याशे स्वपेत्तद्गतमानसा ॥ ३१ ॥

मामा, बांधव, इन के ही दिये वस्त्र और आभूषणों को धारण करे
मन, वाणी कर्म से शुद्ध, पति की आज्ञा में वर्तने वाली छाया
पति की अनुगामिनी और स्वच्छ हुई सखी के समान पति
पति के कहे कार्यों में पत्नी सदैव दासी के समान रहे फिर अन्न
स्वादिष्ट पाक बना कर पति को निवेदन करके ॥ २७ ॥ किया
[अर्थात्–देवयज्ञ, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ] जिससे ऐसे अन्न से
योग्य [अतिथि आदि] को और पति को जिमाये और पति की
लेकर शेष [बचे] अन्न को आप खावे ॥२८॥ भोजन करने पश्चात्
को आय (आमदनी) व्यय (खर्च) की चिन्ता से बितावे ।
नित्य २ सायं प्रातःकाल घर की शुद्धि करके ॥ २९ ॥ साध्वी
प्रीतिपूर्वक उत्तम स्वादिष्ट पाक बनाकर बड़ी प्रीति से अपने पति
मावे और अत्यन्त तृप्ति जिस में नहो उतना भोजन स्वयं करके और
उत्तम प्रबन्ध करके ॥३०॥ अच्छी सेज बिछाकर पति की सेवा करे।
को सांय तब पति में है मन जिसका ऐसी स्त्री उन के समीप में सो

अनग्नाचाप्रमत्ताच निष्कामाचजितेन्द्रिया ।
नोच्चैर्वदेन्नपरुषं नबहूनपत्युरप्रियम् ॥ ३२ ॥
नकेनचिद्विवदेच्च अप्रलापविलापिनी ।
नचातिव्ययशीलास्यान्नधर्म्मार्थविरोधिनी ॥३३॥
प्रमादोन्मादरोषेर्ष्या वञ्चनंचातिमानिताम् ।
पैशुन्यहिंसाविद्वेषमहाहङ्कारधूर्तता ॥३४॥
नास्तिक्यंसाहसंस्तेयं दम्भान्साध्वीविवर्जयेत् ।
एवंपरिचरन्तीसा पतिंपरमदैवतम् ॥३५॥
यशःशमिहयात्येव परत्रचसलोकताम् ।
योषितोनित्यकर्मोक्तं नैमित्तिकमथोच्यते ॥३६॥
रजोदर्शनतोदोषात् सर्वमेवपरित्यजेत् ।
सर्वैरलक्षिताशीघ्रं लज्जितान्तर्गृहेवसेत् ॥ ३७ ॥

नंगी न रहे, प्रमत्त (वेहोश) न रहे, निष्काम और जितेन्द्रिय रहे, ऊंचे स्वर से चिल्ला कर न बोले और कठोर न बोले, बहुत व्यर्थ न बोले और पति को प्यारे न हों ऐसे वचन कदापि न बोले ॥ ३२ ॥ किसी के संग विवाद या लड़ाई न करे अनर्थक वृथा न बोले किसी गुज़रे हुए का विलाप न करे, बहुत खर्च करने का स्वभाव न रक्खे, धर्म और अर्थ का विरोध न करे ॥ ३३ ॥ असावधानी, उन्माद, क्रोध, ईर्ष्या, ठगना, (छल कपट) अत्यन्त मान चाहना, चुगलपन, हिंसा, वैर, बड़ा अहंकार, धूर्तपन ॥ ३४ ॥ नास्तिकपना, साहस (शीघ्रता में विना विचारे चाहे जो कर बैठना) चोरी, दम्भ, इन सब को साध्वी स्त्री छोड़ देवे, ऐसे परम देवता रूप पति की सेवा करती वह स्त्री ॥ ३५ ॥ इस लोक में यश और सुख को और परलोक में पति के लोक को अवश्य प्राप्त होती है। यह स्त्री का नित्य कर्त्तव्य कहा अब इस के आगे नैमित्तिक (जो किसी निमित्त से हो) कर्म कहते हैं ॥ ३६ ॥ रजोदर्शन होने पर दोष (अपराध लगने) के भय से सब कामों को त्याग देवे। जहां किसी को न दीखे वहां शीघ्र ही आकर घर के भीतर लज्जित हुई वसे ॥ ३७ ॥

एकाम्बरावृताक्षीना स्नानालङ्कारवर्जिता ।
मौनिन्यधोमुखीचक्षः पाणिपाद्विरश्चचला ॥ ३८ ॥
अश्नीयात्केवलंभक्तं नक्तंमृन्मयभाजने ।
स्वपेद्भूमावप्रमत्ता क्षपेदेवमहस्त्रयम् ॥ ३९ ॥
स्नायीतचत्रिरात्रान्ते सचैलमुदितेरवौ ।
विलोक्यभर्तुर्वदनं शुद्धाभवतिधर्मतः ॥ ४० ॥
कृतशौचापुनःकर्म पूर्ववच्चसमाचरेत् ।
रजोदर्शनतोयाःस्यू रात्रयःषोडशर्तवः ॥ ४१ ॥
तत्रपुंबीजमक्लिष्टं शुद्धेक्षेत्रेप्ररोहति ।
चतस्रश्चादिमारात्रीः पर्ववच्चविवर्जयेत् ॥ ४२ ॥
गच्छेद्युग्मासुरात्रीषु पौष्णपित्रर्क्षराक्षसान् ।
प्रच्छादितादित्यपथे पुमान्गच्छेत्स्वयोषितः ॥ ४३ ॥
क्षमालङ्कृदवाप्नोति पुत्रंपूजितलक्षणम् ।

एकधोती वस्त्र धारण किये दीनदशा रखतीहुई; स्नान और आभूषण से र
मौन हुई, नीचे को मुख किये, हाथ पग इन को विशेष न चलावे ॥३८
के समय मिट्टी के पात्र में एक वार खाली भात खावे । प्रमाद छोड़ स
हुई पृथिवी पर चटाई डाल कर सोवे ऐसे तीन दिन वितावे ॥ ३९ ॥
दिन पूरे होने पर चौथे दिन प्रातःकाल सूर्य के उदय हो जाने पर
हुये वस्त्रों सहित स्नान करै फिर शुद्ध वस्त्र पहिन कर अपने पति के मु
देख के धर्म से शुद्ध होती है ॥४० ॥ किया है शौच जिसने वह स्त्री फि
के समान कामों को करै—रजोदर्शन से लेकर ऋतुकाल की जो सोल
होती हैं ॥ ४१ ॥ उन रात्रियों में पुरुष का नीरोग वीज शुद्ध क्षेत्र में
है । चार पहिली रात्रियों को और अमावास्या अष्टमी पौर्णमासी
ये पर्व तिथि सोलह में आजावें तो उन को भी छोड़ देवे ॥ ४२ ॥ उन
रात्रियों में से ६ । ८ । १० । १२ । १४ । १६ इन समरात्रियों में यदि रे
मघा आश्लेषा इन में से कोई नक्षत्र हो तो उस दिन सूर्य के अस्त हो
रात्रि में पुरुष अपनी स्त्री के पास जावे ॥४३॥ क्षमा से शोभायमान स्त्री

सुदुष्टांव्यसनासक्तमहितामधिवासयेत् ॥५०॥
अधिविन्नामपिविभुः स्त्रीणांतुसमतामियात्।
विवर्णादीनवदना देहसंस्कारवर्जिता ॥५१॥
पतिव्रतानिराहारा शोष्यतेप्रोपितेपतौ।
मृतंभर्तारमादाय ब्राह्मणीवन्हिमाविशेत् ॥५२॥
जीवन्तीचेत्त्यक्तकेशा तपसाशोधयेद्वपुः।
सर्वावस्थासुनारीणां नयुक्तंस्यादरक्षणम् ॥५३॥
तदेवानुक्रमात्कार्यं पितृभर्तृसुतादिभिः।
जाताःसुरक्षितावाये पुत्रपौत्रप्रपौत्रकाः ॥५४॥
येयजन्तिपितृन्यज्ञैर्मोक्षप्राप्तिमहोदयैः।

जिस के कोई पुत्र न हो, जिस को असाध्य दीर्घ रोग हो, जो प्रत्त हो, जिसे कुछ व्यसन (मदिरा पीना आदि) लगा हो और जो पति का हित न चाहती वा करती हो इन ऐसी स्त्रियों का अधिवासन करे इन के विद्यमान होते भी द्वितीय विवाह कर लेवे ॥५०॥ जिस के होते विवाह किया है पति को अन्य स्त्रियों के समान ही उस अधिविन्ना का आदर वस्त्राभूषणादि से करना चाहिये। पति के परदेश जाने पर जो मलिन वर्ण, दीन मुख, देह के संस्कार उवटना तैल मर्दन आदि को न हुई ॥५१॥ पति में व्रत रक्खे, अन्य पुरुष का मन से भी ध्यान न करे, सूक्ष्म आहार करे, देह को कृश निर्बल कर दे ऐसी ब्राह्मणी आदि पतिव्रता है, वह मरे हुए पति को लेकर अग्नि में प्रवेश करे (सती होजाय) ॥ यदि जीवित रहे तो केशों को मुंड़ा डाले तप से शरीर को शुद्ध करे की सब अवस्था (बालक से वृद्ध तक) ओं में पुरुषों को रक्षा करनी है ॥ ५३ ॥ सो बाल्यावस्था में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था पुत्रादि लोग अपनी पुत्री, पत्नी और मातादि की क्रम से रक्षा करें। सन्तान अपने घर में उत्पन्न हुए वा गोद लेकर जिन का पालन पोषण ऐसे जो पुत्र पौत्र और प्रपौत्र कहाने वाले लोग ॥ ५४ ॥ मोक्ष है तथा महान् फलोदय वाले बड़े २ अग्निहोत्रादि यज्ञों से अपने पितरों को पूजते हैं ये लोग जब मरें तो उन का स्थापित किये अग्नि

मृतान्तानग्निहोत्रेण दाहयेद्विधिपूर्वकम् ।
दाहयेदविलम्बेन भार्याचात्रव्रजेत्तसा ॥ ५५ ॥
इति श्रीवेदव्यासीये धर्म्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
नित्यंनैमित्तिकंकाम्यमितिकर्मत्रिधामतम् ।
त्रिविधंतच्चवक्ष्यामि गृहस्थस्यावधार्य्यताम् ॥ १ ॥
यामिन्याःपश्चिमेयामे त्यक्तनिद्रोहरिंस्मरेत् ।
आलोक्यमङ्गलद्रव्यं कर्मावश्यकमाचरेत् ॥ २ ॥
कृतशौचोनिषेव्याग्नीन्दन्तान्प्रक्षाल्यवारिणा ।
स्नात्वोपास्यद्विजःसन्ध्यां देवादींश्चैवतर्पयेत् ॥३॥
वेदवेदाङ्गशास्त्राणि इतिहासानिचाभ्यसेत् ।
अध्यापयेच्चसच्छिष्यान् सद्विप्रांश्चद्विजोत्तमः ॥ ४ ॥
अलब्धंप्रापयेल्लब्ध्वा क्षणमात्रंसमापयेत् ।

से विधिपूर्वक दाह करे और ऐसे लोगों की पत्नी पहिले मरे तो उसका
भी अग्निहोत्र के अग्नि से दाह करे तो वह भी स्वर्ग में जाती है ॥५५॥
व्यासीय धर्मशास्त्र के द्वितीय अध्याय का अनुवाद समाप्त हुआ ॥
गृहस्थ पुरुष का नित्य नैमित्तिक काम्य यह तीन प्रकार का कर्म शास्त्र
है यह तीनों प्रकार का कर्म हम कहते हैं तुम लोग सुनो ॥१॥ ब्राह्मण-
द्विज पुरुष रात्रि के पिछले चौथे पहर में उठकर विष्णु का स्मरण
हरि का ग्रहण उपलक्षणार्थ है जिस से शम्भु आदि अन्य देवों का भी
जानो] फिर मङ्गल द्रव्य (गौ आदि) को देखकर शौचादि आवश्यक
को करे ॥२॥ मल मूत्र त्यागादि शौच, अग्नि की सेवा, जल से दांतों का
, और स्नान करने पश्चात् संध्या करके देव ऋषि और पितरों का तर्पण
॥ ३ ॥ गृहस्थ ब्राह्मण वेद, वेदाङ्ग, छः शास्त्र और इतिहासों का अभ्यास
करे। अच्छे शिष्य और उत्तम ब्राह्मणों को वेदादि पढ़ाया करे ॥ ४ ॥
स (जो अपने यहां न हो) वस्तु की प्राप्ति का उपाय करे और उस
को पाकर कुछ थोड़े काल ठहर जावे फिर अन्य अप्राप्त की प्राप्ति
उपाय करे। विद्यादि गुणों में समर्थ होकर किसी धनादि से समर्थ
ईश्वरादि के यहां अपने गुण को अप्रकट करके न बसे। किन्तु

समर्थोहिसमर्थेन नाविज्ञातःक्वचिद्वसेत् ॥ ५ ॥
सरित्सरःसुवापीषु गर्तप्रस्रवणादिषु ।
स्नायीतयावदुद्धृत्य पञ्चपिण्डानिवारिणा ॥ ६ ॥
तीर्थाभावेप्यशक्तोवा स्नायात्तोयैःसमाहृतैः ।
गृहाङ्गनगतस्तत्र यावदम्बरपीडनम् ॥ ७ ॥
स्नानमब्दैवतैःकुर्य्यात् पावनैश्चापिमार्जनम् ।
मन्त्रैःप्राणांस्त्रिरायम्य सौरैश्चार्कंविलोकयेत् ॥ ८ ॥
तिष्ठन्स्थित्वातुगायत्रीं ततःस्वाध्यायमारभेत् ।
ऋचांचयजुषांसाम्नामथर्वाङ्गिरसामपि ॥ ९ ॥
इतिहासपुराणानां वेदोपनिषदांद्विजः ।
शक्त्यासम्यक्पठेन्नित्यमल्पमप्यासमापनात् ॥ १० ॥
सयज्ञदानतपसामखिलंफलमाप्नुयात् ।

अपने गुण को जता कर वहां से आदर प्राप्त करे ॥ ५ ॥ नदी, छोटा तालाव, बावड़ी, कुण्ड, झरने इन में से किसी में तब स्नान करे जब पहिले पांच पिण्ड मिट्टी को बाहर निकाल देवे ॥६॥ कोई घाट नदी आदि में नहो वा जाने का सामर्थ्य न हो तो नद्यादि से जल मंगाकर वा कुए से भर कर घर के आंगन में जितने जल से पहिना वस्त्र (धोती) भींग जाय उतने से स्नान करे ॥७॥ जल है देवता जिनका ऐसे वेद मन्त्रों से स्नान और (चित्पतिर्मापुनातु०) इत्यादि पावन मन्त्रों से मार्जन करे और व्याहृतियों से तीन प्राणायाम करके सूर्य देवता वाले मन्त्रों से खड़ा हुआ सूर्य को अर्थात् सूर्य नारायण को देखता हुआ उपस्थान करे ॥८॥ फिर खड़ा होकर गायत्री का जप करके ब्रह्मयज्ञ की विधि से वेद का अभ्यास करे ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ॥९॥ इतिहास, पुराण, वेदों के उपनिषद् इनका थोड़ा भी भाग उन २ की समाप्ति होने तक अपनी शक्ति के अनुसार द्विज भली प्रकार पढ़े (यही स्वाध्याय नामक ब्रह्मयज्ञ कहाता है) ॥ १० ॥ यज्ञ, दान, और तप के सम्पूर्ण फल को प्राप्त होता है जिस से द्विज पुरुष प्रतिदिन वाणी को वश में रख कर अर्थात् बीच में अन्य

मातृमातामहांस्तद्वत् त्रीनेवंहित्रिभिस्त्रिभिः।
मातामहस्ययेऽप्यन्ये गोत्रिणोदाहवर्जिताः ॥ १८ ॥
तानेकाञ्जलिदानेन तर्पयेच्चपृथक्पृथक्।
असंस्कृतप्रमीताये प्रेतसंस्कारवर्जिताः ॥ १९ ॥
वस्त्रनिष्पीडिताम्भोभिस्तेषामाप्यायनंभवेत्।
अतर्पितेषुपितृषु वस्त्रंनिष्पीडयेत्तुयः ॥ २० ॥
निराशाःपितरस्तस्य भवन्तिसुरमानुषैः।
पयोदर्भस्वधाकार गोत्रनामतिलैर्भवेत् ॥ २१ ॥
सुदत्तंतत्पुनस्तेषामेकेनापिविनावृथा।
अन्यचित्तेनयद्दत्तं यद्दत्तंविधिवर्जितम् ॥ २२ ॥
अनासनस्थितेनापि तज्जलंरुधिरायते।
एवंसन्तर्पिताःकामैस्तर्पकांस्तर्पयन्तिच ॥ २३ ॥
ब्रह्मविष्णुशिवादित्यमित्रावरुणनामभिः।

पितादि के तुल्य माता, पितामही, और प्रपितामही इन तीनों का तर्पण मातामह (नाना) प्रमातामह और वृद्धप्रमातामह इन तीनों का भी प्रकार तीन २ अञ्जलियों से तर्पण करे—और नाना के गोत्र के अन्य जो मर गये हों जिन का दाह कर्म नहीं हुआ हो ॥ १८ ॥ उन का एक अञ्जलि देकर पृथक् २ तर्पण करे और जो उपनयनादि संस्कार हुए बिना ही मरे हैं तथा जिन का दशगात्रादि प्रेत संस्कार भी नहीं हुआ उन की वस्त्र (अंगोछा) निचोड़ने के जल से तृप्ति होजाती है। जो पुरुष पितरों के तर्पण से पहिले वस्त्र को निचोड़ता है ॥२०॥ उस के पितर देवता और मनुष्यों सहित निराश हो जाते हैं। जल, कुश, स्वधा, गोत्र नाम और तिल इन सब के सहित जो तर्पण किया जाता है ॥ २१ ॥ वह जलदान उत्तम है। जलादि में से एक भी कोई वस्तु न हो तो किया हुआ तर्पण वृथा होता है। अन्य विचार मन में रख कर वा विधिपूर्वक जो तर्पण नहीं किया अथवा आसन पर बैठे विना जो जल दिया वह सब रुधिर के समान है। इस प्रकार तृप्त किये पितर तर्पण करने वालों को कामनाओं से तृप्त करते हैं ॥२३॥ ब्रह्मा, विष्णु, शिव, आदित्य, मित्रावरुण, इन ...

पूजयेल्लक्षितैर्मन्त्रैर्जलैर्मन्त्रोक्तदेवताः ॥ २४ ॥
उपस्थायरविंकाष्ठां पूजयित्वाचदेवताः ।
ब्रह्माग्नीन्द्रौषधीजीवविष्णुवाङ्महतांतथा ॥ २५ ॥
अपांपतेतिसत्कारं नमस्कारैःस्वनामभिः ।
कृत्वामुखंसमालभ्य स्नानमेवंसमाचरेत् ॥ २६ ॥
ततःप्रविश्य भवनमावसथ्येहुताशने ।
पाकयज्ञांश्चचतुरो विदध्याद्विधिवद्द्विजः ॥ २७ ॥
अनाहितावसथ्याग्निरादायान्नंघृतप्लुतम् ।
शाकलेनविधानेन जुहुयाल्लौकिकेऽनले ॥ २८ ॥
व्यस्ताभिर्व्याहृतीभिश्च समस्ताभिस्ततःपरम् ।
षड्भिर्देवकृतस्येति मन्त्रवद्भिर्यथाक्रमम् ॥ २९ ॥
प्राजापत्यंस्विष्टकृतं हुत्वैवंद्वादशाहुतीः ।
ओंकारपूर्वःस्वाहान्तस्त्यागःस्विष्टविधानतः ॥ ३० ॥

न २ के मन्त्रों द्वारा जल से अर्घ देवे ॥२४॥ सूर्य नारायण का उपस्थान और पूर्व दिशाओं को उन २ के इन्द्रादि देवताओं सहित नमस्कार ब्रह्मा,अग्नि,इन्द्र, औषधी,जीव,विष्णु, वाच्, महत्,॥२५॥ अपांपति इन का (अग्नयेनमः) इत्यादि नाम मन्त्रों से पूजन करके (संवर्चसा०) मन्त्र ख का प्रक्षालन करके फिर मध्याह्न का स्नान करे ॥ २६ ॥ फिर घर में : गृह्य अग्नि में ब्राह्मणादि द्विज विधिपूर्वक देव यज्ञादि चारो पाक को करें ॥ २७ ॥ विधिपूर्वक गृह्याग्नि का स्थापन जिस ने न किया हो पुरुष घी से सम्यक् प्लावित अन्न को लेकर शाकल्य संहिता में कहे वि-से लौकिक अग्नि में होम करे ॥ २८ ॥ १–ओं भूः स्वाहा । २–ओंभुवः हा । ३–ओंस्वः स्वाहा । इस प्रकार व्यस्त नाम पृथक् २ तीन व्याहृतियों था–ओंभूर्भुवःस्वः स्वाहा । और (देवकृतस्यैन०) इत्यादि शाकल होम : मन्त्रों से छः आहुति करके ॥ २९ ॥ इसी प्रकार प्राजापत्य तथा एक कृत् ये सब बारह आहुति करे उक्त सब मन्त्रों के पूर्व ओंकार और में स्वाहा पद लगावे । त्याग वाक्य गृह्यसूत्रानुसार जानो ॥ ३० ॥

भुविदर्भान्समास्तीर्य बलिकर्मसमाचरेत्।
विश्वेभ्योदेवेभ्यइति सर्वेभ्योभूतेभ्यएवच ॥ ३१ ॥
भूतानांपतयेचेति नमस्कारेणशास्त्रवित्।
दद्याद्बलित्रयंचाग्रे पितृभ्यश्चस्वधानमः ॥ ३२ ॥
पात्रनिर्णेजनंवारि वायव्यांदिशि निःक्षिपेत्।
उद्धृत्यषोडशग्रासमात्रमन्नंघृतोक्षितं ॥ ३३ ॥
इदमन्नंमनुष्येभ्योहन्तेत्युक्त्वासमुत्सृजेत्।
गोत्रनामस्वधाकारैः पितृभ्यश्चापिशक्तितः ॥ ३४ ॥
षड्भ्योऽन्नमन्वहंदद्यात्पितृयज्ञविधानतः।
वेदादीनांपठेत्किञ्चिदल्पंब्रह्ममखाप्तये ॥ ३५ ॥
ततोऽन्यदन्नमादाय निर्गत्यभवनाद्बहिः।
काकेभ्यःश्वपचेभ्यश्च क्षिपेद्गोग्रासमेवच ॥ ३६ ॥
उपविश्यगृहद्वारि तिष्ठेद्यावन्मुहूर्तकम्।
अप्रमुक्तोऽतिथिंलिप्सुर्भावशुद्धःप्रतीक्षकः ॥ ३७ ॥

पृथ्वी पर कुश बिछा कर बलि कर्म (भूतयज्ञ) करै (विश्वेभ्यो देवेभ्यो
(सर्वेभ्योभूतेभ्योनमः) ॥ ३१ ॥ और (भूतानांपतयेनमः) इस प्रकार शा
जानने वाला पुरुष तीन बलि प्रथम दे कर (पितृभ्यःस्वधानमः) इ
से पितरों के लिये एक बलि अपसव्य दक्षिणाभिमुख हो कर देवे।
वैश्वदेव सम्बन्धी अन्नपात्र के धोने का जल वायव्य दिशा में डा
घृतसेचन किये सोलह ग्रास परिमित अन्न को निकाल कर ॥३३॥ इदमन्नं
ष्येभ्योहन्त–यह कहकर मनुष्य यज्ञ कर देवे और अपने गोत्र का नाम तथा
कहकर यथा शक्ति पितरोंको भी देवे॥३४॥ पितृयज्ञ की विधि से छः (३ पितृ
३ मातृपक्ष के) को नित्य अन्न देवे। फिर ब्रह्मयज्ञ की प्राप्ति के निमित्त
आदि का भाग पढ़ै ॥३५॥ फिर अन्य अन्न को ले घर से बाहर जाके का
चाण्डाल इन को भी देवे और गौओं को ग्रास भी देवे ॥३६॥ फिर घ
पर बैठ कर दो घड़ी ठहरे तथा स्वयंभोजन न करै और अतिथि की
करता हुआ मन से शुद्ध होकर अतिथि की बाट देखै ॥ ३७ ॥

आगतंदूरतःशान्तं भोक्तुकाममकिंचनम् ।
दृष्ट्वासम्मुखमभ्येत्य सत्कृत्यप्रश्रयार्च्चनैः ॥ ३८ ॥
पादधावनसम्मानाभ्यञ्जनादिभिरर्च्चितः ।
त्रिदिवंप्रापयेत्सद्यो यज्ञस्याभ्यधिकोऽतिथिः ॥ ३९ ॥
कालागतोऽतिथिर्दृष्टवेदपारोगृहागतः ।
द्वावेतौपूजितौस्वर्गं नयतोऽधस्त्वपूजितौ ॥ ४० ॥
विवाह्यस्नातकक्ष्माभृदाचार्यसुहृदृत्विजः ।
अर्घ्याभवन्तिधर्मेण प्रतिवर्षंगृहागताः ॥ ४१ ॥
गृहागतायसत्कृत्य श्रोत्रियाययथाविधि ।
भक्त्योपकल्पयेदेकं महाभागंविसर्जयेत् ॥ ४२ ॥
विसर्जयेदनुव्रज्य सुतृप्तश्रोत्रियातिथीन् ।
मित्रमातुलसंबन्धियान्धवान्समुपागतान् ॥ ४३ ॥
भोजयेद्गृहिणोभिक्षां सत्कृतांभिक्षुकोऽर्हति ।

दूरसे आया हो, शान्तस्वभाव हो, निर्धन हो, ऐसे अभ्यागत ब्राह्मण
संन्यासी को देखकर सन्मुख जाके नम्रता और आदर पूर्वक स्तुति प्रार्थना
३८ ॥ पग धोना, सम्मान, तैलमर्दनादि से पूजित हुआ अतिथि यज्ञ से
अधिक स्वर्ग को प्राप्त कराता (पहुंचाता) है ॥ ३९ ॥ उचित समय पर
॥ अतिथि और वेद का तत्त्व जानने वाला अपने घर आये ये दोनों पूजे
तो स्वर्ग में, और न पूजे हों तो नरक में ले जाते हैं ॥४०॥ जो अपने यहां
गाहा हो, ब्रह्मचर्य समाप्त करके हुआ स्नातक, राजा, आचार्य, मित्र, ऋत्विज,
ः अपने घर पर आवें तो प्रतिवर्ष अर्घ मधुपर्कादि विधि विहित धर्म से
ने योग्य हैं ॥४१॥ अपने घर आये वेदपाठी का शास्त्रोक्त विधि से सत्कार
के श्रद्धा से अपने धनादि का एक बड़ा भाग (हिस्सा) देकर विदाकरे ॥४२॥
के आदर सत्कार से तृप्त किये वेदपाठी तथा अतिथियों के पीछे कुछ दूर
कर विसर्जन करे। मित्र, मामा, सम्बन्धि,बांधव, ये लोग अपने घर पर
ये हों तो ॥४३॥ उन को भी आदर से भोजन करावे और सत्कार से दी
गृहस्थी की भिक्षा को भिक्षुक भी अवश्य ग्रहण करे और जो गृहस्थी
दु अन्न को स्वयं खाता तथा अस्वादु अन्न अतिथि आदि को देता है यह

स्वाद्वन्नमश्नन्नस्वादु ददद्गच्छत्यधोगतिम् ॥ ४४ ॥
गर्भिण्यातुरभृत्येषु बालवृद्धातुरादिषु ।
बुभुक्षितेषुभुञ्जानो गृहस्थोऽश्नातिकिल्बिषम् ॥ ४५ ॥
नाद्याद्गृद्धयेन्नपाकाद्यं कदाचिदनिमन्त्रितः ।
निमन्त्रितोपिनिन्द्येन प्रत्याख्यानंद्विजोर्हति ॥ ४६ ॥
शूद्राभिशस्तवार्धुष्या वाग्दुष्टक्रूरतस्कराः ।
क्रुद्धापविद्धवद्धोग्रवधवन्धनजीविनः ॥ ४७ ॥
शैलूषशौण्डिकोन्नद्धोन्मत्तव्रात्यव्रतच्युताः ।
नग्ननास्तिकनिर्लज्जपिशुनव्यसनान्विताः ॥ ४८ ॥
कदर्यस्त्रीजितानार्य्यपरवादकृतानराः ।
अनीशाःकीर्तिमन्तोऽपि राजदेवस्वहारकाः ॥ ४९ ॥
शयनासनसंसर्गव्रतकर्मादिदूषिताः ।
अश्रद्दधानाःपतिता भ्रष्टाचारादयश्चये ॥ ५० ॥
अभोज्यान्नाःस्युरन्नादो यस्ययःस्यात्सतत्समः ।

अधोगति (नरक) को प्राप्त होताहै ॥४४॥ गर्भवती स्त्री, रोगी भृत्य, बालक वृद्धतासे दुःखित इनके भूखे बैठे रहते जो गृहस्थ भोजन करता है वह भागी होताहै। इससे गर्भवती आदिको पहिले भोजन देवे। निमन्त्रण अर्थात् विन बुलाये किसीके पङ्क्ति भोजनादि में कदापि न खावे और करै। यदि कोई निन्दित पुरुष निमन्त्रण भी देवे तो भी ब्राह्मण उसे न करे ॥ ४६ ॥ शूद्र, जिसे शाप लगा हो, व्याज लेने वाला, गूंगा, दुष्ट चोर, क्रोधी, पतित, कैदी, बड़ीहिंसा और बंधन से जो जीविका करते नट, कलवार, उन्नद्ध (उत्कट) उन्मत्त, व्रात्य (जिसका जनेऊ न हुआ जिसने व्रत को छोड़ दिया हो, गूंगा, नास्तिक, निर्लज्ज, चुगल, (जो मदिरा आदि पीता हो) ॥ ४८ ॥ कनूजस, और स्त्रियों ने जिसे हो, असज्जन, सबका निन्दक, असमर्थ और कीर्तिवाले होकर भी जो और देवता के द्रव्य को नार ले ॥ ४९ ॥ शय्या, आसन, संसर्ग, व्रत कर्म में जो किसी प्रकार दूषित हों और श्रद्धाहीन पतित भ्रष्टाचार आदि ये नट आदि के ॥ ५० ॥ अन्न को धर्मनिष्ठ पुरुष कदापि न खावे

ापितान्वयमित्रार्द्ध सीरिणोदासगोपकाः ॥ ५१ ॥
द्राणामप्यमीपान्तु भुक्त्वान्नंनैवदुष्यति ।
र्णान्योन्यभोज्यान्ना द्विजास्तुविदितान्वयाः ॥ ५२ ॥
वृत्तोपार्जितंमेध्यमाकरस्थममाक्षिकम् ।
वलीढमगोघ्रानमस्पृष्टंशूद्रवायसैः ॥ ५३ ॥
अनुच्छिष्टमसंदुष्टमपर्युषितमेवच ।
अम्लानवाह्यमन्नाद्यमाद्यंनित्यंसुसंस्कृतम् ॥ ५४ ॥
कृसरापूपसंयावपायसंशष्कुलीनिच ।
नाश्नीयाद्ब्राह्मणोमांसमनियुक्तःकथञ्चन ॥ ५५॥
क्रतौश्राद्धेनियुक्तोवा अनश्नन्पततिद्विजः ।
ृगयोपार्जितंमांसमभ्यर्च्यापितृदेवताः ॥ ५६ ॥
ात्रियोद्वादशोनन्तत्क्रीत्वावैश्योऽपिधर्मतः ।

न को खाता है वह वर्ता के समान हो जाता है। नाई, वंश पर-
मित्र, अर्द्धसीरी (जिसके आधे साझे में खेती होती हो) दास
और गोप ॥ ५१ ॥ इतने शूद्रों के भी अन्न को खाकर दोष भागी
। प्रसिद्ध है वंश जिन का ऐसे ब्राह्मण परस्पर भोज्यान्न (वह
... जो और यह उन के का खाले) कहे हैं ॥ ५२ ॥ अपनी जीविका
संचय किया हो, सहत को छोड़कर आकर (खान) की वस्तु, घोड़े
या गौ का उच्छिष्ट किया न हो, जिस को शूद्र ने या कौवे ने न छुआ
सब अन्न पवित्र हैं ॥ ५३ ॥ जो उच्छिष्ट न हो जिसको दोष न लगाया
सी न हो, म्लान (दुर्गन्ध) न हो, ऐसे भली प्रकार बनाये अन्न आदि
ए खावे ॥ ५४ ॥ खिचड़ी, मालपूवे, मोहनभोग, खीर, पूरी इनको भी खा
ज्ञ में किसी ऋत्विज् के काम पर नियुक्त हुए विना ब्राह्मण कभी मांस
॥ ५५ ॥ यज्ञ और श्राद्ध में नियुक्त किया हुआ ऋत्विगादि अधिकार
करके यदि ब्राह्मण मांस न खावे तो भी पतित हो जाता है।
रके लाये हुए मांस को पितर और देवताओं का पञ्चमहायज्ञों द्वारा
है ॥५६॥ ११ भागों को क्षत्रिय और उस में से बारहवें भाग को

सायंसन्ध्यामुपासीत हुत्वाग्निंभृत्यसंयुतः ॥ ६९॥
आपोशानक्रियापूर्वमश्नीयादन्वहंद्विजः ।
सायमप्यतिथिःपूज्यो होमकालागतोद्विजः ॥ ७०॥
श्रद्धयाशक्तितोनित्यं श्रुतंहन्यादपूजितः ।
नातितृप्तउपस्पृश्य प्रक्षाल्यचरणौशुचिः ॥ ७१ ॥
अप्रत्यगुत्तरशिराः शयीतशयनेशुभे ।
शक्तिमानुचितेकाले स्नानंसन्ध्यांनहापयेत् ॥ ७२॥
ब्राह्मेमुहूर्तेचोत्थाय चिन्तयेद्धितमात्मनः ।
शक्तिमान्मतिमान्नित्यं व्रतमेतत्समाचरेत् ॥ ७३॥

इतिश्री ... सी धर्म ... गृहस्थ ...

इतिव्यासकृतंशास्त्रं धर्मसारसमुच्चयम् ।
आश्रमेयानिपुण्यानि मोक्षधर्माश्रितानिच ॥ १॥
गृहाश्रमात्परोधर्मो नास्तिनास्तिपुनःपुनः ।

अग्निहोत्र करके सायकाल का सन्ध्या करे ॥६९॥ आपोशान क्रिया (भो... पहिले उपस्ताररूप आचमन) करके द्विज पुरुष नित्य भोजन करे। होम के... आये ब्राह्मण अतिथि का सायंकाल में भी सदैव पूजन करे ॥७०॥ श्रद्धा... शक्ति के अनुसार यदि अतिथि का पूजन न किया जाय तो वह वेदप... नष्ट (निष्फल) करता है । अत्यन्त तृप्त नहो किन्तु लघु भोजन कर... मन करके चरणों को धोकर ॥ ७१ ॥ उत्तम शय्या पर सोवे परन्तु पश्चि... उत्तर दिशा में शिर न करै । समर्थ (नीरोग) हो तो सूर्योदय के समय स... सन्ध्या को कभी न छोड़े ॥ ७२ ॥ ब्राह्म मुहूर्त्त [४ घड़ी रात से] में उ... अपने हित की चिन्ता करे। शक्ति और बुद्धि वाला मनुष्य इस व्रत (नि... को नित्य २ सेवन करे ॥ ७३ ॥

यह वेदव्यासीय धर्मशास्त्र में गृहस्थ के नित्यकर्म विषय में तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥३॥

धर्म के सार का है संग्रह जिस में ऐसा यह वेदव्यास जी का ब... धर्मशास्त्र है । सब आश्रमों में जो पुण्य हैं और जो पुण्य मोक्ष के धर्... हैं वे सब गृहाश्रम में प्राप्त हो सकते हैं ॥१॥ सब आश्रमों में गृहस्थ आ...

सर्वतीर्थफलंतस्य यथोक्तंयस्तुपालयेत् ॥ २ ॥
गुरुभक्तोभृत्यपोपी दयावाननसूयकः ।
नित्यजापीचहोमीच सत्यवादीजितेन्द्रियः ॥ ३ ॥
स्वदारेयस्यसन्तोपः परदारनिवर्त्तनम् ।
अपवादोऽपिनोयस्य तस्यतीर्थफलंगृहे ॥ ४ ॥
परदारान्परद्रव्यं हरतेयोदिनेदिने ।
सर्वतीर्थाभिषेकेण पापंतस्यननश्यति ॥ ५ ॥
गृहेपुसेवनीयेपु सर्वतीर्थफलंततः ।
अन्नदस्यत्रयोभागाः कर्त्ताभागेनलिप्यते ॥ ६ ॥
ातिश्रयंपादशौचं ब्राह्मणानांचतर्पणम् ।
नपापंसंस्पृशेत्तस्य बलिंभिक्षांददातियः ॥ ७ ॥
पादोदकंपादघृतं दीपमन्नंप्रतिश्रयम् ।

धर्म नहीं है । जो गृहस्थ पुरुष अपने धर्म का पूरा २ शास्त्रानुसार पालन
सको संपूर्ण तीर्थों का फल घर में ही मिल जाता है ॥२॥ गुरु का भक्त खो
भृत्यों का पालन करने वाला दया करने वाला जो किसी की निन्दा नहीं
ो नित्य २ जप और होम करता सत्य बोलता और जितेन्द्रिय रहता
॥ ३ ॥ अपनी स्त्री में ही जिस को सन्तोष हो अन्य की स्त्री से निवृत्ति
जिस की निन्दा बुराई कोई न करता हो उस मनुष्य को घर में भी तीर्थ
फल मिलता है ॥ ४ ॥ पराई स्त्री और पराये धन को जो दिन पर दिन
ता है सब तीर्थों के स्नान से भी उस का पाप नष्ट नहीं होता ॥ ५ ॥
स से सेवन करने योग्य उत्तम धर्मों वाले घरों में सब तीर्थों का फल होता
पुण्य के तीन भाग उस को मिला करते हैं कि जिस के अन्न से श्राद्ध
दि किया जाय और जो उक्त कर्मों को करता है उस को एक भाग फल
लता है ॥ ६ ॥ नम्रता, वा पगों का धोना ब्राह्मणों को तृप्त करना बलि-
ादेव, और भिक्षा देना इन कामों को जो नित्य २ करता है उस मनुष्य
पाप नहीं लगता ॥ ७ ॥ पग धोने का जल पादघृत (जूता वा खड़ाऊं-
का,) दीपक, अन्न, घर, ये वस्तु जो ब्राह्मणों को देता है उस के पास

योददातिब्राह्मणेभ्यो नोपसर्पतितंयमः ॥ ८ ॥
विप्रपादोदकक्लिन्ना यावत्तिष्ठतिमेदिनी ।
तावत्पुष्करपात्रेषु पिबन्तिपितरोऽमृतम् ॥ ९ ॥
यत्फलंकपिलादाने कार्तिक्यांज्येष्ठपुष्करे ।
तत्फलंऋषयःश्रेष्ठा विप्राणांपादशौचने ॥ १० ॥
स्वागतेनाग्नयःप्रीता आसनेनशतक्रतुः ।
पितरःपादशौचेन अन्नाद्येनप्रजापतिः ॥ ११ ॥
मातापित्रोःपरंतीर्थं गङ्गागावोविशेषतः ।
ब्राह्मणात्परमंतीर्थं नभूतन्नभविष्यति ॥ १२ ॥
इन्द्रियाणिवशीकृत्य यत्रयत्रवसेन्नरः ।
तत्रतत्रकुरुक्षेत्रं नैमिषंपुष्कराणिच ॥ १३
गङ्गाद्वारंचकेदारं सन्निहत्यांतथेवच ।
एतानिसर्वतीर्थानि कृत्वापापैःप्रमुच्यते ॥ १४ ॥
वर्णानामाश्रमाणांच चातुर्वर्ण्यस्यभोद्विजाः ।

यमराज नहीं आता ॥ ८ ॥ ब्राह्मणों के पगों के जल से गीली भूमि जब तक रहती है तब तक पुष्कर तीर्थ के पत्तों में पितर लोग अमृत पीते हैं ॥ ९ ॥ जो फल कपिला गौ के दान का है और जो फल कार्तिकी को पुष्कर के स्नान का है । हे श्रेष्ठ ऋषि लोगो ! वही फल ब्राह्मणों के पग धोने में है ॥ १० ॥ विद्वान् ब्राह्मणों या विरक्त संन्यासियों के आने पर (बड़ी कृपा की आइये ! इत्यादि कहना) से अग्नि, आसन के देने से इन्द्र, पग धोने से पितर, और अन्न आदि के देने से प्रजापति प्रसन्न होते हैं ॥ ११ ॥ माता पिता की सेवा करना परम तीर्थ है । विशेष कर गङ्गा गौ तीर्थ हैं । ब्राह्मणों से अधिक तीर्थ न हुआ न होगा ॥ १२ ॥ जो मनुष्य इन्द्रियों को वश में करके जिस २ आश्रम में बसता है उस के लिये वहां ही कुरुक्षेत्र, नैमिष और पुष्कर ॥ १३ ॥ हरिद्वार, केदार, सन्निहत्या-इत्यादि तीर्थ हैं । इन तीर्थों को करके सब पापों से छूट जाता है ॥ १४ ॥

हे पण्डितो ब्राह्मणो ! चारों वर्ण और आश्रमों के द्वारा जो धर्म

दानधर्मंप्रवक्ष्यामि यथाव्यासेनभाषितम् ॥ १५ ॥
यद्ददातिविशिष्टेभ्यो यच्चाश्नातिदिनेदिने ।
तच्चवित्तमहंमन्ये शेषंकस्यापिरक्षति ॥ १६ ॥
यद्ददातियदश्नाति तदेवधनिनोधनम् ।
अन्येमृतस्यक्रीडन्ति दारैरपिधनैरपि ॥ १७ ॥
किंधनेनकरिष्यन्ति देहिनोऽपिगतायुषः ।
यद्वर्द्धयितुमिच्छन्तस्तच्छरीरमशाश्वतम् ॥ १८ ॥
अशाश्वतानिमित्राणि विभवोनैवशाश्वतः ।
नित्यंसन्निहितोमृत्युः कर्तव्योधर्मसंग्रहः ॥ १९ ॥
यदिनामनधर्माय नकामायनकीर्तये ।
यत्परित्यज्यजगन्तव्यं तद्धनंकिंनदीयते ॥ २० ॥
जीवन्तिजीवितेयस्य विप्रामित्राणिबान्धवाः ।
जीवितंसफलंतस्य आत्मार्थेकोनजीवति ॥ २१ ॥
कृमयःकिंनजीवन्ति भक्षयन्तिपरस्परम् ।

कहने के अनुसार कहते हैं ॥ १५ ॥ जो उत्तम विद्वान् धर्मात्माओं
है या नित्य २ जो खाता है उस को ही उस का धन मानते हैं अ
किसी अन्य के ही धन की वह रक्षा करता है ॥१६॥ जितना दान देता
जितना भोग कर लेता है वही धनी का धन है। क्योंकि उस के मर ज
स के स्त्री तथा धन से अन्य लोग ही आनन्द भोगते हैं ॥१७॥ बुड्ढे
री मनुष्य धन से क्या करेंगे, जिस शरीर को धन से बढ़ाया या हृष्ट
चाहते हैं वह भी अनित्य है ठहरने वाला नहीं मित्र और धन स
रहते और मृत्यु नित्य ही समीप में खड़ा है इस से धर्म का सङ्
ा चाहिये ॥ १९ ॥ जो धन धर्म के लिये काम (भोग) के लिये
ों के लिये नहो और जिस धन को यहां छोड़कर परलोक जाना है व
को क्यां नहीं दिया जाता ? ॥ २० ॥ जिस मनुष्य के जीवित रहने
ण, मित्र, बांधव (कुटुम्बी) लोगों की जीविका (उपकार) हो उ

परलोकाविरोधेन योजीवतिसजीवति ॥ २२ ॥
पशवोऽपिहिजीवन्ति केवलात्मोदरम्भराः।
किंकायेनसुगुप्तेन वलिनाचिरजीविना ॥ २३ ॥
ग्रासादर्द्धमपिग्रासमर्थिभ्यःकिंनदीयते।
इच्छानुरूपोविभवः कदाकस्यभविष्यति ॥ २४ ॥
अदातापुरुषस्त्यागी धनंसन्त्यज्यगच्छति।
दातारंकृपणंमन्ये मृतोऽप्यर्थंनमुञ्चति ॥ २५ ॥
प्राणनाशस्तुकर्तव्यो यःकृतार्थोनसोमृतः।
अकृतार्थस्तुयोमृत्युं प्राप्तःखरसमोहिसः॥ २६ ॥
अनाहूतेषुयद्दत्तं यच्चदत्तमयाचितम्।
भविष्यतियुगस्यान्तस्तस्यान्तोनभविष्यति ॥ २७ ॥

पतङ्गादि भी क्या जीवन का निर्वाह नहीं करते ? कि जो एक दूसरे लेते हैं। परन्तु परलोक के लिये दान पुण्य करता हुआ जो पुरुष उसी का जीवन सार्थक है ॥ २२ ॥ केवल अपने पेट भरने वाले तो जीते हैं। भली प्रकार रक्षा किये बलवान् बहुत जीने वाले शरीर से को क्या फल है ? ॥ २३ ॥ ग्रास वा आधाग्रास अन्न मांगने वाले क्यों नहीं देता ? । इच्छा के अनुसार धन कब किस के हो जायगा? तना धन कभी किसी के न होगा जिस से तृष्णा पूरी हो जावे ॥२४॥ राय में किसी को कुछ भी न देने वाला पुरुष ही त्यागी क्योंकि वह छोड़ कर मर जाता है। परन्तु हम दाता को कृपण मानते हैं क्योंकि मर कर भी धन को नहीं छोड़ता अर्थात् मरे पर भी उसे धन दान का फल उत्तम ऐश्वर्य भोग मिलता है ॥ २५ ॥ प्राणों का नाश तो होना परन्तु अपना काम दान पुण्यादि धर्म करके जो मरा है वह मानो मरा और जो अकृतार्थ (धर्म किये विना) मरता है वह गधे के है ॥ २६ ॥ विन बुलाये ब्राह्मण के घर जाकर और विन मांगे जो दिया जाता है युग नाम काल का तो अन्त होगा परन्तु उस दान का अन्त नहीं होगा ॥ २७ ॥

ृतवत्सायथागौश्च कृष्णालोभेनदुह्यते ।
ारस्परस्यदानानि लोकयात्रानधर्मतः ॥ २८ ॥
अदृष्टेचाशुभेदानं भोक्ताचैवनदृश्यते ।
ुनरागमनंनास्ति तत्रदानमनन्तकम् ॥ २९ ॥
मातापितृपुयद्द्याद्‌ भ्रातृपुश्वशुरेपुच ।
जायापत्येपुयद्द्यात् सोनन्तःस्वर्गसंक्रमः ॥ ३० ॥
पितुःशतगुणंदानं सहस्रंमातुरुच्यते ।
भगिन्यांशतसाहस्रं सोदरेदत्तमक्षयम् ॥ ३१ ॥
इन्दुक्षयःपिताज्ञेयो मातचैवदिनक्षयः ।
संक्रांतिर्भगिनीचैव व्यतिपातःसहोदरः ॥ ३२ ॥
अहन्यहनिदातव्यं ब्राह्मणेपुमुनीश्वराः ! ।

ार गया है बछड़ा जिस का ऐसी काली गौ को जैसे दूध के लोभ से
हैं अर्थात् बच्चा मर जाने पर अथवा गाभिन [गर्भिणी] हो जाने पर
ा दुहना शास्त्र से निषिद्ध है । वह दूध भी अभक्ष्य है। इसी प्रकार पर-
ा जो दान (रीति वा व्योहार) है वह लोक रीति है धर्म नहीं ॥२८॥
ुण्य पाप को न देखकर (अर्थात् किसी पाप के नाश के लिये न दे)
ान के भोक्ता को न देखे (यह न चाहै कि इस दान का फल मुझे मिले)
यह भी न चाहै कि फिर मैं जगत् में आऊंगा ऐसे समय में दान का
अनन्त है अर्थात् किसी कामना से जो न किया जाय वही दान सब से
है ॥२९॥ माता पिता भाई श्वशुर स्त्री पुत्र वा पुत्री इन को जो दिया
वह भी ऐसे स्वर्ग में पहुंचाता है जिस का अन्त नहीं है ॥ ३० ॥ पिता
ाना सौगुना, माता को हजार गुना, भगिनी (बहिन) को देना लाख
होता है और भाई को जो दिया जाय उस का कभी भी नाश नहीं
ा किन्तु उस का अक्षय फल है ॥ ३१ ॥ पिता को देने से अमावास्या के
के तुल्य पुण्य होता, माता को देने से जिस तिथि की हानि हो उस के
बहन को देने से संक्रान्ति के तुल्य और सगे भाई को देने से व्यतीपात
में दिये दान के तुल्य पुण्य होता है ॥ ३२ ॥ हे मुनीश्वरो ! सुपात्र
ाण को नित्य २ दान देना चाहिये क्योंकि जो कभी कोई तपस्वी सुपात्र

आगमिष्यतियत्पात्रं तत्पात्रंतारयिष्यति ॥ ३३ ॥
किञ्चिद्वेदमयंपात्रं किञ्चित्पात्रंतपोमयम् ।
पात्राणामुत्तमंपात्रं शूद्रान्नंयस्यनोदरे ॥ ३४ ॥
यस्यचैवगृहेमूर्खो दूरेचापिगुणान्वितः ।
गुणान्वितायदातव्यं नास्तिमूर्खव्यतिक्रमः ॥ ३५ ॥
देवद्रव्यविनाशेन ब्रह्मस्वहरणेनच ।
कुलान्यकुलतांयान्ति ब्राह्मणातिक्रमेणच ॥ ३६ ॥
ब्राह्मणातिक्रमोनास्ति विप्रेवेदविवर्जिते ।
ज्वलन्तमग्निमुत्सृज्य नहिभस्मनिहूयते ॥ ३७ ॥
सन्निकृष्टमधीयानं ब्राह्मणंयोव्यतिक्रमेत् ।
भोजनेचैवदानेच हन्यात्त्रिपुरुषंकुलम् ॥ ३८ ॥
यथाकाष्ठमयोहस्ती यथाचर्ममयोमृगः ।

सिद्ध योगी महात्मा आजायगा वह दाता को संसारसागर से पार ॥ ३३ ॥ कोई सुपात्र तो वेदपाठी वा कोई तपस्वी होता है और सब में उत्तम सुपात्र वह है जिस के पेट में शूद्र का अन्न न गया हो ॥ ३४ ॥ के घर के समीप में तो मूर्ख ब्राह्मण हो और गुणी सुपात्र दूर हो वे गुणी ब्राह्मण को देवे मूर्ख के उलंघन करने में कुछ दोष नहीं है ॥ ३५ ॥ देवता के मन्दिर सम्बन्धी द्रव्य का नाश करने से, ब्राह्मण के धन प्रकार मारलेने से और ब्राह्मण का उलंघन-अपमान (तिरस्कार) अच्छे कुल भी पतित नीच हो जाते हैं ॥ ३६ ॥ वेद से हीन मूर्ख कुपात्र ब्राह्मण का [दान देके आदर सत्कार न करना रूप] उलंघन नहीं है क्योंकि जलते हुए अग्नि को छोड़कर भस्म में होम नहीं जाता है। अर्थात् जैसे भस्म को छोड़ कर प्रज्वलित अग्नि में होम उचित है वैसे ही मूर्ख ब्राह्मण का उलंघन [छोड़] कर विद्वान् को चाहिये ॥३७॥ भोजन और दान में समीप के विद्वान् ब्राह्मण का जो करता है वह तीन पीढ़ी तक अपने कुल को नष्ट करता है ॥३८॥ का हाथी और जैसा चाम का मृग होता वैसा ही विना पढ़ा मूर्ख ये तीनों नाम मात्र ही हाथी, मृग और ब्राह्मण कहाने वाले हैं

यश्चविप्रोऽनधीयानस्त्रयस्तेनामधारकाः ॥ ३९ ॥
ग्रामस्थानंयथाशून्यं यथाकूपश्चनिर्जलः ।
यश्चविप्रोऽनधीयानस्त्रयस्तेनामधारकाः ॥ ४० ॥
ब्राह्मणेषुचयद्दत्तं यच्चवैश्वानरेहुतम् ।
तद्धनंधनमाख्यातं धनंशेषंनिरर्थकम् ॥ ४१ ॥
समोहिब्राह्मणेदानं द्विगुणंब्राह्मणब्रुवे ।
सहस्रगुणमाचार्य्ये ह्यनन्तंवेदपारगे ॥ ४२ ॥
ब्रह्मबीजसमुत्पन्नो मन्त्रसंस्कारवर्जितः ।
जातिमात्रोपजीवीच सभवेद्ब्राह्मणःसमः ॥ ४३ ॥
गर्भाधानादिभिर्मन्त्रैर्वेदोपनयनेनच ।
नाध्यापयतिनाधीते सभवेद्ब्राह्मणब्रुवः ॥ ४४ ॥
अग्निहोत्रीतपस्वीच वेदमध्यापयेच्चयः ।

क हैं ॥३९॥ जैसा ग्राम का स्थान शून्य और जैसा जल से हीन कूप होता
ही विन पढ़ा मूर्ख ब्राह्मण ये तीनों नाम के ही धारण करने वाले हैं
। वास्तव में वे सच्चे ग्राम, कूप और ब्राह्मण नहीं हैं ॥ ४० ॥
जो धन ब्राह्मणों को दान दिया वा जो अग्नि में होम किया है वही
कहाता है और शेष धन इष्ट साधक न होने से व्यर्थ है ॥ ४१ ॥ सम ब्रा-
को जितना दान दिया जाय वह सम नाम उतना ही फलदायक होता है और
णब्रुव को जो दान दिया जाय उस का दूना फल; आचार्य को हजार
और वेदपारग को दिया दान अनन्त फलवाला होता है ॥ ४२ ॥ जो
ण के बीज से ब्राह्मण ब्राह्मणी माता पिता से पैदा हो और वेद मन्त्रों
मत का उपनयन जातकर्मादि संस्कार न हुआ हो अर्थात् गायत्री से भी
हो और ब्राह्मण जाति होने से ही जीविका करे वह ब्राह्मण सम कहाता
४३ ॥ जिस का गर्भाधान आदि के मन्त्रों से और वेदोक्त यज्ञोपवीत से
ार तो हुआ हो और गायत्री भी जानता हो परन्तु वेद को न पढ़े न पढ़ावे
को ब्राह्मणब्रुव कहते हैं ॥ ४४ ॥ जो अग्निहोत्री हो, तपस्वी हो, कल्प-
ङ्ग और रहस्य नाम उपनिषदों के सहित वेदों को जो विना वेतन लिये

सकलपंसरहस्यंच तमाचार्यंप्रचक्षते ॥ ४५ ॥
इष्टिभिःपशुबन्धैश्च चातुर्मास्यैस्तथैवच ।
अग्निष्टोमादिभिर्यज्ञैर्येनचेष्टंसइष्टवान् ॥ ४६ ॥
मीमांसतेचयोवेदान् षड्भिरङ्गैःसविस्तरैः ।
इतिहासपुराणानि सभवेद्वेदपारगः ॥४७ ॥
ब्राह्मणायेनजीवन्ति नान्योवर्णःकथञ्चन ।
ईदृक्पथमुपस्थाय कोऽन्यस्तंत्यक्तुमुत्सहेत् ॥ ४
ब्राह्मणःसंभवेनैव देवानामपिदैवतम् ।
प्रत्यक्षंचैवलोकस्य ब्रह्मतेजोहिकारणम् ॥ ४९ ॥
ब्राह्मणस्यमुखंक्षेत्रं निरूपरमकण्टकम् ।
वापयेत्तत्रबीजानि साकृषिःसार्वकामिकी ॥ ५० ।
सुक्षेत्रेवापयेद्बीजं सुपात्रेदापयेद्धनम् ।
सुक्षेत्रेचसुपात्रेच क्षिप्तंनैवहिदुष्यति ॥ ५१ ॥

धर्मार्थ पढ़ावे उसे आचार्य कहते हैं ॥ ४५ ॥ दर्शपौर्णमासादि [illegible]
चातुर्मास्य, और अग्निष्टोम आदि यज्ञों से जिसने देवताओं की पूजा [illegible]
इष्टवान् नाम यज्ञों का करने वाला कहते हैं ॥ ४६ ॥ अनेक ग्रन्थों [illegible]
वेद के छः अङ्ग [व्याकरण आदि] सहित चारों वेद और इतिहा[illegible]
की जो मीमांसा नाम आन्दोलन करे उसे वेदपारग कहते हैं ॥ ४[illegible]
लोग जिस वेदोक्त मार्ग-से जीविका करते हैं उस से अन्य वर्[illegible]
जीविका करते ऐसे वेदमार्ग में ठहर कर ऐसा अन्य कौन है जो [illegible]
परित्याग करे ॥४८॥ ब्राह्मण उत्पत्तिमात्र से ही देवताओं का [illegible]
और लोगों को ब्राह्मण का प्रभाव प्रत्यक्ष भी है उस का कारण [illegible]
है ॥ ४९ ॥ ऊपर और कांटों से रहित उत्तम खेत ब्राह्मण का मु[illegible]
बीज बोये क्योंकि यही खेती सब कामना देने वाली है ॥ ५० ॥ [illegible]
बीज बोये और सुपात्र को धन देवे क्यों कि अच्छे खेत और सुपा[illegible]
जब धन छोड़ा जाता है वह कभी भी दूषित या व्यर्थ नहीं [illegible]

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणेगृहमागते ।
क्रीडन्त्योषधयःसर्वा यास्यामःपरमांगतिम् ॥ ५२ ॥
नष्टशौचेव्रतभ्रष्टे विप्रेवेदविवर्जिते ।
दीयमानंरुदत्यन्नं भयाद्वैदुष्कृतंकृतम् ॥ ५३ ॥
वेदपूर्णमुखंविप्रं सुभुक्तमपिभोजयेत् ।
नचमूर्खंनिराहारं षड्रात्रमुपवासिनम् ॥ ५४ ॥
यानियस्यपवित्राणि कुक्षौतिष्ठन्तिभोद्विजाः ।।
तानितस्यप्रयोज्यानि नशरीराणिदेहिनाम् ॥ ५५ ॥
यस्यदेहेसदाश्नन्ति हव्यानित्रिदिवौकसः ।
कव्यानिचैवपितरः किंभूतमधिकंततः ॥ ५६ ॥
यद्भुङ्क्तेवेदविद्विप्रः स्वकर्मनिरतःशुचिः ।
दातुःफलमसंख्यातं प्रतिजन्मतदक्षयम् ॥ ५७ ॥

विद्या और विनय से युक्त ब्राह्मण यदि अपने घर आवे तो उस समय औषधी [अन्न आदि] क्रीड़ा करती [आनन्द मनाती] हैं कि हम परम [गति] को प्राप्त होंगी ॥ ५२ ॥ शास्त्रानुकूल शुद्धि न करके मलिन रहने [व्रत] आदि कर्म को नियम से न करने वाले तथा वेद से शून्य ब्राह्मण को दिया [हुआ] अन्न भय से रोता है कि इस दाता ने बुरा किया जो हम को ऐसे गुण [हीन] मूर्ख ब्राह्मण के उदर में पहुंचाया ॥ ५३ ॥ वेद के पठन पाठन से [पूर्ण] है मुख जिस का ऐसे भोजन से तृप्त ब्राह्मण को भी जिमावे और छः [दि]न के उपासे भी निराहार मूर्ख ब्राह्मण को न जिमावे ॥ ५४ ॥ हे ब्राह्म[णो] ! जिस मनुष्य का जो पवित्र वस्तु (अन्न आदि) जिस विद्वान् के [उद]र में ठहरे वह वस्तु ही उसको देना चाहिये अन्यथा देह धारियों का [देह] किसी प्रयोजन का नहीं है ॥ ५५ ॥ जिस ब्राह्मण के देह में देवता लोग [हव्य] और पितर लोग कव्य सदैव खाते हैं उससे परे अन्य कौन प्राणी हो [स]कता है ? अर्थात् उस से उत्तम अन्य कोई नहीं है ॥ ५६ ॥ वेद का ज्ञाता [औ]र अपने धर्म कर्म में तत्पर ब्राह्मण जो खाता है दाता को उसका फल [अ]संख्य होता और जन्म जन्म में वह अक्षय अविनाशी होता है ॥ ५७ ॥

हस्त्यश्वरथयानानिकेचिदिच्छन्तिपण्डिताः।
अहंनेच्छामिमुनयः ! कस्यैताःसस्यसम्पदः ॥ ५८

वेदलाङ्गलकृष्टेषु द्विजश्रेष्ठेषुसत्सुच।
यत्पुरापातितंबीजं तस्यैताःसस्यसम्पदः ॥ ५९ ॥

शतेषुजायतेशूरः सहस्रेषुचपण्डितः।
वक्ताशतसहस्रेषु दाताभवतिवानवा ॥ ६० ॥

नरणेविजयाच्छूरोऽध्ययनान्नचपण्डितः।
नवक्तावाक्पटुत्वेन नदाताचार्थदानतः ॥ ६१ ॥

इन्द्रियाणांजयेशूरो धर्मंचरतिपण्डितः।
हितप्रियोक्तिभिर्वक्ता दातासन्मानदानतः ॥ ६२ ॥

यद्येकपङ्क्त्यांविषमन्ददाति स्नेहाद्भयाद्वायदिवार्थहेतो

हाथी, घोड़ा, रथ यान पालकी आदि इन को कोई पण्डित चाहते हैं परन्तु हे मुनियो ! हम नहीं चाहते क्योंकि ये हाथी आदि किस की सम्पदा [फल] हैं ? ॥५८॥ वेद रूप हल से जुते जो सत्पात्र ब्राह्मणों के शरीर उन में जो पूर्व जन्म में बीज बोया गया था उसी खेती की ये घोड़ा आदि संपदा [फल] हैं ॥५९॥ सौ १०० में एक शूरवीर, हज़ार में पण्डित—और लाख में एक वक्ता [जो वेदादि शास्त्र के गूढ़ विषय को ठीक वर्णन कर सके] होता है और लाखों में भी दाता होना दुर्लभ है। रण में जीत जाने से शूर नहीं होता—वेदादि के पढ़ने मात्र से पण्डित नहीं होता—वाणी की चतुराई मात्र से लिफाफे दार बनावटी व्याख्यान वाला वक्ता नहीं होता और धन के देने मात्र से दाता नहीं होता। किन्तु इन्द्रियों को जो जीते वह शूर, शास्त्रोक्त धर्म कर्म को जो ठीक करे वह पण्डित-वेदानुकूल हित का उपदेश जो प्रिय वाणी से कहे वह वक्ता और श्रद्धा तथा सन्मान पूर्वक जो दान दे वह दाता होता है ॥ ६२ ॥ प्रीति से, भय से, वा धन आदि के लोभ से जो एक पंक्ति में बैठे ब्राह्मणों को विषम न्यूनाधिक परोसता है या किसी को उत्तम किसी को निकृष्ट भोज्य वस्तु देता है वह ब्रह्म हत्या का दोषी मुनियों ने कहा है वह

दपुङ्ष्टऋपिभिश्चगीतं तद्ब्रह्महत्यांमुनयोवदन्ति॥६३॥
परेवापितंबीजं भिन्नभाण्डेपुगोदुहम्।
तंभस्मनिहव्यंच मूर्खदानमशाश्वतम् ॥ ६४ ॥
तसूतकपुष्टाङ्गो द्विजःशूद्रान्नभोजने।
हमेवंनजानामि कांयोनिंसगमिष्यति ॥ ६५ ॥
द्रान्नेनोदरस्थेन यदिकश्चिन्म्रियेतयः।
भवेत्सूकरोनूनं तस्यवाजायतेकुले ॥ ६६ ॥
ध्रोद्वादशजन्मानि सप्तजन्मानिसूकरः।
वाचंवसप्तजन्मानि इत्येवंमनुरब्रवीत् ॥ ६७ ॥
मृतंब्राह्मणान्नेन दारिद्र्यंक्षत्रियस्यच।
श्यान्नेनतुशूद्रत्वं शूद्रान्नान्नरकंव्रजेत् ॥ ६८ ॥
श्चभुङ्क्तेऽपशूद्रान्नं मासमेकंनिरन्तरम्।
हजन्मनिशूद्रत्वं मृतःश्वाचैवजायते ॥ ६९ ॥
स्यशूद्रापचेन्नित्यं शूद्रावागृहमेधिनी।

भी देखी और ऋपियों ने भी कही है ॥ ६३ ॥ ऊरप में बोया बीज,
में दुहा दूध, भस्म में किया होम, और मूर्ख को दिया दान--ये सब
त नाम शीघ्र नष्ट होतेहैं अर्थात् निष्फलहैं ॥६४॥ मरेके सूतक में खानेसे
है शरीर जिस का ऐसा शूद्र का भोजन करने वाला ब्राह्मण किम
नि में जायगा यह हम नहीं जानते ॥ ६५ ॥ शूद्र का अन्न पेट में रहते
नय मरता है वह निश्चय से या तो शूकर योनि में जन्म लेता है
जिसका अन्न खाया है उस शूद्र के ही कुल में जन्म लेता है ॥६६॥ बारह
क गीध पक्षी, सात जन्म तक शुअर और सात जन्म तक कुत्ता
न्न भोजी ब्राह्मण होता है ऐसा मनु जी ने कहा है ॥ ६७ ॥ ब्राह्मण
से अमृत देव योनि, क्षत्रिय के अन्न से दरिद्रता, वैश्य के अन्न से शूद्र
और शूद्र के अन्न से नरक होता है ॥ ६८ ॥ जो ब्राह्मण मनुष्य एक
तक निरंतर शूद्र के अन्न को खाता है वह इसी जन्म में शूद्र हो जाता
मर कर कुत्ता की योनि में हो जाता है ॥६९॥ जिस के यहां शूद्रा स्त्री पाक

वर्जितःपितृदेवैस्तु रौरवंयातिसद्द्विजः ॥ ७० ॥
भाण्डसङ्करसङ्कीर्णा नानासंकरसंकराः ।
योनिसंकरसंकीर्णा निरयंयान्तिमानवाः ॥ ७१ ॥
पङ्क्तिभेदीवृथापाकी नित्यंब्राह्मणनिन्दकः ।
आदेशीवेदविक्रेता पञ्चैतेब्रह्मघातकाः ॥ ७२ ॥
इदंव्यासमतंनित्य मध्येतव्यंप्रयत्नतः ।
एतदुक्ताचारवतः पतनंनैवविद्यते ॥ ७३ ॥

इति श्रीवेदव्यासीयधर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः समाप्त

समाप्तं चेदं धर्मशास्त्रम् ॥

(रसोई) को बनावे, अथवा जिस की स्त्री शूद्रा हो वह ब्राह्मण पितृ देवताओं से वर्जित हुआ नरक में जाता है ॥ ७० ॥ पात्रों के संकर से जो संकीर्ण हैं चाहे जिसके पात्रसे खालें वा जल पीलें अनेक नीच वर्णों से जिन का मेल है और योनिसंकर दोष से भी जो संकीर्ण . जिसे विवाहलें वा नीच औरत को भी घरमें रखलें इतने मनुष्य नरकमें हैं ॥ ७१ ॥ पंक्ति में जो भेद करे [न्यूनाधिक परोसे] वृथा पाकी जो यज्ञ न करे, अपना उदर भरने के लिये ही अन्न पकावे, ब्राह्मणों निन्दा करे और जो आज्ञा को करे (सेवक नौकर हो) और वेद को अर्थात् द्रव्य के लोभ से पढ़ावे या जपे ये पांच ब्रह्महत्या के दोषी हैं इस व्यास जी के मत को यत्न से नित्य पढ़े इस में कहे हुए आचरणों करता है उस का पतन (नरक में जाना) नहीं हो सकता ॥ ७३ ॥

श्रीवेदव्यासीय धर्मशास्त्र का यह चौथा अध्याय समाप्त हुआ।
और यह धर्मशास्त्र भी पूरा हो गया ॥

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

थ शंखस्मृतिप्रारम्भः॥

स्वयंभुवेनमस्कृत्य सृष्टिसंहारकारिणे ।
चातुर्वर्ण्यहितार्थाय शङ्खःशास्त्रमकल्पयत् ॥ १ ॥
यजनंयाजनंदानं तथैवाध्यापनक्रिया ।
प्रतिग्रहंचाध्ययनं विप्रकर्माणिनिर्दिशेत् ॥ २ ॥
दानंचाध्ययनंचैव यजनंचयथाविधि ।
क्षत्रियस्यचवैश्यस्य कर्मेदंपरिकीर्तितम् ॥ ३ ॥
क्षत्रियस्यविशेषेण प्रजानांपरिपालनम् ।
कृषिगोरक्षवाणिज्यं विशश्चपरिकीर्तितम् ॥ ४ ॥
शूद्रस्यद्विजशुश्रुषा सर्वशिल्पानिवाप्यथ ।
क्षमासत्यंदमःशौचं सर्वेषामविशेषतः ॥ ५ ॥

सृष्टि और संहार करने वाले स्वयंभु ब्रह्मा जी को नमस्कार करके चारों के कल्याण के अर्थ शंख ऋषि ने यह धर्म शास्त्र बनाया है ॥ १ ॥ यज्ञ ा, यज्ञ कराना, दान देना, छः अङ्गों सहित वेद का पढ़ाना, प्रतिग्रह न लेना) और स्वयं साङ्ग वेद को पढ़ना ये छः कर्म ब्राह्मण के कहे हैं ॥ दान देना, वेद पढ़ना, विधिपूर्वक यज्ञ करना, ये तीन कर्म क्षत्रिय : वैश्य के लिये कहे हैं ॥ ३ ॥ विशेष कर क्षत्रिय का कर्म प्रजा की रक्षा ा है और वैश्य का विशेष कर्म खेती, गौओं की रक्षा, और लेन देन ना कहा है ॥ ४ ॥ शूद्र का कर्म ब्राह्मणादि तीनों द्विजों की सेवा और पं कारीगरी कही है । क्षमा, सत्य, दम, (मन को वश में करना) शौच, ये तें वर्णों के समान ही धर्मानुकूल कर्त्तव्य कर्म हैं ॥ ५ ॥

ब्राह्मणःक्षत्रियोवैश्यस्त्रयोवर्णाद्विजातयः ।
तेषांजन्मद्वितीयन्तु विज्ञेयंमौञ्जिबन्धनात् ॥ ६

आचार्यस्तुपिताप्रोक्तः सावित्री जननी तथा ।
ब्राह्मणक्षत्रियविशां मौञ्जीबन्धनजन्मनि ॥ ७ ॥

वृत्याशूद्रसमास्तावद्विज्ञेयास्तेविचक्षणैः ।
यावद्वेदेनजायन्ते द्विजाज्ञेयास्ततःपरम् ॥ ८ ॥

इति श्रीशाङ्खे धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १

गर्भस्यस्फुटताज्ञानं निषेकःपरिकीर्तितः ।
पुरातुस्पन्दनात्कार्यं पुंसवनंविचक्षणैः ॥ १ ॥

षष्ठेष्टमेवासीमन्तो जातेवैजातकर्मच ।
आशौचेचव्यतिक्रान्ते नामकर्मविधीयते ॥ २ ॥

नामधेयंचकर्त्तव्यं वर्णानांचसमाक्षरम् ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन वर्णों को द्विजाति कहतेहैं । उनका जन्म यज्ञोपवीत के समय से जानना चाहिये ॥ ६ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रि के यज्ञोपवीत सम्बन्धी द्वितीय जन्म में आचार्य तो पिता और माता कही है ॥ ७ ॥ जब तक वेदोक्त संस्कार से प्रकट न हों तावत् लोग वर्त्ताव से ब्राह्मणादि के बालकों को शूद्र के तुल्य जानें अर्थात् के साथ कहा व्यवहार उनके साथ न करें । और तदनन्तर उपनयन हो जाने पर उनको द्विज मानना चाहिये ॥ ८ ॥

श्री शंखस्मृति के भाषानुवाद में यह प्रथम अध्याय पूरा हुआ

गर्भ की जब प्रकटता से स्थिति प्रतीत हो उसको निषेक (या गर्भाधान) कहते हैं और विद्वान् लोग गर्भ के हिलने चलने से पुंसवन संस्कार करें ॥ १ ॥ छठे वा आठवें महीने में सीमन्त, पैदा जात कर्म, और सूतक शुद्धि होजाने पर नाम कर्म संस्कार करें ॥ २ चारों वर्णों का नाम ऐसा हो जिसके अक्षर दो या चार आदि (जैसा गङ्गाराम) और ब्राह्मण का नाम ऐसा हो जिसके उच्चारण में हो जैसे (शिवदत्त इत्यादि) क्षत्रिय का नाम ऐसा हो जिसमें ...

ाङ्गल्यंब्राह्मणस्योक्तं क्षत्रियस्यबलान्वितम् ॥ ३ ॥
ैश्यस्यधनसंयुक्तं शूद्रस्यतुजुगुप्सितम् ।
र्मान्तंब्राह्मणस्योक्तं वर्मान्तंक्षत्रियस्यतु ॥ ४ ॥
धनान्तंचैववैश्यस्य दासान्तंचान्त्यजन्मनः ।
चतुर्थेमासिकर्तव्यं बालस्यादित्यदर्शनम् ॥ ५ ॥
षष्ठेन्नप्राशनंमासि चूडाकार्यायथाकुलम् ।
गर्भाष्टमेऽब्देकर्तव्यं ब्राह्मणस्योपनायनम् ॥ ६ ॥
गर्भादेकादशेराज्ञो गर्भात्तुद्वादशेविशः ।
षोडशाब्दानिविप्रस्य राजन्यस्यद्विविंशतिः ॥ ७ ॥
विंशतिःसचतुष्कातु वैश्यस्यपरिकीर्तिता ।
नातिवर्ततसावित्रीमतऊर्ध्वंनिवर्तते ॥ ८ ॥
विज्ञातव्यास्त्रयोप्येते यथाकालमसंस्कृताः ।

जैसा अमितौजाः । अरिन्दमः । इत्यादि) ॥ ३ ॥ वैश्य का नाम ऐसा
जिसका अर्थ धन से युक्त हो (जैसा धनसुखराम । लक्ष्मीचन्द्र । इत्यादि)
का नाम ऐसा हो जिसमें निन्दा प्रतीत हो (जैसा देवदास कटजक.
क इत्यादि) ब्राह्मण के नाम के पीछे शर्म क्षत्रिय के नाम के पीछे
। ॥ ४ ॥ वैश्य के नाम के अन्त में धन वा गुप्त शब्द रहे और शूद्र के नाम
अन्त में दास हो। चौथे महीने में बालक को सूर्य का दर्शन करावे इसी
ाम निष्क्रमण संस्कार है ॥ ५ ॥ छठे महीने में अन्न प्राशन संस्कार
र और मुण्डन संस्कार कुल रीति के अनुसार जन्म से पहिले वा तीसरे
में [चाहे जब] करे। गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण का यज्ञोपवीत ॥ ६ ॥
से ग्यारहवें वर्ष क्षत्रिय का, गर्भ से बारहवें वर्ष वैश्य का, उप-
न संस्कार करें। ब्राह्मण की सोलह वर्ष तक क्षत्रिय की बाईस वर्ष
॥ ७ ॥ और वैश्य की चौबीस वर्ष तक शास्त्र में कही हुई सावित्री
मन्त्र के ग्रहण का नियत काल है। इस से आगे मन्त्राधिकार निवृत्त हो
ता है ॥ ८ ॥ अपने २ काल के अनुसार नहीं हुआ है संस्कार जिन का
। वे ब्राह्मणादि तीनों वर्ण सावित्री से पतित और सम्पूर्ण धर्मों से

सावित्रीपतिताव्रात्याः सर्वधर्मबहिष्कृताः ॥ ९ ॥
मौञ्जीज्याबन्धनानांतु क्रमान्मौञ्ज्यःप्रकीर्तिताः।
मार्गवैयाघ्रवास्तानि चर्माणिब्रह्मचारिणाम् ॥ १० ॥
पर्णपिप्पलबिल्वानां क्रमाद्दण्डाःप्रकीर्तिताः।
केशदेशललाटास्य तुल्याःप्रोक्ताःक्रमेणतु ॥ ११ ॥
अवक्रास्सत्वचस्सर्वे नाग्निदग्धास्तथैवच।
वस्त्रोपवीतेकार्पासक्षौमोर्णानांयथाक्रमम् ॥ १२ ॥
आदिमध्यावसानेषु भवच्छब्दोपलक्षितम्।
भैक्षस्याचरणंप्रोक्तं वर्णानामनुपूर्वशः ॥ १३ ॥
इति श्री शाङ्खे धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
उपनीयगुरुःशिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः।
आचारमग्निकार्यंच संध्योपासनमेवच ॥ १ ॥

हिष्कृत [अनधिकारी] व्रात्य हो जाते हैं अर्थात् शूद्र वत् हो ...
ज, मूर्वा (तृणविशेष) और शण इन की क्रम से ब्राह्मण क्षत्रिय ...
खला (कंधनी) और मृग व्याघ्र बकरा इन के चर्म तीनों ब्रह्मचा...
ते क्रम से कहे हैं ॥ १० ॥ ढांक पीपल बेल इन वृक्षों के दण्ड ...
लिये क्रम से कहे हैं। केशों तक ब्राह्मण का, माथे तक क्षत्रिय का ...
वैश्य ब्रह्मचारी का दण्ड रहे ॥ ११ ॥ वे दण्ड टेढ़े न हों तथा
हों; तथा अग्नि से जले न हों। ब्राह्मण के वस्त्र तथा यज्ञो...
त्रिय के अलसी के और वैश्य के ऊन के होने चाहिये ॥ १२ ॥
के समय ब्राह्मण ब्रह्मचारी (भवति भिक्षां देहि) ऐसा क्षत्रि...
भिक्षां भवति देहि) ऐसा कहे और वैश्य (भिक्षां देहि भवति...
है ॥ १३ ॥

शङ्ख स्मृति के भाषानुवाद में द्वितीय अध्याय पूरा हुआ।

शिष्य को यज्ञोपवीत कराकर प्रथम शौच [मल मूत्र के ...
र शुद्धि करे] आचार [धर्मानुकूल व्यवहार] अग्नि कार्य ...
न का अग्निस्थापन) और सन्ध्योपासन की शिक्षा दे ...

सगुरुर्यःक्रियाःकृत्वा वेदमस्मैप्रयच्छति ।
भृतकाध्यापकोयस्तु उपाध्यायःसउच्यते ॥ २ ॥
मातापितागुरुश्चैव पूजनीयास्सदानृणाम् ।
क्रियास्तस्याफलाः सर्वायस्यैतेनादृतास्त्रयः ॥ ३ ॥
प्रयतःकल्यउत्थाय स्नातोहुतहुताशनः ।
कुर्वीतप्रणतोभक्त्या गुरूणामभिवादनम् ॥ ४ ॥
अनुज्ञातस्तुगुरुणा ततोऽध्ययनमाचरेत् ।
कृत्वाब्रह्माञ्जलिंपश्यन् गुरोर्वदनमानतः ॥ ५ ॥
ब्रह्मावसानेप्रारम्भे प्रणवंचप्रकीर्तयेत् ।
अनध्यायेष्वध्ययनं वर्जयेच्चप्रयत्नतः ॥ ६ ॥
चतुर्दशींपञ्चदशीमष्टमींराहुसूतकम् ।
उल्कापातंमहीकम्पमाशौचंग्रामविप्लवम् ॥ ७ ॥
इन्द्रप्रयाणंश्वरुतं सर्वसंघातनिःस्वनम् ।

जो शिष्य को कर्म [जनेऊ आदि] कराकर वेद पढ़ावे उसे गुरु कहते और जो कुछ द्रव्य मासिक वेतन लेकर पढ़ावे उसे उपाध्याय कहते हैं । माता पिता और गुरु इन तीनों की मनुष्यों को सदा सेवा पूजा क-चाहिये क्योंकि जिस पुत्र वा शिष्य ने इन तीनों का आदर सत्कार किया उस के सब पुण्य कर्म निष्फल से हैं ॥३॥ प्रातःकाल सावधान हो म से उठ कर स्नान और होम करके नम्रता से गुरुओं को अभिवादन ॥ ४ ॥ फिर गुरु की आज्ञा लेकर दोनों हाथ जोड़ के और गुरु के मुख देखता हुआ नम्र होकर वेद का अध्ययन करे ॥५॥ वेद पढ़ने के प्रारम्भ और अन्त में (जब पढ़ चुके) ओंकार का उच्चारण करे । और अनध्यायों मावास्या, अष्टमी, पौर्णमासी, चतुर्दशी आदि दिनों] में कदापि वेद न पढ़े ॥ ६ ॥ चौदश, पूर्णिमा, अष्टमी, ग्रहण, उल्कापात, बिजली का त-ा, भूकम्प अशौच (जन्म मरण का सूतक) ग्राम का उपद्रव ॥ ७ ॥ प्रयाण (वर्षाकाल के इन्द्र धनुष का) दर्शन, कुत्ते का रोना, बहुतों के म-का शब्द, बाजों का कोलाहल और युद्ध इन (चौदश आदि) अन-

वाद्यकोलाहलंयुद्धमनध्यायान्विवर्जयेत् ॥ ८ ॥
नाधीयीताभियुक्तोपि यानगोनचनौगतः ।
देवायतनवल्मीकश्मशानशवसन्निधौ ॥ ९ ॥
भैक्षचर्यांतथाकुर्याद्व ब्राह्मणेपुयथाविधि ।
गुरुणाचाप्यनुज्ञातः प्राश्नीयात्प्राङ्मुखःशुचिः ॥ १० ॥
हितंप्रियंगुरोःकुर्यादहंकारविवर्जितः ।
उपास्यपश्चिमांसंध्यां पूजयित्वाहुताशनम् ॥ ११ ॥
अभिवाद्यगुरुंपश्चाद्व गुरोर्वचनकृद्भवेत् ।
गुरोःपूर्वंसमुत्तिष्ठेच्छयीतचरमंतथा ॥ १२ ॥
मधुमांसाञ्जनंश्राद्धं गीतंनृत्यंचवर्जयेत् ।
हिंसांपरापवादंच स्त्रीलीलांचविशेषतः ॥ १३ ॥
मेखलामजिनंदण्डं धारयेच्चविशेषतः ।
अधःशायीभवेन्नित्यं ब्रह्मचारीसमाहितः ॥ १४ ॥
एवंव्रतंतुकुर्वीत वेदस्वीकरणंबुधः ।

...ायों में वेद को न पढ़े ॥ ८ ॥ यान (सवारी) पर चढ़ा नाव में बैठा ...
...मन्दिर, बामी, श्मशान (मरघट) मुर्दा इन के समीप में बैठ कर ...
...ढ़े ॥ ९ ॥ ब्राह्मण ब्रह्मचारी विशेष कर गृहस्थ ब्राह्मण के घर ...
...के सहित भिक्षा मांगे। गुरु की आज्ञा लेकर पूर्व को मु...
... से भोजन करै ॥ १० ॥ अहंकार को छोड़ कर गुरु का प्रिय का...
...ारी कर्म करै और सायंकाल को संध्या और अग्नि में समिदा...
... ॥ फिर गुरु को अभिवादन करके गुरु जो आज्ञा करैं उसे क...
...पहिले उठे और पीछे सोवे ॥ १२ ॥ मधु (सहत वा मदिरा),
...ं अंजन वा सुरमा लगाना, श्राद्ध का भोजन, नाचना, गाना, ...
...राई निन्दा और विशेष कर स्त्रियों की लीला को छोड़दे।
... की मेखला, मृगछाला, दंड इन को विशेष कर नित्य धार...
...ारी सावधान रहता हुआ नियम से पृथिवी पर सोवे ॥ १४ ॥
...मय विचार शील ब्रह्मचारी इस प्रकार व्रत नियम आदि
...दाध्ययनकी समाप्ति होने पर गुरुको दक्षिणा देकर गुरुकी ...

गुरवेचधनंदत्त्वा स्नायीततदनुज्ञया ॥ १५ ॥

॥ इति श्रीशाङ्खे धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

विन्देतविधिवद्भार्यामसमानार्षगोत्रजाम् ।
मातृतःपञ्चमींचापि पितृतस्त्वथसप्तमीम् ॥ १ ॥
ब्राह्मोदैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः ।
गान्धर्वोराक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥ २ ॥
एषुधर्म्यास्तुचत्वारः पूर्वंयेपरिकीर्तिताः ।
गान्धर्वोराक्षसश्चैव क्षत्रियस्यतुशस्यते ॥ ३ ॥
संप्रार्थितःप्रयत्नेन ब्राह्मस्तुपरिकीर्तितः ।
यज्ञस्थायर्त्विजेदैव आदायार्षस्तुगोद्वयम् ॥ ४ ॥
प्रार्थितःसंप्रदानेन प्राजापत्यःप्रकीर्तितः ।
आसुरोद्रविणादानाद्ग गान्धर्वःसमयान्मिथः ॥ ५ ॥

मावर्त्तन स्नान कर के गृहस्थाश्रम को ग्रहण करे ॥ १५ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में तीसरा अध्याय पूरा हुआ॥

ो अपने गोत्र और प्रवर की न हो ऐसी स्त्री को वेदोक्त विधि से विवाहै ा जो अपनी माता के कुल में पांचवीं पीढ़ी की और पिता के कुल ातवीं पीढ़ी की हो उसे विवाहै (यह पिछला मत एकदेशी है। इसी से ते ऐसी चाल नहीं दीखती है) ॥ १ ॥ ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, र, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच ये आठ प्रकार के विवाह हैं और इन में वां पैशाच अधम नाम नीच काम है ॥ २ ॥ इनमें जो पहिले चार कहे धर्म युक्त अच्छे विवाह हैं। गान्धर्व और राक्षस ये दोनों क्षत्रिय के श्रेष्ठ हैं ॥ ३ ॥ बड़े यत्न से भली प्रकार प्रार्थना पूर्वक जो वेद विधि से ाह हो उसे ब्राह्म कहते, यज्ञ में बैठे ऋत्विज् वर को जो कन्या वेद धि से दी जाय वह विवाह दैव और वर से दो गौ वा उनका मूल्य लेकर कन्या वेद विधि से दी जाय उसे आर्ष विवाह कहते हैं ॥ ४ ॥

कन्या वाले से कन्या मांगने के लिये जहां वर प्रार्थना करे उस वेदोक्त धिसे हुए विवाह को प्राजापत्य, द्रव्यलेकर जो विवाह हो उसे आसुर; कन्या र वर की परस्पर इच्छामात्र से जो विवाह हो उसे गांधर्व कहते हैं ॥५॥

राक्षसोयुद्धहरणात्पैशाचःकन्यकाछलात् ।
तिस्रस्तुभार्याविप्रस्य द्वेभार्येक्षत्रियस्यतु ॥ ६ ॥
एकैवभार्यावैश्यस्य तथाशूद्रस्यकीर्तिता ।
ब्राह्मणीक्षत्रियावैश्या विप्रभार्याःप्रकीर्तिताः॥ ७ ॥
क्षत्रियाचैववैश्याच क्षत्रियस्यविधीयते ।
वैश्याचभार्यावैश्यस्य शूद्राशूद्रस्यकीर्तिता ॥ ८ ॥
आपद्यपिनकर्त्तव्या शूद्राभार्याद्विजन्मना ।
तस्यांतस्यप्रसूतस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥ ९ ॥
तपस्वीयज्ञशीलस्तु सर्वधर्मभृतांवरः ।
ध्रुवंशूद्रत्वमायाति शूद्रश्राद्धेत्रयोदशे ॥ १० ॥
नीयतेतुसपिण्डत्वं येषांशूद्रःकुलोद्भवः ।
सर्वेशूद्रत्वमायान्ति यदिस्वर्गजितश्चते ॥ ११ ॥
सपिण्डीकरणंकार्यं कुलजस्यतथाध्रुवम् ।

युद्ध करके जो कन्या हरी जाय उसे राक्षस और छल से कन्या लेली जाय उसे पैशाच विवाह कहते हैं। ब्राह्मण के तीन और क्षत्रिय के दो स्त्री हो सकती हैं ॥ ६ ॥ वैश्य और शूद्र के एक २ ही हो सकती है, ब्राह्मणी, क्षत्रिया; और वैश्या ये तीन ब्राह्मण की भार्या हैं ॥ ७ ॥ क्षत्रिया और वैश्या क्षत्रिय की भार्या * और वैश्य की वैश्या शूद्र की शूद्रा ही भार्या होती हैं ॥ ८ ॥ आपत्काल में भी ब्राह्मणादि द्विज शूद्रा के साथ विवाह न करें क्योंकि शूद्रा में पैदा हुए द्विज का कोई प्रायश्चित्त नहीं है किन्तु वह पतित ही हो जाता है ॥ ९ ॥ कोई ही तपस्वी, यज्ञशील, और सब धर्मात्माओं में श्रेष्ठ भी ब्राह्मण शूद्र के दशाह (तेरहवीं) श्राद्ध में जीमने से निश्चय कर शूद्रत्व को प्राप्त हो जाता है ॥ १० ॥ द्विजों के कुल में पैदा हुआ शूद्र जिन द्विजों की सपिण्डी करे चाहे वे स्वर्ग के भी जीतने वाले हों तो भी वे सब शूद्र हो जाते हैं। तिस से कुल में उत्पन्न हुए का बारहवें दिन का श्राद्ध करके ...

* अपने २ वर्ण का एक २ स्त्री से विवाह करना धर्मशास्त्रानुकूल उत्तम पक्ष है। ... वर्ण की एक से अधिक स्त्रियों के साथ विवाह करना कामी लोगों को व्यभिचार से बचाने के लिये ...

श्राद्धद्वादशकंकृत्वा श्राद्धेप्राप्तेत्रयोदशे ॥ १२ ॥
सपिण्डीकरणेचार्हन्नचशूद्रःकथञ्चन ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन शूद्रांभार्यांविवर्जयेत् ॥ १३ ॥
पाणिर्ग्राह्यस्सवर्णासु गृण्हीयात्क्षत्रियाशरम् ।
वैश्याप्रतोदमादद्याद्वेदेनत्वग्रजन्मनः ॥ १४ ॥
साभार्यायागृहेदक्षा साभार्यायापतिव्रता ।
साभार्यायापतिप्राणा साभार्यायाप्रजावती ॥ १५ ॥
लालनीयासदाभार्या ताड़नीयातथैवच ।
ताड़ितालालिताचैव स्त्रीश्रीर्भवतिनान्यथा ॥ १६ ॥

इतिशांखेधर्मशास्त्रेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चसूनागृहस्थस्य चुल्लीपेषण्युपस्करः ।
कण्डनीचोदकुम्भश्च तस्यपापस्यशान्तये ॥ १ ॥
पञ्चयज्ञविधानन्तु गृहीनित्यंनहापयेत् ।

के दिन अवश्य सपिण्डीकरण करे ॥ १२ ॥ द्विज कुल में पैदा हुआ दापि सपिण्डी करने योग्य नहीं है, तिस से संपूर्ण यत्न से शूद्रा स्त्री ापि विवाह न करे ॥१३॥ ब्राह्मण के साथ ब्राह्मणी के विवाह में ब्रा- का हाथ, क्षत्रिया बाण को, वैश्या प्रतोद (पैना) को ग्रहण करे ॥१४॥ र के कामों में चतुर हो, जो पतिव्रता हो, या जिस के प्राणपति बते हों, और जो पुत्रादि सन्तानों वाली हो, वही उत्तम भार्या है ॥१५॥ की सदैव लालना (लाड़) करे और अनुचित पर ताड़ना भी करे क लालना और ताड़ने से ही यह स्त्री लक्ष्मी होती है अन्यथा नहीं ॥१६॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में चौथा अध्याय पूरा हुआ ॥ ४ ॥

गृहस्थ पुरुष को ये पांच प्रकार की हत्या नाम दोष प्रति दिन लगता । चूल्ही, चक्की, मार्जनी, (बुहारी) कण्डनी (ओखली) और जल का वध हत्यारूप पाप की शान्ति के लिये ॥१॥ गृहस्थ पुरुष पांच महायज्ञों तिदिन न त्यागे, क्योंकि पांच महायज्ञों के करने से गृहस्थ का इन

यजेतपशुबन्धैश्च चातुर्मास्यैस्तथैवच।
त्रैवर्षिकाधिकान्नस्तु पिबेत्सोममतन्द्रितः॥१६॥
इष्टिंवैश्वानरींकुर्यात्तथाचाल्पधनोद्विजः।
नभिक्षेतधनंशूद्रात्सर्वंदद्याच्चभिक्षितम्॥१७॥
वृतन्तुनत्यजेद्विद्वानृत्विजंपूर्वमेवच।
कर्मणाजन्मनाशुद्धं विद्ययाचवृणीततम्॥१८॥
एतैरेवगुणैर्युक्तं धर्मार्जितधनंतथा।
याजयीतसदाविप्रो ग्राह्यस्तस्मात्प्रतिग्रहः॥१९॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः॥५॥
गृहस्थस्तुयदापश्येद्वलीपलितमात्मनः।
अपत्यस्यैवचापत्यं तदारण्यंसमाश्रयेत्॥१॥
पुत्रेषुदारान्निक्षिप्य तयावानुगतोवनम्।
अग्नीनुपचरेन्नित्यं वन्यमाहारमाहरेत्॥२॥

पशुबन्ध यज्ञों और चातुर्मास्य यज्ञों के वैश्वदेवादि चारों पर्वों द्वारा
की पूजा करे और तीन वर्ष के निर्वाह से अधिक अन्न का सङ्ग्र
वाला पुरुष हो तो आलस्य छोड़ कर सोम अर्थात् अग्निष्टोम यज्ञ करे।
यदि थोड़े धन वाला ब्राह्मण होतो वैश्वानरी इष्टि कल्प शास्त्र में
सार करे और यज्ञ के लिये शूद्र से धन न मांगे और द्विजों से मांगा
सब धन यज्ञके अन्तमें दान करदेवे॥१७॥ विद्वान् मनुष्य विधिसे वरण
किये ऋत्विज का त्याग न करे। जन्म तथा कर्म से शुद्ध हो तथा
पूर्ण हो उसी ऋत्विज् का वर्ण करे॥ १८॥ इन्हीं पूर्व गुणों से यु
तथा धर्मानुकूल उपाय से जिस ने धन का संचय किया हो उसी को
ब्राह्मण सदैव यज्ञ करावै और उसी से प्रतिग्रह-दान लेवे॥१९॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूरा हुआ॥

गृहस्थ पुरुष जब अपने देह में वली (त्वचा की झुर्रियां)
(बालों का सफेद होते) देखे और पुत्र के पुत्र वा कन्या हो जाय
वन में चला जावे अर्थात् वानप्रस्थ आश्रम को ग्रहण करे॥१॥
समीप अपनी स्त्री को सौंप कर अथवा स्त्री को भी संग लेकर
श्रौतस्मार्त्त अग्नियों की सेवा करे अर्थात् वन में भी विधिपूर्वक
क्रियाकरे और जो वनमें पैदाहों उन कन्द मूल आदिका ही भोजन

दाहारोभवेत्तेन पूजयेत्पितृदेवताः ।
नित्यपूजयेन्नित्यमतिथिंसमुपागतम् ॥ ३ ॥
ग्रामादाहृत्यवाश्नीयादष्टौग्रासान्समाहितः ।
स्वाध्यायंचतथाकुर्याज्जटाश्चबिभृयात्तथा ॥ ४ ॥
तपसाशोपयेन्नित्यं स्वयंचैवकलेवरम् ।
आर्द्रवासास्तुहेमन्ते ग्रीष्मेपञ्चतपास्तथा ॥ ५ ॥
प्रावृष्याकाशशायीच नक्ताशीचसदाभवेत् ।
चतुर्थकालिकोवास्यात् षष्ठकालिकएववा ॥ ६ ॥
कृच्छ्रैर्वापिनयेत्कालं ब्रह्मचर्यञ्चपालयेत् ।
एवंनीत्वावनेकालं द्विजोब्रह्माश्रमीभवेत् ॥ ७ ॥

इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

कृत्वेष्टिंविधिवत्पश्चात् सर्ववेदसदक्षिणाम् ।

फल मूल आदि अपना भोजन हो उसी से पितर, देवता, और आये हुये अतिथि का नित्य पूजन करे ॥ ३ ॥ अथवा सावधान रहता हुआ ग्रामस्थ वानप्रस्थों के घरों से लाकर आठ ग्रास भोजन प्रतिदिन एकवार खाया करे। वेदको नित्य पढ़े और शिर पर जटाओं को रखा लेवे ॥ ४ ॥ तप से अपने शरीर को सुखा देवे, शीत काल में आर्द्र (गीले) वस्त्र पहिने और ग्रीष्म (गरमी) में पञ्चाग्नि को तपै अर्थात् चारों दिशा में अग्नि सिलगावे बीच में आसन लगा कर बैठे ऊपर से सूर्य का घाम होवे ॥५॥ वर्षा में आकाश खुले (मैदान) में लेटे और सदैव रात्रि में ही भोजन करे अथवा चौथे काल में वा छठे काल में एक वार भोजन करे ॥६॥ अथवा कृच्छ्र व्रत के नियम से ही अपने काल को बितावे और ब्रह्मचर्य का पालन करे इस प्रकार ब्राह्मण अपने वानप्रस्थ आश्रम को बिताकर संन्यास आश्रम का ग्रहण करे ॥ ७ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥

वानप्रस्थ का नियम पूरा होने पश्चात् सर्ववेदस नाम अपना सब पदार्थ जिस में दक्षिणा देदिया जाय ऐसी प्राजापत्या इष्टि करके और अपने आत्मा में ही अग्नियों का विधिपूर्वक समारोप करके संन्यास आश्रम को

आत्मन्यग्नीन्समारोप्य द्विजोब्रह्माश्रमीभवेत् ॥
विधूमेन्यस्तमुसले व्यङ्गारेभुक्तवज्जने ।
अतीतेपात्रसम्पाते नित्यंभिक्षांयतिश्चरेत् ॥ २ ॥
सप्तगारांश्चरेद्भैक्षं भिक्षितंनानुभिक्षयेत् ।
नव्यथेच्चतथाऽलाभे यथालब्धेनवर्तयेत् ॥ ३ ॥
नास्वादयेत्तथैवान्नं नाश्नीयात्कस्यचिद्गृहे ।
मृन्मयालावुपात्राणि यतीनांचविनिर्दिशेत् ॥ ४
तेषांसंमार्जनाच्छुद्धिरद्भिश्चैवप्रकीर्तिता ।
कौपीनाच्छादनंवासो बिभृयादव्यथश्चरन् ॥५॥
शून्यागारनिकेतःस्याद्यत्रसायंगृहोमुनिः ॥६॥
दृष्टिपूतंन्यसेत्पादं वस्त्रपूतंजलंपिबेत् ।
सत्यपूतांवदेद्वाचं मनःपूतंसमाचरेत् ॥७॥
चन्दनेनतुलिप्ताङ्गं वास्यैवंचैवतक्षतः ।

ग्रहण करे ॥ १ ॥ जब ग्राम में धूम उठना बन्द हो जाय, ऊखली निकास कर मूसल भी जहां के तहां रख दिये हों, मनुष्यों ने लिये हों, रसोई वा जल के पात्रों का इधर-उधर लेजाना भी हो, तब संन्यासी भिक्षा के लिये नित्य गाम में जावे ॥२॥ सात घरों मांगे, जिस के घर में भिक्षा मांग चुका हो फिर वहां से भिक्षा न मां के न मिलने से दुःखी न हो और जितना मिले उतने से ही मान कर निर्वाह करे ॥ ३ ॥ अन्न को स्वाद ले २ कर न खावे, किसी निमन्त्रित हो भोजन न करे और मिट्टी अथवा तुम्बी के पात्र लिये शास्त्र में कहेहैं उन्हीं पात्रों से जलपानादि काम करे ॥४॥ और की शुद्धि केवल जल से धोने से हो जाती है और सुख दुःख न मान सीन दशा में विचरता हुआ संन्यासी कौपीन और गुदड़ी दो ही को धारण करे ॥ ५ ॥ जिस में अन्य कोई न रहता हो ऐसे शून्य घर को रहे । जहां सायंकाल हो जाय वहीं ठहर जावे, मौन रहे ॥ ६ ॥ देखकर मार्ग में पग रक्खै, वस्त्र से छानकर जल पीवै, सत्य वाणी बो शुद्ध मन से विचरा करे ॥ ७ ॥ कोई पुरुष संन्यासी के किसी अंग में लगाता हो, या किसी अङ्ग को कोई काटता हो तो उन दोनों का

कल्याणंचाप्यकल्याणं तयोरेवनचिन्तयेत् ॥८॥
सर्वभूतसमोमैत्रः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
ध्यानयोगरतोभिक्षुः प्राप्नोतिपरमाङ्गतिम् ॥९॥
जन्मनायस्तुनिर्मुक्तो मरणेनतथैवच ।
आधिभिर्व्याधिभिश्चैव तंदेवाब्राह्मणंविदुः ॥१०॥
अशुचित्वंशरीरस्य प्रियाप्रियविपर्ययः ।
गर्भवासेचवसतिस्तस्मान्मुच्येतनान्यथा ॥११॥
जगदेतन्निराक्रन्दं नतुसारमनर्थकम् ।
भोक्तव्यमितिनिर्दिष्टो मुच्यतेनात्रसंशयः ॥१२॥
प्राणायामैर्दहेद्दोषान् धारणाभिश्चकिल्बिषम् ।
प्रत्याहारेणसंसर्गान्ध्यानेनानीश्वरान्गुणान् ॥१३॥
सव्याहृतिंसप्रणवां गायत्रींशिरसासह ।
त्रिःपठेदायतप्राणः प्राणायामःसउच्यते ॥१४॥

चिन्तन न करे ॥ ८ ॥ सब प्राणियों पर सम दृष्टि रक्खे, सब को मित्र ...ट्टी का ढेला, पत्थर, सोना, इनको एकसा समझे । ध्यान और योगा... में तत्पर रहे ऐसा जो भिक्षु संन्यासी है वह परमगति को प्राप्त हो ...ता है ॥ ९ ॥ जीवते ही जो जन्म मरण के बन्धनों से मुक्त है, मन की ...और देह के रोग भी जिस को नहीं सताते, देवता लोग उसी को ब्रा... कहते हैं ॥ १० ॥ शरीर का अशुद्ध होना, प्रिय के स्थान में अप्रिय और ... के स्थान में प्रिय हो, मलिन स्थान गर्भ में वास होना, इन सब से संन्या... लेना नहीं छूट सकता ॥११॥ यह जगत् बड़ा दारुण है, इसमें कुछ सार ...और अनर्थ रूप है । इसमें कर्मफल भोगना अवश्य है, इस बुद्धि से जो दुःख ... है, वह मुक्त होता है इस में संदेह नहीं है ॥ १२ ॥ प्राणायामों द्वारा ...यों के दोषोंको, और धारणाओं से शरीरकादि पापोंको भस्म करे । प्रत्या... संगों को और ध्यान द्वारा ईश्वर विरोधी नास्तिकता आदि को नष्ट ...३॥ प्राणोंको रोककर सात व्याहृति, ओंकार, और (आपोज्योती०) इस ...न्त्र सहित गायत्री के तीन बार पढ़ने को प्राणायाम कहते हैं ॥१४॥

मनसःसंयमस्तज्ज्ञैर्धारणेतिनिगद्यते ।
संहारश्चेन्द्रियाणांच प्रत्याहारःप्रकीर्तितः ॥१५॥
हृदिस्थध्यानयोगेन देवदेवस्यदर्शनम् ।
ध्यानंप्रोक्तंप्रवक्ष्यामि ध्यानयोगमतःपरम् ॥१६॥
हृदिस्थादेवतास्सर्वा हृदिप्राणाःप्रतिष्ठिताः ।
हृदिज्योतींषिसूर्यश्च हृदिसर्वंप्रतिष्ठितम् ॥१७॥
स्वदेहमरणिंकृत्वा प्रणवंचोत्तरारणिम् ।
ध्याननिर्मथनाभ्यासाद्विष्णुंपश्येद्धृदिस्थितम्
हृद्यर्कश्चन्द्रमासूर्यः सोमोमध्येहुताशनः ।
तेजोमध्येस्थितंसत्त्वं सत्त्वमध्येस्थितोऽच्युतः ॥

[illegible]

तेजोमयंपश्यतिवीतशोको [illegible] हिमः
वासुदेवस्तमोऽन्धानां प्रत्यक्षोनैवजायते ।
अज्ञानपटसंवीतैरिन्द्रियैर्विषयेप्सुभिः ॥२१॥
एषवैपुरुषोविष्णुर्व्यक्ताव्यक्तःसनातनः ।

संयमके जानने वाले मन के रोकने को धारणा कहते हैं, विषयों के हटाने को प्रत्याहार कहते हैं ॥ १५ ॥ हृदय में ध्यान के योग साक्षात् करने को ध्यान कहते हैं । इससे आगे ध्यानयोग को कह सब देवता, प्राण, तारागण, और सूर्य ये सब अध्यात्म रूप से हृ स्थित हैं ॥१७॥ अपने शरीर को नीचे की अधरारणी और ओंका की अरणी मानके ध्यान के निरन्तर मन्थनरूप अभ्याससे हृदयमें स्थि भगवान् के दिव्य रूप को देखे ॥१८॥ सूर्य, चन्द्रमा, फिर सूर्य, चन्द्रमा चारों के बीच में अग्नि हृदय में रहतेहैं । तेज के मध्य में सत्व गुण सत्वगुण में अच्युत (विष्णु) स्थित हैं ॥१९॥ छोटे से भी छोटा वहां बे आत्मा इस मनुष्य के हृदय में ठहरा हुआ है, नष्ट हो गया है शोक ऐसा पुरुष तेजोरूप आत्मा की महिमा को विधाता की दयासे देखता अज्ञानान्धकार से अन्धे हुए मनुष्यों को वासुदेव भगवान् प्रत्य होते, क्योंकि उन के विषय भोगों के लालची इन्द्रिय अज्ञानरूपी ढंपे हैं ॥ २१ ॥ यह पुरुष [हृदय में सोने वाला] विष्णु (व्यक्त

पधाताविधाताच पुराणोनिष्कलःशिवः ॥२२॥
दाहमेतंपुरुषंमहान्तमादित्यवर्णंतमसःपरस्तात् ।
येविदित्वानबिभेतिमृत्योर्नान्यःपन्थाविद्यतेऽनाय २३
पृथिव्यापस्तथातेजो वायुराकाशमेवच ।
पञ्चैतानिविजानीयान्महाभूतानिपण्डितः ॥२४॥
चक्षुःश्रोत्रंस्पर्शनंच रसनंघ्राणमेवच ।
बुद्धीन्द्रियाणिजानीयात्पञ्चैमानिशरीरके ॥२५॥
रूपंशब्दस्तथास्पर्शो रसोगन्धस्तथैवच ।
इन्द्रियार्थान्विजानीयात्पञ्चैवसततंबुधः ॥ २६ ॥
हस्तौपादावुपस्थंच जिह्वापायुस्तथैवच ।
कर्मेन्द्रियाणिपञ्चैव नित्यमस्मिञ्शरीरके ॥ २७ ॥
मनोबुद्धिस्तथैवात्मा ह्यव्यक्तंचतथैवच ।
इन्द्रियेभ्यःपराणीह चत्वारिकथितानिच ॥ २८ ॥
चतुर्विंशत्यथैतानि तत्त्वानिकथितानिच ।

अप्रकट सगुण तथा निर्गुणरूपों से नित्य है । यही धाता, विधाता, न, कलाहीन और कल्याण स्वरूप है ॥ २२ ॥ इस को मैं महान् सूर्य के तेज वाला और तमोगुण से परे जानता हूं कि जिस को जान कर मृत्यु से नहीं डरता और इस से भिन्न मोक्ष के लिये कोई मार्ग नहीं ३ ॥ पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, इन पांच को पण्डित लोग महा ानें ॥२४॥ १-नेत्र, २-कान, ३-त्वचा, ४-रसना, (जिह्वा के अग्र भाग में इन्द्रिय) ५-घ्राण (नाक के अग्र भाग में रहता है) इन पांचो को ारीर में ज्ञान इन्द्रिय जानना चाहिये ॥ २५ ॥ रूप, शब्द, स्पर्श, रस, न पांचों को उक्त इन्द्रियों के पांच विषय पण्डित लोग निरन्तर जानें ॥ हाथ, पांव, उपस्थ, जिह्वा, और गुदा ये पांच इस [illegible] नित्य ; कर्मेन्द्रिय कहाते हैं ॥ २८ ॥ मन, बुद्धि, आत्मा, न) ये चार तत्त्व इन्द्रियों [illegible]
ौबिस चौबीस तत्त्व

तथात्मानंतद्व्यतीतं पुरुषंपञ्चविंशकम् ॥ २९ ॥
यन्तुज्ञात्वाविमुच्यन्ते येजनाःसाधुवृत्तयः।
तदिदंपरमंगुह्यमेतदक्षरमुत्तमम् ॥ ३० ॥
अशब्दरसमस्पर्शमरूपंगन्धवर्जितम्।
निर्दुःखमसुखंशुद्धं तद्विष्णोःपरमंपदम् ॥ ३१ ॥
अजंनिरञ्जनंशान्तमव्यक्तन्ध्रुवमक्षरम।
अनादिनिधनंब्रह्म तद्विष्णोःपरमंपदम् ॥ ३२ ॥
विज्ञानसारथिर्यस्तु मनःप्रग्रहवन्धनः।
सोऽध्वनःपारमाप्नोति तद्विष्णोःपरमंपदम् ॥ ३३ ॥
वालाग्रशतशोभागः कल्पितस्तुसहस्रधा।
तस्यापिशतमाद्भागाज्जीवःसूक्ष्मउदाहृतः ॥ ३४ ॥
इन्द्रियेभ्यःपराह्यर्था अर्थेभ्यश्चपरम्मनः।
मनसस्तुपराबुद्धिर्बुद्धेरात्मातथापरः ॥ ३५ ॥
महतःपरमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषःपरः।

पचीसवां उक्त चौवीस तत्त्वों से परे है ॥ २९ ॥ जो मनुष्य साधु आच स्वभाव के हैं वे जिस को जान कर मुक्त होते हैं। सो यह ब्रह्म परम गुप्त अविनाशी और सर्वोत्तम है ॥ ३० ॥ उस आत्मा में शब्द नहीं, रस, स्पर्श नहीं, रूप नहीं, गन्ध नहीं है जिसमें, न दुःख है न सुख है वही व्यापक परमात्मा का शुद्ध परम पद है ॥३१॥ जो जन्म और कर्मों की वास से शून्य, शान्त, अप्रत्यक्ष, नित्य, अविनाशी है, जिसके आदि और अन्त नहीं हैं और जो ब्रह्मरूप है वही विष्णु भगवान् का परमपद है ॥३२॥ जिस का विज्ञान ही सारथि है और प्रग्रह (लगाम की रस्सी) से जिस का मन बं है वही संसार मार्ग के परले छोर पर वर्त्तमान उस विष्णु भगवान् के पद को प्राप्त होता है ॥ ३३ ॥ बाल (केश) के अग्रभाग के एक हजार टुकड़े किये जायं उन में से एक टुकड़े का जो सौवां भाग उससे भी सूक्ष्म (छोटा) जीव कहा है ॥ ३४ ॥ इन्द्रियों से परे नाम सूक्ष्म कारण रूप अर्थ (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध नामक विषय) हैं अर्थोंसे परे सूक्ष्म कारण मन, मनसे परे बुद्धि, बुद्धिसे परे सूक्ष्म कारण (महत्तत्व) वा जीव पदवाच्य आत्मा है ॥ ३५ ॥ महत्तत्त्व से परे सूक्ष्म कारण अव्यक्त नाम प्रधान व प्रकृति है, अव्यक्त से पर,

पुरुषान्नपरंकिञ्चित् साकाष्ठासापरागतिः ॥ ३६ ॥
एषसर्वेषुभूतेषु तिष्ठत्यविकलःसदा ।
दृश्यतेत्वग्र्ययाबुद्ध्या सूक्ष्मयासूक्ष्मदर्शिभिः ॥ ३७ ॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥
नित्यंनैमित्तिकंकाम्यं क्रियाङ्गंमलकर्षणम् ।
क्रियास्नानं तथाषष्ठं षोढास्नानंप्रकीर्त्तितम् ॥ १ ॥
अस्नातःपुरुषोऽनर्हो जप्याग्निहवनादिषु ।
प्रातःस्नानंतदर्थंच नित्यस्नानंप्रकीर्त्तितम् ॥ २ ॥
चण्डालशवपूयाद्यं स्पृष्ट्वास्नानंरजस्वलाम् ।
स्नानाऽनर्हस्तुयःस्नाति स्नानंनैमित्तिकंचतत् ॥ ३ ॥
पुष्यस्नानादिकंस्नानं दैवज्ञविधिचोदितम् ।
तद्धिकाम्यंसमुद्दिष्टं नाकामस्तत्प्रयोजयेत् ॥ ४ ॥
जप्तुकामःपवित्राणि अर्चिष्यन्देवतापितॄन् ।

है। और पुरुष नाम (ब्रह्म) से परे सूक्ष्म कारण और कुछ नहीं है किन्तु स्थिरता की अन्तिम सीमा और वही परम गति है ॥ ३६ ॥ वह परमा इन सब चराचर भूतों में सदैव अविकल एकसा कपड़ों में कपास के समान ठहरा हुआ है। सूक्ष्म बुद्धि वाले मनुष्य, नवीन सूक्ष्म बुद्धि से ब्रह्म को देखते हैं ॥ ३७ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में सातवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ७ ॥

नित्य, नैमित्तिक, काम्य, क्रियांग, मलकर्षण, क्रियास्नान, यह छः प्रकार स्नान कहाता है ॥ १ ॥ विना स्नान किये मनुष्य जप सन्ध्या तथा अग्नि- आदि के करने में अयोग्य होता है इसलिये सदा प्रातःकाल का स्नान नित्य स्नान कहाता है ॥ २ ॥ चांडाल, [भंगी) शव, [मुर्दा) पूय, राध-पीव, और रजस्वला स्त्री इनको स्पर्श (छू) कर स्नान के पीछेभी जो स्नान करे वह स्नान नैमित्तिक कहाता है ॥३॥ पुष्य नक्षत्र आदिके समयमें जो ज्योतिष शास्त्र कहा स्नान है वह काम्य है और निष्काम मनुष्य उस काम्य स्नान को कदापि न करे ॥ ४ ॥ पवित्र मन्त्रों के जपनेके लिये अथवा देवता और पितरों के

स्नानंसमाचरेद्यस्तु क्रियाङ्गंतत्प्रकीर्त्तितम् ॥५॥
मलापकर्षणार्थाय स्नानमभ्यङ्गपूर्वकम् ।
मलापकर्षणार्थाय प्रवृत्तिस्तस्यनान्यथा ॥६॥
सरित्सुदेवखातेषु तीर्थेषुचनदीषुच ।
क्रियास्नानंसमुद्दिष्टं स्नानंतत्रमहाक्रिया ॥७॥
तत्रकाम्यंतुकर्तव्यं यथावद्विधिचोदितम् ।
नित्यंनैमित्तिकंचैव क्रियाङ्गंमलकर्षणम् ॥८॥
तीर्थाभावेतुकर्तव्यमुष्णोदकपरोदकैः ।
स्नानंतुवन्हिपप्तेन तथैवपरवारिणा ॥९॥
शरीरशुद्धिर्विज्ञेया नतुस्नानफलंभवेत् ।
अद्भिर्गात्राणिशुद्ध्यन्ति तीर्थस्नानात्फलंभवेत्॥
सरःसुदेवखातेषु तीर्थेषुचनदीषुच ।
स्नानमेवक्रियातस्मात्स्नानात्पुण्यफलंस्मृतम् ॥११॥

पूजने के अर्थ जो मनुष्य स्नान करे उस स्नान को क्रियांग कहते॥ मेल के दूर करने के लिये उबटना वा तैल मर्दन पूर्वक जो स्नान है कर्षण स्नान कहते हैं क्योंकि उस स्नान करने में मनुष्य की प्रवृत्ति करने के लिये है अन्यथा नहीं है ॥ ६ ॥ नदी, देवताओं के खोदे कुएं और छोटी २ नदी, इन में किया स्नान क्रिया स्नान कहलता है क्यों में स्नान करना उत्तम कर्म है ॥ ७ ॥ उन में पूर्वोक्त नदी आदि में ही स्नान यथोचित विधि से करना चाहिये । नित्य,नैमित्तिक, क्रियांग, मल कर्षण ये चार प्रकार के स्नान ॥ ८ ॥ नदी घाट आदि के अभाव में से अथवा नदी आदि से भिन्न किसीप्रकार के जल से भी कर लेवे। से तपाये तथा अन्य मनुष्य के निकासे जल से जो स्नान करना है उस शरीर की शुद्धि मात्र जानो किन्तु स्नान का विशेष फल वहां नहीं है। क्योंकि जलों से केवल गात्र शुद्ध होते हैं और तीर्थ स्नान से विशे मिलता है ॥ १० ॥ सरोवर, देवताओं के खोदे तालाब, तीर्थ, नदी, स्नान करना ही उत्तम कर्म है इस कारण स्नान करने से पुण्य फल है

तीर्थंप्राप्यानुपङ्गेण स्नानंतीर्थेसमाचरेत् ।
स्नानजंफलमाप्नोति तीर्थयात्राफलंनतु ॥ १२ ॥
सर्वतीर्थानिपुण्यानि पापघ्नानिसदानृणाम् ।
परस्पराऽनपेक्षाणि कथितानिमनीषिभिः ॥ १३ ॥
र्वेप्रस्रवणाःपुण्याः सरांसिचशिलोच्चयाः ।
द्यःपुण्यास्तथासर्वा जाह्नवीतुविशेषतः ॥ १४ ॥
स्यपादौचहस्तौच मनश्चैवसुसंयतम् ।
द्यातपश्चकीर्त्तिश्च सतीर्थफलमश्नुते ॥ १५ ॥
णांपापकृतांतीर्थे पापस्यशमनंभवेत् ।
यथोक्तफलदंतीर्थं भवेच्छुद्धात्मनांनृणाम् ॥ १६ ॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥
क्रियास्नानंतुवक्ष्यामि यथावद्विधिपूर्वकम् ।
मृद्भिरद्भिश्चकर्त्तव्यं शौचमादौयथाविधि ॥ १ ॥
जलेनिमग्नउन्मज्य उपस्पृश्ययथाविधि ।

सात् अन्य कार्य वश तीर्थ में जाकर जो स्नान करे वह स्नान के को तो प्राप्त होगा, पर तीर्थयात्रा का फल उस को नहीं मिलेगा ॥१२॥ तीर्थ पवित्र, सदैव मनुष्यों के पापनाशक और परस्पर एक दूसरे की शा न रखने वाले महात्माओं ने कहे हैं ॥ १३ ॥ झरने, सरोवर, पर्वत, ा, ये सब पुण्यदायक हैं और विशेष कर गंगा जी पवित्र है ॥ १४ ॥ जिस ग, हाथ और मन, ये वशीभूत हैं जो विद्या, तप और कीर्ति वाला है े तीर्थ के फल को भोगता है ॥ १५ ॥ पापी मनुष्यों के पाप की हानि ाश) तीर्थ में हो जाती है । और शुद्ध है मन जिन का ऐसे मनुष्यों को र्थ यथोक्त फल का देने वाला होता है ॥ १६ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में आठवां अध्याय पूरा हुआ ॥

अब क्रियास्नान को यथावत् विधिपूर्वक कहते हैं । प्रथम मट्टी और ल से विधिपूर्वक शरीर की शुद्धि करे ॥ १ ॥ जल में गोता लगा कर और हर निकल कर विधिपूर्वक आचमन करके जल का आवाहन करे । इसको

जलस्यावाहनंकुर्यात्तत्प्रवक्ष्याम्यतःपरम् ॥ २ ॥
प्रपद्येवरुणंदेवमम्भसांपतिमूर्जितम् ।
याचितंदेहिमेतीर्थं सर्वपापापनुत्तये ॥ ३ ॥
तीर्थमावाहयिष्यामि सर्वाघविनिषूदनम् ।
सान्निध्यमस्मिन्सत्तोये भजत्वंमदनुग्रहात् ॥
रुद्रान्प्रपद्येवरदान्सर्वानप्सुसदस्तथा ।
सर्वानप्सुसदश्चैव प्रपद्येप्रणतःस्थितः ॥ ५ ॥
देवमप्सुसदंवन्हिं प्रपद्येऽघनिषूदनम् ।
आपःपुण्याःपवित्राश्च प्रपद्येशरणंतथा ॥ ६ ॥
रुद्राश्चाग्निश्चसर्पाश्च वरुणश्चापएवच ।
शमयन्त्वाशुमेपापं मांरक्षन्तुचसर्वशः ॥ ७ ॥
इत्येवमुक्त्वाकर्त्तव्यं ततःसम्मार्जनंजले ।
आपोहिष्ठेतितिसृभिर्यथावदनुपूर्वशः ॥ ८ ॥
हिरण्यवर्णेतिवदेदग्निश्चतिसृभिस्तथा ।

पूर्णरूप से कहते हैं कि ॥ २ ॥ बड़े और जलों के पति वरुण देव
रण होता हूं । हे वरुणदेव ! जिस तीर्थ को मैं चाहूं सम्पूर्ण पापों
रने के अर्थ उसी तीर्थ को आप मुझे दीजिये ॥३॥ सम्पूर्ण पापों के
वाले तीर्थ का मैं आवाहन करता हूं । हे तीर्थ ! मेरे पर अनुग्रह
उत्तम जल के समीप आइये ॥ ४ ॥ जल में रहते हुए रुद्रों की श
तथा जल के निवासी अन्य देवताओं को भी मैं नमस्कार करता
णागत होता हूं ॥ ५ ॥ जल के भीतर व्यापक पाप के नाश करने
देवता के भी मैं शरण होता हूं । और पुण्य रूप और पवित्र ज
मैं शरण होता हूं ॥ ६ ॥ रुद्र, अग्नि, सर्प, वरुण, और जल ये सब
पापों का शीघ्र नाश करें और मेरी चारों ओर से रक्षा करें ॥ ७ ॥
कर फिर जलाशय में घुस कर (आपोहिष्ठा० ऋ० अ० ७ अ० ६
इत्यादि तीन ऋचाओं के क्रम से यथोक्त (भली प्रकार) मार्जन
(हिरण्यवर्णा० अग्निपु० ऋ० ४ । ३ । २५) इत्यादि तीन ऋचा (अ

देवीतिचतथा शन्नआपस्तथैवच ॥ ९ ॥
ापःप्रवहत स्तथामन्त्रमुदीरयेत् ।
मन्त्रान्समुच्चार्य छन्दांसित्रृषिदेवताः ॥ १० ॥
प्रमर्षणसूक्तस्य संस्मरेत्प्रयतःसदा ।
दआनुष्टुभन्तस्य ऋषिश्चैवाघमर्षणः ॥ ११ ॥
वताभाववृत्तस्तु पापघ्नस्यप्रकीर्त्तितः ।
तीम्भसिनिमग्नस्तु त्रिःपठेदघमर्षणम् ॥ १२ ॥
थाश्वमेधःक्रतुराट् सर्वपापप्रणाशनः ।
थाघमर्षणंसूक्तं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ १३ ॥
अनेनस्नात्वाअम्मध्ये स्नातवान्धौतवाससा ।
परिवर्त्तितवासास्तु तीर्थतीरमुपस्पृशेत् ॥ १४ ॥
उदकस्याप्रदानाच्च स्नानशाटीन्नपीडयेत् ।
अनेनविधिनास्नातस्तीर्थस्यफलमश्नुते ॥ १५ ॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥
अतःपरंप्रवक्ष्यामि शुभामाचमनक्रियाम् ।

(६। १२)—(शन्न आपः) इन मन्त्रों को पढ़े ॥९॥ (इदमापः प्रवहत०
। ६। ५)इस मन्त्र को कहै इसप्रकार मन्त्रों का उच्चारण करके छन्द
, और देवता जो ॥ १० ॥ अघमर्षण सूक्त के हैं उन को सावधानी से स-
स्मरण करै। अघमर्षण सूक्त का छन्द अनुष्टुप्, ऋषि अघमर्षण है ॥११॥
के नाशक अघमर्षण सूक्त का भाववृत्त देवता कहा है। फिर जल में
ा लगाये हुए तीन वार अघमर्षण सूक्त को पढ़े ॥ १२ ॥ जैसे यज्ञों में सब
ड़ा यज्ञ अश्वमेध सब पापों का नाशक है इसी प्रकार अघमर्षण सूक्त
पापों का नाशक है ॥ १३ ॥ इस विधि से जल में स्नान करके धौत वस्त्र
बदल कर तीर्थ के तीर पर आचमन करै ॥ १४ ॥ और जल दान (तर्पण)
ो बिना स्नान की धोती को न निचोड़े जो इस विधि से स्नान करता है
ो तीर्थ के फल को भोगता है ॥१५॥
यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में नवमा अध्याय पूरा हुआ ॥
इस से आगे शोभन आचमान के कर्म को कहते हैं कनिष्ठिका छोटी

कायंकनिष्ठिकामूले तीर्थमुक्तंमनीषिभिः ॥१॥
अङ्गुष्ठमूलेचतथा प्राजापत्यंविचक्षणैः।
अङ्गुल्यग्रेस्मृतं दैवं पित्र्यंतर्जनिमूलके ॥२॥
प्राजापत्येनतीर्थेन त्रिःप्राश्नीयाज्जलंद्विजः।
द्विःप्रमृज्यमुखंपश्चात्खान्यद्भिःसमुपस्पृशेत् ॥३॥
हृद्गाभिःपूयतेविप्रः कण्ठगाभिश्चभूमिपः।
तालुगाभिस्तथावैश्यः शूद्रःस्पृष्टाभिरन्ततः ॥४॥
अन्तर्जानुःशुचौदेशे प्राङ्मुखःसुसमाहितः।
उदङ्मुखोवाप्रयतो दिशश्चानवलोकयन् ॥५॥
अद्भिःसमुद्धृताभिस्तु हीनाभिःफेनबुद्बुदैः।
वन्हिनाचाप्यतप्ताभिरक्षाराभिरुपस्पृशेत् ॥६॥
तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन स्पृशेन्नासापुटद्वयम्।
अङ्गुष्ठमध्यायोगेन स्पृशेन्नेत्रद्वयंततः ॥७॥
अङ्गुष्ठानामिकायोगे श्रवणौसमुपस्पृशेत्।

अंगुलि के मूल (जड़) में काय तीर्थ महात्मा लोगों ने कहा है॥१॥ [अंगूठे] की जड़ में प्राजापत्य तीर्थ और अंगुलियों के अग्रभाग में दैव [तीर्थ] तर्जनी (अंगूठे के पास की अंगुली) की जड़ में पितृ तीर्थ पण्डितों [ने कहा] है॥२॥ प्राजापत्य तीर्थ से तीन वार द्विज पुरुष जल पीवे फिर [दो वार] मुख को पोंछ कर कान आदि छिद्रों का दहिने हाथ में जल लगा [स्पर्श] करे॥३॥ हृदय तक जाने वाले जलों से ब्राह्मण, कंठ तक जाने [वालों] से क्षत्रिय, तालू तक जाने वालों से वैश्य और मुख पर स्पर्श किये [जलों से] शूद्र पवित्र होता है॥४॥ गोड़ों के भीतर हाथ किये और [पवित्र स्थान में] पूर्व वा उत्तर दिशा की ओर मुख किये मनको वश में रख के [दिशाओं] का न देखता हुआ मनुष्य॥५॥ कूप से निकाले, झाग बुद बुदा [रहित] जो जल गर्म न किये हों, और खारे भी न हों ऐसे जलों से [आचमन करे॥६॥] अंगूठा और तर्जनी को मिला कर (दोनों से) नासिका के दोनों [छिद्रों का,] बीच की अंगुली और अंगूठे से दोनों नेत्रों का स्पर्श करे॥७॥ [अंगूठे] अनामिका के योग से दोनों कानों का, कनिष्ठिका अंगुली और अंगूठे [से]

ठाङ्गुष्ठयोगेन स्पृशेत्स्कन्धद्वयंततः ॥ ८ ॥
सामेवयोगेन नाभिंचहृदयंतथा ।
पृशेच्चतथामूर्द्धिन एपआचमनेविधिः ॥ ९ ॥
प्राश्नीयाद्यदम्भस्तु प्रीतास्तेनास्यदेवताः ।
ब्राविष्णुश्चरुद्रश्च भवन्तीत्यनुशुश्रुम ॥ १० ॥
ङ्गाचयमुनाचैव प्रीयेतेपरिमार्जनात् ।
ासत्यदस्रौप्रीयेते स्पृष्टेनासापुटद्वये ॥ ११ ॥
स्पृष्टेलोचनयुग्मेतु प्रीयेतेशशिभास्करौ ।
कर्णयुग्मेतथास्पृष्ट प्रीयेतेअनिलानलौ ॥ १२ ॥
स्कन्धयोःस्पर्शनादस्य प्रीयन्तेसर्वदेवताः ।
मूर्ध्नःसंस्पर्शनादस्य प्रीतस्तुपुरुषाभवेत् ॥ १३ ॥
विनायज्ञोपवीतेन तथामुक्तशिखोद्विजः ।
अप्रक्षालितपादस्तु आचान्तोऽप्यशुचिर्भवेत् ॥ १४ ॥
बहिर्जानुरुपस्पृश्य एकहस्तार्पितैर्जलैः ।

ों कन्धों का स्पर्श करे ॥ ८ ॥ पांचो अंगुलियों को मिला के नाभि, हृदय,
मस्तक का स्पर्श करे यह आचमन का विधि है, यह इन्द्रियस्पर्श आचमन
अंग है। मलमूत्र त्याग के बाद शुद्धि करके ऐसा आचमन सदा ही कर्त्तव्य है॥९॥
ा बार आचमन में जल पीने से ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ये तीनों देवता इस
य पर प्रसन्न होते हैं, यह हम ने सुना है॥१०॥ और मार्जन करने से गंगा,
ना दोनों, और दोनों नासिका के दो छिद्रों के स्पर्श से अश्विनीकुमार
न्न होते हैं॥११॥ दोनों नेत्रों के स्पर्श से चन्द्रमा, सूर्य, दोनों कानों के स्पर्श
ने से वायु और अग्नि देवता प्रसन्न होते हैं ॥ १२ ॥ दोनों कंधों के स्पर्श
सब देवता; और मस्तक के स्पर्श से मनुष्य पर परमेश्वर प्रसन्न होता है॥१३॥
ना यज्ञोपवीत, चोटी में गांठ दिये विना, और पग धोए विना आच-
। किये पर भी मनुष्य अशुद्ध रहता है ॥ १४ ॥ गोडों से बाहर हाथ किये
क हाथ से लिये जलों से, जूता पहिने हुए, और खड़ा हो कर, जो आचमन

सोपानत्कस्तथातिष्ठन्नैवशुद्धिमवाप्नुयात् ॥ १५ ॥
आचम्यचपुराप्रोक्तं तीर्थसम्मार्जनंतुयत् ।
उपस्पृशेत्ततःपश्चान्मन्त्रेणानेनधर्मतः ॥ १६ ॥
अन्तश्चरसिभूतेषु गुहायांविश्वतोमुखः ।
त्वंयज्ञस्त्वंवषट्कार आपोज्योतीरसोमृतम् ॥ १७ ॥
आचम्यचततःपश्चादादित्याभिमुखोजलम् ।
उदुत्यंजातवेदसमिति मन्त्रेणनिक्षिपेत् ॥ १८ ॥
एषएवविधिःप्रोक्तः सन्ध्ययोश्चद्विजातिषु ।
पूर्वांसन्ध्यांजपंस्तिष्ठेदासीनःपश्चिमांतथा ॥ १९ ॥
ततोजपेत्पवित्राणि पवित्रंवाथ शक्तितः ।
ऋषयोदीर्घसन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः ॥ २० ॥
सर्ववेदपवित्राणि वक्ष्याम्यहमतःपरम् ।
येषांजपैश्चहोमैश्च पूयन्तेमानवाःसदा ॥ २१ ॥

इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

करै वह शुद्ध नहीं होता ॥ १५ ॥ आचमन के पीछे जो तीर्थ के [illegible] कहा है तिस को करके धर्म पूर्वक इस मन्त्र से आचमन करै ॥ १६ ॥ [illegible] व्यापक जल! तुम सब भूतों के हृदय में विचरते हो, यज्ञ, वषट्कार, [illegible] रस, अमृत, आदि रूप तुम ही हो ॥ १७ ॥ फिर आचमन के पीछे [illegible] सामने मुख करके (उदुत्यंजातवेदसं०) मन्त्र से जल को फेंके अर्थात् सूर्य को अर्घ देवे ॥ १८ ॥ द्विजातियों में दोनों काल की संध्याओं का यही [illegible] कहा है। प्रातःकाल की संध्या में खड़ा हो कर और सायंकाल को [illegible] बैठ कर गायत्री का जप करे ॥ १९ ॥ फिर पवित्र मन्त्रों को वा [illegible] पवित्र मन्त्र को शक्ति के अनुसार जपे। ऋषि लोग दीर्घ संध्या (अर्थात् संध्या के समय ईश्वर का अधिक ध्यान) करने से दीर्घ (अधिक) अवस्था वाले हुए हैं ॥ २० ॥ इस से आगे सम्पूर्ण वेद में जो पवित्र मन्त्र हैं तिन को [illegible] हैं जिन के जप और होम से सदैव मनुष्य पवित्र होते हैं ॥ २१ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में दशवां अध्याय पूरा हुआ।

अघमर्षणंदेवकृतं शुद्धवत्यस्तरत्समाः ।
कूष्माण्ड्यःपावमान्यश्च सावित्र्यश्चतथैवच ॥ १ ॥
त्यभिष्टुंपद्रुदाचैव स्तोमानिव्याहृतीस्तथा ।
भारुण्डानिचसामानि गायत्रीचौशनंतथा ॥ २ ॥
पुरुषवृत्तंचभाषंच तथासोमव्रतानिच ।
अब्लिङ्गंबार्हस्पत्यंच वाक्सूक्तममृतंतथा ॥ ३ ॥
शतरुद्रीयमथर्वशिरस्त्रिसुपर्णंमहाव्रतम् ।
गोसूक्तमश्वसूक्तंच इन्द्रसूक्तंचसामनी ॥ ४॥
त्रीण्याज्यदोहानिरथन्तरंच अग्निव्रतंवामदेवव्रतंच ।
निगीतानिपुनन्तिजन्तून् जातिस्मरत्वंलभतेयदीच्छेत्॥५॥

इति श्रीशाङ्खे धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः ॥११॥

वेदपवित्राण्यभिहितानि । एभ्यस्सावित्री विशिष्यते ॥१॥

अघमर्षण, (ऋतं च सत्यं चा० ऋ० ८।८।४८) इत्यादि तीन ऋचा, कृतश्चैनसो० यजु० ८।१३) इत्यादि पूरी एककण्डिका छः मन्त्र,–शुद्धवती तोन्विन्द्रंस्तवाम० ऋ० मं० ८। सू० ८४।७–९) इत्यादि तीन ऋचा (तर- न्दी धा० ऋ० अ० ७। अ० ११५) इत्यादि चार ऋचा—कूष्माण्डी ऋचा, मण्डल ९ (स्वादिष्ठया०) इत्यादि अन्त तक ११३ पवमान सूक्त—और श्री सविता देवतावाले (विश्वानिदेवसवितः०) इत्यादि मन्त्र ॥१॥(द्रुपदादिव मानः० शु० यजु० २०।२०) स्तोम, व्याहृती, भारुण्डसामगान,–गायत्री और ना का मन्त्र ॥ २ ॥ पुरुषवृत्त, भाष, सोमव्रत, जल देवता वाले मन्त्र बृह- ते देवता के मन्त्र, वागम्भृणी सूक्त, अमृत सूक्त ॥ ३ ॥ शतरुद्रीय अध्याय मस्ते रुद्र०) इत्यादि, अथर्व शिर, त्रिसुपर्ण, महाव्रत, गोसूक्त, अश्वसूक्त, दो साम ॥ ४ ॥ तीनों आज्य दोह, रथन्तर अग्निव्रत, वामदेव व्रत, ये अघ- र्षण आदि सब गाने (पढ़ने) से जीवों को पवित्र करते हैं और जो इच्छा वह इनके जपसे पूर्व जन्म में मैं किस जाति में और किस देश में उत्पन्न था यह जान लेता है ॥ ५ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में ग्यारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

ये सब वेद में पवित्र मन्त्र कहे हैं। इन सब में गायत्री श्रेष्ठ है ॥१॥

नास्त्यघमर्षणात्परमन्तर्जले ॥२॥ नसावित्र्याः जपः
व्याहृतिसमं हुतम् ॥ ३ ॥ कुशशय्यामासीनः कुशोत्त
कुशपवित्रपाणिः प्राङ्मुखः सूर्याभिमुखो वा ऽक्ष
पादाय देवताध्यायी जपं कुर्यात् ॥ ४ ॥ सुव
स्फटिकपद्ममाक्षरुद्राक्षपुत्रजीवकानामन्यतमेनादाय
कुर्यात् ॥५॥ कुशग्रन्थिं कृत्वा वामहस्तोपयमैर्वा गण
आदौ देवता ऋषिश्छन्दः स्मरेत् ॥ ७ ॥ ततः
सव्याहृतिकामादावन्ते च शिरसा गायत्रीमावर्तयेत्
अथास्याः सविता देवता ऋषिर्विश्वामित्रो गायत्र
॥ ९ ॥ ओंकारः प्रणवाख्यः ॥ १० ॥ ओं भूः । ओं
ओं स्वः । ओं महः । ओं जनः । ओं तपः । ओं स
व्याहृतयः ॥११॥ ओं आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुव
मिति शिरः ॥ १२ ॥ भवन्ति चात्र श्लोकाः ॥ १३ ॥

जल के भीतर के जपों में अघमर्षण से श्रेष्ठ दूसरा नहीं है ॥२॥ गायत्री
अन्य मन्त्र का जप नहीं है, और व्याहृतियों के समान अन्य होम
कुशासन पर बैठ कर कुशों का अंगोछा कन्धे पर धर कुश की पवि
धारण कर पूर्व को वा सूर्य के सम्मुख मुख कर के रुद्राक्ष की माला को
का ध्यान करता हुआ मनुष्य गायत्री वा अपने गुरु मन्त्र का ज
सुवर्ण, मूंगा, मोती, स्फटिक, कमलगट्टे, रुद्राक्ष, बहेड़े के फल, और
से किसी एक को लेकर जप की माला बनावे ॥ ५ ॥ अथवा कु
में दी गांठों से, अथवा बायें हाथ के अंगुलों से गिनती करे ॥ ६
मन्त्र के देवता, ऋषि, छन्दः, इन का स्मरण करे ॥ ७ ॥ फिर प्रारं
तियों सहित, और अन्त में शिरः मन्त्र (आपोज्योती०) सहित
जप करे ॥ ८ ॥ अथ (तत्सवितु०) इन का सविता, देवता, विश्वा
और गायत्री छन्द है ॥ ९ ॥ ओंकार का नाम प्रणव है ॥१०॥ ओं
ओंस्वः, ओंमहः, ओंजनः, ओंतपः, ओंसत्यम्। ये सात व्याहृति कहा
(ओं आपोज्योती रसो मृतं भूर्भुवःस्वरोम्) इस को गायत्री का
कहते हैं ॥ १२ ॥ यहां यह श्लोकों में भी कहा है ॥ १३ ॥

सव्याहृतिकांसप्रणवां गायत्रीं शिरसासह ।
येजपन्तिसदातेषां नभयंविद्यतेक्वचित् ॥ १४ ॥
शतंजप्त्वातुसादेवी दिनपापप्रणाशिनी ।
सहस्रंजप्त्वातुतथा पातकेभ्यःसमुद्धरेत् ॥ १५ ॥
दशसहस्रंजप्त्वातु सर्वकल्मषनाशिनी ।
सुवर्णस्तेयकृद्विप्रो ब्रह्महागुरुतल्पगः ॥ १६ ॥
सुरापश्चविशुद्ध्येत लक्षजाप्यान्नसंशयः ।
प्राणायामत्रयंकृत्वा स्नानकालेसमाहितः ॥ १७ ॥
अहोरात्रकृतात्पापात्तत्क्षणादेवमुच्यते ।
सव्याहृतिकाःसप्रणवाः प्राणायामास्तुषोडश ॥ १८ ॥
अपिभ्रूणहनंमासात्पुनन्त्यहरहःकृताः ।
हुतादेवीविशेषेण सर्वकामप्रदायिनी ॥ १९ ॥
सर्वपापक्षयकरी वरदाभक्तवत्सला ।
शान्तिकामस्तुजुहुयात्सावित्रीमक्षतैःशुचिः ॥ २० ॥
हन्तुकामोपमृत्युंच घृतेनजुहुयात्तथा ।

ति, प्रणव, शिरो मन्त्र, इन सबके सहित गायत्री को जो मनुष्य सदैव जपते
। को कहीं भी भय नहीं होता ॥१४॥ सौ बार जपी हुई गायत्री दिन के
को नष्ट करती है, हजार बार जपी हुई पातकों से उद्धार करती है ॥१५॥
हजार बार जपी हुई सब पापों का नाश करती है । सुवर्ण की चोरी,
हत्या, गुरुपत्नी गमन, ॥ १६ ॥ मदिरा पान, इन महापातकों का भी
ब्राह्मण, लक्ष गायत्री का जप करने से निःसन्देह शुद्ध हो जाता है ।
के समय सावधानी से तीन प्राणायाम करके ॥ १७ ॥ एक रात दिन में
पाप से उसी क्षण में छूट जाता है। व्याहृति और ॐकार सहित सोलह
याम ॥ १८ ॥ प्रति दिन करने से एक मास में भ्रूण गर्भ की हत्या करने
को भी शुद्ध निर्दोष कर देते हैं। और गायत्री से किया होम सब काम-
ों का देने वाला होता है ॥ १९ ॥ भक्ति है प्यारी जिस को ऐसी वर
वाली गायत्री की अधिष्ठात्री देवता सब पापों को क्षय करती है । जो
र शान्ति चाहे वह शुद्ध होकर गायत्री का होम बिना कुटे धी वा धानों
रे ॥ २० ॥ जो पुरुष अकाल मृत्यु को दूर किया चाहै, वह घी से, लक्ष्मी

श्रीकामस्तुतथापद्मैर्बिल्वैःकाञ्चनकामुकः ॥ २१ ॥
ब्रह्मवर्चसकामस्तु पयसाजुहुयात्तथा ।
घृतप्लुतैस्तिलैर्वन्हिं जुहुयात्सुसमाहितः ॥ २२ ॥
गायत्र्ययुतहोमाच्च सर्वपापैःप्रमुच्यते ।
पापात्मालक्षहोमेन पातकेभ्यःप्रमुच्यते ॥ २३ ॥
अभीष्टंलोकमाप्नोति प्राप्नुयात्काममीप्सितम् ।
गायत्रीवेदजननी गायत्रीपापनाशिनी ॥ २४ ॥
गायत्र्याःपरमंनास्ति दिविचेहचपावनम् ।
हस्तत्राणप्रदादेवी पततांनरकार्णवे ॥ २५ ॥
तस्मात्तामभ्यसेन्नित्यं ब्राह्मणोनियतःशुचिः ।
गायत्रीजाप्यनिरतं हव्यकव्येषुभोजयेत् ॥ २६ ॥
तस्मिन्नतिष्ठतेपापमब्बिन्दुरिवपुष्करे ॥ २७ ॥
जप्येनैवतुसंसिद्धयेद्द ब्राह्मणोनात्रसंशयः ।

को चाहने वाला कमलों से, सुवर्ण को चाहने वाला बिल्व फलों से मन्त्र द्वारा होम करे ॥२१॥ जो ब्रह्म तेज को चाहै, वह दूध से गाय... होम करे और भली प्रकार सावधानी से घी मिले तिलों से ॥ २... हजार गायत्री द्वारा किये होम से सब पापों से छूट जाता है। ... पापी मनुष्य भी लक्ष गायत्री के होम से पातकों से छूट जाता है तथा वह वांछित लोक को और वांछित फल को प्राप्त होता है ... वेदों की माता और पापों की नाश करने वाली है ॥ २४ ॥ इस ... परलोक–स्वर्ग में गायत्री से अधिक पवित्र करने वाला कोई नहीं ... रूप समुद्र में गिरने वाले मनुष्यों को हाथ पकड़ कर रक्षा करने ... यत्री ही है ॥ २५ ॥ तिस से नियम पूर्वक शुद्धता से ब्राह्मण नि... का अभ्यास नाम जप करे। गायत्री के जप में तत्पर ब्राह्मण को ... अन्न देवताओं के लिये बनाया हो) और कव्य (जो पितरों के लि... सो जिमावे ॥ २६ ॥ क्योंकि उस ब्राह्मण में पाप इस प्रकार नहीं ठ... कमल के पत्ते पर जल की बूंद ॥ २७ ॥ जप से ही ब्राह्मण सिद्धि... हो जाता है इसमें संशय नहीं है, वह ब्राह्मण चाहै अन्य कोई दु...

कुर्यादन्यन्नवाकुर्यान् मैत्रोब्राह्मणउच्यते ॥ २८ ॥
उपांशुःस्याच्छतगुणः साहस्रोमानसःस्मृतः ।
नोच्चैर्जपंबुधःकुर्यात्सावित्र्यास्तुविशेषतः ॥ २९ ॥
सावित्रीजप्यनिरतः स्वर्गमाप्नोतिमानवः ।
गायत्रीजाप्यनिरतो मोक्षोपायंचविन्दति ॥ ३० ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्नातःप्रयतमानसः ।
गायत्रींतुजपेद्भक्त्या सर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ३१ ॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

स्नातःकृतजप्यस्तदनु प्राङ्मुखो दिव्येन तीर्थेन देवानु-न तर्पयेत् ॥ १ ॥ अथ तर्पणविधिः॥२॥ ओं० भगवन्तं तर्पयामि ॥ ३ ॥ कालाग्निरुद्रंतुततो रुक्मभौमंतथैवच ।
श्वेतभौमंततःप्रोक्तं पातालानांचसप्तकम् ॥ ४ ॥
जम्बुद्वीपंततःप्रोक्तं शाकद्वीपंततःपरम् ।
गोमेदपुष्करेतद्वच्छाकाख्यंचततःपरम् ॥ ५ ॥

ा न करे तो भी उस को मैत्र कहते हैं ॥ २८ ॥ वाणी से साफ २ बोलने अपेक्षा उपांशु (मन्द) जप सौगुणा और मानस (मन २ में) जप करना (गुणा अधिक फल दायक कहा है । ज्ञानवान् मनुष्य ऊंचे स्वर से जप रे और गायत्रीका जप तो ऊंचे स्वर से विशेष कर कदापि न करे ॥२९॥ त्री के जप में तत्पर मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त होता और गायत्री के जपमें : मनुष्य मोक्ष के उपाय को भी प्राप्त होता है ॥ ३० ॥ तिससे सब प्रयत्न ान के पीछे मन को रोक कर भक्ति से सब पापों के नाश करने वाली त्री को जपे ॥ ३१ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में बारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

स्नान और सन्ध्योपासन जप करके पूर्वाभिमुख बैठा पुरुष देवतीर्थ वताओं का जल से तर्पण करे ॥ १ ॥ अब तर्पणविधि कहते हैं ॥ २ ॥ ओं ान् शेषको तृप्त करता हूं ॥ ३ ॥ फिर कालाग्निरुद्र, रुक्मभौम, श्वेतभौम, ों पाताल सब को क्रम से तृप्त करे अर्थात् (अतलं तर्पयामि) इत्यादि । से पृथक् २ सबका तर्पण करे ॥ ४ ॥ फिर जम्बूद्वीप, शाकद्वीप, गोमेद, र, और शाक, इन को पृथक् २ जलदान से तृप्त करे ॥ ५ ॥

शार्वरं ततः स्वधामानं ततो हिरण्यरोमाणं ततः
स्थायिनो लोकांस्तर्पयेत् ॥ ६ ॥ लवणोदकं ततः क्षीरोदं
घृतोदं तत इक्षूदं ततः स्वादूदं तत इति सप्त समुद्रं
पुरुषसूक्तेनोदकाञ्जलीन् दद्यात्, पुष्पाणि च तथा भक्त्या
अथ कृतापसव्यो दक्षिणामुखोऽन्तर्जानुः पित्र्येण
यथाश्रद्धं प्रकाममुदकं दद्यात् ॥ ८ ॥ सौवर्णेन पात्रेण
तेनौदुम्बरेण खड्गपात्रेणान्यपात्रेण वोदकं पितृतीर्थे
शन्दद्यात् ॥९॥ पित्रे पितामहाय प्रपितामहाय मात्रे पि
मह्यै प्रपितामह्यै मातामहाय प्रमातामहाय वृद्धप्रमाता
हाय मातामह्यै प्रमातामह्यै वृद्धप्रमातामह्यै स
रुपात् पितृपक्षे यावतां नाम जानीयात् पितृपक्षाणां
कृत्वा गुरूणां मातृपक्षाणां तर्पणं कुर्यात् ॥१०॥ मातृपक्ष
तर्पणं कृत्वा सम्बन्धिबान्धवानां कुर्यात् तेषां कृत्वा
दां कुर्यात् ॥ ११ ॥ भवन्ति चात्र श्लोकाः ॥ १२ ॥

फिर शार्वर, स्वधामा, हिरण्यरोमा, कल्पतक ठहरने वाले लोक
करे ॥६॥ फिर लवणोद, क्षीरोद, घृतोद, इक्षूद, इन सात समुद्रों
फिर परमेश्वर को पुरुष सूक्त (सहस्रशीर्षा०) के प्रत्येक मन्त्रसे
देवे और अञ्जलि के साथ भक्ति से पुष्पों को समर्पण करे
सव्य हो कर दक्षिण को मुख किये और गोडोंके भीतर हाथ
से उत्तम श्रद्धाके साथ पर्याप्त जल पितरों को देवे ॥ ८ ॥ सुवर्ण
गैंडा, इन सुवर्णादि के पात्रों से अथवा किसी अन्य
पितृ तीर्थ का स्पर्श करते हुए जल को देवे ॥ ९ ॥ पिता, पितामह
प्रपितामह, (परदादा) माता, पितामही, प्रपितामही, मातामह
प्रमातामह, (परनाना) वृद्धप्रमातामह, मातामही (नानी)
(परनानी) वृद्धप्रमातामही, सात पीढ़ी तक पिता के पक्ष में
नाम जानता हो, पितृपक्ष वालोंका तर्पण करके, गुरु और मातृपक्ष
तर्पण करे ॥ १० ॥ और मातृपक्षवालों का तर्पण करके
सम्बन्धियोंका तर्पण करे ॥ ११ ॥ इस तर्पण के विषयमें श्लोक

विनारौप्यसुवर्णेन विनाताम्रतिलेनच ।
विनादर्भैश्चमन्त्रैश्च पितृणांनोपतिष्ठते ॥ १३ ॥
सौवर्णराजताभ्यांच खड्गेनौदुम्बरेणच ।
दत्तमक्षयतांयाति पितृणांतुतिलोदकम् ॥ १४ ॥
हेम्नातुसहयद्दत्तं क्षीरेणमधुनासह ।
तदप्यक्षयतांयाति पितृणांतुतिलोदकम् ॥ १५ ॥
कुर्यादहरहःश्राद्धमन्नाद्येनोदकेनवा ।
पयोमूलफलैर्वापि पितृणांप्रीतिमावहन् ॥ १६ ॥
स्नातःसंतर्पणंकृत्वा पितृणांतुतिलाम्भसा ।
पितृयज्ञमवाप्नोति प्रीणातिचपितृंस्तथा ॥ १७ ॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥
ब्राह्मणान्नपरीक्षेत दैवेकर्मणिधर्मवित् ।
पित्र्येकर्मणिसंप्राप्ते युक्तमाहुःपरीक्षणम् ॥ १ ॥
ब्राह्मणायेविकर्मस्था वैडालव्रतिकास्तथा ।

चांदी, सोना, तांबा, तिल, कुश, और मन्त्र, इन के विना दिया जो जल पितरों को प्राप्त नहीं होता ॥ १३ ॥ सोना, चांदी, गैंडा, गूलर, इन के [illegible] से, पितरों को दिया जल अक्षय अविनाशी फल दायक होता है ॥१४॥ [illegible], दूध, सहत, इन के साथ जो तिल सहित जल पितरों को दिया जाता [illegible]ह भी अक्षय फलदायी है॥१५॥ पितरों की श्रद्धा प्रीति प्रकट करता हुआ [illegible] आदि, जल,-दूध, मूल, अथवा फलों से पितरों का प्रति दिन श्राद्ध करे [illegible]॥ स्नान के पीछे तिल सहित जल से पितरों का तर्पण करने से पितृयज्ञ हो जाता है और पितर भी तृप्त हो जाते हैं ॥ १७ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में तेरहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

धर्म का मर्म ज्ञाता पुरुष देवताओं के निमित्त किये दान पुण्यादि कर्म [illegible]ाह्मणों की परीक्षा न करे और पितरों के निमित्त श्राद्धादि कर्म हो तो [illegible]षा करना आवश्यक कहा है ॥१॥ जो ब्राह्मण निषिद्ध कर्म को करते हैं, [illegible]ा वैडालव्रत (निर्दयी चित्त वाले) हैं, या जिन के देह के अंगुली आदि

ऊनाङ्गाअतिरिक्ताङ्गा ब्राह्मणाःपङ्क्तिदूपकाः॥२
गुरूणांप्रतिकूलाश्च वेदाग्न्युत्सादिनश्चये।
गुरूणांत्यागिनश्चैव ब्राह्मणाःपङ्क्तिदूपकाः॥३॥
अनध्यायेष्वधीयानाः शौचाचारविवर्जिताः।
शूद्रान्नरससंपुष्टा ब्राह्मणाःपङ्क्तिदूपकाः॥४॥
षडङ्गवित्त्रिसुपर्णो बह्वृचोज्येष्ठसामगः।
त्रिणाचिकेतःपञ्चाग्निर्ब्राह्मणाःपङ्क्तिपावनाः॥५॥
ब्रह्मदेयानुसन्तानो ब्रह्मदेयाप्रदायकः।
ब्रह्मदेयापतिर्यश्च ब्राह्मणःपङ्क्तिपावनः॥६॥
ऋग्यजुःपारगोयश्च साम्नांयश्चापिपारगः।
अथर्वाङ्गिरसोऽध्येता ब्राह्मणःपङ्क्तिपावनः॥७॥
नित्यंयोगरतोविद्वान् समलोष्टाश्मकाञ्चनः।

अंग न्यूनाधिक हैं, वे पंक्ति को दूषित करने वाले हैं ऐसे ब्राह्मणों को
मावे ॥ २ ॥ गुरुओं के जो प्रतिकूल हैं, वा जो वेद के अभ्यास तथा अग्नि
के त्यागने वाले और जो गुरुओं को त्यागते हैं, वे भी पंक्ति के दूषक हैं।
जो अनध्यायों में वेद को पढ़ते, जो शौच आचार से हीन और
अन्न से बने रस से पुष्ट होते, वे भी पंक्ति के दूषक हैं ॥ ४ ॥ वेद के छः
(शिक्षादि) को जो जाने, त्रिसुपर्ण को जो जाने, ऋग्वेद जिस ने
या ज्येष्ठ (बड़े) सामगान को जो गावे, तीन वेद को जान कर
अग्नि में चयन यज्ञ करने वाला, पांच अग्नियों (गार्हपत्याऽऽहवनीय
में अग्निहोत्रादि करने वाला, ये सब ब्राह्मण पंक्ति के पावन (
करने वाले) हैं ॥ ५ ॥ जो ब्राह्मण कुल परम्परा से वेद को पढ़ता
हो, जो ब्राह्मणको देने योग्य दान देता हो और जो अनेक ब्रा
देनेयोग्य पदार्थों को स्वयं अकेला ही न लेवे, वह पङ्क्ति पावन
॥ ६ ॥ जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, और सामवेद को पूरा २ जानता हो और
गिरस अथर्व वेद को जिस ने पढ़ा हो, वह ब्राह्मण भी पङ्क्तिपावन
जो विद्वान् नित्य योगाभ्यास में तत्पर हो, जो मट्टी, पत्थर और

ध्यानशीलोहियोविद्वान् ब्राह्मणःपङ्क्तिपावनः ॥ ८ ॥
द्वौदैवेप्राङ्मुखौत्रींश्च पित्र्येवोदङ्मुखांस्तथा ।
भोजयेद्विविधान्विप्रानेकैकमुभयत्रवा ॥ ९ ॥
भोजयेदथवाऽप्येकं ब्राह्मणंपङ्क्तिपावनम् ।
दैवेकृत्वातुनैवेद्यं पश्चाद्वन्हौतुतत्क्षिपेत् ॥ १० ॥
उच्छिष्टसन्निधौकार्यं पिण्डनिर्वपणंबुधैः ।
अभावेचतथाकार्यमग्निकार्यंयथाविधि ॥ ११ ॥
श्राद्धंकृत्वाप्रयत्नेन त्वराक्रोधविवर्जितः ।
उष्णमन्नंद्विजातिभ्यः श्रद्धयाविनिवेदयेत् ॥ १२ ॥
अन्यत्रपुष्पमूलेभ्यः पीठकेभ्यश्चपण्डितः ।
भोजयेद्विविधान्विप्रान्गन्धमाल्यसमुज्ज्वलान् ॥ १३ ॥
यत्किंचित्पच्यतेगेहे भक्ष्यंवाभोज्यमेववा ।

समझता हो और ध्यानशील पण्डित हो, वह ब्राह्मण भी पङ्क्ति-
है ॥ ८ ॥ दैव (विश्वेदेवा) कर्म में पूर्वाभिमुख दो ब्राह्मणों और
र्म में उत्तराभिमुख अनेक प्रकार के तीन ब्राह्मणों, अथवा दोनों जगह
ही ब्राह्मण को जिमावे ॥ ९ ॥ अथवा कोई न मिलें, तो पङ्क्तिपावन
ब्राह्मण को श्राद्ध में जिमावे और दैव कर्म के निमित्त बनाये नैवेद्य
ग्नि में होम करदेवे ॥ १० ॥ भोजन किये ब्राह्मणों के उच्छिष्ट के समीप
द्धिमान् मनुष्य पितरोंके लिये पिण्डदान करे और किसी कारण से सुपात्र
तो विधिपूर्वक उस अन्न का अग्नि में होम करे कि जो ब्राह्मणों को
कराया जाता ॥ ११ ॥ ब्राह्मणोंको भोजन कराने का बड़े यत्न से पिण्ड-
श्राद्ध को पूरा करके शीघ्रता और क्रोध से रहित मनुष्य श्रद्धा से
ना गर्म २ भोजन ब्राह्मणों को जिमावे ॥ १२ ॥ फूल, मूल और पीढा
आसनोंको छोड़कर अर्थात् ऊन आदिके शुद्ध आसन पर बैठाकर गन्ध
से उज्वल विविध ब्राह्मणोंको विचारशील जिमावे ॥ १३ ॥ जो कुछ भक्ष्य,
घरमें पकाया हो उसको पिण्डोंके समीप निवेदन किये विना कभी

अनिवेद्यनभोक्तव्यं पिण्डमूलेकदाचन ॥ १४ ॥
उग्रगन्धान्यगन्धानि चैत्यवृक्षभवानिच।
पुष्पाणिवर्जनीयानि रक्तवर्णानियानिच ॥ १५ ॥
तोयोद्भवानिदेयानि रक्तान्यपिविशेषतः।
ऊर्णासूत्रंप्रदातव्यं कार्पासमथवानवम् ॥ १६ ॥
दशांविवर्जयेत्प्राज्ञो यद्यप्यहतवस्त्रजाम्।
घृतेनदीपोदातव्यस्तिलतैलेन वा पुनः ॥ १७ ॥
धूपार्थंगुग्गुलंदद्याद् घृतयुक्तंमधूत्कटम्।
चन्दनंचतथादद्यात्पिष्टाचकुंकुमंशुभम् ॥ १८ ॥
भूस्तृणंसुरसंशिग्रुं पालकंसिन्धुकंतथा।
कूष्माण्डालाबुवार्ताक कोविदारांश्चवर्जयेत् ॥ १९ ॥
पिप्पलींमरिचंचैव तथावैपिण्डमूलकम्।
कृतंचलवणंसर्वं वंशाग्रंतुविवर्जयेत् ॥ २० ॥
राजमाषान्मसूरांश्च कोद्रवान्कोरदूषकान्।
लोहितान्वृक्षनिर्यासाञ्छ्राद्धकर्मणिवर्जयेत् ॥ २१ ॥

भी भोजन न करे ॥ १४ ॥ जिन में अधिक सुगन्ध हो, या [illegible]
न हो, जो किसी चैत्य नाम श्मशान के वृक्ष पर लगे हों, और [illegible]
के हों, ऐसे फूल पितरों को, श्राद्ध में न चढ़ावें ॥ १५ ॥ यदि [illegible]
में पैदा हुये हों, तो विशेष कर पितरों पर चढ़ावें. ऊन का सूत [illegible]
कपास का सूत पितरों पर चढ़ावें ॥ १६ ॥ बुद्धिमान् मनुष्य [illegible]
पूरे थान आदि में से फाड़ा न हो ऐसे) वस्त्र का भी [illegible]
चढ़ावें। और घी का, अथवा तिलों के तेल का दीपक [illegible]
जलावें ॥ १७ ॥ धूप के लिये घी और मधु [illegible]
ऐसे गुग्गुल का धूप देवें, चन्दन और केसर का [illegible]
कर ॥ १८ ॥ भूस्तृण (जल की घास) सुरस, [illegible]
इन्द्रायण, या सिंहरवा, कुम्हड़ा, तूम्बी, बैंगन, कचनार, [illegible]
देवें अर्थात् भोजनादि में न देवें ॥ १९ ॥ पीपल, मिरच, [illegible]
पत्र, बांस का अग्र भाग, इन को भी श्राद्ध में वर्जे [illegible]
मसूर-कोदों, कोद्रूपक, लाल गोंद, इन को भी श्राद्ध [illegible]

आम्रमामलकीमिक्षुं मृद्वीकादधिदाडिमान् ।
विदार्यश्चैवरम्भाद्याद्दद्याच्छ्राद्धेप्रयत्नतः ॥ २२ ॥
धानालाजेमधुयुते सक्तूञ्शर्करयासह ।
दद्याच्छ्राद्धेप्रयत्नेन शृङ्गाटकविसेतकान् ॥ २३ ॥
भोजयित्वाद्विजान्भक्त्या स्वाचान्तान्दत्तदक्षिणान् ।
अभिवाद्यपुनर्विप्राननुव्रज्यविसर्जयेत् ॥ २४ ॥
निमन्त्रितस्तुयःश्राद्धे मैथुनंसेवतेद्विजः ।
श्राद्धंदत्त्वाचभुक्त्वाच युक्तःस्यान्महतैनसा ॥ २५ ॥
कालशाकंमहाशल्का मांसंवाध्रीणसस्यच ।
खड्गमांसंतथानन्तं यमःप्रोवाचधर्मवित् ॥ २६ ॥
यद्ददातिगयाक्षेत्रे प्रभासेपुष्करेतथा ।
प्रयागेनैमिषारण्ये सर्वमानन्त्यमश्नुते ॥ २७ ॥
गङ्गायमुनयोस्तीरे पयोष्ण्याममरकण्टके ।

के फल, आंवला, गांडा, वा गन्ना, वा पौंडा, दाख, दही, अनार, विदारी केला, इनको श्राद्ध में विशेष कर ब्राह्मणों को जिमावे ॥ २२ ॥ शहद से भुंजे जौ और खीलें—खांड मिले सत्तू, शृंगाटक (जल की कटेहली का) बिसेतक, (भिस) इन को श्राद्ध में विशेष कर देवे ॥ २३ ॥ ब्राह्मणों [illegible]क्ति से भोजन करा कर—किया है आचमन जिन्हों ने और दी है [illegible]णा जिन को, ऐसे ब्राह्मणों को फिर नमस्कार और अनु (पीछे २) तक चलकर के विसर्जन करे ॥ २४ ॥ जो श्राद्ध में न्योता हुआ [illegible] मैथुन करे, उस को जो श्राद्ध में जिमावे. वह. और भोजन करने [illegible]. दोनों बड़े पाप से युक्त होते हैं ॥ २५ ॥ ऋतु का शाक, महाशल्क [illegible] मछली, वाध्रीणस, अधिक लम्बे कानोंवाले बकरा का मांस, और गैंडा [illegible]मांस इन को यमराज ने श्राद्ध में अनन्त फल देने वाले कहा है ॥ २६ ॥ [illegible], प्रभास, पुष्कर प्रयाग, नैमिषारण्य, इन तीर्थों में जा कर जो पितरों का [illegible] करता है, वह अक्षय फलदायी है ॥ २७ ॥ गंगा, यमुना के तीर पर, [illegible]ष्णी नदी पर, अमरकंटक नर्मदा, और गया के तीर पर इन में पितृ

नर्मदायांगयातीरे सर्वमानन्त्यमुच्यते ॥ २८ ॥
वाराणस्यांकुरुक्षेत्रे भृगुतुङ्गेमहालये ।
सप्तवेण्यृपिकूपेच तदप्यक्षयमुच्यते ॥ २९ ॥
म्लेच्छदेशेतथारात्रौ सन्ध्यायांचविशेपतः ।
नश्राद्धमाचरेत्प्राज्ञो म्लेच्छदेशेनचव्रजेत् ॥ ३० ॥
हस्तिच्छायासुयद्दत्तं यद्दत्तंराहुदर्शने ।
विपुवत्ययनेचैव सर्वमानन्त्यमुच्यते ॥ ३१ ॥
प्रौष्ठपद्यामतीतायां मघायुक्तांत्रयोदशीम् ।
प्राप्यश्राद्धंप्रकर्तव्यं मधुनापायसेनवा ॥ ३२ ॥
प्रजांपुष्टिंयशःस्वर्गमारोग्यंचधनंतथा ।
नृणांश्राद्धैःसदाप्रीताः प्रयच्छन्तिपितामहाः ॥ ३३ ॥
इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥
जननेमरणेचैव सपिण्डानांद्विजोत्तम ।
त्र्यहाच्छुद्धिमवाप्नोति योऽग्निवेदसमन्वितः ॥ १ ॥
सपिण्डतातुपुरुपे सप्तमेविनिवर्तते ।

देने से अनन्त फल होता है ॥ २८ ॥ काशी, कुरुक्षेत्र, भृगुतुङ्ग, महालय (एक गत) सप्तवेणी,ऋषि कूप,इन में पिण्ड दान अनन्त फल दायक कहा है। म्लेच्छों के देश में, रात्रि में और विशेप कर सन्ध्या के समय,बुद्धिमान् श्राद्ध न करे और म्लेच्छ देश में गमन भी न करे ॥ ३० ॥ गजच्छाया (योग पहिले लिख आये हैं) ग्रहण के समय,–विपुवत्संक्रांति और ... इन में कहा है ॥ ३१ ॥ भादों मास की पूर्णमा बीत जाने पर, मघा नक्ष संयुक्त त्रयोदशी के दिन, मधु सहत से व खीर से श्राद्ध करे ॥ ३२ ॥ सन्तान, पुष्टता, यश, स्वर्ग, आरोग्य, धन, इन सब को, प्रसन्न हुये पिता सदैव मनुष्यों को देते हैं ॥ ३३ ॥

यह शंखस्मृति के भापानुवाद में चौदहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

सपिण्डों (पांच वा सात पीढ़ी वालों) के जन्म,अथवा मरण में ... और नियमानुसार वेदाध्यायन कर्त्ता ब्राह्मण, तीन दिन में शुद्ध होता है सातवीं पीढ़ी में सपिण्डता निवृत्त हो जाती है। और गुण कर्म हीन ...

नामधारकविप्रस्तु दशाहेनविशुध्यति ॥ २ ॥
क्षत्रियोद्वादशाहेन वैश्यःपक्षेणशुध्यति ।
मासेनतुतथाशूद्रः शुद्धिमाप्नोतिनान्तरा ॥ ३ ॥
रात्रिभिर्मासतुल्याभिर्गर्भस्रावेविशुध्यति ।
अजातदन्तबालेतु सद्यःशौचंविधीयते ॥ ४ ॥
अहोरात्रात्तथाशुद्धिर्बालेत्वकृतचूडके ।
तथैवानुपनीतेतु त्र्यहाच्छुध्यन्तिबान्धवाः ॥ ५ ॥
अनूढानांतुकन्यानां तथैवशूद्रजन्मनाम् ।
अनूढभार्यःशूद्रस्तु षोडशाद्वत्सरात्परम् ॥ ६ ॥
मृत्युंसमधिगच्छेच्चेन्मासात्तस्यापिबान्धवाः ।
शुद्धिंसमधिगच्छेयुर्नात्रकार्याविचारणा ॥ ७ ॥
पितृवेश्मनियाकन्या रजःपश्यत्यसंस्कृता ।
तस्यांमृतायांनाशौचं कदाचिदपिशाम्यति ॥ ८ ॥
हीनवर्णातुयानारी प्रमादात्प्रसवंव्रजेत् ।
प्रसवेमरणेतज्जमाशौचंनोपशाम्यति ॥ ९ ॥

से ब्राह्मण कहाने वाला दश दिन में शुद्ध होता है ॥ २ ॥ क्षत्रिय बारह में, वैश्य एक पक्ष १५ दिन में और शूद्र एक मास में शुद्धि को प्राप्त होता पहिले नहीं ॥ ३ ॥ जितने महिने का गर्भ गिर जावे, उतने ही दिन में होती है और बालक के दांत उगने से पहिले मर जाने पर उसी समय कही है ॥ ४ ॥ मुण्डन से पहिले बालक के मरने पर एक दिन रात में यज्ञोपवीत से पहिले मरने पर तीन दिन में, कुटुम्बी लोग शुद्ध होते ॥ ५॥ बिना विवाही कन्या, शूद्रास्त्री, और बिना विवाहा शूद्र, सोलह वर्ष अवस्था से ऊपर, इन के मरने पर उस मृतक के कुटुम्बी लोग एक महीने शुद्ध होते हैं, इस में विचार नहीं करना चाहिये ॥ ६ । ७ ॥ यदि बिना वाही कन्या पिता के घर पर ही रजस्वला हो जाय, तो उसके मरने का शौच जन्म पर्यन्त कभी भी निवृत्त नहीं होता ॥ ८ ॥ यदि नीच वर्ण की या विवाह से पहिले प्रसूता होते समय मर जाय, तो उस के प्रसव और के दोनों सूतक जन्म पर्यन्त कभी भी निवृत्त नहीं होते ॥ ९ ॥

समानंखल्वशौचन्तु प्रथमेनसमापयेत्।
असमानंद्वितीयेन धर्मराजवचोयथा ॥ १० ॥
देशान्तरगतःश्रुत्वा कुल्यानांमरणोद्भवौ।
यच्छेपंदशरात्रस्य तावदेवाशुचिर्भवेत् ॥ ११ ॥
अतीतेदशरात्रेतु त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्।
तथासंवत्सरेऽतीते स्नातएवविशुद्ध्यति ॥ १२ ॥
अनौरसेपुपुत्रेपु भार्यास्वन्यगतासुच।
परपूर्वासुचस्त्रीपु त्र्यहाच्छुद्धिरिहेष्यते ॥ १३ ॥
मातामहेव्यतीतेतु आचार्येचतथामृते।
गृहेदत्तासुकन्यासु मृतासुतुत्र्यहस्तथा ॥१४ ॥
निवासराजनिप्रेते जातेदौहित्रकेगृहे।
आचार्यपत्निपुत्रेपु प्रेतेपुदिवसेनच ॥ १५ ॥
मातुलेपक्षिणींरात्रिं शिष्यर्त्विग्बान्धवेपुच।

यदि जन्म २ के, वा मरण २ के दो सूतक दश दिन
तर आगे पीछे हो जावें, तो पहिले के साथ दूसरे की शुद्धि कर लें।
जन्मसूतक में मरण,वा मरण सूतक, में जन्मसूतक हो जाय, तो
के वचनानुसार दूसरे के संग पहिले की शुद्धि करे ॥ १० ॥ परदेश में
मनुष्य दश दिन के वीच में अपने कुल में हुए मरण जन्म को सुन
दिन में शेप रहे दिनों तक ही शुद्धि माने ॥ ११ ॥ यदि दश दिन
सुने, तो तीन दिन में और एक वर्ष वीतने पर सुने, तो तत्काल
करने से ही शुद्धि होती है ॥ १२ ॥ औरस से भिन्न (दत्तक आदि),
व्यभिचारिणी, और जो अपने पति को छोड़ कर दूसरे को करले
इन के मरने पर भी तीन दिन में शुद्धि मानी है ॥ १३ ॥ नाना,
और वियाही कन्या, इनके मरने पर भी तीन दिन में शुद्धि होती है।
देशके राजा के मरने, अपने घरमें दौहित्र के जन्मने पर, गुरु की
पुत्रों के मरने पर, एक दिन में शुद्धि होती है ॥ १५ ॥ मामाके मरने
दिन रात, शिष्य, ऋत्विक, और सात पीढी से पृथक् कुटुम्बी
पर, एक दिन रात, अशुद्धि माने। मन्त्रस्नधारी (जो संग में

...चारण्येकाहमनूचानेतथामृते ॥ १६ ॥
एकरात्रंत्रिरात्रंच षड्रात्रंमासमेवच ।
शूद्रेसपिण्डेवर्णानामाशौचंक्रमशःस्मृतम् ॥ १७ ॥
त्रिरात्रंमथषड्रात्रं पक्षंमासंतथैवच ।
वैश्येसपिण्डेवर्णानामाशौचंक्रमशःस्मृतम् ॥ १८ ॥
सपिण्डेक्षत्रियेशुद्धिः षड्रात्रंब्राह्मणस्यतु ।
र्णानांपरिशिष्टानां द्वादशाहंविनिर्दिशेत् ॥ १९ ॥
सपिण्डेब्राह्मणेवर्णाः सर्वएवाविशेषतः ।
दशरात्रेणशुध्येयुरित्याहभगवान्यमः ॥ २० ॥
भृग्वग्न्यनशनाम्भोभिर्मृतानामात्मघातिनाम् ।
पतितानांचनाशौचं शस्त्रविद्युद्धताश्चये ॥ २१ ॥
यतिव्रतिब्रह्मचारिनृपकारुकदीक्षिताः ।
नाशौचभाजःकथिता राजाज्ञाकारिणश्चये ॥ २२ ॥

...नूचान (जो वेद में अधिक जानकार हो) के मरने पर एक दिन रात ...) अशुद्धि रहती है ॥१६॥ जो अपना सपिण्ड शूद्र होगया हो उस के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चारो वर्ण क्रम से एक दिन, तीन दिन—और एक मास में शुद्ध होते हैं ॥१७॥ जो अपना सपिण्डी वैश्य ...गया हो, तो ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्र वर्णों को क्रम से तीन ...दिन, १५ दिन और एक मास का अशौच कहा है ॥१८॥ अपने सपिण्ड का ...र मर गया हो तो ब्राह्मण को छ दिन में और शेष तीनों वर्णों ...दिन में शुद्धि होती है ॥ १९ ॥ ब्राह्मण सपिण्ड (अर्थात् ब्राह्मण ... की स्त्री में उत्पन्न) के मर जाने में तीनों क्षत्रियादि वर्ण दश रात ...हैं। यह बात धर्मशास्त्र कर्त्ता भगवान् यम ने कही है ॥२०॥ भृगु, ... या पर्वत का शिखर से गिर कर) अग्नि में जल कर, अनशन, ...ाग से) जल में डूब कर, अथवा स्वयं आत्मघात करके, शस्त्र, ... से जो मरे हों, वा जो पतित होके मरे हों इन का अशौच नहीं ...संन्यासी, व्रती, (जिस ने कोई व्रत धारण किया हो) ब्रह्म... ...कारीगर, दीक्षित (जिस ने यज्ञ आदि में दीक्षा ले रक्खी हो) ...आज्ञा करने वाले, ये सब सूतक में अशुद्ध नहीं होते ॥ २२ ॥

यस्तुभुङ्क्तेपराशौचे वर्णीसोप्यशुचिर्भवेत्।
आशौचशुद्धौशुद्धिश्च तस्याप्युक्तामनीषिभिः॥२३॥
पराशौचेनरोभुक्त्वा कृमियोनौप्रजायते।
भुक्त्वान्नंम्रियतेयस्य तस्ययोनौप्रजायते॥२४॥
दानंप्रतिग्रहोहोमः स्वाध्यायःपितृकर्मच।
प्रेतपिण्डक्रियावर्जमाशौचेविनिवर्तते॥२५॥
इति शांखे धर्मशास्त्रे पञ्चदशोऽध्यायः॥१५॥
मृन्मयंभाजनंसर्वं पुनःपाकेनशुद्ध्यति।
मद्यैर्मूत्रैःपुरीषैर्वा ष्ठीवनैःपूयशोणितैः॥१॥
संस्पृष्टंनैवशुद्ध्येत पुनःपाकेनमृन्मयम्।
एतैरेवतथास्पृष्टं ताम्रसौवर्णराजतम्॥२॥
शुद्ध्यत्यावर्तितंपश्चादन्यथाकेवलाम्भसा।

जो ब्रह्मचारी पराये घर सूतक में खाता है, वह भी अशुद्ध होता सूतक की शुद्धि होने पर उस की भी बुद्धिमानों ने शुद्धि कही है॥२३॥ अशौच में खाकर मनुष्य कीड़ों की योनि में जन्म लेता है और जिस को खाकर पेट में रक्खे हुए मरता है, उसी की जाति में पैदा होता दान देना, दान लेना, होम, वेदपाठ, पितरों का कर्म, ये सब, प्रेत पिण्ड दान के कर्म को छोड़ कर सूतक में निवृत्त हो जाते हैं। अशौच के समय दानादि कर्म नहीं करने चाहिये॥२५॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में पन्द्रहवां अध्याय पूरा हुआ॥

—:0:—

मट्टी का पात्र दुबारा पकाने से शुद्ध हो जाता है, परन्तु मदिरा, विष्ठा, थूक, राध (पीब) और रुधिर, ॥१॥ ये मद्यादि जिस में रक्खे ऐसा मट्टी का पात्र दुबारा पकाने से भी शुद्ध नहीं होता और इन ही स्पर्श जिस में हुआ हो, ऐसा तांबे, सोने और चांदी का पात्र॥२॥ तपाने से शुद्ध होता और अन्य किसी प्रकार से अशुद्ध हो, तो केवल धोकर शुद्ध होता है। खटाई के जल से धोने पर तांबा, सीसा और

...होती ॥

...दकेनताम्रस्य सीसस्यत्रपुणस्तथा ॥ ३ ॥
क्षारेणशुद्धिःकांस्यस्य लोहस्यचविनिर्द्दिशेत् ।
मुक्तामणिप्रवालानां शुद्धिःप्रक्षालनेनतु ॥ ४ ॥
अब्जानांचैवभाण्डानां सर्वस्याश्ममयस्यच ।
शाकवर्जमूलफल द्विदलानांतथैवच ॥ ५ ॥
मार्ज्जनाद्यज्ञपात्राणां पाणिनायज्ञकर्मणि ।
...ष्णाम्भसातथाशुद्धिं सस्नेहानांविनिर्द्दिशेत् ॥ ६ ॥
...यनासनयानानां स्फयशूर्पशकटस्यच ।
शुद्धिःसंप्रोक्षणाद्यज्ञे कटमिन्धनयोस्तथा ॥ ७ ॥
मार्जनाद्वेश्मनांशुद्धिः क्षितेःशोधस्तुतत्क्षणात् ।
सम्मार्जितेनतोयेन वाससांशुद्धिरिष्यते ॥ ८ ॥
बहूनांप्रोक्षणाच्छुद्धिर्धान्यादीनांविनिर्द्दिशेत् ।
प्रोक्षणात्संहतानांच दारवाणांचतक्षणात् ॥ ९ ॥
सिद्धार्थकानांकल्केन शृङ्गदन्तमयस्यच ।
गोवालैःफलपात्राणामस्थ्नांशृङ्गवतांतथा ॥ १० ॥

...की शुद्धि होती है ॥ ३ ॥ कांसे और लोहे के पात्रादि की शुद्धि ... से और मोती, मणि, मूंगा, इन की शुद्धि जल से धोने मात्र ... है ॥ ४ ॥ जल के विकारों से पैदा हुए वस्तु, सब प्रकार के पत्थर ... शाक को छोड़ कर, मूल, फल, और उड़द, मूंग आदि दाल वाले इन ... शुद्धि धोने से होती है ॥ ५ ॥ यज्ञ कर्म में यज्ञ के पात्रों की मांजने ... चिकने पात्रों की गर्म जल से शुद्धि कही है ॥ ६ ॥ शय्या, आसन, ... शकट (गाड़ी) चटाई, इन्धन, इन की यज्ञ में जल छिड़कने से ... ॥ ७ ॥ बुहारने से घरों की और उसी समय छील देने से ... और जल के मार्जन से वस्त्रों की शुद्धि होती है ॥ ८ ॥ बहुत से ... की संहत (मिले हुए) पदार्थों की छिड़कने से और काष्ठ के ... छील देने से होती है ॥ ९ ॥ सींग और हाथी के दांत आदि ... की शुद्धि औषधियों के उबाले रस से और फल से बने पात्र, ... वाले वस्तुओं की शुद्धि गौ के चंवर से होती है ॥ १० ॥

निर्यासानांगुडानांच लवणानांतथैवच।
कुसुंभकुंकुमानांच ऊर्णाकार्पासयोस्तथा ॥ ११ ॥
प्रोक्षणात्कथितांशुद्धिरित्याहभगवान्यमः।
भूमिष्ठमुदकंशुद्धं शुचितोयंशिलागतम् ॥ १२ ॥
वर्णगन्धरसैर्दुष्टैर्वर्जितंयदितद्भवेत।
शुद्धंनदीगतंतोयं सर्वदैवतथाकरः ॥ १३ ॥
शुद्धंप्रसारितंपण्यं शुद्धेचाजाश्वयोर्मुखे।
मुखवर्जंतुगौःशुद्धा मार्जारश्चाक्रमेशुचिः ॥ १४ ॥
शय्याभार्याशिशुर्वस्त्रमुपवीतंकमण्डलुः।
आत्मनःकथितंशुद्धं नशुद्धंहिपरस्यच ॥ १५ ॥
नारीणांचैववत्सानां शकुनीनांशुनांमुखम्।
रात्रौप्रस्रवणेवृक्षे मृगयायांसदाशुचि ॥ १६ ॥
शुद्धाभर्तुश्चतुर्थेन्हि स्नानेनस्त्रीरजस्वला।
दैवेकर्मणिपित्र्येच पञ्चमेऽहनिशुद्ध्यति ॥ १७ ॥
रथ्याकर्दमतोयेन ष्ठीवनाद्येनवाप्यथ।

गोंद, गुड़, लवण, कुसुम्भ, ऊन, और कपास इन की ॥११॥ शुद्धि भी यमराजने छिड़कने से कही है। पृथिवीके शुद्ध स्थल में और शिला पर स्वतः ही शुद्ध होता है॥१२॥ यदि वह भूमिस्थ जल दुष्ट वर्ण, बुरा रस, गंध से वर्जित हो, नदी का और आकर (खान) का जल सदा ॥ १३ ॥ दूकान में फैली चीज, बकरी और घोड़े का मुख भी शुद्ध है छोड़कर गौके सब अंग शुद्ध हैं और आक्रमण (किसी जानवर को दबा डालने) में बिलाव शुद्ध है ॥ १४ ॥ शय्या, स्त्री बालक, वस्त्र, कमण्डलु, ये सब अपने ही शुद्ध कहे हैं और अन्य के नहीं ॥१५॥ स्त्री, बछड़े, पक्षि, और कुत्ते का मुख, क्रमसे रात्रि में प्रस्रवण धन चूवने में, वृक्ष से गिरने में और शिकार करने में सदैव शुद्ध है ॥ १६ ॥ रजस्वला स्त्री चौथे दिन स्नान करके अपने पति के लिये और देवता वा पितरोंके कर्म में पांचवें दिन शुद्ध हुई मानी जावे ॥ १७ ॥ यदि मनुष्य की नाभि के

नाभेरूर्द्ध्वंनरःस्पृष्टः सद्यःस्नानेनशुद्ध्यति ॥ १८ ॥
कृत्वामूत्रंपुरीषंवा स्नात्वाभोक्तुमनास्तथा ।
भुक्त्वाक्षुत्वातथासुप्त्वा पीत्वाचाम्भोऽवगाह्यच ॥१९॥
रथ्यामाक्रम्यवाऽऽचामेद्वासोविपरिधायच ।
कृत्वामूत्रंपुरीषंच लेपगन्धापहंद्विजः ॥ २० ॥
उद्धृतेनाम्भसाशौचं मृदाचैवसमाचरेत् ।
मेहनेमृत्तिकाःसप्त लिङ्गेद्वेपरिकीर्त्तिते ॥ २१ ॥
एकस्मिन्विंशतिर्हस्तेद्वयोर्ज्ञेयाश्चतुर्दश ।
तिस्रस्तुमृत्तिकाज्ञेयाः कृत्वानखविशोधनम् ॥ २२ ॥
तिस्रस्तुपादयोर्ज्ञेयाः शौचकामस्यसर्वदा ।
शौचमेतद्गृहस्थानां द्विगुणंब्रह्मचारिणाम् ॥ २३ ॥
त्रिगुणंतुवनस्थानां यतीनांतुचतुर्गुणम् ।
मृत्तिकाचविनिर्द्दिष्टा त्रिपर्वंपूर्यतेयया ॥ २४ ॥

इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

र में गांव की गली का जल या थूक लगजाय तो उसी समय स्नान करने [शु]द्ध होता है ॥१८॥ लघु शंका, मल का त्याग, भोजन करना, नाक छिनकना, [सोना], जल पीना, और जल में अवगाहन (स्नान आदि) इन कामों को करके [भोज]न से पहिले ॥१९॥ गली में चल कर और वस्त्रों को धारण करके आचमन [करे] मल मूत्र का त्याग करके द्विज जिससे दुर्गन्ध दूर हो ॥ २० ॥ ऐसी शुद्धि [कूप आ]दि से निकासे जल और मिट्टी से करै, मल मूत्र त्यागने पश्चात् गुदेन्द्रिय [में स]ात वार, लिंगेन्द्रिय में दो वार मट्टी लगानी कही है ॥ २१ ॥ एक बांय [हाथ] में बीस वार और फिर दोनों में चौदह वार, फिर नखों की शुद्धि करके [ती]न वार मट्टी लगानी जानो ॥ २२ ॥ शुद्धि की इच्छा वाले पुरुष को तीन [वा]र पगों में मट्टी लगानी कही है। यह शुद्धि गृहस्थों के लिये कही है इससे [दूनी] ब्रह्मचारियों को ॥२३॥ तिगुनी वानप्रस्थों को और चौगुनी संन्यासियों [के] लिये जानो और प्रत्येक वार में इतनी मट्टी लेवे जिससे हाथ के तीन [प]ुन भर जावें ॥ २४ ॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में सोलहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

नित्यंत्रिषवणस्नायी कृत्वापर्णकुटींवने।
अधःशायीजटाधारी पर्णमूलफलाशनः ॥ १ ॥
ग्रामंविशेच्चभिक्षार्थं स्वकर्मपरिकीर्तयन्।
एककालंसमश्नीयाद्वर्षंतुद्वादशेगते ॥ २ ॥
हेमस्तेयीसुरापश्च ब्रह्महागुरुतल्पगः।
व्रतेनैतेनशुध्यन्ते महापातकिनस्त्विमे ॥ ३ ॥
यागस्थंक्षत्रियंहत्वा वैश्यंहत्वाचयाजकम्।
एतदेवव्रतंकुर्यादात्रेयीविनिषूदकः ॥ ४ ॥
कूटसाक्ष्यंतथैवोक्त्वा निःक्षेपमपहृत्यच।
एतदेवव्रतंकुर्यात्त्यक्त्वाचशरणागतम् ॥ ५ ॥
आहिताग्नेःस्त्रियंहत्वा मित्रंहत्वातथैवच।
हत्वागर्भमविज्ञातमेतदेवव्रतंचरेत् ॥ ६ ॥
वनस्थंचद्विजंहत्वा पार्थिवंचकृतागसम्।
एतदेवव्रतंकुर्याद्द्विगुणंचविशुद्धये ॥ ७ ॥
क्षत्रियस्यचपादोनं वधेऽर्द्धंवैश्यघातने।

प्रायश्चित्ती पुरुष वन में ढांक आदि के पत्तों की कुटी बना
वसे, सायं,प्रातः,और मध्यान्ह में तीन वार स्नान करे, पृथ्वी पर
को धारण करे, वृक्षोंके पत्ते, मूल, फल, इन का भोजन करे ॥ १ ॥
को कहता हुआ भिक्षा मांगने के लिये गांव में जाय, वारह वर्ष
काल भोजन करै ॥ २ ॥ इस प्रकार सुवर्ण का चोर, ब्रह्म
सपा—गुरुस्त्री गामी, ये चारो महापातकी ब्राह्मणादि इस व्रत
हैं ॥ ३ ॥ यज्ञ करते हुए क्षत्रिय को और यज्ञ करने वाले वैश्य
और रजस्वला स्त्री को मार डालने वाला भी यही व्रत करे ॥
गवाही देकर, न्यास (धरोहर) को मार लेने पर और अपने
को त्याग करके भी यही व्रत करे ॥ ५ ॥ अग्निहोत्री की स्त्री,
बिना जाने गर्भ को मार कर भी यही व्रत करे ॥ ६ ॥ वनवासी ब्रा
अपराधी राजा इन को मार कर भी विशेष शुद्धि के लिये उक्त
करै ॥ ७ ॥ वनवासी क्षत्रिय के मारने में पौन, वनस्थ वैश्य के

अर्द्धमेवसदाकुर्यात्स्त्रीवधेपुरुषस्तथा ॥ ८ ॥
ादन्तुशूद्रहत्यायामुदक्यागमनेतथा ।
गोवधेचतथाकुर्यात्परदारगतस्तथा ॥ ९ ॥
पशून्हत्वातथाग्राम्यान् मासंकृत्वाविचक्षणः ।
आरण्यानांवधेतद्वदर्धंतुविधीयते ॥ १० ॥
हत्वाद्विजंतथासर्पजलेशयविलेशयान् ।
सप्तरात्रं तथाकुर्याद्व्रतंब्रह्महणस्तथा ॥ ११ ॥
अनस्थ्नांशकटंहत्वा सास्थ्नांदशशतंतथा ।
ब्रह्महत्याव्रतंकुर्यात्पूर्णंसंवत्सरंनरः ॥ १२ ॥
यस्ययस्यचवर्णस्य वृत्तिच्छेदंसमाचरेत् ।
तस्यतस्यवधेप्रोक्तं प्रायश्चित्तंसमाचरेत् ॥ १३ ॥
अपहृत्यतुवर्णानां भुवंप्राप्यप्रमादतः ।
प्रायश्चित्तंवधेप्रोक्तं ब्राह्मणानुमतंचरेत् ॥ १४ ॥
गोजाश्वस्यापहरणे मणीनांरजतस्य च ।
जलापहरणेचैव कुर्यात्संवत्सरव्रतम् ॥ १५ ॥
तिलानांधान्यवस्त्राणांमद्यानामामिषस्यच ।

में उक्त में से आधा व्रत करे ॥ ८ ॥ शूद्र की हत्या, रजस्वला स्त्री के गोवध, और परस्त्री के गमन में उक्त में से चौथाई व्रत को करे ॥९॥ के तथा वन के पशुओं को एक मास तक मार कर उक्त आधा व्रत कहा ॥ पक्षी, सांप, जल और बिल में रहने वाले जीव, इन को मार कर त्या का व्रत सात दिन तक करे ॥ ११ ॥ विना हड्डी वाले जीवों की गाड़ी और हाड़ वालों के एक हजार को मार कर मनुष्य एक वर्ष तक मैं ब्रह्म हत्या का व्रत करे ॥ १२ ॥ जिस २ वर्ण की जीविका में हानि उसी २ वर्ण की हत्या का प्रायश्चित्त करे ॥१३॥ वर्णों की भूमि को चोरी नजाने लेकर ब्राह्मणों की आज्ञा से हत्या का जो प्रायश्चित्त है उस को १४ ॥ गौ, बकरी, घोड़ा, मणी, चांदी, जल, इन की जो चोरी करे वह वर्ष तक उक्त व्रत करे ॥ १५ ॥ तिल, अन्न, वस्त्र, मदिरा, मांस, इन

संवत्सरार्द्धंकुर्वीत व्रतमेतत्समाहितः ॥ १६ ॥
तृणेक्षुकाष्ठतक्राणां रसानामपहारकः ।
मासमेकंव्रतंकुर्याद्गन्धानांसर्पिषांतथा ॥ १७ ॥
लवणानांगुडानांच मूलानांकुसुमस्यच ।
मासार्द्धंतुव्रतंकुर्यादेतदेवसमाहितः ॥ १८ ॥
लोहानांवैदलानांच सूत्राणांचर्मणांतथा ।
एकरात्रंव्रतंकुर्यादेतदेवसमाहितः ॥ १९ ॥
भुक्त्वापलाण्डुलशुनं मद्यंचकवकानिच ।
नारंमलंतथामांसं विड्वराहंखरंतथा ॥ २० ॥
गौधेरंकुञ्जरोष्ट्रंच सर्वंपाञ्चनखंतथा ।
क्रव्यादंकुक्कुटंग्राम्यं कुर्यात्संवत्सरव्रतम् ॥ २१ ॥
भक्ष्याःपञ्चनखास्त्वेते गोधाकच्छपशल्लकः ।
खड्गश्चशशकश्चैव तान्हत्वाचचरेद्व्रतम् ॥ २२ ॥
हंसंमद्गुंवकंकाकं काकोलंखञ्जरीटकम् ।
मत्स्यादांश्चतथामत्स्यान्वलाकंशुकसारिके ॥ २३ ॥

की चोरी करके छः महीने तक सावधानी से उक्त व्रत करै ॥ १६ ॥ तृ...
काठ, मठा, रस, सुगन्ध, घी इन का चोर एक महीना तक व्रत करै। ...
लवण, गुड़, मूल, फूल, इन की चोरी करने वाला सावधानी से ...
यही व्रत करै ॥ १८ ॥ लोहे, के पात्र वांस के पात्र, सूत, चाम, इन ...
करने वाला सावधान हो कर एकदिनरात यही व्रत करै ॥ १९ ॥ ...
(प्याज) लहशन, मदिरा, कवक (कठफूल) मनुष्य का मल, मनुष्य ...
विष्ठा खाने वाले सूकर और गधा का मांस इन को खा कर ॥ २० ॥ ...
(गोह का बच्चा) हाथी, ऊंट, सब पांच नखवाले, कच्चा मांस ...
जीव, और गांव का मुरगा इन सब का मांस खा कर एक वर्ष त...
करै ॥ २१ ॥ परन्तु गोह, कछुवा, सेही, गेंडा, खरगोश, ये पांच ...
पांच भक्ष्य हैं और इन पाचों को मारकर भी एकवर्ष तक व्रत ...
हंस—मद्गुर, (मत्स्यभेद वा जलकाक) बगुला, बलाका, कौआ, ...
खञ्जरीट(खञ्जन पक्षि) मछलीको खानेवाली—मछली, तोता, मारिका

लोहितान्वृक्षनिर्यासान्व्रश्चनप्रभवांस्तथा ॥ ३१ ॥
केवलानिचशुक्तानि तथापर्युषितंचयत् ।
गुडशुक्तंतथाभुक्त्वा त्रिरात्रंचव्रतीभवेत् ॥ ३२ ॥
दधिभक्ष्यंचशुक्तेषु यच्चान्यद्दधिसंभवम् ।
गुडशुक्तंतुभक्ष्यंस्यात् ससर्पिष्कमितिस्थितिः ॥ ३३ ॥
यवगोधूमजाःसर्वे विकाराःपयसश्चये ।
राजवाडवकुल्यंच भक्ष्यंपर्युषितंभवेत् ॥ ३४ ॥
सजीवपक्वमांसंच सर्वंयत्नेनवर्जयेत् ।
संवत्सरंव्रतंकुर्यात् प्राश्यैतान्ज्ञानतस्तुतान् ॥ ३५ ॥
शूद्रान्नंब्राह्मणोभुक्त्वा तथारङ्गावतारिणः ।
चिकित्सकस्यक्षुद्रस्य तथास्त्रीमृगजीविनः ॥ ३६ ॥
षण्डस्यकुलटायाश्च तथाबन्धनचारिणः ।
वद्धस्यचैवचोरस्य अवीरायाःस्त्रियस्तथा ॥ ३७ ॥
चर्मकारस्यवेनस्य क्लीबस्यपतितस्यच ।
रुक्मकारस्यधूर्त्तस्य तथावार्द्धुषिकस्यच ॥ ३८ ॥
कदर्यस्यनृशंसस्य वेश्यायाःकितवस्यच ।

गोदने से निकलेहों॥३१॥ केवल शुक्त (खटाये हुए) और वासी पदार्थ ... बिगड़ा हुआ गुड़का विकार इन को खाकर तीन दिन व्रत करे ॥३२॥ ... कार से खटाये हुए पदार्थों में दही, तथा दही से बने कढ़ी, ... जिस में मिला हो ऐसा खटाया गुड़ ये शुक्तों में भक्ष्य कहे हैं ॥३३॥ ... गेहूं, दूध,—इन से बने सब विकार और राजवाड़व नामक जीव का ... ये वासी (धरे हुए) भी भक्ष्य हैं ॥३४॥ जीते जीवों के पकाये मांस ... प्रकार त्याग देवे और इन पूर्वोक्त अभक्ष्य पदार्थों को ज्ञान पूर्वक खा ... एक वर्ष तक व्रत करे॥३५॥ शूद्र, रंगावतारी (नाटकी) वैद्य, क्षुद्रबुद्धि ... नचा के तथा मृगों को मार के जीविका करने वाला ॥३६॥ नपुंसक, ... रिणी स्त्री, बन्धन चारी, (डाकिये) कैदी चोर, पति पुत्र हीन स्त्री ॥३७॥ ... चमार, वेन, क्लीब, (नामर्द) पतित, सुनार, धूर्त नाम अन्य की हानि ... वाला, ब्याज लेने वाला, ॥ ३८ ॥ कंजूस, हिंसक, वेश्या, जुआरी, इन ...

गणान्नंभूमिपालान्नमन्नंचैवश्वजीविनाम् ॥ ३९ ॥
मौञ्जिकान्नंसूतिकान्नं भुक्त्वामासंव्रतंचरेत् ।
शूद्रस्यसततंभुक्त्वा षण्मासान्व्रतमाचरेत् ॥ ४० ॥
वैश्यस्यतुतथाभुक्त्वा त्रीन्मासान्व्रतमाचरेत् ।
क्षत्रियस्यतथाभुक्त्वा द्वौमासौव्रतमाचरेत् ॥ ४१ ॥
ब्राह्मणस्यतथाभुक्त्वा मासमेकंव्रतंचरेत् ।
आपःसुराभाजनस्थाः पीत्वापक्षंव्रतंचरेत् ॥ ४२ ॥
मद्यभाण्डगताःपीत्वा सप्तरात्रंव्रतंचरेत् ।
शूद्रोच्छिष्टाशनेमासं पक्षमेकंतथाविशः ॥ ४३ ॥
क्षत्रियस्यतुसप्ताहं ब्राह्मणस्यतथादिनम् ।
अग्रश्राद्धाशनेविद्वान् मासमेकंव्रतीभवेत् ॥ ४४ ॥
परिवित्तिःपरिवेत्ता ययाचपरिविन्दति ।
व्रतंसंवत्सरंकुर्युर्दातृयाजकपञ्चमाः ॥ ४५ ॥
काकोच्छिष्टंगवाघ्रातं भुक्त्वापक्षंव्रतीभवेत् ।

अन्न, बहुत मनुष्यों के चन्दे का अन्न, राजा का अन्न, शिकारी कुत्ते रखने
अन्न, बहुत मनुष्यों के चन्दे का अन्न, राजा का अन्न, शिकारी कुत्ते रखने
ों का अन्न, ॥३९॥ मूंज के व्यापारी और सूतिका का अन्न खाकर एक मास
व्रत करे और निरन्तर शूद्र के अन्न को खाकर छः मास तक व्रत करे
। वैश्यका अन्न निरन्तर खाकर तीन महीने और क्षत्रिय का अन्न निरन्तर
र दो महीने व्रत करे ॥ ४१ ॥ ब्राह्मणका अन्न निरन्तर खाकर एक महीने
व्रत करे और मदिरा के पात्र में रक्खा जल पीकर पन्द्रह दिन तक व्रत
॥४२॥ गुड़ की मदिरा के पात्र का जलपीकर सातदिन व्रत करे। शूद्रका उ-
ष्ट खाकर एक महीना और वैश्य का उच्छिष्ट खाकर पन्द्रह दिन व्रत करे
। ॥ क्षत्रिय का उच्छिष्ट अन्न खाकर सात दिन, ब्राह्मण का उच्छिष्ट अन्न
र एक दिन और त्रयोदशाह के श्राद्ध में खाकर एक महीना ज्ञानवान्
प व्रत करे ॥ ४४ ॥ परिवेत्ता, परिवित्ति, जिस स्त्री के साथ परिवेत्ता ने
भाई से पहिले विवाह किया हो वह स्त्री, कन्या का दाता और पांच-
याजक (विवाह पढ़ने वाला) ये पांचों एक वर्ष तक व्रत करें ॥ ४५ ॥
वे का उच्छिष्ट, गौ का सूंघा अन्न इनको खाकर पंद्रह दिन व्रत करे और
न, कीड़ा, मूसा, हल—इन से जो दूषित हो अर्थात् चाल आदि पड़ गये हों

लोहितान्वृक्षनिर्यासान्व्रश्चनप्रभवांस्तथा ॥ ३
केवलानिचशुक्तानि तथापर्युषितंचयत् ।
गुडशुक्तंतथाभुक्त्वा त्रिरात्रंचव्रतीभवेत् ॥ ३ ।
दधिभक्ष्यंचशुक्तेषु यच्चान्यद्दधिसंभवम् ।
गुडशुक्तंतुभक्ष्यंस्यात् ससर्पिष्कमितिस्थितिः ।
यवगोधूमजाःसर्वे विकाराःपयसश्चये ।
राजवाडवकुल्यंच भक्ष्यंपर्युषितंभवेत् ॥ ३ ॥
सजीवपक्वंमांसंच सर्वयत्नेनवर्जयेत् ।
संवत्सरंव्रतंकुर्यात् प्राश्यैतानज्ञानतस्तुतान्
शूद्रान्नंब्राह्मणोभुक्त्वा तथारङ्गावतारि
चिकित्सकस्यक्षुद्रस्य तथास्त्रीमृगजी
पण्डस्यकुलटायाश्च तथाबन्धनचा
वद्धस्यचैवचोरस्य अवी
चर्मकारस्यवेनस्य क्लीव

संवत्सरंव्रतंकुर्याच्छित्वावृक्षंफलप्रदम् ॥ ५३ ॥
दिवाचमैथुनंगत्वा स्नात्वानग्नस्तथाम्भसि ।
नग्नांपरस्त्रियंदृष्ट्वा दिनमेकंव्रतीभवेत् ॥ ५४ ॥
क्षिप्त्वाग्नावशुचिद्रव्यं तदेवाम्भसिमानवः ।
मासमेकंव्रतंकुर्यादुपक्रुध्यतथागुरुम् ॥ ५५ ॥
पीतावशेषपानीयं पीत्वाचब्राह्मणःक्वचित् ।
त्रिरात्रंतुव्रतंकुर्याद्वामहस्तेनवापुनः ॥ ५६ ॥
एकपङ्क्त्युपविष्टेषु विषमंयःप्रयच्छति ।
सचतावदसौपक्षं कुर्यात्तुब्राह्मणोव्रतम् ॥ ५७ ॥
धारयित्वा तुलाचार्यं विषमं कारयेद्बुधः ।
सुरालवणमद्यानां दिनमेकंव्रतीभवेत् ॥ ५८ ॥
मांसस्यविक्रयंकृत्वा कुर्याच्चैवमहाव्रतम् ।
विक्रीयपणिनामद्यं तिलस्यचतथाचरेत् ॥ ५९ ॥
हुंकारंब्राह्मणस्योक्त्वा त्वंकारंचगरीयसः ।
दिनमेकंव्रतंकुर्यात् प्रयतःसुसमाहितः ॥ ६० ॥
प्रेतस्यप्रेतकार्याणि अकृत्वाधनहारकः ।

(वृक्ष) में पीठ दे कर भाग आवे तो एक वर्ष तक व्रत करे, फल देने वाले वृक्ष को काट कर ॥ ५३ ॥ दिन में मैथुन करके, नंगा होकर जलाशय में स्नान करके और अन्य की स्त्री को नगी देखकर एक दिन व्रत करे ॥ ५४ ॥ अग्नि और जल में अशुद्ध पदार्थ डाल कर, और गुरु पर क्रोध करके एक मास व्रत करे ॥ ५५ ॥ और पीने से बचे पानी को ब्राह्मण कदाचित् पीकर, वा बांये हाथ से जल पीकर तीन दिन व्रत करे॥ ५६ ॥ एक पङ्क्ति में बैठे हुओं के आगे जो विषम किसी मित्र वा प्रतिष्ठित को उत्तम पदार्थ तथा औरों को साधारण वस्तु परोसे जिसको अच्छा परोसा हो वह और परोसने वाला दोनों पन्द्रह दिन व्रत करें ॥ ५७ ॥ तौला को रखकर जो कम तुलवावे ॥ सुरा, मदिरा, लवण, मद्य, इनको बेंचे वा बिकवावे वह एक दिन व्रत करे ॥ ५८ ॥ मांस को बेंच कर महाव्रत करे। अपने हाथ से मदिरा और तिलों को बेंच कर भी महाव्रत करे ॥ ५९ ॥ और ब्राह्मण को हुं: और बड़े प्रतिष्ठित पुरुष को तू कह कर सावधान होके एकाग्र मन से एक दिन व्रत करे ॥६०॥ मरे मनुष्य के दाहादि कर्म न करके उस के धनादि सामान को लेने

दूषितंकेशकीटैश्च मूषिकालाङ्गलेनच ॥ ४६ ॥
मक्षिकामशकेनापि त्रिरात्रंतुव्रतीभवेत् ।
वृथाकृसरसंयावपायसापूपशष्कुलीः ॥ ४७ ॥
भुक्त्वात्रिरात्रंकुर्वीत व्रतमेतत्समाहितः ।
नील्याचैवक्षतोविप्रः शुनादष्टस्तथैवच ॥ ४८ ॥
त्रिरात्रंतुव्रतंकुर्यात् पुंश्चलीदशनक्षतः ।
पादप्रतापनंकृत्वा वन्हिंकृत्वातथाप्यधः ॥ ४९ ॥
कुशैःप्रमृज्यपादौच दिनमेकंव्रतीभवेत् ।
नीलीवस्त्रंपरीधाय भुक्त्वास्नानार्हणस्तथा ॥ ५० ॥
त्रिरात्रंचव्रतंकुर्याच्छित्वागुल्मलतास्तथा ।
अभ्यास्यशयनंयानमासनंपादुकेतथा ॥ ५१ ॥
पलाशस्यद्विजश्रेष्ठस्त्रिरात्रंतुव्रतीभवेत् ।
वाग्दुष्टंभावदुष्टंच भाजनेभावदूषिते ।
भुक्त्वान्नंब्राह्मणः पश्चात्त्रिरात्रंतुव्रतीभवेत् ॥ ५२ ॥
क्षत्रियस्तुरणेदत्त्वा पृष्ठंप्राणपरायणः ।

या मूसादि ने खाया हो ॥ ४६ ॥ मक्खी-मच्छर इन से दूषित [illegible]
को खा कर तीन दिन व्रत करे-और वृथा (केवल अपने लिये [illegible]
हुए दाल चावल की खिचड़ी) संयाव (मोहनभोग) खीर, पू[illegible]
इनको खा कर सावधानी से तीन दिन तक व्रत करे। जिस ब्राह्मण [illegible]
में नील की लकड़ी से घाव हो जाय वा जिस को कुत्ता काटे [illegible]
तीन दिन व्रत करे, जिसके पुंश्चली (वेश्या आदि व्यभिचारिणी [illegible]
से घाव हो जाय और नीचे अग्नि रखकर जो पग तपावे [illegible]
से पगों को शुद्ध कर के एक दिन व्रत करे। और नील का [illegible]
कर और जिस के छूने से स्नान करना योग्य है [illegible]
तीन दिन व्रत करे गुल्म (कुञ्ज) लता इन को [illegible]
खड़ाऊँ, आसन पलङ्ग या पलंग और खड़ाऊँ इन [illegible]
के बढ़िया आदि पत्र पलाश (ढाक) के [illegible]
करे। वाणी से और भावना से दूषित पदार्थ और [illegible]
पात्र में अर्थात् जो निन्दित [illegible]
[illegible]

घमर्षणमित्येतद् व्रतंसर्वाघनाशनम् ॥२॥
यहंसायंत्र्यहंप्रातस्त्र्यहमद्यादयाचितम् ।
यहंपरंचनाश्नीयात्प्राजापत्यंचरन्व्रतम् ॥३॥
यहमुष्णंपिबेत्तोयं त्र्यहमुष्णंघृतंपिबेत् ।
यहमुष्णंपयःपीत्वा वायुभक्षस्त्र्यहंभवेत् ॥ ४ ॥
प्तकृच्छ्रंविजानीयाच्छीतैः शीतमुदाहृतम् ।
ादशाहोपवासेन पराकःपरिकीर्तितः ॥ ५ ॥
वधिनोदकसिद्धान्नं समश्नीयात्प्रयत्नतः ।
क्तुद्वासोदकान्मासंकृच्छ्रंवारुणमुच्यते ॥ ६ ॥
बिल्वैरामलकैर्वापि पद्माक्षैरथवाशुभैः ।
मासेनलोकेऽतिकृच्छ्रः कथ्यतेबुद्धिसत्तमैः ॥ ७ ॥
गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ।
एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रंसांतपनंस्मृतम् ॥ ८ ॥
एतैस्तुत्र्यहमभ्यस्तं महासांतपनंस्मृतम् ।

न दिन का अघमर्षण व्रत सब पापों का नाशक है ॥ २ ॥ जो मनुष्य
त्य व्रत करे वह तीन दिन तक सायंकाल, तीन दिन तक प्रातःकाल,
दिनतक जो विनामांगे मिले उसे खावे और तीनदिन तक सर्वथा भोजन
निराहार रहे ॥३॥ तीनदिन तक गर्म जल, तीनदिन गर्म घी, तीनदिन
में दूध पीवे और तीन दिन वायु मात्र का भक्षण करे अन्य कुछ न
४॥ इस को तप्तकृच्छ्र कहते और पूर्वोक्त क्रमसे यदि शीतल जल आदि
ो शीत कृच्छ्र कहा जायगा । और बारह दिनके उपवास से शुद्ध पराक
व्रत कहाता है ॥ ५ ॥ विधि पूर्वक जल से बनाये अन्न को बड़े यत्न से
वे यदि वह मनुष्य एक महीने तक सोदक करै अर्थात् भोजन के विना
पीवे उसे वारुण कृच्छ्र कहते हैं ॥ ६ ॥ बेल, आंवले, अच्छे कमलगट्टे,
। एक महीने खाने से बुद्धिमानों ने अतिकृच्छ्र कहा है ॥ ७ ॥ गोमूत्र
दूध, दही, घी, कुशा का जल इन सबको एक दिन खाना और एक दिन
वास करना इस को सांतपन कृच्छ्र कहते हैं ॥ ८ ॥ तीन दिन तक
करने से महासांतपन कहाता है । तिलों का खल विना जल का मठा,

वर्णानांयद्व्रतंप्रोक्तं तद्व्रतंप्रयतश्चरेत् ॥ ६१ ॥
कृत्वापापंनगूहेत गूह्यमानंविवर्द्धते ।
कृत्वापापंबुधःकुर्यात् पर्षदोऽनुमतंव्रतम् ॥ ६२ ॥
तस्करश्वापदाकीर्णे बहुव्यालमृगेवने ।
नव्रतंब्राह्मणःकुर्यात् प्राणबाधाभयात्सदा ॥ ६३ ॥
सर्वत्रजीवनंरक्षेज्जीवन्पापमपोहति ।
व्रतैःकृच्छ्रैश्चदानैश्च इत्याहभगवान्यमः ॥ ६४ ॥
शरीरंधर्मसर्वस्वं रक्षणीयंप्रयत्नतः ।
शरीरात्स्रवतेधर्मः पर्वतात्सलिलंयथा ॥ ६५ ॥
आलोच्यधर्मशास्त्राणि समेत्यब्राह्मणैःसह ।
प्रायश्चित्तंद्विजोदद्यात् स्वेच्छयानकदाचन ॥ ६६ ॥

इति श्रीशांखे धर्मशास्त्रे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

त्र्यहंत्रिषवणस्नायी स्नानेस्नानेऽघमर्षणम् ।
निमग्नस्त्रिःपठेदप्सु नभुञ्जीतदिनत्रयम् ॥ १ ॥
वीरासनंचतिष्ठेत गांदद्याच्चपयस्विनीम् ।

वाला, ब्राह्मणादि वर्णों को जो २ व्रत कहा है उसी को मन लगाके ... पाप को करके न छिपावे क्योंकि छिपानेसे पाप बढ़ता है । ... को करके ज्ञानवान् पुरुष धर्मसभा की अनुमति से व्रत करे ॥ ६२ ॥ ... ड़िया, सांप मृग ये जिस में हों ऐसे वन में ब्राह्मण प्राणों के भय से व्रत न करे ॥ ६३ ॥ क्योंकि जीवन की रक्षा सब जगह करनी चाहिये ... रहता हुआ मनुष्य कृच्छ्र प्राजापत्यादि व्रतों तथा दानों के द्वारा ... दूर कर सकता है यह बात भगवान् धर्मशास्त्रकर्त्ता यम ने कही है ॥ ६४ ॥ ... का सर्वस्व जो शरीर है उस की प्रयत्न से रक्षा करनी चाहिये । ... इस प्रकार निकलता है जैसे पर्वत में से जल के झरने निकलते हैं ॥ ६५ ॥ ... से ब्राह्मणों के संग मिल के धर्मशास्त्रों को देख विचार कर द्विज ... अपराधी को प्रायश्चित्त बतावे किन्तु अपनी इच्छा से कभी न ...

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में सत्रहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

तीन दिन तक त्रिकाल स्नान करे और तीनों स्नानों में ... हुआ तीन २ बार अघमर्षण सूक्त जपे और तीन दिन तक भोजन ... निराहार व्रत करे ॥ १ ॥ वीरासन से बैठा रहे और दूध देनेवाली गौ ...

घमर्पणमित्येतद् व्रतंसर्वाघनाशनम् ॥२॥
यहंसायंत्र्यहंप्रातस्त्र्यहमद्यादयाचितम् ।
यहंपरंचनाश्नीयात्प्राजापत्यंचरन्व्रतम् ॥३॥
यहमुष्णंपिबेत्तोयं त्र्यहमुष्णंघृतंपिबेत् ।
यहमुष्णंपयःपीत्वा वायुभक्षस्त्र्यहंभवेत् ॥ ४ ॥
प्तकृच्छ्रंविजानीयाच्छीतैः शीतमुदाहृतम् ।
ादशाहोपवासेन पराकःपरिकीर्तितः ॥ ५ ॥
वधिनोदकसिद्धान्नं समश्नीयात्प्रयत्नतः ।
क्तुद्वासोदकान्मासंकृच्छ्रंवारुणमुच्यते ॥ ६ ॥
वल्वैरामलकैर्वापि पद्माक्षैरथवाशुभैः ।
ासेनलोकेऽतिकृच्छ्रः कथ्यतेबुद्धिसत्तमैः ॥ ७ ॥
गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ।
एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रंसांतपनंस्मृतम् ॥ ८ ॥
एतैस्तुत्र्यहमभ्यस्तं महासांतपनंस्मृतम् ।

न दिन का अघमर्षण व्रत सब पापों का नाशक है ॥ २ ॥ जो मनुष्य
त्य व्रत करे वह तीन दिन तक सायंकाल, तीन दिन तक प्रातःकाल,
दिनतक जो विनामांगे मिले उसे खावे और तीनदिन तक सर्वथा भोजन
निराहार रहे ॥३॥ तीनदिन तक गर्म जल, तीनदिन गर्म घी, तीनदिन
र्म दूध पीवे और तीन दिन वायु मात्र का भक्षण करे अन्य कुछ न
४॥ इस को तप्तकृच्छ्र कहते और पूर्वोक्त क्रमसे यदि शीतल जल आदि
ो शीत कृच्छ्र कहा जायगा । और बारह दिनके उपवास से शुद्ध पराक
व्रत कहाता है ॥ ५ ॥ विधि पूर्वक जल से बनाये अन्न को बड़े यत्न से
वे यदि वह मनुष्य एक महीने तक सोदक करे अर्थात् भोजन के बिना
पीवे उसे वारुण कृच्छ्र कहते हैं ॥ ६ ॥ बेल, आंवले, अच्छे कमलगट्टे,
ा एक महीने खाने से बुद्धिमानों ने अतिकृच्छ्र कहा है ॥ ७ ॥ गोमूत्र
दूध, दही, घी, कुशा का जल इन सब को एक दिन खाना और एक दिन
वास करना इस को सांतपन कृच्छ्र कहते हैं ॥ ८ ॥ तीन दिन तक
करने से महासांतपन कहाता है । तिलों का खल विना जल का मठा,

पिण्याकंवामतक्रांबुसक्तूनांप्रतिवासरम् ॥ ९ ॥
उपवासान्तराभ्यासात्तुलापुरुषउच्यते ।
गोपुरीषाशनोभूत्वा मासंनित्यंसमाहितः ॥ १० ॥
व्रतंतुयावकंकुर्यात्सर्वपापापनुत्तये ।
ग्रासंचन्द्रकलावृद्ध्या प्राश्नीयाद्वर्द्धयन्सदा ॥ ११ ॥
ह्रासयेच्चकलावृद्ध्या व्रतंचान्द्रायणंचरन् ।
मुण्डस्त्रिपवणस्नायी अधःशायीजितेन्द्रियः ॥ १२ ॥
स्त्रीशूद्रपतितानांच वर्जयेत्परिभाषणम् ।
पवित्राणिजपेच्छक्त्या जुहुयाच्चैवशक्तितः ॥ १३ ॥
अयंविधिःसविज्ञेयः सर्वकृच्छ्रेषुसर्वदा ।
पापात्मानस्तुपापेभ्यः कृच्छ्रैःसंतारितानराः ॥ १४ ॥
गतपापादिवंयान्ति नात्रकार्याविचारणा ।
शंखप्रोक्तमिदंशास्त्रं योऽधीतेबुद्धिमान्नरः ॥ १५ ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तस्स्वर्गलोकेमहीयते ॥ १६ ॥

इतिशांखेधर्मशास्त्रेअष्टादशोऽध्यायः॥१८॥इतिशंखस्मृतिः

सत्तू इन के प्रतिदिन ॥९॥ बीच २ में उपवास करने सभ्यास [illegible] पुरुष व्रत कहा है । गोवर को एक महीने तक प्रतिदिन [illegible] ॥१०॥ सब पापों के नाश के लिये इस यावक व्रत को करे । [illegible] की वृद्धि के साथ २ एक २ ग्रास प्रति दिन बढ़ाकर खावे ॥११॥ [illegible] की हानि के साथ २ एक २ ग्रास प्रति दिन यह पुरुष घटावे [illegible] व्रत करे । मुंडन किये हुये त्रिकाल स्नान करे भूमि पर सोवे इन्द्रियों [illegible] ॥१२॥ स्त्री, शूद्र, पतित नीच इनके संग न बोले पवित्र [illegible] को जपे और यथा शक्ति होम करे ॥ १३ ॥ यह विधान सब कृच्छ्रों [illegible] जानो । कृच्छ्रों के प्रताप से पापों से छूटे पापी पुरुष ॥१४॥ [illegible] जिन का ऐसे होकर स्वर्ग में जाते हैं इस में कुछ सन्देह नहीं है [illegible] के कहे इस शास्त्र को जो बुद्धिमान् नर पढ़ता है ॥ १५ ॥ [illegible] पवन् होकर स्वर्गलोक में पूजता है ॥१६॥

यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में अष्टादश अध्याय पूरा हुआ
और यह ग्रन्थ भी समाप्त हुआ ॥

अथलिखितस्मृतिप्रारम्भः ॥

इष्टापूर्त्ततुकर्तव्ये ब्राह्मणेनप्रयत्नतः ।
इष्टेनलभतेस्वर्गं पूर्त्तेमोक्षमवाप्नुयात् ॥ १ ॥
एकाहमपिकर्त्तव्यं भूमिष्ठमुदकंशुभम् ।
कुलानितारयेत्सप्त यत्रगौर्वितृपीभवेत् ॥ २ ॥
भूमिदानेनयेलोका गोदानेनचकीर्त्तिताः ।
तांल्लोकान्प्राप्नुयान्मर्त्यः पादपानांप्ररोपणे ॥ ३ ॥
वापीकूपतडागानि देवतायतनानिच ।
पतितान्युद्धरेद्यस्तु सपूर्त्तफलमश्नुते ॥ ४ ॥
अग्निहोत्रंतपःसत्यं वेदानांचैवपालनम् ।
आतिथ्यंवैश्वदेवंच इष्टमित्यभिधीयते ॥ ५ ॥
इष्टापूर्त्तंद्विजातीनां सामान्योधर्मउच्यते ।

ब्राह्मण प्रयत्न से इष्ट (श्रौत अग्निहोत्रादि) और पूर्त (कूप वन [illegible] [illegible] पैदाना आदि) धर्म के कार्मों को यत्न से करे क्योंकि इष्ट से स्वर्ग [illegible]ता और पूर्त से मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १ ॥ जिसमें एक गौ की प्यास [illegible]त होजाय इतना जल यदि एक दिन भी पृथिवी में भी करदे, यह सात [illegible] को तारता है ॥ २ ॥ भूमि और गौ के दान से जिन लोकों के भोग [illegible]ते हैं उन्हीं लोकों को वृक्षों के लगाने से मनुष्य प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ [illegible]ड़ी, कुआ, तालाब, और देवताओं के मन्दिर, इन में जो २ टूटे फूटे हु- [illegible] गये हों, उन को जो ठीक २ करता है वह भी पूर्त कर्मों के [illegible] को भोगता है ॥ ४ ॥ अग्निहोत्र, तप, सत्य, वेदों की रक्षा, अतिथिसत्का- र और वैश्वदेव, इन सब को इष्ट कहते हैं ॥ ५ ॥ द्विजातियों के इष्ट पूर्त (वापी कूप तालाब देव मन्दिरादि का बनवाना) साधारण धर्म

पिण्याकंवामतक्रांवुसक्तूनांप्रतिवासरम् ॥९॥
उपवासान्तराभ्यासात्तुलापुरुषउच्यते।
गोपुरीषाशनोभूत्वा मासंनित्यंसमाहितः॥१०॥
व्रतंतुयावकंकुर्यात्सर्वपापापनुत्तये।
ग्रासंचन्द्रकलावृद्ध्या प्राश्नीयाद्वर्द्धयन्सदा॥
ह्रासयेच्चकलावृद्ध्या व्रतंचान्द्रायणंचरन्।
मुण्डस्त्रिषवणस्नायी अधःशायीजितेन्द्रियः॥
स्त्रीशूद्रपतितानांच वर्जयेत्परिभाषणम्।
पवित्राणिजपेच्छक्त्या जुहुयाच्चैवशक्तितः॥
अयंविधिःसविज्ञेयः सर्वकृच्छ्रेषुसर्वदा।
पापात्मानस्तुपापेभ्यः कृच्छ्रैःसंतारितानराः
गतपापादिवंयान्ति नात्रकार्याविचारणा।
शंखप्रोक्तमिदंशास्त्रं योऽधीतेबुद्धिमान्नरः॥
सर्वपापविनिर्मुक्तस्स्वर्गलोकेमहीयते॥१६
इतिशांखेधर्मशास्त्रेअष्टादशोऽध्यायः॥१८॥इतिशं

सत्तू इन के प्रतिदिन ॥९॥ बीच २ में उपवास करके अभ्यास
पुरुष व्रत कहा है। गोवर को एक महीने तक प्रतिदिन
॥१०॥ सब पापों के नाश के लिये इस यावक व्रत का करे
की वृद्धि के साथ २ एक २ ग्रास प्रति दिन बढ़ाकर
की हानि के साथ २ एक २ ग्रास प्रति दिन यह पुरुष
व्रत करे। मुंडन किये हुये त्रिकाल स्नान करे भूमि पर
॥१२॥ स्त्री, शूद्र, पतित नीच इनके संग न बोले पवित्रता के
को जपे और यथा शक्ति होम करे ॥ १३ ॥ यह विधान
जानो। कृच्छ्रों के प्रताप से पापों से छूटे पापी पुरुष ॥१४॥
जिन का ऐसे होकर स्वर्ग में जाते हैं इस में कुछ सन्देह नहीं है।
के कहे इस शास्त्र को जो बुद्धिमान् नर पढ़ता है ॥ १५ ॥
पृथक् होकर स्वर्गलोक में पूजता है ॥१६॥
यह शंखस्मृति के भाषानुवाद में अठारहवां अध्याय हुआ
और यह ग्रन्थ भी समाप्त हुआ॥

...वृषोत्सर्गं तंनयेद्ब्रह्मशाश्वतम् ॥ १३ ॥
लोहितोयस्तुवर्णेन शंखवर्णखुरस्तथा ।
लाङ्गूलशिरसोश्चैव सवैनीलवृषःस्मृतः ॥ १४ ॥
नवश्राद्धंत्रिपक्षेच द्वादशस्त्वेवमासिकम् ।
षण्मासेचाब्दिकंचैव श्राद्धान्येतानिषोडश ॥ १५ ॥
यस्यैतानिनकुर्वीत एकोद्दिष्टानिषोडश ।
पिशाचत्वंस्थिरन्तस्य दत्तैःश्राद्धशतैरपि ॥ १६ ॥
सपिण्डीकरणादूर्ध्वं प्रतिसंवत्सरंद्विजः ।
मातापित्रोःपृथक्कुर्यादेकोद्दिष्टंमृतेऽहनि ॥ १७ ॥
वर्षेवर्षेतुकर्तव्यं मातापित्रोरनुसन्ततम् ।
अदैवंभोजयेच्छ्राद्धं पिण्डमेकन्तुनिर्वपेत् ॥ १८ ॥
संक्रान्तावुपरागच पर्वण्यपिमहालये ।
निर्वाप्यास्तुत्रयःपिण्डा एकन्तु...ऽहनि ॥ १९ ॥
एकोद्दिष्टंपरित्यज्य पार्वणं...
...कुर्वन्त्तद्विजानीयात् समान...
अमावास्यांक्षयोयस्य प्रेतपक्षे...
...नातन ग्रन्थ...

अधिकारोभवेच्छूद्रः पूर्त्तधर्मेनवैदिके ॥ ६ ॥
यावदस्थिमनुष्यस्य गंगातोयेपुतिष्ठति ।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोकेमहीयते ॥ ७ ॥
देवतानांपितॄणांच जलेदद्याज्जलाञ्जलिम् ।
असंस्कृतमृतानांच स्थलेदद्याज्जलाञ्जलिम् ॥ ८ ॥
एकादशाहेप्रेतस्य यस्यचोत्सृजतेवृषः ।
मुच्यतेप्रेतलोकात्तु पितृलोकंसगच्छति ॥ ९ ॥
एष्टव्याबहवःपुत्रा यद्येकोपिगयांव्रजेत् ।
यजेतवाश्वमेधेन नीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥ १० ॥
वाराणस्यांप्रविष्टस्तु कदाचिन्निष्क्रमेद्यदि ।
हसन्तितस्यभूतानि अन्योन्यंकरताडनैः ॥ ११ ॥
गयाशिरेतुयत्किंचिन्नाम्नापिण्डन्तुनिर्वपेत् ।
नरकस्थोदिवंयाति स्वर्गस्थोमोक्षमाप्नुयात् ॥ १२ ॥
आत्मनोवापरस्यापि गयाक्षेत्रेयतस्ततः ।

चाहे हैं । शूद्र मनुष्य पूर्त्त धर्म का अधिकारी है, वेदोक्त इष्ट धर्म का नहीं
मनुष्य की हड्डी जब तक गंगा जल में पड़ी रहती हैं, उतने ही हजार वर्ष
वह स्वर्ग लोक में पुजता है ॥ ७ ॥ देवता और पितरों को जलाशय में,
संस्कार से पहिले जो मरे हों, उन को स्थल में तर्पण के समय जल की
देवे ॥ ८ ॥ जिस मनुष्य के मरने पर ग्यारहवें दिन वृषोत्सर्ग होता है वह
योनि से छूट कर पितृलोक में जाता है ॥९॥ बहुत से पुत्रों की इच्छा
चाहिये, यदि उन में से एक भी गया को जाय, वा अश्वमेध यज्ञ करे वा
नील बैल का उत्सर्ग करे, वही पुत्र पिता को तारने वाला होता है ॥
कोई मनुष्य काशी में जाकर यदि कदाचित् वहां से निकल आता है
उस को सब भूत आपस में ताली देकर हंसते हैं ॥ ११ ॥ गया में आद्र
किसी के नाम से पिण्ड दान करै, यदि वह नरक में हो तो स्वर्ग में
और स्वर्ग में हो तो मुक्त हो जाता है ॥ १२ ॥ अपने कुल के वा अन्य
मित्र सम्बन्धी आदि जिस किसी के नाम से गया में पिण्ड देवे, वह नित्

सपिण्डीकरणादूर्ध्वं तस्योक्तःपार्वणोविधिः ॥
त्रिदण्डग्रहणादेव प्रेतत्वंनैवजायते ।
अहन्येकादशेप्राप्ते पार्वणंतुविधीयते ॥ २२ ॥
यस्यसंवत्सरादर्वाक् सपिण्डीकरणंस्मृतम् ।
प्रत्यहन्तत्सोदकुंभं दद्यात्संवत्सरंद्विजः ।
पत्याचैकेनकर्तव्यं सपिण्डीकरणंस्त्रियाः ॥ २३ ॥
पितामह्यापितत्तस्मिन्सत्येवन्तुक्षयेऽहनि ।
तस्यांसत्यांप्रकर्त्तव्यं तस्याःश्वश्र्वेतिनिश्चितम् ॥ २४ ॥
विवाहेचैवनिर्वृत्ते चतुर्थेऽहनिरात्रिषु ।
एकत्वंसागताभर्त्तुः पिण्डेगोत्रेचसूतके ॥ २५ ॥
स्वगोत्राद्भ्रश्यतेनारी उद्वाहात्सप्तमेपदे ।
भर्तृगोत्रेणकर्त्तव्या दानंपिण्डोदकक्रिया ॥ २६ ॥
द्विमातुःपिण्डदानंतु पिण्डेपिण्डेद्विनामतः ।

अथवा कनागतों में मरे उसके निमित्त सपिण्डी श्राद्ध किये पीछे भी ... दिन भी पार्वण करे ॥ २१ ॥ अपने कुल का पितादि कोई पुरुष संन्यासी हो जाने बाद मरे तो वह प्रेतयोनि में नहीं जाता, इस से उसके ... न करे, किन्तु ग्यारहवें दिन पार्वण श्राद्ध करे॥२२॥ एक वर्ष से पहिले ... का सपिण्डी करण कहा है उस के लिये ब्राह्मणादि द्विज प्रति दिन ... भरा घट दान करे। स्त्री का सपिण्डीकरण श्राद्ध एक पति के संग ही करे ... पति जीता हो, तो क्षयाह श्राद्ध पितामही के संग करे, यदि पितामही ... भी विद्यमान हो, तो उस की सासु के संग सपिण्डीश्राद्ध करे॥२४॥ विवाह हो जाने पर चौथे दिन की रात्रि में वह स्त्री पति के संग पिण्ड, गोत्र, और ... में एक हो जाती है अर्थात् चतुर्थी कर्म के समय स्त्री अपने पति के ... गोत्र और सूतक में मिल जाती है ॥ २५ ॥ विवाह के पीछे सप्तपदी ... जाने पर कन्या पिता के गोत्र से भ्रष्ट हो जाती है। इस कारण ... पश्चात् मरे, तो पति के गोत्र से ही उसके निमित्त दान पिण्ड और ... ञ्जलि आदि जलदान कर्म करे ॥२६॥ जिन के दो 'माता' हों, वह ... में दोनों का नाम ले लेकर दो पिण्ड देवे। पिता, चाचा, ...

तस्मिन्नहनिकर्तव्या दानपिण्डोदकक्रिया॥ ३४॥
वर्षवृद्ध्यभिषेकादि कर्तव्यमधिकेनतु।
अधिमासेतुपूर्वंस्याच्छ्राद्धंसंवत्सरादपि॥ ३५॥
सएवहेयोदिष्टस्य येनकेनतुकर्मणा।
अभिघातान्तरंकार्य्यं तत्रैवाहःक्षतंभवेत्॥ ३६॥
शालाग्नौपच्यतेह्यन्नं लौकिकेवाऽथसंशयः।
यस्मिन्नेवपचेदन्नं तस्मिन्होमोविधीयते॥ ३७॥
वैदिकेलौकिकेवापि नित्यंहुत्वाह्यतन्द्रितः।
वैदिकेस्वर्गमाप्नोति लौकिकेहन्तिकिल्विषम्॥ ३
अग्नौव्याहृतिभिःपूर्वं हुत्वा मन्त्रैस्तुशाकलैः।
संविभागंतुभूतेभ्यस्ततोऽश्नीयादनग्निमान्॥ ३९॥
उच्छेपणंतुनोत्तिष्ठेद्यावाद्विप्रविसर्जनम्।

की मृत्यु हो, उसी राशिके उसी दिनमें, गोदानादि पिण्ड दान (तर्पण) क
वर्ष की वृद्धि में अभिषेक (स्नान) आदि अधिक के साथ अधिक करे।
अधिक (मल) मास आन पड़े, तो वर्ष पूर्त्ति से पहिले भी श्राद्ध होवे।
जिस किसी कर्म के कारण विहित श्राद्ध का वही दिन (जो वर्ष मे
आया हो) त्याग देना चाहिये। मरने के दिन तिथि की हानि हो
तो अगले दिन क्षयाह श्राद्ध करे, तब वही क्षयाह माना जायगा॥३६॥
शाला में विधि पूर्वक स्थापित अग्नि में अथवा लौकिक अग्नि में प्रतिदि
पकाया जाय? ऐसा सन्देह हो, तो समाधान यह है कि आहिताग्नि न
लौकिकाग्नि में पकावे, और जिस अग्नि में अन्न पकावे, उसी में होम
शास्त्र में कहा है॥ ३७॥ वैदिक (स्थापित) वा लौकिक अग्नि में
को छोड़कर नित्य होम करे। वैदिक अग्निमें पञ्चमहायज्ञादिसम्बन्धी होम
वाले को स्वर्ग मिलता और लौकिक अग्निमें होम करनेसे पाप नष्ट होता
अनाहिताग्नि पुरुष प्रथम लौकिक अग्नि में पृथक् २ तीन व्याहृतियां
एक साथ तीनों व्याहृति से, ऐसे चार आहुति देकर (देवकृतस्यैनसो०)
दि शाकल होम की छः आहुति देके प्राजापत्य और स्विष्टकृत
देवे। इस प्रकार देव यज्ञ की बारह आहुति देवे, तत्पश्चात् भूमि पर
रूप भूतयज्ञ करके भोजन करे॥ ३९॥ जब तक निमन्त्रित

ततोग्रहबलिंकुर्यादिति धर्मोव्यवस्थितः ॥ ४० ॥
दर्भाःकृष्णाजिनंमन्त्रा ब्राह्मणाश्चविशेषतः ।
नैतेनिर्म्माल्यतांयान्ति नियोक्तव्याःपुनःपुनः ॥ ४१ ॥
पानमाचमनंकुर्यात् कुशपाणिस्सदाद्विजः ।
भुक्त्वाप्युच्छिष्टतांयाति एषएवविधिःसदा ॥ ४२ ॥
पानआचमनेचैव तर्पणेदैविकेसदा ।
कुशहस्तोनदुष्येत यथापाणिस्तथाकुशः ॥४३॥
वामपाणौकुशान्कृत्वा दक्षिणेनउपस्पृशेत् ।
आचमन्तिचयेमूढा रुधिरेणाचमन्तिते ॥४४॥
नीवीमध्येषुयेदर्भा ब्रह्मसूत्रेषुयेकृताः ।
पवित्रांस्तान्विजानीयाद्यथाकायस्तथाकुशाः ॥४५॥
पिण्डेकृतास्तुयेदर्भा यैःकृतंपितृतर्पणम् ।
मूत्रोच्छिष्टपुरीषंच तेषांत्यागोविधीयते ॥४६॥

। कराके विसर्जन न हो जाय, तब तक गूठन न उठावे, उस के पश्चात् ग्रह-करे, यही धर्म की व्यवस्था है ॥४०॥ दर्भ, काले हिरन का चर्म, वेदमन्त्र विशेष कर ब्राह्मण, ये सब बार २ कार्यों में नियुक्त करने से अशुद्धि को नहीं होते, इस से बार २ धर्म सम्बन्धी काम में इन को नियुक्त करे ॥ ब्राह्मणादि द्विज सदैव कुशों को हाथ में लेकर जलपान और आच-रे। भोजन के अनन्तर भी मनुष्य उच्छिष्ट हो जाता है, इससे आचम-यही विधान सदा करे ॥४२॥ जल पीने, आचमन करने और सदा देवतर्पण यों को हाथ में लिये मनुष्य दूषित नहीं होता, क्योंकि जैसा हाथ वैसेही होते हैं ॥ ४३ ॥ बांये हाथ में कुशा लेकर दहिने हाथ से आचमन करे । र्ख लोग इस प्रकार आचमन करते हैं वे मानों रुधिर से आचमन करते र्थात् दहिने हाथ में ही कुश रखता हुआ आचमन करे यही ठीक है ॥४४॥ । कटि(कटिबंधन) में और जनेउ में, जो कुश बंधे हों, उन को पवित्र ना चाहिये, क्योंकि कुश देह के समान ही हैं ॥ ४५ ॥ जो कुश श्राद्ध के डों पर रक्खे गये हों, या जिन से पितरों का तर्पण किया हो, अथवा जिन लेकर मल मूत्र का त्याग किया हो उन कुशों का त्याग कहा है ॥ ४६ ॥

देवपूर्वन्तुयच्छ्राद्धमदैवंचापियद्भवेत् ।
ब्रह्मचारीभवेत्तत्र कुर्याच्छ्राद्धन्तुपैतृकम् ॥४७॥
मातुःश्राद्धन्तुपूर्वंस्यात्पितृणांतदनन्तरम् ।
ततोमातामहानांच वृद्धौश्राद्धत्रयंस्मृतम् ॥४८॥
क्रतुर्दक्षोवसुःसत्यः कालकामौधूरिलोचनौ ।
पूरूरवार्द्रवाश्चैव विश्वेदेवाःप्रकीर्तिताः ॥४९॥
आगच्छन्तुमहाभागा विश्वेदेवामहाबलाः ।
येयत्रविहिताःश्राद्धे सावधानाभवन्तुते ॥५०॥
इष्टिश्राद्धेक्रतुर्दक्षो वसुःसत्यश्ववैदिके ।
कालःकामोऽग्निकार्य्येषु काम्येषुधूरिलोचनौ ॥५१॥
पूरूरवार्द्रवाश्चैव पार्वणेषुनियोजयेत् ॥५२॥
यस्यास्तुनभवेद्भ्राता नविज्ञायेतवापिता ।
नोपयच्छेततांप्राज्ञः पुत्रिकाधर्मशंकया ॥ ५३ ॥
अभ्रातृकांप्रदास्यामि तुभ्यंकन्यामलङ्कृताम् ।
अस्यांयोजायतेपुत्रः समेपुत्रोभविष्यति ॥ ५४ ॥

जो श्राद्ध विश्वेदेव पूर्वक हो वा विश्वदेव पूर्वक न हो । उन दोनों [illegible] श्राद्धों में पुरुष ब्रह्मचारी रहे और पितरों के निमित्त श्राद्ध करे ॥४७॥ माता का श्राद्ध करके पीछे पितरों का करे। फिर मातामहों (नाना [illegible] का श्राद्ध करे, इसप्रकार वृद्धिश्राद्ध (नांदीमुख) में तीन श्राद्ध होते हैं [illegible] क्रतु, दक्ष, वसु, सत्य, काल, काम, धूरि, लोचन, पुरूरवा, आर्द्रवा, वे [illegible] वाओं के विशेष नाम कहेहैं॥४९॥ वे महाबलवान् और महाभाग्यशाली [illegible] आवें, जो जिस श्राद्ध में कहे हैं, वे सावधान होवें॥५०॥ दर्शपौर्णमासादि [illegible] सम्बन्धी पिण्डपितृयज्ञादि श्राद्ध में क्रतु, और दक्ष, वेदोक्त श्राद्ध [illegible] सत्य, अग्नि के कार्य्यों में काल, काम, काम्य कर्मों सम्बन्धी श्राद्धों में धूरि [illegible] पार्वणश्राद्ध में पुरूरवा और आर्द्रवा विश्वेदेवा नियुक्त करने [illegible] चाहिये ॥ ५२ ॥ जिस कन्या के कोई सहोदर भाई न हो और [illegible] भी मर गया हो, उस कन्या के साथ बुद्धिमान् मनुष्य कन्या [illegible] की शंका से विवाह न करे ॥ ५३ ॥ जिसके कोई भाई नहीं है, [illegible] और आभूषणों से शोभित कन्या तुमको देता हूं, इस में जो पुत्र हो, [illegible] पुत्र होगा, इस प्रतिज्ञासे जो कन्या विवाही जाय उसे पुत्रिका कहते [illegible]

...प्रथमतःपिण्डं निर्व्वपेत्पुत्रिकासुतः ।
द्वितीयंतुपितुस्तस्या स्तृतीयन्तत्पितुःपितुः ॥ ५५ ॥
...न्मयेपुचपात्रेपु श्राद्धेयोभोजयेत्पितॄन् ।
अन्नदातापुरोधाश्च भोक्ताचनरकंव्रजेत् ॥ ५६ ॥
अलाभेमृन्मयंदद्यादनुज्ञातस्तुतैर्द्विजैः ।
घृतेनप्रोक्षणंकार्यं मृदःपात्रंपवित्रकम् ॥ ५७ ॥
श्राद्धंकृत्वापरश्राद्धे यस्तुभुञ्जीतविह्वलः ।
पतन्तिपितरस्तस्य लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥ ५८ ॥
श्राद्धंदत्त्वाचभुक्त्वाच अध्वानंयोऽधिगच्छति ।
भवन्तिपितरस्तस्य तन्मासंपांसुभोजनाः ॥ ५९ ॥
पुनर्भोजनमध्वानं भाराध्ययनमैथुनम् ।
दानंप्रतिग्रहंहोमं श्राद्धभुक्त्वष्टवर्जयेत् ॥ ६० ॥
अध्वगामीभवेदश्वः पुनर्भोक्ताचवायसः ।

...का का पुत्र पहिला पिण्ड अपनी माता को, दूसरा पिण्ड माता के
..., तीसरा माता के दादा को देवे ॥५५॥ श्राद्ध के समय मट्टी के पात्रों
...तृ ब्राह्मणों को जिमावे तो वह अन्नदाता, पुरोहित, और भोजन
...ा ये तीनों नरक में जाते हैं ॥ ५६ ॥ यदि कांसे पीतल आदि के
...लें तो ब्राह्मणों की आज्ञा से मट्टी के पात्रों में भी भोजन करा
... मट्टी के पात्र को घी से छिड़क ले तो पवित्र हो जाता है ॥५७॥
... स्वयं श्राद्ध करके दूसरे के यहां श्राद्ध में लोभ से व्याकुल होकर
...ो नष्ट हुआ है पिण्ड और जलदान जिनका ऐसे उसके पितर
...े हैं ॥ ५८ ॥ श्राद्ध में ब्राह्मणों को भोजन करा के या अन्य
...वयं भोजन खाकर जो मार्गमें चलता है उस के पितर उस महीने
...कते हैं ॥ ५९ ॥ श्राद्ध में भोजन करने वाला ब्राह्मण इन
... त्याग देवे । दुबारा भोजन, मार्ग में चलना, बोझा उठाना,
..., मैथुन करना, दान देना, दान लेना और होम करना ॥ ६० ॥
... जो मार्ग में चले वह जन्मान्तर में घोड़ा, जो उसी दिन पुनः

कर्म्मकृज्जायतेदासः स्त्रीगमनेचसूकरः ॥ ६१ ॥
दशकृत्वःपिबेदापः सावित्र्याचाभिमन्त्रिताः।
ततःसन्ध्यामुपासीत शुध्येततदनन्तरम् ॥ ६२ ॥
आर्द्रवासास्तुयत्कुर्याद्वहिर्जानुचयत्कृतम्।
सर्वंतन्निष्फलंकुर्य्याज्जपंहोमंप्रतिग्रहम् ॥ ६३ ॥
चान्द्रायणंनवश्राद्धे पराकोमासिकेतथा।
पक्षत्रयेतुकृच्छ्रंस्यात् षण्मासेकृच्छ्रमेवच ॥ ६४ ॥
ऊनाब्दिकेद्विरात्रंस्यादेकाहःपुनराब्दिके।
शावेमासंतुभुक्त्वावा पादकृच्छ्रोविधीयते ॥ ६५ ॥
सर्पविप्रहतानांच शृङ्गिदंष्ट्रिसरीसृपैः।
आत्मनस्त्यागिनांचैव श्राद्धमेषांनकारयेत् ॥ ६६ ॥
गोभिर्हतंतथोद्बद्धं ब्राह्मणेनतुघातितम्।
तंस्पृशन्तिचयेविप्रा गोजाश्वाश्चभवन्तिते ॥ ६७ ॥

भोजन करै वह काक, जो बोझा उठानादि कर्म करै वह शूद्र, स्त्री
करै वह सूकर होता है ॥ ६१ ॥ श्राद्ध में भोजन करके फिर भोजन
काम करने वाला पुरुष गायत्री से दशवार पढ़ २ के जल पीवे
संध्या करके शुद्ध होता है ॥ ६२ ॥ गीले वस्त्र पहन कर और गोड़ो
हाथ रख कर जो जप होम तथा प्रतिग्रह (दान लेना आदि) करे
काम उस का निष्फल हो जाता है ॥ ६३ ॥ नव श्राद्ध ([illegible]
कर चान्द्रायण, मासिक श्राद्ध एकोद्दिष्ट में जीम कर पराक, [illegible]
महीने के श्राद्ध में और छः महीने के श्राद्ध में जीम कर कृच्छ्र [illegible]
ऊनाब्दिक (११) महीने के श्राद्ध में खाकर तीन दिन और वर्षी [illegible]
दिन व्रत करे और एक महिने के भीतर मरने के सूतक में खाकर [illegible]
कृच्छ्रव्रत करना कहा है ॥ ६५ ॥ सर्प, ब्राह्मण, सींगवाले, दांतों वाले, [illegible]
का भेद) इन से मरे और अपने को मार डालने वाले को [illegible]
श्राद्ध न करे ॥ ६६ ॥ गौने मारे, फांसी से मरे, ब्राह्मण ने जिनको मार [illegible]
उन का जो ब्राह्मण स्पर्श करे वे जन्मान्तर में गौ, बकरा और घोड़ा [illegible]

अग्निदातातथाचान्ये पाशच्छेदकराश्चये ।
तप्तकृच्छ्रेणशुध्यन्ति मनुराहप्रजापतिः ॥ ६८ ॥
त्र्यहमुष्णंपिबेदापस्त्र्यहमुष्णंपयःपिबेत् ।
त्र्यहमुष्णंघृतंपीत्वा वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥ ६९ ॥
गोभूहिरण्यहरणे स्त्रीणांक्षेत्रगृहस्यच ।
यमुद्दिश्यत्यजेत्प्राणांस्तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥ ७० ॥
उद्यताःसहधावन्तो सर्वेशस्त्रपाणयः ।
यद्येकोऽपिहनेत्तत्र सर्वेतेब्रह्मघातकाः ॥७१॥
बहूनांशस्त्रघातानां यद्येकोमर्मघातकः ।
सर्वेतेशुद्धिमिच्छन्ति सएकोब्रह्मघातकः ॥७२॥
पतितान्नंयदाभुङ्क्ते भुङ्क्तेचाण्डालवेश्मनि ।
समासार्द्धंचरेद्वारि मासंकामकृतेनतु ॥७३॥
योयेनपतितेनैव संसर्गंयातिमानवः ।
सतस्यैवव्रतंकुर्यात्तत्संसर्गविशुद्धये ॥७४॥
ब्रह्महापातकिस्पर्शे स्नानंयेनविधीयते ।

सर्पादि से मरोंका दाह करने वाला तथा अन्य जन जो फांसीको का-
टने वाले हैं वे तप्तकृच्छ्रव्रत से शुद्ध होते हैं यह बात प्रजा के पति मनुजी ने
कही है ॥ ६८ ॥ तीन दिन गर्म जल, तीन दिन गर्म दूध, तीन दिन गर्म घी
और तीन दिन वायु को भक्षण करै यह तप्तकृच्छ्रव्रत का लक्षण है ॥६९॥
पृथिवी, सुवर्ण, स्त्री, खेत, घर, इन के हरलेने पर जिस का सताया हुआ
प प्राणों को त्यागे उस को ब्रह्म हत्या का अपराधी कहते हैं ॥ ७० ॥
क मनुष्य शस्त्र ले २ कर एक संग किसी पर हमला करें उन में से यदि
पुरुष भी मार डाले तो वे हमला करने वाले सब हत्या के अपराधी हैं
॥ हथियार से मारने वाले बहुतों में यदि एक कोई मर्म स्थान में मारे
से वह मरजावे तो वह मर्मघाती एकही दोषी है अन्य सब निर्दोष शुद्ध हैं
। जो पतितका अन्न खावे वा चाण्डालके घरमें अज्ञानसे खावे तो पन्द्रह
और जानकर खावे तो एकमास जलमात्र पीकर व्रत करे ॥ ७३ ॥ जो मनुष्य
पतित के साथ खान पानादि में मेल करता है वह उसी पतित के लिये
प्रायश्चित्त संसर्ग से हुए दोष की शुद्धि के लिये करे ॥७४॥ जिस ब्रह्मह-
रेका स्पर्श करनेसे स्नान करना कहा है उसी उच्छिष्ट पतितने स्पर्श किया

शावेनशुध्यतेसूतिर्नसूतिःशावशोधिनी ॥ ९० ॥
षष्ठेनशुध्येतैकाहं पञ्चमेद्व्यहमेवतु ।
चतुर्थेसप्तरात्रंस्यात् त्रिपुरुषंदशमेऽहनि ॥ ९१ ॥
मरणारब्धमाशौचं संयोगोयस्यनाग्निभिः ।
आदाहात्तस्यविज्ञेयं यस्यवैतानिकोविधिः ॥ ९२ ॥
आमंमांसंघृतंक्षौद्रं स्नेहाश्चफलसंभवाः ।
अन्त्यभाण्डस्थिताह्येते निष्क्रान्ताःशुचयःस्मृताः ॥
मार्जनीरजसासक्तं स्नानवस्त्रघटोदकम् ।
नवाम्भसितथाचैव हन्तिपुण्यंदिवाकृतम् ॥ ९४ ॥
दिवाकपित्थच्छायायां रात्रौदधिशमीषुच ।
धात्रीफलेषुसर्व्वत्र अलक्ष्मीर्वसतेसदा ॥ ९५ ॥
यत्रयत्रचसंकीर्णमात्मानंमन्यतेद्विजः ।
तत्रतत्रतिलैर्होमं गायत्र्यष्टशतंजपेत् ॥ ९६ ॥
इतिश्रीमहर्षिलिखितप्रोक्तं धर्मशास्त्रं समाप्तम् ॥

मरण सूतक में जन्म सूतक हो जाय तो मरण सूतक के शेष दिनों में [illegible]
सूतक की शुद्धि होजाती है और जन्म सूतक के दिनों से मरणसूतक [illegible]
नहीं होता अर्थात् जन्म सूतक छोटा और मरण सूतक बड़ा है ॥ ९० ॥
छठी पीढ़ी वालों को एक दिन का, पांचवीं में दो दिन का, चौथी [illegible]
दिन का और तीसरी में दश दिन का सूतक लगता है ॥९१॥ जो अ[illegible]
न हो उसे मरण के समय से और जो वेदोक्त अग्निहोत्र करता है उस[illegible]
के समय से सूतक लगता है॥९२॥ कच्चा मांस, घृत, सहत, फलों से [illegible]
अन्य किसी नीच के पात्र में रक्खे हुए ये सब पात्र से निकाल लेने पर शु[illegible]
स्नान का शुद्ध वस्त्र, घड़े का जल, और नया जल, इन में यदि म[illegible]
हारी) की धूल लग जाय तो उस दिनमें किये पुण्य को नष्ट करता है[illegible]
दिन में कैथ की छाया में रात्रि में दही, तथा छ्योंकर में, आंवले [illegible]
दिन रात दोनों समय अलक्ष्मी (दरिद्रता) बसती है॥९५॥ जिस २ [illegible]
के करने में ब्राह्मण अपने को लज्जा, शंका, संकोच, बुरा माने वहां [illegible]
से होम करे और आठ सौ गायत्री जपे ॥ ९६ ॥
यह महर्षिलिखितके कहे धर्मशास्त्र का पं० भीमसेनशर्मकृत भाषानुवाद [illegible]

—:o:—

तेनैवोच्छिष्टसंस्पृष्टः प्राजापत्यंसमाचरेत ॥७५॥
ब्रह्महाचसुरापेयी स्तेयीचगुरुतल्पगः ।
महान्तिपातकान्याहुस्तत्संसर्गीचपञ्चमः ॥७६॥
स्नेहाद्वायदिवालोभाद् भयादज्ञानतोऽपिवा।
कुर्वन्त्यनुग्रहंयेच तत्पापंतेपुगच्छति ॥७७॥
उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टो ब्राह्मणस्तुकदाचन।
तत्क्षणात्कुरुतेस्नानमाचामेनशुचिर्भवेत ॥७८॥
कुब्जवामनपण्ढेपु गद्गदेपुजडेपुच ।
जात्यन्धेबधिरेमूके नदोपःपरिवेदने ॥७९॥
क्लीवेदेशान्तरस्थेच पतितेव्रजितेपिवा ।
योगशास्त्राभियुक्तेच नदोपःपरिवेदने ॥८०॥
पूरणेकूपवापीनां वृक्षच्छेदनपातने ।
विक्रीणीतगजंचाश्वं गोवधंतस्यनिर्दिशेत् ॥८१॥
पादेऽङ्गरोमवपनं द्विपादेश्मश्रुकेवलम् ।

हो तो प्राजापत्य व्रत करे ॥ ७५ ॥ ब्रह्महत्यारा, वार २ समक्ष पूर्व [illegible] पीने वाला, सुवर्ण का चोर, गुरु पत्नी से संयोग करने वाला और [illegible] इन का संसर्गी मेली ये पांच महापातकी कहाते हैं ॥ ७६ ॥ प्रीति [illegible] से, भय से, अथवा अज्ञान से, जो अपराधी पर कृपा करते हैं [illegible] का प्रायश्चित्त नहीं कराते वह अपराधी का पाप उन प्रायश्चित्त न [illegible] वालों को लगता है ॥ ७७ ॥ यदि कभी उच्छिष्ट ब्राह्मण को अन्य [illegible] मनुष्य छूलेवे तो उसी क्षण स्नान कर आचमन करने से शुद्ध होता है [illegible] कुबड़ा, धिलंदिया, नपुंसक, तोतला, महामूर्ख, जन्मांध, बहरा, गूंगा [illegible] परिवेदन में अर्थात् बड़ा भाई कुब्जादि हो तो छोटे भाई का [illegible] विवाह करलेने में कुछ दोष नहीं है । तथा यदि बड़ा भाई क्लीव [illegible] हो, देशांतर में रहता हो, पतितहो, संन्यासी हो गया हो, और [illegible] में लगा हो तो भी परिवेदन में दोष नहीं है ॥ ७९।८० ॥ बावड़ी और [illegible] को बन्द करना, काटकर वृक्षों को गिराना, हाथी और घोड़े का [illegible] इन कामों को जो करे वह गो हत्या का प्रायश्चित्त करे ॥ ८१ ॥ पाद (चौथाई) कृच्छ्र में सब अंग के रोमों का मुंडन, द्विपाद आधे कृच्छ्र में [illegible] मूछों का, त्रिपाद (पौन) कृच्छ्र में शिखा को छोड़कर सब केशों का और [illegible]

शावेनशुध्यतेसूतिर्नसूतिःशावशोधिनी ॥ ९० ॥
षष्ठेनशुध्यतैकाहं पञ्चमेद्व्यहमेवतु ।
चतुर्थेसप्तरात्रंस्यात् त्रिपुरुषंदशमेऽहनि ॥ ९१ ॥
मरणारब्धमाशौचं संयोगोयस्यनाग्निभिः ।
आदाहात्तस्यविज्ञेयं यस्यवैतानिकोविधिः ॥ ९२ ॥
आमंमांसंघृतंक्षौद्रं स्नेहाश्चफलसंभवाः ।
अन्त्यभाण्डस्थिताह्येते निष्क्रान्ताःशुचयःस्मृताः ॥
मार्जनीरजसासक्तं स्नानवस्त्रघटोदकम् ।
नवाम्भसितथाचैव हन्तिपुण्यंदिवाकृतम् ॥ ९४ ॥
दिवाकपित्थच्छायायां रात्रौदधिशमीषुच ।
धात्रीफलेषुसर्व्वत्र अलक्ष्मीर्वसतेसदा ॥ ९५ ॥
यत्रयत्रचसंकीर्णमात्मानंमन्यतेद्विजः ।
तत्रतत्रतिलैर्होमं गायत्र्यष्टशतंजपेत् ॥ ९६ ॥
इतिश्रीमहर्षिलिखितप्रोक्तं धर्मशास्त्रं समाप्तम् ॥

मरण सूतक में जन्म सूतक हो जाय तो मरण सूतक के शेष दिनों में ही
सूतक की शुद्धि होजाती है और जन्म सूतक के दिनों में मरण सूतक
नहीं होता अर्थात् जन्म सूतक छोटा और मरण सूतक बड़ा है ॥९०॥
छठी पीढ़ी वालों को एक दिन का, पांचवीं में दो दिन का, चौथी में
दिन का और तीसरी में दश दिन का सूतक लगता है ॥९१॥ जो अ...
न हो उसे मरण के समय से और जो वेदोक्त अग्निहोत्र करता है उस...
के समय से सूतक लगता है ॥९२॥ कच्चा मांस, घृत, मद्दत, फलों से नि...
अन्य किसी नीच के पात्र में रक्खे हुए ये सब पात्र से निकालने से शुद्ध हैं...
स्नान का शुद्ध वस्त्र, घड़े का जल, और नया जल, इन में यदि ...
हारी) की धूल लग जाय तो उस दिनमें किये पुण्य को नष्ट करता है...
दिन में कैथ की छाया में रात्रि में दही, तथा खर्जूर में, आंवले में...
दिन रात दोनों समय अलक्ष्मी (दरिद्रता) बसती है ॥९५॥ जिस जिस...
के करने में ब्राह्मण अपने को लज्जा, शंका, संकोच, बुरा माने ...
से होम करे और आठ सौ गायत्री जपे ॥ ९६ ॥
यह महर्षिलिखितकृत धर्मशास्त्र का पं० भीमसेनशर्मकृत भाषानुवाद पूर्ण हुआ ॥

अथ दक्षस्मृतिप्रारंभः ॥

र्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः सर्ववेदविदांवरः ।
ारगःसर्वविद्यानां दक्षो नामप्रजापतिः ॥ १ ॥
उत्पत्तिःप्रलयश्चैव स्थितिःसंहारएवच ।
आत्माचात्मनितिष्ठेत आत्माब्रह्मण्यवस्थितः ॥ २ ॥
ब्रह्मचारीगृहस्थश्च वानप्रस्थोयतिस्तथा ।
एतेषांतुहितार्थाय धर्मशास्त्रमकल्पयत् ॥ ३ ॥
जातमात्रःशिशुस्तावद्यावदष्टौसमावयः ।
सहिगर्भसमोज्ञेयो व्यक्तिमात्रप्रदर्शितः ॥ ४ ॥
भक्ष्याभक्ष्येतथापेये वाच्यावाच्येतथाऽनृते ।
अस्मिन्वालेनदोषःस्यात्सयावन्नोपनीयते ॥ ५ ॥
उपनीतेतुदोषोऽस्ति क्रियमाणैर्विगर्हितैः ।

ीः शुभम् । संपूर्ण शास्त्रों को यथार्थ जानने वाले, सब वेद वेत्ताओं में
ोर सब विद्याओं के पार पहुंचे हुए दक्ष नामक प्रजापति हुए हैं ॥१॥
ा, प्रलय (मरना) स्थिति, संहार (पांच महाभूतों का प्रलय) इनके
में समर्थ जिन दक्ष के आत्मा (देह) में साक्षात् परमात्मा ठहरे थे और
ा आत्मा धर्म में स्थित था ॥२॥ उन दक्ष प्रजापति जी ने,ब्रह्मचारी, गृहस्थ,
स्थ, संन्यासी, इन चारों आश्रमों के हितार्थ धर्मशास्त्र को रचा है ॥३॥
क आठ वर्ष की अवस्था हो तब तक बालक पैदा हुये के समान
ंकि उसे गर्भ तुल्य ही जाने उस का एक आकार मात्र ही दीखता है
क्ष्य अभक्ष्य, पीने न पीने योग्य, कहने न कहने योग्य, सत्य और झूठ
। बालक को जनेऊ होने से पहिले दोष नहीं लगता है ॥५॥ जनेऊ हुए
ो निन्दित काम करे तो उस को दोष लगते हैं । और सोलह वर्ष की

द्वितीयेचतृतीयेच चतुर्थेपञ्चमेतथा ॥ ४ ॥
षष्ठेचसप्तमेचैव त्वष्टमेचपृथक्पृथक् ।
विभागेष्वेषुयत्कर्म तत्प्रवक्ष्याम्यशेषतः ॥ ५ ॥
उषःकालेचसम्प्राप्ते शौचंकृत्वायथार्थवत् ।
ततःस्नानंप्रकुर्वीत दन्तधावनपूर्वकम् ॥ ६ ॥
अत्यन्तमलिनःकायो नवछिद्रसमन्वितः ।
स्रवत्येवदिवारात्रौ प्रातःस्नानंविशोधनम् ॥ ७ ॥
क्लिद्यन्तिहिप्रसुप्तस्य चेन्द्रियाणिस्रवन्तिच ।
अङ्गानिसमतांयान्ति उत्तमान्यधमानिच ॥ ८ ॥
नानास्वेदसमाकीर्णः शयनादुत्थितःपुमान् ।
अस्नात्वानाचरेत्किञ्चिज्जपहोमादिकंद्विजः ॥ ९ ॥
प्रातरुत्थाययोविप्रः सन्ध्यास्नायीभवेत्सदा ।
सप्तजन्मकृतंपापंत्रिभिर्वर्षैर्व्यपोहति ॥ १० ॥
उषस्युषसियत्स्नानं सन्ध्यायामुदितेरवौ ।

प्रथम, दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, छठे, सातवें और आठवें, इन पृथक् २ जो २ कर्म धर्म शास्त्रों के अनुसार उपदेश किये गये को क्रम से हम कहेंगे ॥ ४ ॥ ५ प्रातः सूर्योदय से चार घड़ी पहि कर शास्त्र में कहे अनुसार मल मूत्र त्यागादि रूप यथावत् शौ दंत धावन पूर्वक स्नान करे ॥ ६ ॥ यह देह मलिनता निकलने दरवाजों से युक्त होने के कारण अत्यन्त मलिन है, रात दिन शरीर लिनता निकलती है,प्रातःकाल का स्नान इस का शोधन करने वाला सोते हुये मनुष्य के इन्द्रिय मलिनता से गीले हो जाते और लार पक ने लगती है। उत्तम,अधम, सब अंग शिथिल होजाते हैं ॥ ८ ॥ उठा मनुष्य अनेक प्रकार के पसीनादि से युक्त हो जाता है। इस लि किये विना ब्राह्मण किंचित् भी जप होमादि कर्म न करे ॥ ९ ॥ जो प्रातःकाल ही उठकर नित्यनियम से सन्ध्या स्नान निरन्तर किया क सात जन्म तक में किये पाप को तीन वर्षों में नष्ट कर देता है ॥ १० ॥ दिन प्रातःकाल बादल पीले होते ही और सायंकाल में सूर्य के अस

प्राजापत्येनतत्तुल्यं सर्वपापापनोदनम् ॥ ११ ॥
प्रातःस्नानंप्रशंसन्ति दृष्टादृष्टकरंहितत् ।
सर्वमर्हतिशुद्धात्मा प्रातःस्नायीजपादिकम् ॥ १२ ॥
गुणादशस्नानपरस्यसाधो रूपंचशौचंचबलंचतेजः ।
आरोग्यमायुश्चमलोलुपत्वं दुःस्वप्नघातश्चतपश्चमेधाः॥१३॥
मनःप्रसादजननं रूपसौभाग्यवर्धनम् ।
दुःखशोकापहंस्नानं मानदंज्ञानदंतथा ॥ १४ ॥
आग्नेयंभस्मनास्नानमवगाह्यचवारुणम् ।
आपोहिष्ठेतिचब्राह्मं वायव्यंगोरजःस्मृतम् ॥ १५ ॥
यत्तुसातपवर्षंतु तत्स्नानंदिव्यमुच्यते ।
पञ्चस्नानानिपुण्यानि मनुःस्वायंभुवोऽब्रवीत् ॥ १६ ॥
आपस्नानंव्रतस्नानं मन्त्रस्नानंतथैवच ।

से जो स्नान करता है वह स्नान प्राजापत्य व्रत के तुल्य सब पापोंका
है ॥ ११ ॥ प्रत्यक्ष परोक्ष फल देने वाला जो प्रातःकाल का स्नान उस
को विद्वान् लोग प्रशंसा करते हैं । प्रातःकाल स्नान करने वाला मनुष्य
की पवित्रता से संपूर्ण जप आदि कर्म करने योग्य होता है ॥१२॥ स्नान-
तत्पर कुटिलतारहित साधु मनुष्य में ये दश उत्तम गुण होते हैं कि
शुद्धि, बल, तेज, नीरोगता, अवस्था, लालचछूटना, मन की शुद्धि मे बुरे
का न होना, तप, और तीक्ष्ण बुद्धि होना ॥ १३ ॥ मन को प्रसन्न करने,
तथा सौभाग्य को बढ़ाने, दुःख तथा शोक का नाश करने, मान और
का देने वाला, प्रातःकाल का स्नान है ॥ १४ ॥ भस्म से स्नान करना
य स्नान, जलाशय में अवगाहन करके स्नान करना वारुण, (आपोहि-
) इत्यादि मन्त्रों को पढ़ २ के स्नान करना ब्राह्म, और गौओं के खुरों
की धूलि को शरीर पर लेना, वायव्य, स्नान कहाता है ॥१५॥ घाम होने
र्षा भी हो उस में स्नान करना, दिव्य स्नान है । स्वायंभुव मनुने ये
स्नान पुण्य करने वाले कहे हैं ॥ १६ ॥ आप (जल से) स्नान, व्रत
(व्रतों के द्वारा मन वाणी शरीरों [illegible]) और मन्त्र स्नान, (मन्त्रों
आदि द्वारा शुद्धि) [illegible] [illegible] गृहस्थ के लिये, ब्रम

आपस्नानंगृहस्थस्य व्रतमन्त्रैतपस्विनाम् ॥ १७ ॥
कनिष्ठादेशिन्यङ्गुष्ठमूलान्यग्रंकरस्यच ।
प्रजापतिपितृब्रह्मदेवतीर्थान्यनुक्रमात् ॥ १८ ॥
दानंप्रतिग्रहोहोमो भोजनंबलिकंतथा ।
साङ्गुष्ठंतुसदाकार्यमापतेत्तदधोऽन्यथा ॥ १९ ॥
स्नानादनन्तरंतावदुपस्पर्शनमुच्यते ।
अनेनतुविधानेन स्वाचान्तःशुचितामियात् ॥ २० ॥
उदकएवोदकस्थश्चेत्स्थलस्थश्चस्थलेशुचिः ।
पादौस्थाप्योभयत्रैव आचम्योभयतःशुचिः ॥ २१ ॥
प्रक्षाल्यहस्तौपादौच त्रिःपिबेदम्बुवीक्षितम् ।
संहताङ्गुष्ठमूलेन द्विःप्रमृज्यात्ततोमुखम् ॥ २२ ॥
संहत्यतिसृभिःपूर्वमास्यमेवमुपस्पृशेत् ।
अङ्गुष्ठेनप्रदेशिन्या घ्राणंपश्चादुपस्पृशेत् ॥ २३ ॥
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यांच चक्षुःश्रोत्रेपुनःपुनः ।

स्नान, मन्त्रस्नान, तपस्वियों के लिये हैं ॥ १७ ॥ कनिष्ठा, प्रदेशिनी, अंगुष्ठ के मूल में और सब अंगुलियों के अग्रभाग में क्रम से प्रजापति, पितर, ब्रह्म और देवों के तीर्थ माने जाते हैं । इस लिये कनिष्ठा अंगुली के मूलसे प्रजापतिको, प्रदेशिनीके मूलसे पितरोंको, अंगुष्ठके मूलसे ब्रह्माको, अंगुलियोंके अग्रभागसे देवोंकेलिये जलदान करे ॥१८॥ दानदेना, दानलेना, भोजन, बलि धरना, होम करना, इन कामोंको अंगुष्ठ सहित सब अंगुलियोंसे करे, अन्यथा करने से अधोगति में पड़ेगा ॥ १९ ॥ स्नानके अनन्तर आचमन का विधान कहते हैं ठीक इस के आगे कहे विधान से आचमन करे तो सम्यक् शुद्ध हो जाता है ॥२०॥ जलाशय के भीतर या स्थल में जहां आचमन करे वहां पग जमाकर आचमन करे, तो बाहर भीतर से शुद्ध है ॥ हाथ और पगों को धो कर अंगुलियों से मिलाये हुये अंगुष्ठ के मूल से जल को देख २ कर तीनवार पीवे, फिर अंगुलियों के अग्रभाग से ... कर दोवार मुखको शुद्ध करे ॥२२॥ फिर अनामिका, मध्यमा, प्रदेशिनी ... अंगुलियों से मुखको, अंगुष्ठ और प्रदेशिनी से नासिका के दोनों ...

नाभिंकनिष्ठाङ्गुष्ठाभ्यां हृदयंतुतलेनवै ॥ २४ ॥
सर्वाभिश्चशिरःपश्चाद्बाहूचाग्रेणसंस्पृशेत् ।
सन्ध्यायांचप्रभातेच मध्यान्हेचततःपुनः ॥ २५ ॥
हृद्गाभिःपूयतेविप्रः कण्ठगाभिश्चभूमिपः ।
वैश्यःप्राशितमात्राभिर्जिह्वागाभिःस्त्रियोऽन्त्यजाः ॥२६॥
योनसन्ध्यामुपासीत ब्राह्मणोहिविशेषतः ।
सजीवन्नेवशूद्रःस्यान्मृतःश्वाचैवजायते ॥ २७ ॥
सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हःसर्वकर्मसु ।
यदन्यत्कुरुतेकर्म नतस्यफलभाग्भवेत् ॥ २८ ॥
सन्ध्याकर्मावसानेतु स्वयंहोमोविधीयते ।
स्वयंहोमेफलंयत्तु तदन्येननजायते ॥ २९ ॥
ऋत्विक्पुत्रोगुरुर्भ्राता भागिनेयोऽथविट्पतिः ।
एभिरेवहुतंयत्तु तद्धुतंस्वयमेवतु ॥ ३० ॥

ठा और अनामिका से वारम्वार नेत्र और कानों का, पहिले दहिने नेत्र हिने कान का पश्चात् वाम का, स्पर्श करे, और अंगूठा और कनिष्ठका से भिका, और हाथके तलसे हृदय का स्पर्श करे ॥ २३ । २४ ॥ सब अंगुलियों शिरका, हाथ के अग्रभाग से दोनों भुजाओं का स्पर्श करे । सायं सन्ध्या समय, प्रातःकाल और मध्यान्ह में पूर्वोक्त प्रकार से आचमन तथा इन्द्रि- स्पर्श करे॥२५॥ हृदय तक पहुंचने वाले जल के आचमन से ब्राह्मण, कंठ तक हुंचने वाले से क्षत्रिय, प्राशित (जो मुख में ही रहै) मात्र जल से वैश्य, और जिह्वा का स्पर्श जिस से हो, उस जल के आचमन से स्त्री और शूद्र-प- त्र होते हैं ॥ २६ ॥ जो ब्राह्मण विशेष कर संध्योपासन नहीं करता वह ता ही शूद्र है और मरकर कुत्ता की योनि में जन्म लेता है ॥२७॥ संध्या- न मनुष्य नित्य अशुद्ध तथा सब कर्मों के अयोग्य है और वह जो कुछ अन्य में करता है उस के फलका भी भागी नहीं होता है ॥ २८ ॥ संध्या के पीछे स्वयं होम करना कहा है, क्योंकि जो फल स्वयं होम करने का है, वह अन्य कराने पर नहीं होता ॥ २९ ॥ ऋत्विज्, अध्वर्यु, अपना पुत्र, गुरु, भाई, नजा, और जामाता इन प्रतिनिधियों द्वारा जो होम कराया गया हो, ए स्वयं किये के तुल्य ही है ॥ ३०॥

देवकार्यंततःकृत्वा गुरुमङ्गलवीक्षणम् ।
देवकार्यस्यसर्वस्य पूर्वाह्णस्तुविधीयते ॥३१॥
देवकार्याणिपूर्वाह्णे मनुष्याणांतुमध्यमे ।
पितृणामपराह्णेतु कार्याण्येतानियत्नतः ॥३२॥
पौर्वाह्णिकंतुयत्कर्म तद्यदासायमाचरेत् ।
नतस्यफलमाप्नोति वन्ध्यास्त्रीमैथुनंयथा ॥३३॥
दिवसस्याद्यभागेतु सर्वमेतद्विधीयते ।
द्वितीयेचैवभागेतु वेदाभ्यासोविधीयते ॥३४॥
वेदाभ्यासोहिविप्राणां परमंतपउच्यते ।
ब्रह्मयज्ञःसविज्ञेयः षडङ्गसहितस्तुयः ॥३५॥
वेदस्वीकरणंपूर्वं विचारोऽभ्यसनंजपः ।
प्रदानंचैवशिष्येभ्यो वेदाभ्यासोहिपञ्चधा ॥३६॥
समित्पुष्पकुशादीनां सकालःपरिकीर्त्तितः ।
तृतीयेचैवभागेतु पोष्यवर्गान्नसाधनम् ॥३७॥

फिरदेव कार्य करके गुरु और मंगल वस्तु (गौआदि) का दर्शन करे, [illegible] कार्य मध्यान्ह से पूर्व ही समय में करना कहा है ॥३१॥ देव कार्य पूर्वा[illegible] मनुष्यों के अतिथि यज्ञादि कार्य मध्य दिन में, पितरों के कार्य म[illegible] के पीछे तीसरे पहर में यत्न से करे ॥३२॥ पूर्वाह्ण में कर्तव्य कर्म को शा[illegible] में जो मनुष्य आलस्यादि से करे, वह उस के फल को इस प्रकार प्राप्त [illegible] होता कि जैसे बंध्या स्त्री मैथुन से गर्भ धारण फल को नहीं पाती। [illegible] दिन के पहिले भाग में यह पूर्वोक्त सब कर्तव्य कहा और दिन के दू[illegible] में नियम से वेद का अभ्यास करे ॥ ३४ ॥ नियम से वेद का अभ्यास [illegible] ब्राह्मणों का परम तप कहा है, यदि वेद के छः अंगों (व्याकरण [illegible] सहित यह वेदाभ्यास किया जाय, तो वही ब्रह्मयज्ञ जानो ॥ ३५ ॥ [illegible] अभ्यास पांच प्रकार का है। १–वेद का स्वीकार (गुरुमुख से वेद पढ़ना) [illegible] दार्थ का विचार, ३-वेद को वार २ घोषण करना रूप अभ्यास, ४-ज[illegible] ५-शिष्यों को पढ़ाना ॥ ३६ ॥ ढांककी समिधा, फूल, कुशा, इन को य[illegible] से लाकर संग्रह भी दिन के द्वितीय भाग में करे। पोष्यवर्ग (पालन के [illegible] माता आदि) के लिये अन्न का प्रबन्ध दिन के तीसरे भाग में करे। [illegible]

मातापितागुरुर्भार्या प्रजादीनःसमाश्रितः ।
अभ्यागतोऽतिथिश्चाग्निः पोष्यवर्गउदाहृतः ॥३८॥
ज्ञातिर्बन्धुजनःक्षीणस्तथाऽनाथःसमाश्रितः ।
अन्योऽपिधनयुक्तस्य पोष्यवर्गउदाहृतः ॥३९॥
सार्वभौतिकमन्नाद्यं कर्तव्यंगृहमेधिना ।
ज्ञानविद्भ्यःप्रदातव्यमन्यथानरकंव्रजेत ॥४०॥
भरणंपोष्यवर्गस्य प्रशस्तंस्वर्गसाधनम् ।
नरकःपीडनेचास्य तस्माद्यत्नेनतंभरेत् ॥४१॥
सजीवतियएवैको वहुभिश्चोपजीव्यते ।
जीवन्तोऽपिमृतास्त्वन्ये पुरुषाःसोदरम्भराः ॥४२॥
वह्वर्थंजीव्यतेकैश्चित्कुटुम्वार्थेतथाऽपरैः ।
आत्माऽर्थेन्योनशक्नोति स्वोदरेणापिदुःखितः ॥४३॥
दीनानाथविशिष्टेभ्यो दातव्यंभूतिमिच्छता ।

ा, पिता, गुरु, स्त्री, संतान, दीन, अनाथ, समाश्रित (दास) अभ्यागत,
तिथि और अग्नि यह सब पोष्य वर्ग कहाता है ॥ ३८ ॥ अपने कुल के वा
बन्धियों में जो धन हीन दरिद्र वा क्षीण (असमर्थ) अनाथ और स-
श्रित शरणागत, ये अन्य भी धनी पुरुष के लिये पोष्य वर्ग कहा है । अ-
र ३८ श्लोक का पोष्य वर्ग सर्वसाधारण गृहस्थों के लिये है और धनी के
ये ३८ । ३९ । दोनों में कहा पोष्य वर्ग जानो ॥ ३९ ॥ गृहस्थ को चाहिये
सब प्राणियों की तृप्ति के लिये भक्ष्य अन्न आदि विशेष कर बनाये और
नियों को देवे, अन्यथा जो करे वह नरक में जाता है ॥४०॥ पोष्य वर्गका
लन करना स्वर्ग का उत्तम साधन है और पोष्य वर्ग को दुःख पहुंचाने से
क होता है, इस से पोष्य वर्ग का बड़े यत्न से पालन करे ॥ ४१ ॥ जिस एक
ष के सहारे से बहुतों का जीवन हो, वह एक जानो वास्तव में जीवित है
र अन्य अपना ही पेट भरने वाले पुरुष जीते हुए भी मृतक (मुर्दा ही)
॥ ४२ ॥ कोई लोग बहुतों के लिये जीविका करते तथा कोई कुटुम्ब के
लनार्थ करते हैं और कोई अपने पेट को ही भरने में दुःखी रहते, अपने
र्वाह के लिये भी समर्थ नहीं होते ॥४३॥ यदि अपनी वृद्धि चाहै, तो दीन

अदत्तदानाजायन्ते परभाग्योपजीविनः ॥४३॥
यद्ददासिविशिष्टेभ्यो यज्जुहोसिदिनेदिने।
तत्तुवित्तमहंमन्ये शेषंकस्यापिरक्षसि ॥४५॥
चतुर्थेऽह्नस्तथाभागे स्नानार्थंमृदमाहरेत्।
तिलपुष्पकुशादीनि स्नायाच्चाकृत्रिमेजले ॥४६॥
मृत्तिकाःसप्तनग्राह्या वल्मीकान्मूषकस्थलात्।
अन्तर्जलाच्चमार्गान्ताद् वृक्षमूलात्सुरालयात् ॥४७॥
परशौचावशिष्टाच श्रेयस्कामैः सदाबुधैः।
शुचिदेशात्तुसंग्राह्या मृत्तिकास्नानहेतवे ॥४८॥
अश्वक्रान्तेरथक्रान्ते विष्णुक्रान्तेवसुन्धरे !।
मृत्तिके ! हरमेपापं यन्मयापूर्वसञ्चितम् ॥४९॥
उद्धृतासिवराहेण कृष्णेनशतबाहुना।

अनाथ, और सज्जन विद्वानों को देवे क्योंकि जिन्हों ने दान नहीं किया पराये भाग्य से जीने वाले पराधीनता के लिये ही पैदा होते हैं। सज्जनों, विद्वानों, धर्मात्माओं को देता है और जो प्रतिदिन होम उसी को हम तेरा धन मानते हैं, शेष धन तो किसी अन्य का है, तू रक्षा करता है ॥ ४५ ॥ दिन के चौथे भाग में स्नान के लिये मट्टी तथा तिल, फूल, कुश आदि लावे और ऐसे जल में स्नान करे जो (बनाये कूप आदि का) न हो किन्तु स्वयं बहती नदी आदि में ॥ ४६ ॥ कीड़ों के बिलों से, मूषों के घरों से, जल के भीतर से, मार्ग से, वृक्ष की जड़ से, देव मन्दिर से, और अन्य के हाथ मांजने से बची सात स्थानों से अपना कल्याण चाहने वाले विचार शील पुरुष स्नान के लिये सदा ही मट्टी न लेवें। किन्तु स्नान के लिये किसी शुद्ध स्थान से लेनी चाहिये ॥ ४७ । ४८ ॥ घोड़ा या रथ जिस पर चलते, विष्णु भगवान् अवतार ले २ कर जिसपर आक्रमण-पराक्रम किये, दिखायें ऐसी है पृथिवी हे मृत्तिके ! मेरे जो पूर्व संचित पाप हैं, उन को दूर करो ॥४९॥ हे पृथिवी कृष्ण वाराह अवतार धारी शत बाहु भगवान् ने तुम्हारा उद्धार किया है। हे मृत्तिके ! मैं प्रजा और धन के निमित्त तुम को ग्रहण करता हूँ

मृत्तिकेप्रतिगृह्णामि प्रजयाचधनेनच ॥५०॥
नित्यंनैमित्तिकंकाम्यं त्रिविधंस्नानमुच्यते ।
तेषांमध्येतुयन्नित्यं तत्पुनर्भिद्यतेत्रिधा ॥५१॥
मलापकर्षणंपूर्वं मन्त्रवत्तुजलेस्मृतम् ।
सन्ध्ययोरुभयोःस्नानं स्नानभेदाःप्रकीर्तिताः ॥५२॥
मार्जनंजलमध्येतु प्राणायामोयतस्ततः ।
उपस्थानंततःपश्चाद् गायत्रीजपउच्यते ॥ ५३ ॥
सवितादेवतायस्या मुखमग्निरुदाहृतः ।
विश्वामित्रऋषिश्छन्दो गायत्रीसाविशिष्यते ॥ ५४ ॥
अङ्गारकदिनेप्राप्ते कृष्णपक्षेचतुर्दशी ।
यमुनायांविशेषेण नियतोनियताशनः ॥ ५५ ॥
यमायधर्मराजाय मृत्यवेचान्तकायच ।
वैवस्वतायकालाय सर्वभूतक्षयायच ॥ ५६ ॥
औदुम्बरायदध्नाय नीलायपरमेष्ठिने ॥
वृकोदरायचित्राय चित्रगुप्तायवापुनः ॥ ५७ ॥
एकैकस्यतिलैर्मिश्रान् दद्यात्रीनष्टवाञ्जलीन् ।

र इन दो मन्त्रों को पढ़ के स्नान के लिये हाथ में मृत्ति का लेवे ॥५०॥
न, नैमित्तिक, काम्य, तीन प्रकार का स्नान कहा है । इन तीनों में जो
य स्नान है, वहभी तीनप्रकार का होता है ॥ ५१ ॥ मलापकर्षणार्थस्नान,
ं सहित जलाशय में स्नान, और दोनों संध्याओं के समय शुद्ध्यर्थ स्ना-
रना, ये तीनभेद नित्य स्नानके कहेहैं ॥५२॥ जलके बीच मार्जन, फिर जल
अथवा बाहर प्राणायाम करे, फिर सूर्यनारायण का उपस्थान करके पश्चात्
त्री का जप करना कहा है ॥ ५३ ॥ सविता, जिस का देवता, अग्नि जिस
मुख, विश्वामित्र, जिस के ऋषि, जो त्रिपाद् गायत्री छंद है, यह (तत्सवि-
र) गायत्री सर्वोत्तम है ॥ ५४ ॥ जब कभी कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को मंग-
र आजाय, उसी दिन थोड़ा नियत भोजन करने वाला सावधान जिते-
न्द्रिय हुआ पुरुष अपसव्य हो कर विशेष कर यमुना नदी पर जाके (ओंय-

यावज्जीवकृतंपापं तत्क्षणादेवनश्यति ॥ ५८ ॥
पञ्चमेतुतथाभागे संविभागोयथार्थतः ।
पितृदेवमनुष्याणां कीटानांचोपदिश्यते ॥ ५९ ॥
देवैश्चैवमनुष्यैश्च तिर्यग्भिश्चोपजीव्यते ।
गृहस्थःप्रत्यहंयस्मात्तस्माच्छ्रेष्ठाश्रमोगृही ॥ ६० ॥
त्रयाणामाश्रमाणांतु गृहस्थोयोनिरुच्यते ।
सीदमानेनतेनैव सीदन्तीहेतरेत्रयः ॥ ६१ ॥
मूलत्राणेभवेत्स्कन्धः स्कन्धाच्छाखेतिपल्लवाः
मूलेनैवविनष्टेन सर्वमेतद्विनश्यति ॥ ६२ ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन रक्षणीयोगृहाश्रमी ।
राज्ञाचान्यैस्त्रिभिःपूज्यो माननीयश्चसर्वदा ॥ ६३
गृहस्थोऽपिक्रियायुक्तो गृहेणनगृहीभवेत् ।

साय नमः । धर्मराजायनमः) इत्यादि मन्त्रों द्वारा चौदह यमों को प्र तिलमिले जलकी तीन २ वा आठ २ अञ्जुलि देवे, तो जन्मभर में कि पाप क्षणमात्र में नष्ट हो जाता है ॥५५ । ५६ । ५७ । ५८ ॥ दिनके पांच में यथा योग्य पितर, देव, मनुष्य, और कीड़े इनको महायज्ञ सम्बन्धी द्वारा संविभाग (देना) कहा है ॥ ५९ ॥ देवता, मनुष्य, तिर्यग्योनि, जिस कारण ब्राह्मणादि गृहस्थ से ही जीते हैं, तिस से गृहस्थ श्रेष्ठ तीनों आश्रमों का योनि (कारण) गृहस्थ कहा है । (गृहस्थ से ही हो २ कर ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, संन्यासी, होते हैं इससे गृहस्थ सब का मूल कारण है) उस के जगत् में दुःखी रहने से अन्य तीनों आश्रम हो जाते हैं ॥ ६१ ॥ जड़ की रक्षा करने से स्कन्ध (गुद्दे) और गुद्दों और डालियों से पत्ते हो जाते हैं और मूल (जड़) का नाश होने नष्ट हो जाते हैं ॥ ६२ ॥ तिस से सम्पूर्ण यत्नसे गृहस्थ आश्रम की रक्षा आदर (सत्कार) और मान प्रतिष्ठा राजा और तीनों आश्रमी सदा करें गृहस्थ भी क्रिया (अपने श्रुतिस्मृति प्रतिपादित धर्म कर्म) में तत्पर घर में रहने से गृहस्थ नहीं होता, अपने कर्म से हीन गृहस्थ पु औ

नचैवपुत्रद्वारेण स्वकर्मपरिवर्जितः ॥ ६४ ॥
अस्नात्वाचाप्यहुत्वाच तथाऽदत्वाचभुञ्जते।
देवादीनामृणीभूत्वा नरकंतेव्रजन्त्यधः ॥ ६५ ॥
अस्नात्वासमलंभुङ्क्ते त्वजापीपूयशोणितम् ।
हुत्वाचक्रमिंभुङ्क्ते ह्यदत्वाऽमेध्यमेवच ॥६६॥
यातप्तोदकस्नानं वृथाजाप्यमवैदिकम् ।
यारतमपुत्रस्य वृथाभुक्तमसाक्षिकम् ॥ ६७ ॥
कोहिभक्षयत्यन्नमपरोऽन्नेनभक्ष्यते ।
भुज्यतेसएवैकोयोऽन्नंभुङ्क्तेहुतांशकम् ॥६८॥
वभागशीलतायस्य क्षमायुक्तोदयालुकः ।
वतातिथिभक्तश्च गृहस्थःसतुधार्मिकः ॥६९॥
याळज्जाक्षमाश्रद्धा प्रज्ञात्यागःकृतज्ञता ।
गुणायस्यभवन्त्येते गृहस्थोमुख्यएवसः ॥७०॥
तंविभागंततःकृत्वा गृहस्थःशेषभुग्भवेत् ।

प नहीं होता कि जो स्वकर्म से रहित है ॥ ६४ ॥ स्नान होम और
कये विना जो गृहस्थ लोग भोजन करते हैं वे मनुष्य देवता
के ऋणी होकर अधोगति नरक में जाते हैं ॥ ६५ ॥ स्नान
विना भोजन करने वाला, मल सहित खाता, जप किये विना
ाला पीव, रुधिर के तुल्य अन्न को खाता,होम किये विना खाने वाला
को खाता, अतिथि को दिये विना अशुद्ध को खाता है ॥६६॥ गर्म किये
स्नान, वेदसे भिन्न स्तोत्र मन्त्रादि का जप, सन्तान हुए विना स्त्री से
न, और देवतादि को दिये विना भोजन करना, ये सब काम व्यर्थहैं॥६७॥
नुष्य तो अन्न को खाते हैं और किसी मनुष्यको अन्न ही खाता है। यदि
किसी को नहीं खाता तो उस को ही नहीं खाता है जो देव आदिको
(वैश्वदेव करके) खाता है ॥ ६८ ॥ जिस का स्वभाव अन्यों को भ.ग
ा है, जो क्षमायुक्त है, दयालु है, और देवता तथा अतिथियों का भक्त
ै गृहस्थ धार्मिक है ॥ ६९ ॥ दया, लज्जा, क्षमा, श्रद्धा, बुद्धिमत्ता, त्याग,
ता (अन्य के किये उपकार को मानना) ये गुण जिस में हैं, वही गृहस्थ
है ॥ ७० ॥ फिर सब के लिये विभाग देकर गृहस्थ पुरुष शेष अन्न को

भुक्त्वाऽथसुखमास्थाय तदन्नंपरिणामयेत् ॥७१॥
इतिहासपुराणाद्यैः षष्ठंवासप्तमंनयेत् ।
अष्टमेलोकयात्रांतु बहिःसंध्याततःपुनः ॥ ७२ ॥
होमंभोजनकृत्यंच यदन्यद्गृहकृत्यकम् ।
कृत्वाचेवंततःपश्चात् स्वाध्यायंकिंचिदाचरेत् ॥
प्रदोषपश्चिमौयामौ वेदाभ्यासेनतौनयेत् ।
यामद्वयंशयानस्तु ब्रह्मभूयायकल्पते ॥ ७४ ॥
नैमित्तिकानिकाम्यानि निपतन्तियथायथा ।
तथातथातुकार्याणि नकालं तुविलम्बयेत् ॥७५॥
अस्मिन्नेवप्रयुञ्जानो ह्यस्मिन्नेवप्रलीयते ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्वाध्यायंसर्वदाभ्यसेत् ॥ ७६
सर्वत्रमध्यमौयामौ हुतशेषंहविश्चयत् ।
भुञ्जानश्चशयानश्च ब्राह्मणोनावसीदति ॥ ७७ ॥
इति दाक्षे धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

खाने वाला हो और भोजन करके सुख पूर्वक बैठकर उस अन्न को प[चावे] ॥ ७१ ॥

दिन के छठे वा सातवें भाग को इतिहास पुराणआदि के [सुन]ने में बितावे। दिन के आठवें भागमें घर के कामों का प्रबन्ध करे फि[र] बाहर शुद्धस्थान में जाकर सन्ध्या करे ॥७२॥ फिर सायंकाल का होम [भोजन] कार्य और जो कुछ अन्य घर का कार्य हो उसे करके पश्चात् स्वाध्याय [(] वेदाध्ययन) करे ॥ ७३ ॥ रात्रि का पहिला और पिछला दो पहर [वेदाभ्यास] करने में बितावे और मध्यरात्रि के दो पहर सोकर बितावे ऐसा क[रने वाला] द्विज ब्रह्मभाव को प्राप्त होता है ॥ ७४ ॥ नैमित्तिक काम्य क[र्म जिस जिस] समय में आन पड़ें, उसी २ समय करने चाहिये क्योंकि उन के करने [में विल]म्ब न करे ॥७५॥ वेदाभ्यास में लगा हुआ पुरुष शब्द ब्रह्म में ही [लीन होता है] तिससे बड़े यत्न पूर्वक के साथ वेद का अभ्यास करे ॥ ७६ ॥ स[र्व] सब जगहों में रात के बीच के दोपहरों में सोता और होम से बचे [हुए अन्न] का भोजन करता हुआ कभी भी दुःखी नहीं होता ॥७७॥

यह दक्षस्मृति के भाषानुवाद में दूसरा अध्याय पूरा हुआ ।

सुधानवगृहस्थस्य मध्यमानिनवैवच ।
नवकर्माणितस्यैव विकर्माणिनवैवतु ॥ १ ॥
प्रछन्नानिनवान्यानि प्रकाश्यानिपुनर्नव ।
सफलानिनवान्यानि निष्फलानिनवैवतु ॥ २ ॥
अदेयानिनवान्यानि वस्तुजातानिसर्वदा ।
नवकानवनिर्दिष्टा गृहस्थोन्नतिकारका: ॥ ३ ॥
सुधावस्तूनिवक्ष्यामि विशिष्टेगृहआगते ।
मनश्चक्षुर्मुखंवाचं सौम्यंदत्त्वाचतुष्टयम् ॥ ४ ॥
अभ्युत्थानंततोगच्छेत् पृच्छालापःप्रियान्वित: ।
उपासनमनुव्रज्या कार्याण्येतानिनित्यश: ॥ ५ ॥
ईषद्दानानिचान्यानि भूमिरापस्तृणानिच ।
पादशौचंतथाभ्यङ्ग आसनंशयनंतथा ॥ ६ ॥
किंचिद्दद्याद्यथाशक्ति नास्यानश्नन्गृहेवसेत् ।
मृज्जलंचार्थिनेदेय मेतान्यपिसतांगृहे ॥ ७ ॥

...गृहस्थ के नौ ९ सुधा, (अमृत) नौ ९ मध्यम, नौ ९ कर्त्तव्य कर्म और ... विकर्म (निन्दित) कर्म हैं ॥ १ ॥ नौ ९ प्रच्छन्न (छिपे) कर्म, नौ ९ ...के योग्य, नौ सफल और नौ निष्फल कर्म हैं ॥ २ ॥ और नौ ९ वस्तु ...न देने योग्य हैं, ये नौ नवक अर्थात नौ २ संख्या वाले नौ काम कहे ...ही गृहस्थ की उन्नति करने वाले नौ काम हैं ॥ ३ ॥ नौ सुधा वस्तुओं ...ते हैं–यदि कोई प्रतिष्ठित विद्वान् वा सज्जन अपने घर आवे तब ...ब, मुख, वाणी, इन चारों को सौम्य कोमल श्रद्धा युक्त रक्खै ॥ ४ ॥ ...को आते देख कर उठ कर लावे, आने का प्रयोजन पूछे, प्यार से ...वा करे, अनुगमन (पीछे चलना) ये ९ काम प्रति दिन अभ्यागत के ... ॥ ५ ॥ ये आगे कहे नौ मध्यम दान हैं भूमि, जल, तृण–(कुश का ...का आसन) पग धोना, तैल मलना, आसन, शय्या ॥६॥ आये हुए ...को यथाशक्ति कुछ देना चाहिये, क्योंकि विना भोजन किये गृहस्थ ...अतिथि न वसे, मांगने वाले को मट्टी, वा जल जो वह चाहे देना ...ईषद्दान अच्छे घरों में सदा होते ही हैं ॥ ७ ॥

सन्ध्यास्नानंजपोहोमः स्वाध्यायोदेवतार्चनम्।
वैश्वदेवंक्षमातिथ्य मुद्धृत्यापिचशक्तितः ॥ ८ ॥
नवकर्माणिकार्याणि पूर्वोक्तानिमनीषिभिः।
कृत्वैवंनवकर्माणि सर्वकर्माभवेन्नरः ॥ ९ ॥
पितृदेवमनुष्याणां दीनानाथतपस्विनाम्।
गुरुमातृपितृणांच संविभागोयथार्थतः ॥
एतानिनवकर्माणि विकर्माणितथापुनः ॥ १० ॥
अनृतंपरदाराश्च तथाऽभक्ष्यस्यभक्षणम्।
अगम्यागमनापेय पानंस्तेयंचहिंसनम् ॥ ११ ॥
अश्रौतकर्माचरणं मैत्रंधर्मबहिष्कृतम्।
नवैतानिविकर्माणि तानिसर्वाणिवर्जयेत् ॥ १२ ॥
पैशुन्यमनृतंमाया कामःक्रोधस्तथाप्रियम्।
द्वेषोदम्भःपरद्रोहः प्रच्छन्नानितथानव ॥ १३ ॥
गीतनृत्येकृषिःसेवा वाणिज्यंलवणक्रिया।

सन्ध्या, स्नान, जप, होम, वेदपाठ, देवताओं का पूजन, वैश्वदेव, क्षमा, शक्ति अन्न निकाल के अतिथि का सत्कार,ये नौ शुभ कर्म हैं ॥ ८ ॥

तथा द्वितीय प्रकार से पितर, देवता, मनुष्य, दीन, अनाथ,तपस्वी माता पिता इन सब को यथा योग्य भोजनांश देवे। ये पूर्वोक्त नौ [illegible] तेन्द्रिय विद्वानों को कर्त्तव्य हैं इन नौ कर्मोंको करकेपुरुष सब धर्म [illegible] वाला माना जायगा ॥ ९ ॥ ये नौ ९ शुभ कर्म हैं, और आगे कहे नौ [illegible] नाम बुरे निन्दित कर्म हैं ॥ १० ॥ मिथ्याभाषण, परस्त्रीगमन अभ[illegible] भक्षण, अगम्या (वेश्या चाण्डाली आदि) स्त्री का गमन, न पीने यो[illegible] द्यादि का पीना, चोरी, हिंसा, ॥ ११ ॥ वेद में जो न कहे हों, ऐसे [illegible] करना, धर्म से विरुद्ध किसी के साथ मित्रता करना, ये नौ निन्दि[illegible] इन सब को त्याग कर देवे ॥ १२ ॥ पैशुन्य (चुगली करना) मिथ्या [illegible] छल कपट, काम, क्रोध, अन्य का अप्रिय, द्वेष, दंभ, परद्रोह, ये नौ [illegible] (छिप कर होने वाले) निन्दित काम हैं ॥ १३ ॥ गाना, बजाना,खेती [illegible] दास कर्म, वणिज्व्यापार, लवण बनाना, बेंचना, जुआ खेलना, हथियार [illegible]

द्यूतकर्मायुधान्यात्म–प्रशंसाचविकर्मच ॥ १४ ॥
आयुर्वित्तंगृहच्छिद्रं मन्त्रोमैथुनभेषजे ।
तपोदानापमानेच नवगोप्यानिसर्वदा ॥ १५ ॥
अयोग्यमृणशुद्धिश्च दानाध्ययनविक्रयाः ।
कन्यादानंवृषोत्सर्गो रहस्येतानिवर्जयेत् ॥ १६ ॥
मातापित्रोर्गुरौमित्रे विनीतेचोपकारिणि ।
दीनानाथविशिष्टेषु दत्तंचसफलंभवेत् ॥ १७ ॥
धूर्त्तेवन्दिनिमल्लेच कुवैद्येकितवेशठे ।
चाटुचारणचोरेभ्यो दत्तंभवतिनिष्फलम् ॥ १८ ॥
सामान्यंयाचितंन्यास माधिर्दाराःसुहृद्धनम् ।
भयार्दितंचनिःक्षेपः सर्वस्वंचान्वयेसति ॥ १९ ॥
आपत्स्वपिनदेयानि नववस्तूनिसर्वदा ।
योददातिसमूर्खस्तु प्रायश्चित्तेनयुज्यते ॥ २० ॥
नवनवकवेत्ताच मनुष्योऽधिपतिर्नृणाम् ।

अपनी प्रशंसा करना यह भी नौ कर्मों का तीसरा उदाहरण जानो ॥ अवस्था, धन, घर का छिद्र (कोई बुरीयात,) विष उतारने आदि के मैथुन, भेषज (उत्तमौषध,) तप, दान, अपमान, ये नौ ९ बातें सदैव ाने योग्य हैं ॥ १५ ॥ अयोग्य, ऋण की शुद्धि, दान देना, वेद पढ़ना, किसी को बेंचना, कन्या का दान, वृषोत्सर्ग, इन को एकांत में न करे ॥ १६ ॥ ा, पिता, गुरु, मित्र, नम्र, उपकारी, दीन, अनाथ, सज्जन धर्मात्मा वि॰ इन नौ को देना सफल है ॥ १७ ॥ धूर्त बंदी (कैदी,) मल्ल, कुवैद्य, ज॰ शठ, चाटु(मिठ बोला ठग) चारण, चोर, इन नौ को देना निष्फल है सामान्य वस्तु,भिक्षा, न्यास (धरोहर) आधि मानस दुःख, स्त्री, मित्र का भय से पीड़ित शरणागत मनुष्य, निःक्षेप धरो हर, और वंश के होते का सर्वस्व धन ये नौ ९ वस्तु आपत्काल में भी सदैव किसी को न देनी हये। जो इन भी को देता है, वह मूर्ख है और प्रायश्चित्त का भागी होता १९। २० ॥ इस पूर्वोक्त नव नवक इक्यासी ८१ को जानने वाला पुरुष

इहलोकेपरत्रापि श्रीश्चतंनैवमुञ्चति ॥ २१ ॥
यथैवात्मापरस्तद्वद् द्रष्टव्यःसुखमिच्छता।
सुखदुःखानितुल्यानि यथात्मनितथापरे ॥ २२ ॥
सुखंवायदिवादुःखं यत्किंचित्क्रियतेपरे।
यत्कृतंतुपुनःपश्चात्सर्वमात्मनितद्भवेत् ॥ २३ ॥
नक्लेशेनविनाद्रव्यं नद्रव्येणविनाक्रिया।
क्रियाहीनेनधर्मःस्याद्धर्महीनेकुतःसुखम् ॥ २४ ॥
सुखंहिवाञ्छतेसर्वस्तच्चधर्मसमुद्भवम्।
तस्माद्धर्मःसदाकार्यः सर्ववर्णैःप्रयत्नतः ॥ २५ ॥
न्यायागतेनद्रव्येण कर्तव्यंपारलौकिकम्।
दानंहिविधिनादेयं कालेपात्रेगुणान्विते ॥ २६ ॥
समद्विगुणसाहस्रमानन्त्यंचयथाक्रमात्।
दानेफलविशेषःस्याद्धिंसायांतद्वदेवहि ॥ २७ ॥
सममब्राह्मणेदानं द्विगुणंब्राह्मणब्रुवे।

मनुष्यों में अधिपति प्रधान माननीय होता है। इस लोक और पर
उसको लक्ष्मी नहीं छोड़ती है॥२१॥ सुख की इच्छा रखने वाला मनु
समान दूसरे को देखे, क्योंकि सुख दुःख अपने को जैसे होते वैसे ही
होते हैं ॥ २२ ॥ सुख या दुःख जो कुछ दूसरे के लिये किया जाता है
हुए उस सब का फल अपने आत्मा में होता है ॥ २३ ॥ दुःख उठा
द्रव्य नहीं मिलता और द्रव्य के बिना धर्म सम्बन्धी कर्म नहीं होता
हीन मनुष्य में धर्म नहीं होता और धर्म हीन मनुष्य को सुख नहीं
॥ २४ ॥ सब मनुष्य सुख को ही चाहते हैं,सो वह सुख धर्म से होता
ससे सब ब्राह्मणादि वर्णों को बड़े यत्न से सदा धर्म करना चाहिये
न्याय से प्राप्त हुये धन से परलोक के काम (यज्ञादि) करे, अच्छे पुरु
पर गुणी विद्वान् सुपात्र को विधि पूर्वक दान देवे ॥ २६ ॥ उस दान
क्रम से सम (उतनाही) दूना, सहस्रगुना, और अनंत होता है। जै
करने से सुपात्र के भेद से फल न्यून अधिक होता है वैसे ही ब्राह्मण
क्षत्रियादि को दान देने से सम फल ब्राह्मण ब्रुव (नाम मात्र के) ब्राह्मण
हिंसा में पाप भी वैसाही क्रमबढ़ जानो ॥२७॥ ब्राह्मण को दिये दान

सहस्त्रगुणमाचार्य्ये त्वनन्तंवेदपारगे ॥ २८ ॥
विधिहीनेयथाऽपात्रे योददातिप्रतिग्रहम् ।
न केवलंहितद्व्यर्थं शेषमप्यस्यनश्यति ॥ २९ ॥
व्यसनप्रतिकारार्थं कुटुम्बार्थेचयाचते ।
एवमन्विष्यदातव्यं सर्वदानेष्वयंविधिः ॥ ३० ॥
मातापितृविहीनस्य संस्कारोद्वाहनादिभिः ।
यःस्थापयतितस्येह पुण्यसंख्यानविद्यते ॥ ३१ ॥
यच्छ्रेयोनाग्निहोत्रेण नाग्निष्टोमेन लभ्यते ।
तच्छ्रेयःप्राप्नुयाद्विप्रो विप्रेणस्थापितेनवै ॥ ३२ ॥
यद्यदिष्टतमंलोके यच्चात्मदयितंभवेत् ।
तत्तद्गुणवतेदेयं तदेवाक्षयमिच्छता ॥ ३३ ॥

इति दाक्षे धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

आचार्य को दान देने से सहस्त्र गुणा और फल होता और वेदपार (जिस ने वेद का ठीक २ मर्म जान लिया हो) को दान देने से अ-फल होता है ॥ २८ ॥ विधि से-हीन तथा कुपात्र को जो प्रतिग्रह (दान) है। यह दान केवल व्यर्थ ही नहीं है किन्तु उस का शेष धन भी नष्ट ाता है ॥ २९ ॥ जो ब्राह्मणादि अपनी दुःख विपत्ति को हटाने के लिये ुटुम्ब का पालन पोषण करने मात्र के लिये याचना करता हो उस को कर देना चाहिये, यह सब दानों में उत्तम विधि है ॥३०॥ जिस के माता मर गये हों, ऐसे अनाथ बालक की उपनयनादि संस्कार और विवाह दे कर के जो मनुष्य स्थिति करता है उस के पुण्य की संख्या नहीं है जो कल्याण अग्निहोत्र और अग्निष्टोम यज्ञ से प्राप्त नहीं होता। उस क-ण को वह ब्राह्मण प्राप्त होता है जो अनाथ ब्राह्मण बालक की नींव-पित कर देता है ॥ ३२ ॥ संसार में जो २ वस्तु अत्यन्त इष्ट और जो य-अपने को प्रिय हो वह २ पदार्थ सुपात्र गुणी विद्वान् को देना चाहिये दान से अक्षय सुख मिलता है ॥ ३३ ॥

यह दक्षस्मृति के भाषानुवाद में तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥

पत्नीमूलंगृहंपुंसां यदिच्छन्दानुवर्तिनी।
गृहाश्रमात्परंनास्ति यदिभार्यावशानुगा।
तयाधर्मार्थकामानां त्रिवर्गफलमश्नुते ॥ १ ॥
अनुकूलकलत्रोयः स्वर्गस्तस्यनसंशयः।
प्रतिकूलकलत्रस्य नरकोनात्रसंशयः ॥ २ ॥
स्वर्गेऽपिदुर्लभंह्येतदनुरागःपरस्परम्।
रक्तमेकंविरक्तंच ततःकष्टतरंनुकिम् ॥ ३ ॥
गृहवासःसुखार्थोहि पत्नीमूलंचतत्सुखम्।
सापत्नीयाविनीतास्याच्चित्तज्ञावशवर्त्तिनी ॥४॥
दुःखान्वितासदाखिन्ना छिद्रंपीडापरस्परम्।
प्रतिकूलकलत्रस्य द्विदारस्यविशेषतः ॥ ५ ॥
जलौकाइवताःसर्वा भूषणाच्छादनाशनैः।
सुकृतापकृतानित्यं पुरुषंह्यपकर्षति ॥ ६ ॥
जलौकारक्तमादत्ते केवलंसातपस्विनी।

यदि आज्ञाकारिणी हो तो घर का मूल पत्नी ही है और [illegible] वश में हो तो, गृहस्थाश्रम से परे और कोई श्रेष्ठ नहीं है उस स्त्री के [illegible] धर्म अर्थ काम के त्रिवर्ग फल को भोगता है ॥१॥ जिस की स्त्री सर्वथा [illegible] हो उस को घर में ही स्वर्ग है इस में संशय नहीं। और जिस की स्त्री [illegible] कूल पति से विरुद्ध है उस को घर ही नरक है इस में भी संदेह नहीं ॥२॥ [illegible] पुरुष की परस्पर पूर्ण प्रीति का होना स्वर्ग में भी दुर्लभ है। एक प्रेम [illegible] वाला हो और दूसरा विरक्त [प्रेमी न हो] इस से अधिक और क्या [illegible] सकता है ॥३॥ घर का वसना सुख के लिये है और उस सुख का मूल [illegible] या] धर्मपत्नी है। जो स्त्री नम्र कोमल हो, चित्त की बात को जानने [illegible] तथा सर्वथा पति के आधीन रहे, वही वास्तव में पत्नी है ॥४॥ जो [illegible] से युक्त,सदा खेद मानने वाली, परस्पर एक दूसरे को पीड़ित [illegible] देखे, ऐसी प्रतिकूल स्त्री वाले तथा विशेष कर दो स्त्री वाले पुरुष को [illegible] सदा दुःख ही है ॥ ५ ॥ जैसे जोंकें (जलौका) जिसके लग जाती हैं [illegible] सब रुधिर पी लेती हैं। वैसे ही भूषण वस्त्र और भोजनादि से [illegible] हुए भी पति को वे अनेक स्त्रियां तङ्ग करती हैं ॥६॥ तपस्विनी [illegible]

अङ्गनातुधनंवित्तं मांसंवीर्यंबलंसुखम् ॥ ७ ॥
साशंकाबालभावेतु यौवनेऽभिमुखीभवेत् ।
तृणवन्मन्यतेनारी वृद्धभावेस्वकंपतिम् ॥ ८ ॥
सुकाम्येवर्तमानाच स्नेहान्नैवनिवारिता ।
सुमुख्यासाभवेत्पश्चाद्यथाव्याधिरुपेक्षितः ॥ ९ ॥
अनुकूलात्ववागदुष्टा दक्षासाध्वीपतिव्रता ।
एभिरेवगुणैर्युक्ता श्रीरिवस्त्रीनसंशयः ॥ १० ॥
प्रहृष्टमानसानित्यं स्थानमानविचक्षणा ।
भर्त्तुःप्रीतिकरीयातु भार्यासाचेतराजरा ॥ ११ ॥
शिष्योभार्याशिशुर्भ्राता मित्रंदासःसमाश्रितः ।
यस्यैतानिविनीतानि तस्यलोकेऽपिगौरवम् ॥ १२ ॥
प्रथमाधर्मपत्नीतु द्वितीयारतिवर्द्धिनी ।

ल रुधिरको पीतीहै। परन्तु प्रतिकूल स्त्रियां पुरुषके धन, अन्न, मांस, वीर्य, और सुख इन सबको हरलेती हैं ॥७॥ बाल्य अवस्था में स्त्री अपने पतिकी आशंका भी करती है, यौवनावस्थामें पतिका सामना करने लगती, और वृद्धावस्थामें स्त्री अपने पतिको तृणके समान समझती है॥८॥ अपनी इच्छानुसार [illegible]न करने में स्वतन्त्र हुई स्त्री को प्रेमके कारण यदि पतिने नहीं रोका तो [illegible]हे यह स्त्री अपने पति का सामना करने लगती है कि जैसे उपेक्षा करने [illegible] व्याधि (रोग) बढ़के प्रबल हो कर दबा लेता है ॥ ९ ॥ जो स्त्री अनुकूल, जिसकी वाणी कोमल तथा प्रिय हो, जो चतुर बुद्धिमती हो, साधु सरल भाव की हो, और पतिव्रता हो, इन सब गुणोंसे युक्त स्त्री लक्ष्मी के तुल्य है, इस में संशय नहीं ॥ १० ॥ जो स्त्री मन में सदा प्रसन्न रहे, पति का [illegible]ने और प्रतिष्ठा करने में प्रवीण हो, और जो पति से प्रीति रखने वाली, वही भार्या (सच्ची पत्नी) है, इससे भिन्न दुःखदायी [illegible] करनेवाली है ॥११॥ [illegible]ष्य, भार्या, बालक, भाई, मित्र, सेवक, और जो अपने आश्रित शरणागत [illegible]सके, ये शिष्यादि सब विनीत [नम्र कोमल वा शिक्षित] हैं उस को जगत [illegible]भी बड़ाई है ॥ १२ ॥ पहिली स्त्री धर्म पत्नी, दूसरी रति (कामादिक) [illegible]ाने वाली होती है। उस स्त्री का फल इस लोक में प्रत्यक्ष ही देखा है

पत्नीमूलंगृहंपुंसां यदिच्छन्दानुवर्तिनी।
गृहाश्रमात्परंनास्ति यदिभार्यावशानुगा।
तयाधर्मार्थकामानां त्रिवर्गफलमश्नुते॥१॥
अनुकूलकलत्रोयः स्वर्गस्तस्यनसंशयः।
प्रतिकूलकलत्रस्य नरकोनात्रसंशयः॥२॥
स्वर्गेऽपिदुर्लभंह्येतदनुरागःपरस्परम्।
रक्तमेकंविरक्तंच ततःकष्टतरंनुकिम्॥३
गृहवासःसुखार्थोहि पत्नीमूलंचतत्सुख
सापत्नीयाविनीतास्याच्चित्तज्ञावश
दुःखान्वितासदाखिन्ना छिद्रंपीडा
प्रतिकूलकलत्रस्य द्विदारस्यविशे
जलौकाइवताःसर्वा भूषणाच्छा
सुकृतापकृतानित्यं पुरुषंह्यपक
जलौकारक्तमादत्ते केवलंसा

यदि आज्ञाकारिणी हो तो घर
वश में हो तो, गृहस्थाश्रम से परे और
धर्म अर्थ काम के त्रिवर्ग फल को भोग
हो उस को घर में ही स्वर्ग है इस
कूल पति से विरुद्ध है उस को घर
पुरुष की परस्पर पूर्ण प्रीति का
वाला हो और दूसरा विरक्त [
सकता है ॥३॥ घर का बसना
या] धर्मपत्नी है। जो स्त्री
तथा सर्वथा पति के आधी
से युक्त,सदा खेद
देखे

क्तंशौचमशौचंच कार्यंत्याज्यंमनीषिभिः ।
वेशेषार्थंतयोःकिंचिद्वक्ष्यामिहितकाम्यया ॥ १ ॥
शौचेयत्नःसदाकार्यः शौचमूलोद्विजःस्मृतः ।
शौचाचारविहीनस्य समस्तानिष्फलाःक्रियाः ॥ २ ॥
शौचंचद्विविधंप्रोक्तं बाह्यमाभ्यन्तरंतथा ।
मृज्जलाभ्यांस्मृतंबाह्यं भावशुद्धिस्तथान्तरम् ॥ ३ ॥
आशौचाद्विवरंबाह्यं तस्मादाभ्यन्तरंवरम् ।
उभाभ्यान्तुशुचिर्यस्तु सशुचिर्नेतरःशुचिः ॥ ४ ॥
एकालिङ्गेगुदेतिस्रो दशवामकरेतथा ।
उभयोःसप्तदातव्या मृदस्तिस्रस्तुपादयोः ॥ ५ ॥
गृहस्थेशौचमाख्यातं त्रिष्वन्येषुक्रमेणतु ।
द्विगुणंत्रिगुणंचैव चतुर्थस्यचतुर्गुणम् ॥ ६ ॥
अर्द्धप्रसृतिमात्रातु प्रथमामृत्तिकास्मृता ।
द्वितीयाचतृतीयाच तदर्द्धापरिकीर्त्तिता ॥ ७ ॥

मन को वशी करने वाले विद्वान् ऋषि आचार्यों ने शुद्धि, अशुद्धि, करने-
त्यागने योग्य काम कहे हैं उनदोनों प्रकारके कर्त्तव्यों में मनुष्योंके हित
च्छासे हम कुछ विशेष विचार कहते हैं ॥१॥ शुद्धि करनेका सदैव प्रयत्न
न करना चाहिये क्योंकि ब्राह्मण पन की स्थिति वा पुष्टिका मूल कारण
ही है। शौच और शुद्ध आचारणसे जो हीन है, उसके सब कर्म निष्फल
॥ शुद्धि दो प्रकार की है, एक वाह्य (बाहर की) और दूसरी आभ्यन्तर
र की) वाह्य शरीरकी शुद्धि मट्टी और जलसे होती तथा भीतरी शुद्धि
ो छल कपट रहित करनेसे होती है ॥३॥ अशुद्ध रहनेसे वाह्य शुद्धि उत्तम
ोर वाह्य शुद्धि से आभ्यन्तर श्रेष्ठ है। इन दानों प्रकार से जो शुद्धि क-
है वही ठीक शुद्ध है, अन्य नहीं ॥ ४ ॥ लिंग में एक वार, गुदा में तीन
एक वांयें हाथ में दशवार, दोनों हाथों में मिला के सात वार और
ों पगों में तीन २ वार मट्टी लगावे ॥ ५ ॥ यह शुद्धि गृहस्थियों की कही
ह्मचारी, वानप्रस्थ तथा संन्यासी इन तीनों का क्रमशः गृहस्थ से दूनी
नी, चौगुनी, शुद्धि करनी चाहिये ॥ ६ ॥ पहिली वार आधी पसमें मट्टी
ो कही है और दूसरी वा तीसरी वार में आधी मट्टी जानो ॥ ७ ॥

लिङ्गेतुमृत्समाख्याता त्रिपर्वपूर्यतेयया।
एतच्छौचंगृहस्थानां द्विगुणंब्रह्मचारिणाम् ॥ ८ ॥
त्रिगुणंतु वनस्थानांयतीनांचचतुर्गुणम्।
दातव्यमुदकंतावन्मृद्भावोयथाभवेत् ॥ ९ ॥
मृत्तिकानांसहस्रेण चोदकुम्भशतेनच।
नशुद्ध्यन्तिदुरात्मानो येषांभावोननिर्मलः ॥ १० ॥
मृदातोयेनशुद्धिःस्यान्नक्लेशोनधनव्ययः।
यस्यशौचेपिशैथिल्यं चित्तंतस्यपरीक्षितम् ॥ ११ ॥
अन्यदेवदिवाशौचमन्यद्रात्रौविधीयते।
अन्यदापदिनिर्द्दिष्टं ह्यन्यदेवह्यनापदि ॥ १२ ॥
दिवोदितस्यशौचस्य रात्रावर्द्धंविधीयते।
तदर्धमातुरस्याहुस्त्वरायामर्द्धंवर्त्मनि ॥ १३ ॥
न्यूनाधिकंनकर्त्तव्यं शौचंशुद्धिमभीप्सता।
प्रायश्चित्तेनयुज्येत विहिताऽतिक्रमेकृते ॥ १४ ॥

इति दाक्षे धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

लिंग में इतनी मट्टी लगावे जिस से सब अंगुलियों के तीनों प्रपुर भ[illegible] यह गृहस्थियों की शुद्धि कही, इस से दूनी ब्रह्मचारियों को ॥ ८ ॥ [illegible] वानप्रस्थों को, और चौगुनी संन्यासियों को करनी चाहिये और मट्टी [illegible] इतना जल छोड़े जिस से वह सब मट्टी धो जाय ॥ ९ ॥ जिन का अन्त[illegible] निर्मल नहीं, वे दुष्टात्मा मनुष्य सहस्रवार मट्टी लगाने वा सौ घड़े [illegible] शुद्ध नहीं होते ॥ १० ॥ मट्टी और जल से शुद्धि होती है, इस में न [illegible] क्लेश और न धन का कुछ खर्च है, ऐसी शुद्धि करने में भी जिस को [illegible] है, उस के चित्त की परीक्षा हो गयी ॥ ११ ॥ दिन में अन्य, रात्रि [illegible] आपत्ति में अन्य, और विना आपत् के समय अन्य शुद्धि कही है ॥ [illegible]

दिन में जितनी शुद्धि करे, उससे आधी रात्रि में करे, उसमे भी आधी [illegible] करे, शीघ्रता के समय और मार्गमें चलने के समय भी आधी शुद्धि [illegible]

शुद्धिकी इच्छा करने वाला मनुष्य पूर्वोक्त से न्यून वा अधिक [illegible] करे। क्योंकि शास्त्र विहित कर्म का उलङ्घन करने में प्रायश्चित्त [illegible] हो जाता है ॥ १५ ॥

यह दक्षस्मृति के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूरा हुआ ॥

आशौचन्तुप्रवक्ष्यामि जन्ममृत्युनिमित्तकम् ।
यावज्जीवंतृतीयंतु यथावदनुपूर्वशः ॥ १ ॥
सद्यःशौचंतथैकाह स्त्र्यहश्चतुरहस्तथा ।
षड्दशद्वादशाहाश्च पक्षोमासस्तथैवच ॥ २ ॥
मरणान्तंतथाचान्यद्दशपक्षास्तुसूतके ।
उपन्यासक्रमेणैव वक्ष्याम्यहमशेषतः ॥ ३ ॥
ग्रन्थार्थं योविजानाति वेदमङ्गैःसमन्वितम् ।
सकल्पंसरहस्यंच क्रियावांश्चेन्नसूतकी ॥ ४ ॥
राजर्त्विग्दीक्षितानांच बालेदेशान्तरेतथा ।
व्रतिनांसत्रिणांचैव सद्यःशौचंविधीयते ॥ ५ ॥
एकाहाच्छुध्यतेविप्रो योग्निवेदसमन्वितः ।
त्र्यहात्केवलवेदस्तु द्विहीनोदशभिर्दिनैः ॥ ६ ॥
शुध्येद्विप्रोदशाहेन द्वादशाहेनभूमिपः ।

जन्म और मरण निमित्त का आशौच कहते हैं तीसरा आशौच जीवने का है क्रमसे तीन प्रकार के अशौच शास्त्रोक्त हैं ॥ १ ॥ सद्यः शौच (उसी शुद्धि करलेना,) एक दिन, तीन दिन, चार दिन, छः दिन, दश दिन, बारह पन्द्रह दिन, एकमास॥२॥और मरण पर्यन्त, ये दश पक्ष सूतक में मानेगये हैं। क्रम से हम कहते हैं॥३॥जो पुरुष ग्रन्थों के अर्थको वेदके छः अङ्गों,कल्प और के सहित वेदको जानताहै वह यदि श्रौतस्मार्त्त कर्मों को करताहोतो उसको नहीं लगता । अर्थात् वह स्नानादि करके तत्काल शुद्ध हो जाताहै ॥४॥ ऋत्विज्, दीक्षित, (जिस ने यज्ञादि में दीक्षा ले रक्खी हो) बालक, में जो रहता हो, व्रती, सत्री (सत्रयज्ञ में जो बैठे हों) इन सब को तत्काल शुद्धि कही है ॥ ५ ॥ जो ब्राह्मण अग्निहोत्री तथा वेदपाठी हि एकही दिनमें शुद्धि करले । तथा केवल वेदाध्ययन कर्त्ता तीन दिन माने और अग्निहोत्र तथा वेदाध्ययन दोनों से हीन ब्राह्मण दशदिन द्ध होता है ॥ ६ ॥ जातिमात्र ब्राह्मण को दशदिन का, क्षत्रिय को बारह

लिङ्गेतुमृत्समाख्याता त्रिपर्वपूर्यतेयया।
एतच्छौचंगृहस्थानां द्विगुणंब्रह्मचारिणाम्॥८॥
त्रिगुणंतु वनस्थानांयतीनांचचतुर्गुणम्।
दातव्यमुदकंतावन्मृदभावोयथाभवेत्॥९॥
मृत्तिकानांसहस्रेण चोदकुम्भशतेनच।
नशुद्ध्यन्तिदुरात्मानो येषांभावोननिर्मलः॥१०॥
मृदातोयेनशुद्धिःस्यान्नक्लेशोनधनव्ययः।
यस्यशौचेपिशैथिल्यं चित्तंतस्यपरीक्षितम्॥११॥
अन्यदेवदिवाशौचमन्यद्रात्रौविधीयते।
अन्यदापदिनिर्दिष्टं ह्यन्यदेवह्यनापदि॥१२॥
दिवोदितस्यशौचस्य रात्रावर्द्धंविधीयते।
तदर्धमातुरस्याहुस्त्वरायामर्द्धंवर्त्मनि॥१३॥
न्यूनाधिकंनकर्तव्यं शौचंशुद्धिमभीप्सता।
प्रायश्चित्तेनयुज्येत विहिताऽतिक्रमेकृते॥१४॥
इति दाक्षे धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः॥५॥

लिंग में इतनी मट्टी लगावे जिस से सब अंगुलियों के तीनों पर्व ...
यह गृहस्थियों की शुद्धि कही, इस से दूनी ब्रह्मचारियों को ...
वानप्रस्थों को, और चौगुनी संन्यासियों को करनी चाहिये और ...
इतना जल छोड़े जिस से वह सब मट्टी धो जाय ॥ ९ ॥ जिन का ...
निर्मल नहीं, वे दुष्टात्मा मनुष्य सहस्रवार मट्टी लगाने वा ...
शुद्ध नहीं होते ॥ १० ॥ मट्टी और जल से शुद्धि होती है ...
क्लेश और न धन का कुछ खर्च है, ऐसी शुद्धि करने में भी ...
है, उस के चित्त की परीक्षा हो गयी ॥ ११ ॥ दिन में अन्य ...
आपत्ति में अन्य, और विना आपत् के समय अन्य शुद्धि ...

दिन में जितनी शुद्धि करे, उससे आधी रात्रि में करे, ...
करे, शीघ्रता के समय और मार्गमें चलने के समय भी ...

शुद्धिकी इच्छा करने वाला मनुष्य पूर्वोक्त से न्यून वा ...
करे। क्योंकि शास्त्र विहित कर्म का उल्लङ्घन करने से प्राय...
हो जाता है ॥ १४ ॥

यह दक्षस्मृति के भाषानुवाद में पांचवां अ...

...न्तेमृतौयस्तु सूतकान्तेचसूतकम् ॥ १४ ॥
एतत्संहतशौचानां पूर्वाशौचेनशुद्ध्यति ।
उभयत्रदशाहानि कुलस्यान्नंनभुज्यते ॥ १५ ॥
चतुर्थेऽहनिकर्तव्यमस्थिसंचयनंद्विजैः ।
ततःसंचयनादूर्ध्वमङ्गस्पर्शोविधीयते ॥ १६ ॥
वर्णानामानुलोम्येन स्त्रीणामेकोयदापतिः ।
दशाहषट्त्र्यहैकाहं प्रसवेसूतकंभवेत् ॥ १७ ॥
स्वस्थकालेत्विदंसर्वमशौचंपरिकीर्तितम् ।
आपद्गतस्यसर्वस्य सूतकेऽपिनसूतकम् ॥ १८॥
यज्ञेप्रवर्तमानेतु जायेतार्थम्रियेतवा ।
पूर्वसंकल्पितेकार्ये नदोषस्तत्रविद्यते ॥ १९ ॥
यज्ञकालेविवाहेच देवयागेतथैवच ।
हूयमानेतथाचाग्नौ नाशौचं नापिसूतकम् ॥ २०॥

इति दाक्षे धर्म्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

...सूतक का समय पूरा न होने तक जो अन्य कोई मरे अथवा ऐसे ही ...तक में अन्य जन्म हो जाय तो ॥१४॥ इन मिले हुए सूतकों में पूर्व ...शेष दिनों में दोनों की एक साथ शुद्धि हो सकती है। दोनों सू- ...दश दिन तक सूतक वाले कुल का अन्न न खावे ॥ १५ ॥ मरण के ... दिन विद्वान् द्विज अस्थि संचयन करे। फिर अस्थि संचयन के पीछे ...ों के शरीर का स्पर्श कहा है ॥ १६ ॥ वर्णों के अनुलोम क्रमसे यदि ...पति एक होय तो, ब्राह्मणी, क्षत्रिया, वैश्या, शूद्रा, इन ब्राह्मणकी ...ों को क्रम से दश, छः, तीन, एक, दिन का प्रसव में सूतक लग... यह सब सूतक का विचार स्वस्थदशा में कहा है और आपत्तिकाल ...समय में भी सूतक नहीं लगता ॥ १८ ॥ यज्ञ का आरम्भ होजाने ... कोई जन्मे वा मरे तो, पूर्व जिन यज्ञ का संकल्प हो गया है ...े में दोष नहीं है ॥ १९ ॥ यज्ञ के समय, विवाह में प्रतिष्ठा- ...अग्निहोत्र में, मरण और जन्म दोनों के सूतक नहीं लगते ॥२०॥ ...क्षस्मृति के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥६॥

वैश्यःपञ्चदशाहेन शूद्रोमासेनशुध्यति ॥ ७ ॥
अस्नात्वाचाप्यहुत्वाच ह्यदत्त्वायेतुभुञ्जते।
एवंविधानांसर्वेषां यावज्जीवंहिसूतकम् ॥ ८ ॥
व्याधितस्यकदर्यस्य ऋणग्रस्तस्यसर्वदा।
क्रियाहीनस्यमूर्खस्य स्त्रीजितस्यविशेषतः ॥ ९ ॥
व्यसनासक्तचित्तस्य पराधीनस्यनित्यशः ॥
श्रद्धात्यागविहीनस्य भस्मान्तंसूतकंभवेत् ॥ १० ॥
नसूतकंकदाचित्स्याद्यावज्जीवन्तुसूतकम्।
एवंगुणविशेषेण सूतकंसमुदाहृतम् ॥ ११ ॥
सूतकेमृतकेचैव तथाचमृतसूतके।
एतत्संहृतशौचानां मृताशौचेनशुद्ध्यति ॥ १२ ॥
दानंप्रतिग्रहोहोमः स्वाध्यायश्चनिवर्त्तते।
दशाहात्तुपरंशौचं विप्रोऽर्हतिचधर्म्मवित् ॥ १३ ॥
दानंचविधिनादेयमशुभात्तारकंहितत्।

दिन का, वैश्य को पन्द्रह दिन का, और शूद्र को महीने भर का सूत
गता है ॥ ७ ॥ स्नान, होम, अतिथि पूजन आदि न करके जो भोजन
हैं ऐसे सब मनुष्यों को जीवन पर्यन्त (अशौच) सूतक लगता है ॥ ८ ॥
कदर्य (कञ्जूस,) सदैव ऋणी, क्रिया कर्मसे हीन, मूर्ख, और विशेष क
ने जिसे जीत लिया हो ॥ ९ ॥ व्यसन (जुआ आदि) में जिस का चि
सक्त हो, नित्य जो पराधीन हो, श्रद्धा तथा त्याग (वैराग्य) से जो ही
उस को भस्मान्त (मरण पर्यन्त) सूतक लगता है ॥ १० ॥ सूतक कभी
और जीने तक सूतक रहे इसप्रकार गुण विशेषसे सूतक दो प्रकारका है
जन्म सूतक में यदि मरण सूतक हो तथा मरण सूतक में जन्म
मिलजाय तो दोनों की शुद्धि मरण सूतक के संग होती है।
सूतक में दान देना, प्रतिग्रह (दान लेना) होम, स्वाध्याय (वे
ये सब काम निवृत्त हो जाते हैं। धर्म को जानने वाला ब्राह्मण द
पीछे सब कर्मों के योग्य शुद्ध हो जाता है ॥ १३ ॥ शास्त्रोक्त विधि
देना चाहिये क्योंकि यह दान अशुभ पाप से तारने वाला है। यदि

पुनः पुनश्चनिर्वेदाद्योगः सिद्ध्यतिनान्यथा ॥ ८
आत्मचिन्ताविनोदेन शौचेनक्रीडनेनच ।
सर्वभूतसमत्वेन योगःसिद्ध्यतिनान्यथा ॥ ९ ॥
यश्चाऽऽत्ममिथुनोनित्यमात्मक्रीडस्तथैवच ।
आत्मानन्दस्तुसतत मात्मन्येवसमाहितः ॥ १० ॥
अस्मिन्नेवसुतृप्तश्च संतुष्टोनाऽन्यमानसः ।
आत्मन्येवसुतृप्तस्य योगोभवतिनान्यथा ॥ ११ ॥
सुप्तोऽपियोगयुक्तश्च जाग्रदेवविशेषतः ।
ईदृक्चेष्टःस्मृतःश्रेष्ठो वरिष्ठोब्रह्मवादिनाम् ॥ १२ ॥
अस्त्वात्मव्यतिरेकेण द्वितीयंनैवपश्यति ।
ब्रह्मभूतःसएवेह दक्षपक्षउदाहृतः ॥ १३ ॥
विषयासक्तचित्तोहि कश्चिद्योगंनविन्दति ।
यत्नेनविषयासक्तिं तस्माद्योगीविवर्जयेत् ॥ १४ ॥

टल श्रद्धा विश्वास होने, और बार बार संसार से प्रबल उदासीनता
प होने से योग सिद्ध होता है, अन्यथा नहीं ॥ ८ ॥ परमात्मा की
र के आनंद, शौच, अपने आत्मा में ही क्रीड़ा करने और सब प्राणि-
ं समदृष्टि होने से योग सिद्ध होता है, अन्यथा नहीं ॥९॥ जो नित्य ही
र विचार में आनन्दित, आत्मा क्रीड़ा में तत्पर, अपने आत्मा में
आनन्द मानने वाला और निरंतर एकाग्र चित्त से अपने आपे में रहने
ा ॥ १० ॥ इसी अध्यात्म विचार में सम्यक् तृप्त और मन से संतुष्ट रहै
। बात में जिस का मन न लगता हो और आत्मा में ही अच्छे प्रकार
पुरुष को योग सिद्ध होता है, अन्य था नहीं ॥ ११ ॥ सोता हुआ भी
े विशेष कर जागता ही है, ऐसी जिस की चेष्टा हो, वही श्रेष्ठ तथा
वादियों में बड़ा है ॥ १२ ॥ जो योगी विद्वान् अपने आत्मा से भिन्न
ीय को नहीं देखता अर्थात् सब प्राणियों को एक ब्रह्मास्वरूप अभेद
। से देखता है वही ब्रह्मरूप दक्ष ऋषि के पक्ष में कहा है ॥ १३ ॥
ायों में जिसका चित्त आसक्त है, वह कोई भी योग को प्राप्त नहीं होता
ाते योगी पुरुष विषयों की फसावट को बड़े यत्न से छोड़ देवे ॥ १४ ॥

अतःपरंप्रवक्ष्यामि योगस्यविधिमुत्तमम् ।
लोकावशीकृतायेन येनचात्मावशीकृतः ॥ १ ॥
इन्द्रियार्थास्तपस्तस्य योगंवक्ष्याम्यशेषतः ॥ २ ॥
प्राणायामस्तथाध्यानं प्रत्याहारोऽथधारणा ।
तर्कश्चैवसमाधिश्च पडङ्गोयोगउच्यते ॥ ३ ॥
मैत्रीक्रियामुदेसर्वा सर्वप्राणिव्यवस्थिता ।
ब्रह्मलोकंनयत्याशु धातारमिवधारणा ॥ ४ ॥
नारण्यसेवनाद्योगो नानेकग्रन्थचिन्तनात् ।
व्रतैर्यज्ञैस्तपोभिर्वा नयोगःकस्यचिद्भवेत् ॥ ५ ॥
नचपद्मासनाद्योगो ननासाग्रनिरीक्षणात् ।
नचशास्त्रातिरिक्तेन शौचेनभवतिक्वचित् ॥ ६ ॥
नमन्त्रमौनकुहकैरनेकैःसुकृतैस्तथा ।
लोकयात्राभियुक्तस्य न योगःकस्यचिद्भवेत् ॥ ७ ॥
अभियोगात्तथाभ्यासात्तस्मिन्नेवसुनिश्चयात् ।

अब आगे योग का उत्तम विधान कहते हैं । संसारी लोगों को
अपने आप को जिस ने वश में किया है ॥ १ ॥ इन्द्रिय और शब्द,
रूप, रस, गन्ध ये विषय, ये सब जिसने वश में किये हैं,जो तपकरने
हो, उस के लिये संपूर्ण योग कहते हैं ॥२ ॥ प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार,
रणा, तर्क, समाधि ये छः जिस के अंग (भाग) हैं उसे योग कहते हैं ।
आनन्द प्राप्ति के लिये सब प्राणियों के साथ ईर्ष्या द्वेष वैर विरोध
मित्र दृष्टि करे, वह मैत्री योगी को ऐसे ब्रह्मलोक में लेजाती है जैसे
ब्रह्मा जी को ब्रह्मलोक में पहुंचाती है ॥४॥ केवल वन में रहने से
ग्रंथों को शोचने विचार ने से, व्रत, यज्ञ और तप करने से किसी
नहीं होता ॥ ५ ॥ पद्मासन लगा के बैठने, नाक के अग्रभाग को
और शास्त्रविरुद्ध अधिक शुद्धि करने से भी योग कभी नहीं होता ॥
मन्त्र जपने, मौन रहने धूनी लगाने, और अनेक प्रकार के पुण्य करने
लोक के व्यवहारों में तत्पर रहने, से भी योग नहीं होता ॥ ७ ॥
विचार में तत्परता होने, बार २ लगा तार योग का अभ्यास करने

विषयेन्द्रियसंयोगं केचिद्योगंवदन्तिवै ।
अधर्मोधर्मबुद्ध्यातु गृहीतस्तैरपण्डितैः ॥ १५ ॥
आत्मनोमनसश्चैव संयोगन्तुततःपरम् ।
उत्तानमनसोह्येते केवलंयोगवञ्चिताः ॥ १६ ॥
वृत्तिहीनंमनःकृत्वा क्षेत्रज्ञंपरमात्मनि ।
एकीकृत्यविमुच्येत योगोऽयंमुख्यउच्यते ॥ १७ ॥
कषायमोहविक्षेप लज्जाशङ्कादिचेतसः ।
व्यापारास्तुसमाख्यातास्तान्जित्वावशमानयेत् ॥१८॥
कुटुम्बैःपञ्चभिर्ग्रामः षष्ठस्तत्रमहत्तमः ।
देवासुरैर्मनुष्यैश्च सजेतुंनैवशक्यते ॥ १९ ॥
मनसैवेन्द्रियाण्यत्र मनश्चात्मनियोजयेत् ।
सर्वभावविनिर्मुक्तं क्षेत्रज्ञंब्रह्मणिन्यसेत् ॥ २० ॥
बलेनपरराष्ट्राणि गृह्णन्शूरस्तुनोच्यते ।
जितोयेनेन्द्रियग्रामः सशूरःकथ्यतेबुधैः ॥ २१ ॥

कोई मनुष्य विषय और इन्द्रियों के संयोग को ही योग कहते हैं। उन
बुद्धियों ने अधर्म को धर्म बुद्धि से ग्रहण किया जानो ॥१५॥ तथा अन्य
लोग आत्मा और मन के संयोग को योग कहते हैं। ये लोग उत्ता[न]
वाले होने से केवल योग से वञ्चित रहते हैं ॥ १६ ॥ मन को वृत्तियों से
निर्बल करके और क्षेत्रज्ञ आत्मा को परमात्मा में एक करके मुक्त हो
यह मुख्य योग कहा है ॥ १७ ॥ कषाय (मन की मलिनता) मोह (अज्ञा[न])
विक्षेप (चित्त की चञ्चलता) लज्जा और शंका इत्यादि चित्त के व्यापा[र]
हैं। उन कषायादि व्यापारों को जीत कर मन को वश में करे ॥ १८ ॥
कुटुम्बों (५ इन्द्रियों) का ग्राम होता है और उस ग्राम में छठा (मन)
अत्यन्त बड़ा है उस को देवता मनुष्य और असुर भी जीतने को समर्थ [नहीं]
होते ॥ १९ ॥ इन्द्रियों को मन से रोक कर और मन को आत्मा में [लगा]
और सब भावों (पदार्थों) से रहित क्षेत्रज्ञ आत्मा को ब्रह्म में लीन क[रे ॥ २० ॥]
जो बल से पराये राज्यों को छीन ले वह शूर नहीं कहाता किन्तु [पण्डित]
जन उसे ही शूर कहते हैं जिस ने सब इन्द्रियों को जीत लिया है ॥ [२१ ॥]

तत्सूक्ष्मत्वादनिर्देश्यं परंब्रह्मसनातनम् ॥ २७ ॥
बुधास्त्वाभरणंभारं मलमालेपनंतथा।
मन्यन्तेस्त्रीचमूर्खश्च तदेवबहुमन्यते ॥ २८
सत्वोत्कटाःसुराःसर्वे विषयैश्चवशीकृताः।
प्रमादिनिक्षुद्रसत्त्वे मनुष्येचात्रकाकथा ॥ २९ ॥
तस्मात्त्यक्तकषायेन कर्तव्यंदण्डधारणम्।
इतरस्तुनशक्नोति विषयैरभिभूयते ॥ ३० ॥
नस्थिरंक्षणमप्येकमुदकंचयथोर्मिभिः।
वाताहतंतथाचित्तं तस्मात्तस्यनविश्वसेत् ॥ ३१ ॥
ब्रह्मचर्यंसदारक्षेदष्टधामैथुनंपृथक्।
स्मरणंकीर्तनंकेलिः प्रेक्षणंगुह्यभाषणम् ॥ ३२ ॥
संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेवच।
एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्तिमनीषिणः ॥ ३३ ॥
वैणवेनत्रिदण्डेन नत्रिदण्डीतिकथ्यते।

के अयोग्य नहीं) है ॥२७॥ पण्डित लोग आभूषणों के धारण को बोझ [illegible] शरीर पर मलिनता का लेपन मानते हैं। स्त्री और मूर्ख लोग [illegible] ही बहुत उत्तम मानते हैं ॥ २८ प्रबल सत्य गुण वाले सब देवता [illegible] ने सब अपने वशमें करलिये तब प्रमादी (भूल में पड़े) [illegible] मनुष्यों के कामादि वश होनेका कहना ही क्या है। ॥ २९ ॥ [illegible] मन की मलिनता त्यागी हो वह विषयों के साथ युद्ध करने के [illegible] धारण करे। जिस ने मन की मलिनता नहीं त्यागी वह दंड धारण [illegible] समर्थ नहीं होता, क्योंकि विषय ही उस को दबालेते हैं ॥ ३० ॥ [illegible] के उठने से जल एक क्षण मात्र भी स्थिर नहीं रहता इसी प्रकार [illegible] वासनाओं के वायु से चलायमान हुए चित्त का भी अनुचित [illegible] मने का विश्वास न करे ॥ ३१ ॥ आठों प्रकार के मैथुन से [illegible] रक्षा करे। सुन्दरी युवति स्त्रियों का स्मरण, कीर्तन (गुण [illegible]) वर्णन करना, क्रीड़ा (स्त्रियों के साथ खेलना) प्रेक्षण (देखना) [illegible] बातें करना, संकल्प (स्त्री संग का मनोरथ होना) अध्यवसाय ([illegible] का दृढ़ निश्चय) क्रिया की सिद्धि अर्थात् साक्षात् संयोग करना [illegible] प्रकार का मैथुन बुद्धिमान् कहते हैं ॥३३॥ बांस के त्रिदण्ड [illegible]

स्नेहपैशुन्यमात्सर्यं सन्निकर्षान्नसंशयः ॥ ४१ ॥
लाभपूजानिमित्तंहि व्याख्यानंशिष्यसंग्रहः ।
एतेचान्येचबहवः प्रपञ्चास्तुतपस्विनाम् ॥ ४२ ॥
ध्यानंशौचंतथाभिक्षा नित्यमेकान्तशीलता ।
भिक्षोश्चत्वारिकर्माणि पञ्चमंनोपपद्यते ॥ ४३ ॥
यस्मिन्देशेवसेद्योगी ध्यानयोगविचक्षणः ।
सोऽपिदेशोभवेत्पूतः किंपुनस्तस्यबान्धवाः ॥ ४४ ॥
तपोजपैःकृशीभूत्वा व्याधितावसथार्हणः ।
वृद्धारोगगृहीताश्च येचान्येविकलेन्द्रियाः ॥ ४५ ॥
नोरुजश्चयुवाचैव भिक्षुर्नावसथार्हतः ।
सदूपयतितत्स्थानं वृद्धादीन्पीडयत्यपि ॥ ४६ ॥
नीरुजश्चयुवाचैव ब्रह्मचर्याद्विनश्यति ।

प्रम की बाते, चुगली की चर्चा, निन्दा स्तुति, मत्सरता, ये सब बातें [illegible] के मिलने से अवश्य निःसन्देह होती हैं ॥ ४१ ॥ उपदेश व्याख्यान [illegible] कथा सुनाना और बहुत शिष्यों को रखना, इन इत्यादि कामों को [illegible] लोग धन वस्त्रादि का लाभ और प्रशंसा प्रतिष्ठा होने के लिये करते [illegible] सो ऐसे अन्य भी बहुत प्रपञ्च तपस्वी लोगोंको अधोगति में गिराते हैं [illegible] ध्यान करना, शुद्धि करना, भिक्षा मांगकर खाना, और सब से पृथक् [illegible] में ठहरने का स्वभाव, संन्यासी के ये चार कर्म मुख्य तथा नित्य [illegible] पांचवां सिद्ध नहीं होता ॥ ४३ ॥ ध्यान योगाभ्यास करने में चतुर [illegible] न्यासी जिस देश में बसता है। वह देश भी जब पवित्र होजाता है [illegible] कुटुम्बी लोग पवित्र क्यों न होंगे ? ॥ ४४ ॥ तप तथा जप करनेसे [illegible] शरीर वाले होके जो रोगी हो गये हैं वे किसी छये घटे घर में [illegible] तथा जो वृद्ध हों, रोग से युक्त हों और जो लूले, लंगड़े, अन्धे [illegible] गये हों वेभी किसी घर में बसें ॥ ४५ ॥

जो रोगसे हीन युवा अवस्था का संन्यासी हो वह घर में बसने [illegible] नहीं है। यह उस स्थान को दोष युक्त करता और वृद्ध आदि को दुः[illegible] है ॥ ४६ ॥ रोग हीन और युवा अवस्था का भिक्षु ब्रह्मचर्य से नष्ट [illegible]

ब्रह्मचर्याद्विनष्टश्च कुलंगोत्रंचनाशयेत् ॥ ४७ ॥
वसन्नावसथेभिक्षुर्मैथुनंयदिसेवते ।
तस्यावसथनाथःस्यात्कुलान्यपिनिकृन्तति ॥ ४८ ॥
आश्रमेतुयतिर्यस्य मुहूर्तमपिविश्रमेत् ।
किंतस्यान्येनधर्मेण कृतकृत्योऽभिजायते ॥ ४९ ॥
संचितंयद्गृहस्थेन पापमामरणान्तिकम् ।
निर्दहत्येवतत्सर्वमेकरात्रोपितोयतिः ॥ ५० ॥
अध्वश्रमपरिश्रान्तं यस्तुभोजयतेयतिम् ।
अखिलंभोजितंतेन त्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ ५१ ॥
द्वैतंचैवतथाद्वैतं द्वैताद्वैतंतथैवच ।
नद्वैतंनापिचाद्वैतमित्येतत्पारमार्थिकम् ॥ ५२ ॥
नाहंनैवतुसंबंधो ब्रह्मभावेनभावितः ।
ईदृशायांत्ववस्थायामवाप्तंपरमंपदम् ॥ ५३ ॥
द्वैतपक्षःसमाख्यातो येद्वैतेतुव्यवस्थिताः ।

ह्मचर्य से भ्रष्ट हुआ अपने कुल और गोत्र को भी नष्ट करदेता है ॥४७॥ के घरमें वसता हुआ संन्यासी यदि मैथुन करे तो—उस घर के स्वामी और कुलों को जड़मूल से नष्ट करता है ॥ ४८ ॥ जिस के आश्रम में शुद्ध भी मुहूर्त मात्र दो घड़ी भी विश्राम करे, उसको अन्य धर्म के करने से प्रयोजन है? क्योंकि वह उस के विश्राम से ही कृतकृत्य हो जाता है ॥ अपने देह में गृहस्थ पुरुष ने जो पाप जन्मभर में संचय (इकट्ठा) किया उस सब को एक रात भर वसा हुआ भी यति नष्ट कर ही देता है ॥५०॥ में चलने के परिश्रम से श्रांत (थके) हुए यति संन्यासी को जो जिमा- । उस ने जानो चर अचर सब त्रिलोकी को जिमादिया ॥ ५१ ॥ द्वैत जीव ब्रह्म वा प्रकृति पुरुष को पृथक् २ देखना), अद्वैत (केवल एक को देखना) द्वैत, अद्वैत, दोनों को संसार परमार्थ भेद से ठीक मानना ीन पक्ष हैं। न द्वैत है और न अद्वैत है यही पारमार्थिक (सच्चा) ज्ञान ५२ ॥ न मैं कोई हूं और न मेरा कुछ है न मेरा किसी से संबंध है कि- मैं ब्रह्म रूप हूं ऐसी अवस्था में परम पद प्राप्त होता है ॥ ५३ ॥ जो द्वैत र में स्थित हैं उन के लिये द्वैत पक्ष कहा गया है। अद्वैत पक्ष वालों का

अद्वैतानांप्रवक्ष्यामि यथाशास्त्रस्यनिश्चयः ॥ ५४ ॥
अत्रात्मव्यतिरेकेण द्वितीयंयोनपश्यति ।
अतःशास्त्राण्यधीयन्ते श्रूयन्तेग्रन्थविस्तराः ॥ ५५ ॥
दक्षशास्त्रेयथाप्रोक्तमाश्रमप्रतिपालनम् ।
अधीयन्तेतुयेविप्रास्तेयोन्त्यमरलोकताम् ॥ ५६ ॥
इदंतुयःपठेद्भक्त्या शृणुयादपियोनरः ।
सपुत्रपौत्रपशुमान् कीर्त्तिंचसमवाप्नुयात् ॥ ५७ ॥
श्रावयित्वात्विदंशास्त्रं श्राद्धकालेऽपियोद्विजः ।
अक्षय्यंभवतिश्राद्धं पितृंश्चैवोपतिष्ठते ॥ ५८ ॥

इति दाक्षे धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

इति दक्षस्मृतिः समाप्ता ॥

शास्त्रानुसार जैसा निश्चय है उस को कहते हैं ॥ ५४ ॥ इस अद्वैत जो अपने आत्मा से भिन्न द्वितीय को नहीं देखता इसी से शास्त्रों को और ग्रन्थों के विस्तारों को सुनते हैं ॥ ५५ ॥ दक्ष ऋषि के इस धर्म कहे आश्रमों के धर्म का प्रतिपालन करते और जो ब्राह्मण इस धर्म को पढ़ते हैं वे देवलोक को प्राप्त होते हैं ॥ ५६ ॥ जो इस शास्त्र को पढ़े अथवा जो अधम वर्ण भी इस को सुने वह मनुष्य पुत्र पौत्र और ओं वाला होकर कीर्ति को प्राप्त होता है ॥ ५७ ॥ श्राद्ध के समय इस को जो द्विज सुनाता है। उस का श्राद्ध अक्षय फलदायी होता और पि को श्राद्ध का फल प्राप्त होता है ॥ ५८ ॥

यह दक्षस्मृति के पं० भीमसेन शर्म कृत भाषानुवाद में सातवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ७ ॥ और यह स्मृति भी समाप्त हुई ॥

अथ गौतमस्मृतिप्रारम्भः

वेदो धर्ममूलं तद्विदां च स्मृतिशीले ॥१॥ दृष्टो धर्मव्यतिक्रमः साहसं च महतां न तु दृष्टोऽर्थोऽवरदौर्बल्यात्तुल्यबलविरोधे विकल्पः ॥२॥ उपनयनं ब्राह्मणस्याष्टमे नवमे पंचमे काम्यं गर्भादिः संख्यावर्षाणां तद्द्वितीयं जन्म ॥३॥ तद्यस्मात्स आचार्यो वेदानुवचनाच्च ॥ ४ ॥ एकादशद्वादशयोः क्षत्रियवैश्ययोः ॥ ५ ॥ आषोडशाद्ब्राह्मणस्यापतिता सावित्री द्वाविंशतेराजन्यस्य द्व्यधिकाया वैश्यस्य ॥६॥ मौञ्जीज्यामौर्वीसौत्र्यो मेखलाः क्रमेण कृष्णरुरुबस्ताजिनानि

भावार्थः–धर्मका मूल वेद है और वेदको जानने वाले मनु आदि महर्षियों की स्मृति और स्वभाव भी धर्मके मूल हैं ॥ १ ॥ धर्मका व्यतिक्रम (कुछ का कुछ हो जाना) और धर्मबाधक साहस [विना विचारे काम करना] भी देखा जाता है। परन्तु महत्पुरुषों के विचार से दृष्टार्थ (जिस का फल इसी लोक में हो) धर्म उत्तम नहीं है। दृष्टार्थ अदृष्टार्थ दोनों में तुल्य बल विरोध प्रतीत हो तो अवर नाम दृष्टार्थ के निर्बल होने से अदृष्टार्थ को मुख्य जानो ॥ २ ॥ ब्राह्मण का यज्ञोपवीत गर्भस्थिति के समय से आठवें वा नवमें वर्ष करना चाहिये। यदि ब्रह्मतेज की कामना से उपनयन करना होय तो पांचवें वर्ष में करे। वर्षों की गिनती सर्वत्र गर्भसे लेनी चाहिये। यज्ञोपवीत संस्कार दूसरा जन्म है ॥ ३ ॥ द्वितीय जन्मका दाता आचार्य है। वेद पढ़ाने से भी आचार्य द्वितीय जन्म का पिता है ॥ ४ ॥ ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रिय का और बारहवें वर्ष में वैश्य का यज्ञोपवीत करना चाहिये ॥ ५ ॥ सोलह वर्ष तक ब्राह्मण बाईस वर्ष तक क्षत्रिय और चौबीस वर्ष तक वैश्य सावित्री नाम अपने २ गुरु मन्त्र से पतित नहीं होते अर्थात् मन्त्रोपदेश के योग्य अधिकारी रहते हैं ॥ ६ ॥ ब्राह्मण की मूञ्ज की क्षत्रिय की मूर्वा नामक घास की

वासांसि शाणक्षौमचीरकुतपाः सर्वेषां कार्पासं वाविकृतम् ॥ ७ ॥ काषायमप्येके ॥ ८ ॥ वार्क्षं ब्राह्मणस्य माञ्जिष्ठहारिद्रे इतरयोः ॥ ९ ॥ बैल्वपालाशौ ब्राह्मणस्य दण्डौ ॥ १० ॥ आश्वत्थपैलवौ शेषे ॥ ११ ॥ यज्ञिया वा सर्वेषाम् ॥ १२ ॥ अपीडितायूपचक्राः सवल्कला मूर्द्धललाटनासाग्रप्रमाणा मुण्डजटिलशिखाजटाश्च ॥ १३ ॥ द्रव्यहस्तउच्छिष्टोऽनिधायाचामेत् ॥ १४ ॥ द्रव्यशुद्धिः परिमार्जनप्रदाहतक्षणनिर्णेजनानि तैजसमार्त्तिकदारवतान्तवानाम् ॥ १५ ॥ तैजसवदुपलमणिशंखशुक्तीनां दारुवदस्थिभूम्योरावपनं

और वैश्य ब्रह्मचारी की सूत की मेखला नाम कन्धनी बनावे। ... का रुरुमृग का, और बकरे का चर्म, सण अतसी, और पहाड़ी ... क्रम से हों अथवा कोई आचार्य यह कहते हैं कि तीनों वर्णों के ब्रह्मचारियों को कपासके नवीन वस्त्र हों ॥ ७ ॥ कोई आचार्य कहते हैं कि गेरूवे ... सब ब्रह्मचारी धारण करें ॥ ८ ॥ वृक्ष की वक्कल का खाकी वा ... हरी रंग का वस्त्र ब्राह्मण ब्रह्मचारी का, मजीठ का लाल रंग क्षत्रिय का, हल्दी का पीला रंग वैश्य ब्रह्मचारी के वस्त्रों का होना चाहिये ॥ ९ ॥ बेल वा ढांक का दण्ड ब्राह्मण का हो ॥ १० ॥ पीपल का ... और पीलू [जाल वृक्ष] का दण्ड वैश्य ब्रह्मचारी धारण करें ॥ ११ ॥ अथवा सब वर्ण के ब्रह्मचारी किसी यज्ञिय वृक्ष का दण्ड धारण करें ॥ १२ ॥ और वे तीनों दण्ड फटे टूटे न हों वा यज्ञके यूपस्तम्भ कीसी ... वक्कल सहित हों, ब्राह्मण का दण्ड मूर्द्धा तक, क्षत्रिय का मस्तक तक, वैश्य का नासिका तक प्रमाण का हो, और तीनों ब्रह्मचारी मुण्डित ... अथवा केवल शिखामात्रबाल रखने वाले हों ॥ १३ ॥ यदि कोई द्रव्य ... होय और उच्छिष्ट हो जाय तो उस को नीचे रखे बिना ही आचमन ... ॥ १४ ॥ अब द्रव्यों की शुद्धि कहते हैं-तैजस धातु के पात्रों को मांजने से, मट्टी के पात्रों की फिर अग्नि में पकाने से, लकड़ी के पात्रों को छीलने से और सूत के वस्त्रों को पखारने से शुद्धि होती है ॥ १५ ॥ पत्थर, मणि ... शंख, सीपी, इन की शुद्धि तैजस (धातु) के समान मांजने धोने से ... हड्डी से बने पदार्थों और भूमिकी शुद्धि काष्ठ के समान छीलने से ...

श्लेष्मद्रज्जुविदलचर्म्मणामुत्सर्गं वात्यन्तोपहतानाम्॥१६
मुखउदङ्मुखो वा शौचमारभेत् ॥ १७ ॥ शुचौ देश
सीनो दक्षिणं बाहुं जान्वन्तरा कृत्वा यज्ञोपवीत्यामणि-
बनात्पाणी प्रक्षाल्य वाग्यतो हृदयस्पृशस्त्रिश्चतुर्व्वाऽप-
चामेद् द्विःपरिमृज्यात्पादौ चाभ्युक्षेत् खानिचोपस्पृशे-
र्षण्यानि मूर्द्धनि च दद्यात् ॥ १८ ॥ सुप्त्वा भुक्त्वा क्षुत्वा
नः ॥ १९ ॥ दन्तश्लिष्टेषु दन्तवदन्यत्र जिह्वा भिमर्शनात्
च्युतेरित्येके ॥ २० ॥ च्युतेरास्रावविद्यान्निगिरन्नेव त-
चिः ॥ २१॥ न मुख्या विप्रुष उच्छिष्टं कुर्वन्ति ताश्चेदङ्
निपतन्ति ॥ २२॥ लेपगन्धापकर्षणे शौचममेध्यस्य ॥२३॥
द्भिः पूर्वं मृदा च मूत्रपुरीषरेतोविस्रंसनाभ्यवहारसंयोगेषु

की शुद्धि जोतने से भी होती है । रस्सी विदल (बांस के पात्र) तथा
पात्रों की शुद्धि वस्त्रों के समान पखारने से होती है । यदि ये सब अत्यन्त
हो गये हों तो त्याग देवे ॥ १६ ॥ पूर्व को या उत्तर को मुख करके शौच
मूत्र के त्याग) का प्रारंभ करे ॥१७॥ अब आचमन करने की विधि कहते हैं
शुद्ध देश में बैठा दहिनी भुजा को गोड़ों के बीच करके सव्य यज्ञोपवीत
प किये हुये गट्टों (पहुंचो) तक दोनों हाथ धोकर मौन हुआ जो हृदय
पहुंचे इतने जल से तीन वा चार बार आचमन करे पश्चात् दो बार मुख
शुद्ध करे और पगों को भी धोवे । शिर के आंखें, नाक, कान, मुख इन
ों छिद्रों का स्पर्श करे और मूर्द्धा पर भी जल का मार्जन करे ॥ १८ ॥ शयन,
न, करके तथा छींक कर फिर आचमन और इन्द्रिय स्पर्श करे ॥१९॥
 जिह्वा से स्पर्श न हो तो दांतों में लगा अन्नादि दांतों के समान अशुद्ध
ं है । कोई आचार्य यह कहते हैं कि जब तक दांतों से पृथक् न हो तब
दांतों के समान है ॥ २० ॥ और दांतों से पृथक् होने पर आस्राव (मुख
जल गिरना) के समान है इस से उस को निगल लेने पर
॥ २१ ॥ जो मुख के जल की बूंद वा छींटें अपने अंग पर
ें करतीं ॥ २२ ॥ अशुद्ध वस्तु का
तु के लगी अशुद्धि निवृत्त

च यत्र चाम्नायो विदध्यात् ॥ २४ ॥ पाणिना स
ह्याङ्गुष्ठमधीहि भोइत्यामन्त्रयेत गुरुः ॥२५॥ तत्र
प्राणोपस्पर्शनं दर्भैः प्राणायामास्त्रयः पञ्चदशमात्राः
ष्वासनं च ओंपूर्वा व्याहृतयः पञ्चसप्तान्ताः ॥२६॥
दोपसंग्रहणं प्रातर्ब्रह्मानुवचने
॥२७॥ प्राङ्मुखो द[illegible]
वचनमादितो ब्राह्मण आदाने ओंकारस्यान्यत्रापि
अन्तरागमने [illegible]
त्र्यहमुपवासो विप्रवासश्च ॥ २९ ॥ प्राणायामा घृत

जल से धो कर फिर मट्टी से मांज कर जल से धोवे। यदि मूत्र, विष्ठा
जाय वा वीर्य स्खलित हो जाय वा अशुद्ध वस्तु खालेवे इन में जहां
स्मृतियों में जैसी शुद्धि कही हो वहां वैसी ही मट्टी जल से शुद्धि
अपने हाथ से शिष्य का दाहिने हाथ का अंगूठा पकड़ कर भोः शिष्य
पढ़ ऐसे गुरु बुलावे ॥ २५ ॥ शिष्य जब गुरु के पास वेद पढ़ने को बै
पहिले आखें हृदय और नासिका का कुशों से मार्जन करे फिर पूर्व
का अग्रभाग हो ऐसे कुश विछा कर उन पर बैठ कर से गुरु मु
पढ़ने के समय वा अन्यत्र वेदाध्ययन के आरम्भ में अथवा ओंका
के आरम्भ में पन्द्रह अंगुल तक जिन के श्वास वायु की गति हो ऐ
प्राणायाम करे फिर (प्रणव) ओं पूर्वक पांच वा सात व्याहृतियों
धारण करे ॥ २६ ॥ प्रातःकाल वेद पढ़ाने के आरम्भ तथा समाप्ति
ष्य खड़ा होकर गुरु के पगों का स्पर्श (व्यत्यस्त हाथों से शिष्य
हाथ से दहिना पग और ,वाम से बांया छुआ जाय) करके खड़ा र
गुरु आज्ञा देवें तब बैठ जावे ॥ २७ ॥ गुरु से दक्षिण ओर पूर्व
उत्तर को मुख करके शिष्य बैठ कर प्रथम प्रणव व्याहृति सहित
मन्त्र का उच्चारण करे ॥ २८ ॥ यदि वेदाध्ययन के समय कुत्ता,
सांप, बिलाव, ये जीव गुरुशिष्य के बीच से निकल जायं तो प्राय
रोक देवे तथा तीन दिन वन में रहकर उपवास करे ॥२९॥

याम् ॥ ३० ॥ श्मशानाध्ययने चैवम् ॥ ३१ ॥
इति श्रीगौतमीये धर्म्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥
प्रागुपनयनात्कामचारवादभक्षोऽहुतोऽब्रह्मचारी यथोप
मूत्रपुरीषो भवति नास्याचमनकल्पो विद्यतेऽन्यत्राप-
मार्जनप्रधावनावोक्षणेभ्यो न तदुपस्पर्शनादशौचं नत्वेवं-
ग्निहवनबलिहरणयोर्नियुञ्ज्यान्न ब्रह्माभिव्याहारयेदन्यत्र
स्वधानिनयनात् ॥ १ ॥ उपनयनादिर्नियमः ॥ २ ॥ उक्तं ब्रह्म-
ग्नीन्धनभैक्षचरणे सत्यवचनमपामुपस्पर्शनम् ॥ ३ ॥

ाम करके घृत को चाटैं ॥३०॥ श्मशान (मरघट) के समीप वेद पढ़ने में
ी प्रायश्चित्त करें ॥ ३१ ॥

ह गौतम स्मृति के भाषानुवाद में प्रथम अध्याय पूरा हुआ ॥

ज्ञोपवीत से पहिले बाल्यावस्था में बात चीत करने, बोलने, और भो-
ं कामचार है (धर्म शास्त्र के अनुसार नियम नहीं) होम और ब्रह्म-
ं नियम भी उस बालक के लिये नहीं हैं। चाहै जैसे चाहै जिस ओर
रके मूत्र पुरीष (मल मूत्र का त्याग) करे। आचमन की रीति भी इस
के लिये नहीं है। किन्तु मार्जन करना हाथ पग आदि धोना,और भूमिपर
को छिड़क के भोजनादि करना उस को भी उचित है। और
अशुद्ध बालक के स्पर्श से अशुद्धि भी नहीं लगती, इस बालक को
होम तथा वैश्वदेव करने में भी न लगावे। और स्वधानिनयन
दान) के विना वेद मन्त्रों का उच्चारण भी यज्ञोपवीत से पहिले
क को न करावे अर्थात् ब्राह्मणादि द्विजों के बालक भी यज्ञो-
। संस्कार से पहिले शूद्र के तुल्य होते हैं इससे उनको वेद मन्त्र न पढ़ावे
नवावे किन्तु स्मृति पुराणादि में लिखे स्तोत्र मन्त्रादि भले ही पढ़ावे
यदि उप नयन से पहिले पिता मर जावे तो वही असंस्कृत पुत्र वेद
ं द्वारा होने वाले अपने पिता के और्ध्वदेहिक श्राद्ध को करे वहां वेद
च्चारण में उसको दोष नहीं लगेगा यही बात मनु० अ० २ । १७२ में
है ॥ १ ॥ यज्ञोपवीत के आरम्भ से द्विज बालक के लिये धर्मशास्त्र में
सब नियम हैं ॥ २ ॥ पूर्व कहा ब्रह्मचर्य, अग्नि का प्रज्वालन (समि-
न) भिक्षा मांगना, सत्य बोलना, जल से मार्जन आचमनादि करना,
प० के पश्चात इन सब को नियम से करे ॥ ३ ॥

एके गोदानादि ॥ ४ ॥ वहिः संध्यार्थंचातिष्ठेत्पूर्वा मा
त्तरां सज्योतिष्याज्योतिपोदर्शनाद्वाग्यतोनादित्यमी
॥ ५ ॥ वर्ज्जयेन्मधुमांसगन्धमाल्यदिवास्वप्नाञ्जनाभ्य
नोपानच्छत्रकामक्रोधलोभमोह वाद्यवादनस्नानदन्त
हर्षनृत्यगीतपरिवादभयानि गुरुदर्शने कर्णप्रावृतावसक्थि
याश्रयणपादप्रसारणानि निष्ठीवितहसितविजृम्भिता
नानिस्त्रीप्रेक्षणालम्भने मैथुनशंकायां द्यूतं हीनसेवामद
हिंसामाचार्यतत्पुत्रस्त्रीदीक्षितनामानि शुष्कां वाचंमद्यं नि
ब्राह्मणः ॥६॥ अधःशय्याशायी पूर्वोत्थायी जघन्यसंवेशी
ग्वाहूदरसंयतः ॥७॥ नामगोत्रे गुरोः संमानतो निर्दिशेत्

कोई आचार्य इन नियमों को गोदान (१६ सोलह आदि वर्षों में होने
केशान्त) संस्कार से आगे कहते हैं ॥ ४ ॥ संध्या के लिये ग्राम से बाहर
प्रातःकाल की पहिली संध्या सूर्य के दीखने समय तक खड़े होकर
सायंकाल की सूर्य दीखने समय से तारागणों के उदय होने तक बैठ के
दोनों सन्ध्या मौन होकर करे और सूर्यनारायण को न देखे ॥ ५ ॥
सहत, मांस, सुगन्ध, (इतर फुलेल आदि लगाना) फूलमाला, दिन में
आंखों में अंजन सुरमा लगाना, शरीर में तैल मलना, यान (सवारी
ढ़ना,) जूता, छत्री, काम, क्रोध, लोभ, मोह, बाजे (सितारआदि) बजाना
घुस कर स्नान करना, दातौन, हर्ष (आनन्द मानना,) नाचना, गाना,
की निन्दा, और भय इन मदिरा आदि मद्य को ब्रह्मचारी छोड़ देवे।
देखते कानों को बांधना या शिर कण्ठ में कपड़ा लपेटना, गोड़े उठा कर
पग फैलाना, थूकना, हंसना, जंभाई लेना, आस्फोटन (किसी अंग को
से बजाना) ताली बजाना, मैथुन की शंका के लिये स्त्री को देखना व
ना, जुआ खेलना, नीच की सेवा करना, बिना दिये किसी के वस्तु को
हिंसा करना, आचार्य और गुरु के पुत्र, स्त्री और दीक्षित इन का नाम
सूखी कठोर वाणी बोलना, और भांगादि नशा पीना इन कर्मों को
ऐसा ब्रह्मचारी नित्य ही त्याग देवे ॥ ६ ॥ गुरु से नीचे भूमि पर
से पहिले उठे, गुरु के बैठ जाने पर पीछे बैठे, लेट जाने पर लेटे, बा
ना, और उदर इन को वश में रक्खे ॥७॥ गुरु का या उनके गोत्र का
कभी उच्चारण करने पड़े तो सम्मान सूचक श्रीमान् आदि शब्द लगा के

आचार्यज्ञातिगुरुष्वेष्वलाभेऽन्यत्र॥१७॥ तेषां पूर्वं पूर्वं
रन्निवेद्य गुरवेऽनुज्ञातो भुञ्जीत ॥ १८ ॥ असंनिधौ
पुत्रसब्रह्मचारिसद्भ्यः ॥ १९ ॥
स्सन्निधायोदकं स्पृशेत् ॥ २० ॥
रज्जुवेणुविदलाभ्यां तनुभ्यामन्येन घ्नन् राज्ञा शास्य
द्वादशवर्षाण्येकैकवेदे ब्रह्मचर्यं चरेत् प्रतिद्वादश
ग्रहणान्तं वा ॥२३॥ विद्यान्ते गुरुरर्थेन निमन्त्र्य
कृतानुज्ञातस्य स्नानम् ॥ २४ ॥ आचार्यः श्रेष्ठो
तेत्येके ॥ २५ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

यदि आचार्य, अपने कुटुम्बी और जगत् में विशेष मान्य गु
से अन्यत्र निर्वाह योग्य भिक्षा मिल जाय तो इनके घरों से न
यदि अन्यत्र भिक्षा न मिले तो भी आचार्यादि पहिले २ को छोड़
के घर से मांगे, फिर भिक्षा के अन्न को गुरु के समीप निवेदन क
आज्ञा होने पर भोजन करे ॥१८॥ यदि गुरु जी कहीं गये हों, समी
तो गुरुपत्नी, गुरुपुत्र, संग पढ़नेवाले ब्रह्मचारी, और कोई सज्जन
समीप निवेदन करके भोग लगावे ॥ १९ ॥ प्रथम भोजन को समी
जल से आचमन करे तब मौन हो कर चंचलता को छोड़ के
भोजन करे ॥२०॥ गुरु शिष्यको ऐसी ताड़ना करे जिससे वध (
और गुरु अशक्त असमर्थ बीमार हों तो छोटे २ रस्सी, बेंत, बांस,
शिक्षा करें जिससे अधिक चोट न लगे। यदि अन्य बड़े कठोर द्वार
राजा गुरुको दण्ड देवे ॥२१॥ एक २ वेदके पढ़नेमें बारह २ वर्ष ब्रह्म
करे। अथवा प्रत्येक बारह वर्ष में अथ तक एक २ वेद को पढ़
ब्रह्मचारी रहे ॥ २२ ॥ और विद्या पढ़ने की समाप्ति में धनादि
गुरु से प्रार्थना करे कि भगवन्! आज्ञा कीजिये क्या दक्षिणा
तदनन्तर गुरुकी आज्ञासे ही गृहस्थाश्रम के लिये समावर्तन
सम्पूर्ण गुरुओं में आचार्य (उपनयन कराके सांग वेद पढ़ाने
है और कोई महर्षि लोग माता को श्रेष्ठ कहते मानते हैं ॥ २५ ॥
यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में द्वितीय अध्याय पूरा हुआ

॥७॥ प्रहीणमेके निर्णेजनाविप्रयुक्तम् ॥८॥ ...
मङ्गमुपाददीत ॥९॥ न द्वितीयामपहर्त्तुं रात्रिं ग्रामे
॥ १० ॥ मुण्डः शिखी वा वर्ज्जयेज्जीववधम् ॥११॥
भूतेषु हिंसाऽनुग्रहयोरनार्त्ती ॥१२॥ वैखानसो वने मूल...
शी तपःशील: श्रामणकेनाग्निमाधायाग्राम्यभोजी दे...
मनुष्यभूतर्षिपूजकः सर्व्वातिथिः प्रतिषिद्धवर्ज्जं ...
युञ्जीत न फालकृष्टमधितिष्ठेत्, ग्रामं च न प्रविशेत्,
लश्चीराजिनवासा नातिशयं भुञ्जीत ॥ १३ ॥ ऐक
त्वाचार्याः प्रत्यक्षविधनाद्गार्हस्थ्यस्य ॥ १४ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥

कोई आचार्य कहते हैं कि गुरु के पुराने वस्त्रों को धारण करे ...
सफेद न हों और धोबी से धुलाये न हों, किन्तु खाली आदि ...
अथवा ओषधी वा वनस्पतियों के बक्कल वा पत्ते आदि के वस्त्र बनावे
इस सूत्र का द्वितीयार्थ यह हो सकता है कि ओषधि वनस्पतियों
मूल, फलादि खाके निर्वाह करे भिक्षा भी न मांगे ॥ ९ ॥ दूसरी ...
के लिये रात को ग्राम में न वसे ॥ १० ॥ शिर के सब बाल मुंड़ाया
अथवा केवल चोटी रक्खे, जीवों की हिंसा न करे ॥ ११ ॥ सब प्राणि...
सम उदासीन दृष्टि रक्ख, न किसी को दुःख देवे, और न किसी पर ...
या वा कृपा करे। स्वयं दुःख भी न माने न हर्ष माने ॥१२॥ वानप्रस्थ के धर्म
वन में रहता हुआ मूल वा फल खावे, परिश्रम के साथ पंचाग्नि ताप करे,
हो, ग्राम का भोजन न करे, पञ्चमहायज्ञों द्वारा देव, पितर, मनुष्य
तिथि) ऋषि इन को पूजे, और सबका अतिथि के तुल्य आदर करे, ...
(निन्दित शूद्रादि वा दुराचारियों) को छोड़कर भिक्षा को भी मांग ...
हुए खेत में न बैठे, वा निवास न करे, जोतने से जो पैदा हो उस अन्न
खावे, ग्राम में भी प्रवेश न करे, वा न वसे, जटाओं को धारण करे, शिर
न मुंडावे । चीर नाम फटे पुराने चिथरे वा मृग चर्म के वस्त्र रक्खे, ...
अधिक अन्न या फलादि को न खावे ॥१३॥ वेद में गृहस्थ का प्रत्यक्ष ...
होने से कोई २ आचार्य लोग यह कहते हैं कि एक गृहस्थाश्रम ही ...
प्रस्थादि न बने ॥ १४ ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में तीसरा अध्याय पूरा हुआ

गृहस्थः सदृशीं भार्यां विन्देतानन्यपूर्वां यवीयसीम् ॥१॥
समानप्रवरैर्विवाह ऊर्ध्वं सप्तमात् पितृबन्धुभ्यो बीजिन-
मातृबन्धुभ्यः पञ्चमात् ॥ २ ॥ ब्राह्मो विद्याचारित्रबन्धु-
लसंपन्नाय दद्यादाच्छाद्यालङ्कृतां संयोगमन्त्रः प्राजाप-
सह धर्म्मं चरतामिति, आर्षे गोमिथुनं कन्यावते दद्या-
तर्वेद्यृत्विजे दानं दैवोऽलङ्कृत्येच्छन्त्याः स्वयं संयोगो
न्धर्व्वो वित्तेनानतिस्त्रीमतामासुरः प्रसह्यादानाद्राक्ष-
संविज्ञानोपसंगमनात्पैशाचः ॥ ३ ॥ चत्वारो धर्म्याः
मा: षडित्येके ॥ ४ ॥

गृहस्थ पुरुष ऐसी स्त्री को विवाहै जो अपने समान उत्तम कुल की हो, जिस
किसी के साथ सगाई न हुई हो, जो ठीक युवती हो ॥ १ ॥ जो अपने
की न हो, अथवा यदि अपने प्रवरों की भी हो तो पितृकुल की सातवीं
पर पुत्रवाली पीढी की हो, और मातृकुल की पांचवीं पीढी से ऊपर की कन्या
विवाह होसकता है ॥ २॥ विद्यावान्, सदाचारी, भाई बंधु वाले सीधे सच्चे
व वाले, वर को जो कन्या देना वह पहिला ब्राह्म विवाह है। कपड़ों से आ-
दन और भूषणों से शोभित करके (सह धर्मं चरताम् । तुम दोनों संग संग
करो) ऐसा कह कर जो कन्या दी जाय वह दूसरा प्राजापत्य विवाह है।
या के पिता को एक गौ एक बैल वा उन का मूल्य देकर जो कन्या विवाही
वह तीसरा आर्ष विवाह है। वेदी के भीतर यज्ञ कर्म करते हुए ऋत्विज्
को आभूषणों से युक्त कन्या को देना वह चौथा दैव विवाह है। परस्पर
कन्या की इच्छा से जो दोनों का संयोग हो वह पांचवां गांधर्व विवाह है।
कन्यावाले मनुष्य को यथाशक्ति धन देकर जो विवाह करे वह छठा
सुर विवाह है। बल पूर्वक मार पीट कर जो कन्या को ले आना वह सातवां
स विवाह है। अज्ञान (वेहोश नशादि खाके पागल हुई) कन्या
साथ संयोग करे वह आठवां पैशाच विवाह है ॥३॥ इन आठों में ब्राह्मण के
ये पहिले चार धर्मानुकूल कर्त्तव्य हैं। कोई आचार्य पहिले छः विवाहों को
नुसार कर्त्तव्य कहते मानते हैं ॥ ४ ॥

अनुलोमानन्तरैकान्तरद्व्यन्तरासु जाताः सवर्णाम्ब
ग्रनिषाददौष्मन्तपारशवाः ॥ ५ ॥ प्रतिलोमासु सूतम
धायोगवक्षत्तवैदेहकचाण्डालाः ॥ ६ ॥ ब्राह्मण्यजीज
त्रान् वर्णेभ्य आनुपूर्व्यात्, ब्राह्मणसूतमागधचाण्डाला
तेभ्यएव क्षत्रिया मूर्द्धावपिक्तक्षत्रियधीवरपुल्कसान्,
वैश्या भृज्जकण्टकमाहिष्यवैश्यवैदेहान्, एव पार
नकरणशूद्रान् शूद्रेत्येके ॥७॥ वर्णान्तरगमनमुत्कर्षापक
सप्तमेन पञ्चमेन चाचार्याः ॥८॥ स्टष्टयन्तरजातानां च

जिस सन्तान की उत्पत्ति में उत्तम वर्ण का पिता तथा नीचे
माता हो वह अनुलोम उत्पत्ति होगी। ब्राह्मण पुरुष से ब्राह्मणी
अनुलोम अनन्तर हुआ सन्तान ब्राह्मण ही होगा। ब्राह्मण से एक के अ
वैश्य कन्या में हुआ सन्तान अम्बष्ठ, क्षत्रिय से एक के अन्तर पर शूद्र की
हुआ उग्र, ब्राह्मण से, शूद्र की कन्या में हुआ निषाद ब्राह्मण से उप अम
ष्मन्त और ब्राह्मण से शूद्र की कन्या में पारशव होता है। ये वर्णसंकर अ
होते हैं ॥ ५ ॥ अब प्रतिलोम नाम नीचे वर्ण से उत्तम वर्ण की कन्या
वालों को दिखाते हैं—क्षत्रिय से ब्राह्मण की कन्या में हुआ सूत
क्षत्रिय की कन्या में हुआ मागध, शूद्र से वैश्य की कन्या में हुआ आ
शूद्र पुरुष से क्षत्रिय की कन्या में क्षत्ता, वैश्य से ब्राह्मण की कन्या में
और शूद्र से ब्राह्मण की कन्या में हुआ चाण्डाल वर्णसंकर होता है
ब्राह्मण की कन्या ब्राह्मणी ब्राह्मण पति से ब्राह्मण को, क्षत्रिय से
वैश्य से मागध को और शूद्र से चाण्डाल को उत्पन्न करती है। क्षत्रिय की
क्षत्राणी, ब्राह्मण से मूर्द्धाभिषिक्त, क्षत्रिय से क्षत्रिय, वैश्य से धीवर,
से पुक्कस या पुल्कस को उत्पन्न करती है। वैश्य की कन्या ब्राह्मण से
कण्टक, क्षत्रिय से माहिष्य, वैश्य से वैश्य और शूद्र से वैदेह को उत्पन्न
है। शूद्रकन्या, ब्राह्मण से पारशव, क्षत्रिय से यवन, वैश्य से करण और
से शूद्र को उत्पन्न करती है यह किन्हीं आचार्यों का मत है ॥ ७ ॥
आचार्यों का मत यह है कि सातवीं या पांचवीं पीढ़ी के बाद वर्णसंकर
अपने पिता की जाति में ऊंच या नीच हो जाता है ॥ ८ ॥ और सृष्टयन्तर
वर्णसंकरों से जो वर्णसंकर जाति पैदा होती है वे भी सातवीं या पांचवीं

नास्तु धर्म्महीनाः शूद्रायां चासमानायां च शूद्रात्पतित्तिरन्त्यः पापिष्ठः ॥ ९ ॥ पुनन्ति साधवः पुत्रास्त्रिपौरुषापाद्दश दैवाद्दशैव प्राजापत्याद्दशपूर्वान्दशापरानात्मानं ब्राह्मीपुत्रा ब्राह्मीपुत्राः ॥ १० ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

ऋतावुपेयात् सर्वत्र वा प्रतिषिद्धवर्जम् ॥१॥ देवपितृमनुभूतर्षिपूजको नित्यस्वाध्यायः ॥ २ ॥ पितृभ्यश्चोदकदानं गोत्साहमन्यद्भार्यादिरग्निर्दायादिर्वा ॥३॥ तस्मिन् गृह्या। देवपितृमनुष्ययज्ञाः स्वाध्यायश्च ॥ ४ ॥ वलिकर्म्मा-

---

अपने २ पिता की जाति में हो जाती हैं। नीच पिता से उत्तम कुल की में तथा उत्तम से भी शूद्र कन्या में पैदा हुए धर्महीन होते, उनको का अधिकार नहीं है। और शूद्र पिता से वैश्यादि की कन्या में होने ने वर्णसंकर अन्त्यज अत्यन्त पापी और पतित होते हैं ॥ ९ ॥ विधि क हुए आर्ष विवाह से सवर्णा स्त्री में उत्पन्न अच्छे सुपुत्र कुल के दीपक धु पुरुष अपनी तीन पीढ़ी को तार देते हैं। दैव विवाह से तथा प्राजापत्य वाह से हुआ पुत्र अपने कुल की दश पीढ़ियों को तारने वाला होता और ब्राह्म वाह से हुए पुत्र दश पिछली और दश अगली पीढ़ियों को तथा अपने को रने वाले होते हैं ॥१०॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौथा अध्याय पूरा हुआ ॥

गृहस्थ पुरुष ऋतुकाल में वा ऋतु से भिन्न दिनों में भी निषिद्ध(ऋतुमें पहिले चार रहवें और तेरहवें दिन को तथा अमावस्या, अष्टमी, पौर्णमासी और चतुर्दशी निषिद्ध तिथियों को सब दशा में छोड़ के) दिनों को छोड़ के विवाहित ी से समागम करे ॥ १॥ पञ्च महायज्ञों द्वारा देव, पितर, मनुष्य (अतिथि) त, ऋषि, इनकी पूजा नित्य करे और नित्य वेदाध्ययन करे ॥ २ ॥ पितरों ो जल देना रूप तर्पण नित्य करे। यथाशक्ति यथोत्साह भार्या, और अग्नि ादि की रक्षा करे। असमर्थ रोगी आदि हो तो अपने दायाद (वारिसों) ारा देवपूजनादि करावे ॥ ३ ॥ उस स्थापन किये गृह्याग्नि में अपने शाखा त्रानुसार गृह्य कर्म करे। नित्य२ देव, पितृ, और मनुष्य यज्ञ तथा— स्वाध्याय नाम ब्रह्मयज्ञ करे ॥ ४ ॥ अग्निकुण्ड के समीप में बलिकर्म—भूत यज्ञ

ग्नावग्निर्धन्वन्तरिर्विश्वेदेवाः प्रजापतिः स्विष्टकृदिति ॥ ५ ॥ दिग्देवताभ्यश्च यथा स्वद्वारेषु मरुद्भ्यो गृहदे भ्यः प्रविश्य ब्रह्मणे मध्ये अद्भ्य उदकुम्भे आकाशाये रिक्षे नक्तंचरेभ्यश्च सायम् ॥ ६ ॥ स्वस्ति वाच्य भिक्ष प्रश्नपूर्वं तु ददातिषु चैवं धर्म्मेषु ॥७॥ समद्विगुणसाहस्रान नि फलान्यब्राह्मणब्राह्मणश्रोत्रियवेदपारगेभ्यः ॥८॥ गुर्व वेशौषधार्थवृत्तिक्षीणयक्ष्यमाणाध्ययनाध्वसंयोगवैश्वजि द्रव्यसंविभागो, बहिर्वेदि भिक्षमाणेषु कृतान्नमितरेषु॥

करे। देवयज्ञ में अग्नि, धन्वन्तरि, विश्वेदेव, प्रजापति, और स्विष्ट नामों से अग्नि में हविष्यान्न की पांच आहुति देवे जैसे (१-अग्नये स्वा २-धन्वन्तरये स्वाहा। ३—विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा। ४—प्रजापतये स्वाहा अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा) ॥ ५ ॥ फिर भूतयज्ञ में पूर्वादि दिशाओं के दि देवताओं के लिये प्रदक्षिण क्रम से बलि देकर द्वार पर मरुत् दे लिये, फिर गृह देवताओं के लिये खेंचे हुए कोष्ठ के बीच में के लिये, जल के कुम्भस्थान पर अप् देवता के लिये, आकाश के अन्तरिक्ष में दिखा के और सायंकाल के बलि कर्म में नक्तंचर देवता लिये बलि धरे ॥ ६ ॥ (इन का विशेष विधान पञ्चमहायज्ञ में देखिये) बुलाके (स्वस्ति) ऐसा कहला कर भिक्षा देवे। और इस के सभी दान धर्म सुपात्र को अपने यहां सन्मान पूर्वक बुलाकर दि ॥ ७ ॥ ब्राह्मण से भिन्न क्षत्रियादि को भोजनादि दान देने का दान रावर फल होता, गुण कर्म हीन मूर्ख ब्राह्मण को देने का द्विगुणा पाठी श्रोत्रिय को देने का हजार गुणा फल और वेद पारग (जिस ने वेदों को आद्योपान्त पढ़ा जाना हो ऐसे वेदतत्वार्थ वेत्ता) को दान दे अनन्त फल होता है ॥ ८ ॥ गुरु के लिये, किसी ब्राह्मण को घर लिये, औषध करने के लिये, जो जीविका के विना दुःखी हो उस को करने वाले को, वेदादि शास्त्र पढ़ने वाले विद्यार्थी को, मुसाफिर को, और जित् यज्ञ के कर्त्ता को, इन सब को वा उन २ कामों के निमित्त धन देना चाहिये। यज्ञ के समय ऋत्विजों को वेदि के भीतर दक्षिणा

ग्रन्थाप्यधर्म्मसंयुक्ताय न दद्यात् ॥१०॥ क्रुद्धहृष्टभीतार्त्त-
ग्राठस्थविरमूढमत्तोन्मत्तवाक्यान्यनृतान्यपातकानि ॥११॥
येत्पूर्वमतिथिकुमारव्याधितगर्भिणीसुवासिनीस्थविरा-
घन्यांश्च ॥ १२ ॥ आचार्यपितृसखीनां च निवेद्य व-
क्रियां ऋत्विगाचार्यश्वशुरपितृव्यमातुलानामुपस्थाने
पर्कः संवत्सरे पुनःपूजिता यज्ञविवाहयोरर्वाग्राज्ञश्च
त्रियस्य ॥ १३॥ अश्रोत्रियस्यासनोदके श्रोत्रियस्य तु पा-
घ्यमन्नविशेषांश्च प्रकारयेन्नित्यं वा संस्कारविशिष्टं
यतोऽन्नदानमवैद्ये साधुवृत्ते विपरीते तु तृणोदकभूमिः

े वालों को यदि वे आदर यथाशक्ति देवें तथा अन्य दीन दुःखियों को
मिठाई आदि पक्वान्न देना चाहिये ॥ ९ ॥ अधर्मी को प्रतिष्ठा करने
ो कुछ नहीं देना चाहिये ॥ १० ॥ क्रोधी, प्रतिहर्ष में मग्न, भयभीत,
में निमग्न, लोभी, बालक, वृद्ध, अज्ञानी (बेसमझ,) नशाबाज, पागल,
को मिथ्या बोलने पर पाप नहीं लगता है ॥ ११ ॥ गृहस्थ पुरुष पञ्चमहा-
के पश्चात् पहिले अतिथि, बालक, रोगी, गर्भिणी स्त्री, विवाहिता पुत्री,
वृद्ध पुरुष बाबा आदि तथा छोटे भाई आदि इन सब को भोजन क-
तब पीछे स्वयं खावें ॥ १२ ॥ गुरु, पिता, और मित्र इन से निवेदन करे
भोजन तय्यार है। तब जैसी आज्ञा आचार्य आदि करें वैसा करे अर्थात्
की आज्ञा लेकर भोजन करे। ऋत्विज, आचार्य, श्वशुर, चाचा, मा
ये लोग अकस्मात् आवें तो मधुपर्क से पूजन करे। प्रत्येक वर्ष में कई
मिलें तो यज्ञ और विवाह से भिन्न एक ही वार मधुपर्क विधि से पूजे।
में ऋत्विजों का और विवाह में वर का मधुपर्क विधि से पूजन करे।
ा और श्रोत्रिय (वेदपाठी) का भी मधुपर्क विधि से पूजन करे ॥ १३ ॥
य वेदाङ्गादि पढ़े विद्वान् का आसन और जलादि से सत्कार करे और श्रोत्रिय
तो पाद्य अर्घ्य और उत्तमोत्तम भोजनादि से भी सत्कार करे। अथवा उत्तम
कारों से सिद्ध किये अन्न के बीच में से लेके नित्य ही गृहस्थ पुरुष अन्न का
न किसी सुपात्र ब्राह्मण को वा वैद्य से भिन्न सदाचारी पुरुष को देवे।
ई साधारण मनुष्य आवे तो भी ठहरने की जगह, बैठने को आसन, और जल

स्वागतमन्ततः पूज्यानत्याशश्च शय्यासनावसथानुव्रज्या
सनानि सदृक्श्रेयसोः समान्यल्पशोऽपि हीनेऽसम
थिरेकरात्रिकोऽधिवृक्षसूर्योपस्थायी कुशलानामयक्षेमारोग्या
णामनुप्रश्नोऽन्त्यशूद्रस्याब्राह्मणस्यानतिथिर्ब्राह्मणो यज्ञे
वृत्तश्चेद् भोजनं तु क्षत्रियस्योर्ध्वं ब्राह्मणेभ्योऽन्यान्
सहानृशंसार्थमानृशंसार्थम् ॥ १४ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

पादोपसंग्रणं गुरुसमवायेऽन्वहम् ॥ १ ॥ अभिगम्य तु वि
य मातृपितृतद्बन्धूनां पूर्वजानां विद्यागुरूणां तत्तद्गुरू

र स्वागत करे। पूज्य पुरुष का भूल से आदर न कर पावे तो
रे। शय्या (खटिया वा तख्त,) आसन, घरकी कोई कोठरी
, पीछेर चलके पनारना, पास बैठकर प्रेम से वातें करना, इन
आयु विद्यादि में) अपने बरावर वाले और अपने से बड़े
में एकसे ही करे। और जो अपने से अवस्थादि में कुछ छोटा
हो उसका भी शय्यादि द्वारा बड़े के तुल्य सत्कार करे। जो
भिन्न गांव का रहने वाला हो और एक रातभर ही (जिन के
वास करे, और वृक्षों के नीचे रहता हो, सूर्य नारायण का उपासक
य कहाता है। ऐसे अतिथि के आने पश्चात् ब्राह्मण हो तो कुशल
तो अनामय है? वैश्य हो तो क्षेम है? और शूद्र हो तो आरोग्य
से पूछे। ब्राह्मण से भिन्न किसी नीच वा शूद्र के यज्ञ में वर्त
भी किसी के यहां अतिथि नहीं माना जायगा। यदि ब्राह्मण
य अतिथि आया हो तो ब्राह्मणों के भोजन कर लेने पर
और अन्य वैश्यादि अतिथि आये हों तो दयाधर्म का
भृत्यों के साथ उनको भी भोजन करावे ॥ १४ ॥
धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूरा हुआ।
न्ध में गुरु निकट हों तो नित्य २ उनके पादस्पर्श करे ॥ १ ॥
माता, पिता, मामा, चाचा, ज्येष्ठभ्राता, इन सब
पूर्वक अभिवादन करे। तथा विद्या पढ़ानेवाले गुरु,

त्रिपाते परस्य ॥२॥ स्वनाम प्रोच्याहमयमित्यभिवादो
समवाये स्त्रीपुंयोगेऽभिवादतोऽनियममेके नाविप्रोष्य स्त्री-
ममातृपितृव्यभार्याभगिनीनां नोपसंग्रहणं भ्रातृभार्याणां
श्रश्च ॥३॥ ऋत्विक्श्वशुरपितृव्यमातुलानां तु यवीयसां
युत्थानमनभिवाद्यास्तथान्यः पौर्वः पौरोऽशीतिकावरः
ऽप्यपत्यसमेनावरोऽप्यार्य्यः शूद्रेण नाम चास्य वर्ज्जयेद्
ज्ञश्चाजपः प्रेष्यो भोभवन्निति वयस्यः समानेऽहनि जातो
वर्षवृद्धः पौरः पञ्चभिः कलाभ रःश्रोत्रियस्सदाचरणस्त्रिभिः,

---

२ गुरुओं के गुरु एकत्र इकट्ठे हों तो गुरुओं के गुरुओं को अभिवादन करे॥२॥
भिवादन की रीति यह है कि " देवशर्माऽहमयमभिवादये" क्षत्रिय हो तो
ो के स्थान में वर्मा कहे । विन पढे पुरुष तथा स्त्री पुरुषों के मेल मिलाप
समय स्त्रियों को अभिवादन करने का अवसर हो तो अभिवादन के वाक्य
नियम नहीं है यह किन्हीं आचार्यों की राय है कि वहां लोक भाषा में
रित शब्द बोलकर (जिसे वे लोग ठीक समझते हों) अभिवादन करे।
देश में गये विना नाते रिश्ते की सब स्त्रियों को नित्यर अभिवादन न करे।
न्तु माता, चाची, बड़ी भगिनी, बड़ी भौजाई (भावज) और सासु इन सब
को नित्यर पादस्पर्श पूर्वक अभिवादन करे ॥ ३ ॥ ऋत्विज्, श्वशुर, चाचा,
र मामा ये लोग युवावस्था के हों तो आते देख के उठ खड़ा हो किन्तु
भिवादन न करे। तथा अपने ग्राम नगर का निवासी क्षत्रियादि अपने से
आवे तो भी अभिवादन न करे किन्तु उठके खड़ा हो जावे। ८० वर्ष
से भीतर के शूद्र को बालक के समान समझे। छोटे भी ब्राह्मणादि द्विज को शूद्र
भिवादन (प्रणाम) करे। जिस को अभिवादन किया जाय उस का नाम नहीं
ना चाहिये। कम बोलने वाला अधिकावस्था का भी राजा का नौकर (भोभव-
भिवादये) ऐसा कहके अभिवादन बड़ों को करे। एक ग्राम वा नगर के रहनेवाले
व कर्महीन साधारण होंसो चाहें वे बराबर आयुवाले हों या दशवर्ष तक कम ज्या-
हों तो भी बराबर के माने जावेंगे। बराबर वालों का सा व्यवहार करें।
और इन में जो कोई विशेष गुणवान् हो तो वह पांच वर्ष तक बड़ा होने
र बराबर माना जायगा। पांच वर्ष से अधिक बड़ा होगा तो बड़ा

राजन्यो वैश्यकर्म्मा विद्याहीनो दीक्षितस्य प्राक्कुय
वित्तबन्धुकर्मजातिविद्यावयांसि मान्यानि परबल
श्रुतं तु सर्वेभ्यो गरीयस्तन्मूलत्वाद्धर्मस्य श्रुतेश्च ॥५॥
दशमीस्थोऽनुग्राह्यवधूस्नातकराजभ्यः पथो दानं
श्रोत्रियाय श्रोत्रियाय ॥ ६ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

आपत्कल्पो ब्राह्मणस्याब्राह्मणविद्योपयोगोऽनुगम
श्रूषाऽऽसमाप्तेर्ब्राह्मणो गुरुर्याजनाध्यापनप्रतिग्रहाः

माना जायगा । यदि स्वग्राम वासी सदाचारी वेदपाठी हो
वर्ष तक बड़ा होने पर बराबर माना जायगा । तीन से
बड़ा होगा तो मान्य कोटि में बड़ा माना जायगा । यदि
क्षत्रिय, वैश्य का व्यापारादि काम करने वाला विद्याहीन हो तो
छोटे भी दीक्षित क्षत्रिय को पहिले प्रणाम करे ॥ ४ ॥ धन, कुटुम्ब, प
यज्ञादि कर्म, जाति (वर्ण,) विद्या पढ़ना, और बड़ी अवस्था, ये क
के अधिक या उत्तम हों वे सब मान्य कोटि के हैं । और पहिले २
पेक्षा अगला २ अधिक मान्य होगा । जैसे धनी से बड़े कुटुम्ब वाला,
उत्तम शास्त्रोक्त कर्मों का करने वाला, उस से भी अधिक मान्य श
विद्वान् उससे भी अधिक मान्य १०० वर्ष का वृद्ध होगा । परन्तु वेदशा
वेत्ता बड़ा विद्वान्, हो तो सभी मान्यकोटियों के लोगों से अधिक
होगा । क्योंकि वेद शास्त्र ही धर्म का मूल है । और श्रुति में भी वेद
द्वान् को ही सर्वोत्तम लिखा है ॥ ५ ॥ गाढ़ीवाला, ९० नब्बे वर्ष का वृ
के योग्य, वधू, स्नातक (ब्रह्मचर्य पूरा करने वाला) और राजा इन का
मान्य करके इन के सामने मार्ग से अन्यों को हटजाना चाहिये । परन्
ओर से राजा तथा दूसरी ओर से वेदपाठी स्नातक विद्वान् आता हो
राजा को चाहिये कि स्नातक के लिये मार्ग को छोड़कर मान्य करे ॥ ६
यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥ ६

ब्राह्मण को चाहिये कि जब आपत्काल में ब्राह्मण अध्यापक न
तो क्षत्रियादि से वेदादि शास्त्र पढ़े तथा पढ़ने के समय तक उन क्षत्रियादि ग
यक के पीछे २ चलनादि शुश्रूषा करे परन्तु उच्छिष्ट भोजन और पादप्रक्षा

पूर्वो गुरुस्तदलाभे क्षत्रवृत्तिस्तदलाभे वैश्यवृत्तिः॥१॥तस्या
यं गन्धरसकृतान्नतिलशाणक्षौमाजिनानि रक्तनिर्णिक्ते
ससी क्षीरं च सविकारं मूलफलपुष्पौषधमधुमांसतृणोद-
पथ्यानि पशवश्च हिंसासंयोगे पुरुषवशाकुमारीवेहतश्च
त्यं भूमिव्रीहियवाजाव्यश्वर्षभधेन्वनडुहश्चैके ॥ २ ॥ वि-
मयस्तु रसानां रसैः पशूनां च न लवणाकृतान्नयोस्तिला-
च समेनासमेन तु पक्वस्य संप्रत्यर्थे सर्वधातुवृत्तिरशक्ता-
शूद्रेण तदप्येके प्राणसंशये तद्वर्णसंकराऽभक्ष्यनियमस्तु प्रा-

---

कराना, वेदादि पढ़ाना, और दान लेना ये काम ब्राह्मण गुरु के ही हैं।
र नीचे २ वर्णों का अपने से ऊंचा २ गुरु भी हो सकता है। जैसे क्षत्रिय
ब्राह्मण, वैश्य का गुरु क्षत्रिय, और शूद्र का गुरु वैश्य होसकता है। वैसे
ब्राह्मण के न मिलने पर क्षत्रिय के कर्म करने वाले ब्राह्मण को वा वैश्यवृत्ति
ने वाले ब्राह्मण को क्षत्रियादि गुरु करें ॥१॥ यदि ब्राह्मणको आपत्काल में
र के कामों से जीविका करने पड़े तो, केशर चन्दन हींगादि गन्ध द्रव्य, दूध,
आदि रस, पूरी मिठाई आदि पकाया भोजन,तिल, शण या शण के कपड़े,
सि के (मुकटादि) वस्त्र, मृगचर्म, रंगे और धोये वस्त्र, दूध, दही, रबड़ी, पेड़ा,
यादि, मूल, फल, पुष्प, औषध, सहत, मांस, फूंस (पूरा) जल, कुपथ्यकारक
तु, जो कसाई के घर जाने सम्भव हों ऐसे पशु, पुरुष, वंध्या गौ वा भैंसी
दि, कुमारी कन्या,गर्भपातिनी गौ आदि,इन सबको कभी भी न बेंचे। पृथिवी,
न, जौ, भेड़, बकरी, ऋषभ—(नये बछड़ा, खैला), काम में चले हुए बैल,इन
को भी न बेंचे यह किन्हीं आचार्यों का मतहै ॥२॥ रसोंका रसोंके साथ और
ओं का पशुओं के साथ बदला भल ही कर लेवे। परन्तु कच्चे अन्न और लवण
तथा परस्पर तिलों का बदला न करे। तौल में अधिक कमका बदला करना
तो कच्चे अन्न केसाथ पकाये अन्नका बदला करलिया करे। और जिस कालमें
के बिना तंग असमर्थ हो तब लोहा तांबा पीतल कांसादि सब धातुओं के
न देन द्वारा जीविका कर लेवे। पर शूद्रके साथ जीविका न करे। और कोई
चार्य कहतेहैं कि प्राण जाने का भय हो तो शूद्र से भी जीविका कर लेवे।
रन्तु उन नीच वर्णसंकरों के घर के पकाये अभक्ष्य अन्न को न खाने का

णसंशये ब्राह्मणोऽपि शस्त्रमाददीत राजन्यो वैश्यकर्म्मवैश्य
कर्म्म ॥ ३ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

द्वौ लोके धृतव्रत्तौ राजा ब्राह्मणश्च बहुश्रुतस्तयोश्च
र्विधस्य मनुष्यजातस्यान्तःसंज्ञानां चलनपतनसर्पणाना
यत्तं जीवनं प्रसूतिरक्षणमसंकरो धर्मः ॥ १ ॥ सएप बहु
भवति लोकवेदवेदाङ्गविद् वाकोवाक्येतिहासपुराणकु
स्तदपेक्षस्तद्वृत्तिश्चत्वारिंशता संस्कारैः संस्कृतस्त्रिपु कर्म
भिरतः पट्सु वा समयाचारिकेष्वभिविनीतः पड्भिः परि

नियम तब भी रक्खे। और प्राण जाने का भय हो तो ब्राह्मण भी श
(हथियारों) का ग्रहण करे। और प्राण संकट के आपत्काल में राजपुत्र
भी वैश्य के कर्मों द्वारा निर्वाह करना स्वीकार करे ॥ ३ ॥
यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सातवां अध्याय पूरा हुआ।

संसार में एक राजा द्वितीय बहुत पढ़ा लिखा वेद शास्त्रवेत्ता विद्वान् ये
होकर अपने नियमों पर बद्ध होने चाहिये। इन्हीं दोनों पर सब मनुष्यों
पश्वादि प्राणीमात्र का चलना फिरना चेष्टा करना आदि रूप जीवन
निर्भर है। तथा जीवों की उत्पत्ति, रक्षा और धर्म में चपलता न होना भी
और विद्वान् ब्राह्मण पर ही निर्भर है ॥१॥ बहुश्रुत ब्राह्मण वह कहाता है
जो लोकव्यवहार में चतुर, वेद-वेदाङ्गों का जाननेवाला, वाकोवाक्य (
रूप वैदिक ग्रन्थ) इतिहास, पुराण, इन सब में कुशल—
हो, इन्हीं वेदादि की अपेक्षा रक्खे, और इन्हीं के द्वारा जिसकी
जिसकी आगे कहे चालीस संस्कारों से शुद्धि हुई हो। वेद का
कराना और दान देना इन तीन कर्मों में या वेदाध्ययन, यज्ञ करना और
लेना इनके सहित छः कर्मों में जो तत्पर हो, समयानुकूल आचार
जो सर्वथा विनय के साथ वर्त्ताव कर्त्ता हो, विद्वान् ब्राह्मण
में तत्पर न हो तो राजा उनका निरादर करे या उचित
कर देवे। और यदि अपने वेदोक्त कर्मों में तत्पर रहता हो तो

राज्ञा वध्यश्चावध्यश्चादण्डयश्चावहिष्कार्यश्चापरि-
श्चापरिहार्यश्चेति ॥२॥ गर्भाधानपुंसवनसीमन्तोन्नयन-
तकर्मनामकरणान्नप्राशनचौडोपनयनं चत्वारि वेदव्रता-
स्नानं सहधर्म्मचारिणीसंयोगः पञ्चानां यज्ञानामनुष्ठानं
पितृमनुष्यभूतब्रह्मणामेतेषां चाष्टकापार्वणश्राद्धश्रावण्या-
ग्रायणीचैत्र्याश्वयुजीति सप्त पाकयज्ञसंस्था अग्न्याधेयम
होत्रदर्शपौर्णमासावाग्रयणं चातुर्मास्यनिरूढपशुबन्धसौ-
मणीति सप्त हविर्यज्ञसंस्था अग्निष्टोमोऽत्यग्निष्टोम उक्थ्यः
डशी वाजपेयोऽतिरात्रोऽप्तोर्यामइति सप्त सोमसंस्था इ-

दिने, देश निकाला देने, निन्दित करने और तिरस्कार करने योग्य वह नहीं ॥ २ ॥ अब चालीस संस्कार गिनाते हैं—१-गर्भाधान।२- पुंसवन । ३-सीमन्तोन्नयन । ४-जातकर्म ।५-नामकरण । ६-अन्नप्राशन । ७-चूडाकर्म । ८-उपनयन । चारों वेदों के व्रत ९ । १० ११ । १२ । चार वेदारम्भ १३-समावर्त्तन । १४-विवाह (सहधर्मचारिणी के साथ संयोग) । १५-देवयज्ञ।१६-पितृयज्ञ १७-मनुष्य (अतिथि) यज्ञ । १८ भूतयज्ञ (बलिकर्म) । १९ ब्रह्मयज्ञ । तीनों अष्टका और एक अन्वष्टका श्राद्ध । २१-मास पार्वण श्राद्ध । २२--पितृयज्ञ वा एकोद्दिष्ट सपिण्ड आदि श्राद्ध । २३-श्रावणी कर्म (उपाकर्म) । आग्रहायणी (मार्गशिर की पौर्णमासी को होने वाला यज्ञ) कर्म । २५ (चैत की पौर्णमासी का यज्ञ) कर्म । २६—आश्वयुजी (आश्विन की मासी का यज्ञ) कर्म । ये अष्टका श्राद्धादि सात पाकयज्ञ कहाते हैं । २७ तमास अग्नियों का स्थापन और तत्सम्बन्धी पवमानेष्ट्यादि कर्म । २८-तत्पश्चात् सायं प्रातःकाल का नित्याग्निहोत्र । २९-दर्शपौर्णमास इष्टि । ३०-आग्रयणेष्टिक (नवान्नेष्टि) ३१-चातुर्मास्ययागों के चारों पर्व।३२—निरूढ पशुबन्ध (पशुयाग कर्म यह यौत है) कर्म । ३३—सौत्रामणी यज्ञ । अग्न्याधान से लेकर ये सातो हविर्याग (चरु पुरोडाशादि से होने वाले) हविर्यज्ञ कहाते हैं । ३४—अग्निष्टोम । ३५—अत्यग्निष्टोम । ३६—उक्थ्य।३७—षोडशी । ३८—वाजपेय । ३९—अतिरात्र । ४०—अप्तोर्याम । ये अग्निष्टोमादि सात

त्येते चत्वारिंशत्संस्काराः ॥ ३ ॥ अथाष्टावात्मगुणा दया सर्वभूतेषु क्षान्तिरनसूया शौचमनायासो ... ण्यमस्पृहेति यस्यैते न चत्वारिंशत्संस्कारा नवाऽ्‌ष्टावा... णा न स ब्रह्मणः सालोक्यं सायुज्यं च गच्छति ॥ ४ ... तु खलु संस्काराणामेकदेशोऽप्यष्टावात्मगुणा अथ स ... णः सालोक्यं सायुज्यं च गच्छति गच्छति ॥ ५ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रेऽष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥

स विधिपूर्वं स्नात्वा भार्यामधिगम्य यथोक्तान् ... स्थधर्मान् प्रयुञ्जान इमानि व्रतान्यनुकर्षेत् स्नातको नि... शुचिः सुगन्धः स्नानशीलः सति विभवे न जीर्णमलवद्वा...

सोमयाग कहाते हैं। ये चालीश संस्कार हैं ॥ ३ ॥ अब आत्मा नाम प्रा... रण (मन) के आठ गुण (धर्म) ये हैं कि-१-सब प्राणियों पर दया। २-असमर्थ दीन दुःखियों वा अपने आधीन स्त्री पुत्रादि के अनुचित ... को सह लेना। ३—किसी की निन्दा न करना। ४—बाहर भीतरी ... करना। ५—परोपकारादि के परिश्रम में कष्ट न मानना। ६-मङ्गल का... (शोकादि का त्याग) ७—उदारता रखना। ८—तृष्णा को त्याग का... न्तोष धारण करना। जिस पुरुष के ये चालीश संस्कार न हुये हों और ... ठो आत्मगुण भी जिस में न हों वह ब्रह्म (परमात्मा) के साथ सा... वा सायुज्य मुक्ति को प्राप्त नहीं होता ॥ ४ ॥ और जिस के चालीश सं... में से थोड़े भी संस्कार यथावत् हुये हों और दयादि आठो धर्म जिस में ... द्यमान हों वह भी मोक्ष को अवश्य प्राप्त हो जाता है ॥ ५ ॥
यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में आठवां अध्याय पूरा हुआ।

अब स्नातक (गृहस्थ) पुरुष के नियम धर्म कहते हैं। पहिले गृह... में लिखे विधान के अनुसार समावर्त्तन (संस्कार) स्नान कर के पश्चा... धि पूर्वक विवाह करके ठीक शास्त्रोक्त गृहस्थ के धर्मों का ... इन आगे कहे नियमों को ठीक २ धारण करे। स्नातक पुरुष (वा ... मात्र) नित्य ही शुद्ध रहे, सुगन्ध (चन्दन केशर इतर आदि) ... नियम से स्नान करे, सम्पत्ति होने पर फटे वा मलिन वस्त्र कदापि ...

रक्तमलवदन्यधृतं वा वासो बिभृयान्न स्रगुपानहौ
क्तमशक्तौ न रूढश्मश्रुरकस्मान्नाग्निमपश्च यगपद्धा-
ापो मेध्येन संसृजेन्नाङ्गुलिना पिबेन्न तिष्ठन्नुद्धृतेनो-
ाचामेन्न शूद्राशुच्येकपाण्यावर्जितेन न वाय्वग्निवि-
त्यापो देवता गाश्च प्रति पश्यन् वा मूत्रपुरीषामेध्या-
स्येन्नैता देवताः प्रति पादौ प्रसारयेन्न पर्णलोष्टाश्मभि
पुरीषापकर्षणं कुर्यान्न भस्मकेशनखतुषकपालामेध्यान्य
तिष्ठेन्न म्लेच्छाशुच्यधार्मिकैः सह संभाषेत संभाष्य वा पु-
कृतो मनसा ध्यायेद् ब्राह्मणेन वा सह संभाषेत ॥ १ ॥
धेनुं धेनुभव्येति ब्रूयादभद्रं भद्रमिति कपालं भगालमि-

करे, मलिन खाखी आदि रंग के तथा अन्य किसी के पहने हुए वस्त्र भी
पहने, अन्य के पहने हुए माला और जूता भी धारण न करे, किसी का-
। असमर्थ दशा में अन्य का पहना वस्त्रादि धारण करने ही पड़े तो धावे
ादि द्वारा शुद्ध करलेवे। डाढ़ी मूंछें न रखावे किन्तु मुंडाता रहे। अकस्मात्
प्रि और जल को एक साथ न ले चले, शुद्ध जल में मल मूत्रादि अपवित्र
स्तु न गिरावे, अंगुली से जल न पीवे, खड़ा हुआ भी जल न पीवे। जलाशय
। अलग निकाले जल से आचमन करे। शूद्र या अशुद्ध मनुष्य के लाये और
क हाथ से लाये जल से भी आचमन न करे। वायु, अग्नि, ब्राह्मण, सूर्य, जला-
ाय, देवस्थान, इनकी ओर मुख करके या इनको देखता हुआ मल, मूत्र, या
अन्य किसी अपवित्र वस्तु का त्याग न करे। और इन वायु आदि देवताओं
की ओर को पग भी न पसारे। पत्ते, ढेला, और पत्थर से मल मूत्रों को इ-
धर उधर न चलावे। भस्म, बाल, नख, भूसी, खप्पर, (मट्टी के बर्तनों के टुकड़े)
और अपवित्र वस्तु इन पर न खड़ा हो और न बैठे। म्लेच्छ, अपवित्र (मलिन)
और अधर्मियों के साथ संभाषण न करे। यदि किसी कारण इनके साथ बोलने
ही पड़े तो मनसे पुण्यात्मा तपस्वियों का ध्यान करे। अथवा उनके साथ बात
करने बाद ब्राह्मण के साथ वार्तालाप करे ॥ १ ॥ अधेनु (दूध न देनेवाली
गौ) को "धेनु भव्या" कहे। अभद्र (अकल्याण) को "भद्र" कपाल को "भगा-

ति मणिधनुरितीन्द्रधनुः ॥ २॥ गां धयन्तीं परस्मै नाचक्षी
न चैनां वारयेन्न मिथुनीभूत्वा शौचं प्रति विलम्बेत न
तस्मिन् शयने स्वाध्यायमधीयीत न चापररात्रमधीत्य पु
प्रतिसंविशेन्नाकल्पां नारीमभिरमयेन्न रजस्वलां नचैनां श्लि
ष्येन्न कन्यामग्निमुखोपधमनविगृह्यवादंबहिर्गन्धमाल्यधा
रणपापीयसावलेखनभार्यासहभोजनाञ्जन्त्यवेक्षणकुद्वारप्रवे
नपादधावनसंदिग्धभोजननदीबाहुतरणवृक्षवृषमारोहणा
रोहणप्राणव्यवस्थानि च वर्ज्जयेन्न संदिग्धां नावमधिरो
सर्वतएवात्मानं गोपायेन्न प्रावृत्य शिरोऽहनि पर्यटेत्,
वृत्य तु रात्रौ मूत्रोच्चारे च न भूमावनन्तर्द्धाय नाराद्गृ

ल" इन्द्र धनुष् को "मणिधनुः" ऐसा कहे ॥ २ ॥ गौ को बछड़ा चोंखत
तो अन्य से न कहे। और बछड़े से गौ को स्वयंभी न हटावे। मैथुन क
तत्काल शुद्धि करे बिलम्ब न करे। मैथुन करने की सेज पर वेदपाठ न
रात के चौथे प्रहर में वा आधी रात के पश्चात् वेदपाठ करे तो पीछे
सोवे। असमर्थ बाल्यावस्था की (जिसकी छाती पर कुच न उठे हों
से संयोग न करे। रजस्वला स्त्री से भी संयोग न करे। रजस्वला स्त्री को
से भी न लिपटावे तथा स्पर्श भी न करे। कुमारी कन्या से भी (विवा
हुए विना) संयोग न करे। अग्नि को मुख से न धौंके वा न फूंके (द
ग्निको प्रज्वालन के समय वांस की धौंकनी से वा दोनों हाथों के
फूंके पंखादि से नहीं।) वैर विरोध पूर्वक किसी से वाद विवाद
कण्ठ से बाहर शिर के जूड़े आदि फूलों आदि की माला धारण
अत्यन्त पापी पुरुष के साथ लिखा पढी आदि व्यवहार कदापि न करे।
पत्नी के साथ भोजन, अंजन सुरमा लगाती हुई को देखना, द्वार से भि
छुकी आदि मार्ग से घर में घुसना, कांसे के पात्र में पग धोना, संदिग्ध भोज
भजाओं से नदी को तरना, वृक्ष पर वा बैलपर चढ़ना, उतरना, इन
प्राणों की दुरवस्था करने वाले अन्य कामों को भी त्याग देवे। मन्दि
का पर न चढ़े। सब ओर से अपनी रक्षा करे। दिन में शिर को
न ढोले, परन्तु रात में शिर को बांधकर निकले नंगे शिर रात में कहीं
मल मूत्र त्याग के समय शिर में वस्त्र लपेट कर और सूखे तृण

न भस्मकरीषकृष्टच्छायापथिकाम्येषूभे मूत्रपुरीषे दिवा
ादुदङ्मुखः संध्ययोश्च रात्रौ दक्षिणामुखः पालाशमास-
ादुके दन्तधावनमिति वर्ज्जयेत् ॥३॥ सोपानत्कश्चाश-
ानशयनाभिवादननमस्कारान् वर्ज्जयेत् ॥ ४ ॥ न पूर्वा
मध्यन्दिनापराह्णानफलान्कुर्यात् यथाशक्ति धर्मार्थ-
मेभ्यस्तेषु च धर्म्मोत्तरः स्यान्न नग्नां परयोषितमीक्षेत न
ासनमाकर्षेन्न शिश्नोदरपाणिपादवाक्चक्षुश्चापलानि कु-
च्छेदनभेदनविलेखनविमर्दनास्फोटनानि नाकस्मात्कुर्या-
ोपरि वत्सतन्त्रीं गच्छेन्न जलकूले स्यान्न यज्ञमवृतो गच्छेद्
र्शनाय तु कामं, न भक्ष्यानुत्सङ्गे भक्षयेन्न रात्रौ प्रेष्याहृतमु-
धृतस्नेहविलेपनपिण्याकमथितप्रभृतीनि चात्तवीर्याणि ना-

ो भूमि पर धर के उन पर मल मूत्रका त्याग करे। घर के समीप मल मूत्र
ा त्याग न करे, भस्म, फूटे कपडे, जोता खेत, छाया, मार्ग, और रमणीक ज-
ह में मल मूत्र का त्याग न करे। दिन में तथा सायं प्रातः सन्ध्या के समय
तर को मुख करके और रात्रि में दक्षिण को मुख करके मल मूत्र का त्याग
रे। ढाक की लकड़ी या पत्तों का बैठने को आसन, (पट्टा) खड़ाऊं (पा-
का) और दातौन न बनावे ॥ ३॥ भोजन करना, आसन पर बैठना, शय्या
र लेटना, बड़े मान्यों को अभिवादन, और बराबर वालों को नमस्कार इन
ामों को जूता पहने हुए न करे ॥४॥ पूर्वाह्ण, मध्यान्ह और अपराह्ण को निष्फ-
करे किन्तु उन २ समय के धर्म कृत्यों द्वारा सफल करे। यथाशक्ति धर्म अर्थ
ौर कामना की सिद्धि के लिये समयों को लगावे और तीनों में धर्म को
र्वोपरि सेवन करने का यत्न करता रहे। पराई स्त्री को नंगी न देखे। पग
आसन को न खींचे। शिश्न, (गुप्तेन्द्रिय) उदर, हाथ, पग, वाणी, चक्षु,
न को चपल न रक्खे। बिना प्रयोजन किसी वस्तु का छेदन (दो टुकड़े)
दिन, खोदना, मसलना, बजाना, अकस्मात् न करे। बंधे हुए बछड़े की रस्सी
के ऊपर लांघकर न निकले। जलाशय के तट पर न बैठे। वरण हुए या बु-
ाये विना किसी के यज्ञ में न जावे। पर देखने को भले ही जावे। खाने
योग्य वस्तुओं को गोदी में धर कर न खावे। रात्रि में भृत्य की लायी वस्तु,
जिस की चिकनाई निकाल ली हो, विलेपन (उबटन) पिण्याक (पीना-खली)

श्नीयात्, सायं प्रातस्त्वन्नमभिपूजितमनिन्दन् भुञ्जीत न
दाचिद्र रात्रौ नग्नः स्वपेत् स्नायाद्वा यच्चात्मवन्तो
सम्यग्विनीता दम्भलोभमोहवियुक्ता वेदविद आचक्षते
त्समाचरेद् योगक्षेमार्थमीश्वरमधिगच्छेन्नान्यमन्यत्र
गुरुधार्म्मिकेभ्यः प्रभूतैधोदकयवसकुशमाल्योपनिष्क्र
मार्य्यजनभूयिष्ठमनलसमृद्धं धार्म्मिकाधिष्ठितं निकेतन
वसितुं यतेत प्रशस्तमाङ्गल्यदेवतायतनचतुष्पथादीन्
क्षिणमावर्त्तेत ॥ ५ ॥ मनसा वा तत्समग्रमाचारमनुपाल
दापत्कल्पः ॥ ६ ॥ सत्यधर्मार्य्यवृत्तः शिष्टाध्यापकः शौ
शिष्टः श्रुतिनिरतः स्यान्नित्यमहिंस्रो मृदुर्दृढकारी दमः

मट्ठा, इत्यादि (जिन का सार निकाल लिया गया हो) वस्तु न खावे
लगावे। सायं प्रातः दोवार सन्ध्याग्नि होत्रादि के पश्चात् पकाये (ताजे)
अन्न को निन्दा न करता हुआ खावे। रात में नङ्गा कदापि न सोवे और
हो कर स्नान भी न करे। और जो सम्यग् विनय को प्राप्त हुए, दम्भ, लो
मोह, (अज्ञान से रहित) वेदवेत्ता आत्मज्ञानी वृद्ध लोगों के उपदेशानु
आचरण करे। अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति (योग) और प्राप्त की रक्षा (
के लिये राजा के पास नित्य जाया करे। देवता गुरु और धार्मिक लोगों
भिन्न अन्य किसी से कुछ प्रार्थना वा निवेदन न करे। जहां ईंधन, जल,
(घासादि) कुश, पुष्प और निकलने के मार्ग, ये आर्य (द्विज) लोगों से अधिक
घिरे हों जिस में वायु का प्रवेश हो, जिस में अग्नि स्थापित हो चुका हो,
धार्मिक लोग इधर उधर बहुत हों ऐसे घर में निवास करने का यत्न
प्रशस्त स्थान, माङ्गलिक वस्तु (गौ) आदि, देवालय और चौराहे आदि
मिलें तब २ इनकी प्रदक्षिणा करे ॥५। अथवा ये आचरण आपत्काल में ठीक
न कर सके तो उस पूर्वोक्त सब आचार का मनसे ही पालन करे॥६॥ सत्य
पर सदा आरूढ़, श्रेष्ठ सदाचारी आर्यों का सा वर्त्ताव करे। शिक्षित उत्तम
स्वभाव वालों को वेदादि पढ़ावे। शौच धर्म की ठीक २ शिक्षा करे।
पढ़ने पढ़ाने विचारने में तत्पर रहे । किसी को कभी भी दुःख देने की

ोलएवमाचारो मातापितरौ पूर्वापरांश्च संबद्धान् दुरि-
भ्यो मोक्षयिष्यन् स्नातकः शश्वद्ब्रह्मलोकान्न च्यवते
च्यवते ॥ ७ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥९॥

इति प्रथमः प्रपाठकः ॥

द्विजातीनामध्ययनमिज्या दानं ब्राह्मणस्याधिकाः प्र-
वनयाजनप्रतिग्रहाः पूर्वेषु नियमस्त्वाचार्यज्ञातिप्रियगु-
धनविद्याविनिमयेषु ब्राह्मणः संप्रदानमन्यत्र यथोक्तात्
षिवाणिज्ये चास्वयं कृते कुसीदं च ॥१॥ राज्ञोधिकं रक्षणं
र्वभूतानां न्याय्यदण्डत्वं बिभृयाद् ब्राह्मणान् श्रोत्रियान्
रुत्साहांश्चाब्राह्मणानकरांश्चोपकुर्वाणांश्च योगश्च विजये भ-

करे। कोमलता के साथ दृढ़ता से धर्म करे। मन को वश में रखता हुआ
शील हो। इस प्रकार आचरण करता हुआ अपने माता पिता और
र उधर आगे पीछे के कुटुम्बी तथा सम्बन्धियों को दुराचारों से बचाना
हता हुआ स्नातक गृहस्थ पुरुष सनातन अविनाशी ब्रह्मलोक को प्राप्त
के फिर च्युत नहीं होता है ॥ ७ ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में नवमाध्याय और
प्रथम प्रपाठक पूरा हुआ ९ ॥

ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य तीनों द्विजों के लिये वेद वेदाङ्गों का पढ़ना, यज्ञ करना,
न देना ये तीनों कर्म एकसे हैं। वेदादि पढ़ाना, यज्ञ कराना, दान लेना ये कर्म
ह्मण के अधिक हैं। पहिले तीनों (वेदाध्ययनादि) में नियम यह है कि आचार्य,
ति, प्रिय, गुरु, धन, और विद्या इनके परिवर्त्तन में दान का पात्र ब्राह्मण ही
ना जावे परन्तु शास्त्रोक्त कन्यादान लेने आदिको छोड़कर (क्षत्रियादिभी क-
ादि लेवें) यदि ब्राह्मण,क्षत्रिय खेती और वणिज् व्यापार करें तो स्वयं न करके
न्य भृत्यादि से करावें। और सूद भी न लेवें॥१॥ क्षत्रिय राजा के उक्त वेदाध्यय-
दि तीन से अधिक (खास) काम ये हैं–सब प्राणियों की रक्षा करना, न्यायानु-
ल दण्ड देना, वेद वेत्ता वेदपाठी ब्राह्मणों का, निरुत्साही ब्राह्मणों से भि-
क्षत्रियादि का, और राज कर न देने योग्य परोपकार में तत्पर पुरुषों का,
त्रिय राजा सदा ही भरण पोषण करे। विजय होने पर दान पुण्यादि कामों

ये विशेषेण चर्या च, रथधनुर्भ्यां संग्रामे संस्थानमनिवृ
न दोषो हिंसायामाहवेऽन्यत्र व्यश्वसारथ्यायुधकृताञ्ज
कीर्णकेशपराङ्मुखोपविष्टस्थलवृक्षाधिरूढदूतगोब्राह्मण
दिभ्यः क्षत्रियश्चेदन्यस्तमुपजीवेत्तद्वृत्तिः स्यात्, जेता
सांग्रामिकं वित्तं वाहनं तु राज्ञउद्धारश्चापृथग्जयेऽन्य
थार्हं भाजयेद्राजा राज्ञे बलिदानं कर्षकैर्दशममष्टमं षष्ठं
पशुहिरण्ययोरप्येके पञ्चाशद्भागं विंशतिभागः शु
पण्ये मूलफलपुष्पौषधमधुमांसतृणेन्धनानां षष्ठं तद्रक्ष
र्म्मित्वात्तेषु तु नित्ययुक्तः स्याद्धिके न वृत्तिः शिलि

का योग करे। शत्रु के अकस्मात् चढ़ाई कर देने का भय होने पर विशे
त्ता से वर्त्ताव करे। रथ और धनुषादि शस्त्रों के साथ संग्राम के लिये
(खड़ा) होजाय। संग्राम से कदापि न हटे। युद्ध के समय होने वाली
में वीर पुरुषों को दोष नहीं लगता। परन्तु जिसके घोड़े, सारथि, हथि
छूट गये वा नष्ट हो गये हों, जो हाथ जोड़ के कहे कि मुझे न मारो,
बाल जिसने खोल दिये हों, जिस ने युद्ध से पीठ फेरी हो, लौटा जा
जो बैठ गया हो, जो सवारी से उतर के भूमि पर खड़ा वा बैठा हो
पर चढ़ गया हो, दूत, गौ-बैल, ब्राह्मण न होने पर अपने को ब्राह्मण
देवे, यदि अन्य कोई क्षत्रिय भी हो पर ब्राह्मण के आश्रय से जीवि
वा ब्राह्मण के वेदाध्यापनादि कामों से जीविका करता हो ऐसे सवारी
लग हुए आदि को युद्ध में मारडालने पर हिंसा दोष लगता है। युद्ध में
धन को जो राज कर्मचारी जीते वह उसी को मिले। पर घोड़ा, रथ
आदि सवारी राजा के ही होंगे चाहे कोई जीते। बहुतों ने मिलकर
मान जीता हो उसमें से यथा योग्य सबको राजा हिस्सा बांट देवे और
हुए सामान में राजा का भी भाग होगा। खेती करने वाले किसान
दा किये अन्न में से दशवां, आठवां अथवा छठा भाग राजा को करदिया
पशु और सुवर्ण में मूल से अधिक जितना पैदा हो उसमें से पचासवां
राजा को कर मिलना चाहिये। दुकान पर धरके बेचने की साधारण
जो लाभ हो उसमें से बीशवां भाग राजा कर लेवे। मूल, फल, पुष्प,
शहद, मांस, फूंस, (पूरा) ईंधन (लकड़ी,) इनके लाभ में से छठा भा
जा कर लेवे। क्योंकि खेती करनेवाले आदि की रक्षा करना राजा

सिमास्येकैकं कर्म्म कुर्युरेतेनात्मोपजीविनो व्याख्याताः, वक्रीवन्तश्च भक्तं तेभ्यो दद्यात् पण्यं वणिग्भिरर्घापचये देयं प्रणष्टमस्वामिकमधिगम्य राज्ञे प्रब्रूयुर्विख्याप्य राज्ञा त्सरं रक्ष्यमूर्ध्वमधिगन्तुश्चतुर्थं राज्ञः शेषं स्वामी रिक्थक्रयसंविभागपरिग्रहाधिगमेषु ब्राह्मणस्याधिकं लब्धं क्षत्रियस्य विजितं निर्विष्टं वैश्यशूद्रयोर्निध्यधिगमो राजधनं न ब्राह्मणस्याभिरूपस्याब्राह्मणो व्याख्यातः षष्ठं लभेतेत्येके रहृतमुपजित्य यथास्थानं गमयेत् कोशाद्वा दद्याद् रक्ष्यं

इससे प्रजा की रक्षा में राजा नित्य अधिकता से दत्तचित्त रहे। बढ़ई लुआदि कारीगर लोगों से तथा मज़दूर लोगों से राजा कर न लेवे किन्तु क महिने में एक२ दिन उनसे बेगारि में अपना काम करालेवे। नौका और) बग्घी चलाने वालों से भी कर न लेकर महिने२ में एक दिन काम करालेपरन्तु कारीगरादि को उस दिन अपनी पाकशाला से भोजन करावे। वैश्य लोगों को मूल में घटी पड़े लाभ कुछ न हो तो राजा उन से कुछ कर न लेवे। यदि किसी का माल असबाब खो गया हो तो प्रजा के लोग राज कर्मचारी (पुलिसादि) जिनको पड़ा दीखे वे राज दरबार में जाकर [illegible]हा करें। तब राजा उस सामान के लिये विज्ञापन दे देवे तथा सुरक्षित [illegible] देवे और एक वर्ष तक उसकी रक्षा करे। पश्चात् यदि किसी का वह माल निकप्रमाण मिलने पर उसको मिले। अन्यथा एक वर्ष के बाद जिसको पड़ा मि[illegible] उसको चौथाई देकर शेष राजा का होना चाहिये। उस माल का मालि[illegible] है। चाहे किसी का एक समझे उसे देवे या बेचे या किन्हीं को बांट या दान करदे अथवा स्वयं रखलेवे। अथवा जो धन कहीं अकस्मात् अ[illegible] मिले वह ब्राह्मण का हो। युद्ध में जीता हुआ क्षत्रिय को मिले। सेवा परिश्रम से प्राप्त हुआ धन वैश्य शूद्रों का भाग है। पृथिवी में कहीं कोश (ज़ाना) निकले तो वह राजाका धन है। यदि गुणवान् धर्मनिष्ठ ब्राह्मण कोश मिले तो राजा न लेवे। किन्तु ब्राह्मण से भिन्न को मिला कोश [illegible] का होगा। और कोई आचार्य यह कहते हैं कि उस ब्राह्मण के कोश [illegible] राजा छठा भाग ले लेवे। किसी का धन चोर ले गये हों तो चोरों से [illegible] कर जिसका हो उसी को राजा दिलावे। यदि चोरों का पता न लगे

ब्रालधनमाव्यवहारप्रापणादासमावृत्तेर्वा ॥२॥ वैश्यस्य कृषिवणिक्पाशुपाल्यकुसीदम् ॥ ३ ॥ शूद्रश्चतुर्थो जातिस्तस्यापि सत्यमक्रोधः शौचमाचमनार्थे पाणिप्रक्षालनमेवैके श्राद्धकर्म्म भृत्यभरणं स्वदारवृत्तिः परिचर्य्योत्तरेषां तेभ्यो वृत्तिं लिप्सेत जीर्णान्युपानच्छत्रवासांस्युच्छिष्टाशनं शिल्पवृत्तिश्च यं चायमाश्रयते भर्त्तव्यः क्षीणोऽपि तेन चोत्तरस्तदर्थोऽस्य निचयः स्यादनुज्ञातो नमस्कारो मन्त्रः पाकयज्ञैः स्वयं यजेतेत्येके ॥ ४ ॥

तो राजा अपने कोश (खजाने) से उतना धन उस को दिलावे कि जितना धन चोरी गया हो। नाबालिग के वा ब्रह्मचारी के धन की राजा, तब तक रक्षा करे कि जब तक वह बड़ा समझदार न हो अथवा समावर्तन न करे ॥ २ ॥ पहिले कहे वेदाध्ययनादि तीन कर्मों से अधिक वैश्य के निम्न लिखित काम हैं। खेती, व्यापार, पशुपालन, और सूद (व्याज) लेना ॥ ३ ॥ शूद्र चौथा वर्ण एकजाति है अर्थात् उपनयनादि संस्कार न होने से द्विजाति नहीं होता। उस के लिये भी सत्य, अक्रोध का त्याग आचमन के लिये हाथ पांव धोना, इतना ही शौच है यह कोई आचार्य कहते हैं। वेदमन्त्रों को छोड़ के स्मार्त वा भन्त्रादि से श्राद्ध करना, स्त्रीपुत्रादि का पालन पोषण करना, अपनी स्त्री से रहना, ब्राह्मणादि तीनों वर्णों की सेवा करना, उन्हीं से अपने निर्वाह का लिया करे। द्विजों के पुराने जूता, छाता, वस्त्र, और झाडू आदि लेवे। द्विजों के चौके में बचा भोजन लेलिया करे। तथा मकान आदि अथवा चित्रकारी आदि कारीगरी के कामों से जीविका करे। जिस द्विज का यता शूद्र चाहे उसी को इन का भरण पोषण अपना काम लेके करना अपने धनहीन भी मालिक की सेवा से ही शूद्र बड़ा प्रतिष्ठित होता है। उसी मालिक के लिये शूद्र अपने सर्वस्व को माने। शूद्र के लिये के नाम के साथ (नमः) पद लगा लेना ही परमोत्तम मन्त्र शास्त्र जैसे (शिवाय नमः। विष्णवे नमः। देव्यै नमः। गणपतये नमः। सोमाय नमः) इत्यादि मन्त्रों द्वारा पकाये भात आदि हविष्यान्न से स्वयं शूद्र किया करे यह कोई आचार्य कहते हैं ॥ ४ ॥

चोत्तरोत्तरं परिचरेयुरार्यानार्ययोर्व्यतिक्षेपे कर्मणः पंसाम्यम् ॥ ५ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

ा सर्व्वस्येष्टे ब्राह्मणवर्ज्जं साधुकारी स्यात् साधुवादी
ामान्वीक्षिक्यां चाभिविनीतः शुचिर्जितेन्द्रियो गुणवत्स
ोऽपायसंपन्नः समः प्रजासु स्याद्धितं चासां कुर्वीत, तमु
सीनमधस्तादुपासीरन्नन्ये ब्राह्मणेभ्यस्तेऽप्येनं मन्येरन्,
िनाश्रमांश्च न्यायतोऽभिरक्षेच्चलतश्चैनान्स्वधर्म्मे एव
पयेद् धर्म्मस्योंऽशभाग्भवतीति विज्ञायते। ब्राह्मणं च पुरो-
ीत विद्याभिजनवाग्रूपवयःशीलसंपन्नं न्यायवृत्तं तपस्विनं

वर्ण अपने २ से ऊपर २ वर्णों की सेवा करें जैसे साधारण मूर्ख ब्राह्मण
ानों की, क्षत्रिय ब्राह्मणों की, वैश्य क्षत्रियों की, और शूद्र वैश्यों की सेवा
। क्योंकि ब्राह्मणादि और शूद्रादि का अधिक संसर्ग होने से लौट पौट
कर दोनों के कर्म एक से हो बिगड़ेंगे हानि होगी ॥ ५ ॥

गौतमीय धर्मशास्त्र के भावानुवाद में दशवां अध्याय पूरा हुआ ॥ १० ॥

ब्राह्मण को छोड़कर राजा सबका ईश्वर है। राजा अच्छे निर्दोष काम
। सत्य और कोमल भाषण करे। तीनों वेदों की त्रयीविद्या और न्याय
त्र का अच्छा जानने वाला राजा हो, विनीत स्वभाव रक्खे, पवित्र रहे,
ेन्द्रिय हो, गुणवान् पुरुषों को अपना सहायक बनाये, उन्हीं से सलाह
ाति करे, दानशील हो, प्रजाओं पर समदृष्टि रक्खे, प्रजाओं का हित किया
ऊपर गद्दी पर बैठे (विराजमान) उस राजा से नीचे सब प्रजा के
। (ब्राह्मणों को छोड़कर) बैठा करें। ब्राह्मणलोग भी राजा का मान्य किया करें।
ों और आश्रमों की राजा न्यायधर्म से सदा रक्षा करे। यदि ब्राह्मणादि
और ब्रह्मचर्यादि आश्रम अपने कर्त्तव्य से च्युत होते हों तो उनको अ-
र धर्म पर ही स्थापित करे। यदि वर्ण तथा आश्रम अधर्मस्थ हो जांय तो
अधर्म का भाग राजा को भी लगता है यह वेद में लिखा है। अच्छी वा-
अच्छे रूप, अच्छी अवस्था और अच्छे स्वभाव वाले, जिसका वर्त्ताव आ-
र विचार न्यायानुकूल धर्म युक्त हो ऐसे कुलीन तपस्वी विद्वान् ब्राह्मण

तत्प्रसूतः कर्म्माणि कुर्व्वीत, ब्रह्मप्रसूतं हि क्षत्रमृध्यते न
थत इति च विज्ञायते । यानि च दैवोत्पातचिन्तकाः प्र
स्तान्याद्रियेत तदधीनमपि ह्येके, योगक्षेमं प्रतिजानते
न्तिपुण्याहस्वस्त्ययनायुष्यमङ्गलसंयुक्तान्याभ्युदयिकानि
द्वेषिणां संवलनमभिचारद्विषद्व्याधिसंयुक्तानि च शाल
कुर्याद् यथोक्तमृत्विजोऽन्यानि, तस्य व्यवहारो वेदो ध
शास्त्राण्यङ्गान्युपवेदाः पुराणं देशजातिकुलधर्म्माश्चाम्न
विरुद्धाः प्रमाणं कर्षकवणिक्पशुपालकुसीदकारवः स्वे
वर्गे तेभ्यो यथाधिकारमर्थान् प्रत्यवहृत्य धर्म्मव्यवस्था

को राजा गुरु नियत करे। उसकी प्रेरणा आज्ञा वा सलाह सम्मति से रा
प्रबन्ध सम्बन्धी सब काम किया करे। क्योंकि वेद से यह जाना गया
ब्राह्मण की आज्ञा प्रेरणा से चलने वाला ही क्षत्रिय राजा बढ़ता है और
वा पीड़ित नहीं होता। और जिन बातों को दैवी उत्पातों (शकुनों
चिन्तक (जानने वाले ज्योतिषी आदि) लोग कहें उन विचारों का भी
दूर करे जाने। कोई आचार्य कहते हैं कि दैवोत्पात चिन्तकों के आधीन
रहे क्योंकि वे दैवज्ञ लोग योगक्षेम की उत्तमता होने की प्रतिज्ञा
सकते हैं। उत्पात दीखने पर शान्तिकरण, पुण्याह वाचन, स्वस्ति वाचन,
पुण्यकारी और माङ्गल्य संयुक्त वेद शास्त्रोक्त आभ्युदयिक कामों को तथ
त्रुओं को दबाने के लिये मारणप्रयोग अथवा उनको व्याधिरोग तथा
काम स्थापित किये यज्ञशाला के अग्नि में करे करावे। और राजा के
लोग शास्त्रोक्त अन्य काम भी शत्रुको दबाने तथा अपने राजा की र
लिये करें। वेद, धर्मशास्त्र, वेद के छः अङ्ग, चार उपवेद, और इतिहास
इन ग्रन्थों के अनुकूल राजा का व्यवहार होना चाहिये। देश धर्म, जाति
और कुल धर्म ये वेदादि शास्त्रों से विरुद्ध न होने पर प्रमाण कोटि में
जायेंगे। किसान, वैश्य, पशुपालक (गोपाल जाति) सूद लेनेवाले और
नार लुहार आदि कारीगर इन सबको अपने२ वर्ग में स्थापित रखे।
र, अपने जातीय कर्म को छोड़कर कोई अन्य वर्ग में सम्मिलित होवे
न करे। उनर की योग्यता शक्ति के अनुसार धनादि पदार्थ देकर

धिगमे तर्कोऽभ्युपायस्तेनाभ्यूह्य यथास्थानं गमयेद् विप्र-
त्तौ त्रयीविद्यावृद्धेभ्यः प्रत्यवहृत्य निष्ठां गमयेदथाह्य-
निःश्रेयसं भवति, ब्रह्म क्षत्रेण संपृक्तं देवपितृमनुष्यान्
यतीति विज्ञायते, दण्डोदमनादित्याहुस्तेनादान्तान्
येद्वर्णाश्रमाश्च स्वकर्म्मनिष्ठाः प्रेत्य कर्मफलमनुभूय ततः
ण विशिष्टदेशजातिकुलरूपायुःश्रुतवित्तवृत्तसुखमेधसो
न्म प्रतिपद्यन्ते, विष्वञ्चो विपरीता नश्यन्ति तानाचार्यो-
शो दण्डश्च पालयते तस्माद्राजाचार्यावनिन्द्यावनिन्द्यौ॥१॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

व्यवस्था करे। न्याय की बात खोजने के लिये तर्क ही मुख्य उपाय है। तर्क से ऊहा करके राजा यथोचित व्यवस्था करे। यदि तर्क से भी किसी पक्ष का निर्णय न हो किन्तु विरोध ही सब पक्षों में दीख पड़े तो तीनों सम्बन्धी त्रयी विद्या में बड़े बड़े विद्वान् ब्राह्मणों के निकट जाकर व्यवस्था मांगे अर्थात् उनकी राय से फैसला कर देवे। ऐसा करने से राजा का परम कल्याण होता है। क्षत्रत्व से मिला हुआ ब्रह्मत्व-देव, पितर, और मनुष्यों को धारण करता है यह वेद से जाना गया है। दमन (वशी) करने अर्थ से दण्ड शब्द बना है ऐसा आचार्य लोग कहते हैं। उस दण्ड के द्वारा राजा प्रजा के दान्तों (अपने आपेसे बाहर होने वाले दुराचारियों) को वशीभूत करे। ब्राह्मणादि वर्ण और ब्रह्मचर्यादि आश्रम अपने २ धर्म कर्म में तत्पर रहते हुए मरणानन्तर अपने कर्मों से स्वर्ग भोग फल का दीर्घ कालतक अनुभव करके शेष पुण्य के बल से उत्तम २ देश, जाति, कुलों में सुरूपवान्, दीर्घायु, विद्यावान्, धीमान्, सदाचारी, बुद्धिमान् और [illegible] से युक्त हुए जन्म लेते हैं। सब वर्णाश्रमों से विपरीत दुराचारादि में चलने वाले नष्ट होते जाते हैं। उनको गुरु लोगों वा आचार्यों का (धर्मशास्त्रोक्त) उपदेश और राजा का दण्ड रक्षा करता है। इससे राजा और वेद के विद्वान् आचार्यों की निन्दा कदापि न करे ॥ १ ॥

इति गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ग्यारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥

शूद्रो द्विजातीनभिसंधायाभिहत्य च
भ्यामङ्गेन मोच्यो येनोपहन्यादार्यस्त्र्यभिगमने लि
स्वप्रहरणं च गोप्ता चेद् वधोऽधिकोऽथाहास्य वेदमुप
तत्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रप्रतिपूरणमुदाहरणे जिह्वाच्छेदो
शरीरभेद आसनशयनवाक्पथिषु समप्रेप्सुर्दण्ड्यः शत
क्षत्रियो ब्राह्मणाक्रोशे दण्डपारुष्ये द्विगुणमध्यर्धं वैश्ये
ह्मणस्तु क्षत्रिये पञ्चाशत्तदर्धं वैश्ये न शूद्रे किंचित् ब्रा
राजन्यवत् क्षत्रियवैश्यावष्टापाद्यं स्तेयकिल्विषं शूद्रस्य
गुणोत्तराणीतरेषां प्रतिवर्णं विदुषोऽतिक्रमे दण्डभू

शूद्र पुरुष यदि ब्राह्मणादि द्विजों के निकट आके वा संकेत कर
ली देवे धमकावे वा लकड़ी आदि से मारे पीटे तो जिस अङ्ग से वध
ध करे राजा उसी अंग को कटवा देवे । यदि द्विजों की स्त्रियों के सा
व्यभिचार करे तो लिङ्गेन्द्रिय को कटवा देवे और उस शूद्र का धन
दार्थ छीन लेवे (जुर्माना करदे) यदि वह अपनी रक्षा करता हो तो
वध करा देवे । यदि समझ पूर्वक वेद को सुनता हो तो शीशा और
पिघला कर कानों में डलवा देवे । यदि वेद का स्वयं उच्चारण करे तो
की जिह्वा कटवादेवे यदि शूद्र ने वेदों को कण्ठस्थ किया हो
शिर कटवा के मरवा डाले । यदि आसन, शय्या (सेज,) वाणी
और मार्ग में चलने की बराबरी ब्राह्मणादि के साथ शूद्र करे तो रा
पर सौ रुपये दण्ड (जुर्माना) करे ॥१॥ यदि क्षत्रिय ब्राह्मण को मारे
धमकावे, निन्दा करे तो दो सौ रुपये दण्ड (जुर्माना) करे। यदि
ब्राह्मण की निन्दादि करे तो १५०) डेढ़ सौ रु० दण्ड (जुर्माना) करे।
ब्राह्मण, क्षत्रिय की निन्दादि करे तो ५०) रु० दण्ड, वैश्य की निन्दादि
तो २५) रु० दण्ड देवे और शूद्र की निन्दादि करे तो कुछ भी दण्ड न
देवे। क्षत्रिय तथा वैश्य यदि शूद्र की निन्दादि करें धन हावें तो ब्रा
और राजा के तुल्य उन को भी कुछ दण्ड न देवे। चोरी के अपराध में
सना (अठगुना) शूद्र को दोष लगता है तब १६ गुणा वैश्य को ३२
क्षत्रिय को और ६४ गुणा दोष ब्राह्मण को लगता है। विद्वान् का
करने पर शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण इन को क्रमशः अधिक दं

ःलहरितधान्यशाकादाने पञ्चकृष्णलमल्पे पशुपीडिते स्वा-
मिदोषः पालसंयुक्ते तु तस्मिन् पथि क्षेत्रेऽनावृते पालक्षेत्रि
योः पञ्च मापा गवि पड़ुष्ट्रे खरेऽश्वमहिष्योर्दशाजाविषु
ौ द्वौ सर्वविनाशे शतं, शिष्टाकरणे प्रतिषिद्धसेवायां च नि-
ां चेलपिण्डादूर्ध्वं स्वहरणम्,गाऽग्न्यर्थे तृणमेधान्वीरुद्व-
स्पतीनां च पुष्पाणि स्ववदाददीत, फलानि चापरिवृता-
ां कुसीदवृद्धिर्धर्म्या विंशतिः पञ्च मापकी मासं नातिसांव-
त्सरीमेके चिरस्थाने द्वैगुण्यं प्रयोगस्य मुक्ताभिर्न वर्द्धते दि-
त्सतोऽवरुद्धस्य च चक्रकालवृद्धिः कारिताकायिकाऽधिभो-

चाहिये। अर्थात् शूद्र से अधिक वैश्य को और सब से अधिक दंड ब्राह्म-
णों को हो। फल, हरा धान्य और शाकों के चुराने पर चार रत्ती सुवर्ण का
दंड (जुर्माना) करे। पशुओं के द्वारा खेत की थोड़ी हानि हो तो पशु के
मालिक का दोष होगा। यदि चरवाहा (ग्वालिया) साथ में हो तो ग्वा-
लिया का दोष होगा। यदि मार्ग के पास २ खेत हो और खेत का वाड़ा न
बंधा हो तो खेत के मालिक और ग्वालिया दोनों का अपराध माना जा-
ता। यदि गौ वा बैल ने खेत को उजाड़ा हो तो पांच मासे, ऊंट से उजा-
ड़ा हो तो छः मासे, गधा, घोड़ा, और भैंसी ने खेत उजाड़ा हो तो दश २
मासे और भेड़ बकरियों ने खेत चर लिया हो तो दो दो मासे सुवर्ण का
दंड (जुर्माना) पशु के मालिक पर होना चाहिये। यदि सब खेत बिलकुल
चर लिया हो तो सौ १०० मासे सुवर्ण का राजा दंड देवे। यदि ब्राह्मणादि
अपना २ शास्त्रोक्त कर्म न करें और निषिद्ध हिंसा चोरी आदि कर्म करें तो
निर्वाहमात्र भोजन वस्त्र छोड़के उनका शेष धनादि हरलेना चाहिये। गौ और
अग्नि की रक्षा के लिये घास, ईंधन, लता, और वनस्पतियों की फूल पत्ती
अपने पदार्थ के तुल्य ले आवे उस में अपराध वा चोरी नहीं है। जिस बाग
बगीचे का वाड़ा न खिंचा हो उन वृक्षों के फल तोड़ लाने में भी दोष नहीं
। मूलका बीसवां हिस्सा सूद लेना धर्मानुकूल है (इस में प्रति मास १)
सैकड़ा सूद पड़ेगा) महिने २ सूद लेतो पांच मासे सुवर्ण सैकड़ा पर लेवे।
अधिक नहीं। कोई आचार्य कहते हैं कि वार्षिक सूद नियत करके लिया करे।
यदि ऋणी पर बहुत काल तक सूद सहित धन रहे तो जितना मूल धन दिया
हो उस से द्विगुण तक सब लेवे अधिक नहीं। धृद्धियों के देते जाने पर धन
का कर्जा नहीं बढ़ता है। यदि नियत सूद न चुकाता जाय किन्तु रोके

गाश्च कुसीदं पशूपजलोमक्षेत्रशतवाह्येपु नातिपञ्चगुणम
डापौगण्डधनं दशवर्षभुक्तं परैः सन्निधौ भोक्तुरश्रोत्रिय
जितराजन्यधर्मपुरुषैः पशुभूमिस्त्रीणामनतिभोगे रिक्थ
जि ऋणं प्रतिकुर्युः । प्रातिभाव्यवणिक्शुल्कमद्यद्यूतदण्ड
पुत्रा नाध्याभवेयुः । निध्यं वाधियाचितावक्रीताधयो न
सर्व्वा न निन्दिता न पुरुषापराधेन, स्तेनः प्रकीर्णकेशो
सली राजानमियात् कर्म्म चक्षाणः पूतो वधमोक्षाभ्याम

रहे तो सूद पर सूद लेने का सिलसिला चलकर चक्र वृद्धि कहाती है।
ने जो स्वयं नियत की हो कि मैंने इतना लिया उस पर इतना अधि
यह कारिता वृद्धि है। जितने अधिक काल ऋण रहे उतने काल बरा
बढ़ता ही जाय, मूल से दूना तक लेने का नियम न रहे यह कालवृद्धि
लिका) कहाती है। जिस सूद के बदले शरीर से नियत दिनों तक को
कर देना ठहरे वह कायिका वृद्धि है। और जो किसी वस्तु के निय
तक वर्त्तलेने से दी जाय वह अधिकभोगा वृद्धि कहाती है। ये सब शं
लेने के तरीके) निकृष्ट (बुरी) हैं। पशु (भेडी आदि के) लोम-ऊ
सैकड़ों वार ऋणी का खेत जोत लेने से पांच गुणे से अधिक वृद्धि (सू
होता। जो पुरुष बौरा (पागल) वा अजान (नाबालिग) न हो
अपने होश में ठीक हो उस का खेत आदि दश वर्ष तक जिस के अ
में रहे आगे उसी का होजाता है। परन्तु वेदपाठी, संन्यासी, राजपु
धर्मनिष्ठ पुरुष जिसके पदार्थ को दश वर्ष भी भोगें तो भी इन का नहीं
पशु भूमि और स्त्री का असिभोग अर्थात् हानि न होने के निमित्त
वा अन्य मेली लोग ऋणदाता के ऋण को चुका देवें। जामिनी,
का कर, मद्य और द्यूत (जुआ) सम्बन्धी दण्ड पिता के अभाव में पु
नहीं होना चाहिये। कोश का धन, मांगा हुआ, और खरीदा हुआ
सब जिस को सौंपे जायं उस पुरुष का अपराध न होने पर नष्ट हो
यांस् खोजायें तो जिसे मिलें वह अपराधी नहीं माना जायगा। जिस ने
सुवर्ण चुराया हो वह अपने शिर के बाल खोल कर मूसल हाथ में ले
के पास अपना अपराध कहता हुआ जावे। राजा के मारने या छोड़ देने

ग्री राजा म शारीरो ब्राह्मणदण्डः कर्म्मवियोगविख्यापन-
ासनाङ्ककरणान्यप्रवृत्तौ प्रायश्चित्ती स चौरसमः, स-
त्रो मतिपूर्वं प्रतिगृहीतोप्यधर्म्मसंयुक्ते पुरुषशक्त्यपरा-
नुबन्धविज्ञानाद्दण्डनियोगोऽनुज्ञानं वा वेदवित्समवाय-
नाद्वेदवित्समवायवचनात् ॥ २ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

विप्रतिपत्तौ साक्षिणि मिथ्यासत्यव्यवस्था वहवः स्यु-
न्दिताः स्वकर्म्मसु प्रात्ययिका राज्ञां च निष्प्रीत्यनभितापा-
न्यतरस्मिन्नपि शूद्रा ब्राह्मणस्त्वब्राह्मणवचनादऽनुरो-
ऽनिबन्धश्चेन्नासमवेताप्रष्टाः प्रब्रूयुरवचनेऽन्यथावचने च

जाता है। राजा यदि न मारे तो अपराधी होता है। ब्राह्मण को मार-
ने का दण्ड नहीं होना चाहिये। इसलिये राजा को चाहिये कि उसे
ण के वेदाध्ययनादि कामों से वियुक्त करे, महापातकी होने का विख्या-
देवे, या देश निकाले का दण्ड देवे, अथवा दाग देकर सुवर्ण की चोरी का
ह करदेवे। यदि राजा इन में से कुछ भी न करे तो चोर के समान अ-
गी होता है। मन्त्री को विचार पूर्वक परीक्षा करके नियत करने पर भी
अधर्म संयुक्त प्रतीत हो तो पुरुष शक्ति के अपराध का परिणाम सोच
मन्त्री को भी दण्ड देवे। अथवा वेदवेत्ताओं के सम्बन्धी वचन या आज्ञा
स को दण्ड न दे कर मन्त्री पद से च्युत करने की आज्ञा देवे॥ २॥
गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में बारहवां अध्याय पूरा हुआ॥१२॥
किसी मामले में परस्पर विरुद्ध दोनों पक्ष प्रतीत होते हों तो झूठ सत्य
निर्णय साक्षी पर जाने। वे साक्षी लोग अपने २ धर्म कर्म में बहुत विश्वास
। वाले लोक में प्रतिष्ठित हों निन्दित न हों। राजा के साथ जिन का न प्रेम हो
ते हों तथा वादी प्रतिवादी दोनों में किसी से जिनका विशेष मेल न हो न
ध हो ऐसे बहुत मनुष्य साक्षी हों। किसी पक्ष में भले ही शूद्र भी साक्षी
ब्राह्मण से भिन्न साक्षी के वचन की अपेक्षा ब्राह्मण साक्षी के वचन का
ष अनुरोध करे। यदि साक्षियों में परस्पर मेल हो तो पृथक् २ पूछे बिना
ो बोल उठ न कहें। साक्षी लोग अदालत में कुछ भी न कहें वा विरुद्ध

दोषिणः स्युः, स्वर्गः सत्यवचने विपर्यये नरकः ॥ १ ॥ अ
निबन्धैरपि वक्तव्यं पीडाकृते निबन्धः प्रमत्तोक्ते च साक्षि
सभ्यराजकर्त्तृषु दोषो धर्मतन्त्रपीडायां शपथैनैके सत्यकर्म
णा तद्देवराजब्राह्मणसंसदि स्यादब्राह्मणानां पञ्च पश्वनृते सा
क्षी दश हन्ति गोऽश्वपुरुषभूमिषु दशगुणोत्तरान् सर्वं वा भूमौ
हरणे नरको भूमिवदप्सु मैथुनसंयोगे च पशुवन्मधुसर्पिषो
गोवद्वस्त्रहिरण्यधान्यब्रह्मसु यानेष्वश्ववन्मिथ्यावचने या
प्यो दण्ड्यश्च साक्षी नानृतवचने दोषो जीवनं चेत्तदधीनं नतु
पापीयसो जीवनं राजा प्राड्विवाको ब्राह्मणो वा शास्त्रवित्

कहीं तो दोनों हालत में दोषी होते हैं। सत्य बोलने पर साक्षियों को स्वं
और मिथ्या बोलने से नरक प्राप्त होता है ॥१॥ कुछ प्राप्ति का निबन्ध न होने
पर भी साक्षी ठीक देनी चाहिये। निबन्ध, पीड़ा (दुःख) करने वाला होता
है। प्रमाद से मिथ्या कहने से राजसभा में अन्याय होतो साक्षी सभासद्
राजा और अधर्म करने वाला ये चारो अपराधी होते हैं। किन्हीं आचार्यों
का मत है कि धर्म को धक्का लगने का भय होतो शपथ (कसम) से निर्ण
करे। सत्य धर्म कर्म की कसम ब्राह्मण से करावे सो देवस्थान राजसभा और
ब्राह्मणों की सभा में शपथ करावे। ब्राह्मण से भिन्न साक्षियों से कहे कि-जो
पुरुष पशुओं विषयक गवाही में झूठ बोलता है वह अपने कुल की पांच ह
त्या का दोषी होता, गौ के विषय में झूठ बोलने पर दश हत्या का
घोड़े के विषय में झूठ बोलने पर सौ हत्या का, मनुष्य के विषय में
हत्या का, और भूमि के विषय में झूठ बोलने पर दशहजार हत्या का
होता है। अथवा भूमि विषयक झूठ में सब कुटुम्ब की हत्या का दोषी
भूमि के चुराने पर नरक होता और भूमि विषयक झूठ गवाही के तु
के विषय में और मैथुन संयोग के विषय में मिथ्या गवाही देने से दो
गता है। शहद और घी के विषय में पशुओं के तुल्य, वस्त्र, सुवर्ण, अ
वेद विषय में गौ के तुल्य, सवारियों (रथादि) के विषय में घोड़े के
दोष लगता है। यदि गवाह मनुष्य का मिथ्या कहना सिद्ध हो जाये तो
निकाल देवे और दण्ड करे। यदि उस मनुष्य की गवाही देने से ही जी
होतो मिथ्या भाषण में भी राजदण्ड का अपराधी नहीं है। परन्तु दुष्ट
गवाह की जीविका भी वास्तव में जीविका नहीं है। राजा (हाकिम)

ड्विवाको मध्यो भवेत,संवत्सरं प्रतीक्षेत प्रतिभायां धेन्व-
डुत्स्त्रीप्रजननसंयुक्तेषु शीघ्रमात्ययिके च सर्वधर्म्मेभ्यो ग-
यः प्राड्विवाके सत्यवचनं सत्यवचनम् ॥ २ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

ायमाशौचं दशरात्रमनृत्विग्दीक्षितब्रह्मचारिणां सपिण्डा-
मेकादशरात्रं क्षत्रियस्य द्वादशरात्रं वैश्यस्यार्द्धमासमे-
मासं शूद्रस्य तच्चेदन्तः पुनरापतेत्तच्छेषेण शुद्ध्येरन्, रा-
त्रशेषे द्वाभ्यां प्रभाते तिसृभिर्गोब्राह्मणहतानामन्वक्षं राज-
ोधाच्चयुद्धे प्रायोनाशकशस्त्राग्निविषोदकोद्बन्धनप्रपतनैश्चे-

ैर शास्त्रों का जानने वाला प्राड्विवाक ये लोग किसी धनी से घूंस लेकर मि-
ा न्याय न करें। अदालत में वकील मध्यस्थ हो। किसी स्त्री का मुकद्दमा
ा और उसका अपराधिनी होना सिद्ध न हो तो एक वर्ष तक उसकी निग-
नी करे। गौ, बैल, स्त्री के सन्तानोत्पत्ति (व्यभिचार से हो) और अत्याचार
म्बन्धी मुकद्दमों का शीघ्र फैसला करना अन्य सब धर्मों से श्रेष्ठ है। अदालत में
त्य बोलने का विशेष भार वकीलपर होना चाहिये अर्थात् सत्य वक्ताओं
प्रसिद्ध परीक्षित पुरुष वकालत करने के लिये राजनियम से नियत
ाने चाहिये ॥ २ ॥

ह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में तेरहवां अध्याय पूरा हुआ॥ १३ ॥

अब सूतक अशुद्धि का विचार दिखाते हैं। ऋत्विज्, दीक्षित (जिन ने
ज्ञ में दीक्षा ली हो) और ब्रह्मचारी इन को छोड़के अन्य सामान्य मनुष्य
ोग दश दिन तक मृत सूतक मानें। अन्य सपिण्ड के लोग ग्यारह दिन, क्षत्रिय
ारह दिन, वैश्य पन्द्रह दिन और एक मास तक शूद्र लोग मरण सूतक मानें। यदि
क के मरने की शुद्धि होने से पहिले उसी कुटुम्ब का अन्य कोई मरजावे तो
हिले के साथ ही अगले की भी शुद्धि कर लवें। यदि पहिले की शुद्धि में एक
ात्रि भर बाकी हो तो दो दिन में शुद्धि करें। यदि पहिले सूतक के अन्तिम
देन प्रातःकाल द्वितीय मृत्यु हो तो तीन दिन अशुद्धि मानें। जो पुरुष गौ-
या ब्राह्मण ने मार डाले हों, जो गाड़ी से दब के मरे हों, जो राजाओं के
ध से हुए युद्ध में कट के मरे, जो प्रायः नाशक—शस्त्रों से, अग्नि में
ल कर, विष खाकर, जल में डूबकर, फांसी लगा कर, या किसी ऊंचे मकाना-

च्छ त्रीं पिण्डनिवृत्तिः सप्तमे पञ्चमे वा, जननेप्येवं पित्रोस्तन्मातुर्वा गर्भमाससमा रात्रीः स्रंसने गर्भस्य त्र्यहं वा श्रुत्वा चोर्ध्वं दशम्याः पक्षिण्यसपिण्डे योनिसंबन्धे सहाध्यायिनि च सब्रह्मचारिण्येकाहं श्रोत्रिये चोपसंपन्ने प्रेतोपस्पर्शने दशरात्रमाशौचमभिसंन्धायचेदुक्तं वैश्यशूद्रयोरार्तवीर्वा पूर्वयोश्च त्र्यहं वाऽऽचार्यतत्पुत्रस्त्रीयाज्यशिष्येषु चैवमवरश्चेद्वर्णः पूर्वं वर्णमुपस्पृशेत् पूर्वो वाऽवरं तत्र शावोक्तमाशौचं, पतितचाण्डालसूतिकोदक्याशवस्पृष्टितत्स्पृष्ट्युपस्पर्शने सचैलोदकोपस्पर्शनाच्छुध्येच्छवानुगमे च शुनश्च यदुपहन्यादित्येके,उदकदानं सपिण्डैः कृतचूडस्य तत्स्त्रीणां

दि से गिर कर अपनी इच्छा पूर्वक मरे हों उन को सातवें वा पांचवें ... पिण्ड देना निवृत्त हो जाता है अर्थात् आगे उन के नाम से पिण्ड नहीं चाहिये । जन्म सूतक में भी इसी मरण सूतक के समान शुद्धि जानो । ... त्पत्ति में माता पिता दोनों को वा केवल माता को ही अशुद्धि लगती है ... पात होने पर जितने महीनों का गर्भ गिर जाय उतने दिन में शुद्धि ... विदेश में दश दिन वाद सूतक जान पड़े तो तीन दिन में शुद्धि करे। ... सपिण्ड से भिन्न कुटुम्बी वा नातेदारों का सूतक दश दिन वाद सुने ... दिन एक रात में शुद्धि करे । और साथ २ पढ़ने वाले वा साथ में ब्र... चारी रहा हो तथा श्रोत्रिय (वेदपाठी) के स्वर्गवास में एक दिन रा... शुद्धि करे । जान कर मुर्दा का स्पर्श करने वाला दश दिन सूतक माने। ... शूद्रों का सूतक पूर्व में कह चुके हैं । रजस्वला स्त्रियों का तथा सूतकी ... क्षत्रियों का स्पर्श करके तीन दिन में शुद्धि करे । गुरु,गुरुपुत्र, गुरुपत्नी,य... और शिष्य के देहान्त में भी तीन दिन सूतक माने । सूतक में नीच वर्ण का ... उत्तम वर्ण का या उत्तम वर्ण नीच का स्पर्श करे तो मृत सूतक के समान ... शुद्धि जानो । पतित (ब्रह्महत्यादि पातकी) चाण्डाल, सूतिका स्त्री, ... स्वला, मुर्दा का स्पर्श करने वाला और उस स्पर्श कर्त्ता का छूने वाला ... पतितादि का स्पर्श करने पर सचैल स्नान करने पर शुद्ध होता है ... संग जाने और हाथ से कुत्ते को मारने पर भी सचैल स्नान करे यह ... आचार्यों का मत है । जिस का चूडाकर्म संस्कार हो गया हो उस के

तिभोगएके प्रदत्तानामधःशय्यासनिनो ब्रह्मचारिणः
न मार्जयेरन्न मांसं भक्षयेयुराप्रदानात्प्रथमतृतीय
सप्तमनवमेष्वपूदकक्रिया वाससां च त्यागः, अन्त्येत्वन्त्या
दन्तजन्मादि मातापितृभ्यां तूष्णीं माता, बालदेशान्त-
प्रव्रजितारापिण्डानां सद्यः शौचं, राज्ञां च कार्यविरोधाद्
ब्राह्मणस्य च स्वाध्यायानिवृत्त्यर्थं स्वाध्यायानिवृत्त्यर्थम् ॥१॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

प श्राद्धममावास्यायां पितृभ्यो दद्यात्, पञ्चमीप्रभृति वा-
पक्षस्य यथाश्रद्धं सर्वस्मिन्वा द्रव्यदेशब्राह्मणसन्निधाने

कुटुम्बी सपिण्ड के लोग जलदान करें। बिना विवाही कन्याओं को ज-
दान का अधिकार नहीं यह किन्हीं का मत है। कन्यादान हो जाने पर
तो जल दिया जाय। सूतक मानने वाले सब लोग दश दिन तक नीचे
पृथिवी पर सोवें, बैठें, ब्रह्मचारी रहें, स्नान तथा मार्जनादि शुद्धि न करें. और
स न खावें कि जब तक प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तम और नवम दिनों में जल
न करें। और उसी दिन वस्त्रों का भी त्याग करें। शूद्रादि नीचों की शुद्धि
अन्तिम (महिने के पूरे होने पर) दिन वस्त्रों का त्याग और जलदान
होना चाहिये। दांत उगने से लेकर चूड़ा कर्म तक बालक के मरने
र माता पिता दोनों वा केवल माता अशुद्धि मानने के समय मौन रहें।
न्य कुटुम्बी लोग तत्काल शुद्धि करलें। देशान्तर में मरिहुए का बालक, सं-
न्यासी और सात पीढ़ी से ऊपर कुटुम्बी इन सब के मरने पर तत्काल शी
घ्र शुद्धि करलें। राजकार्यों की हानि न होने के अनुरोध से राजा को
और नित्य नियम से वेदाध्ययन करने वाले ब्राह्मण को वेदाध्ययन का
नियम न बिगड़ने के विचार से तत्काल शुद्धि कर लेनी चाहिये ॥ १ ॥
यह गौतमीय धर्म शास्त्र के भाषानुवाद में चौदहवां अध्याय पूरा हुआ ॥१४॥
अब श्राद्ध का विचार दिखाते हैं। प्रत्येक अमावास्या को पितरों के लिये वा-
र्ष श्राद्ध विधि से पिण्ड देने चाहिये। वा कृष्णपक्ष की पञ्चमी से लेकर श्राद्ध
करे। अथवा श्राद्ध का सामान, श्राद्ध के योग्य देश (स्थान) और विद्वान्
सुपात्र ब्राह्मण जब मिल जांय तभी श्रद्धानुसार सभी तिथियों में श्राद्ध करे।

कालनियमः शक्तितः प्रकर्षे गुणसंस्कारविधिरन्नस

वरान् भोजयेदयुजो यथोत्साहं वा ब्राह्मणान्

ग्रूपवयःशीलसंपन्नान् युवभ्यो दानं प्रथममेके

तेन मित्रकर्म्म कुर्यात्, पुत्राभावे सपिण्डा

शिष्याश्च दद्युस्तदभावे ऋत्विगाचार्यौ।

कदानैर्मासं पितरः प्रीणन्ति, मत्स्यहरिणरुरुशशकूर्म

मेषमांसैः संवत्सरं, गव्यपयःपायसैर्द्वादश वर्षाणि,वा

सेन मांसेन कालशाकलोहखड्गमांसैर्मधुमिश्रैश्चानन्त्या

न भोजयेत् [illegible]

काल का नियम और अन्न को विशेष शुद्धि सावधानी से बनाने क

तो विशेष कर मानना चाहिये। श्राद्ध में नौ से कम १।३।५।७

म संख्या वालों को वा वाणी,रूप,अवस्था,और स्वभाव जिनके अ

वेदपाठी अनियतब्राह्मणों को अपनी शक्ति उत्साह के अनुसार भो

कोई आचार्य कहते हैं कि जो युवावस्था में मरे हों उनके नाम

को पहिले जिमावे। जिन ब्राह्मणों का श्राद्ध में पूजन करे उनके साथ

वरी का व्यवहार कभी न करे किन्तु उनको बड़े पूज्य माना करे। जिन

न हो उन के लिये अपने सपिण्डी वा माता के सपिण्डी अथवा शिष्य लोग

करें। यदि इन में भी कोई न हो तो ऋत्विज् वा गुरु उनका श्राद्ध करें। ति

(उड़द) धान, जौ और जल से किये श्राद्ध से एक मास तक पितर त

मछली, हिरण, रोज, शश (खरगोश,) कछुआ, भैंसा, और मेढ़ा

से एक वर्षतक, गौ के दूध, पायस (खीर) और बड़े२ कानों वाले

मांस से बारह वर्षतक, उस २ ऋतु के शाक, लाल बकरा, गैंडा,

मिले मांस के पिण्डों से अनन्त कालतक पितरों की तृप्ति होती है।

(जिन द्विज लोगों के लिये मांस खाने का निषेध है उनके लिये मां

स्ड देने का भी निषध ही जानो। क्योंकि (यदन्नःपुरुषोभवतित

देवताः) जिस२ अन्न को जो२ खाता हो वही अपने२ देवों तथा

देवे यह परम सिद्धान्त है। इस के अनुसार (निषेध होने पर भी

साहारी हैं उन्हीं को युगान्तरों में भी मांस पिण्ड देने का विधा

और कलि में तो सभी के लिये मांस के पिण्डों का निषेध ही है) न

नास्तिक, नास्तिकता के कामों से जीविका करनेवाला, पतित,

;धिपूपतिस्त्रीग्रामयाजकाजपालोत्सृष्टाग्निमद्यपकुचर-
त्रिम्रातिहारिकानूपपतिर्यस्य च कुण्डाशी सोमविक्रय्य-
ही गरदावकीर्णिगणप्रेष्योगम्यागोमिहिंस्रपरिवित्ति-
तृपर्याहृतपर्याधातृत्यक्तात्मदुर्बलाः कुनखिश्यावदन्त-
पौनर्भवकितवाजपराजप्रेष्यप्रातिरूपकशूद्रापतिनिरा-
कठासिकुसीदिवणिक्शिल्पोपजीविज्यावादित्रतालनृ-
ग्घोषान् पित्राचाकामेन विभक्तान् शिष्यांश्चैके
ांश्च ॥२॥

नेवाला, जिसके मौजूद होते ही स्त्री ने अन्य पुरुष करलिया हो, या न्य की विवाहिता स्त्री को रखलिया हो,स्त्री को और गांवभर के मनुष्यों साथ यज्ञ करानेवाला, भेड़ बकरी पालनेवाला, जिसने स्थापन किये त्यागा हो, मद्य पीनेवाला, जिसका चाल चलन अच्छा न हो, झूंठ नेवाला, जिसकी स्त्री का दूसरा जार पति हो, कूंडे में भोजन करने- ष में सोम बेचने वाला, घर में आग लगाने वाला, विष देनेवाला, होकर जो व्यभिचारकरे, सभा का नौकर, अगम्या स्त्री से गमनकर- हिंसक, ज्येष्ठ भाई से पहिले जो अपना विवाह करे या अग्निहोत्र और उसका जेठा भाई, जो सब ऊंच नीचों से सब प्रकार का दान सब वेश्यादि नीच स्त्रियों से भी व्यभिचार करे, जिसने अपने शरणा- दुर्बल अनाथ पुत्रादि को त्यागा हो, जिसके नख बिगड़े हों, दांत काले कुष्ठी, जो अन्य की स्त्री में पैदा हुआ हो,जुआरी, बकरियों कापालने वाला, नौकर, बहुरूपिया, शूद्रा स्त्री का पति, जिसका अनादर खण्डन होता ग्नि (एक प्रकार का कुष्ठी,) सूद लेनेवाला, पंसारी आदि की दुकान ला, कारीगर, धनुषबाण चलाने–बाजे ताल बजाने–नांचने और गाने वाला, पिता की आज्ञा या इच्छा के विना जिनने विभाग (बांट) ऐसे उक्तप्रकार के चोरी आदि काम करने वाले ब्राह्मणों को श्राद्ध न करावे। और कोई आचार्य कहते हैं कि अपने गोत्र के लोगों ने शिष्यों को भी श्राद्ध में भोजन न करावे ॥२॥

भोजयेदूर्ध्वं त्रिभ्यो गुणवन्तम् ॥३॥ सद्यः श्राद्धी तल्पगस्तत्पुत्रपुरीषे मासं नयति पितॄंस्तस्मात्तद् चारी स्यात्, श्वचण्डालपतितावेक्षणे दुष्टं तस्मात् श्रिते दद्यात्, तिलैर्वा विकिरेत्, पङ्क्तिपावनो वा श पङ्क्तिपावनाः षडङ्गविज्ज्येष्ठसामगस्त्रिणाचिकेतस्त्रि त्रिसुपर्णः पञ्चाग्निः स्नातको मन्त्रब्राह्मणविद् धर्मज्ञ ह्मदेयानुसंतानइति हविःषु चैवं दुर्वलादीन् श्राद्ध श्राद्धएवैके ॥ ४ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

तीनसे ऊपर पांच या सात सुपात्रों को अथवा इतने न मिलें तो एकही गु तपस्वी विद्वान् धर्मात्मा को भोजन करावे ॥३॥ यदि श्राद्ध करने वाला उस वेश्यादि शूद्रा स्त्री से संयोग करे तो उस शूद्रा से होने वाले पुत्रों की श्राद्ध कर्त्ता के पितर एक मास तक बसते हैं। इस से श्राद्धकर्त्ता पुरुष दिन ब्रह्मचारी रहे। कुत्ता, चाण्डाल, और पतित लोग श्राद्धान्न को तो दूषित हो जाता है। इस से घेरी हुई एकान्त जगह में श्राद्ध के और पिण्डदान करे। वा श्राद्ध स्थान के सब ओर तिल बिखेर देवे। पङ्क्तिपावन ब्राह्मण श्राद्ध में हो तो अन्यकृत दोष को शान्त कर १-वेद के छहो अंगों को जानने पढ़ाने वाला। २-सामवेद के आरण्यक को पढ़ा। ३-यजुर्वेद के अध्वर्यु कर्म का ज्ञाता याज्ञिक। ४-जो ऋग में कही तीन प्रकार की मधु विद्या का विद्वान् हो। ५-ऋग्वेद सम्बन्धी ताओं के कर्म का जानने वाला याज्ञिक। ६-गार्हपत्यादि श्रौतस्मार्त पञ्च को विधिपूर्वक स्थापित करके अग्निहोत्र नित्य करने वाला। ७-ब्रह्मच में पूर्ण वेदाध्ययन करके जिस ने समावर्त्तन किया हो। ८-मन्त्रभाग ब्राह्मणभाग वेद को जानने वाला। ९-धर्म का मर्म जानने वाला धर्मा १०-और विधिपूर्वक हुए ब्राह्म विवाह से उत्पन्न सन्तान। ये दशप्रका ब्राह्मण पङ्क्तिपावन कहाते हैं। देवताओं सम्बन्धी ब्रह्मभोज में भी प्रकार उत्तम निकृष्ट ब्राह्मणों की परीक्षा जानो। किन्हीं आचार्यों का है कि दुर्बलादि निषिद्ध ब्राह्मणों का श्राद्ध में ही त्याग करे किन्तु दैवक परीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है ॥ ४ ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पन्द्रहवां अध्याय पूरा हुआ

स्तनयित्नुवर्षविद्युतः प्रादुष्कृताग्निष्वनृतौ विद्युति नक्तं
परराात्रात्त्रिभागादिप्रवृत्तौ सर्वमुल्काविद्युत्सममित्येके
म् ॥ १ ॥ स्तनयित्नुरपराह्णेऽपि प्रदोषे सर्वं नक्तमर्द्ध
दहश्चेत्सज्योतिर्विषयस्थे च राज्ञि प्रेते विप्रोष्य
न्येन सह संकुलोपाहितवेदसमाप्तिच्छर्दि
जनेष्वहोरात्रममावास्यायां च द्व्यहं वा कार्तिकी
षाढी पौर्णमासी तिस्रोऽष्टकास्त्रिरात्रमन्यामेके अभितो
र्षिकं सर्व्वैर्वर्षविद्युत्स्तनयित्नुसन्निपाते प्रस्यन्दिन्यूर्ध्वं
जनादुत्सवे प्राधीतस्य च निशायां चतुर्मुहूर्तं

की ध्वनि में ऋग्वेद यजुर्वेद को न पढ़े। जब आकाश में अकस्मात्
का शब्द हो, भूकम्प हो, जब राहु का उपद्रव दीखे, जब बड़ा उल्कापा
सन्ध्याओं में वा वर्षा से भिन्न काल में बादल गर्जे-मेघ वर्षे-बिजुली
वा रात में विद्युत् गिरे तब एक दिन रात वेद का अनध्याय करे।
रात से लेके रात के तीसरे प्रहर में वेद को न पढ़े। किन्हीं आचार्यों
है कि उल्कापात और विद्युत् का भयंकर शब्द होने पर सभी समय
वर्षा में भी वेद का अनध्याय करे ॥ १ ॥ यदि अपराह्ण (दोपहर
में वा सन्ध्या के समय बादल गर्जे तो रात्रि भर वेद न पढ़े। यदि
पहर से पहिले गर्जे तो सन्ध्या तक न पढ़े। जिस राजा के राज्य में
हो उस का स्वर्गवास होने पर, विदेश में जाकर परस्पर एक
साथ असम्भव मेल के समय, वेद समाप्ति पर, वमन के समय, श्राद्ध
मय, अतिथि घन के अन्य के घर भोजन करने पर इन अवसरों में एक
रात वेद न पढ़े। चतुर्दशी, अमावस्या, कार्त्तिक, फाल्गुन, आषाढ़
की पौर्णमासी, (इन्हीं पौर्णमासियों में चातुर्मास्ययागों के तीन पर्व हो
तीनों अष्टका ऋतुओं में तीन दिन तक, इन चतुर्दश्यादि में वेद को न
कोई आचार्य कहते हैं कि वर्षा ऋतु के आदि अन्त में वर्षा, बिजुली
चमक और गर्जना एक साथ हों वा बूंदें पड़ती हों, भोजन के उपर,
उत्सव के समय भी वेद को न पढ़े। पढ़े हुए वेद का रात्रि के पहिले प्रहर में ही

रे मानसमप्यशुचि श्राद्धिनामाकालिकमकृतान्नश्राद्धिकसं
योगेऽपि प्रतिविद्यं च यावत्स्मरन्ति यावत्स्मरन्ति ॥ २ ॥
इति गौतमीये धर्मशास्त्रे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥
प्रशस्तानां स्वकर्म्मसु द्विजातीनां ब्राह्मणो भुञ्जीत, प्रति-
गृह्णीयाच्चैधोदकयवसमूलफलमध्वभयाभ्युद्यतशय्यासनावस-
थयानपयोदधिधानाशफरिप्रियङ्गुस्रङ्मार्गशाकान्यप्रणोद्या-
नि सर्व्वेषां पितृदेवगुरुभृत्यभरणे चान्यवृत्तिश्चेन्नान्तरेण
शूद्रान्,पशुपालक्षेत्रकर्षककुलसंगतकारपितृपरिचारका भोज्या
न्ना वणिक् चाशिल्पी,नित्यमभोज्यं केशकीटावपन्नं रजस्व-
लाकृष्णशकुनिपदोपहतं भ्रूणघ्नावेक्षितं गवोपघ्रातं भावदुष्टं

है। गांव या नगर में, तथा मनमें ग्लानि होने पर नित्य ही अनध्याय करे।
श्राद्ध करनेवाला एक दिन रात वेद न पढ़े। यदि श्राद्ध सम्बन्धी कच्चा अन्न
लिया लेवे तो भी वेद का अनध्याय करे। प्रत्येक वेद में जितना२ कहा हो उ-
तना अनध्याय माने ॥ २ ॥
यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सोलहवां अध्याय पूरा हुआ॥१६॥
ब्राह्मण पुरुष उन द्विजातियों के घरपर भोजन करे जो अपने२ शास्त्रोक्तकर्मों
में प्रशंसा पाये हों। और ईंधन, जल, भूसा, मूल, फल, शहद, अभय, नये बने
हुए तयार-खटिया, आसन, घर, सवारी, (इत्यादि) दूध, दही, भुनेजौ, मछ-
ली, ककुनी, माला, मार्ग, और हरे शाक इन पदार्थों को जो कोई प्रीति श्रद्धा
से देवे तो पितर, देव और गुरुकी पूजार्थ तथा स्त्री पुत्रादि की रक्षार्थ सब के
लिये निषेध न करे। यदि अध्यापनादि द्वारा अन्य जीविका निर्वाह के
उपाये हो तो शूद्रों को छोड़कर अतिशूद्रादि से न लेवे। गोपाल, किसान,
कुलका संगी, पिता का सेवक और जो कारीगरी को छोड़ के अन्य प्रकार का
व्यापार करता हो ऐसे शूद्रों का भी कच्चा अन्न ब्राह्मण को भक्ष्य है। जिस
खाये भोजन में बाल या कीड़े गिर गये हों, रजस्वला स्त्री ने छू लिया हो,
काले पक्षी के पग जिसमें लग गये हों, भ्रूण (गर्भ) हत्या करने वाले ने जिसे
देखा हो, गौ या बैलने सूंघा हो, जिसको किसी ने दूषित कहा हो या जिस
के दूषित होने में शंका हो गयी हो, जो दही को छोड़ के धरा रहने से खु-

शुक्तं केवलमदधि पुनःसिद्धं पर्युषितमशाकभक्ष्यस्नेह
धून्युत्सृष्टपुंश्चल्यभिशस्तानपदेश्यदण्डिकतक्षकदर्यब
कचिकित्सकमृगयुवार्युच्छिष्टभोजिगणविद्विषाणामप
नां प्राग्दुर्बलाद्वृथान्नाचमनोत्थानव्यपेतानि सम
भ्यां विषमसमे पूजान्तरानर्चितं च गोश्च क्षीरमा
याः सतकेचाजामहिष्योश्च नित्यमाविकमपेयमौष्ट्र
च स्यन्दिनीयमसूसन्धिनीनां च याश्च्य व्यपेतवत
श्वनखाश्चाशल्यकशशकश्वाविद्गोधाखड्गकच्छपाउभ
तकेशलोमैकशफकलविङ्कप्लवचक्रवाकहंसाः काकक

टाय गया हो' फिर से पकाया, धरा हुआ (बासी), ये वस्तु
अभक्ष्य हैं। परन्तु शाक, भक्षण के योग्य घी तैलादि स्नेह, मांस और
ये धरे हुए भी अभक्ष्य नहीं हैं। जो अन्न किसी ने छोड़ या फेंक
निन्दितका, यह न ज्ञात हो कि यह किसके यहां का है, संन्यासी
कंजूस, कैदी, वैद्य, वधिक, वारी, जूठन खानेवाला, इन निन्दितादि
का, विद्वेषी (शत्रुओं)का और विरादरी से छेके हुओं का अन्न
अपने आश्रित वा घरके रोगी आदि से पहिले भोजन न करे। जि
पंच महायज्ञ न हुए हों, ऐसा वृथान्न, पांति में कोई भी अन्त का आच
ममृतापिधानमसि स्वाहा) मन्त्र से कर ले तब या कोई पांति में
जावे तब वा जब पांति के लोग भोजन करना छोड़ दें तब भी भो
करे। जहां बराबर वालों में पक्षपात से आदर की विषमता की जाय
नीचों का तुल्य आदर किया जाय वहां भी भोजन न करे। जहां पर
अपेक्षा आदर कम हो, या आदर के साथ जहां भोजन न कराया जा
भी न खावे। व्याने पर सूतक समय दश दिन के भीतर गौ भैंस बक
का दूध न खावे, भेड़ी, ऊंटनी, घोड़ी, ऋतुमती या जिसका दूध बहता
हो, जो दो बच्चों से ब्यावे, जो गर्भवती गौ आदि हो और दूध दे
आदि का बच्चा मर गया हो इन भेड़ी आदि का दूध न खाना चाहिये।
शश (खरहा), गोधा (गोह), गैंडा, और कछुआ को छोड़कर, पांच
नखोंवाले, दोनों ओर दांतोंवाले, केशों के तुल्य बड़े २ रोमोंवाले, एक
वाले, कलविङ्क (गवरापक्षी) प्लव (जल में तरनेवाला पक्षी) चकवा,
कौआ, कंक (जिस के पंखों को बाण में लगाते हैं) गीध और श्येन

ना जलजा रक्तपादतुण्डा ग्राम्यकुक्कुटसूकरौ धेन्वन-
चापन्नदाग्रसन्नवृथामांसानि किसलयव्रयाकुलसूननिर्यास-
तात्रश्चनाःश्वनिहतदारुवकबलाकाद्रुद्रू टिट्टिभमान्धात
वरा अभक्ष्याः ॥१॥ नभक्ष्याः प्रतुदा विकिरा जालपादा
ार्चाविकृतावध्याश्च धर्मार्थेऽव्यालहता दृष्टदोषवाक्
तान्यभ्युदयोपयुञ्जीतोपयुञ्जीत ॥ २ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे सप्तदशोऽध्यायः ॥१७ ॥

तन्त्रा धर्म्मे स्त्री नातिचरेद्भर्त्तारं वाक्चक्षुःकर्म्मसंय-
ानिरपत्यलिप्सुर्देवराद्गुरुप्रसूताब्र्तुमतीयात्पिण्डगोत्र-

में पैदा हुए मछली आदि, जिनके पंजे या चोंच लाल हों, गांव का
गांव का सूअर, गौ, बैल, स्वयं मरे, यनके अग्नि से जलके मरे। इन
हुनआदि का मांस नहीं खाना चाहिये। यज्ञादि को छोड़ केवल स्वा-
लोभ से प्राप्त किया मांस भी अभक्ष्य है। पत्तों का रसादि, स्वयं मारे
स, वृक्षों का लाल गोंद, गोदने से निकला गोंद, कुत्ते ने मारी शिकार,
या (दारुवक), बगला, रोगीजीव, टिटुहिया, मान्धाता–पक्षी, और
में विचरने वाले चमगीदड़ आदि ये सब अभक्ष्य हैं ॥ १ ॥ जो चोंच
र २ के जीवों को खाते, नखों से विखेर २ के जो खाते, जिन के पग
के तुल्य हैं और सब मछलियां भी अभक्ष्य हैं। जिनके शरीर में विकार
ौर जो अवध्य हैं उन का भी मांस न खावे। यज्ञादि धर्म के लिये जो
ी विधिपूर्वक मारे गये हों, जिन को सांप ने न काटा हो, जिन में
से वा प्रत्यक्ष से कोई दोष न देखा गया हो और वाणी से जो प्रशस्त
े जीवों के मांस को देवता तथा पितरों का पूजन समर्पण करके उप-
में लावे ॥ २ ॥

ौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सत्रहवां अध्याय पूरा हुआ ॥ १७ ॥

धर्मविषय में स्त्री स्वतन्त्र नहीं है, वाणी, चक्षु, और हाथ पांव की चेष्टा
शीभूत नियम बद्ध रखती हुई पति की आज्ञा का उलंघन न करे। पति
भाव में सन्तान को चाहती हो तो देवर, गुरुपुत्र वा पिण्ड गोत्र ऋषि
के एक ही हों ऐसे पति के कुल के कोई पुरुष अथवा पति के कुल के
पुरुष से ऋतुकाल में वीर्यदान लेकर सन्तान उत्पन्न कर लेवे। कोई

ऋषिसंबन्धिभ्यो योनिमात्राद्वा, नादेवरादित्येके, नाति
तीयं, जनयितुरपत्यं समयादन्यत्र जीवतश्च क्षेत्रे परस्मा
स्य द्वयोर्वा रक्षणाद्भर्तुरेव नष्टे भर्तरि षाड्वार्षिकं क्ष
श्रूयमाणेऽभिगमनं प्रव्रजिते तु निवृत्तिः प्रसङ्गात्तस्य द्वा
शवर्षाणि ब्राह्मणस्य विद्यासंबन्धभ्रातरि चैवं ज्यायसि
वीयान्कन्याग्न्युपयमनेषु षडित्येके त्रीन्कुमार्यृतूनतीत
स्वयं युज्येतानिन्दितेनोत्सृज्य पित्र्यानलङ्कारान् प्रदा
प्राग्तौरप्रयच्छन् दोषी प्राग्वाससः प्रतिपत्तिरित्येके द्रव्या

आचार्य कहते हैं कि देवर से भिन्न पुरुष के साथ नियोग न करे। पति
अन्य दूसरे नियुक्त का उलंघन करके किसी तीसरे से स्त्री संग न करे। नि
योग के नियत समय से भिन्न काल में नियुक्त के साथ स्त्री संग करे तो
सन्तान उत्पादक नियुक्त पुरुष का होगा। और पति के जीवित रहते
यदि अन्य किसी पुरुष से सन्तान उत्पन्न हो तो वह सन्तान उस उत्पाद
का वा दोनों का माना जायगा (अर्थात् बीज के स्वत्व से उत्पादक का औ
क्षेत्र के स्वत्व से क्षेत्र वाले का होगा) यदि स्त्री का पति उस की रक्षा भी करे
उसी का सन्तान होगा। किसी स्त्री का पति कहीं विदेश में चला जाय और
पता न हो कि कहां गया तो छः वर्ष तक उस की बाट देखे कालान्तर में
यदि सुन पड़े कि अमुक ग्राम वा नगर में है तो पति के समीप को चली
जावे। यदि वह पति संन्यासी हो गया हो तो फिर उस के पास न जावे।
योनि सम्बन्धी वा विद्या सम्बन्धी बड़े भाई ब्राह्मण के कहीं अज्ञात नि
कल जाने पर छोटा भाई कन्या के स्वीकार, अग्नि स्थापन और विवाह करने
के लिये बारह वर्ष तक वा किन्हीं आचार्यों के मत से छः वर्ष तक बाट देखे
यदि ऋतुमती होने से पहिले पिता वा पितृस्थानी चाचा भ्रातादि कन्या का
विवाह न करदें तो तीन वार ऋतुमती होने पश्चात् पिता के दिये आभूषणों का
त्याग करके स्वयं किसी अनिन्दित सत्पात्र वर के साथ विधिपूर्वक
विवाह कर लेवे। ऋतुमती होने से पहिले विवाह न करे तो पितादि को
पाप दोष लगता है। और कोई आचार्य कहते हैं कि वस्त्र में दाग लगने से
पहिले ही विवाह न करने पर पाप लगता है। कन्या का विवाह करने

नं विवाहसिध्यर्थं धर्म्मतन्त्रप्रसंगे च शूद्रादन्यत्रापि शूद्र बहुपशोर्हीनकर्म्मणः शतगोरनाहिताग्नेः सहस्रगोर्वा सोमपात् सप्तमीं चाभुक्त्वाऽनिचयायाप्यहीनकर्मभ्य आचक्षीत राज्ञा पृष्टस्तेन हि भर्तव्यः श्रुतशीलसंपन्नश्चेद्धर्म्मतन्त्रपीडायां तस्याकरणेऽदोषोऽदोषः ॥१॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

द्वितीयः प्रपाठकश्च पूर्णः ॥

उक्तो वर्णधर्म्मश्चाश्रमधर्म्मश्चाथ खल्वयं पुरुषो येनकर्मणा लिप्यते यथैतदयाज्ययाजनमभक्ष्यभक्षणमवद्यवदनं

लिये वा दान पुण्यादि धर्मकार्यों के निमित्त शूद्र से भी धन ले लेवे । तथा ... रूप कामों में भी बहुत पशुओंवाले शूद्र से वा सैकड़ों गौओं वाले धर्म कर्म हीन अनाहिताग्नि (जिसने विधिपूर्वक अग्नि स्थापन करके अग्निहोत्र नहीं किया ऐसे) द्विज से या सातपीढ़ी से जिसके घर में अग्निष्टोमादि सोमयाग होते आये हों ऐसे द्विज से धन लेलेवे । और स्वयं न खावे न जोड़कर पास रखे, किन्तु तत्काल किसी धर्म के काम में लगा देवे तो ऐसे काम के लिये भी कर्महीन नीच पुरुषों से भी धनादि लेलेवे । यदि विद्वान् गृहस्थ से राजा पूछे तो धर्मादि जिस काम के लिये जितना धनादि अपेक्षित हो सो ठीक२ कह देवे । राजा को उचित है कि गृहस्थ ब्राह्मण वेदवेत्ता तथा सीधा सच्चा स्वभाववाला हो तो उसका भरण पोषण अवश्य करे । यदि धर्मसम्बन्धी किसी काम के करने में शरीर को अत्यन्त कष्ट पहुंचना सम्भव हो तो उसके न करने में दोष नहीं लगेगा ॥१॥ इस१८ वें अध्याय में जो नियोग का विषय है सो यह नियोग राजा वेन का चलाया है । उसके बाद में ऋषियों तथा आचार्यों ने जो२ धर्मशास्त्र प्रकाशित वा प्रवृत्त किये उनसब में राजा के अनुरोध से नियोग लिखा गया है । इन सब बीसोंर० धर्मशास्त्रों में मानव धर्मशास्त्र मुख्य वा श्रेष्ठ है । जब उसमें इस वेन राजप्रचारित नियोग का खण्डन किया गया तो सभी धर्मशास्त्रों में वही खण्डन काफी है ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में अठारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥१८॥

वर्णों और आश्रमों का धर्म कहा गया । अब यह विचार किया जाता है कि यह ब्राह्मणादि मनुष्य जिस २ कर्म से लिप्त नाम पापी अपराधी होता है जैसे कि जिसको यज्ञादि का अधिकार नहीं उस शूद्रादि को यज्ञ कराना, अभक्ष्य का भक्षण, न कहने योग्य मिथ्या भाषणादि करना,

शिष्टस्याक्रिया प्रतिषिद्धसेवनमिति, तत्र प्रायश्चित्तं कु
कुर्य्यादिति, मीमांसन्ते न कुर्य्यादित्याहुर्नहि कर्म्म क्षीयत इ
कुर्य्यादित्यपरे पुनस्तोमेनेष्ट्वा पुनःसवनमायान्तीति वि
व्रात्यस्तोमेनेष्ट्वा तरति सर्वं पाप्मानं, तरति ब्रह्महत्यां यो
मेधेन यजतेऽग्निष्टुताभिशस्यमानं, याजयेदिति च ॥१॥ त
निष्क्रयणानि जपस्तपो होम उपवासो दानमुपनिषदो
दान्ताः सर्व्वच्छन्दःसु संहिता मधून्यघमर्षणमथर्वशिरो
पुरुषसूक्तं राजनरौहिणे सामनी बृहद्रथन्तरे पुरुषगतिम
नाम्न्यो महावैराजं महादिवाकीर्त्यं ज्येष्ठसाम्नामन्यतम

शास्त्र में कहे सन्ध्यादि कर्म न करना, और निषिद्ध हिंसादि को करना
दि के लिये प्रायश्चित्त करे वा न करे ऐसी मीमांसा नाम सन्देह करते
इसमें पूर्वपक्षी कहते हैं कि प्रायश्चित्त न करे क्योंकि किया हुआ कर्म
ल दिये विना क्षीण (नष्ट) नहीं होता। इसीपर यह जनश्रुति चली है
(अवश्यमेवभोक्तव्यं कृतंकर्मशुभाशुभम् ।) परन्तु उत्तर पक्ष
तथा आचार्य कहते हैं कि प्रायश्चित्त अवश्य करे। क्योंकि श्रुति में लिखा है
स्तोमयज्ञ करके फिर सोमयागादि का अधिकारी होजाता है। व्रात्यस्तोम
करके सब पापों से पार हो जाता है और जो अश्वमेध यज्ञ करता है
ब्रह्महत्या के महापातक से भी मुक्त होजाता है। और चोरी व्यभिचार
दि से दूषित निन्दित द्विज को अग्निष्टुत् यज्ञ करावे ॥ १ ॥ उन यज्ञों के करने
की सामर्थ्य सर्वसाधारण लोगों को नहीं हो सकती इसलिये यज्ञादि के
त्याम्नाय नाम प्रतिनिधि प्रायश्चित्तरूप शुभ कर्त्तव्य ये हैं कि-जप, तप, होम,
वास, दानकरना, इनका आगे क्रम से विशेष व्याख्यान करते हैं। उपनिषद्
दान्त ग्रन्थों का पाठ करना, गायत्र्यादि सब छन्दों में वेद संहिताओं
श्रद्धाभक्ति से अभ्यास, मधुमती (मधुवाता०) इत्यादि तीन ऋचा, अघमर्षण
अथर्वशीर्ष, रुद्राध्याय, पुरुष सूक्त, राजन और रौहिण दोनों साम, बृहद्रथन्तर
पुरुषगति, महानाम्नीऋचा, महावैराज, महादिवाकीर्त्य, ज्येष्ठ सामों
कोई एक साम, बहिष्पवमान सूक्त, कूष्माण्डसूक्त, पवमानसूक्त, इनमें से

हृष्पवमानं कूष्माण्डानि पावमान्यः सावित्रीचेति पाव-
नि ॥ २ ॥ पयोव्रतता शाकभक्षता फलभक्षता प्रसृतयाव-
। हिरण्यप्राशनं घृतप्राशनं सोमपानमिति च मेध्यानि ॥३॥
र्वे शिलोच्चयाः सर्वाः स्रवन्त्यः पुण्या ह्रदास्तीर्थानि ऋ-
निवासा गोष्ठपरिस्कन्दा इति देशाः ॥ ४ ॥ ब्रह्मचर्यं स-
विचनं सवनेपूदकोपस्पर्शनमार्द्रवस्त्रताऽधःशायिकाऽनाशक
ति तपांसि ॥५॥ हिरण्यं गौर्वासोऽश्वो भूमिस्तिला घृतमन्न
रति देयानि ॥ ६ ॥ संवत्सरः षण्मासाश्चत्वारस्त्रयो द्वा-
करचतुर्विंशत्यहो द्वादशाहः षडहस्त्र्यहोऽहोरात्रइति कालाः
तान्येवानादेशे विकल्पेन क्रियेरन् ॥७॥ एनस्सु गुरुषु गुरूणि

। वा कई का बहुत कालतक नियम से निरन्तर श्रद्धा के साथ अभ्यास कर
। पापों से मुक्त होजाता है (यह सब जप का व्याख्यान है) ॥ २ ॥ केवल
थ, वा शाक, फल, एक उलटे हाथ में जितना एकवार में भराजाय उतना कु
ख (खुरथी,) अन्न एक दिन में खाना, इन दूध आदि के व्रतों से, तथा सु
ण, गोघृत वा सोमपान रसायन कल्प के विधान से खाना ये सब मेधानाम
बुद्धि को शुद्ध करनेवाले और जप तप के सहायक हैं ॥३॥ सब पहाड़, सब सोत
रना वा नदियां, पवित्र कुण्ड वा तीर्थ (तालाव) ऋषियों के रहने की तपो
भूमि, किसी से सुरक्षित गोशाला ये सब स्थान जप तप के समय निवास के
योग्य उपयोगी हैं ॥ ४ ॥ जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी रहना, सत्यबोलना, सायं प्रात
काल और मध्यान्ह में तीनोंवार स्नान करना, गीले वस्त्र पहनना, भूमिपर
दिना सोना, कुछभी भोजन न करना ये सब तप कहाते हैं ॥ ५ ॥ सुवर्ण, गौ
स्त्र, घोड़ा, भूमि, तिल' घी'अन्न, इन पदार्थों का सुपात्र धर्मनिष्ठ विद्वान्
ब्राह्मण को देना मुख्यदान है । इससे भी पाप कटते हैं ॥६॥ जहां प्रायश्चित्त
का कोई समय नियत न किया हो वहां एक वर्ष छः मास, चारमास, तीनमास
दोमास, एकमास, चौबीशदिन, बारहदिन, छःदिन, तीनदिन, एकदिनरात
इन में से किसी एक नियत समय तक उक्त जप पाठादि प्रायश्चित्त करे ॥७॥
पापों के अधिक बड़े२ होनेपर अधिक दिनों तक और छोटे२ वा कम पापोंमें

लघुषु लघूनि कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चान्द्रायणमिति सर्वप्रायश्चित्तम् ॥ ८ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे एकोनविंशोऽध्यायः ॥

अथ चतुःषष्टिषु यातनास्थानेषु दुःखान्यनुभूय लक्षणानि, भवन्ति ब्रह्महार्द्रकुष्ठो, सुरापः श्यावदन्तो, ल्पगः पङ्गुः, स्वर्णहारी कुनखी, श्वित्री वस्त्रापहारी, तेजोपहारी, मण्डली स्नेहापहारी क्षयी तथा, अजीर्ण न्नापहारी, ज्ञानापहारी मूकः, प्रतिहन्ता गुरोरपस्मारी, घ्नो जात्यन्धः, पिशुनः पूतिनासः, पूतिवक्त्रस्तु सूचकः शू ध्यापकःश्वपाकस्त्रपुसीसचामरविक्रयी,मद्यप एकशफविक्र मृगव्याधः कुण्डाशी,भृतकश्चैलिको वा नक्षत्री चार्बुदी ना स्तिको रङ्गोपजीव्यभक्ष्यभक्षी गण्डरी

थोड़े दिनों तक प्रायश्चित्त करे। कृच्छ्र अतिकृच्छ्र और चान्द्रायण ये पापों के प्रायश्चित्त हैं ॥ ८ ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में उन्नीशवां अध्याय पूरा

अब नरक दुःख भोग के चौसठ स्थानों में प्राणी दुःखों फिर मनुष्य योनि में जन्म लेता है उसके ये निम्न चिन्ह होते हैं। ब्रह्महत्या क नेवाला–गलित कुष्ठी होता, मद्यपानी के श्याम (काले) दांत होते, गु गामी पङ्गु (लंगड़ा) होता, सुवर्ण का चोर–बिगड़े नखोंवाला होता, वस्त्र नेवाला–श्वेत कुष्ठी, दीपकादि प्रकाश का चुरानेवाला दादरोगी, लादि चिकनाई चुरानेवाला–मण्डल (चखन्देयुक्त) कुष्ठी तथा क्षयी (दिक्क) रोगवाला होता है। अन्न चुराने वाला अजीर्णरोगी, ज्ञान (वि का चोर–गूंगा, बदले में गुरु को पीटनेवाला मृगीरोगयुक्त, गोहत्यारा–ज घुगल पीनसरोगी वा दुर्गन्ध युक्त नासिकावाला, निन्दक–मुखमें दुर्गन्धि शूद्र को वेद पढ़ानेवाला–चाण्डाल, रांगा शीशा और चंवर बेचनेवाला–म पानी, एक (जुड़े) खुरवाले पशुओं को बेचने वाला–बहेलिया, कूं में वाला–वैतनिक नौकर (दास) या धोबी, शास्त्र को जाने बिना न की खगोल विद्या का अभिमानी–अर्बुद (मांसपिण्डका) रोगी, ना

ण्डितः पण्डो महापथिको गण्डिकश्चाण्डाली
थकीर्णो मद्यस्नेही धर्मपत्नीषु स्यान्मैथुनप्र-
ल्वाटसगोत्रसमयस्त्र्यभिगामी श्लीपदी पितृमा-
स्त्र्यभिगाम्यावीजिनस्तेषां कुब्जकुण्ठमण्डव्याधि-
रिद्राल्पायुषोऽल्पबुद्धयश्चण्डपण्डशैलूपतस्करपरपुरु-
कर्म्मकराः खल्वाटवक्राङ्गसंकीर्णाः क्रूरकर्म्माणःक्रम-
त्याश्चोपपद्यन्ते तस्मात्कर्त्तव्यमेवेह प्रायश्चित्तं विशुद्धै-
र्जायन्ते धर्म्मस्य धारणादिति धर्म्मस्यधारणादिति॥१॥
गौतमीये धर्मशास्त्रे विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥
त्यजेत्पितरं राजघातकं शूद्रयाजकं वेदविप्लावकं भ्रूणहनं

द्वारा जीविका करने वाला, अभक्ष्य भक्षण कर्त्ता-गण्डमाला का रोगी,
द्रोही तथा चोरों का उपदेशक-संकुचित तथा नपुंसक, निन्दित मार्ग में
ने वाला-गण्डरोगी। चाण्डाली, पुक्कसी और गौ के साथ मैथुन करनेवाला
प्रमेह युक्त होता, धर्मपत्नी स्त्रियों में मैथुन की प्रवृत्ति करने वाला-ख-
ाट (गंजा), अपने गोत्र की स्त्री से संग करने वाला-श्लीपदी (हाथी
व का) रोगी, पिता की बहिन (फूफी) माता की बहिन (मौसी) से
करने वाला अल्पस्पर्धीर्य युक्त होता है। प्रयोजन यह कि उक्त दुष्कर्मों के
-लिए फल जन्मान्तरों में प्राणियों को होते हैं। और ऐसे पापी लोग
र जन्मान्तरों में कुब्ज (कुबड़े) आलसी, मण्डल-कोढी, नित्यरोगी,
नौकर, वा दास खल्वाट (गंजे) वक्राङ्ग (टेढ़े अंगों वाले) सकुचे
ठोर निर्दयी-हिंसाकर्मीवाले क्रम से होते हैं। और चमार चाण्डा-
नीचों में जन्म लेते हैं। इसलिये प्रायश्चित्त अवश्य ही करने चाहिये
से जन्मान्तरों में धर्म के धारण करने से शुद्ध चिन्हों से युक्त उत्तम पु-
मार्गों में जन्म होता है ॥ १ ॥
गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में वीशवां अध्याय पूरा हुआ ॥ २० ॥
पुत्र को चाहिये कि राजा का वध करने, शूद्र को यज्ञ कराने, वेद को
ाने, व्यभिचार करके गर्भ पात करने, भील आदि नीचों के साथ सहवास
... से संयोग करने वाले पिता को त्याग देवे। उन

यश्चान्त्यावसायिभिः सह संवसेदन्त्यावसायिन्या वा तस्य
विद्यागुरून्योनिसंबन्धांश्च सन्निपात्य सर्वाण्युदकादीनि प्रेत
कर्म्माणि कुर्य्युः पात्रं चास्य विपर्यस्येयुः ॥ १ ॥ दासः कर्म
करो वाऽवकरादमेध्यपात्रमानीय दासीघटात् पूरयित्वा द
क्षिणाभिमुखः पदा विपर्यस्येदमुमनुदकं करोमीति नामग्राह
तं सर्वेऽन्वालभेरन् प्राचीनावीतिनो मुक्तशिखा विद्यागुरवो
योनिसंबन्धाश्च वीक्षेरन्नप उपस्पृश्य ग्रामं प्रविशन्ति ॥२॥
अतऊर्ध्वं तेन संभाष्य तिष्ठेदेकरात्रं जपन्सावित्रीमज्ञानपूर्वं
ज्ञानपूर्वं चेत्त्रिरात्रम्॥३॥यस्तु प्रायश्चित्तेन शुध्येत्तस्मिन् शुद्धे
शातकुम्भमयं पात्रं पुण्यतमाद्ध्रदात् पूरयित्वा स्रवन्तीभ्यो
वा ततएनमुपस्पर्शयेयुः ॥४॥ अथास्मै तत्पात्रं दद्युस्ततं

पिता के विद्या गुरुओं और कुटुम्बियों को एकत्र करके जलदानादि प्रेतकर्म
उस के लिये (उस के जीवित रहते ही तिलाञ्जलि दे देवें) करें तथा निम्न
रीति से जलपात्र को फेंके ॥ १ ॥ कहार वा किसी शूद्र नौकर द्वारा घूरे पर
से मट्टी का अशुद्ध पात्र मगाकर कहारिन के घड़े से उस में जल भर के अप
सव्य हो दक्षिण को मुखकर (अमुम्–अनुदकं करोमि) इस मन्त्र के अमुं शब्द के
स्थान में पिता का द्वितीयान्त नाम बोलता हुआ, उस जल भरे घड़े को
से मारके फेंक देवे, साथ ही विद्यागुरु और कुटुम्बी लोग चोटी की गांठ
कर अपसव्य हुए उस घड़े को फेंकते हुए पुत्र का पीछे देखते हुए
स्पर्श करें। पश्चात् जल का स्पर्श करके गांव को सब चले आवें ॥ २ ॥
कृत्य के पश्चात् विना जाने जो कोई उस पतितके साथ संभाषण करे तो गा
यत्री का जप करता हुआ एक रातभर खड़ा रहे। यदि जान कर उस के
संभाषण करे तो तीन दिन गायत्री का जप करता हुआ प्रायश्चित्त करे ॥३॥
राजा की हत्यादि करने वाला वह पतित प्रायश्चित्त करके शुद्ध हो जावे
उस के शुद्ध हो जाने पर सुवर्ण के पात्र को किसी पवित्र कुण्ड वा बहती
नदियों से भर के विद्यागुरु और कुटुम्बी लोग उस प्रायश्चित्ती का अभिषेक
॥४॥ इस के बाद वह सुवर्ण का पात्र उस प्रायश्चित्ती को देदेवें। वह

तिगृह्य जपेत् ओं–शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तं शिवम-
न्तरिक्षम्। यो रोचनस्तमिह गृण्हामीत्येतैर्यजुर्भिस्तरत्समन्दी-
भिः पावमानीभिः कूष्माण्डैश्चाज्यं जुहुयाद्धिरण्यं ब्राह्मणाय
दद्याद् गामाचार्याय ॥५॥ यस्य च प्राणान्तिकं प्रायश्चित्तं
मृतः शुध्येत्तस्य सर्वाण्युदकादीनि प्रेतकर्माणि कुर्युरेतदे-
व शान्त्युदकं सर्वेपूपपातकेषु सर्वेपूपपातकेषु ॥ ६ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे एकविंशोध्यायः ॥ २१ ॥

ब्रह्महसुरापगुरुतल्पगमातृपितृयोनिसंबन्धगस्तेनना-
स्तिकनिन्दितकर्माभ्यासिपतितात्याग्यपतितत्यागिनः पति-
ताः पातकसंयोजकाश्च तैश्चाब्दं समाचरन् ॥१॥ द्विजातिकर्म-
भ्यो हानिः पतनं परत्र चासिद्धिस्तामेके नरकं त्रीणि प्रथमा-

जलके पात्र को हाथ में लेकर (ओं शान्ताद्यौः०) इत्यादि मन्त्रका जप करे। तदनन्तर (तरत्समन्दी०) सूक्त, पावमानी ऋचाओं, तथा कूष्माण्डमूक्तों से घृत का होम करे। अथवा सुपात्र ब्राह्मण को सुवर्ण का दान और गुरु को गौ दान देवे ॥ ५ ॥ जिस अपराधी का प्रायश्चित्त ऐसा हो कि जिस में उस का प्राणान्त हो जाय तो वह मर कर शुद्ध होता है। उस के तिलाञ्जलि आदि सब मृतक कर्म पुत्रादि कुटुम्बियों को शास्त्रानुकूल करने चाहिये यही सब उपपातकों में शान्ति का जल उस के लिये है ॥ ६ ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में इक्कीसवां अध्याय पूरा हुआ ॥२१॥

ब्रह्महत्यारा, मद्यपीने वाला, गुरु पत्नी से व्यभिचार कर्त्ता, माता और पिता के कुल की स्त्रियों से गमन करने वाला, सुवर्ण का चोर, नास्तिक (वेदनिन्दक) निन्दित (छलकपटादि) कर्मों को जो वार २ करे, जो पतित को न त्यागे, जो पतित नहीं हुआ उसे त्याग देवे, जो निर्दोष को पातक लगावे, और जो एक वर्ष तक पतितों का संग करे ये सब पतित कहाते हैं ॥ १ ॥ ब्राह्मणादि द्विज अपने २ कर्मों से हीन हो जायं अपने कर्मों के अधिकारी न रहें यही पतित होना कहाता है। इन को जन्मान्तर में सिद्धि नहीं होती। इसी असिद्धि को कोई आचार्य नरक होना कहते हैं। ब्रह्महत्या, सुरा (मद्य) पान, सुवर्ण की चोरी इन तीन महापातकों का प्रायश्चित्त नहीं है यह मनु-जी की राय है। कोई आचार्य कहते हैं कि गुरुपत्नी का छोड़ के अन्य

ट्टैश्यानीति मनुर्न स्त्रीषु गुरुतल्पगः पतततीत्येके भ्रूणहनि
हीनवर्णसेवायां च स्त्री पतति कौटसाक्ष्यं राजगामि पैशुन
अनृताभिशंसनं महापातकसमानि,अपाङ्क्त्यानां प्राग्दु
गोहन्तृब्रह्मोज्झतन्मन्त्रकृदवकीर्णिपतितसावित्रीकेषू
अनर्हयाजनाध्यापनादृत्विगाचार्यौ पतनीयसेवायां च हेया
यत्र हानात्पतति तस्य च प्रतिग्रहीतेत्येके न कर्हिचिन्मा
पित्रोरवृत्तिर्दायं तु न भजेरन् ब्राह्मणाभिशंसने दोषस्ता
न् द्विरनेनसि दुर्बलहिंसायामपि मोचने शक्तश्चेत् ॥ ३ ॥

...यों से व्यभिचार करने पर मनुष्य पतित नहीं होता (अर्थात् गुरुपत्नी ...न की अपेक्षा कम-थोड़ा पाप लगता है परन्तु गुरुपत्नी गामी महापा... होने से अवश्य पतित हो जाता है) परन्तु व्यभिचार के पश्चात् भ्रू... ...त्या करे तो अवश्य ही पतित होता है ॥२॥ भ्रूण (गर्भ) हत्या करने और ...अपने से नीच वर्ण के पुरुष की सेवा (उस के साथ रहने संयोग) करने ...त्री भी पतित होजाती है। जान कर झूठी गवाही,राजा से किसी का दे... ...झूठा-अपराध कहना जिस से राजा उसे मरवाडाले, जानकर गुरु के साथ ...थ्या-भाषण करना ये कर्म महापातकों के समान हैं। दुर्बल को छोड़ के ब्र... पांति से बाहर किये हुओं में-गोहत्यारा,वेद का त्यागी,इन का मेली सब... ब्रह्मचर्य नियम में रहते समय व्यभिचार कर्त्ता, और संस्कार हीन ये सब मुख्य उपपातकी हैं। अनधिकारियों को यज्ञ कराने, पढ़ाने, पतित होने योग्य किसी श्रीमान् की सेवा में रहने से ऋत्विज् और (गुरु) त्यागने योग्य होते हैं। जो इन दोनों को न त्यागे वह भी ...हो जाता है। पतित का दान लेने वाला भी पतित होता है यह आचार्यों का मत है। पुत्र ऐसा कभी न करे कि पतित हुए माता ... भोजन वस्त्र न दे किन्तु भोजन वस्त्र से उन की रक्षा तबभी करे प... ...तित माता पिता का धनादि पुत्र न लेवे। ब्राह्मण की निन्दा करने में ... जाति से पतित होने का दोष लगता है, यदि ब्राह्मण निर्दोष होतो उस ... निन्दा में द्विगुण दोष लगता है। यदि क्षमा करने में समर्थ हो या ... मौका (अवसर) हो तो निर्बल दीन असमर्थ की हिंसा करने में भी दूना पाप लगता है। ॥ ३ ॥

मयिकुत्स्याक्रोशेद्गौरवं ब्राह्मणस्य वर्षशतमस्वर्ग्यं निघांते सहस्रं
पतितदर्शने यावतः स्कन्दनं स्कन्दयेत् पांसून् संगृह्णीयात्संगृह्णीयात्४

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

प्रायश्चित्तमग्नौ सक्तिर्ब्रह्मघ्नस्त्रिरवच्छादि तस्य लक्ष्यं
स्याज्जन्ये शस्त्रभृताम् ॥१॥ खट्वाङ्गकपालपाणिर्वा
द्वादशसंवत्सरान् ब्रह्मचारी भैक्षाय ग्रामं प्रविशेत् स्वकर्मा-
चक्षाण: पथोऽपक्रामेत्संदर्शनादार्यस्य स्थानासनाभ्यां विहरन्
सवनेषूदकोपस्पर्शी शुध्येत्, प्राणलाभे वा तन्निमित्ते ब्राह्मणस्य
द्रव्यापचये वा त्र्यवरं प्रतिरोद्धाऽश्वमेधावभृथे वान्ययज्ञे-

र करके ब्राह्मण पर गुर्राये तो १०० वर्ष, ब्राह्मण को पीटे तो १००० वर्ष
र यदि ऐसा मारे जिस में खून गिरने लगे तो मट्टी के जितने परमाणु
ख़ून के रुधिर से भीगें उतने ही वर्षों तक उस पापी को नरक भोगना
ना है ॥ ४ ॥

गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में बाईसवां अध्याय पूरा हुआ ॥
अब ब्रह्महत्या के प्रायश्चित्त कहते हैं। १-अपनी इच्छा से आंखें बन्द
नीचे को शिर कर २ के अत्यन्त प्रज्वलित अग्नि में तीनवार गिर २ कर
जावे। २-विद्वान् ब्राह्मण के हाथ में धनुषबाण वा बन्दूक देकर सहर्ष
के हाथ से अनेक मनुष्यों के सामने गोली खाकर मर जावे ॥१॥ अथवा
क खटिया का पांव (अथवा) और मनुष्य की खोपड़ी हाथ में लेकर
ह वर्ष तक ब्रह्मचारी रहता हुआ वन में वा एकान्त जंगल में कुटी बन-
र निवास करे। भिक्षा मांगने के लिये एक बार नित्य अपने पाप को
ता हुआ गांव में जाया करे। भिक्षा के लिये जाते आते
द्विज मिले तो मार्ग से हट जावे। अपने स्थान
भ्रमण करे कहीं अन्यत्र न
वार स्नान करे,
अथवा
केवी

ऽप्यग्निष्टुदन्तश्चोत्सृष्टश्चेद्ब्राह्मणवधे ॥२॥ हत्वाप्यात्रेयीं चैवं गर्भे चाविज्ञाते ॥३॥ ब्राह्मणस्य राजन्यवधे षड्वार्षिकं प्राकृतं ब्रह्मचर्यं ऋषभैकसहस्राश्च गा दद्यात् ॥४॥ वैश्ये त्रैवार्षिकं ऋषभैकशताश्च गा दद्यात् ॥५॥ शूद्रे संवत्सरं ऋषभैकादशाश्च गा दद्यादनात्रेय्यां चैवं गां च ॥६॥ शूद्रवन्मण्डूकनकुलकाकाबिडश्वहरमूषिकाश्च ॥७॥ हिंसासु चास्थिमतां सहस्रं हत्वाऽनस्थिमतामनडुद्भारं च ॥८॥ अपिवाऽस्थिमतामेकैकस्मिन् किंचित् किंचिद्दद्यात् ॥९॥ पण्डे च पलालभारः सीसमा

के सामने अपना दोष प्रकट करके सब के साथ स्नान करे तो पाप दूर जाता है। १-यदि मार डालने की मनसा से न मारा हो और ब्राह्मण मारा गया हो तो किसी यज्ञ में भीतरी अङ्ग से अग्नि की स्तुति या नामक यज्ञ करने से शुद्ध हो जाता है ॥ २ ॥ ब्रह्महत्या करने वाला सात प्रकार के प्रायश्चित्तों में से देश, काल, शक्ति और अपराध की योग्यतानुसार कोई एक प्रायश्चित्त करे। ब्राह्मण पुरुष से ब्राह्मणी में स्थापित गर्भ को घात (जिस में स्त्री या पुरुष के चिन्ह न प्रकट हुए हों ऐसे) गर्भ को और रजस्वला ब्राह्मणी के मार डालने पर भी यही उक्त प्रायश्चित्त है ॥३॥ यदि ब्राह्मण किसी क्षत्रिय का वध करे तो ब्रह्मचारी रहता हुआ छः वर्ष व्रत करे अथवा उक्त प्रायश्चित्तों में से आधा प्रायश्चित्त करे। तथा एक बैल और हजार १००० गौओं का दान करे ॥ ४ ॥ यदि ब्राह्मण किसी वैश्य को मार डाले तो ब्रह्मचर्य के सहित तीन वर्ष प्रायश्चित्त करके एक बैल और सौ गौ दक्षिणा में देवे ॥ ५ ॥ यदि ब्राह्मण किसी शूद्र का वध करे तो एक वर्ष प्रायश्चित्त और एक बैल दश गौ दक्षिणा में देवे। रजस्वला के ब्राह्मणी के वध में भी यही व्रत करे तथा एक गौ एक बैल दक्षिणा में देवे ॥ ६ ॥ मेंढक, न्योला, कौवा, भेड़, घोड़े को देकर भाग वाला, और मूषिक इन को मारने पर शूद्र की हत्या में कहे प्रायश्चित्त ॥ ७ ॥ गिरगिटादि हड्डी वाले छोटे २ एक हजार १००० जीवों को करने और बिना हड्डी वाले दंश मशकादि एक गाड़ी भर मारे तो शूद्र का व्रत करे ॥ ८ ॥ अथवा हड्डी वाले एक २ जीव की हत्या में कुछ दान करे ॥ ९ ॥ नपुंसक जीव की हत्या में एक बोझा पयाल

कस्य वराहे घृतघटः सर्प्पे लोहदण्डः ब्रह्मबन्ध्वां च लल-
त्यां जीवो वैजिके न किंचित् तल्पान्नधनलाभवधेषु पृथग्व-
र्णि द्वे परदारे त्रीणि श्रोत्रियस्य द्रव्यलाभे चोत्सर्गो यथा-
स्थानं वा गमयेत् प्रतिषिद्धमनः संयोगे सहस्रवाक्चेदग्न्युत्सा-
दिनिराकृत्युपपातकेषु चैवं स्त्री चातिचारिणी गुप्ता पिण्डंतु ल-
ताप्यमानुषीषु गोवर्ज्जं स्त्रीकृते कूष्माण्डैर्घृतहोमो घृतहोमः१०

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

सुरापस्य ब्राह्मणस्योष्णामासिञ्चेयुः सुरामास्ये मृतः

सा, सुअर के मारने में एक घड़ा घी, सांप के मारने में लोहे का डंडा,
निन्दित कुलटा ब्राह्मणी के मारने पर भी लोह दण्ड का दान देवे। वीज
सम्बन्धी जीव के भुंजा ने आदि द्वारा नाश होने पर कुछ प्रायश्चित्त नहीं है।
य्या, अन्न, धन के लेने देने में अज्ञान से किसी मनुष्य का मृत्यु होतो भि-
२ यथोचित वर्षों प्रायश्चित्त होगा। परस्त्री की हत्या में दो वर्ष, वेदपाठी
ो स्त्री की हत्या में तीन वर्ष प्रायश्चित्त करे। कहीं पड़ा हुआ धन मिले तो
में खाते में उस का दान कर देवे अथवा ज्ञात होजाय कि अमुक का है तो
सीके पर पहुंचा देवे। शास्त्रविरुद्ध निषिद्ध कामों में जो मनको लगावे और
ने पर सहस्रों विरुद्ध बातें कहे, जिस ने स्थापित अग्नि का और वेदाध्य-
न का त्याग किया हो। इत्यादि उपपातकों में और व्यभिचारिणी स्त्री ये
चित प्रायश्चित्त न करें तो घर से निकाल दिये जावें, खाने को भोजन भी इन
ो न मिले। पर जो स्त्री पीछे भी अपनी यथावत् रक्षा कर ले तो उस को
व भोजन मात्र मिला करे। मनुष्य स्त्री से भिन्न गौ को छोड़ के जो पुरुष
न्य पश्वादि से मैथुन करे वह कूष्माण्ड सूक्तों द्वारा अग्नि में घृत का होम
ायश्चित्त करे ॥ १० ॥

ह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में तेईसवां अध्याय पूरा हुआ ॥२३॥

अब मद्य पीने का प्रायश्चित्त कहते हैं। मदिरा को अत्यन्त गर्म अग्निवर्ण
र के जानकर मद्यपीनेवाले ब्राह्मण के मुख में उसकी राय से प्रायश्चित्त देने-
ाले लोग डाउँ उससे मरकर वह शुद्ध होता है। यदि पीलिया

शुद्ध्येदमत्या प्राने पयो घृतमुदकं वायुं प्रति त्र्यहं तप्तानि
स कृच्छ्रस्ततोऽस्य संस्कारः ॥ १ ॥ मूत्रपुरीषरेतसां च प्रा
शने श्वापदोष्ट्रखराणां चाङ्गस्य ग्राम्यकुक्कुटशूकरयोश्च ग
न्धाघ्राणे सुरापस्य प्राणायामो घृतप्राशनं च पूर्वैश्च दष्टस्य
॥ २॥ तल्पे लोहशयने गुरुतल्पगः शयीत सूर्मीं ज्वलन्तीं वा
श्लिष्येल्लिङ्गं वा सवृषणमुत्कृत्याञ्जलावाधाय दक्षिणाप्रतीचीं
दिशं व्रजेदजिह्ममाशरीरनिपातान्मृतः शुध्येत् ॥ ३॥ सखि
सयोनिसगोत्राशिष्यभार्यासु स्नुषायां गवि च गुरुतल्पस
मोऽवकरइत्येके, श्वभिःखादयेद्राजा निहीनवर्णगमने स्त्रियं

हो तो दूध, घी, जल, और वायु इन को तीन २ दिन गर्म कर २ पीवें इसतप्त
दिन के व्रत का नाम तप्त कृच्छ्र है। इस के बाद उस का फिर उपनयन सं
स्कार कराया जावे ॥ १ ॥ अज्ञान से, विष्ठा, मूत्र, और वीर्य के खालेने पर भी
वहीं तप्त कृच्छ्र और पुनःसंस्कार होना चाहिये। तथा श्वापद, ऊंट, गधा
गांव का मुरगा और गांव के सुवर का मांस खाने पर भी वहीं पूर्वोक्त प्रा
यश्चित्त जानो। यज्ञ करने वाले ब्राह्मण को यदि मद्य पीने वाले का गन्ध
लगजाय तो तीन बार प्राणायाम करके गोघृत खावे तब शुद्ध होता है। तथा
जिस को श्वापदादि काटे वह भी यही प्रायश्चित्त करे ॥ २ ॥ जिस ने गुरु
पत्नी से गमन किया हो वह लोहे की खटिया को अत्यन्त गर्म करके उसपर
सेटजावे। अथवा लोहेकी स्त्री बनवा के अग्निमें अत्यन्त तपाके उसको दोनों
से लिपट जावे। अथवा अण्डकोशों सहित उपस्थेन्द्रिय को काट के दोनों
हाथ की अंजली में धरके दक्षिण पश्चिम के बीचकी नैर्ऋत दिशाको जबतक
शरीर न गिर जाय सीधा चला जावे लौट कर पीछे भी न देखे इस प्रकार
मर जाने पर शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ मित्र की पत्नी, सगी बहन, अपने गोत्र की
स्त्री, और शिष्य की स्त्री, पुत्र वधू, और गौ इन से संयोग करना गुरुपत्नी
के संयोग के तुल्य महापातक है। कोई आचार्य यह कहते हैं कि उक्त स्त्रियों
से गमन करने वाले को कूड़ा करकट के समान त्याग देना योग्य है फिर
भी जाति पांति में न लेवें। यदि उच्च कुलकी स्त्री अपने पतिका तिरस्कार

मकाशे पुमांसं घातयेद्वयथोक्तं वा गर्द्दभेनावकर्णी निर्ऋतिं
चतुष्पथे यजेत तस्याजिनमूर्ध्ववालं परिधाय लोहितपात्रः
सप्त गृहान् भैक्षं चरेत् कर्माचक्षाणः संवत्सरेण शुध्येत् ॥४॥
रेतस्कन्दने भये रोगे स्वप्नेऽग्नीन्धनभैक्षचरणानि सप्तरात्रं
कृत्वाऽऽज्यहोमः साभिसन्धेर्वा रेतस्याभ्यां सूर्याभ्युदिते ब्र
ह्मचारी तिष्ठेदहरभुञ्जानोऽभ्यस्तमिते च रात्रिं जपन् सावि
त्रीमशुचिं दृष्ट्वाऽऽदित्यमीक्षेत प्राणायामं कृत्वाऽमेध्यप्राशने
वाऽभोज्यभोजने निष्पुरीषीभावस्त्रिरात्रावरमभोजनं सप्तरात्रं
वा स्वयं शीर्णान्युपयुञ्जानः फलान्यनतिक्रामन् प्राक्पञ्चनखे-

करके किसी नीच वर्णसे संयोग करे तो राजा जन से जन समुदाय में उस पापिनी
को शिकारी कुत्तोंसे चिथवा डाले। और उस नीच पापी कोभी जन समुदाय में
इत्यादि वा तपाई हुई लोहेकी खटिया पर लिटाके जलवादेवे। जो ब्राह्मणादि
इस किसी व्रत में ब्रह्मचारी रहने का पूर्ण संकल्प करके बीच में स्त्री नयो-
करे वह अवकीर्णी कहाता है। वह अवकीर्णी पुरुष काने गर्दभ से बीरा
निर्ऋति देवता का रात में यज्ञ करे। ऊपर को बाल करके उस
को ओढ़कर लालपात्र हाथ में लिये अपने पाप को कहता हुआ एक
तक सात घर से भिक्षा मांग के खावे तब शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ वीर्यपात
पर, भय, रोग और दुःस्वप्न के समय ब्रह्मचारी के नियम और निन्ध
करके सात दिन तक भिक्षा मांगकर भोजन और समिदाधान होम
से करता हुआ सामान्यार्थ वाले मन्त्र से वा (यजु० अ० १९ । ७६) के
सूत्रं०) इत्यादि दो मन्त्रों से घी का होम करे। भोजन कुछ न करके
में खड़ा रहे और सूर्यास्त होने पर रात्रि में सावित्री गायत्री का जप
हुआ खड़ा रहे। अशुद्ध वस्तु के दीखने पर प्राणायाम करके सूर्य ना-
का दर्शन करे। अपवित्र या अभक्ष्य वस्तु के खाने पर कम से कम
दिन भोजन न करे और विरेचक वस्तु खाकर मल को निकाल देवे
नियम का उल्लङ्घन न करता हुआ सात दिन तक वृक्ष से स्वयं गिरे
फलों को खाकर प्रायश्चित्त करे। पांच नखों वाले श्वाविधादि ना-
छोड़ के अन्य जीवों का मांस खावे तो उस का वमन करके नाड़ी
करे। गाली देने, झूठ बोलने और किसी को मारने चाहने पर

भ्यश्छर्दिनो घृतप्राशनं आक्रोशानृतहिंसासु त्रिरात्रं परम
न्तपःसत्यवाक्ये वारुणीपावमानीभिर्होमो विवाहमैथुननिर्म
त्संयोगेष्वदोषमेकेऽनृतं न तु खलु गुर्वर्थेषु यतः सप्त पुरुषा
नितश्च परतश्च हन्ति मनसापि गुरोरनृतं वदन्नल्पे
ष्वप्यन्त्यावसायिनीगमने कृच्छ्राब्दोऽमत्या द्वादशरात्र
दक्यागमने त्रिरात्रं त्रिरात्रम् ॥ ५ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥२४॥

रहस्यं प्रायश्चित्तमविख्यातदोषस्य चतुर्ऋचं तरत्सम
न्दीत्यप्सु जपेदप्रतिग्राह्यं प्रतिजिघृक्षन् प्रतिगृह्य वाऽभोज्यं
बुभुक्षमाणः पृथिवीमावपेदृत्वन्तरारममाणउदकोपस्पर्शना
च्छुद्धिमेके स्त्रीषु पयोव्रतो वा दशरात्रं घृतेन द्विती

अपराधी मनुष्य सत्य बोलने में परम तप वा पुण्य मानता हुआ
तो वरुण देवता वाली और पावमानी ऋचाओं से तीन दिन
करे। विवाह और मैथुन की सिद्धि वा प्राप्ति के लिये मिथ्या भाषण
नहीं यह किन्हीं आचार्यों का मत है। परन्तु गुरु के किसी छोटे
वा काम में भी झूंठ न बोले क्योंकि आगे पीछे अपनी सात २ पीढ़ी
का यह मनुष्य नाश करता है कि जो गुरु से झूंठ बोलता है। किसी
अ नीच स्त्री से जान कर संग करे तो एक वर्ष तक कृच्छ्रव्रत करे और
जाने संग करे तो बारह दिन एक कृच्छ्रव्रत करे। तथा रजस्वला
मन करे तो तीन दिन प्रायश्चित्त करे ॥ ५ ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौबीसवां अध्याय पूरा हुआ।

जिस का दोष प्रसिद्ध न हुआ हो ऐसे गुप्त पापों का प्रायश्चित्त
ग्वेद अष्ट० ७ अ० १। व० १५ तरत्समन्दी०) इत्यादि चार ऋचाओं
में खड़े होकर जप करे। न लेने योग्य दानको लेना चाहता हुआ
तथा अभक्ष्य वस्तु को खाना चाहता हुआ बोई हुई पृथिवी का
यदि ऋतु काल से भिन्न समय स्त्री से रमण करे तो कोई आर
करने मात्र से शुद्धि मानते हैं। स्त्रियों में गर्भपात करने पर
दिन तक दूध का व्रत करे, फिर दूसरे दश दिन तक
बोर्थे दश दिन तक केवल जल पीके रहे। फिर

पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतरेण सर्वेणेति सोऽमावास्यायां
ग्निमुपसमाधाय प्रायश्चित्ताज्याहुतीर्जुहोति कामाव-
र्णोऽस्म्यवकीर्णोऽस्मि कामकामाय स्वाहा,कामाभिदुग्धो-
भिदुग्धोऽस्मि कामकामाय स्वाहेति समिधमाधायानु-
च्य यज्ञवास्तु कृत्वोपस्थाय संमासिञ्चन्त्वित्यनेतया त्रिरु-
ष्ठेत । त्रय इमे लोका एषां लोकानामभिजित्याअभि-
त्या इत्येतदेवैकेषां कर्म्माधिकृत्य पूतइव स्यात्सइत्थं
यादित्यसनुमन्त्रयेद् वरो दक्षिणेति॥१॥ प्रायश्चित्तमविशे-
नाऽर्जवपैशुनप्रतिषिद्धाचारानाद्यप्राशनेषु ॥ २॥ शूद्रायां
तेः सिक्त्वाऽयोनौ च दोषवति कर्म्यण्यभिसन्धिपूर्वं-
लिङ्गाभिरपउपस्पृशेद्वारुणीभिरन्यैर्वा पवित्रैः प्रतिषिद्ध-

शक्तिः इन्द्र देवतामें बल, बृहस्पति में ब्रह्म तेज और अन्य सब शक्ति
अग्नि देवता में खिंचकर चली जाती हैं। इसलिये वह अवकीर्णी पुरुष
वस्या को रात के समय अग्नि को स्थापित करके (कामाव०) इत्यादि
मन्त्रों से दो प्रायश्चित्ताहुति होम करके अग्नि में प्रजापति के स्था-
क समिधा चढ़ाके द्वितीयवार ईशान कोण से लेकर प्रदक्षिण पर्युक्षण कर
शाला की कल्पना करके गृहाभिमानी देवता का उपस्थान (गृहामा०)
दि मन्त्रों से करके (संमासिञ्चन्तु०) इस ऋचा से तीन बार स्तुति करे।
ही आचार्यों का मत है कि (त्रयइमेलोका०) इत्यादि श्रुति से उपस्थान
जो पुरुष मानस, वाचिक, कायिक रूप से अधिकांश शुद्ध हो वही इ
प्रकार से होम और अनुमन्त्रण वा उपस्थान करे और दक्षिणा में अति-
को सुवर्णादि धन देवे ॥ १ ॥ कठोरता, चुगली, निन्दा, शास्त्र में निषेध किये
को करने और अभक्ष्य के भक्षण में ॥२॥ तथा शूद्रा स्त्री के साथ संग करके
योनि से भिन्न स्थल में वीर्य पात करके तथा आसक्ति या आग्रह के सा-
किसी दोष युक्त काम में प्रवृत्त होकर आप् (जलवाचक) चिन्ह वाली
या वरुण देवतावाली ऋचाओं से अथवा अन्य पवित्र मन्त्रों से होम क-
श्चित्त करे । वाणी तथा मनके द्वारा निषिद्ध आचरण करनेपर पांच
व्याहृतियोंद्वारा जल का आचमन करे और (प्रदयमा०) कह

संह्माय धुन्वते तापसाय पुनर्वसवे नमोनमो मौञ्ज
र्याय वसुविन्दाय सर्वविन्दाय नमोनमः पाराय सुपा
महापाराय पारयिष्णवे नमोनमो रुद्राय पशुपतये म
देवाय त्र्यम्बकायैकचराधिपतये हराय शर्वायेशानायो
वज्रिणे घृणिने कपर्द्दिने नमोनमः सूर्यायादित्याय नमो
नीलग्रीवाय शितिकण्ठाय नमो नमः कृष्णाय पिङ्गलाय न
नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय वृद्धायेन्द्राय हरिकेशायोर्ध्वरेतसे न
नमः सत्याय पावकाय पावकवर्णाय नमो नमः कामाय
नरूपिणे नमोनमो दीप्ताय दीप्तरूपिणे नमोनमस्तीक्ष्ण
तीक्ष्णरूपिणे नमोनमः सौम्याय सुपुरुषाय महापुरुषाय
ध्यमपुरुषायोत्तमपुरुषाय नमोनमो ब्रह्मचारिणे नमोनम
द्रललाटाय नमोनमः कृत्तिवाससे पिनाकहस्ताय नमोन
ति ॥ २ ॥ एतदेवादित्योपस्थानमेताएवाज्याहुतयो द्वाद
त्रस्यान्ते चरुं श्रपयित्वैताभ्यो देवताभ्यो जुहुयात्-अग्न
वाहा, सोमाय स्वाहा, अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा, इन्द्राग्निभ्य
न्द्राय विश्वेभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मणे प्रजापतयेऽग्नये स्विष्टकृ
ति ॥ ३ ॥ ततो ब्राह्मणतर्पणम् ॥४॥ एतेनैवातिकृच्छ्रो व्या
ातो यावत्सकृदाददीत तावदश्नीयादब्भक्षस्तृतीयः स कृ

ाथ जल से शिव जी के लिये देवतर्पण करे ॥ २ ॥ इन्ही मन्त्रों से सूर्य
ान तथा इन्हीं से घी की आहुति देवे यहां तक का सब कृत्य प्रति
कृच्छ्र व्रत के बारहवें दिन समाप्ति में गृह्यसूत्रोक्त विधि से चरु द
(अग्नये स्वाहा) इत्यादि मन्त्रों से चरु की दश आहुति देवें ॥ ३
के पश्चात् ब्राह्मणों को भोजनादि से तृप्त करे ॥ ४ ॥ इसी क्रम से अ
व्रत का व्याख्यान जानो । उस में इतनी विशेषता है कि बीच के
में जो भोजन कहा है सो उतना ही एक दिन में खावे कि जित
ार में मुख में आसके अर्थात् एक ग्रास मात्र एक दिन में भोजन क
ागे पीछे तीन २ दिन सर्वथा उपवास करे । और जिस में बीच

…तिकृच्छ्रः ॥५॥ प्रथमं चरित्वा शुचिः पूतः कर्मण्यो भव-… द्वितीयं चरित्वा यत्किंचिदन्यन्महापातकेभ्यः पापं कुरुते …मान्मुच्यते, तृतीयं चरित्वा सर्वस्मादेनसो मुच्यते। अथैतां-…न् कृच्छ्रान् चरित्वा सर्वेषु वेदेषु स्नातो भवति सर्वदे-…तो भवति यश्चैवं वेद यश्चैवं वेद ॥ ६ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अथातश्चान्द्रायणं तस्योक्तो विधिः कृच्छ्रे वपनं व्रतं …त् श्वोभूतां पौर्णमासीमुपवसेन्—आप्यायस्व, संतेपयांसि, …नव, इति चैताभिस्तर्पणमाज्यहोमो हविषश्चानुमन्त्रण-…स्थानं चन्द्रमसो यद्देवा देवहेलनमिति चतसृभिराज्यं …ुयात्, देवकृतस्येति चान्ते समिद्भिः—ओंभूर्भुवः स्वस्तपः,-

---

…दिनों में भी केवल जल ही पीकर रहे वह कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत कहाता …ये तीन प्रकार के कृच्छ्र कहाते हैं ॥ ५ ॥ पहिले कृच्छ्रव्रत को करने से शुद्ध …त्र हुआ धर्म के यज्ञादि शुभ कर्म करने योग्य होता है। द्वितीय प्रति-…कृच्छ्रव्रत का अनुष्ठान करके जो कुछ महापातकों से भिन्न उपपातकादि किये …करता है उन सब से मुक्त हो जाता है। और तीसरे कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत …अनुष्ठान करके छोटे बड़े सभी पापोंसे मुक्त शुद्ध निर्दोष होजाता है। और …ई इन तीनों कृच्छ्रों का एक साथ क्रमशः अनुष्ठान करे तो सब वेदों में …ख्यात निपुण होता अर्थात् सब वेदों के पढ़ने के पुण्य फल का भागी होता, …। देवता उनको जानते और कृपादृष्टि करते हैं। और जो इन कृच्छ्रों की …ी महिमा को यथार्थ जानता है उस को भी यही फल प्राप्त होता है ॥६॥ …। गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सत्ताईशवां अध्याय पूरा हुआ ॥२७॥

अब चान्द्रायण व्रत का जैसा विधान धर्मशास्त्रकारों ने कहा माना है …कहते हैं। चतुर्दशी के दिन चान्द्रायण करने वाला केश श्मश्रु सब का …सन कराके केवल शिखामात्र रक्खे। और उसी दिन उपवास करे और (आ-…प्यायस्वमेतु०। सन्तेपयांसि० यजु० अ० १२। ११२। ११३। नवो नवो भवति० …० अ० ८ अ० ३ व० २३) इन तीन मन्त्रों से पौर्णमासी के दिन चन्द्रमा दे-…ता के लिये तर्पण, घी का होम, हविष्य का अनुमन्त्रण, (अर्थात् हविष्य

सत्यं,यशः, श्रीरूपं गोरोजस्तेजः पुरुषो धर्म्मः शिवशि
तैर्ग्रासानुमन्त्रणं प्रतिमन्त्रं मनसा नमः स्वाहेति वा
ग्रासप्रमाणमास्याविकारेण चरुभैक्षसक्तुकणयावकपयो
घृतमूलफलोदकानि हवींष्युत्तरोत्तरं प्रशस्तानि पौर्णम
पञ्चदश ग्रासान् भुक्त्वैकापचयेनापरपक्षमश्नीयादमाव
यामुपोष्यैकोपचयेन पूर्वपक्षं विपरीतमेकेषाम् ॥ १
चान्द्रायणो मासो मासमेकमाप्त्वा विपापो विपाप्मा र
नो हन्ति द्वितीयमाप्त्वा दशपूर्वान्दशावरानात्मानं वै

वस्तु को देखते हुए मन्त्र पढ़ना) और उपस्थान करे। तदनन्तर (यद्दे
यजु० अ० २०। १४—१७) इन चार मन्त्रोंसे घी का होम करके (देव
नसो० यजु० अ० ८। १३) के छः मन्त्रों द्वारा समिधाओं का होम
(ओं भूः०) इत्यादि प्रकार—भूः, भुवः, स्वः, तपः, सत्यम्, यशः, श्रीः,
गीः, ओजः, तेजः, पुरुषः, धर्मः, शिवः, शिवः, इन प्रत्येक के साथ ओं
कर एक २ को पढ़ २ क्रम से १५ ग्रासों को देखे। और प्रत्येक ग्रास को
समय (नमः स्वाहा) ऐसा मन से कहता जावे। जिस में मुखकी स्वा
दशा में विकार न हो (अधिक फैलाने न पड़े) वही एक ग्रास का
जानो। चरु, (भात) भिक्षा का अन्न, जौ का सत्तू, कण, कुलत्थ, मी
दही, घी, मूल, फल, जल, ये सब व्रत में खाने योग्य हविष्यान्न हैं।
अगला २ श्रेष्ठ है। पौर्णमासी को पन्द्रह ग्रास खाकर आगे कृष्णपक्ष
त्येक प्रतिपदादि तिथियों में एक २ ग्रास घटाता जावे। प्रतिपदा
द्वितीया को १३ इत्यादि प्रकार, चतुर्दशी को एक ग्रास खाकर अमा
को निराहार उपवास करे। फिर शुक्ल प्रतिपदा से एक २ ग्रास बढ़ाता
पौर्णमासी को फिर १५ ग्रास खावे (यही पिपीलिका मध्य चान्द्राय
कहाता है) किन्हीं ऋषियों का मत है कि कृष्णपक्ष में एक २ ग्रास ब
शुक्ल पक्ष में घटावे (यही यवमध्य चान्द्रायण व्रत है) ॥ १ ॥ यह च
यण एक मासका कहाता है। एक मास व्रत करके पापों से मुक्त होकर
मलिनता या अपराधों को नष्ट करता, द्वितीय चान्द्रायण व्रत करके
कुल की दश पिछली दश अगली और इक्कीसवें अपने को तथा त्रिव

तद्धक्रोशश्च पुनाति संवत्सरमाप्त्वा चन्द्रमसः सलोकतामा-
त्याप्नोति ॥ २ ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रेऽष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

ऊर्ध्वं पितुः पुत्रा ऋक्थं भजेरन् निवृत्ते रजसि मातुर्जीवति
चेच्छति सर्व्वं वा पूर्वजस्येतरान्बिभृयात् पितृवत् ॥ १ ॥
विभागे तु धर्मवृद्धिर्विंशतिभागो ज्येष्ठस्य मिथुनमुभयतो-
दयुक्तो रथो गोवृषः काणखोरकूटखञ्जा मध्यमस्यानेकश्चे-
दविर्धान्यायसी गृहमनोयुक्तं चतुष्पदांचैकैकं यवीयसः समं
चेतरत्सर्व्वं द्व्यंशी वा पूर्वजः स्यादेकैकमितरेषामेकैकं वा
धनरूपं काम्यं पूर्व्वः पूर्वो लभेत दशतः पशूनां नैकशफोने-
कशफानां वृषभोऽधिको ज्येष्ठस्य ऋषभषोडशा ज्यैष्ठिनेयस्य

बैठ उस को पवित्र कर देता है। और एक वर्ष तक चान्द्रायण व्रत कर
। मरणानन्तर चन्द्रलोक सम्बन्धी स्वर्ग प्राप्त होता है ॥ २ ॥
ह गौतमीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में अट्ठाईसवां अध्याय पूरा हुआ ॥२८॥
पिता का स्वर्गवास होने वा संन्यासादि द्वारा पृथक् होनेपर पुत्रगण
ता के धनादि का विभागकर लेवें। अथवा पिता के जीवित विद्यमान रह-
भी जब माता का रजोधर्म होना बन्द होजावे तब पिता की इच्छा वा आज्ञा
तो विभाग करलें। अथवा ज्येष्ठ भ्राता सब धन का मालिक रहै और अन्य
भाइयों का पिता के तुल्य भरण पोषण करे ॥ १ ॥ यदि सब भाई विभा-
। करें तो धर्मानुकूल ज्येष्ठ भाई को धनका बीसवां भाग, एक२ जोड़ा दोनों
करप और एक बैल इतना अधिक मिलना चाहिये। काणा, लंगड़ा, और
कर पुष्ट बैल मध्यम-(मंझिले) भाई को अधिक, यदि मंझिले भाई अ-
ी हों तो भेड़, धान्य (गेहूं आदि) लोहे के वस्तु, और घर इनमें और
धिक हों तन में से सब थोड़े के भाइयों का यथा क्रमश अधिक मिले और
कर बैल सहित गाड़ी छोटे को अधिक दी जावे। इससे भिन्न जो सामान
रा वह सब को बराबर मिले। अथवा दो भाग ज्येष्ठ भाई लेवे तथा अन्य
को एक२ भाग मिले। अथवा छोटे२ भाई की अपेक्षा एक२ धनरूप-सुन्दर
ष्ट वस्तु बड़े२ सब को अधिक मिले। अथवा दश पशु और ऐसों में एक
न ज्येष्ठ भाई को अधिक दिया जावे। सबसे बड़ी [illegible] के पहले हुए
को एक बैल तथा १५ अन्य पशु अधिक मिलें। अथवा सब को बराबर हो। [illegible]

समं वा ज्यैष्ठिनेयेन यवीयसां प्रतिमातृ वा स्ववर्गे भ
विशेषः ॥ २ ॥ पितोत्सृजेत् पुत्रिकामनपत्योऽग्निं प्रजा
चेष्ट्वाऽस्मदर्थमपत्यमिति संवाद्याभिसन्धिमात्रात्पुत्रिके
केषां तत्संशयान्नोपयच्छेदभ्रातृकाम् ॥ ३ ॥ पिण्डगोत्र
बन्धाऋक्थं भजेरन् स्त्री चानपत्यस्य बीजं वा लिप्सेद
वरवत्यन्यतो जातमभागम् ॥४॥ स्त्रीधनं दुहितॄणामप्रत्ता
मप्रतिष्ठितानां च भगिनी शुल्कं सोदर्याणामूर्ध्वं म
पूर्वं चैके ॥ ५ ॥ संसृष्टविभागः प्रेतानां ज्येष्ठस्य संसृ
प्रेतेऽसंसृष्टि ऋक्थभाक् विभक्तजः पित्र्यमेव ॥ ६ ॥ स्व

सके छोटे सहोदर भाइयों को मिले । अथवा प्रत्येक माता के
भाई को पिता यथोचित अधिक भाग देवे ॥ २ ॥ जिसके कोई पुत्र
किन्तु कन्या हो वह अग्नि और प्रजापति देवता के लिये आहुति देकर
ल्प करे कि इस कन्या को मैं पुत्र के स्थान में करता हूं जो पुत्र इस में
वही मेरा श्राद्धादि कर्म करेगा । कोई आचार्य कहते हैं कि (इकरार
न करने पर मनसे मान लेने मात्र से भी कन्या उसकी पुत्रिका हो
है कि जिसके कोई पुत्र न हो । इसी कारण पिता की पुत्रिका हो जा
शंका से उस कन्या से विवाह न करे जिसके कोई भाई न हो ॥ ३ ॥
पुत्र कन्या कोई भी न हो उसके धनादि को उसके सपिण्डवाले, वा
अथवा वेद विद्या सम्बन्धी गुरु शिष्यादि लेवें और उसकी स्त्री को भी
का धनादि मिलना चाहिये । अथवा स्त्री के कोई खास देवर हो तो
योग विधि से वीर्य दान ले लेवे। अन्य गैर मनुष्य से सन्तान पैदा करे तो
का भागी न होगा ॥ ४ ॥ जो माता का निज का स्त्रीधन हो उसको
का अधिकार बिना विवाही वा विवाहित दीन दुःखित लड़कियों
और सहोदर बहन के विवाह में कन्या के माता पिता ने जो धन लिया हो
माता के मरने पर उन्हीं लड़कियों का होगा । कोई आचार्य कहते हैं कि
ता की विद्यमानता में ही वह धन लड़कियों का हो जाता है
जाने पर फिर से जिनने साझे में कोई व्यापार किया हो उनके
ज्येष्ठ भाई को उसका भाग मिलेगा । यदि ज्येष्ठ भी साझीदार हो
समाप्त हो गया हो तो जो साझीदार नहीं थे उन अन्य भाइयों को
मिलना चाहिये । भाइयों का विभाग होजाने पर जो अन्य
तो उसको यहां धन का भाग मिलेगा जो पिता के अधिकार में हो
भाई ने पैदा किये धन में से अपने सहोदर भाइयों को

र्जितमवैद्येभ्यो वैद्यः कामं न दद्यात् ॥७॥ अवैद्याः समं विभ-
रेरन् ॥८॥ पुत्रा औरसक्षेत्रजदत्तकृत्रिमगूढोत्पन्नापविद्धा ऋ-
थभाजः कानीनसहोढपौनर्भवपुत्रिकापुत्रस्वयंदत्तक्रीता गो-
भाजश्चतुर्थांशिनश्चौरसाद्यभावे ब्राह्मणस्य राजन्यापुत्रो
येष्ठो गुणसंपन्नस्तुल्यांशभाग्ज्येष्ठांशहीमन्यद्राजन्यावैश्या-
पुत्रसमवाये स यथा ब्राह्मणीपुत्रेण क्षत्रियाच्चेच्छूद्रापुत्रोऽप्यन-
पत्यस्य शुश्रूषुश्चेल्लभेत वृत्तिमूलमन्तेवासिविधिना सवर्णा-
पुत्रोऽप्यन्यायवृत्तो न लभेतैकेषां ब्राह्मणस्याऽनपत्यस्य श्रो-
त्रिया ऋक्थं भजेरन् राजेतरेषां जडक्लीबौ भर्तव्यावपत्यं ज-
डस्य भागार्हं शूद्रापुत्रवत् प्रतिलोमास्तूदकयोगक्षेमकृतान्ने-

यें उसमें न्यायानुसार उनका अधिकार नहीं है ॥७॥ वैद्य से भिन्न भाई अन्य भागे
से प्राप्त धन का बराबर विभाग कर लेवें ॥८॥ १–औरस–(विवाहिता स्त्री में
उत्पन्न) २–क्षेत्रज–(वाग्दानानन्तर पति के मरने पर देवर से उत्पन्न) ३–दत्त
(गोद लिया) ४–कृत्रिम–(अपने किसी सजातीय गुण दोषज्ञ सुलक्षण पुत्र गुणयुक्त
को पुत्र नियत करे) ५–गूढोत्पन्न (जिसकी स्त्री में किसी अज्ञात पुरुष से उत्पन्न
हुआ) ६–अपविद्ध (माता पिता वा अन्य किसी ने त्याग दिया हो–और वनादि
में जिस को पड़ा मिले तो वह उसी का है) ये छः पुत्र पिता के धन के भागी
हैं। कानीन (विवाह से पहिले कन्या में उत्पन्न) सहोढ (विवाह के समय जो गर्भ
में हो) पौनर्भव (पुनर्भू स्त्री ने अन्य पुरुष से उत्पन्न किया) पुत्री का पुत्र, स्वयं-
दत्त (जिस के माता पिता न रहे हों वा उन ने अकारण त्याग दिया हो
अब जिसके शरण में वह आवे) क्रीत (जिसके माता पिता को धनादि दे-
कर लिया हो) ये सब कानीनादि अपने गोत्र के माने जावें और चतुर्थांश को
अपेक्षा चतुर्थांश के भागी हैं। ब्राह्मण पुरुष से ब्राह्मणी में उत्पन्न कोई पुत्र
न हो तो क्षत्रिया स्त्री में उत्पन्न पुत्र शुभगुण संयुक्त हो तो ज्येष्ठ भाता
आप और बराबर भाग उसको मिले। परन्तु क्षत्रिया, वैश्या दोनों स्त्रियों
के पुत्र ब्राह्मण से हों तो ज्येष्ठांश का अधिक भाग किसी को न मिलेगा।
यदि क्षत्रिय पुरुष से विवाहित वैश्य स्त्री में उत्पन्न हो तो वह ज्येष्ठांश का
भागी होगा। जिस द्विज के कोई अन्य पुत्र न हो तो विवाहित शूद्रा स्त्री
का पुत्र यदि शिष्य के समान पिता की सेवा शुश्रूषा करता हो तो भोजनादि
निर्वाह मात्र जीविका मिलने का अधिकारी है। और किन्हीं आचार्यों का
मत है कि सवर्णा स्त्री से उत्पन्न हुआ भी पुत्र दुराचारी हो तो उसको कुछ
भी भाग न मिलना चाहिये। जिस ब्राह्मण के कोई सन्तान वा समीपी दा-
यि (दायभागी) न हो उसका धन वेदपाठी ब्राह्मणों को मिलना चाहिये।

ष्वविभागः स्त्रीषु च संयुक्तास्वनाज्ञाते दशावरैः शिष्टै
दूभिरलुब्धैः प्रशस्तं कार्यम् ॥ ९ ॥ चत्वारश्चतुर्णां प
वेदानां प्रागुत्तमास्त्रयआश्रमिणः पृथग्धर्मविदस्त्रय
दशावरान् पारषदित्याचक्षते, असंभवे चैतेषामश्रोत्रिये
दविच्छिष्टो विप्रतिपत्तौ यदाह यतोऽयमप्रभवो भूताना
सानुग्रहयोगेषु धर्म्मिणां विशेषेण स्वर्गं लोकं धर्मवि
ति ज्ञानाभिनिवेशाभ्यामिति धर्म्मो धर्म्मः ॥ १० ॥

इति गौतमीये धर्मशास्त्रे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९

समाप्ता चेयं गौतमसंहिता ॥

क्षत्रियादि निर्वंश मनुष्यों का धन राजा लेवे। मूढ़ और नपुंसक सन्ता
भोजन वस्त्रादि निर्वाहमात्र मिलना चाहिये। पर जड़ (मूढ़) का पुत्र
हो तो उसको धनका दायभाग मिलना चाहिये। नीचे वर्ण से उत्तम व
स्त्री में उत्पन्न हुए प्रतिलोम सन्तानों को शूद्रा पुत्र के समान भोजन
निर्वाहमात्र जीविका मिले। जल देने, आमदनी लेने, कोशकी रक्षा
पकाये अन्न में और विवाहित स्त्रियों में से भाग लेने का अधिकार प्रति
दि से हुए सन्तानों को नहीं है। यदि प्रायश्चित्तादि किसी विषय में
न्देहका निर्णय धर्मशास्त्रों से न जानाजाय तो विधि पूर्वक गुरु मुखसे वे
तर्कशास्त्र में प्रवीण निर्लोभी दश विद्वान् मिलके जो निर्णय करें वही
जानो ॥९॥ आद्योपान्त चारों वेदों को पढ़ने जानने वाले चार (ये चारों
कोटिमें) ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ तीन उत्तम आश्रमी और तीन स्मा
धर्म को भिन्न २ अंशोंमें यथावत् जानने वाले इन दश विद्वानों की दा
धर्मसभा कहाती है। इन दश का मिलना असम्भव हो तो यद्यपि
पूर्वक जिसने वेद को न पढ़ा हो पर वेद का मर्म जानता हो अन्य
में शिक्षित हो ऐसा एक ही पुरुष धर्मविषयक परस्पर विरुद्ध दो पक्षों
कुछ कहे वही ठीक माना जावे क्योंकि वेदोक्त धर्म के अभाव में प्रा
की स्थिति नहीं रह सकती न उत्पत्ति हो सकती है किन्तु प्रलय का
आ जाता है। हिंसा और दया के विभागों के लिये धर्मात्माओं में
कर वेदोक्त धर्म का जानने वाला ही धर्मज्ञान और धर्म में तत्पर हो
कारण स्वर्गलोक को प्राप्त होता है। इसलिये वेद ही धर्म है ॥ १० ॥

यह गौतमीय धर्मशास्त्र के ब्राह्मणसर्वस्व मासिक पत्र सम्पादक
भीमसेन शर्म कृत भाषानुवाद में उनतीसवां अध्याय पूरा हुआ॥
और यह गौतमसंहिता भी समाप्त हुई ॥ ओं शान्तिः ॥ ३ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥

[शा]तातपस्मृतिप्रारम्भः

[प्राय]श्चित्तविहीनानां महापातकिनांनृणाम् ।
[नरका]न्तेभवेज्जन्म चिन्हाङ्कितशरीरिणाम् ॥ १ ॥
[प्रति]जन्मभवेत्तेषां चिन्हंतत्पापसूचितम् ।
[प्राय]श्चित्तेकृतेयाति पश्चात्तापवतांपुनः ॥ २ ॥
[मह]ापातकजंचिन्हं सप्तजन्मनिजायते ।
[उ]पपापोद्भवंपञ्च त्रीणिपापसमुद्भवम् ॥ ३ ॥
[दु]ष्कर्मजानृणांरोगा यान्तिचोपक्रमैःशमम् ।
[ज]प्यैःसुरार्चनैर्होमैर्दानैस्तेषांशमोभवेत् ॥ ४ ॥
पूर्वजन्मकृतंपापं नरकस्यपरिक्षये ।
बाधतेव्याधिरूपेण तस्यजप्यादिभिःशमः ॥ ५ ॥
कुष्ठंचराजयक्ष्माच प्रमेहोग्रहणीतथा ।

जिन ने प्रायश्चित्त नहीं किया ऐसे महापातकी मनुष्यों का नरक भोग[ने के]
अन्त में महापातकों के चिन्हों से युक्त मनुष्य योनि में जन्म होता है ॥१॥ बार २
[पा]तक को बताने वाले चिन्ह जन्म २ में उन लोगों के होते हैं। ॥ २ ॥ महापातक
[प्र]ायश्चित्त और पश्चात्ताप करने से वे चिन्ह छूट जाते हैं ॥ २ ॥ महापातक
का चिन्ह सात जन्म तक, उपपातक का पांच जन्म तक, और अन्य साधारण
पापों का चिन्ह तीन जन्म तक प्रकट होता है ॥ ३ ॥ निन्दित कर्म से पैदा
हुये रोग उपक्रमों आगे कहे (उपायों) से शांत होते हैं। उन रोगों की
शांति जप, देवताओं का पूजन, होम, और दान, देने से होती है ॥ ४ ॥ पूर्व
जन्म में किया पाप नरक भोगने के अन्त में व्याधि रूप होकर दुःख देता है।
उस की शान्ति जप आदि से करे ॥ ५ ॥ कुष्ठ, राजयक्ष्मा (क्षयी-तपे-
[दि]क) मूती, संग्रहणी, अतीसार, और

मूत्रकृच्छ्राश्मरीकासा अतीसारभगन्दरौ ॥ ६ ॥
दुष्टव्रणंगण्डमाला पक्षाघातोऽक्षिनाशनम्।
इत्येवमादयोरोगा महापापोद्भवाःस्मृताः ॥ ७ ॥
जलोदरंयकृत्प्लीहा शूलशोफव्रणानिच ।
श्वासाजीर्णज्वरच्छर्दि भ्रममोहगलग्रहाः ॥ ८ ॥
रक्तार्बुदविसर्पाद्या उपपापोद्भवागदाः ।
दण्डापतानकश्वित्र वपुःकम्पविचर्चिकाः ॥ ९ ॥
वल्मीकपुण्डरीकाद्या रोगाःपापसमुद्भवाः ।
अर्शआद्यानृणांरोगा अतिपापाद्भवन्तिहि ॥ १० ॥
अन्येचबहवोरोगा जायन्तेवर्णसंकरात् ।
उच्यन्तेचनिदानानि प्रायश्चित्तानिवैक्रमात् ॥११॥
महापापेषुसर्वस्वं तदर्द्धमुपपातके ।
दद्यात्पापेषुषष्ठांशं कल्प्यंव्याधिबलाबलम् ॥ १२ ॥
अथसाधारणंतेषु गोदानादिषुकथ्यते ॥ १३ ॥

भगंदर ॥ ६ ॥ वा भयंकर फोड़ा, दुष्टघाव, गंडमाला, पक्षाघात, और ने
का नाश इत्यादि रोग महापापों से पैदा होने वाले कहे हैं ॥७॥ सूजन
लिये फोड़े,जलोदर,यकृत् (दहिनी ओर पेट में मांस का गोला) प्लीहा (तिल
शूल, सांस, अजीर्ण, ज्वर, वमन, भ्रम, मोह, (मूर्छा) गलग्रह (गले का पक
॥ ८ ॥ रक्तार्बुद, विसर्प, इत्यादि रोग उपपातकों से पैदा होते हैं। दंडा
तानक, (दंडे के समान शरीर तन जाय) कंपना, श्वेतकुष्ठ, खाज ॥ ९ ॥
ल्मीक, (गढ़े) पुंडरीक, (दाद का भेद) आदि रोग साधारण पापों से हो
हैं। और अर्श (बवासीर) आदि रोग मनुष्यों को अतिपाप करने से हो
हैं ॥ १० ॥ अन्य भी बहुत से रोग अनेक पापों के घाल मेल से होते हैं
उन के निदान कारण और प्रायश्चित्त क्रम से कहते हैं ॥ ११ ॥ महापात
में सब धन उपपातकों में उससे आधा और अन्य पापों में अपने सब धन का
भाग दान करे उन में भी व्याधि की न्यूनाधिकता देख कर न्यूनाधि
की कल्पना करे ॥१२॥ अब गोदान आदि में साधारण विचार कहते हैं ॥१

गोदानेवत्सयुक्तागौः सुशीलाचपयस्विनी ।
सर्वस्वंयत्रदेयंस्यात्तत्रइच्छायदानहि ॥ १४ ॥
गोशतंतुयदादद्यात् सर्वालङ्कारभूषितम् ।
वृषदानेशुभोऽनड्वा ञ्छुक्लाम्बरःसकांचनः ॥१५॥
धौरेयंहेमसंयुक्तं दद्याद्वस्त्रसमन्वितम् ।
दशधेनुसमंपुण्यं प्रवदन्तिमनीषिणः ॥ १६ ॥
निवर्तनानिभूदाने दशदद्याद्द्विजातये ।
दशहस्तेनदण्डेन त्रिंशद्दण्डंनिवर्त्तनम् ॥ १७ ॥
दशतान्येवगोचर्म्म दत्वास्वर्गेमहीयते ।
सुवर्णशतनिष्कन्तु तदर्द्धार्द्धप्रमाणतः ॥ १८ ॥
अश्वदानेमृदुश्लक्ष्णमश्वंसोपस्करंदिशेत् ।
महिषींमाहिषेदाने दद्यात्स्वर्णाम्बरान्विताम् ॥१९॥
दद्याद्गजंमहादाने सुवर्णफलसंयुतम् ॥ २० ॥
लक्षसंख्यार्हणंपुष्पं प्रदद्याद्देवतार्चने ।

सर्वस्व देने का मौका हो और सब देने की इच्छा न हो तो दरिद्र में दूध देती हुई सुशीला बछड़ा से युक्त एक गौ का दान करने से स- दान का फल जानो ॥ १४ ॥ यदि सम्पन्न होतो वस्त्र तथा आभूषणों से पमान् सौ गौओं का दान करे । बैल देने के अवसर पर श्वेत वस्त्र सुवर्ण युक्त शुभ चिन्हों वाले बैल का दान करे ॥ १५ ॥
यदि सुवर्ण और वस्त्र सहित हृष्ट पुष्ट धुरंधर बैल का दान करे तो वि- लोग दश गोदान के बराबर पुण्य कहते हैं ॥ १६ ॥ पृथ्वी के दान में ण को दश निवर्तन भूमि देवे, दश हाथ के दंड से तीस दंड का एक र्तन होता है ॥ १७ ॥ दश निवर्तन को गोचर्म कहते हैं, इस गोचर्म प्र- भूमिका दान देकर मनुष्य स्वर्ग में पुजता है । सौ निष्क (सोना) के हैं २५ निष्क को सुवर्ण कहते हैं ॥ १८॥ घोड़े के दान में कोमल स्वच्छ ने वा सुन्दर घोड़े को चढ़ने की सामग्री सहित देवे । भैंस के दान में सुवर्ण वस्त्रों सहित भैंस को देवे ॥ १९ ॥ महादान में सुवर्ण और फल सहित को देवे ॥ २० ॥ देवता के पूजन में पूजा के निमित्त एक लाख फूल

दद्याद्द्विजसहस्राय मिष्टान्नंद्विजभोजने ॥ २१ ॥
रुद्रजाप्यंलक्षपुष्पैः पूजयित्वाचत्र्यम्बकम् ।
एकादशजपेद्रुद्रान्दशांशंगुग्गुलैर्घृतैः ॥ २२ ॥
हुत्वाभिषेचनंकुर्यान्मन्त्रैर्वरुणदैवतैः ।
शान्तिकेगणशान्तिश्च ग्रहशान्तिकपूर्विका ॥ २३ ॥
धान्यदानेशुभंधान्यं खारीषष्टिमितंस्मृतम् ।
वस्त्रदानेपट्टवस्त्र द्वयंकर्पूरसंयुतम् ॥ २४ ॥
दशपञ्चाष्टचतुर उपवेश्यद्विजान्शुभान् ।
तेषामनुज्ञयासर्वं प्रायश्चित्तमुपक्रमेत् ॥ २५ ॥
विधायवैष्णवंश्राद्धं संकल्प्यनिजकाम्यया ।
धेनुंदद्याद्द्विजातिभ्यो दक्षिणांचापिशक्तितः ॥२६॥
अलंकृत्ययथाशक्ति वस्त्रालङ्करणैर्द्विजान् ।
याचेद्दण्डप्रमाणेन प्रायश्चित्तंयथोदितम् ॥ २७ ॥
तेषामनुज्ञयाकृत्वा प्रायश्चित्तंयथाविधि ।

और ब्राह्मणों के भोजन में एक सहस्र ब्राह्मणों को मिष्टान्न देवे ॥२१॥ देवता के जप में एक लक्ष फूलों से महादेव जी का पूजन करके ग्यारह रुद्रों जप करे तथा गुग्गुल और घी से दशांश ॥ २२ ॥ होम करके वरुण देव वाले मन्त्रों से अभिषेक करै और शांति के कर्म में ग्रहों की शांति करके देवताओं की शान्ति करे ॥ २३ ॥ अन्न के दानमें साठ मन शुभ जौ वा गेंहूं अन्न देना कहा है। वस्त्र के दान में कपूर सहित रेशम के दो (धोती दुपट्टा, देने कहे हैं ॥ २४ ॥ दश, पांच, आठ, अथवा चार, श्रेष्ठ वि न् ब्राह्मणों को बैठा कर उन की आज्ञा से सब प्रकार के प्रायश्चित्त का आ रम्भ करे ॥ २५ ॥ विष्णु श्राद्ध करके अपनी कामना के अनुसार संकल्प क ब्राह्मणों को गौ और शक्ति के अनुसार दक्षिणा देवे ॥ २६ ॥ अपनी शक्ति के अनुसार वस्त्र और आभूषण द्वारा ब्राह्मणों को शोभायम करके उन से दण्ड (पाप) के प्रमाणानुसार शास्त्रोक्त प्रायश्चित्त को मांगे ॥ उन की आज्ञा से विधि पूर्वक प्रायश्चित्त करके फिर प्रायश्चित्त की पूर्ति

पुनस्तान्परिपूर्णार्थं मर्च्चयेद्विधिवद्द्विजान् ॥ २८ ॥
दद्याद्व्रताानिनामानि तेभ्यःश्रद्धासमन्वितः ।
संतुष्टाब्राह्मणादद्युरनुज्ञांव्रतकारिणे ॥ २९ ॥
जपच्छिद्रंतपश्छिद्रं यच्छिद्रंयज्ञकर्मणि ।
सर्वंभवतिनिश्छिद्रं यस्यचेच्छन्तिब्राह्मणाः ॥ ३० ॥
ब्राह्मणायानिभाषन्ते मन्यन्तेतानिदेवताः ।
सर्वदेवमयाविप्रा नतद्वचनमन्यथा ॥ ३१ ॥
उपवासोव्रतंचैव स्नानंतीर्थफलंतपः ।
विप्रैस्सम्पादितंयस्य सम्पन्नंतस्यतत्फलम् ॥ ३२ ॥
सम्पन्नमितियद्वाक्यं वदन्तिक्षितिदेवताः ।
प्रणम्यशिरसाधार्य्यमग्निष्टोमफलंलभेत् ॥ ३३ ॥
ब्राह्मणाजङ्गमंतीर्थं निर्मलंसार्वकामिकम् ।
तेषांवाक्योदकेनैव शुद्ध्यन्तिमलिनाजनाः ॥ ३४ ॥

...ये उन ब्राह्मणों का विधिवत् पूजन करे (अर्थात् जब प्रसन्न संतुष्ट हो ...र (संपूर्णमस्तु) ऐसा आशीर्वाद देवें तो कार्य सुफल होता है) ॥ २८ ॥ ...पस्विनी पुरुष अपने किये व्रत और नामों का श्रद्धा पूर्वक ब्राह्मणों से नि...दन करे वा समर्पण करे कि यह सब आप लोगों का ही है । तब संतुष्ट हुए ...ाह्मण व्रत के करने वाले पुरुष को आज्ञा देवें कि तुम्हारा व्रत सुफल हो ॥ २९ ॥ जप, तप, यज्ञ कर्म, इन में जो छिद्र (न्यूनता) होती है वह सब ...ाह्मणों की आज्ञा से पूर्ण हो जाती है ॥ ३० ॥ जो बात शुद्ध ब्राह्मण कहते ...ं उसे देवता भी मानते हैं क्योंकि ब्राह्मण सब देवताओं के रूप हैं इस से ...न का वचन अन्यथा [झूठा] नहीं हो सकता ॥३१॥ उपवास, व्रत, स्नान, तीर्थ ...ा फल, ये सब जिसके ब्राह्मणों ने सुफल कह दिये उस को इन का फल सिद्ध ...ोजाता है ॥ ३२ ॥ जिस कर्म में भूमिके देवता ब्राह्मण (सम्पन्नम्) सिद्ध ...आ यह वाक्य कहदें उस वाक्य को प्रणाम करके जो शिर पर धारण करता ...है वह अग्निष्टोम यज्ञ के फल को प्राप्त होता है ॥ ३३ ॥ संपूर्ण कामनाओं के ...ने वाले ब्राह्मण लोग निर्मल जंगम (चेतन) तीर्थ हैं उन के वाक्य रूपी ...ल से ही मलिन जन शुद्ध होजाते हैं ॥ ३४ ॥

तेभ्योऽनुज्ञामभिप्राप्य प्रतिगृह्यतथाशिषः ।
भोजयित्वाद्विजान्शक्त्या भुञ्जीतसहबन्धुभिः ॥३५

इति शातातपीये धर्मशास्त्रे कर्म्मविपाके साधारणविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

ब्रह्महानरकस्यान्ते पाण्डुकुष्ठीप्रजायते ।
प्रायश्चित्तंप्रकुर्वीत सतत्पातकशान्तये ॥ १ ॥
चत्वारःकलशाःकार्य्याः पञ्चरत्नसमन्विताः ।
पञ्चपल्लवसंयुक्ताः सितवस्त्रेणसंयुताः ॥ २ ॥
अश्वस्थानादिमृद्युक्तास्तीर्थोदकसुपूरिताः ।
कषायपञ्चकोपेता नानाविधफलान्विताः ॥ ३ ॥
सर्व्वौषधिसमायुक्ताः स्थाप्याःप्रतिदिशंद्विजैः ।
रौप्यमष्टदलंपद्मं मध्यकुम्भोपरिन्यसेत् ॥ ४ ॥
तस्योपरिन्यसेद्देवं ब्रह्माणंचचतुर्मुखम् ।

उन ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर उन के आशीर्वाद को ग्रहण करके और शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को भोजन कराकर अपने बन्धुओं सहि भोजन करे ॥ ३५ ॥

यह शातातपीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में कर्मविपाक विषय साधारण विधि रूप प्रथमाध्याय पूरा हुआ ॥ १ ॥

ब्रह्महत्यारा पुरुष नरक भोग के अन्त में श्वेत कुष्ठी होता है । वह पुरुष उस पाप के शान्त्यर्थ प्रायश्चित्त करे॥१॥ पांचों रत्न पांच पत्र श्वेत वस्त्रों से युक्त चार तांबे के कलश लीपे हुये शुद्ध स्थल में स्थापित गजशाला घुड़शालादि की सात मट्टी कलशों के नीचे धरे तथा तीर्थों के से कलशों को भरे और पांच कषाय (कसैली वस्तु) और अनेक प्र फलों से संयुक्त करे ॥३॥ सब ओषधियों से युक्त करके पूर्वादि चारों दि में उनको स्थापित करे और बीच में स्थापित किये पांचवें कलश पर का आठ दल का कमल रक्खे ॥ ४ ॥ उस कमल पर छः माशे सुवर्ण से

ङ्गुष्ठप्रमाणेन सुवर्णेनविनिर्मितम् ॥ ५ ॥
अर्च्चयेत्पुरुषसूक्तेन त्रिकालंप्रतिवासरम् ।
यजमानःशुभैर्गन्धैः पुष्पैर्धूपैर्यथाविधि ॥ ६ ॥
पूर्वादिकुम्भेपुततो ब्राह्मणा ब्रह्मचारिणः ।
पठेयुःस्वस्ववेदांस्त ऋग्वेदप्रभृतीञ्शनैः ॥ ७ ॥
दशांशेनततोहोमो ग्रहशान्तिपुरःसरम् ।
मध्यकुम्भेविधातव्यो घृताक्तैस्तिलव्रीहिभिः ॥ ८ ॥
द्वादशाहमिदंकर्म्म समाप्यद्विजपुङ्गवः ।
भद्रपीठेयजमानमभिषिञ्चेद्यथाविधि ॥ ९ ॥
ततोदद्याद्यथाशक्ति गोभूहेमतिलादिकम् ।
ब्राह्मणेभ्यस्तथादेयमाचार्य्यायथाविधि ॥ १० ॥
आदित्यावसवोरुद्रा विश्वेदेवामरुद्गणाः ।
प्रीताःसर्वेव्यपोहन्तु ममपापंसुदारुणम् ॥ ११ ॥

मुखों वाली ब्रह्मा जी की प्रतिमा स्थापित करे ॥ ५॥ यजमान प्रति दिन तीनों काल में पुरुष सूक्त (सहस्त्र शीर्षा०) इत्यादि मन्त्रों द्वारा सुन्दर पुष्प, धूपों से ब्रह्मा जी का विधिवत् पूजन करे ॥ ६ ॥ [illegible] पूर्व दिशाओं में स्थापित चारों घटों के समीप चार ब्रह्मचारी ब्राह्मण ऋग्वेद आदि अपने २ वेदों को सावधान चित्त होके पढ़े, अर्थात् पूर्व में ऋग्वेद, [illegible] में यजुः, पश्चिम में साम और उत्तर में [illegible] अथर्ववेद का पाठ करें ॥ ७ ॥ ग्रहशांति पूर्वक मध्यस्थकलश के [illegible] दशांश होम घी [illegible] तिल [illegible] व्रीहि धानों से करे ॥ ८॥ बारह दिन में [illegible] कर्म [illegible] ब्राह्मण इन कर्म समाप्त करा के कल्याणकारी पीढ़ा (चौकी) पर [illegible] यजमान [illegible] विधि पूर्वक अभिषेक करे ॥ ९॥ फिर शक्ति के अनुसार गौ भूमि, सुवर्ण तिल आदि का दान ब्राह्मणों को और आचार्य को यजमान [illegible] देवे ॥ १०॥ [illegible] आदित्य ८ वसु ११ रुद्र १३ विश्वेदेव और ४९ मरुद्गण ये सब [illegible] देवता प्रसन्न होकर मेरे दारुण कठिन भयंकर पाप का निर्मूल करें ॥ ११ ॥

इत्युदीर्यमुहुर्भक्त्या तमाचार्यंक्षमापयेत् ।
एवंविधानेविहिते श्वेतकुष्ठीविशुद्ध्यति ॥ १२ ॥
कुष्ठीगोवधकारीस्यान्नरकान्तेऽस्यनिष्कृतिः ।
स्थापयेद्घटमेकन्तु पूर्वोक्तद्रव्यसंयुतम् ॥ १३ ॥
रक्तचन्दनलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पाम्बरान्वितम् ।
रक्तकुम्भन्तुतंकृत्वा स्थापयेद्दक्षिणांदिशम् ॥ १४
ताम्रपात्रंन्यसेत्तत्र तिलचूर्णनपूरितम् ।
तस्योपरिन्यसेद्देवं हेमनिष्कमयंयमम् ।
यजेत्पुरुषसूक्तेन पापंमेशाम्यतामिति ॥ १५ ॥
सामपारायणंकुर्यात्कलशेतत्रसामवित् ।
दशांशंसर्षपैर्हुत्वा पावमान्यभिषेचने ॥ १६ ॥
विहितेधर्म्मराजानमाचार्य्यायनिवेदयेत् ॥ १७ ॥
यमोऽपिमहिषारूढो दण्डपाणिर्भयावहः ।

इस प्रकार भक्ति श्रद्धा से बार२ प्रार्थना करके गुरु जी से अपराध क्षमा करावे
विधान करने से श्वेत कुष्ठी शुद्ध होजाता है ॥ १२ ॥ गोहत्या करनेवाल
क भोग के अन्त जन्मान्तर में कुष्ठी होता है। उस समय निम्न प्रायश्चि
पूर्वोक्त पांचरत्नादि सहित एक कलश स्थापित करे ॥१३॥ उस पर लाल
का लेपन कर कण्ठ में लाल वस्त्र लपेटे । ऊपर लाल पुष्प धरे । इस प्र
लश को रक्तवर्ण करके पूजन स्थान के दक्षिणभाग में स्थापित करे ॥ १
हुए तिलों से भरा तांबे का पात्र उस कलश के ऊपर धरे उसके ऊपर ए
ला सुवर्ण से बनायी यमराज देवता की प्रतिमा स्थापित करके मेरा पा
न्त हो, ऐसी प्रार्थना करके पुरुष सूक्त से यमदेवता का पूजन करे ॥१५॥
वेदी विद्वान् कलश के समीप में सामवेद का पारायण करे। इस प्रकार
दिन त्रिकाल पूजन करके अन्त में सर्षप—सरसों द्वारा दशांश का होम क
मानी ऋचाओं से ब्राह्मण लोग यजमान का अभिषेक करें ॥ १६ ॥ द
धान होजाने पर धर्मराज की प्रतिमा आचार्य को देदेवे ॥ १७ ॥ दुख
लिये भैंसापर सवार दक्षिण दिशा के स्वामी भयं कर यमराज मेरे पा

दक्षिणांशापसिद्धैवो ममपापंव्यपोहतु ॥ १८ ॥
इत्युक्त्वार्घ्यंविसृज्यैनं मासंसद्भक्तिमाचरेत् ।
ब्रह्मगोवधयोरेषा प्रायश्चित्तेननिष्कृतिः ॥ १९ ॥
पितृहाचेतनाहीनो मातृहान्धःप्रजायते ।
नरकान्तेप्रकुर्वीत प्रायश्चित्तंयथाविधि ॥ २० ॥
प्राजापत्यानिकुर्वीत त्रिंशच्छाखाविधानतः ।
व्रतान्तेकारयेन्नावं सौवर्णींपलसंमिताम् ॥ २१ ॥
कुम्भंरौप्यमयंचैव ताम्रपात्राणिपूर्ववत ।
निष्कहेम्नातुकर्तव्यो देवःश्रीवत्सलाञ्छनः ॥ २२ ॥
पट्टवस्त्रेणसवेष्ट्यं पूजयेत्तांविधानतः ।
नावंद्विजायतांदद्यात्सर्वोपस्करसंयताम् ॥ २३ ॥
वासुदेव! जगन्नाथ ! सर्वभूताशयस्थित ! ।
पातकार्णवमग्नंमां तारयप्रणतार्त्तिहृत् ॥ २४ ॥
इत्युदीर्य्यप्रणम्याथ ब्राह्मणायविसर्जयेत् ।
अन्येभ्योऽपियथाशक्ति विप्रेभ्योदक्षिणांददेत् ॥ २५ ॥

पूजन करें॥१८॥ऐसा उच्चारण करके देवता का विसर्जन कर एकमास उत्तम भक्ति का आचरण करे। ब्रह्महत्या और गोहत्या का यह प्रायश्चित्त है ॥ १९ ॥ पिता को मारनेवाला महा मूढ़ अंध तथा माता को मारनेवाला नरकभोग की समाप्ति में जन्मान्ध होता है इससे विधिपूर्वक प्रायश्चित्त करे ॥ २० ॥ अपनी शाखा के विधान से प्रथम तीस प्राजापत्य व्रत करे। व्रत की समाप्ति में चार तोला सुवर्ण की एक नौका बनवावे ॥ २१ ॥ एक कलश चांदी का और पूर्ववत् चार कलश तांबे के स्थापित करे और एक तोला सुवर्ण की एक प्रतिमा विष्णु भगवान् की बनवावे॥ २२ ॥ फिर रेशमी वस्त्र से भगवत्प्रतिमा को आच्छादित करके विधि से पूजन करे फिर सब सामग्री सहित उस नौका को सुपात्र ब्राह्मण को दानकर देदेवे॥२३॥ फिर प्रार्थना करे कि हे सब प्राणियों के हृदय में स्थित जगत् के नाथ वासुदेव भगवान्! भक्त दुःखहारी आप पाप समुद्र में डूबे हुए मुझे पार करो ॥ २४ ॥ ऐसा वारंवार कह कर प्रणाम करके उस प्रतिमा को सुपात्र ब्राह्मण को विसर्जन पूर्वक दान कर देवे। तथा अन्य ब्राह्मणों को भी यथाशक्ति दक्षिणा देवे ॥ २५ ॥

हत्वावैबालकंसुप्तंस्वसृजातंचमूलजम् ।
तेनसंजायतेवन्ध्या मृतवत्साचनारकी ॥ २६ ॥
तत्पातकविनाशाय यथाकार्यंप्रयत्नतः ।
सौवर्णंबालकंकृत्वा दद्याद्दोलासमन्वितम् ॥ २७ ॥
अनड्वाहंततोदद्याद् वस्त्रद्वयसमन्वितम् ।
तत्पातकविनिर्मुक्ता पश्चाद्भवतिपुत्रिणी ॥ २८ ॥
पितावन्दीकृतोयेन निबद्धोलोहशृङ्खलैः ।
चिरंकष्टतरंभुक्त्वा मृतस्तत्रैवमन्दिरे ॥ २९ ॥
तेनपापेनपापात्मा पतितोरौरवार्णवे ।
नरकान्तेभवेच्चिन्हं पङ्गुर्मूकोविचेतनः ॥ ३० ॥
तस्यपापविनिर्मुक्त्यै पिताकार्योहिरण्मयः ।
पितरंरथमारूढं विप्रायप्रतिपादयेत् ॥ ३१ ॥
स्वसृघातीतुबधिरो नरकान्तेप्रजायते ।

यहनीर्य के द्वारा भगिनी से उत्पन्न हुए अपने सोते हुए भागिनेय [illegible]
लक को जो मारडाले वह नरक भोग के बाद बन्ध्या स्त्री अथवा [illegible]
ये मरजायँ ऐसी होती है ॥ २६ ॥ उस पातक के विनाशार्थ [illegible]
पूर्वक करना चाहिये सो कहते हैं। एक सुवर्ण का बालक बनाके [illegible]
दान करे ॥ २७ ॥ फिर दो वस्त्रों सहित एक बैल का दान करे [illegible]
पित से उस पातक से मुक्त हुई पुत्रवती होजाती है ॥ २८ ॥ [illegible]
अपने पिता को लोहे की सांकलों से बांधकर कैद किया हो और [illegible]
काल तक अत्यन्त कष्ट भोग कर उसी कैदखाने में मरगया हो [illegible]
पापी पुत्र उस महापाप से रौरव नरक में पड़ता है फिर नरक [illegible]
में मनुष्य जन्म होने पर लंगड़ा, मूक (गूंगा) तथा मूढ़ता [illegible]
है ॥ ३० ॥ उस पापसे छूटने के लिये वह अपने पिता की [illegible]
बनवा कर और रथ में बैठा कर रथ सहित पिता की प्रतिमा [illegible]
ब्राह्मण को दान कर देवे ॥३१॥ भगिनी को मारडालने वाला [illegible]
पश्चात् मनुष्य जन्म होने पर बधिर होता है और भाई का [illegible]

मूकोभ्रातृवधेचैव तस्येयंनिष्कृतिःस्मृता ॥ ३२ ॥
तेनकार्यंविशुद्ध्यर्थं यतिचान्द्रायणं व्रतम् ।
व्रतान्तेपुस्तकंदद्यात्सुवर्णपलसंयुतम् ॥ ३३ ॥
इमंमन्त्रंसमुच्चार्य्य ब्रह्माणींतांविसर्जयेत् ।
सरस्वति ! जगन्मातः ! शब्दब्रह्माधिदैवते ! ॥ ३४ ॥
दुष्कर्म्मकारिणंपापं पाहिमांपरमेश्वरि ! ।
बालघातीचपुरुषो मृतवत्सःप्रजायते ॥ ३५ ॥
ब्राह्मणोद्वाहनंचैव कर्तव्यंतेनशुद्धये ।
श्रवणंहरिवंशस्य कर्तव्यंचयथाविधि ॥ ३६ ॥
महारुद्रजपंचैव कारयेच्चयथाविधि ।
षडङ्गैकादशैरुद्रैः रुद्रःसमभिधीयते ॥ ३७ ॥
रुद्रैस्तथैकादशभिर्महारुद्रःप्रकीर्तितः ।
एकादशभिरेतैस्तु अतिरुद्रश्चकथ्यते ॥ ३८ ॥
जुहुयाच्चदशांशेन पूर्वोक्ताज्याहुतीस्तथा ।

रकान्त में मूक (गूंगा) होता है उस का प्रायश्चित्त निम्न लिखित है ॥३२॥
स को अपनी शुद्धि के लिये यतिचान्द्रायण (मध्यान्ह में एकवार एकमास
क आठ ग्रास भोजनरूप) व्रत करना चाहिये। फिर व्रतकी समाप्ति में चार तोला
र्ण सहित वेद की पुस्तक पर सरस्वती देवता का यथाविधि पूजन करके उस
दान करे ॥३३॥ फिर इस आगे लिखे मन्त्र (सरस्वति०) का उच्चारण करके
स्वती देवी का विसर्जन करे कि हे शब्दब्रह्मरूप वेद की अधिष्ठात्री ज-
त की माता परमेश्वरी सरस्वती ! दुष्कर्म करने वाले मुझ पापी की रक्षा
ो॥३४॥ बालक की हत्या करनेवाले पुरुष के सन्तान हो २ कर मर जाते हैं ॥३५
सको अपनी शुद्धि के लिये ब्राह्मणों को कन्धेपर बैठा कर ले चलना आदि
ा करनी चाहिये। और हरिवंशपुराण का विधिपूर्वक श्रद्धा से श्रवण करे॥३६॥
र वह विधिपूर्वक महारुद्र जप कराये। षडङ्ग की ग्यारह रुद्री का पाठ
 कहाता ॥ ३७ ॥ ग्यारह रुद्रों का (रुद्री के १२१ पाठ) महारुद्र कहाता
र इन ग्यारह महारुद्रों का एक अतिरुद्र कहाता है ॥ ३८ ॥ महारुद्र या

एकादशस्वर्णनिष्काः प्रदातव्याश्चदक्षिणाः ॥ ३९
पलान्येकादशतथा दद्याद्वित्तानुसारतः ।
अन्येभ्योऽपियथाशक्ति द्विजेभ्योदक्षिणांदिशेत् ॥
स्नापयेद्दम्पतोपश्चान्मन्त्रैर्वरुणदेवतैः ।
आचार्यायप्रदेयानि वस्त्रालङ्करणानिच ॥ ४१ ॥
गोत्रहापुरुषःकुष्ठो निर्वंशश्चोपजायते ।
सचपापविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यशतंचरेत् ॥ ४२ ॥
व्रतान्तेमेदिनींदत्त्वा शृणुयादथभारतम् ।
स्त्रीहन्ताचातिसारीस्यादश्वत्थान्रोपयेद्दश ॥ ४३ ॥
विप्रस्यबालकंहत्वा संहृतंरत्नकाञ्चनम् ।
तेनैवजायतेमृत्युः पुत्राणांचपुनःपुनः ॥ ४४ ॥
तादृक्कर्मविनाशाय कार्यंतेनैवयत्नतः ।
वृषोहैमेनसंयुक्तो दातव्योवस्त्रसंयुतः ॥ ४५ ॥

...तिरुद्र का दशांश होम करे और पूर्वोक्त घी की आहुतियों से भी हो...
...रे तथा ग्यारह तोला सुवर्ण दक्षिणा में देवे ॥ ३९ ॥ यदि श्रीमान् हो...
...४ चवालीस तोला सुवर्ण दक्षिणा देवे । जप पाठ करनेवालों से भिन्न ब्राह्मणों को भी यथाशक्ति दक्षिणा देवे ॥ ४० ॥ पश्चात् कुलका पुरोहित...
...वतावाले मन्त्रों से यजमान और पत्नी को स्नान करावे । तदा...
...तो अपने आचार्यों को वस्त्र और आभूषण देवे ॥४१॥ अपने गोत्री पुरु...
...या करनेवाला पुरुष नरकान्त में कुष्ठी और निर्वंश होता है । वह पा...
...द्ध होने के लिये सौ प्राजापत्य व्रत करे ॥ ४२॥ फिर व्रत के अन्त में पृ...
...दान देकर श्रद्धा से महाभारत का श्रवण करे । स्त्री हत्यारा अतीसार...
...ी होता है वह पीपल के दश वृक्षों को लगावे ॥ ४३ ॥ ब्राह्मण...
...लक को मार डाले और उसके सुवर्ण रत्नादि आभूषण लेलेवे तो नरकान्त...
...ी वाले मनुष्य जन्मों में बार २ उत्पन्न हो २ कर उसके पुत्र मरते हैं...
...नहीं रहता ॥ ४४ ॥ उस पाप के नाशार्थ उस पापी को यत्न से...
...तथा वस्त्रों से युक्त बैल का दान करना चाहिये ॥ ४५ ॥ ...

दद्याच्चशर्कराधेनुं भोजयेच्चशतंद्विजान् ॥ ४६ ॥
राजहाक्षयरोगीस्यादेपातस्यचनिष्कृतिः ।
गोभूहिरण्यमिष्टान्नजलवस्त्रप्रदानतः ॥ ४७ ॥
घृतधेनुप्रदानेन तिलधेनुप्रदानतः ।
इत्यादिनाक्रमेणैव क्षयरोगःप्रशाम्यति ॥ ४८ ॥
रक्तार्बुदोवैश्यहन्ता जायतेसचमानवः ।
प्राजापत्यानिचत्वारि सप्तधान्यानिचोत्सृजेत् ॥ ४९ ॥
दण्डापतानकयुतः शूद्रहन्ताभवेन्नरः ।
प्राजापत्यंसकृच्चैव दद्याद्धेनुंसदक्षिणाम् ॥ ५० ॥
कारूणांचवधेचैव रूक्षभावःप्रजायते ।
तेनतत्पापशुद्ध्यर्थं दातव्योवृषभःसितः ॥ ५१ ॥
सर्वकार्येष्वसिद्धार्थो गजघातीभवेन्नरः ।
प्रासादंकारयित्वातु गणेशप्रतिमांन्यसेत् ॥ ५२ ॥
अथवागणनाथस्य मन्त्रंलक्षमितंजपेत् ।

नाकर दान करे और १०० ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ४६ ॥ [illegible]
ला- क्षयी रोगयुक्त होता, उस का प्रायश्चित्त यह है कि गौ भूमि, सुवर्ण,
ष्टान्न, (लड्डूआदि) जल, और वस्त्रों के दान से ॥ ४७ ॥ [illegible] और
ओं को गौ बनाकर देने से इत्यादि क्रम से दान करने पर [illegible] रोग शान्त
जाता है ॥ ४८ ॥ वैश्य को मारनेवाला नरकान्त में रक्तार्बुद रोगी होता है
र चार प्राजापत्य व्रत करके सप्तधान्य (सतनजा) का दान करे ॥ ४९ ॥ शूद्र
त्या करनेवाला जन्मान्तर में दण्डापतानक रोगयुक्त होता, वह एक प्राजापत्य
करके एक गौ दक्षिणा देवे ॥ ५० ॥ कारीगरों का वध करनेवाला संसार में
पन होता है उस अपराधी को अपने उस पाप की शुद्धि के लिये [illegible]
का दान करना चाहिये ॥ ५१ ॥ हाथी की हत्या करने [illegible]
ता है वही सिद्ध नहीं होता सभी निष्फल जाते हैं [illegible] मन्दिर
वाकर गणेशजी की प्रतिमा की स्थापना करावे [illegible]
का एक लक्ष जप करे वा करावे और [illegible]

दशांशहोमश्चापूपैर्गणशान्तिपुरस्सरः ॥ ५३ ॥
उष्ट्रेविनिहतेचैव जायतेविकृतस्वरः ।
सतत्पापविशुद्ध्यर्थं दद्यात्कर्पूरजंफलम् ॥ ५४ ॥
अश्वेविनिहतेचैव वक्रकण्ठःप्रजायते ।
शतंफलानिदद्याच्च चन्दनान्यघनुत्तये ॥ ५५ ॥
महिषीघातनेचैव कृष्णगुल्मःप्रजायते ।
स्वशक्त्याचमहींदद्याद्रक्तवस्त्रद्वयंतथा ॥ ५६ ॥
खरेविनिहतेचैव खररोमाप्रजायते ।
निष्कत्रयस्यप्रकृतिं संप्रदद्याद्धिरण्मयीम् ॥ ५७ ॥
तरक्षौनिहतेचैव जायतेकेकरेक्षणः ।
दद्याद्रत्नमयींधेनुं सतत्पातकशान्तये ॥ ५८ ॥
शूकरेनिहतेचैव दन्तुरोजायतेनरः ।
सदद्यात्सुविशुद्ध्यर्थं घृतकुम्भंसदक्षिणम् ॥ ५९ ॥
हरिणेनिहतेखञ्जः शृगालेतुविपादकः ।
अश्वस्तेनप्रदातव्यः सौवर्णोनिष्कसम्मितः ॥ ६० ॥

द्वारा दशांश होम करे ॥ ५३ ॥ ऊंट की हत्या करने पर तोतला हो
वह उस पाप की शुद्धि के लिये कपूर से प्रकट हुए फल का दान करे ।
घोड़े के मारनेपर टेढ़े कण्ठवाला होता है वह पाप निवृत्त के लिये
और चन्दन का दान करे ॥ ५५ ॥ भैंसि की हत्या करने पर काला गु
होता है वह पुरुष अपनी शक्ति के अनुसार भूमि का और दो
का दान करे ॥ ५६ ॥ गधे के मारडालने पर गधे के से रोमोंवाला पुरुष
में होता है वह तीन निष्क (अशर्फी) की गर्दभ प्रतिमा बनाकर दान करे
चीते की हत्या करने पर जन्मान्तर में भैंड़ी या टेढ़ी निगाहवाला हो
वह उस पाप की शुद्धि के लिये रत्नों की गौ बनाकर दान करे ॥ ५८ ॥
की हत्या करने पर मनुष्य जन्मान्तर में बड़दन्ता होता है वह
के लिये घी से भरा घड़ा दक्षिणा सहित दान करे ॥ ५९ ॥ हरिण की हत्या
वाला लंगड़ा और शृगाल (गीदड़) की हत्या करनेवाला एक
है । उसको एक तोला सुवर्ण का घोड़ा बनवाकर दान करना चाहिये ।

अजाभिघातनेचैव अधिकाङ्गःप्रजायते ।
अजातेनप्रदातव्या विचित्रवस्त्रसंयुता ॥ ६१ ॥
उरभ्रेनिहतेचैव पाण्डुरोगःप्रजायते ।
कस्तूरिकापलंदद्याद्व्राह्मणायविशुद्धये ॥ ६२ ॥
मार्जारेनिहतेचैव जायतेपिङ्गलोचनः ।
तेनवैदूर्यरत्नानि दातव्यानिस्वशक्तितः ॥ ६३ ॥
जायतेचक्रपादस्तु निहतेशुनिमानवः ।
निष्कद्वयमितंदद्याल्लकुलंसविशुद्धये ॥ ६४ ॥
शशकेनिहतेचैव कुब्जकर्णस्तुजायते ।
निष्कत्रयमितंदद्यात्ससुवर्णविशुद्धये ॥ ६५ ॥
नकुलस्याभिहनने जायतेवक्रमण्डलम् ।
शय्यांदद्यात्सविप्राय सोपधानांसतूलिकाम् ॥ ६६ ॥
शयालुःसर्पहादद्याल्लोहदण्डंसदक्षिणम् ।
कुब्जोमूपकहादद्यात्सप्तधान्यंसकाञ्चनम् ॥ ६७ ॥

करी की हत्या करने पर ढङ्गा आदि अधिक अङ्गवाला वह जन्मता है इ-
सिये वह कई रंगवाले वस्त्र सहित वकरी का दान करे ॥ ६१ ॥ मेढ़ा की ह-
त्या करने पर जन्मान्तर में पाण्डुरोग होता है उस पाप की शुद्धि के लिये
चार तोला कस्तूरी ब्राह्मण को दान करे ॥ ६२ ॥ विलाव के मारडालने पर
पीली आंखोंवाला जन्मान्तर में होता है। उस को अपनी शक्ति अनुसार
वैदूर्य रत्नों का दान करना चाहिये ॥ ६३ ॥ कुत्ते की हत्या करने पर मनुष्य
चक्र (पहिये जैसे) पगवाला होता है वह दो तोला सुवर्ण का न्योला बना
कर अपनी शुद्धि के लिये दान करे ॥ ६४ ॥ शश (खरहा) के मारने पर लुचड़े
कान वाला जन्मान्तर में होता है, वह अपनी शुद्धि के लिये तीन तोला सुवर्ण
का दान करे ॥ ६५ ॥ न्योला के मारने पर जन्मान्तर में वक्रमण्डल रोग होता
है इस से वह तोशक तकिया सहित नयी खटिया का दान करे ॥ ६६ ॥ सांप
को मारने वाले को निद्रा अधिक तर घेरे रहती है। इस से वह दक्षिणा स-
हित लोहे के दण्ड का दान करे। मूषक को मारने वाला कुबड़ा होता है वह
सुवर्ण दक्षिणा सहित सप्तनजा का दान करे ॥ ६७ ॥

मयूरघातनेचत्र जायतेकृष्णमण्डलम् ।
निष्कत्रयमितोदेयस्तेनस्वर्णमयःशिखी ॥ ६८ ॥
हंसघातीभवेद्यस्तु तस्यस्याच्छ्वेतमण्डलम् ।
रौप्यंपलत्रयमितं हंसंदद्याद्विशुद्धये ॥ ६९ ॥
कुक्कुटेनिहतेचैव वक्रनासःप्रजायते ।
पारावतंससौवर्णं प्रदद्यान्निष्कमात्रकम् ॥ ७० ॥
शुकसारिकयोर्घाती नरःस्खलितवाग्भवेत् ।
सच्छास्त्रपुस्तकंदद्यात्सविप्रायसदक्षिणाम् ॥ ७१ ॥
वकघातीदीर्घनासो दद्याद्गांधवलप्रभाम् ।
काकघातीकर्णहीनो दद्याद्गामसितप्रभाम् ॥ ७२ ॥
हिंसायांनिष्कृतिरियं ब्राह्मणेसमुदाहृता ।
तदर्द्धार्द्धप्रमाणेन क्षत्रियादिष्वनुक्रमात् ॥ ७३ ॥
क्षत्रियोमृगयांचक्रे मृगान्निघ्नन्नदुष्यति ।

मोर के मारने पर कृष्ण मण्डल रोग होता है उस को तीन तोले
का मोर बनवा के दान करना चाहिये ॥ ६८ ॥ जो हंस की हत्या करे
जन्मान्तर में श्वेतमण्डल रोग होता है वह अपनी शुद्धि के लि
रह-तोला चांदी का हंस बनवा के दान करे ॥ ६९ ॥ मुर्गों की हत्या क
जन्मान्तर में टेढ़ी नासिका वाला होता है । वह एक तोला सुवर्ण क
तर बना के दान करे ॥ ७० ॥ तोता और मैना का मारनेवाला पुरु
होता है । वह दक्षिणा सहित सत्शास्त्र के पुस्तक का दान ब्राह्मण
॥ ७१ ॥ बगुला को मारनेवाला बड़ीनाकवाला होता है वह श्वेत गौ
करे । कौवे का मारनेवाला बधिर (बहरा) होता वह काली गौ
करे ॥ ७२ ॥ यहां तक ब्राह्मण के लिये हिंसा का प्रायश्चित्त कहा ग
उससे आधा क्षत्रिय को तथा चौथाई प्रायश्चित्त वैश्य को करना चाहि
क्षत्रिय पुरुष बन जङ्गल में मृगादि की शिकार करता हुआ दू
होता । युद्ध के मैदान में प्राप्त जो क्षत्रिय उस का जो धर्म है उस से

ततोऽभिषेकःकर्त्तव्यो मन्त्रैर्वरुणदैवतैः ॥ २ ।
मद्यपोरक्तपित्तीस्यात्सदद्यात्सर्पिषोघटम् ।
मधुनोऽर्द्धघटंचैव सहिरण्यंविशुद्धये ॥ ३ ॥
अभक्ष्यभक्षणाच्चैव जायतेक्रमिकोदरः ।
यथावत्तेनशुद्ध्यर्थमुपोष्यंभीष्मपञ्चकम् ॥ ४ ॥
उदक्यावीक्षितंभुक्त्वा जायतेक्रमिलोदरः ।
गोमूत्रयावकाहारस्त्रिरात्रेणैवशुद्ध्यति ॥ ५ ॥
भुक्त्वाचास्पृश्यसंयुक्तो जायतेक्रमिलोदरः ।
त्रिरात्रंवैष्णवंकृत्वा सततपातकशान्तये ॥ ६ ॥
श्वमार्जारादिभिःस्पृष्टं भुक्त्वादुर्गन्धवान्भवेत्
पीत्वात्रिरात्रंगोमूत्रं भोजयेद्ब्राह्मणत्रयम् ॥ ७ ।
अनिवेद्यसुरादिभ्यो भुञ्जानोजायतेनरः ।
भोजयेत्त्रिशतान्विप्रान्सहस्रंतुप्रमाणतः ॥ ८ ॥
परान्नविघ्नकरणादजीर्णमभिजायते ।

करा के घृत मिले तिलों से दशांश होम करे। फिर वरुण देवता
यजमान का अभिषेक विद्वान् लोग करें ॥ २ ॥ मद्य पीनेवाला
रक्त पित्त रोगयुक्त होता है वह अपनी शुद्धि के लिये एक घड़ा
आधा घड़ा शहद का सुवर्ण सहित दान करे ॥ ३ ॥ अभक्ष्य भ
जन्मान्तर में उदरकृमि रोग युक्त होता है। वह अपनी शुद्धि
ष्मपञ्चक के (कार्त्तिक शुक्ल ११ एकादशी से पौर्णमासी तक) प
यावत् उपवास करे ॥ ४ ॥ रजस्वला के देखे हुए का भोजन करं
कृमि रोगवाला होता है। वह गोमूत्र सहित कुलत्थ को तीनदि
छुआ व्रत करे तो शुद्ध होता है ॥५॥ स्पर्श न करने योग्य वायडा
में भोजन करने पर उदर कृमिरोग युक्त होता है। वह उस पात
के लिये विष्णुभगवान् की पूजा उपासना का व्रत तीन दिन कं
बिल्ली आदि का छुआ भोजन करके दुर्गन्ध युक्त होता है। वह
गोमूत्र पीकर उपवास करके तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥७
को भोग या देवयज्ञादि न करके भोजन करता है वह नास्ति
एक हजार या तीनसौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥८॥ अन्यके

लक्षहोमंसकुर्वीत प्रायश्चित्तंयथाविधि ॥ ९ ॥
मन्दोदराग्निर्भवति सतिद्रव्येकदन्नदः ।
प्राजापत्यत्रयंकुर्याद्‌ भोजयेच्चशतंद्विजान् ॥ १० ॥
विपदःस्याच्छर्दिरोगो दद्याद्दशपयस्विनीः ।
मार्गहापादरोगीस्यात्सोऽश्वदानंसमाचरेत् ॥ ११ ॥
पिशुनोनरकस्यान्ते जायतेश्वासकासवान् ।
घृतंतेनप्रदातव्यं सहस्रपलसम्मितम् ॥ १२ ॥
धूर्त्तोऽपस्माररोगीस्यात्सतत्पापविशुद्धये ।
ब्रह्मकूर्चत्रयंकृत्वा धेनुंदद्यात्सदक्षिणाम् ॥ १३ ॥
शूलीपरोपतापेन जायतेतत्प्रमोचने ।
सोऽन्नदानंप्रकुर्वीत तथारुद्रंजपेन्नरः ॥ १४ ॥
दावाग्निदायकश्चैव रक्तातीसारवान्भवेत् ।
तेनोदपानंकर्त्तव्यं रोपणीयस्तथावटः ॥ १५ ॥
सुरालयेजलेवापि सकृद्विष्ठांकरोतियः ।

करने से अजीर्ण रोगी होता है। वह विधिपूर्वक एक लाख आहुति गायत्री से घी मिले तिलों का होम करे ॥९॥ द्रव्य नाम धन सम्पत्ति अच्छी होने पर भी निकृष्ट अन्न का दान करने वाला मन्दाग्नि रोग युक्त होता है वह तीन प्राजापत्य व्रत करके सौ १०० ब्राह्मण जिमावे ॥१०॥ विष देने वाला जन्मान्तर में वमन रोगी होता है। वह दूध देती हुई दश गौओं का दान करे। मार्ग को नष्ट करने वाला पगों में रोगी होता है वह घोड़े का दान करे ॥ ११ ॥ चुगली निन्दा करनेवाला नरक भोग के अन्त में श्वास कास (दमा) का रोगी होता है उसको एक मन भर ४० सेर घी का दान करना चाहिये ॥१२॥ जुआ खेलने वाला मृगी रोग युक्त होता है वह उस पाप की शुद्धि के लिये पराशरस्मृति के ११वें अ० में कहे तीन ब्रह्मकूर्च व्रत करके दक्षिणा सहित दूध देने वाली गौ का दान करे ॥ १३ ॥ अन्यों को दुःख देने वाला जन्मान्तर में शूल रोग युक्त होता है वह उस को छुड़ाने के लिये अन्न का दान और रुद्री का पाठ करे ॥ १४ ॥ वन में आग लगाने वाला रक्तातीसार (रुधिर के दस्त) रोग युक्त होता है वह वटका वृक्ष लगावे और प्याऊ बैठावे ॥ १५ ॥ देव मन्दिर में वा जलाशय में एक वार भी

गुदरोगोभवेत्तस्य पापरूपःसुदारुणः ॥ १६ ॥
मासंसुरार्चनेनैव गोदानद्वितयेनतु ।
प्राजापत्येनचैकेन शाम्यन्तिगुदजारुजः ॥ १७ ॥
गर्भस्तम्भकरीनारी काकवन्ध्याप्रजायते ।
तथाकार्यंप्रयत्नेन गोदानंविधिपूर्वकम् ॥ १८ ॥
गर्भपातनजारोगा यकृत्प्लीहजलोदराः ।
तेषांप्रशमनार्थाय प्रायश्चित्तमिदंस्मृतम् ॥ १९ ॥
एतेषुदद्याद्विप्राय जलधेनुंविधानतः ।
सुवर्णरूप्यताम्राणां पलत्रयसमन्विताम् ॥ २० ॥
प्रतिमाभङ्गकारीच व्रणकायःप्रजायते ।
संवत्सरत्रयंसिंचेदश्वत्थंप्रतिवासरम् ॥ २१ ॥
उद्वाहयेत्तमश्वत्थं स्वगृह्योक्तविधानतः ।
तत्रसंस्थापयेद्देवं विघ्नराजंसुपूजितम् ॥ २२ ॥
दुष्टवादीखण्डितःस्यात्सवैदद्याद्द्विजातये ।

जो मल मूत्र त्याग करे उस के गुदेन्द्रिय में पाप रूप भयङ्कर रोग [illegible]
॥ १६ ॥ एक महीने तक देवता का पूजन करने, दो गौ देने, और एक
पत्य व्रत करने से गुदा के रोग शान्त होते हैं ॥ १७ ॥ गर्भस्थिति को
वाली स्त्री काक वन्ध्या होती है। उस को यत्न के साथ विधिपूर्वक
करने चाहिये ॥ १८ ॥ गर्भपात कराने से यकृत्-प्लीह-जलोदर रोग
उन की शान्ति के लिये आगे प्रायश्चित्त यह कहते हैं कि ॥१९॥ इन यकृत
रोगों की शान्ति के लिये चार २ तोला सुवर्ण, चांदी और तांबा
विधि पूर्वक जल धेनु ब्राह्मण को देवे ॥ २० ॥ प्रतिमा को तोड़ने
शरीर में अधिकांश फोड़ा फुंसी होते हैं वह पुरुष तीन वर्ष तक प्रति
पीपल वृक्ष के मूल में जल दिया करे ॥ २१ ॥ और अपने गृह्यसूत्रोक्त
से उस पीपल का विवाह करे। तथा उस पीपल के नीचे विघ्नों के
गणेश जी देवता का स्थापन करके पूजन करे ॥ २२ ॥ दुष्ट वचन बोलने
खण्डित (अङ्गहीन) होता है। वह दो घड़े दूध सहित आठ तोला

रूप्यंपलद्वयंदुग्धं घटत्रयसमन्वितम् ॥ २३ ॥
खल्वाटःपरनिन्दायां धेनुंदद्यात्सकाञ्चनाम् ।
परोपहासकृत्काणः सगांदद्यात्समौक्तिकाम् ॥ २४ ॥
सभायांपक्षपातीच जायतेपक्षघातवान् ।
निष्कत्रयमितंहेम सदद्यात्सत्यवर्त्तिनाम् ॥ २५ ॥
इति शातातपीये धर्मशास्त्रेकर्मविपाके प्रकीर्णप्रा-
यश्चित्तं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥
कुष्ठीनरकस्यान्ते जायतेविप्रहेमहृत् ।
सतुस्वर्णशतंदद्यात्कृत्वाचान्द्रायणत्रयम् ॥ १ ॥
औदुम्बरीताम्रचौरो नरकान्तेप्रजायते ।
प्राजापत्यंसकृत्वैवं ताम्रंपलशतंदिशेत् ॥ २ ॥
कांस्यहारीचभवति पुण्डरीकसमन्वितः ।
कांस्यंपलशतंदद्यादुपोष्यदिवसंनरः ॥ ३ ॥
रीतिहृत्पिङ्गलाक्षःस्यादुपोष्यहरिवासरम् ।

[illegible] ब्राह्मण को दान देवे ॥ २३ ॥ अन्य की निन्दा करने पर गञ्जा [illegible] सुवर्ण सहित दूध वाली गौ का दान करे । अन्यों का उपहास ([illegible]) करने वाला काणा (एकाक्ष) होता है वह मोतियों सहित गौ दान करे ॥ २४ ॥ सभा में पक्षपात करने वाला [illegible] है । वह सत्य के आचरणी सुपात्र ब्राह्मणों को तीन [illegible] करे ॥ २५ ॥

यह शातातपीय धर्मशास्त्र के कर्मविपाक विषय में निश्चित प्राय-
श्चित्त वर्णन तीसरा अध्याय पूरा हुआ ॥ ३ ॥

ब्राह्मण का सुवर्ण चुराने वाला नरक भोग के अन्त में [illegible] होता है । वह तीन चान्द्रायण व्रत करके भी [illegible] करे ॥ १ ॥ तांबे को चुराने वाला नरक भोग के अन्त में [illegible] है । वह प्राजापत्य व्रत करके सौ पल तांबे [illegible] दान करे [illegible] वाला पुण्डरीक रोग युक्त होता है वह एक दिन [illegible] सौ पलों का दान करे ॥ ३ ॥ पीतल चुराने [illegible]

रीतिंपलशतंदद्यादलङ्कृत्यद्विजंशुभम् ॥ ४ ॥
मुक्ताहारीचपुरुषो जायतेपिङ्गमूर्द्धजः ।
मुक्ताफलशतंदद्यादुपोष्यसविधानतः ॥ ५ ॥
त्रपुहारीचपुरुषो जायतेनेत्ररोगवान् ।
उपोष्यदिवसंसोऽपि दद्यात्पलशतंत्रपु ॥ ६ ॥
सीसहारीचपुरुषो जायतेशीर्षरोगवान् ।
उपोष्यदिवसंदद्याद् घृतधेनुंविधानतः ॥ ७ ॥
दुग्धहारीचपुरुषो जायतेबहुमूत्रकः।
सदद्याद्दुग्धधेनुंच ब्राह्मणाययथाविधि॥ ८ ॥
दधिचौर्य्येणपुरुषो जायतेमदवान्यतः ।
दधिधेनुःप्रदातव्या तेनविप्रायशुद्धये ॥ ९ ॥
मधुचोरस्तुपुरुषो जायतेवस्तिरोगवान् ।
सदद्यान्मधुधेनुञ्च समुपोष्यद्विजातये ॥ १० ॥
इक्षोर्विकाररहारीच भवेदुदरगुल्मवान् ।

होता है। वह एकादशी के दिन उपवास करके पीतल के चार सेर पा
सुपात्र ब्राह्मण को वस्त्रादि सहित दान करे ॥ ४ ॥ मोती चुरानेवाल
पीले केशोंवाला होता है। वह एक दिन उपवास करके विधिपूर्वक
मोती का दान करे ॥ ५ ॥ रांगा का चुरानेवाला पुरुष नेत्र का रोगी
वह एक दिन उपवास करके चार सेर रांगे का दान करे ॥ ६ ॥ सीसे
रानेवाला शिर के रोग से युक्त होता है वह एक दिन उपवास करके
घृणत में रखकर विधिपूर्वक घी का दान करे ॥ ७ ॥ दूध चुरानेवाला
त्ररोग युक्त होता है वह विधिपूर्वक ब्राह्मण को दुग्ध धेनु का दान
दही चुराने से मनुष्य मस्त (मदयुक्त) होता है उसको अपनी शुद्धि
दधि धेनु का ब्राह्मण के लिये दान देना चाहिये ॥ ९ ॥ मधु चु
पुरुष वस्ति के रोग से युक्त होता है वह एक दिन उपवास करके
को मधु धेनु देवे ॥ १० ॥ ईख के विकार रस गुड़ आदि को चु

गुडधेनुःप्रदातव्या तेनतद्दोषशान्तये ॥ ११ ॥
लोहहारीचपुरुषो जायतेबर्वरोगवान् ।
लोहंपलशतंदद्यादुपोष्यसतुवासरम् ॥ १२ ॥
तैलचोरस्तुपुरुषोभवेत्कण्ड्वादिपीडितः ।
उपोष्यसतुविप्राय दद्यात्तैलघटद्वयम् ॥ १३ ॥
आमान्नहरणाच्चैव दन्तहीनःप्रजायते ।
सदद्यादश्विनौहैमनिष्कद्वयविनिर्मितौ ॥ १४ ॥
पक्वान्नहरणाच्चैव जिह्वारोगःप्रजायते ।
गायत्र्याःसजपेल्लक्षं दशांशंजुहुयात्तिलैः ॥ १५ ॥
फलहारीचपुरुषो जायतेव्रणिताङ्गुलिः ।
नानाफलानामयुतं सदद्याच्चद्विजन्मने ॥ १६ ॥
ताम्बूलहरणाच्चैव श्वेतौष्ठःसंप्रजायते ।
सदक्षिणांप्रदद्याच्च विद्रुमस्यद्वयंवरम् ॥ १७ ॥
शाकहारीचपुरुषो जायतेनीललोचनः ।

में गुल्मरोग युक्त होता है उसको अपने दोष की शान्ति के लिये गुड़ का दान करना चाहिये ॥ ११ ॥ लोहा चुरानेवाला पुरुष वर्वरोगवाला । है वह एक दिन उपवास करके चार सेर लोहे का दान करे ॥ १२ ॥ ते-रानेवाला पुरुष खुजली के रोगादि से पीड़ित होता है वह दिनभर उ-स करके दो घड़े तेल ब्राह्मण को दान करे ॥ १३॥ कच्चा अन्न चुरानेवाला ां से हीन होता है । वह आठ तोला सुवर्ण से अश्विनी कुमार देवों की मा बनाके दान करे ॥ १४ ॥ पकाया अन्न चुराने से जीभ में रोग होता है एक लाख गायत्री का जप करके घी युक्त तिलों से दशांश होम करे ॥१५॥ चुरानेवाला अंगुलियों में फोड़ा फुंसी युक्त होता है वह अनेक प्रकार के हजार फलों का दान ब्राह्मण को देवे ॥ १६ ॥ पान (ताम्बूल) चुराने से ओठोंवाला होता है वह दो उत्तम मूंगा (पवारी) दक्षिणा देवे ॥१७॥ शाक नेवाला पुरुष नीली आंखों से युक्त होता है । वह ब्राह्मण को दो महा-

ब्राह्मणायप्रदद्याद्वै महानीलमणिद्वयम् ॥ १८ ॥
कन्दमूलस्यहरणाद्द्रस्वपाणिःप्रजायते।
देवतायतनंकार्य्यमुद्यानंतेनशक्तितः ॥ १९ ॥
सौगन्धिकस्यहरणाद्दुर्गन्धाङ्गःप्रजायते।
सलक्षमेकंपद्मानां जुहुयाज्जातवेदसि ॥ २० ॥
दारुहारीचपुरुषः खिन्नपाणिःप्रजायते।
सदद्याद्विदुषेशुद्धौ काश्मीरजपलद्वयम् ॥ २१ ॥
विद्यापुस्तकहारीच किलमूकःप्रजायते।
न्यायेतिहासंदद्यात्स ब्राह्मणायसदक्षिणन् ॥ २२
वस्त्रहारीभवेत्कुष्ठी संप्रदद्यात्प्रजापतिम्।
हेमनिष्कमितंचैव वस्त्रयुग्मंद्विजातये ॥ २३ ॥
ऊर्णाहारीलोमशःस्यात् सदद्यात्कंवलान्वितम्।
स्वर्णनिष्कमितंहेम वन्हिंदद्याद्द्विजातये ॥ २४ ॥
पट्टसूत्रस्यहरणान्निर्लोमाजायतेनरः।

नील मणि दक्षिणा में देवे ॥ १८ ॥ कन्द तथा मूलों के चुराने पर छोटे वाला होता है उसको यथाशक्ति देव मन्दिर और बगीचा लगवाना ये ॥१९॥ सुगन्धि की चोरी करने से दुर्गन्ध अङ्गों से युक्त होता है। लाख कमलों का अग्नि में होम करे ॥ २० ॥ काष्ठ की चोरी करनेवाले में खेद हुआ करता है वह विद्वान् को आठ तोला मणि हीरादि का ॥ २१ ॥ विद्या के पुस्तक को चुरानेवाला निश्चयकर मूक (गूंगा) वह न्याय और इतिहास के पुस्तकों का दक्षिणा सहित दान करे ॥ २ चुरानेवाला कुष्ठरोगी होता है वह चार तोला सुवर्ण से प्रजापति की बनाकर दो वस्त्रों सहित ब्राह्मण को दान करे ॥ २३ ॥ ऊन चुराने वा रीर पर बहुत रोम युक्त होता है वह चार तोले सुवर्ण से अग्नि दे प्रतिमा बनाकर एक कम्बल सहित ब्राह्मण को दान देवे ॥ २४ ॥ वस्त्र चुराने से मनुष्य सर्वथा लोमों से रहित होता है वह अपनी

तेनधेनुःप्रदातव्या विशुद्ध्यर्थंद्विजन्मने ॥ २५ ॥
औषधस्यापहरणे सूर्यावर्त्तःप्रजायते ।
सूर्यायार्घ्यःप्रदातव्यो माषंदेयंचकाञ्चनम् ॥ २६ ॥
रक्तवस्त्रप्रवालादि हारीस्याद्रक्तवातवान् ।
सवस्त्रांमहिषींदद्यान्मणिरागसमन्विताम् ॥ २७ ॥
विप्ररत्नापहारीचाप्यनपत्यःप्रजायते ।
तेनकार्य्यंविशुद्ध्यर्थं महारुद्रजपादिकम् ॥ २८ ॥
मृतवत्सोदितःसर्वो विधिरत्रविधीयते ।
दशांशहोमःकर्त्तव्यः पालाशेनयथाविधि ॥ २९ ॥
अनड्वान्वस्त्रसंयुक्तः पलार्द्धार्द्धंचकाञ्चनम् ।
निर्धनेनप्रकर्त्तव्यं द्विजस्यमुच्यतेक्षणात् ॥ ३० ॥
ब्राह्मणस्यधनंलोभाद्योनार्पयतिमूढधीः ।
निर्वंशोजायतेतस्य दद्याद्दशपयस्विनीः ॥ ३१ ॥

से ब्राह्मण को गौ का दान देवे ॥ २५ ॥ औषधों के चुराने पर सूर्यावर्त्त नाम सिर के रोगसे युक्त होता है वह सूर्यनारायण को नित्य अर्घ्य दिया और एक माषा सुवर्ण का दान करे ॥२६॥ वस्त्र और मूंगादि [illegible] पदार्थों चुरानेवाला वातरक्त रोग युक्त होता है वह रक्तमणि और [illegible] सहित [illegible] का दान करे ॥ २७ ॥ ब्राह्मण के रत्न (उत्तम) पदार्थों को चुरानेवाला [illegible] हीन निर्वंशी होता है उसको अपनी शुद्धि के लिये महारुद्र ([illegible] [illegible] रुद्री के पाठ) करने चाहिये ॥२८॥ जिसके पुत्र मर २ जाते हैं उनके [illegible] जो श्लोक ३० से ४१ तक अ० २ में विधान कह चुके हैं यहां सब यहां और ढांककी समिधाओं को घृताक्त कर २ उनसे दशांश होम करे [illegible] और [illegible] मनुष्य निर्धन हो तो एक तोला सुवर्ण और वस्त्र सहित [illegible] दान करे तो ब्राह्मण के अपराध से मुक्त हो जाता है [illegible] [illegible] घर में रक्खे ब्राह्मण के धनको लोभ से [illegible] है वह [illegible] [illegible] दूध देती हुई दश गौओं का [illegible] को दान देवे [illegible]

देवस्वहरणाच्चैव जायतेविविधोज्वरः ।
ज्वरोमहाज्वरश्चैव रौद्रोवैष्णवएवच ॥ ३२ ॥
ज्वरेरौद्रंजपेत्कर्णे महारुद्रंमहाज्वरे ।
अतिरौद्रंजपेद्रौद्रे वैष्णवेतद्द्वयंजपेत् ॥ ३३ ॥
नानाविधद्रव्यचौरो जायतेग्रहणीयुतः ।
तेनान्नोदकवस्त्राणि हेमदेयंचशक्तितः ॥ ३४ ॥
मापतिललोहहारी गजचर्माप्रजायते ।
मापद्वयमितांदद्याद् धेनुंद्विपतिलान्विताम् ॥ ३५ ॥
इति शातातपीये धर्मशास्त्रे कर्मविपाके स्तेयप्रायश्चि
नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥
मातृगामीभवेद्यस्तु लिङ्गंतस्यविनश्यति ।
चाण्डालीगमनेचैव हीनकोशःप्रजायते ॥ १ ॥
तस्यप्रतिक्रियांकर्त्तुं कुम्भमुत्तरतोन्यसेत् ।

देव पूजा सम्बन्धी धनके चुरानेसे रौद्र ज्वर, वैष्णवज्वर, इत्यादि अनेक प्र
का ज्वर अपराधी को होता है ॥ ३२ ॥ साधारण ज्वर में अपराधी के लि
रुद्री के ११ पाठ, महाज्वर में महारुद्र (रुद्री के १२१ पाठ) रौद्रज्वर में अति
(रुद्री के १३३१ पाठ) और वैष्णवज्वर में महारुद्र अतिरुद्र दोनों का अनु
करावे । पीछे तदनुसार दशांश का होम करायाजाय ॥ ३३ ॥ अनेक प्रका
द्रव्यों को चुरानेवाला संग्रहणीरोग युक्त होताहै उसको अन्न, जल, वस्त्र
सुवर्ण का यथाशक्ति दान करना चाहिये ॥ ३४ ॥ उड़द, तिल और लोहे
चुरानेवाला हाथी के तुल्य चर्म रोगवाला होता है वह दो मासे सुवर्ण की
को हाथी से स्पर्श कराये तिलों सहित दान करे ॥ ३५ ॥

यह शातातपीय धर्मशास्त्र के कर्मविपाक विषय में चोरी का
प्रायश्चित्तरूप चतुर्थोऽध्याय पूरा हुआ ॥

माता से गमन करनेवाले का नरक भोगके अन्त में होनेवाले मनुष्य
में लिङ्गेन्द्रिय नष्ट होजाता है । और चाण्डाली से गमन करने पर अण्डकोश
से हीन उत्पन्न होता है ॥ १ ॥ उस पाप की निवृत्ति के लिये पूजन

कृष्णवस्त्रसमाच्छन्नं कृष्णमाल्यविभूषितम् ॥ २ ॥
तस्योपरिन्यसेद्देवं कांस्यपात्रेधनेश्वरम् ।
सुवर्णनिष्कपट्केन निर्मितंनरवाहनम् ॥ ३ ॥
यजेत्पुरुषसूक्तेन धनदंविश्वरूपिणम् ।
अथर्ववेदविद्विप्रो ह्याथर्वणंसमाचरेत् ॥ ४ ॥
सुवर्णपुत्तिकांकृत्वा निष्कविंशतिसंख्यया ।
दद्याद्विप्रायसंपूज्य निष्पापोऽहमितिब्रुवन् ॥ ५ ॥
निधीनामधिपोदेवः शंकरस्यप्रियस्सखा ।
सौम्याशाधिपतिःश्रीमान् ममपापंव्यपोहतु ॥ ६ ॥
इमंमन्त्रंसमुच्चार्य्य आचार्य्याययथाविधि ।
दद्याद्देवंहीनकोशो लिङ्गनाशेविशुद्धये ॥ ७ ॥
गुरुजायाभिगमनान्मूत्रकृच्छ्रःप्रजायते ।
तेनापिनिष्कृतिःकार्य्या शास्त्रदृष्टेनकर्म्मणा ॥ ८ ॥

के उत्तरभाग में एक कलश स्थापित करे उसको कालेवस्त्र और काले फूलों की माला से शोभित करे ॥२॥ उस कलश के समीप में एक कांसे के पात्र में कुबेर देवता की प्रतिमा चौबीस तोला सुवर्ण की बनवाके (जो मनुष्य पर सवार हो ऐसी प्रतिमाको) स्थापित करे ॥३॥ फिर सर्वरूप कुबेर देवता का पुरुष सूक्त से पूजन करे। और अथर्ववेदी ब्राह्मण अथर्व का पाठ भी वहीं करे ॥४॥ फिर अस्सी तोला सुवर्ण की एक पुतली(कुबेर देव की प्रतिमा) बनाकर उसका सम्यक् पूजन करके 'मैं निष्पाप होऊं' ऐसा कहता हुआ निम्न रीति से ब्राह्मण को दान कर देवे ॥५॥ सब खजानों के मालिक, शंकर भगवान् के प्रियमित्र, उत्तर दिशा के स्वामी श्रीमान् कुबेरदेव मेरे पाप को नष्ट करें ॥६॥ अण्डकोशों से हीन होने वा लिङ्गेन्द्रिय हीन होने के अपराध से मुक्त होने के लिये (निधीनामधि- पो०) इस मन्त्र का उच्चारण करके देव प्रतिमा का विधि पूर्वक आचार्य को दान कर देवे ॥ ७ ॥ गुरुपत्नी के साथ गमन करने से मूत्र कृच्छ्र रोग से युक्त होता है। इस को धर्म शास्त्रोक्त कर्म द्वारा प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ ८ ॥

स्थापयेत्कुम्भमेकन्तु पश्चिमायांशुभेदिने।
नीलवस्त्रसमाच्छन्नं नीलमाल्यविभूषितम् ॥ ९ ॥
तस्योपरिन्यसेद्देवं ताम्रपात्रेप्रचेतसम् ।
सुवर्णनिष्कषट्केन निर्म्मितंयादसाम्पतिम् ॥ १० ॥
यजेत्पुरुषसूक्तेन वरुणंविश्वरूपिणम् ।
सामविद्ब्राह्मणस्तत्र सामवेदंसमाचरेत् ॥ ११ ॥
सुवर्णपुत्तिकांकृत्वा निष्कविंशतिसंख्यया।
दद्याद्विप्रायसंपूज्य निष्पापोऽहमितिब्रुवन् ॥ १२ ॥
यादसामधिपोदेवो विश्वेषामपिपावनः।
संसाराब्धौकर्णधारो वरुणःपावनोऽस्तुमे ॥ १३ ॥
इमंमन्त्रंसमुच्चार्य आचार्याययथाविधि।
दद्याद्देवमलङ्कृत्य मूत्रकृच्छ्रप्रशान्तये ॥ १४ ॥
स्वसुतागमनेचैव रक्तकुष्ठंप्रजायते।
भगिनीगमनेचैव पीतकुष्ठंप्रजायते ॥ १५ ॥
तस्यप्रतिक्रियांकर्त्तुं पूर्वतःकलशंन्यसेत् ।

किसी शुभ दिन पूजन स्थान के पश्चिम-भाग में एक कलश नीले वस्त्र और नीले फूलों से शोभित करके स्थापित करे ॥ ९ ॥ उस कलश के ऊपर तांबे के पात्र में २४ तोला सुवर्ण से बनायी जल के अधिष्ठाता वरुण देवता की प्रतिमा स्थापित करे ॥ १० ॥ फिर विश्वरूपी वरुण देव का पुरुष सूक्त के मन्त्रों से पूजन करे और साथ ही सामवेदी ब्राह्मण सामगान करे ॥ ११ ॥ फिर अस्सी तोला सुवर्ण की प्रतिमा वरुण देवता की बनाके उस का सम्यक् पूजन करके (मैं निष्पाप हो जाऊं) ऐसा कहता हुआ निम्न रीति से ब्राह्मण गुरु को प्रतिमा का दान करे ॥ १२ ॥ सब को पवित्र करने वाले जल के अधिष्ठाता, संसार समुद्र से पार करने वाले (मल्लाह) वरुण देव मुझ को पवित्र करने वाले हों ॥ १३ ॥ इस मन्त्र का उच्चारण करके मूत्रकृच्छ्र की शान्ति के अर्थ पुष्पादि से भूषित देव प्रतिमा को विधि पूर्वक गुरु के लिये देवे ॥१४॥ अपनी पुत्री से गमन करने पर जन्मान्तर में रक्त कुष्ठी होता और भगिनी से गमन करने पर पीत कुष्ठी होता है ॥१५॥ उस का प्रायश्चित्त करने के लिये

पीतवस्त्रसमाच्छन्नं पीतमाल्यविभूषितम् ॥ १६ ॥
तस्योपरिन्यसेत्स्वर्ण पात्रेदेवंसुरेश्वरम् ।
सुवर्णनिष्कपट्केन निर्मितंवज्रधारिणम् ॥ १७ ॥
यजेत्पुरुषसूक्तेन वासवंविश्वरूपिणम् ।
यजुर्वेदंतत्रसाम ऋग्वेदंचसमापयेत् ॥ १८ ॥
सुवर्णपुत्तिकांकृत्वा सुवर्णदशकेनतु ।
दद्याद्विप्रायसंपूज्य निष्पापोऽहमितिब्रुवन् ॥ १९ ॥
देवानामधिपोदेवो वज्रीकुलिशकेतनः ।
शतयज्ञःसहस्राक्षः पापंममनिकृन्ततु ॥ २० ॥
इमंमन्त्रंसमुच्चार्य्य आचार्य्यायंयथाविधि ।
दद्याद्देवंसहस्राक्षं स्वपापस्यापनुत्तये ॥ २१ ॥
भ्रातृभार्याभिगमनाद् गलत्कुष्ठंप्रजायते ।
स्वयधूगमनेचैव कृष्णकुष्ठंप्रजायते ॥ २२ ॥
तेनकार्यंविशुद्ध्यर्थं प्रागुक्तस्यार्द्धमेवहि ।

पीले वस्त्र और पीली फूल मालाओं से भूषित एक कलश पूजन स्थान के मध्यभाग में स्थापित करे ॥१६॥ उस कलश के ऊपर सुवर्ण के पात्र में २४ तोला सुवर्ण से बनायी वज्रधारी इन्द्र देवता की प्रतिमा को स्थापित करे ॥१७॥ फिर विश्वरूपी इन्द्रदेव का पुरुष सूक्त से पूजन करे, साथ ही उस २ वेद के ज्ञाता ब्राह्मण लोग वहां ऋग्, यजुः-सामवेद का पाठ करें ॥ १८ ॥ और दश तोला सुवर्ण की एक प्रतिमा इन्द्रदेवता की बनाके 'मैं निष्पाप होऊं' ऐसा कहता हुआ वह प्रतिमा सम्यक् पूजन करके निम्न प्रकार आचार्य गुरु को देवे ॥ १९ ॥ देवों के स्वामी, सौ यज्ञ करने वाले, सहस्रों चक्षु वाले, वज्र चिह्न युक्त वज्रधारी इन्द्रदेव मेरे पाप को नष्ट करें ॥ २० ॥ अपने पाप के नाशार्थ इस मन्त्र का उच्चारण करके इन्द्रदेव की प्रतिमा विधि पूर्वक आचार्य को देवे ॥२१॥ भाई की पत्नी से गमन करे तो गलत्कुष्ठ और पुत्रवधू से गमन करे तो जन्मान्तर में काला कुष्ठ प्रकट होता है ॥ २२ ॥ उस की अपनी शुद्धि

दशांशहोमःसर्वत्र घृताक्तैःक्रियतेतिलैः ॥ २३ ॥
स्वाम्यङ्गनाभिगमनाज्जायतेदद्रुमण्डलम् ।
कृत्वालोहमयींधेनुं पलषष्टिप्रमाणतः ॥ २४ ॥
कार्पासभाण्डसंयुक्तां कांस्यदोहांसवत्सिकाम् ।
दद्याद्विप्रायविधिवदिमंमन्त्रमुदीरयेत् ।
सुरभिर्वैष्णवीमाता ममपापंव्यपोहतु ॥ २५ ॥
विश्वस्तभार्यागमने गजचर्माप्रजायते ।
तस्यपापविनाशाय प्रायश्चित्तंविधीयते ॥ २६ ॥
कृत्वारौप्यमयींधेनुं निष्कृतिंविश्वसंख्यया ।
तस्यपापस्यनाशाय छत्रोपानहसंयुताम् ॥ २७ ॥
मातुःसपत्निगमने जायतेचाश्मरीगदः ।
सतुपापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तंसमाचरेत ॥ २८ ॥
दद्याद्विप्रायविदुषे मधुधेनुंयथोदितम् ।

के लिये पूर्व कहे पुत्री गमन के प्रायश्चित्त से आधा करना चाहिये और सर्व
जप पाठों में घृत मिले तिलों से दशांश होम तो करना ही चाहिये ॥ स्व
स्वामी (मालिक) की स्त्री से सेवक गमन करे तो जन्मान्तर में मण्डलाकार
(चखन्दोंवाली) दाद होती है । वह तीन सेर लोहे की गौ बनवाके, बिनौले
यत्तन, कांसे की दोहनी और बछड़े सहित गौ (सुरभि०) मन्त्रोच्चारण पूर्वक
विधि के साथ ब्राह्मण को दान देवे कि विष्णु देवता सम्बन्धिनी सुरभि गौ
माता मेरे पाप को नष्ट करे ॥२४॥२५॥ अपना विश्वास रखनेवाले की पत्नी से ग
मन करे तो जन्मान्तर में हाथी के से चर्मवाला होताहै । उस पाप का प्राय
श्चित्त यह है कि॥२६॥ नौ तोला चांदी की प्रायश्चित्त रूप गौ बनाकर उस पाप
के नाशार्थ छाता और जूता सहित दान करे ॥२७॥ अपनी सौतेली माता से
गमन करे तो जन्मान्तर में मृगीरोग होता है । वह पुरुष उसका निम्न प्रा-
यश्चित्त करे ॥ २८ ॥ विद्वान् ब्राह्मण को शहद की गौ शास्त्रविध्यनुकूल शा

तिलद्रोणशतंचैव हिरण्येनसमन्वितम् ॥ २९ ॥
पितृष्वस्त्रभिगमनाद्दक्षिणांशव्रणीभवेत् ।
तेनापिनिष्कृतिःकार्या अजादानेनशक्तितः ॥ ३० ॥
मातुलान्यांतुगमने पृष्ठकुब्जःप्रजायते ।
कृष्णाजिनप्रदानेन प्रायश्चित्तंसमाचरेत् ॥ ३१ ॥
मातृष्वस्त्रभिगमने वामाङ्गेव्रणवान्भवेत् ।
तेनापिनिष्कृतिःकार्या सम्यग्दासीप्रदानतः ॥ ३२ ॥
पितृव्यपत्नीगमनात्कटिकुण्ठंप्रजायते ।
निष्कृतिस्तेनकर्त्तव्या कन्यादानेनयत्नतः ॥ ३३ ॥
यदगम्यासुसंयोगात्प्रायश्चित्तमुदीरितम् ।
तदेवमुनिभिःप्रोक्तं नियतंतत्सुतास्वपि ॥ ३४ ॥
मृतभार्याभिगमने मृतभार्यःप्रजायते ।
तत्पातकविशुद्ध्यर्थं द्विजमेकंविवाहयेत् ॥ ३५ ॥
सगोत्रस्त्रीप्रसंगेन जायतेचभगन्दरः ।

ौर सुवर्ण के सहित २५ मन तिलों का दान करे ॥ २९ ॥ फूफी (बुआ) य गमन करे तो शरीर के दहिने भाग में फोड़े फुंसी होते हैं। वह य-क बकरियों के दान द्वारा प्रायश्चित्त करे ॥३०॥ मामी के साथ गमन करे तो पीठआला होता वह कृष्ण मृगचर्मों के दान द्वारा प्रायश्चित्त करे॥३१॥ मौसी गमन करे तो शरीर के वामभाग में फोड़ा फुंसीयुक्त होता है वह दासी द्वारा प्रायश्चित्त करे ॥ ३२ ॥ चाची के साथ गमन करे तो कटि भाग रोगयुक्त होता है वह कन्याओं के दान द्वारा प्रायश्चित्त करे ॥ ३३ ॥ अगम्यास्त्रियोंके साथ संग करने से जोर प्रायश्चित्त कहा गया है। उनर स्त्रियों त्रयोंके साथ गमन करने पर भी ऋषियों ने यहीर प्रायश्चित कहा है॥३४॥ रुप की स्त्री के साथ गमन करे तो जन्मान्तर में उसकी भी पत्नी मर जा-ती है। उस पाप की शुद्धि के लिये एक ब्राह्मण का विवाह करावे ॥३५॥ गोत्र की स्त्री से गमन करे तो जन्मान्तर में भगन्दर रोग होता है।

सैनार्पिनिष्कृतिःकार्या महिषीदानयत्नतः ॥ ३६ ॥
तपस्विनीप्रसंगेन प्रमेहोजायतेनरः ।
मासंरुद्रजपःकार्यो दद्याच्छक्त्याचकाञ्चनम् ॥ ३७ ॥
दीक्षितस्त्रीप्रसंगेन जायतेदुष्टरक्तरुक् ।
सपातकविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यानिषट्चरेत् ॥ ३८ ॥
प्राणनाथंपरित्यज्य देवरंसेवतेध्रुवम् ।
गुदमध्येभवेद्व्याधी रशनावामदुःसहा ।
तयाकार्यंप्रयत्नेन गोदानंहेमसम्मितम् ॥ ३९ ॥
गोविन्दगोपीजनवल्लभेशः कंसासुरघ्नस्त्रिशशेशवन्द्यः ।
गोदानतृप्तःकुरुतेदयालुरीशाननाथादपितारिवर्गः ॥ ४० ॥
श्रोत्रियस्त्रीप्रसंगेन जायतेनासिकाव्रणी ।
आचरेत्सविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यचतुष्टयम् ॥ ४१ ॥
स्वजातिजायागमने जायतेहृदयव्रणी ।
तत्पापस्यविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ४२ ॥
धात्र्युत्तरस्त्रीगमनाज्जायतेमस्तकव्रणः ।

वह भैंसियों के यथाशक्ति दान द्वारा प्रायश्चित्त करे ॥३६॥ तपस्विनी स्त्री के साथ गमन करे तो प्रमेह रोग युक्त होता है वह एक मास तक रुद्री का पाठ, दशांश होम और यथाशक्ति सुवर्ण का दान करे ॥३७॥ दीक्षित पुरुष की स्त्री से संग करे तो रक्तविकार रोगयुक्त होता है वह छः प्राजापत्य व्रत प्रायश्चित्त करे ॥३८॥ जो स्त्री अपने पति को छोड़के देवर से संग करती है उस के गुदेन्द्रिय में रोग होता और असह्यपीड़ा होती है वह स्त्री बड़े यत्न से सुवर्ण सहित गोदान बारह करे ॥३९॥ गोविन्द गोपीजनों के प्रियस्वामी कंसासुर के हन्ता, देवताओं के स्वामी इन्द्र के भी पूजनीय, ईशान दिशा के स्वामी महादेव जी से भी, विशेषकर शत्रु का वर्ग तारनेवाला है ऐसे कृष्ण भगवान् गोदान से तृप्त हुए प्रायश्चित्ती पर दयाकरते हैं ॥ ४० ॥ वेदपाठी की स्त्री के साथ संग करे तो प्रायः नासिका में फोड़ा फुंसी होते हैं । वह अपनी शुद्धि के लिये चार प्राजापत्य व्रत करे ॥४१॥ अपने वर्ण की स्त्री से संग करे तो हृदय में प्रायः फोड़ा फुंसी होते हैं । उस पाप की शुद्धि के लिये दो प्राजापत्य व्रत करे ॥ ४२ ॥ धायी के साथ गमन

सपातकविशुद्धयर्थं प्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ ४३ ॥
पशुयोनौचगमने मूत्राघातःप्रजायते ।
तिलपात्रद्वयंचैव दद्यादात्मविशुद्धये ॥ ४४ ॥
अश्वयोनौचगमनाद्भुजस्तम्भःप्रजायते ।
सहस्रकलशैःस्नानं मासंकुर्याच्छिवस्यच ॥ ४५ ॥
आसुरीअलसीदासी चर्मकारीचनर्त्तकी ।
रजकीभिःसमंभोगात्पतन्तिपितृभिःसह ॥ ४६ ॥
उपोष्यैकादशींशुद्धां जागरंकारयेन्निशि ।
तस्यपापविशुद्धयर्थं दद्यादेकांपयस्विनीम् ॥ ४७ ॥
एतेदोषानराणांस्युर्नरकान्तेनसंशयः ।
स्त्रीणामपिभवन्त्येते तत्तत्पुरुषसंगमात् ॥ ४८ ॥
इति शातातपीये धर्मशास्त्रे कर्मविपाके अगम्यागमन
प्रायश्चित्तं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

तो मस्तक में प्रायः फोड़ा फुंसी होतेहैं यह उस पातक की शुद्धि के लिये प्राजापत्य व्रत करे ॥ ४३ ॥ पशुजाति के संग मैथुन करने से मूत्राघात रोग ा है। उसकी शुद्धि के लिये तिलों से भरके दो पात्र दान करे ॥ ४४ ॥ ी के साथ मैथुन करने से भुजा जकड़ने का रोग होताहै। इसके लिये एक ने तक एक हजार कलशों से शिवजी को स्नान करावे ॥ ४५ ॥ आसुरी (रा-) अलसी (आलसिनी) दासी, चर्मकारी, नटिनी, या वेश्या, और धो- ि इन के साथ संग करने से अपने पितरों के सहित पतित हो जाते हैं ॥ इस के लिये जो अन्य तिथि से विद्ध न हो ऐसी शुद्ध एकादशी को ास करके रात भर जागरण करे और उस पाप से शुद्ध होने के लिये एक ेली गौ का दान करे ॥ ४७ ॥ इस अध्याय में कहे दोष नरक भोग के ें इन २ पापोंसे पुरुषों के निस्सन्देह होते ही हैं । और जिन २ स्त्रियों ा से पुरुषों को दोष दिखाए हैं उन्हीं २ के पुरुषों से संग करने वाली ें को भी वे २ पाप दोष लगते हैं इस से उन को भी उक्त प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ ४८ ॥

यह शातातपीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में कर्मविपाक सम्बन्धी अग- मन प्रायश्चित्तरूप पांचवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ५ ॥

अश्वशूकरशृङ्ग्यद्रि द्रुमादिशकटेनच ।
भृग्वग्निदारुशस्त्राश्मविषोद्बन्धनजैर्मृताः ॥ १ ॥
व्याघ्रादिगजभूपालचोरवैरिवृकाहताः ।
काष्ठशल्यमृतायेच शौचसंस्कारवर्जिताः ॥ २ ॥
विसूचिकान्नकवलदवातीसारतोमृताः ।
डाकिन्यादिग्रहैर्ग्रस्ता विद्युत्पातहताश्चये ॥ ३ ॥
अस्पृश्याअपवित्राश्च पतिताःपुत्रवर्जिताः ।
पञ्चत्रिंशत्प्रकारैश्च नाप्नुवन्तिगतिंमृताः ॥ ४ ॥
पित्राद्याःपिण्डभाजःस्युस्त्रयोलेपभुजस्तथा ।
ततोनान्दीमुखाःप्रोक्तास्त्रयोप्यश्रुमुखास्त्रयः ॥ ५ ॥
द्वादशैतेपितृगणास्तर्पिताःसन्ततिप्रदाः ।
गतिहीनाःसुतादीनां सन्ततिंनाशयन्तिते ॥ ६ ॥
दशव्याघ्रादिनिहता गर्भंनिघ्नन्त्यमीक्रमात् ।

घोड़ा, सुवर, सींगों वाले पशुओं ने मारे, पर्वत तथा वृक्षादि से गिरे गाढ़ी से पिचल के मरे, पर्वत की शिला, अग्नि, लकड़ी, शस्त्र, पत्थर, वि... और फांसी से मरे ॥ १ ॥ वाघ आदि, हाथी, राजा, चोर, शत्रु, भेड़िया, ... ने जिन को मारा, काष्ठ वा कांटे से घाव हो कर मरे जो शुद्धि तथा उप... यनादि संस्कारों से हीन रहते हुए मरे हों ॥ २ ॥ हैजा द्वारा, अन्न से, ... में ग्रास अटक जाने से, वन के अग्नि से, अतीसार (अधिक दस्तों के होने ... डाकिनी आदि से, ग्रहों (राहु आदि) से ग्रस्त (पकड़े हुए), बिजली प... से, ॥ ३ ॥ स्पर्श न करने योग्य वा अपवित्र दशा (विष्ठा मूत्रादि में पड़े ... में, पतित होके और पुत्रहीन हो कर जो मरे हों इन पैंतीस ३५ प्रकारों ... मरे मनुष्यों की अच्छी गति नहीं होती है ॥ ४ ॥ पितादि तीन (पिता, पि... तामह, प्रपितामह,) पिण्डों के भागी, उन से पहिले तीन लेप भागी, उन ... पहिले तीन नान्दीमुखश्राद्धभागी और उन से भी पहिले तीन अश्रुमुख ... कहाते हैं ॥५॥ ये बारह पितृगण श्राद्ध तर्पणादि से तृप्त हुये पुत्रादि की सन्त... बढ़ाते हैं । और श्राद्धादि न किये जावें तो वे ही पुत्रादि की सन्तति ... नष्ट करते हैं ॥ ६ ॥ इसी अ० में कहे व्याघ्रादि दश के द्वारा मरे हुए ...

द्वादशाख्यादिनिहता आकर्षन्तिचबालकम् ॥ ७ ॥
विषादिनिहताघ्नन्ति दशसुद्वादशस्वपि ।
वर्षैकबालकंकुर्यादनपत्योऽनपत्यताम् ॥ ८ ॥
व्याघ्रेणहन्यतेजन्तुः कुमारीगमनेनच ।
विषदश्चैवसर्पेण गजेननृपदुःखकृत् ॥ ९ ॥
राज्ञाराजकुमारघ्नश्चोरेणपशुहिंसकः ।
वैरिणामित्रभेदीच वकवृत्तिर्वृकेणतु ॥ १० ॥
गुरुघातीचशय्यायां मत्सरीशौचवर्जितः ।
द्रोहीसंस्काररहितः शुनानिःक्षेपहारकः ॥ ११ ॥
नरोविहन्यतेऽरण्ये शूकरेणचपाशिकः ।
कृमिभिःकृत्तवासाश्च कृमिणाचनिकृन्तनः ॥ १२ ॥
शृङ्गिणाशङ्करद्रोही शकटेनचसूचकः ।

...म से गर्भ को नष्ट करते हैं। और शस्त्रादि १२ से मरेहुए बालक को गर्भ में ही खींचते (गर्भ को गिरा देते) हैं ॥ ७ ॥ विष खाने आदि से मरे दश तथा बारह वर्ष के बालक को भी नष्ट करते हैं। और निर्वंशी मरे पितर अपने २ कुल के एक वर्ष के बालक को नष्ट करते वा अन्यों को भी निर्वंश कर देते हैं ॥ ८ ॥ कुमारी कन्या से जो संग करता है वह जन्मान्तर में व्याघ्रसे मारा जाता है। विष देने वाला सांप से और राजा को दुःख देने वाला हाथी से मारा जाता है ॥ ९ ॥ राजकुमार को मार डालने वाला राजा की आज्ञा से, पशुहिंसक चोर से, मित्रों में फूट विरोध कराने वाला वैरी से, वकवृत्ति (अन्य का माल मारने में बगुला कासा ध्यान लगाने वाला) भेड़िया से मारा जाता है ॥१०॥ गुरु की हत्या करने वाला शय्या (खटिया) पर, मत्सरता करने वाला-अशुद्ध दशा में, द्रोह करने वाला-संस्कार हीन दशा में और धरोहर मारने वाला कुत्ते के काटने से मरता है ॥११ फांसी देने वाला-वन में सुअर से माराजाता, कपड़ा फाड़ने वाला-कीड़ों से मरता, गांठ काटने वाला कीड़े के काटने से मरता है ॥१२॥ शंकर भगवान् का द्रोही-सींग वाले से, निन्दक-गाड़ी से दबकर, भूमि चुराने वाला-पर्वत से गिर के, और पथ में हानि

भृगुणामेदिनीचौरो वन्हिनायज्ञहानिकृत् ॥ १३ ॥
दवेनदक्षिणाचोरः शस्त्रेणश्रुतिनिन्दकः ।
अश्मनाद्विजनिन्दाकृद्विषेणकुमतिप्रदः ॥ १४ ॥
उद्बन्धनेनहिंस्रःस्यात् सेतुभेदीजलेनतु ।
द्रुमेणराजदन्तहृदतिसारेणलोहहृत् ॥ १५ ॥
गोग्रासहृद्विषूचिकया कवलेनद्विजान्नहृत् ।
भ्रामेणराजपत्नीहृदतिसारेणानिष्क्रियः ॥ १६ ॥
शाकिन्याद्यैश्रम्रियते स्वदर्पात्कार्यकारकः ।
अनध्यायेप्यधीयानो म्रियतेविद्युतातथा ॥ १७ ॥
अस्पृश्योऽस्पृश्यसंगीच वान्तमाश्रित्यशास्त्रहृत् ।
पतितोऽपत्यविक्रेताऽनपत्योद्विजवस्त्रहृत् ॥ १८ ॥
विक्रेताघातकश्चैव द्वावेतौतुल्यावृतौ ।
घातकश्चैवहत्यायां रोगिणारोगिणिचविक्रयी ॥ १९ ॥
अथतेपांक्रमेणैव प्रायश्चित्तंविधीयते ।

...रने वाला-अग्नि में जल कर मरता है ॥१३॥ दक्षिणा चुरानेवाला-
...ी, वेदनिन्दक-शस्त्र से, ब्राह्मणनिन्दक-पत्थर से, और बुरे काम
... वाला विष से मारा जाता है ॥ १४ ॥ हिंसक-फांसी से, बांध तो-
...ल में डूब के, हाथीदांत का चुराने वाला-वृक्ष से गिर के और
...ों का चोर-दस्त होने द्वारा मरताहै ॥१५॥ गौ का ग्रास (पहिली
... वाला-विसूचिका (हैजा) से, ब्राह्मणार्थ समर्पित भोजन का
...ने वाला-ग्रास अटकने से, राजपत्नी को भगा ले जाने वाला
...ौर निकम्मा-अतीसार (दस्तों के) रोग से मरता है ॥१६॥
...म करने वाला शाकिनी आदि लगने से मरता, अनध्याय के
...ाला विद्युत गिरने से मरता है ॥ १७ ॥ स्पर्श न करने योग्य
... (मलमूत्रादि से लिप्त) दशामें, शास्त्र को चुराने वाला-
...ाह्मण के वस्त्र चुराने वाला- निर्वंशी सन्तान हीन होकर
...न्तान बेंचने और मार डालने वाला दोनों तुल्य अपराधी
...ा में और बेंचने वाला सन्तान स्वामी धनको भोगता हुआ
...ता है ॥ १९ ॥ अब इन घोड़े आदि से मरने वालों के

कारयेन्निष्कमात्रंतु पुरुषंप्रेतरूपिणम् ॥ २० ॥
चतुर्भुजंदण्डहस्तं महिषासनसंस्थितम् ।
पिष्टैःकृष्णतिलैःकुर्य्यात्पिण्डंप्रस्थप्रमाणतः ॥ २१ ॥
मध्वाज्यशर्करायुक्तं स्वर्णकुण्डलसंयुतम् ।
अकालमूलंकलशं पञ्चपल्लवसंयुतम् ॥ २२ ॥
कृष्णवस्त्रसमाच्छन्नं सर्वौषधिसमन्वितम् ।
तस्योपरिन्यसेद्देवं पात्रंधान्यफलैर्युतम् ॥ २३ ॥
सप्तधान्यन्तुसफलं तत्रतत्रांमुखंन्यसेत् ।
कुम्भोपरिचाविन्यस्य पूजयेत्प्रेतरूपिणम् ॥ २४ ॥
कुर्यात्पुरुषसूक्तेन प्रत्यहंदुग्धतर्पणम् ।
षडङ्गांश्चजपेद्रुद्रान् कलशेतत्रवेदवित् ॥ २५ ॥
यमसूक्तेनकुर्वीत यमपूजादिकंतथा ।
गामत्र्याश्चैवकर्तव्यो जपःस्वात्मविशुद्धये ॥ २६ ॥

उचित क्रम से ही कहते हैं कि घोड़े आदि अपमृत्यु से मरने पर प्रेतरूपी यम देव की चार तोला सुवर्ण की एक प्रतिमा बनावे उसमें चार भुजाहों हाथ में दण्ड हो, भैंसे पर सवार हो। फिर काले तिलों को पीस कर ढाईपाव का एक पिण्ड बनावे ॥ २१ ॥ उस पिण्ड में शहद घी और शक्कर भी मिली हो, सुवर्ण के कुण्डल भी उस पिण्ड पर धरे। जो तले में काला न हो ऐसे एक कलश को स्थापित करके उस पर पांच पल्लव (पत्ते) धरे ॥ २२ ॥ काले वस्त्र से उस कलश को ढांप कर सर्वौषध (सब जौ आदि) उस पर धरे। और जौ चांवलादि धान्य तथा फलों से भरके एक पात्र कलश के ऊपर धरके उस पर ऊपर लिखी यम देवता की मूर्त्ति को स्थापित करे ॥ २३ ॥ और ऋतु फलों सहित सात धान्य (सतनजा) वहां देवमूर्त्ति के सामने धरे। इस प्रकार कलश पर स्थापित किये प्रेतरूपी यमराज का निम्न रीति से पूजन करे ॥२४॥ अवश्य होके पुरुषसूक्त के मन्त्रों द्वारा दूध से प्रतिदिन यमराज का तर्पण करे अर्थात् मूर्त्ति पर प्रत्येक मन्त्रान्त में दूध चढाया करे और इन के साथ ही एक वेदपाठी ब्राह्मण कलश के समीप में षडङ्ग रुद्री का पाठ कियाकरे ॥२५॥ और वेदोक्त यमसूक्त से यमराज का नित्य पूजन करे और अपनी शुद्धि के लिये वहां कलश के समीप में गायत्री का जप भी करता कराता रहे ॥ २६ ॥

ग्रहशान्तिकपूर्वंच दशांशंजुहुयात्तिलैः ।
अज्ञातनामगोत्राय प्रेतायसतिलोदकम् ॥
प्रदद्यात्पितृतीर्थेन पिण्डंमन्त्रमुदीरयेत् ॥ २७ ॥
इमंतिलमयंपिण्डं मधुसर्पिःसमन्वितम् ।
ददामितस्मैप्रेताय यःपीडांकुरुतेमम ॥ २८ ॥
सजलान्कृष्णकलशांस्तिलपात्रसमन्वितान् ।
द्वादशप्रेतमुद्दिश्य दद्यादेकंचविष्णवे ॥ २९ ॥
ततोऽभिषिञ्चेदाचार्यो दम्पतीकलशोदकैः ॥
शुचिर्वरायुधधरो मन्त्रैर्वरुणदैवतैः ॥ ३० ॥
यजमानस्ततोदद्यादाचार्यायसदक्षिणाम् ।
ततोनारायणबलिः कर्तव्यःशास्त्रनिश्चयात् ॥ ३१ ॥
पसाधारणविधिरगतीनामुदाहृतः ।
शेषस्तुपुनर्ज्ञेयो व्याघ्रादिनिहतेष्वपि ॥ ३२ ॥
घ्रेणनिहतेप्रेते परकन्यांविवाहयेत् ।

न्ति पूर्वक घी मिले तिलों से दशांश होम करे और तिलों तथा
र्वोक्त तिलों के पिण्ड को (इमंतिल०) मन्त्र पढ़कर अपसव्य
कर अज्ञात नाम गोत्र वाले मृतपुरुष के नाम से पितृती
२७ ॥ शहद और घी से युक्त तिल स्वरूप इस पिण्ड को मैं
लिये देता हूं कि जो मुझ को पीड़ित करता है ॥ २८ ॥ जिन पर
एक २ पात्र रक्खा हो ऐसे जल से भरे काले रंगेहुए बारह क
श से दान करे। और एक कलश विष्णु के नाम से
र अच्छा शस्त्र धारण किये वा स्फय को हाथ में लिं
रूप यजमान स्त्री पुरुषों का कलश के जल से वरुणदेव
भिषेक करे ॥ ३० ॥ फिर यजमान दक्षिणा सहित यह
। तदनन्तर शास्त्र के निश्चय से नारायणबलि करे ॥
न होने वाले अपमृत्यु से मरों के लिये साधारण वि
व्याघ्रादि से मरे हुओं के विषय में भिन्न २ विशेष वि
घ्र से मरे प्रेत के निमित्त अन्य किसी की कन्या का विव

सर्पदंशे नागबलिर्देयःसर्वेषुकाञ्चनम् ॥ ३३ ॥
चतुर्निष्कमितंहेम गजंदद्याद्गजैर्हते ।
राज्ञाविनिहतेदद्यात्पुरुषन्तुहिरण्मयम् ॥ ३४ ॥
चौरेणनिहतेधेनुं वैरिणानिहतेवृषम् ।
वृकेणनिहतेदद्याद्यथाशक्तिचकाञ्चनम् ॥ ३५ ॥
शय्यामृतेप्रदातव्या शय्यातूलीसमन्विता ॥
निष्कमात्रंसुवर्णस्य विष्णुनासमधिष्ठिता ॥ ३६ ॥
शौचहीनेमृतेचैव द्विनिष्कस्वर्णजंहरिम् ।
संस्कारहीनेचमृते कुमारंचविवाहयेत् ॥ ३७ ॥
शुनाहतेचनिःक्षेपं स्थापयेन्निजशक्तितः ।
शूकरेणहतेदद्यान्महिषंदक्षिणान्वितम् ॥ ३८ ॥
कृमिभिश्चमृतेदद्याद् गोधूमान्नंद्विजातये ।
शृङ्गिणाचहतेदद्याद् वृषभंवस्त्रसंयुतम् ॥ ३९ ॥
शकटेनमृतेदद्याद् दव्यंसोपस्करान्वितम् ।

ने व्यय से करा देवे। सांप के काटने से मरने पर सब धनियों में किंचित्
ित सुवर्ण धरके सांपों के लिये बलि देवे ॥ ३३ ॥ हाथी से मारेजाने पर
ह तोला सुवर्ण का हाथी बनाकर दान करे। राजाज्ञा से मारे गये पर
ं का पुरुष बनाके दान करे ॥ ३४ ॥ चोर से मृत्यु होने पर गोदान, और
से मारे जाने पर बैल का दान करे। भेड़िया से मारेजाने पर यथाशक्ति सु०
का दान करे ॥ ३५ ॥ खटिया पर मरजाने पर चार तोला सुवर्ण से बनायी
क तकिया सहित खटिया पर स्थापित की विष्णुभगवान् की मूर्ति का दान
॥ ३६ ॥ अशुद्ध दशा में मरने पर आठ तोला सुवर्ण की विष्णु मूर्ति का
करे। संस्कारहीन दशा में मरने पर ब्राह्मण कुमार का विवाह अपने
से करावे ॥ ३७ ॥ कुत्ते के काटने से मरने पर अपनी शक्ति के अनुसार
के लिये किसी के यहां धन जमा करे। सूकर से मृत्यु होवे पर दक्षिणा
न भैंसा का दान करे ॥ ३८ ॥ कृमियों से मरने पर ब्राह्मण को गेहूं का
करे। और सींगवाले पशु से मृत्यु हो तो वस्त्र सहित बैल का दान करे
॥ गाड़ी से दब के मरने पर सामग्री सहित धन का दान करे। पह
िर कर मरने पर धान्य पर्वत का दान करे (श्री वाग्भटादि ग्रन्थ का

ग्रहशान्तिकपूर्वंच दशांशंजुहुयात्तिलैः ।
अज्ञातनामगोत्राय प्रेतायसतिलोदकम् ॥
प्रदद्यात्पितृतीर्थेन पिण्डंमन्त्रमुदीरयेत् ॥ २७ ॥
इमंतिलमयंपिण्डं मधुसर्पिःसमन्वितम् ।
ददामितस्मैप्रेताय यःपीडांकुरुतेमम ॥ २८ ॥
सजलान्कृष्णकलशांस्तिलपात्रसमन्वितान् ।
द्वादशप्रेतमुद्दिश्य दद्यादेकंचविष्णवे ॥ २९ ॥
ततोऽभिषिञ्चेदाचार्य्यो दम्पतीकलशोदकैः ॥
शुचिर्वरायुधधरो मन्त्रैर्वरुणदैवतैः ॥ ३० ॥
यजमानस्ततोदद्यादाचार्य्यायसदक्षिणाम् ।
ततोनारायणबलिः कर्तव्यःशास्त्रनिश्चयात् ॥
पसाधारणविधिरगतीनामुदाहृतः ।
शेषस्तुपुनर्ज्ञेयो व्याघ्रादिनिहतेष्वपि ॥ ३१
घ्रेणनिहतेप्रेते परकन्यांविवाहयेत् ।

न्ति पूर्वक घी मिले तिलों से दशांश होम करे और तिलों
र्वोक्त तिलों के पिण्ड को (इमंतिल०) मन्त्र पढ़कर अप
खकर अज्ञात नाम गोत्र वाले मृतपुरुष के नाम से पि
२७ ॥ शहद और घी से युक्त तिल स्वरूप इस पिण्ड
ये देता हूं कि जो मुझ को पीड़ित करता है ॥ २८ ॥ ति
एक २ पात्र रक्खा हो ऐसे जल से भरे काले रंगेहुए बार
श से दान करे । और एक कलश विष्णु के नाम से दान
र अच्छा वस्त्र धारण किये वा स्फय को हाथ में लिये
रूप यजमान स्त्री पुरुषों का कलश के जल से
षेक करे ॥ ३० ॥ फिर यजमान
। तदनन्तर शास्त्र के निश्च
त होने वाले
व्याघ्रादि से म
य से मरे

पातित्येन मृतेकुर्यात्प्राजापत्यानिषोडश ॥ ४७ ॥
मृतेचापत्यरहिते कृच्छ्राणांनवतिंचरेत् ।
निष्कत्रयमितंस्वर्णं दद्यादश्वंहयाहते ॥ ४८ ॥
कपिनानिहतेदद्यात् कपिंकनकनिर्मितम् ।
विसूचिकामृतेस्वादु भोजयेच्छतंद्विजान् ॥ ४९ ॥
तिलधेनुःप्रदातव्या कण्ठेऽन्नकवलैर्मृते ।
केशरोगमृतेचापि अष्टौकृच्छ्रान्समाचरेत् ॥ ५० ॥
एवंकृतेविधानेन विदध्यादौर्ध्वदेहिकम् ।
ततःप्रेतत्वनिर्मुक्ताः पितरस्तर्पितास्तथा ॥ ५१ ॥
दद्युःपुत्रांश्चपौत्रांश्च आयुरारोग्यसंपदः ॥ ५२ ॥
इतिशातातपप्रोक्तो विपाकःकर्मणामयम् ।
शिष्यायशरभङ्गाय विनयात्परिपृच्छते ॥ ५३ ॥
इति शातातपीये धर्मशास्त्रे कर्मविपाके अगतिप्राय-
श्चित्तनिरूपणं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥
इति शातातपस्मृतिः समाप्ता ॥
श्रीरस्तु

पतित होने से मरे तो सोलह प्राजापत्य व्रत करे ॥४७॥ सन्तान रहित होके
ो ९० नब्बे कृच्छ्र व्रत करे। घोड़े से मरे तो १२ तोला सुवर्ण का घोड़ा
के दान करे ॥ ४८ ॥ वानर से मरे तो सुवर्ण का वानर बनाकर दान
और हैजा से मरे तो सौ १०० ब्राह्मणों को स्वादिष्ट भोजन करावे ॥४९॥
में अन्न का ग्रास अटकने से मरे तो तिलधेनु का दान करे और बालों
ग से मरे तो आठ कृच्छ्र व्रत करे ॥५०॥ ऐसा करके विधिपूर्वक मृतक के
दि कर्म करे। तिस से प्रेतयोनि से छूटते और पितृगण भी तृप्त होते
५१ ॥ तृप्त हुए पितर पुत्र, पौत्र, आयु, नीरोगता और सम्पत्ति अपने
श्यों को देते हैं ॥ ५२ ॥ यह महर्षि शातातप ने विनय पूर्वक पूछते हुए
शरभङ्ग नामक शिष्य से कर्मोंका फल कहा है ॥५३॥
इ शातातपीय धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में कर्म विपाक मध्ये अगति
प्रायश्चित्त निरूपण नाम छठा अध्याय पूरा हुआ ॥६॥ तथा यह
शातातप स्मृति भी समाप्त हुई ॥ ओं शान्तिः ॥ ३ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥

अथवासिष्ठस्मृतिप्रारम्भः॥

अथातः पुरुषनिःश्रेयसार्थं धर्मजिज्ञासा ॥ १ ॥ ज्ञात्वा चानुतिष्ठन्धार्मिकः प्रशस्यतमो भवति लोके प्रेत्य च स्वर्गं लोकं समश्नुते ॥२॥ श्रुतिस्मृतिविहितो धर्मः ॥३॥ तदलाभे शिष्टाचारः प्रमाणम् ॥ ४ ॥ शिष्टः पुनरकामात्मा ॥५॥ अगृह्यमाणकारणो धर्मः ॥६॥ आर्यावर्त्तः प्रागादर्शात्प्रत्यक्कालकवनादुदक्पारियात्राद्द दक्षिणेन हिमवत उत्तरेण विन्ध्यस्य ॥७॥ तस्मिन्देशे ये धर्मा ये चाचारास्ते सर्वे प्रत्येतव्याः ॥८॥ नत्वन्ये प्रतिलोमकल्पधर्माणः ॥९॥ एतदार्यावर्त्तमित्याचक्षते ॥१०॥ गङ्गायमुनयोरन्तरेऽप्येके ॥ ११ ॥ यावद्वा कृष्ण-

---

अथ वसिष्ठस्मृति का प्रारम्भ किया जाता है ॥ सुखाभिलाषी होने से मनुष्य के कल्याणार्थ धर्म को जानने की इच्छा करनी चाहिये ॥ १ ॥ धर्मको जानकर सेवन करता हुआ मनुष्य लोक में प्रामाणिक धर्मात्मा कहाता हुआ अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होता और जन्मान्तर में स्वर्ग का सुख भोगता है ॥२॥ श्रुति (वेद) तथा स्मृति (धर्मशास्त्र) में विधान किया कर्त्तव्य-धर्म कहाता है ॥३॥ जिसका प्रमाण श्रुति स्मृति में नहो उसके लिये शिष्ट लोगों का आचार प्रमाण है ॥४॥ निःस्पृह निर्लोभ निष्काम पुरुष शिष्ट कहाते हैं ॥५॥ जो लोभादिकारणके विना ही किया जाय वही धर्म है ॥६॥ आदर्श से पूर्व कालक वन से पश्चिम, पारियात्रसे उत्तर, हिमालय से दक्षिण और विन्ध्याचल से उत्तर में जो देश है वह आर्यावर्त्त कहाता है ॥७॥ उस आर्यावर्त्त देश में जो धर्म और आचार हैं वे सब प्रतीति (विश्वास करने) योग्य हैं ॥ ८ ॥ और प्रान्तीय धर्म प्रतिलोम उलटी कल्पना से युक्त होने से विश्वास के योग्य नहीं हैं ॥९॥ इस देश को (आर्यावर्त्तम्) ऐसा कहते हैं ॥१०॥ कोई आचार्य गङ्गा यमुना के बीच को आर्यावर्त्त कहते हैं ॥११॥ और कोई आचार्य कहते

मृगो विचरति तावद्ब्रह्मवर्चसमित्यन
ल्लविनो निदाने गाथामुदाहरन्ति ॥ १३
पश्चात्सिन्धुर्विहरिणी सूर्यस्योदय
यावत्कृष्णोऽभिधावति तावद्ब्रह्मव
त्रैविद्यवृद्धायंब्रूयुर्धर्मंधर्मविदोजनाः ।
पवनेपावनेचैव सधर्मोनात्रसंशयः । १
देशधर्मजातिधर्मकुलधर्मान् श्रुत्यभाव
सूर्याभ्युदितः सूर्याभिनिर्मुक्तः कुनखी श्याव
परिवेत्ताऽग्रे दिधिपूर्दिधिपूपतिर्वीरहा ब्रह्मोज
पञ्च महापातकान्याचक्षते ॥१८॥ गुरुतल्पं सुर
ब्राह्मणसुवर्णापहरणं पतितसंयोगश्च ॥१९॥ ब्रा

हैं कि जहां तक कृष्ण (कर्पायल) हिरण स्वभाव से विचर
प्रदेशों में ब्रह्मतेज होने से धर्म की भूमि है ॥ १२ ॥ और भी
ध्यायी ऋषि लोग प्राचीन गाथा का उदाहरण देते हैं कि—
विहार करती हुई सिन्धु नदी, पूर्व में सूर्य नारायण के उदय
जहांतक कृष्ण मृग स्वभाव से विचरता है वहां तक ब्रह्मतेज
है ॥ १४ ॥ तीनों वेद की विद्या में जो वृद्ध (विशेष जानकार)
तत्त्व जानने वाले विद्वान् लोग जिस धर्मको कहें उसके पावन
होने में सन्देह नहीं है ॥१५॥ देशधर्म, जातिधर्म, कुल धर्मों को श्रु
से मनुजी ने कहा है ॥१६॥ सूर्य के उदय तथा अस्त होने के समय
दि न करे, बिगड़े नखों वाला, कालेदांतों वाला, जेठभाई से पहिले
वाह करने तथा अग्निहोत्र लेने वाला—परिवेत्ता, उसका बड़ाभाई
जिस के आगे (विद्यमान रहते) ही स्त्री ने दूसरा पति कर लिय
अग्रेदिधिपू और उसका द्वितीयपति—दिधिपूपति, स्थापित अग्नि के
वाला, और वेदाध्ययन को त्यागने वाला ब्राह्मण ये सब पापी कहाते
पांच महा पातक विद्वान् लोग कहते हैं ॥१८॥ गुरुपत्नीगमन, सुरापान
(ब्राह्मण से ब्राह्मणी में हुए गर्भ की) हत्या करना, ब्राह्मण का सुवर्ण चुराना
इन पतितों के साथ सम्बन्ध करना ॥१९॥ वह सम्बन्ध वेदादि के पढ़ने

अथाप्युदाहरन्ति ॥२१॥

संवत्सरेणपतति पतितेनसहाऽऽचरन् ।
याजनाध्यापनाद्यौनान्नतुयानासनाशनात् । इति ॥२२॥

योऽग्नीनपविध्येद्गुरुं च यः प्रतिजघ्नुयान्नास्तिको ना-
नकवृत्तिः सोमं च विक्रीणीयादित्युपपातकानि ॥ २३ ॥
स्रो ब्राह्मणस्य भार्या वर्णानुपूर्व्येण,द्वे राजन्यस्य,एकैका
श्यशूद्रयोः ॥ २४ ॥ शूद्रामप्येके मन्त्रवर्जं तद्वत् ॥ २५ ॥
या न कुर्यात् ॥ २६ ॥ अतो हि ध्रुवः कुलापकर्षः प्रेत्य चा-
र्गः ॥ २७ ॥ षड्विवाहाः ॥ २८ ॥ ब्राह्मो दैव आर्षो गा-
र्वः क्षात्रो मानुषश्चेति ॥ २९ ॥ इच्छन उदकपूर्वं यां द-
त्स ब्राह्मः ॥ ३० ॥ यज्ञतन्त्रे वितत ऋत्विजे कर्म कुर्वो

कन्यां दद्यादलङ्कृत्य तं दैवमित्याचक्षते ॥३१॥ गोमि
चाऽऽर्षः ॥ ३२ ॥ सकामां कामयमानः सदृशीं यो निरुह
गान्धर्वः ॥ ३३ ॥ यां वलेन सहसा प्रमथ्य हरन्ति स क्ष
॥ ३४ ॥ पणित्वा धनक्रीतां स मानुषः ॥ ३५ ॥ तस्माद्दुहि
मतेऽधिरथं शतं देयमितीह क्रयो विज्ञायते ॥ ३६ ॥ या पत
क्रीता सत्यथान्यैश्चरतीति ह चातुर्मास्येषु ॥ ३७ ॥

अथाप्युदाहरन्ति ॥ ३८ ॥

विद्याप्रणष्टापुनरभ्युपैति जातिप्रणाशेत्विहसर्वनाशः ।
कुलापदेशेनहयोपिपूज्यस्तस्मात्कुलीनांस्त्रियमुद्वहन्तिइ
त्रयो वर्णा ब्राह्मणस्य वशे वर्त्तेरन् ॥४०॥ तेषां ब्राह
धर्मान्प्रब्रूयात् ॥४१॥

विस्तार के साथ यज्ञ में ऋत्विज् का काम करते हुये वर को वस्त्राभूषणो
सहित कन्या को देवे उस को दैव विवाह कहते हैं ॥ ३१ ॥ एक गौ एक बै
या उन का मूल्य वा कुछ न्यूनाधिक धन वर से लेकर कन्या देना आर्ष विवाह है
॥ ३२ ॥ कन्या वर दोनों की परस्पर कामना से अपने वर्ण की सदृश कन्या
का ग्रहण करना गान्धर्व विवाह कहाता है ॥ ३३ ॥ जिस को बल पूर्वक बि
ना विचारे रोकने वालों से युद्ध कर मार पीट के हर लाना यह क्षात्र विवाह
है ॥ ३४ ॥ मूल्य ठहरा कर कन्या को खरीद लेना मानुष विवाह कहाता है
३५ ॥ श्रुति में लिखा है कि तिस से कन्या वाले को रथ सहित सौ ध
स्वर्ण मुद्रादि) देवे इस लेख से कन्या का खरीदना जाना जाता है (प
अन्य रीति से कार्य न होने पर यह निकृष्ट पक्ष है) ॥ ३६ ॥ और चा
स्ययागों के प्रकरण में यह लिखा है कि " जो पति की खरीदी हुई अ
ओं से संग करती है (वह पापिनी नीच है) " इस से भी उक्त अभिप्राय
प्रकट होता है ॥ ३७ ॥ अब अन्य श्लोक भी उदाहरण में कहते हैं ॥३
हुई विद्या नष्ट हो जाय तो फिर भी पढ़ना हो सकता है पर नीच को
जाति (वंश) का नाश (नीचता) हो जाय तो सभी नष्ट हुआ जानो। को
च्छी नसल रूप कुलीनताके बहाने से घोड़ा भी प्रशंसा के योग्य होता
कारण कुलीन स्त्री से विवाह करे ॥३९॥ क्षत्रियादि तीनों वर्ण ब्राह्मण
ीन रहें ॥४०॥ उन सब को यथाधिकार ब्राह्मण धर्मोपदेश करे ॥४१॥

तं राजाचानुशिष्यात् ॥ ४२ ॥ राजा तु धर्मेणानुशासत् षष्ठं धनस्य हरेत् ॥ ४३ ॥ अन्यत्र ब्राह्मणात् ॥ ४४ ॥ इष्टापूर्तस्य तु षष्ठमंशं भजति–इति ह ब्राह्मणो वेदमाढ्यं करोति, ब्राह्मणआपदउद्धरति, तस्माद् ब्राह्मणोऽनाद्यः ॥४५॥ सोमोऽस्य राजा भवतीति ह प्रेत्य चाऽऽभ्युदयिकमिति ह विज्ञायते ॥ ४६ ॥

इति श्रीवासिष्ठे धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

चत्वारो वर्णा ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः ॥१॥ त्रयो वर्णा द्विजातयो ब्राह्मणक्षत्रियवैश्याः ॥२॥ तेषां मातुरग्रेऽधिजननं द्वितीयं मौञ्जीबन्धने ॥३॥ तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्यउच्यते ॥४॥ वेदप्रदानात्पितेत्याचार्यमाचक्षते ॥ ५ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥६॥ द्वयमु वै ह पुरुषस्य रेतो ब्राह्मणस्योर्ध्वं-

---

और ब्राह्मण को अपने धर्म पर चलानेवाला राजा शासक रहे ॥ ४२ ॥ राजा धर्मानुकूल सबकी रक्षा वा शासन करता हुआ धन के लाभ में से छठा भाग कर लेवे ॥ ४३ ॥ परन्तु ब्राह्मण से कुछ भी कर न लेवे ॥ ४४ ॥ धर्म सम्बन्धी श्रौत स्मार्त ब्राह्मण के किये कराये कर्मों का छठा भाग पुण्य फल राजा को मिलता है। ब्राह्मण वेद को मुख्य मान के ग्रहण करता वा पढ़ाता है तथा आपदाओं से बचाता है जिससे ब्राह्मण का अन्न धनादि राजा न लेवे ॥४५॥ वेद में लिखा है कि (सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानांराजा) ब्राह्मण का राजा सोम होता है। और मर कर भी ब्राह्मण सुख देनेवाला है यह भी वेद से जाना जाता है ॥ ४६ ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में प्रथमाध्याय ॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ये चार वर्ण कहाते हैं
श्य ये तीन वर्ण द्विजाति हैं ॥२॥ उनका प
न्म उपनयन संस्कार से होता
र और आचार्य
हते हैं ॥४॥
और से

नाभेरर्वाचीनमन्यद्यद्यदूर्ध्वं नाभेस्तेनास्यानौरसी
जायते ॥७॥ यदुपनयति जनन्यां जनयति यत्साधु करो
॥८॥ अथ यदर्वाचीनं नाभेस्तेनेहास्यौरसी प्रजा जायते॥
तस्माच्छ्रोत्रियमनूचानमप्रजोऽसीति न वदन्तीति ॥१०॥ हा
रीतोऽप्युदाहरति ॥ ११ ॥

नह्यस्यविद्यतेकर्म किंचिदामौञ्जिबन्धनात ।
वृत्त्याशूद्रसमोज्ञेयो यावद्वेदेनजायत । इति ॥१२
अन्यत्रोदककर्मस्वधापितृसंयुक्तेभ्यः ॥१३॥
विद्याहवैब्राह्मणमाजगाम गोपायमाशेवधिस्तेऽहमस्मि
असूयकायाऽनृजवेऽयताय नमांब्रूयावीर्यवतीतथास्याम्॥
यआतृणत्त्यवितथेनकर्मणा बहुदुःखंकुर्वन्नमृतंसंप्रयच्छन्

के भाग हृदयादि में, द्वितीय नाभि से नीचे के भाग में,उनमें जो नाभि से ऊ
के भाग में शक्ति है उस से अनौरसी (वीर्य से न होनेवाली) शिष्यरूप द्विती
जन्म की प्रजा होती है ॥७॥ कि जो उपनयन संस्कार करता है तथा जो की
उत्पन्न करता है ये दोनों ही जन्म अच्छे करता है ॥ ८ ॥ अथ जो इस आ
चार्य की नाभि से नीचे की शक्ति है उससे औरसी (वीर्य सेचन द्वारा) प्रजा
होती है ॥ ९ ॥ तिस से उच्च कक्षा का वेद को पढ़ने जानने वाला पुरुष स
न्तान हीन हो तो भी उससे ऐसा न कहैं कि तुम निर्वंश हो"॥१०॥ महर्षि हारी
त भी कहते हैं कि ॥ ११ ॥ उपनयन संस्कार से पहिले द्विजभायी बालक
के लिये किसी वेदोक्त कर्म का अधिकार नहीं है । जबतक संस्कार-उप
नयन न हो तबतक उसके साथ शूद्र कासा वर्त्ताव करना चाहिये ॥१२॥ परन्तु
संस्कार हीन दशा में दैवयोगसे पिता के मर जानेपर उस के हाथ से जलदान
और पितरों की सपिण्डी आदि के स्वधापूर्वक पिण्डदानमें संस्कार हीन बालक
को भी अधिकार है॥१३॥ विद्या रूप को धारण करके ब्राह्मण के निकट आयी और
कहने लगी कि हे ब्राह्मण! तू मेरी रक्षा कर मैं तेरा कोश(खजाना)हूं। निन्दक
कठोरवादी,लम्पट, शिष्यको मुझे न देवेगा तो मैं अपना प्रभाव या बल दिखा
नेवाली होऊंगी॥१४॥जो आचार्य स्वयं बहुत दुःख करता कष्ट सहता और शिष्यको
अमृत पिलाता हुआ वेदाध्यापनरूप सत्यकर्मकी पवित्रध्वनिसे शिष्यके दोनों

तम्मन्येतपितरंमातरंच तस्मैनद्रुह्येत्कतमच्चनाह ॥ १५ ॥
अध्यापितायेगुरुंनाऽऽद्रियन्ते विप्रावाचामनसाकर्मणावा ।
यथैवतेनगुरोर्भोजनीयास्तथैवतान्नभुनक्तिश्रुतंतत् ॥१६॥
यमेवविद्याःशुचिमप्रमत्तं मेधाविनंब्रह्मचर्योपपन्नम् ।
यस्तेनद्रुह्येत्कतमच्चनाह. तस्मैमाब्रूयानिधिपायब्रह्मन्! ॥१७॥
दहत्यग्निर्यथाकक्षं ब्रह्मपृष्टमनादृतम् ।
नब्रह्मतस्मैप्रब्रूयाच्छक्यमानमकुर्वते । इति॥ १८ ॥

षट् कर्माणि ब्राह्मणस्य॥१९॥ अध्ययनमध्यापनं यजनं-याजनं दानं प्रतिग्रहश्चेति ॥२०॥ त्रीणि राजन्यस्य ॥२१॥ अध्ययनं यजनं दानं च शस्त्रेण च प्रजापालनं स्वधर्मस्तेन जीवेत् ॥२२॥ एतान्येव त्रीणि वैश्यस्य, कृषिर्वाणिज्यं पाशुपाल्यं कुसीदं च ॥ २३ ॥

काम भर देता तथा शिष्य के मानस वाचिक कायिक दोषों को नष्ट कर देता है । उस को पिता माता माने उस से कभी द्रोह न करे। क्योंकि उस ने वेद के साथ क्या उत्तम शिक्षा नहीं कही ? अर्थात् सभी कुछ कह दिया है ॥१५॥ जो पढ़ाये हुए ब्राह्मण शिष्य मन वाणी तथा शरीर से गुरु का आदर नहीं करते वे जैसे गुरु को रक्षा करने योग्य नहीं होते वैसे ही पढ़ा हुआ वेद शास्त्र भी उन की रक्षा नहीं करता है ॥ १६ ॥ हे ब्राह्मण ! जिस को तुम शुद्ध, अप्रमादी, ब्रह्मचर्य से युक्त और बुद्धिमान् जानो और जो तुम से कदापि द्रोह वा विरोध न करे हे ब्रह्मन् उसी विद्या कोश के रक्षक शिष्य के लिये मेरा कथन करो ॥ १७ ॥ जैसे अग्नि घास को जला देता वैसे गुरु का अनादर करने वाले के पूछने को तथा अध्यापक को भी वेद भस्म करता है । इस से यथाशक्ति सन्मान न करने वाले शिष्य को वेद नहीं पढ़ाना चाहिये ॥१८॥ ब्राह्मण के छः कर्म धर्मानुकूल हैं ॥ १९ ॥ वेद का पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञादि कर्म करना, कराना, दान देना, लेना ॥ २० ॥ तीन कर्म क्षत्रिय के हैं ॥ २१ ॥ वेद का पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना, और शस्त्रों के द्वारा प्रजा की रक्षा करना क्षत्रिय का निज (स्वाभाविक) धर्म है उससे ही अपनी जीविका करे ॥२२॥ ये ही वेदाध्ययनादि तीन कर्म वैश्य के धर्मसंचयार्थ हैं और खेती, वाणिज्य, पशुरक्षा, और सूद लेना ये वैश्य के निज कर्म हैं ॥ २३ ॥

एतेषां परिचर्या शूद्रस्य ॥ २४ ॥ अनियता वृत्तिः ॥ २
अनियतकेशवेशाः सर्वेषां मुक्तशिखावर्जम् ॥२६॥ अजीवन
स्वधर्मेणानन्तरां पापीयसीं वृत्तिमातिष्ठेरन् ॥२७॥ न तु कद
चिज्ज्यायसीम् ॥२८॥ वैश्यजीविकामास्थाय पण्येन जीवन्तो
ऽश्मलवणमणिशाणकौशेयक्षौमाजिनानि च तान्तवं रक्तं सर्व
च कृतान्नं पुष्पमूलफलानि च गन्धरसा उदकं चौषधीनां रसः
सोमश्च शस्त्रं विषं मांसं च क्षीरं च सविकारमयस्त्रपु जतु सीसं
च ॥२९॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ३० ॥

सद्यः पततिमांसेन लाक्षयालवणेनच ।
त्र्यहेणशूद्रोभवति ब्राह्मणःक्षीरविक्रयात् । इति ॥३१
ग्राम्यपशूनामेकशफाः केशिनश्च सर्वे चारण्याः पशवो वयां

ब्राह्मणादि द्विजों की सेवा करना शूद्र का कर्म है ॥ २४ ॥ शूद्र क
जीविका नियत नहीं है कि यही करे ॥ २५ ॥ केशों के रखने का
नियम सभी वर्णों का नहीं है कि कौन कितने केश रक्खे । प
रन्तु शिखा सब रक्खें । और शूद्र की शिखा खुली रहा करे ॥ २६ ॥ अपने
धर्म से जीविका न होसकती हो तो अपने २ से नीचे वर्ण की वह जीविका
सब ब्राह्मणादि करें जिस में अधिक पाप न होवे ॥ २७ ॥ परन्तु नीचे २ व
र्ण अपने से ऊंचे २ वर्ण की जीविका कदापि न करें ॥ २८ ॥ यदि ब्राह्मणा
दि आपत्काल में वैश्य वृत्ति का सहारा लेकर दुकान से जीविका करें तो प
त्थर, लवण, मणि (मूंगादि,) शण-रेशम-अलसी के वस्त्र, मृगादि के चर्म
रंगे हुये सूत के वस्त्र, सब प्रकार का पकाया अन्न, फल, पुष्प, मूल, गन्ध (कै
शरादि,) रस, (खटाई आदि,) जल, ओषधियों के रस,पत्रादि में सोमरस,
शस्त्र, विष (संखिया हरतालादि,) मांस, दूध, दही, खोयादि, लोहा, रांगा,
लाख, सीसा, इन सब को ब्राह्मण न बेंचे ॥ २९ ॥ और भी इस का प्रमाण
कहते हैं कि-॥ ३० ॥ मांस, लाख, और लवण बेंचने से ब्राह्मण शीघ्र ही प
तित हो जाता और दूध या दूध के विकार दही आदि को बेंचने से तीन
दिन में पतित होजाता है ॥ ३१ ॥ गांव के पशुओं में जुड़े खुरों वाले (घोड़ा)
भेड़ आदि केशों वाले पशु और सब वन के पशु सब पक्षी, बड़ी दाढ़ों वाले

णश्च ॥३२॥ धान्यानां तिलानाहुः ॥३३॥ अथाप्युदाहरन्ति
॥ भोजनाभ्यञ्जनाद्दानाद् यदन्यत्कुरुतेतिलैः । कृमीभूतः
विष्ठायां पितृभिःसहमज्जति । इति ॥३५॥ कामं वा स्वयं
प्योत्पाद्य तिलान्विक्रीणीरन् ॥३६॥ तस्मात्साण्डाभ्यां सन-
पोताभ्यां प्रावप्रातराशात्कर्षी स्यात् ॥ ३७ ॥ निदाघेऽपः
प्रयच्छेत् ॥३८॥ नातिपीडयंल्लाङ्गलं प्रवीरवत्सुशेवं सोमपि-
त्सरु । तदुद्वपति गामविं चाजानश्वानश्वतरखरोष्ट्रांश्च प्रफ-
व्यंच पीवरीं प्रस्थावद्रथवाहनमिति ॥३९॥ लाङ्गलं प्रवीरव-
द्वीरवत्सु मनुष्यवदनडुद्वत्सुशेवं कल्याणनासिकं कल्याणीह्यस्य
नासिका नासिकयोद्वपति दूरेऽपविद्ध्यति,सोमपित्सरु सोमो

नादि इन को भी ब्राह्मण न पालें न बेंचे ॥ ३२ ॥ धान्यों में तिलों को न
बे ॥३३॥ इस पर श्लोकका प्रमाण कहते हैं ॥३४॥ भोजन, उबटन और ब्राह्मण
को वा श्राद्ध तर्पण होमादि में दान, इन तीन से भिन्न अन्य जो कुछ काम
तिलों से जो कोई करता है वह मनुष्य कुत्ते की विष्ठा में कृमि होकर अपने
पितरों के सहित डूबता है ॥ ३५ ॥ परन्तु किसान ब्राह्मण स्वयं अपने खेत में
त्पन्न किये तिलों को भले हीं बेंचा करे ॥ ३६ ॥ तिससे जिन को बधिया न
किया गया हो ऐसे अण्ड कोशों वाले नाथे हुये बैलों द्वारा मध्याह्न के भो-
जन से पहिले खेत को जोता करे ॥ ३७ ॥ ग्रीष्म (गर्मी या विशेष घाम)
के दिनों में बीच में भी बैलों को जल पिलाये ॥ ३८ ॥ बैलों को अत्यन्त
पीड़ित (तंग) न करे (लाङ्गलंप्रवीर०) इत्यादि वेद संहिता का मन्त्र
। शुक्ल यजुर्वेद सं० अ० १२ । मं० ७१ भी यही मन्त्र है । पर इसके पाठ में
अन्तर है इससे अन्य किसी शाखा का यह मन्त्र यहां लिखा गया है । (रथ-
वाहनम्) तक मन्त्र का पाठ है ॥ ३९ ॥ उक्त मन्त्र का अर्थरूप ही ४० सूत्र-
में ब्राह्मण श्रुति लिखी गयी है-यथा (लाङ्गलम्) हल (प्रवीरवत्) वि-
रों चलानेवाले मनुष्य और बैल प्रकृष्ट वीर हृष्ट पुष्ट हों (सुशेवम्) कल्या-
ण करनेवाला नासिका स्थानी फाला जिसमें लगा है । हम इसकी नासिका
(धन) कल्याण सुख करनेवाली इसलिये है कि उस से अन्नोत्पत्ति द्वारा

ह्यस्य प्राप्नोति,तत्त्सरु तदुद्वपति गाञ्चाविंचाजा नरवा
तरखरोष्ट्रांश्च प्रफर्व्यं च पीवरीं दर्शनीयां कल्याणीं च प्र
वतीम् ॥४०॥ कथं हि लाङ्गलमुद्वपेदन्यत्र धान्यविक्रयात
रसा रसैर्महतो हीनतो वा निमातव्या नत्वेव लवणं र
तिलतण्डुलपक्वान्नं विद्या मनुष्याश्च विहिताः परि
॥ ४३ ॥ ब्राह्मणराजन्यौ वार्द्धुषान्नं नाद्याताम् ॥ ४४
थाप्युदाहरन्ति ॥ ४५ ॥

समर्घंधान्यमुद्धृत्य महार्घंयःप्रयच्छति ।
सवैवार्धुषिकोनाम ब्रह्मवादिषुगर्हितः ॥

मनुष्यों तथा पशुओं की जीवन रक्षा होती है वह हल
सिका से (उद्वपति) पृथवी को खोदता भीतर से वेध
उखाड़ता है (सोमपित्सरु) सोमयागादि का अवसर भी य
कृषि द्वारा अन्नादि की प्राप्ति से होता है। त्सरु नाम मुठिया (
स्थान) दवाने से वह ऊपर की मट्टी उखाड़ता है। यह हल (ग
गौ, भेड़, बकरी वकरा, घोड़ा, खिच्चर, गधा, ऊंटों को (प्रफर्व्यंच
फुर्ती से चलनेवाली पुष्ट अंगों से युक्त मोटी २ प्रथम युवती (स्रोसर) ग
तथा (प्रस्थावद्रथवाहनम्) अच्छे दौड़नेवाले रथ नाम वग्घी के
को प्राप्त कराता है ॥ ४० ॥ हलके द्वारा उत्पन्न किये धान्य को बेंच
नहीं है ॥ ४१ ॥ अधिक वा कम रसों से रसों का बदला भले ही
परन्तु किसी भी रस के बदले में लवण का लेन देन न करे ॥ ४२ ॥
वल, पक्वान्न (पूरी मिठाई आदि) विद्या, और मनुष्यों का बद
कर लेवे। जैसे तिलों के बदले चावल वा चावलों के बदले तिल
पक्वान्न देकर तिल चावल ले लेवे। किसी प्रकार की विद्या अन्य कि
खा देवे उस के बदले अन्य किसी विद्या को सीख लेवे इत्यादि ॥
ह्मण, क्षत्रिय, दोनों सूद लेनेवाले का अन्न न खावें ॥४४॥ इस पर
माया कहतेहैं कि-॥४५॥ जो किसानादि से सस्ता अन्न लेकर फिर उ
करके देता है वह वार्द्धुषिक (सूदखोर) कहाता और यह वेदमत
में निन्दित है। सूद लेनेवाला और ब्रह्महत्यारा इन दोनों को
तौला गया तो ब्रह्म हत्यारा हल्का होने से उठ गया और वार्द्धु

वार्धुषिंब्रह्महन्तारं तुलयासमतोलयत् ।
अतिष्ठद्भ्रूणहाकोट्यां वार्धुषिर्नव्यकम्पत ॥इति ॥४६॥
कामं वा परिलुप्तकृत्याय पापीयसे दद्याताम् ॥ ४७ ॥
द्विगुणं हिरण्यं त्रिगुणं धान्यम् ॥४८॥ धान्येनैव रसा व्याख्या-
ताः ॥ ४९ ॥ पुष्पमूलफलानि च ॥ ५० ॥ तुलाधृतमष्टगुणम्
॥५१॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ५२ ॥
राजाऽनुमतभावेन द्रव्यवृद्धिंविनाशयेत् ।
पुनाराजाभिषेकेण द्रव्यवृद्धिंचवर्जयेत् ॥ ५३ ॥
द्विकंत्रिकंचतुष्कंच पञ्चकंचशतंस्मृतम् ।
मासस्यवृद्धिंगृह्णीयाद्वर्णानामनुपूर्वशः ॥५४॥
वसिष्ठवचनप्रोक्तां वृद्धिंवार्धुषिकेशृणु ।
पञ्चमाषास्तुविंशत्या एवंधर्मोनहीयते । इति ॥५५॥
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे द्वितीयाऽध्यायः ॥ २ ॥

भारी होने के कारण हिला भी नहीं (जो अन्य के सुख दुःख का कुछ वि-
चार न करके अतिलोभ में ग्रस्त होकर अन्याय से तिगुना चौगुना तक लेता
है उसी की यहां निन्दा जानो) ॥ ४६ ॥ और जो पुरुष धर्म कर्म से हीन पापी
हो उसको भले ही ब्राह्मण क्षत्रिय भी वृद्धि (सूद) के लिये धन देवें॥४७॥ परन्तु सु-
वर्ण चांदी रुपया पैसा चाहैं जितने दिनों वा वर्षों में मिलैं दूने से अधिक न लेवें
॥ ४८ ॥ और तिगुना तक अन्न लेवें ॥ ४८ ॥ रसों को भी तिगुने तक ही लेवें ॥ ४९ ॥
परन्तु तौलकर दिया वा बहुत पुष्प, मूल, फल भी तिगुने तक ही लेवें ॥ ५० ॥ परन्तु तौलकर दिया हुआ
माल में आवे तो अठगुणा लेवे ॥ ५१ ॥ इसमें श्लोक प्रमाण कहते हैं ॥ ५२ ॥
राजा बहुत भद्र पुरुषों की अनुमतराय से द्रव्य के सूद की मर्यादा पर कर्तव्य
नाश देवे । और फिर राजा अभिषेकोत्सव के समय भी धन की वृद्धि (सूद)
को सैकड़ा में छोड़ देवे ॥ ५३ ॥ ब्राह्मण प्रति सैकड़ा २) ३) ४) ५) तक मासिक
प्रतिमास ब्राह्मणादि वर्णों से क्रमशः सूद ले सकता है । यह बात जिन्हों आ-
चार्यों का है ॥ ५४ ॥ परन्तु वार्द्धुषिक के लिये महर्षि वसिष्ठ ने त्रिवर्णों गु-
वृद्धि (सूद) लेनी कही है सो सुनो कि प्रतिमास प्रत्येक बीसीपर पांच मास
लिया जाय तो धर्म की हानि इस में नहीं है ॥ ५५ ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में द्वितीयाऽध्याय पूरा हुआ ॥ २ ॥

अप्रज्ञायमानं वित्तं योऽधिगच्छेद्राजा तद्धरेदधि
षष्ठमंशं प्रदाय ॥ १४ ॥ ब्राह्मणश्चेदधिगच्छेत् षट
वर्त्तमानो न राजा हरेत् ॥ १५ ॥ आततायिनं हत्वा
प्राणच्छेत्तुः किंचित्किल्विषमाहुः ॥ १६ ॥ षड्विधा
तायिनः ॥१७॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ १८ ॥

अग्निदोगरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः ।
क्षेत्रदारहरश्चैव षडेतेआततायिनः ॥ १९ ॥
आततायिनमायान्तमपिवेदान्तपारगम् ।
जिघांसन्तंजिघांसीयान्नतेनब्रह्महाभवेत् ॥ २० ॥
स्वाध्यायिनंकुलेजातं योहन्यादाततायिनम् ।
नतेनभ्रूणहासस्यान्मन्युस्तंमन्युमृच्छति । इति ।

कहीं अज्ञात गड़ा हुआ धन जिस को मिले उस को वह धन
भाग देकर शेष को राजा ले लेवे ॥ १४ ॥ यदि वेदादि को पढ़
आदि अपने छः कर्मों में तत्पर ब्राह्मण को अज्ञात धन मिले तो
कुछ नहीं लेना चाहिये ॥ १५ ॥ आततायी को मार डालने पर मारने
हत्या का कुछ भी पाप नहीं लगता ऐसा ऋषि लोग कहते हैं ॥
प्रकार के मनुष्य आततायी होते हैं ॥ १७ ॥ इस पर श्लोक प्रमाण
॥ १८ ॥ १-आग लगाने वाला, २-विष देने वाला, ३-हाथ में शस्त्र ले
को जो आता हो, ४-धन का नाश करने वा छीनने लूटने वाला,
सर्वथा नाश करने वाला और ६-किसी की स्त्री को बलात्कार करने
रदर्ता से स्त्री का धर्म बिगाड़ने वाला ये छः आततायी कहाते
आततायी हो कर यदि वेद वेदान्त का पूर्ण विद्वान् ब्राह्मण भी आ
अपने को मार डालना चाहते हुए उस आततायी को विना विचा
र डाले क्योंकि ऐसी दशा में ब्रह्महत्या का पाप नहीं लगेगा ॥२०॥
कुलीन ब्राह्मण आततायी को जो मारडाले तो उस से मारने वा
त्यारा नहीं होता क्योंकि वहां क्रोध का क्रोध से युद्ध माना जाता

त्रिणाचिकेत: पञ्चाग्निस्त्रिसुपर्ण:षडङ्गवित्। ब्रह्मदेयानुसन्तानश्छन्दोगो ज्येष्ठसामग:॥
...मन्त्रब्राह्मणविद्... श्रोत्रियाः स्वधर्मानधीते यस्य दशपुरुषं मातृपितृवंश: श्रोत्रिय... पङ्क्तिपावना भवन्ति॥२२॥
...विद्वांसः स्नानकारकास्ते पङ्क्तिपावना भवन्ति॥२२॥
चातुर्वैद्यो विकल्पी च अङ्गविद्धर्मपाठकः।
आश्रमस्थास्त्रयो मुख्याः परिषत्स्याद्दशावरा ॥ २३ ॥
उपनीय तु यः कृत्स्नं वेदमध्यापयेत्स आचार्यः ॥ २४ ॥
...एकदेशं स उपाध्यायो यश्च वेदाङ्गानि ॥२५॥ आत्मत्राणे
वर्णसंकरे वा ब्राह्मणवैश्यौ शस्त्रमाददीयाताम् ॥२६॥ क्षत्रियस्य

...द को पढ़ने जानने और उस के नियम व्रतों को करने वाला त्रिणाचि... पञ्चाग्नि-श्रौतस्मार्त अग्निहोत्र करने वाला, ऋग्वेद के होतृ कर्म को प... जानने और तदुक्त नियम व्रतों को करने वाला-त्रिसुपर्णवान्, चारो वेद... जिस की वृद्धि चलती हो, वाजसनेयी संहिता को पढ़ने जानने वाला, ...द के छः अङ्गों का विद्वान्, ब्राह्म विवाह से उत्पन्न, सामवेदी, सामवेद के ...ारण्यक भाग का विद्वान्-ज्येष्ठसामग, मन्त्र ब्राह्मण दोनों वेदभागों का ...ाला, जो अपने वर्ण तथा आश्रम के धर्मों को विशेष कर पढ़ता जानता हो, जिस के माता पिता के वंश में दश पीढ़ी से वेद के पढ़ने की परम्परा चली ...आयी हो, ब्रह्मपद समास करके गृहस्थ बने विद्वान्, ये त्रिणाचिकेतादि ...जिस पङ्क्ति में बैठते हैं उसे पवित्र कर ब्राह्मण पङ्क्तिपावन कहाते हैं (देते हैं)॥ २२ ॥ चारो वेद के पढ़ने जानने वाले चार विद्वान्, नैयायिक, वेदा-...ङ्गों का पढ़ने जानने वाला, मीमांसा वा धर्मशास्त्रों का पढ़ने जानने वाला, ...अपने२ आश्रम के धर्म को यथावत् सेवन करने वाले ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, ...ये तीनों मुख्याश्रमी इन दश पुरुषों की दशावरा धर्मसभा कहाती है ॥२३॥ जो ...यज्ञोपवीत संस्कार करा के पूर्ण वेद को पढ़ावे वह आचार्य कहाता है ॥२४॥ ...जो वेद के किसी भाग को और व्याकरणादि अङ्गों को पढ़ावे वह उपाध्याय कहाता है ॥ २५ ॥ अपनी रक्षा के लिये वा जब राजादि के अत्याचार ...से वर्णसंकरता का प्रचार बढ़ता हो तो ऐसे अवसरों में ब्राह्मण तथा वैश्यों को हथियार हाथ में लेना चाहिये ॥ २६ ॥ और प्रजा की रक्षा का भार

तु तन्नित्यमेव रक्षणाधिकारात् ॥ २७ ॥ प्राग्वोदग्वाऽऽ
प्रक्षाल्य पादौ पाणी चाऽऽमणिबन्धनात् ॥२८॥ अङ्गुष्ठ
स्योत्तरतो रेखा ब्राह्मं तीर्थं तेन त्रिराचामेदशब्दवद् द्वि
रिमृज्यात् ॥२९॥ खान्यद्भिः संस्पृशेत् ॥३०॥ मूर्द्धन्यपो नि
येत् ॥ ३१ ॥ सव्ये च पाणौ व्रजंस्तिष्ठञ्शयानः प्रणतो
नाऽऽचामेत् ॥३२॥ हृदयङ्गमाभिरद्भिरबुद्बुदाभिरफेनाभि
ह्मणः कण्ठगाभिः क्षत्रियः शुचिः ॥३३॥ वैश्योद्भिः प्राशित
भिस्तु स्त्रीशूद्रौ स्पृष्टाभिरेवच ॥३४॥ पुत्रदारादयोऽपिगोर
र्पणाः स्युः ॥ ३५ ॥ न वर्णगन्धरसदुष्टाभिर्याश्च स्युरशुभागम
॥३६॥ न मुख्या विप्रुष उच्छिष्टं कुर्वन्त्यनङ्गे श्लिष्टाः ॥३
सुप्त्वा भुक्त्वा पीत्वा क्षुत्वा रुदित्वा स्नात्वा चाऽऽचान्त

वा अधिकार होने से क्षत्रिय पुरुषों को तो सदा नित्य ही शस्त्र अपने सा
रखने चाहिये ॥ २७ ॥ दोनों पगों और मणि बन्धस्थान (पहुंचों) तक दोनों
हाथों को धोकर पूर्व वा उत्तर को मुख कर बैठा हुआ ॥ २८ ॥ अंगुष्ठ के मू
के उत्तर भाग में ब्राह्मतीर्थ कहाता है उस ब्राह्मतीर्थ से तीन वार ऐसे आ
चमन करे जिस में शब्द न हो फिर दोवार जल से मुख को शुद्ध करे ॥ २९
मुख, नासिका, चक्षु और श्रोत्ररूप छिद्रों का जल हाथ में लगाके स्पर्श करे ॥३०
फिर मस्तक पर जल छिड़के ॥ ३१ ॥ चलता, खड़ा, लेटा, वा तिर्छा झुका हुआ
और वाम हाथ से आचमन न करे ॥ ३२ ॥ फेन जिस में न हो ऐसे हृदय त
पहुंचने वाले जल के आचमन से ब्राह्मण तथा कण्ठ तक पहुंचने वाले जल के
आचमन से क्षत्रिय शुद्ध होता है ॥३३॥ मुख के भीतर तक पहुंचने वाले जल से वैश्य
और स्त्री तथा शूद्र ओष्ठों में जल के स्पर्श मात्र आचमन से शुद्ध होते हैं ॥३४॥ स्त्री
पुत्रादि भी आचमन तथा इन्द्रिय स्पर्शादि द्वारा इन्द्रियाभिमानी देवता
ओं को तृप्त करने वाले हों ॥ ३५ ॥ रूप रस तथा गन्ध जिस का बिगड़ा हो
वा जो अपवित्र मार्ग से प्राप्त हो ऐसे जल से आचमनादि न करे ॥ ३६ ॥
यदि अंग पर न पड़ें तो मुख से झरने वाली थूक की छींटे मनुष्य को उच्छिष्ट
वा अशुद्ध नहीं करती हैं ॥३७॥ सोना,खाना,पीना, छींकना,रोना,और स्नान करना

नराचामेत् ॥३८॥ वासश्च परिधायौष्ठौ च संस्पृश्य यत्रालो
कौन श्मश्रुगतो लेपः ॥३९॥

दन्तवद्दन्तसक्तेषु यच्चान्तर्मुखेभवेत् ।
आचान्तस्यावशिष्टंस्यान्निगिरन्नेवतच्छुचिः ॥ ४० ॥
परानथाऽऽचामयतः पादौयाविप्रुषोगताः ।
भूम्यास्तास्तुसमाःप्रोक्तास्ताभिर्नोच्छिष्टभाग्भवेत् ॥४१॥
प्रचरन्नभ्यवहार्य्येषूच्छिष्टंयदिसंस्पृशेत् ।
भूमौनिःक्षिप्यतद्द्रव्यमाचान्तःप्रचरेत्पुनः ॥४२॥
यद्यन्मीमांस्यं स्यात्तत्तदद्भिः संस्पृशेत् ॥ ४३ ॥
श्वहताश्चमृगावन्याः पातितंचखगैःफलम् ।
बालैरनुपरिक्रान्तं स्त्रीभिराचरितंचयत् ॥ ४४ ॥
प्रसारितंचयत्पण्यं येदोषाःस्त्रीमुखेषुच ।

न कामों को करके पहिले किया हो तो भी फिर से आचमन करे ॥३८॥ वस्त्र
रख कर, (बदल के) तथा जहां बाल नहीं जमते वहां ओठों का स्पर्श
रके भी आचमन करे और मूंछों में लगी जूठन या कफ शुद्ध नहीं माना जा-
ता उस को धोकर भी आचमन करना चाहिये ॥ ३९ ॥ विधि पूर्वक आचमन
र लेने पर दांतों में व मुख में कहीं खाये हुये शेष अन्नादि का अंश जान
है तो उस से यह मनुष्य उच्छिष्ट नहीं माना जायगा किन्तु निगलते ही
द्ध हो जाता है ॥ ४० ॥ अन्य लोगों को जल पिलाते या आचमन कराते
मय पगों पर जो जल के छींटे पड़ जावें उन को पृथिवी की धूलि के समान
हा है उन से मनुष्य अशुद्ध नहीं होता है ॥४१॥ भोजन करने योग्य पदार्थ
आदि को ले जाते हुये यदि किसी उच्छिष्ट को छूलेवे तो उस भोज्य वस्तु
ो भूमि पर रख कर आचमन करके फिर लेजावे ॥ ४२ ॥ जिस २ वस्तु के
शुद्ध होने न होने में शंका हो जावे उस २ को शुद्ध जल से स्पर्श या प्रक्षाल-
न कर लेवे ॥ ४३ ॥ कुत्तों ने मारे वन के मृग, पक्षियों ने उच्छिष्ट करके भूमि
गिराये फल, हाथ आदि धोये बिना भी लड़कों ने ग्रहण किये-पकड़े भो-
य वस्तु, स्त्रियों ने किये आचरण वा कोई काम, ॥ ४४ ॥ बेचने के लिये
स्थान पर नीच पुरुष ने भी फैलाये पदार्थ, स्त्रियों के मुख में भी दोष हैं,
[illegible] पत्थर नीच का स्पर्श करके भी जिस भोज्य वस्तु पर बैठ मधु

प्रकृतिविशिष्टं चातुवर्ण्यं संस्कारविशेषाच्च ॥ १ ॥
ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद्‌बाहूराजन्यःकृतः ।
ऊरूतदस्ययद्वैश्यः पद्भ्यांशूद्रोऽअजायत,
इति निगमो भवति ॥ २ ॥ गायत्र्या छन्दसा ब्राह्मण
सृजत त्रिष्टुभा राजन्यं जगत्या वैश्यं न केनचिच्छन्द
शूद्रमित्यसंस्कार्यो विज्ञायते ॥ ३ ॥ सर्वेषां सत्यमक्रोधो द
नमहिंसा प्रजननं च ॥ ४ ॥ पितृदेवतातिथिपूजायां पशुं
स्यात् ॥ ५ ॥
मधुपर्केचयज्ञेच पितृदैवतकर्म्मणि ।
अत्रैवचपशुंहिंस्यान्नान्यथेत्यब्रवीन्मनुः ॥ ६ ॥
नाकृत्वाप्राणिनांहिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित् ।

स्वभाव से नाम जन्म से और गर्भाधानादि संस्कार विशेष से चारो वर्ण ब्राह्मणादि माने जाते हैं ॥ १ ॥ इस विराट् पुरुष के मुख से ब्राह्मण, बाहु से क्षत्रिय, जंघाओं से वैश्य और पगों से शूद्र उत्पन्न हुआ इस वेद के प्रमाण से उत्पत्ति से ही ब्राह्मणादि वर्ण सिद्ध हैं ॥ २ ॥ गायत्री सावित्री के साथ मुख से ब्राह्मण को, त्रिष्टुप् सावित्री के साथ भुजा से क्षत्रिय को, जगती सावित्री के साथ जंघा से वैश्य को और किसी छन्द के विना ही पगों से शूद्र को विराट् पुरुष ने उत्पन्न किया इस से शूद्र संस्कार के योग्य नहीं है। और यह भी श्रुति से सिद्ध है कि ब्राह्मणादि का यह २ पृथक् २ भाव सिद्ध भिन्न २ गुरु मन्त्र होना चाहिये ॥ ३ ॥ सत्यभाषण, क्रोध का त्याग, दान देना, हिंसा न करना और किसी को दुःख न देना तथा विधि करके सन्तानों को उत्पन्न करना ये सत्यभाषणादि चारो वर्ण के सामान्य धर्म हैं ॥४॥ पितर देवता और अतिथियों की पूजा में शास्त्रोक्त विधि से हिंसा करे (परन्तु यह कलियुग में लोक विक्रुष्टादि दोषहोने से वर्जित है) मधुपर्क, यज्ञ, (अग्निष्टोमादि) अष्टका श्राद्धादि पितृ कर्म, और देव कर्म इन्हीं में पशु की हिंसा करे यह मनु जी ने कहा है ॥ ६ ॥ प्राणियों की हिंसा किये विना कहीं भी मांस प्राप्त नहीं हो सकता और प्राणियों का

नचप्राणिवधःस्वर्ग्यस्तस्माद्यागेवधोऽवधः ॥ ७ ॥

अथापि ब्राह्मणाय वा राजन्याय वाऽभ्यागताय वा महोक्षं वा महाजं वा पचेदेवमस्यातिथ्यं कुर्वन्तीति ॥ ८ ॥ उदकक्रियामशौचं च द्विवर्षात्प्रभृति मृत उभयं कुर्यात् ॥९॥ दन्तजननादित्येके ॥ १० ॥ शरीरमग्निना संयोज्याऽनवेक्षमाणा अपोऽभ्यवयन्ति ॥ ११ ॥ सव्योत्तराभ्यां पाणिभ्यामुदकक्रियां कुर्वन्ति ॥ १२ ॥ अयुग्मा दक्षिणामुखाः ॥ १३ ॥ पितॄणां वा एषा दिग्या दक्षिणा ॥ १४ ॥ गृहान्व्रजित्वा स्वस्तरे त्र्यहमनश्नन्त आसीरन् ॥१५॥ अशक्तौ क्रीतोत्पन्नेन वर्तेरन्, दशाहं शावमाशौचं सपिण्डेषु विधीयते ॥ १६ ॥ मरणात्प्र-

---

करना दुःख का हेतु है। इस से यज्ञ में पशुओं का वध करना हिंसा नहीं है। और अन्यत्र जहां हिंसा अवश्य है वहां न मारे ॥७॥ और भी श्रुति में लिखा है कि आये हुए ब्राह्मण, वा क्षत्रिय–राजा, वा अतिथि के लिये बड़े बैल, वा बड़े बकरा को पकावे, ऐसे ही इस ब्राह्मणादि का अतिथि सत्कार करते हैं ॥ ८ ॥ दो वर्ष से ऊपर आयु वाले बालक के मरने पर अशुद्धि मानना और तिलांजलि देना दोनों काम करें ॥ ९ ॥ कोई आचार्य कहते हैं कि दांत निकलने बाद बालक के मरनेपर शुद्धि माने और तिलांजलि करे ॥ १० ॥ अन्त्येष्टि के समय चिता पर मुर्दा शरीर में अग्नि लगाकर पीछे को न देखते हुए लौटकर जलाशय में स्नान करें ॥ ११ ॥ बायां हाथ दहिने के ऊपर लगा के एक अंजुली जल मृतकके नाम से जलाशय के तटपर अपसव्य होकर छोड़ें ॥१२॥ जल देते समय एक धोती मात्र वस्त्र हो अंगोछा कन्धे पर न हो और दक्षिण को मुख कर के जल देवें ॥ १३ ॥ यह दक्षिण दिशा पितरोंकी है ॥ १४ ॥ फिर घर पर जाकर चटाई या पलाल के बिछौना पर दिन तथा रात में तीन दिन रात कुछ न खाते हुए बैठें किन्तु खटिया पर न बैठें न लेटें ॥१५ ॥ भोजन किये बिना न रह सकें तो किसी से मूल्यद्वारा खरीदकर खावें स्वयं घर का कोई न पकावे। सात पीढ़ी के मनुष्यों को दश दिन तक मृतक की अशुद्धि माननी कही है ॥ १६ ॥ मरने के समय से लेकर दिनों की गणना करें अर्थात् चौथी

भृति दिवसगणना सपिण्डता तु सप्तपुरुषं विज्ञायते ॥ १७ ॥ अप्रत्तानां स्त्रीणां त्रिपुरुषं त्रिदिनं विज्ञायते ॥१८॥ प्रत्तानामितरे कुर्वीरंस्तांश्च तेषां जननेप्येवमेव निपुणां शुद्धिमिच्छन्मातापित्रोर्बीजनिमित्तत्वात् ॥१९॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ २० ॥

नाशौचं सूतके पुंसः संसर्गं चेन्न गच्छति ।
रजस्तत्राशुचिज्ञेयं तच्च पुंसि न विद्यते ॥ इति ॥ २१ ॥

तच्चेदन्तः पुनरापतेच्छेषेण शुध्येरन् ॥२२॥ रात्रिशेषे द्वाभ्यां प्रभाते तिसृभिः ॥ २३ ॥

ब्राह्मणो दशरात्रेण पक्षमात्रेण भूमिपः ।
विंशतिरात्रेण वैश्यः शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥ २४ ॥

अत्राप्युदाहरन्ति ॥ २५ ॥

आशौचे शौद्रके यस्तु सूतके वापि भुक्तवान् ।

रात्रि शेष रहे परन्तु हो तो पहिला दिन पूरा गिना जाय और [illegible] कि मनुष्यों में सपिण्डता मानी जाती है॥१७॥ बिना बिवाही कन्याके पुरुषों में [illegible] पीढ़ी तक सपिण्डता और तीन दिन अशुद्धि माननी चाहिये [illegible] कन्याओं के मरण का सूतक पति के कुल वाले मानें। कन्याओं के जन्म [illegible] पर भी इसी प्रकार अच्छी शुद्धि चाहते हुए सूतक शुद्धि करें [illegible] पिता दोनों बीज के निमित्त हैं ॥ १९ ॥ इस पर श्लोक भी कहते हैं [illegible] जन्म सूतक में पुरुष यदि सूतिका या उसके पास जाने आने में [illegible] तो उसको अशुद्धि नहीं लगती क्योंकि सूतिका [illegible] [illegible]

सगच्छेन्नरकंघोरं तिर्यग्योनिषुजायते । इति ॥२६॥
अनिर्दशाहेपक्वान्नं नियोगाद्यस्तुभुक्तवान् ।
कृमिर्भूत्वासदेहान्ते तद्विष्ठामुपजीवति ॥ २७ ॥

द्वादश मासान्द्वादशार्द्धमासान्वाऽनश्नन्संहितामधीयानः पूतो भवतीति विज्ञायते ॥ २८ ॥ ऊनद्विवर्षे प्रेते गर्भपतने वा सपिण्डानां त्रिरात्रमाशौचं, सद्यः शौचमिति गौतमः ॥ २९ ॥ देशान्तरस्थे प्रेते ऊर्ध्वं दशाहाच्छ्रुत्वैकरात्रमाशौचम् ॥ ३० ॥ आहिताग्निश्चेत्प्रवसन्म्रियेत पुनः संस्कारं कृत्वा शववच्छौचमिति गौतमः ॥ ३१ ॥ यूपचितिश्मशानरजस्वलासूतिकाशुचीनुपस्पृश्यसशिराअभ्युपयादप इति॥३२॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अस्वतन्त्रा स्त्री पुरुषप्रधाना ॥ १ ॥ अनग्निरनुदक्या वा

घोर नरक भोगने पश्चात् तिर्यग्योनि में जन्म लेता है ॥ २६ ॥ ब्राह्मण के सू-
तक में दश दिन बीतने से पहिले जिसने निमन्त्रित होने से पक्वान्न खाया
तो वह मरने पर कृमि होकर उस सूतकवाले की विष्ठा को भोगता है ॥२७॥
जो मनुष्य बारह महिने या छः महिने तक अन्न को छोड़के केवल दुग्धपान
करता हुआ वेद की संहिता का पाठ करे तो पवित्र होजाता है ऐसा शास्त्र
में जाना है ॥ २८ ॥ दो वर्ष से कम के बालक के मरने या गर्भपात होने
पर सपिण्डों की शुद्धि तीन दिन में होती है । पर गौतम का मत है कि तत्-
काल शुद्धि कर लेवें ॥ २९ ॥ देशान्तर में मृत्यु होने पर दश दिन के पश्चात्
सुने तो एक दिन रात शुद्धिमाने ॥ ३० ॥ आहिताग्नि अग्निहोत्री पुरुष यदि
परदेश में गया हुआ मरजावे तो उसकी हड्डियों का फिर से विधिपूर्वक दाह
करके मुर्दे के तुल्य सूतक शुद्धि करे यह महर्षि गौतम कहते हैं ॥ ३१ ॥ यूप,
चिता, श्मशान, रजस्वला, सूतिका, और अशुद्ध चाण्डालादि का स्पर्श करके
शिर डुबोने सहित जल में डुबकी लगावे ॥ ३२ ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौथा अध्याय पूरा हुआ ॥ ४ ॥
पुरुष नाम पति के आधीन रहने वाली स्त्री हो स्वतन्त्र न रहे ॥ १ ॥
स्त्री-अग्निस्थापन-अग्निहोत्र तथा जल देने से अनधिकारिणी और निषिद्ध

भृति दिवसगणना सपिण्डता तु सप्तपुरुषं विज्ञायते ॥ १७ ॥
अप्रत्तानां स्त्रीणां त्रिपुरुषं त्रिदिनं विज्ञायते ॥१८॥ प्रत्तानामि-
तरे कुर्वीरंस्तांश्च तेषां जननेप्येवमेव निपुणां शुद्धिमिच्छतां
मातापित्रोर्बीजनिमित्तत्वात् ॥१९॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ २०

नाशौचंसूतकेपुंसः संसर्गंचेन्नगच्छति ।
रजस्तत्राशुचिज्ञेयं तच्चपुंसिनविद्यते ॥ इति ॥ २१ ॥

तच्चेदन्तःपुनरापतेच्छेषेण शुध्येरन् ॥२२ ॥ रात्रिशेषे द्वा-
भ्यां प्रभाते तिसृभिः ॥ २३ ॥

ब्राह्मणोदशरात्रेण पक्षमात्रेणभूमिपः ।
विंशतिरात्रेणवैश्यः शूद्रोमासेनशुद्ध्यति ॥ २४ ॥

अत्राप्युदाहरन्ति ॥ २५ ॥

आशौचेशौद्रकेयस्तु सूतकेयापिभुक्तवान् ।

रात्रि शेष रहे गर्भ हो तो पहिला दिन पूरा गिना जाय और [illegible] के मनुष्यों में सपिण्डता मानी जाती है ॥१७॥ विना विवाही कन्याओं [illegible] पीढ़ी तक सपिण्डता और तीन दिन अशुद्धि माननी चाहिये [illegible] कन्याओं के मरण का सूतक पति के कुल वाले मानें। कन्या पुत्रों के [illegible] पर भी इसी प्रकार अच्छी शुद्धि चाहते हुए सूतक शुद्धि करें [illegible] बिना दोनों बीज के निमित्त हैं ॥ १९ ॥ इस पर उदाहरण भी कहते हैं [illegible] जन्म सूतक में पुरुष यदि सूतिका का उसके पास जाने वालों में [illegible] तो उसको अशुद्धि नहीं लगती। क्योंकि सूतिका स्त्री को [illegible]

सगच्छेन्नरकंघोरं तिर्यग्योनिपुजायते । इति ॥२६॥
अनिर्दशाहेपक्वान्नं नियोगाद्यस्तुभुक्तवान् ।
कृमिर्भूत्वासदेहान्ते तद्विष्ठामुपजीवति ॥ २७ ॥
द्वादश मासान्द्वादशार्द्धमासान्वाऽनश्नन्संहितामधीयानः पूतो भवतीति विज्ञायते ॥ २८ ॥ ऊनद्विवर्षे प्रेते गर्भपतने वा सपिण्डानां त्रिरात्रमाशौचं, सद्यः शौचमिति गौतमः ॥ २९ ॥ देशान्तरस्थे प्रेते ऊर्ध्वं दशाहाच्छ्रुत्वैकरात्रमाशौचम् ॥ ३० ॥ आहिताग्निश्चेत्प्रवसन्म्रियेत पुनः संस्कारं कृत्वा शववच्छौचमिति गौतमः ॥ ३१ ॥ यूपचितिश्मशानरजस्वलासूतिकाशुचीनुपस्पृश्यसशिराअभ्युपयादप इति॥३२॥
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥
अस्वतन्त्रा स्त्री पुरुषप्रधाना ॥ १ ॥ अनग्निरनुदक्या वा

घोर नरक भोगने पश्चात् तिर्यग्योनि में जन्म लेता है ॥ २६ ॥ ब्राह्मण के सूतक में दश दिन बीतने से पहिले जिसने निमन्त्रित होने से पक्वान्न खाया हो वह मरने पर कृमि होकर उस सूतकवाले की विष्ठा को भोगता है ॥ २७ ॥ वह मनुष्य बारह महिने या छः महिने तक अन्न को छोड़के केवल दुग्धपान करता हुआ वेद की संहिता का पाठ करे तो पवित्र होजाता है ऐसा शास्त्र से जाना है ॥ २८ ॥ दो वर्ष से कम के बालक के मरने या गर्भपात होने पर सपिण्डों की शुद्धि तीन दिन में होती है । पर गौतम का मत है कि तत्काल शुद्धि कर लेवें ॥ २९ ॥ देशान्तर में मृत्यु होने पर दश दिन के पश्चात् सुने तो एक दिन रात शुद्धि माने ॥ ३० ॥ आहिताग्नि अग्निहोत्री पुरुष यदि विदेश में गया हुआ मरजावे तो उसकी हड्डियों का फिर से विधिपूर्वक दाह करके मुर्दों के तुल्य सूतक शुद्धि करे यह महर्षि गौतम कहते हैं ॥ ३१ ॥ यूप, चिता, श्मशान, रजस्वला, सूतिका, और अशुद्ध चाण्डालादि का स्पर्श करके शिर डुबोने सहित जल में डुबकी लगावे ॥ ३२ ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौथा अध्याय पूरा हुआ ॥ ४ ॥
पुरुष नाम पति के आधीन रहने वाली स्त्री हो स्वतन्त्र न रहे ॥ १ ॥
स्त्री-अग्निस्थापन-अग्निहोत्र तथा जल देने में अनधिकारिणी और नित्य

अनृतमिति विज्ञायते ॥ २ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ३ ॥

पितारक्षतिकौमारे भर्त्तारक्षतियौवने ।
पुत्राश्चस्थाविरेभावे नस्त्रीस्वातन्त्र्यमर्हति ॥ ४ ॥

तस्या भर्तुरभिचार उक्तः प्रायश्चित्तरहस्येषु॥५॥ मासिम

सिरजोह्यासां दुष्कृतान्यपकर्षति॥६॥ त्रिरात्रं रजस्वलाऽशुचि
र्भवति,सा नाञ्ज्योन्नाभ्यञ्ज्यान्नाप्सु स्नायात्, अधःशयी
दिवा न स्वप्यात्,नाग्निं स्पृशेत्,न रज्जुं सृजेन्न दन्तान्धाव
मांसमश्नीयान्न ग्रहान्निरीक्षेत,न हसेन्न किंचिदाचरेत्,न
र्वेण पात्रेण पिबेन्नाञ्जलिना वा पिबेत्, लोहितायसेन वा॥
विज्ञायतेहीन्द्रस्त्रिशीर्षाणं त्वाष्ट्रं हत्वा पाप्मना गृहीतो
हत्तमाधर्मसंबद्धोऽहमित्येवमात्मानममन्यत,तं सर्वाणि भूता
भ्याक्रोशन् भ्रूणहन्भ्रूणहन्भ्रूणहन्निति, स स्त्रिय उपाधाव

है ऐसा श्रुति से जाना जाता है ॥ २ ॥ और भी वाक्य प्रमाण कहते हैं ॥
बाल्यावस्था में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र लोग
करें ऐसे तीनों अवस्था में स्त्री स्वतन्त्र रहने योग्य नहीं है ॥ ४ ॥ उस
का पति से वियोग प्रायश्चित्त और रहस्य नाम एकान्त में रहने के ग्रन्
कहा है ॥ ५ ॥ प्रत्येक मास में निकलने वाला आर्त्तव रक्त स्त्रियों के पा
को नष्ट करता रहता है ॥ ६ ॥ रजस्वला स्त्री तीन दिन तक अशुद्ध रहती
वह आंखों में अञ्जन, तैल मर्दन और जल में स्नान न करे, पृथिवी पर
सोवे, दिन को न सोवे, अग्नि का स्पर्श न करे, रस्सी न बटे, दांतों को
मांजे, मांस न खावे, वह नक्षत्रों को न देखे, न हंसे, न कुछ काम करे,
पात्र से या अञ्जलि से जलादि न पीवे, और लाल पात्र से या भाई के
से भी जलादि न पीवे ॥ ७ ॥ शास्त्र से जाना जाता है कि इन्द्र ने तीन
वाले त्वष्टा के पुत्र वृत्रासुर को मारके पाप ग्रस्त हो कर महान् अन
भरयुक्त मैं हूं ऐसा अपने को मानते हुए । उन इन्द्र से सब प्राणियों ने
वार २ कर कहा कि तुम भ्रूणहा ३ हो ऐसा तीनवार कहा तब वे स्त्रि

स्यै मे ब्रह्महत्यायै तृतीयं भागं गृह्णीतेति गत्वैवमुवाच,ता अब्रुवन्, किन्नोऽभूदिति, सोऽब्रवीद्वरं वृणीध्वमिति,ता अब्रुवन्नृतौ प्रजां विन्दामहाइति,काममाविजनितोः संभवामइति (यथेच्छयाऽऽप्रसवकालात्पुरुषेण सह मैथुनभावेन संभवामइति) एषोऽस्माकं वरस्तथेन्द्रेणोक्तास्ताः प्रतिजगृहुस्तृतीयं भ्रूणहत्यायाः ॥ ८ ॥ सेषा भ्रूणहत्या मासिमास्याविर्भवति ॥ ९ ॥ तस्माद्रजस्वलान्नं नाश्नीयात ॥ १० ॥ अतश्च भ्रूणहत्याया एतेषा रूपं प्रतिमुच्याऽऽस्ते कञ्चुकमिव ॥ ११ ॥ तदाहुर्ब्रह्मवादिनः ॥ १२ ॥ अञ्जनाभ्यञ्जनमेवास्या न प्रतिग्राह्यं,तद्धि स्त्रियाअन्नमिति ॥ १३ ॥ तस्मात्तस्यास्तत्र न च मन्यन्ते ॥ १४ ॥ आचारायाश्च योषित इति सेयमुपयाति ॥ १५ ॥

उदक्यास्त्वासतेयेषां येचकेचिदनग्नयः ।

लोग लेलो । तब स्त्रियों ने कहा कि तब हम को क्या फल मिलेगा ? । इन्द्रदेवता. ने कहा कि वर मांगो । तब स्त्रियों ने कहा कि ऋतुकाल ने पर हमारे गर्भस्थिति द्वारा सन्तान हुआ करें और सन्तानोत्पत्ति होने पहिले गर्भकाल में भी हम पतिका सहवास संयोग यथेच्छ कर सकें (प्र- (इच्छा पूर्वक प्रसव काल पर्यन्त पति के साथ मैथुन भाव से संयोग करें वट या हानि न हो) यही हम लोगों का वर है । जब इन्द्रदेव ने ऐसा न स्त्रियों को दिया तब उनने इन्द्र की भ्रूणहत्या का तृतीयांश दोष किया ॥ ८ ॥ सो वही भ्रूणहत्या स्त्रियों के मासिक रजोधर्मरूप से मास प्रकट होती है ॥ ९ ॥ तिस से रजस्वला स्त्री का अन्न या उस का न खावे ॥ १० ॥ इस से यह स्त्री रजोधर्म की समाप्ति में भ्रूणहत्या के को सांप की कैंचुली के समान त्याग के निर्मल शुद्ध होती है ॥ ११ ॥ ब्रह्मवादी सज्जन महर्षि लोग कहते हैं कि ॥१२॥ इस स्त्रीके अञ्जन और न को पुरुष न लेवे क्योंकि यही स्त्री का अन्न या भोजन है ॥१३॥ तिस स्त्री का रजोधर्मकाल में मान्य नहीं करते ॥ १४ ॥ आचार वाली शुद्ध को का मान्य करे तब वह समीप आती है ॥ १५ ॥ जिन घरों में कु-

कुलंचाश्रोत्रियंयेषां सर्वेतेशूद्रधर्मिणः । इति ॥१६॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे पञ्चमोध्यायः ॥ ५ ॥

आचारःपरमोधर्मः सर्वेषामितिनिश्चयः ।
हीनाचारपरीतात्मा प्रेत्यचेहचनश्यति ॥ १ ॥
नैनंतपांसिनब्रह्म नाग्निहोत्रंनदक्षिणाः ।
हीनाचारमितोभ्रष्टं तारयन्तिकथंचन ॥ २ ॥
आचारहीनंनपुनन्तिवेदा यद्यप्यधीताःसहषड्भिरङ्गैः ।
छन्दांस्येनंमृत्युकालेत्यजन्ति नीडंशकुन्ताइवजातपक्षाः ॥३
आचारहीनस्यतुब्राह्मणस्य वेदाःषडङ्गास्त्वखिलाःसयज्ञा
कांप्रीतिमुत्पादयितुंसमर्था अन्धस्यदाराइवदर्शनीयाः ॥४
नैनंछन्दांसिवृजिनात्तारयन्ति मायाविनंमाययावर्त्तमानम्
द्वेऽप्यक्षरेसम्यगधीयमाने पुनातितद्ब्रह्मयथावदिष्टम् ॥५

सारी कन्या ऋतुमती होती हो, जिनने अग्निहोत्र नहीं लिया, और जिन
कुलमें कोई श्रोत्रिय न हो वे सब शूद्रधर्मी ब्राह्मण कहे वा नानेजाते हैं ॥१
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पांचवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ५ ॥
सब वर्णों के लिये आचार ही परमोत्तम धर्म है यह निश्चय जानो । जिस
अन्तःकरण निकृष्ट आचार से युक्त है वह इस लोक परलोक दोनों में
होता है ॥ १ ॥ तप करना, वेद पढ़ना, अग्निहोत्र लेना और दान दक्षि
देना इत्यादि काम धर्म से भ्रष्ट आचार से हीन पुरुष को कदापि दुःख सा
से पार नहीं करते ॥ २ ॥ यदि छहो वेदाङ्गों के सहित वेदों को पढ़ा
तो भी वे वेद आचारहीन पुरुष को पवित्र नहीं करते । पढ़े हुए वेद मृत्यु
समय इसको ऐसे ही त्याग देते हैं कि जैसे पंख निकल आने पर पक्षियों
बच्चे घोंसलों को छोड़के उड़जाते हैं॥३॥ आचार हीन ब्राह्मण को पढ़े आने
छहो वेदाङ्ग, और यज्ञ विधि सहित जानेहुए चारों वेद क्या प्रीति या प्रस
कर सकते हैं? अर्थात् कुछ नहीं । जैसे अन्धे को अपनी रूपवती पत्नी के
से कुछ भी प्रसन्नता या आनन्द नहीं होता वैसे ही आचार हीन
वेदों से कुछ सुख नहीं मिलता ॥ ४ ॥ छल कपट के साथ व
करनेवाले मायावी पुरुष को पढ़े हुए वेद पाप से पार नहीं करते । पर
सदाचारी पुरुष वेद के दो अक्षर भी सम्यक् श्रद्धा तथा शुद्धि से पढ़े तो वे

द्वात्रिंशद्ग्रासगृहस्थस्य अमितंब्रह्मचारिणः ॥ १८ ॥
अनड्वान्ब्रह्मचारीच आहिताग्निश्चतेत्रयः ।
भुञ्जानाएवसिद्ध्यन्ति नैषांसिद्धिरनश्नताम् ॥१९॥
तपोदानोपहारेषु व्रतेषुनियमेषुच ।
इज्याध्ययनधर्मेषु योनाऽऽसक्तःसनिष्क्रियः ॥ २० ॥
योगस्तपोदमोदानं सत्यंशौचंदयाश्रुतम् ।
विद्याविज्ञानमास्तिक्य मेतद्ब्राह्मणलक्षणम् ॥ २१ ॥
येशान्तदान्ताःश्रुतिपूर्णकर्णा जितेन्द्रियाःप्राणिवधान्निवृत्ताः।
प्रतिग्रहेसंकुचिताग्रहस्ता स्तेब्राह्मणास्तारयितुंसमर्थाः ॥२२॥
नास्तिकःपिशुनश्चैव कृतघ्नोदीर्घरोषकः ।
चत्वारःकर्मचाण्डाला जन्मतश्चापिपञ्चमः ॥ २३ ॥
दीर्घवैरमसूयाच असत्यंब्रह्मदूषणम् ।

ग्रास और ब्रह्मचारी को अपरिमित ग्रास (जितनी भूख हो) भोजन करना चाहिये ॥ १८ ॥ बैल, ब्रह्मचारी तथा अग्निहोत्री ब्राह्मण ये तीनों भोजन में त्रुटि न करें (अर्थात् अधिक उपवासादि न करें) भोजन करते हुए ही ये तीनो सिद्धि को प्राप्त होते हैं किन्तु लंघन उपवास करते हुए उक्त तीनों की सिद्धि नहीं है ॥ १९ ॥ जो ब्राह्मणादि द्विज तप करने, दान देने, गुरु आदि मान्यों की भेंट पूजा करने, व्रत, नियम, यज्ञ, वेदाध्ययन और अहिंसा दयादि धर्मों में से किसी काम में तत्पर नहीं वही निकम्मा है ॥ २० ॥ योगाभ्यास, तप, मन का दमन, दान, सत्यभाषण, शुद्धि, दया, शास्त्राध्ययन, वेदान्त (तत्त्वज्ञान) का अभ्यास, विज्ञान (लौकिक व्यवहार का ज्ञान) आस्तिकता ये सब जिसमें हों वही ब्राह्मण है अर्थात् योगाभ्यासादि ब्राह्मणत्व के लक्षण नाम चिन्ह हैं ॥२१॥ मन को वशीभूत करनेवाले दान्त, श्रुतियों (वेदों) से जिनके कान भरे गये हों, जितेन्द्रिय, हिंसा से निवृत्त, दान लेने में जिनने हाथ को सकोड़ रक्खा हो ऐसे ब्राह्मण अन्यों को तार देने में समर्थ होते हैं ॥ २२ ॥ नास्तिक, चुगल, कृतघ्न (अपना उपकार करनेवाले की हानि करनेवाला) बहुत कालतक क्रोध को न त्यागनेवाला ऐसे चारो ब्राह्मणादि कर्म से चाण्डाल हैं और पांचवां चाण्डाल जन्म से होता है ॥ २३ ॥ बहुत कालतक वैर रखना, निन्दा करना

छायायामन्धकारेवा रात्रावहनिवाद्विजः।
यथासुखमुखःकुर्यात्प्राणबाधाभयेषुच ॥ १३ ॥
उद्धृताभिरद्भिः कार्यं कुर्यात्स्नानमनुद्धृताभिरपि
आहरेन्मृत्तिकांविप्रः कूलात्ससिकतांतथा।
अन्तर्जलेदेवगृहे वल्मीकेमूषिकस्थले ॥
कृतशौचावशिष्टाच नग्राह्याःपञ्चमृत्तिकाः ॥ १५ ॥
एकालिङ्गेकरेसव्ये उभाभ्यांद्वेतुमृत्तिके।
पञ्चापानेदशैकस्मिन्नुभयोःसप्तमृत्तिकाः ॥ १६ ॥
एतच्छौचंगृहस्थस्य द्विगुणंब्रह्मचारिणः।
वानप्रस्थस्यत्रिगुणं यतीनांतुचतुर्गुणम् ॥ १७ ॥
अष्टौग्रासामुनेर्भक्तं वानप्रस्थस्यषोडश।

बादलादि की छाया में, तथा अन्धकार के समय रात्ति हो वा दि और जहां मार्गों के जाने का भय हो तब जिधर को सुभीता दीखे उसी मुख करके मल मूत्र का त्याग कर लेवे॥१३॥ जलाशय से पृथक् निकाले हुए से अन्य सब काम करने चाहिये किन्तु जलाशय के भीतर नहीं परन्तु स्ना जलाशय के भीतर भी कर सकता है ॥ १४ ॥ ब्राह्मण हाथ मांजने आदि लिये जलाशय के तट से बालू मट्टी लेवे। और जलके भीतर से, देवस्थान बिलसे, मूषिक रहने के स्थान से और किसी के हाथ वा वर्त्तनादि मांजने बची यह पांच प्रकार की मट्टी शुद्धि के लिये न लेवे ॥ १५ ॥ केवल पेशाब समय लिङ्गेन्द्रिय को एक वार मट्टी जलसे शुद्ध कर एक हाथ को तीन वार तथ दोनों हाथों को दोवार मट्टी जल से धोवे। मल त्याग के समय भी एकवार लिङ्गेन्द्रिय को और पांचवार गुदेन्द्रिय को मट्टी जल लगाके शुद्ध करे एक वाम हाथ को दशवार और दोनों हाथों को सातवार मट्टी जल लगा के शुद्ध करे ॥ १६ ॥ यह शुद्धि गृहस्थ के लिये कही है इस से दूनी ब्रह्मचारी, तिगुणी वानप्रस्थ, और चौगुणी शुद्धि संन्यासी करे ॥ १७ ॥ मुनि वा संन्यासी लोगों का भोजन आठ ग्रास, वानप्रस्थ का सोलह ग्रास, गृहस्थ का बत्तीस

द्वात्रिंशच्चगृहस्थस्य अमितंब्रह्मचारिणः ॥ १८ ॥
अनड्वान्ब्रह्मचारीच आहिताग्निश्चतेत्रयः ।
भुञ्जानाएवसिद्ध्यन्ति नैषांसिद्धिरनश्नताम् ॥१९॥
तपोदानोपहारेषु व्रतेषुनियमेषुच ।
इज्याध्ययनधर्मेषु योनाऽऽसक्तःसनिष्क्रियः ॥ २० ॥
योगस्तपोदमोदानं सत्यंशौचंदयाश्रुतम् ।
विद्याविज्ञानमास्तिक्य मेतद्ब्राह्मणलक्षणम् ॥ २१ ॥
येशान्तदान्ताःश्रुतिपूर्णकर्णा जितेन्द्रियाःप्राणिवधान्निवृत्ताः ।
प्रतिग्रहेसंकुचिताग्रहस्तास्तेब्राह्मणास्तारयितुंसमर्थाः ॥२२॥
नास्तिकःपिशुनश्चैव कृतघ्नोदीर्घरोषकः ।
चत्वारःकर्मचाण्डाला जन्मतश्चापिपञ्चमः ॥ २३ ॥
दीर्घवैरमसूयाच असत्यंब्रह्मदूषणम् ।

स्थ और ब्रह्मचारी को अपरिमित ग्रास (जितनी भूख हो) भोजन करना चाहिये ॥ १८ ॥ बैल, ब्रह्मचारी तथा अग्निहोत्री ब्राह्मण ये तीनों भोजन में त्रुटि न करें (अर्थात् अधिक उपवासादि न करें) भोजन करते हुए ही ये तीनों सिद्धि को प्राप्त होते हैं किन्तु लंघन उपवास करते हुए उक्त तीनों को सिद्धि नहीं है ॥ १९ ॥ जो ब्राह्मणादि द्विज तप करने, दान देने, गुरु आदि [illegible] को भेट पूजा करने, व्रत, नियम, यज्ञ, वेदाध्ययन और [illegible] धर्मों से किसी काम में तत्पर नहीं वही निकम्मा है ॥ २० ॥ योगाभ्यास, तप, [illegible] दमन, दान, सत्यभाषण, शुद्धि, दया, शास्त्राध्ययन, वेदान्त ([illegible]) का अभ्यास, विज्ञान (लौकिक व्यवहार का ज्ञान) आस्तिकता ये [illegible] वही ब्राह्मण है अर्थात् योगाभ्यासादि ब्राह्मणत्व [illegible] मन को वशीभूत करनेवाले दान्त, श्रुतियों (वेदों) से जिनके कान [illegible] हों, जितेन्द्रिय, हिंसा से निवृत्त, दान लेने में जिनके हाथ [illegible] हों ऐसे ब्राह्मण अन्यों को तार देने में समर्थ होते हैं ॥ २२ ॥ नास्तिक, [illegible] कृतघ्न (अपना उपकार करनेवाले की हानि करनेवाला) बहुत [illegible] का [illegible] रखनेवाला ऐसे चारों ब्राह्मणादि कर्म से [illegible] हैं और [illegible] चाण्डाल जन्म से होता है ॥ २३ ॥ बहुत [illegible] वैर रखना निन्दा [illegible]

पैशुन्यंनिर्दयत्वंच जानीयाच्छूद्रलक्षणम् ॥ २४

किंचिद्वेदमयंपात्रं किंचित्पात्रंतपोमयम् ।
पात्राणामपितत्पात्रं शूद्रान्नंयस्यनोदरे ॥ २५ ॥

शूद्रान्नरसपुष्टाङ्गो ह्यधीयानोऽपिनित्यशः ।
जुह्वन्वाऽपिजपन्वाऽपि गतिमूर्ध्वां नविन्दति ॥

शूद्रान्नेनोदरस्थेन यःकश्चिन्म्रियतेद्विजः ।
सभवेत्सूकरोग्राम्यस्तस्यवाजायतेकुले ॥ २७ ॥

शूद्रान्नेनतुभुक्तेन मैथुनंयोऽधिगच्छति ।
यस्यान्नंतस्यतेपुत्रा नचस्वर्गार्हकोभवेत् ॥ २८ ॥

स्वाध्यायोत्थंयोनिमन्तंप्रशान्तं वैतानस्थंपापभीरुंबहुज्ञम् ।
स्त्रीपुक्षान्तंधार्मिकंगोशरण्यं व्रतैःक्षान्तंतादृशंपात्रमाहुः

आमपात्रेयथान्यस्तं क्षीरंदधिघृतंमधु ।

मिथ्या भाषण, ब्राह्मण वा वेद को दोष लगाना, चुगली करना, निर्दयी । इन सबको शूद्र के लक्षण जानो अर्थात् ऐसे लक्षण ब्राह्मणादि में हों तो । लो कि उसकी उत्पत्ति में संकरतादि दोष है ॥ २४ ॥ कोई सदा ही वेद पढ़ने विचारने में तत्पर वेदरूप सुपात्र और कोई प्रायः तप करनेवाला । पस्वी सुपात्र कहाता है परन्तु सब में उत्तम सुपात्र वह है जिसके पेट में शू का अन्न न जाता हो ॥ २५ ॥ शूद्र के अन्न से बने रस से जिसका शरीर ह पुष्ट हुआ है वह भले ही नित्य२ वेद पढ़ता हो, अग्निहोत्र करता और गा यत्र्यादि का जप भी भले ही करता हो तो भी स्वर्ग को प्राप्त नहीं होता ॥ शूद्र का अन्न पेट में विद्यमान होते हुए जो ब्राह्मण मरता है वह जन्मान्तर में या तो गांव का सुअर होता अथवा उसी यजमान शूद्र के कुल में उ होता है ॥ २७ ॥ शूद्र का अन्न खाकर जो मैथुन करता है तो जिसका अ खाया उसी के वे पुत्र होते हैं और वह स्वर्ग को जाने योग्य नहीं होता ॥ वेद के स्वाध्याय से बढ़े हुए, शान्तिशील, कुलीन, श्रौतस्मार्त अग्निहोत्री, पापों से डरनेवाले, बहुत जाननेवाले, स्त्रियों में क्षमा शील, धर्मात्मा, गौ सेवा में तत्पर, व्रत कर२ के कृश दुबले हुए ऐसे ब्राह्मण को ऋषि लोग सुपात्र कहते हैं ॥ २९ ॥ जैसे मट्टी के कच्चे पात्र में गिराये हुए दूध दही घी शहद आदि

नसुवृत्तंनदुर्वृत्तं वेदकश्चित्सब्राह्मणोब्राह्मण ॥
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥
चत्वार आश्रमा ब्रह्मचारिगृहस्थवानप्रस्थपरि
॥ १ ॥ तेषां वेदमधीत्य वेदौ वा वेदान्वाऽविशीर्णब्र
यमिच्छेत्तमावसेत् ॥ २ ॥ ब्रह्मचार्याचार्यं परिचरेत्
आशरीरविमोक्षात् ॥ ४ ॥ आचार्यप्रमीतेऽग्निं परिचरेत्
विज्ञायते हि तत्राग्निराचार्यइति ॥ ६ ॥ संयतवाक्चतु
ष्ठाष्टमकालभोजी भैक्षमाचरेत् ॥ ७ ॥ गुर्वधीनो जटि
शिखाजटो वा गुरुं गच्छन्तमनुगच्छेत् ॥ ८ ॥ आसीनं
तिष्ठञ्शयानं चासीन उपासीत ॥ ९ ॥ आहूताध्यायी स
लब्धं निवेद्य तदनुज्ञया भुञ्जीत ॥ १० ॥ खट्वाशयनदन्तप्र
क्षालनाञ्जनाभ्यञ्जनोपानच्छत्रवर्जी तिष्ठेदहनि रात्रावासीन

शान्तस्वरूप पूर्णतत्त्वध्यानी वैराग्यवान् पुरुष वा उत्तम कोटिका ब्राह्मण है॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में छठा अध्याय पूरा हुआ ॥ ६ ॥
ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासी ये चार आश्रम कहाते हैं॥
प्रथम एक दो वा तीनों वेदों को अङ्गों सहित पढ़ जानके ब्रह्मचर्य जिस का
स्खलित न हुआ हो ऐसा हो कर जिस आश्रम में रहने की इच्छा हो उसी
में ठहरे ॥ २ ॥ यदि ब्रह्मचारी रहे तो आचार्य की सेवा करे इसी में अपने
इष्ट की पूर्ण सिद्धि माने ॥ ३ ॥ जीवन भर गुरुसेवा करे ॥ ४ ॥ गुरु का स्वर्ग
वास हो जाने पर अग्नि की सेवा करे ॥ ५ ॥ क्योंकि श्रुति में लिखा है कि
(तेरा आचार्य अग्नि है) ॥६॥ वाणी को वश में रक्खे। चौथे छठे या आठवें
प्रहर में एकवार भोजन करे ॥ ७ ॥ गुरु के अधीन रहे। सब जटा रखावे वा
केवल शिखामात्र रक्खे। चलते हुए गुरु जी के पीछे २ चला करे ॥८॥ गुरु बैठे
हों तब खड़ा रहे और लेटे हों तो बैठाहुआ उपासना करे ॥ ९ ॥ पढ़ने को
गुरु बुलावें तब जा कर गुरु के समीप में पढ़े। मांगहुए भिक्षादि सब पदार्थों
को गुरु की सेवा में निवेदन करके गुरु की आज्ञा होने पर भोजन करे ॥१०॥
खटिया पर सोना, दातौन करना, आंखों में अञ्जन, शरीर में तैल लगाना,
जूता और छाता इन सब का त्याग रक्खे। विशेष कर दिनों खड़ा रहे रात्रि

॥ ११ ॥ त्रिःकृत्वोऽभ्युपेयादपोऽभ्युपेयादपः । इति ॥१२॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

गृहस्थो विनीतक्रोधहर्षो गुरुणाऽनुज्ञातः स्नात्वाऽसमानार्षामस्पृष्टमैथुनां यवीयसीं सदृशीं भार्यां विन्देत ॥१॥ पञ्चमीं मातृबन्धुभ्यः सप्तमीं पितृबन्धुभ्यः ॥ २ ॥ वैवाह्यमग्निमिन्धीत ॥ ३ ॥ सायमागतमतिथिं नावरुन्ध्यात् ॥४॥ नास्यानश्नन् गृहे वसेत् ॥ ५ ॥

यस्यनाश्नातिवासार्थी ब्राह्मणोगृहमागतः ।
सुकृतंतस्ययत्किंचित्सर्वमादायगच्छति ॥ ६ ॥
एकरात्रंतुनिवसन्नतिथिर्ब्राह्मणःस्मृतः ।
अनित्यंहिस्थितोयस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ ७ ॥
नैकग्रामीणमतिथिं विप्रंसांगतिकंतथा ।

दा रहा करे ॥ ११ ॥ सायं प्रातःकाल और मध्यान्ह में तीनोंकाल जला- के निकट आ कर शौचाचमनादिपूर्वक सन्ध्योपासनादि क्रिया करे ॥१२॥ वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सातवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ७ ॥ यदि वह गृहस्थाश्रम में रहे तो गुरु की आज्ञा से समावर्त्तन स्नान क- ाधिक क्रोध हर्ष का त्याग करताहुआ रागद्वेष रहित होके जिसका किसी से संग न हुआ हो जो अपने गोत्र की न हो ऐसी युवति अपने तुल्य ख्यातिआदि वाली स्त्री से विवाह करे ॥१॥ मातृकुल की पांचवीं पीढ़ी तथा पितृ कुल की सातवीं पीढ़ी की कन्या से भी विवाह हो सकता ॥ फिर गृह्याग्नि को विवाह की वेदी से ला कर विधिपूर्वक स्थापित ३ ॥ सायंकाल में आये अभ्यागत का अनादर न करे ॥ ४ ॥ बिना भा- या अतिथि गृहस्थ के घर पर भूखा न पड़ा रहे ॥ ५ ॥ जिस के घर में को आया ब्राह्मण भोजन किये विना भूखा रहता है। वह गृहस्थ के र में किये सब पुण्य को लेजाता है ॥ ६ ॥ एक दिन निवास करने से स्थिति होने के कारण ब्राह्मण अतिथि कहाता है ॥ ७ ॥ अपने ही रहने वाला तथा पड़ोस से मेली मिलापी ब्राह्मण अतिथि नहीं क-

कालेप्राप्तेअकालेवा नास्यानश्नन्गृहेवसेत् ॥

श्रद्धाशीलोऽस्पृहयालुरलमग्न्याधेयाय नान

स्यात् ॥९॥ अलं च सोमपानाय नासोमयाजी स्यात

युक्तः स्वाध्याये प्रजनने यज्ञे च ॥ ११ ॥ गृहेष्वभ्याग

त्थानासनशयनवाक्सूनृताऽनसूयाभिर्मानयेत् ॥१२॥

क्ति चान्नेन सर्वभूतानि ॥ १३ ॥

गृहस्थएवयजते गृहस्थस्तप्यतेतपः ।

चतुर्णामाश्रमाणांतु गृहस्थस्तुविशिष्यते ॥ १४ ॥

यथानदीनदाःसर्वे समुद्रेयान्तिसंस्थितिम् ।

एवमाश्रमिणःसर्वे गृहस्थेयान्तिसंस्थितिम् ॥ १५ ॥

यथामातरमाश्रित्य सर्वेजीवन्तिजन्तवः ।

एवंगृहस्थमाश्रित्य सर्वेजीवन्तिभिक्षवः ॥ १६ ॥

होता है। अतिथि पुरुष समय कुसमय कभी आवे पर बिना भोजन

हस्थ के घर पर भूखा न बसे ॥ ८ ॥ निर्लोभ श्रद्धालु गृहस्थ अग्निस्थापन

योग्य होता है। गृहस्थ पुरुष अनाहिताग्नि न रहे। किन्तु यथासम्भव

को अवश्य स्थापन करे ॥९॥ और वैसा गृहस्थ सोमयाग करने योग्य भी

है इस से सोमयाग (अग्निष्टोमादि) भी करे ॥१०॥ वेदाध्ययन में यज्ञ

में और सन्तानों के उत्पन्न करने में तत्पर रहे ॥ ११ ॥ अपने घर पर अ

अभ्यागत को देखके उठना, आसन देना, लेटने को शय्या देना, कोमल वा

बोलना और स्तुति प्रशंसा करना इत्यादि प्रकार से उसका मान्य करे ॥१२॥

यथाशक्ति अन्न देकर अन्य प्राणियों का भी आदर करे ॥१३॥ गृहस्थ ही यज्ञ

करता, और गृहस्थ तप करता है इस कारण चारों आश्रमों में विशेष कर गृ

हस्थ उत्तम है ॥ १४ ॥ जैसे सब नद और नदियां इधर उधर चलती हुई स

मुद्र में आ कर ठहरती हैं वैसे ही जहां तहां घूमते हुए सब साधु संन्या

ब्रह्मचारी गृहस्थ के यहां आ कर ठहर जाते हैं ॥१५॥ जैसे सब जीव जन्तु

अपनी माता का आश्रय लेकर जीवित रहते हैं। ऐसे ही सब भिक्षुक लोग

गृहस्थ का आश्रय लेकर भोजनादि से जीविका निर्वाह करते हैं ॥१६॥

नित्योदकी नित्ययज्ञोपवीती नित्यस्वाध्यायोपतितान्न-
र्जी । ऋतौ च गच्छन्विधिवच्च जुह्वन्ब्राह्मणश्च्यवते ब्रह्म-
लोकात्, ब्रह्मलोकादिति ॥ १७ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

वानप्रस्थो जटिलश्चीराजिनवासा ग्रामं च न प्रविशेत्
॥१॥ न फालकृष्टमधितिष्ठेत् ॥२॥ अकृष्टं मूलफलं संचिन्वी-
त, ऊर्ध्वरेताः क्षमाशयः ॥ ३ ॥ मूलफलभैक्षेणाऽऽश्रमागत-
मतिथिमभ्यर्चयेत् ॥ ४ ॥ दद्यादेव न प्रतिगृह्णीयात् ॥ ५ ॥
त्रिषवणमुदकमुपस्पृशेत् ॥६॥ श्रावणकेनाग्निमाधायाऽऽहि-
ताग्निः स्याद्वृक्षमूलिकः ॥ ७ ॥ ऊर्ध्वं षड्भ्यो मासेभ्योऽन-
ग्निरनिकेतः ॥ ८ ॥ दद्याद्देवपितृमनुष्येभ्यः स गच्छेत्स्वर्ग-
मानन्त्यमानन्त्यम् ॥ ९ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

ोपवीत, एक जलपात्र गृहस्थ नित्य साथ रक्खे, नीच वा पतितों के अन्न का
ग रक्खे, नित्य वेदाध्ययन करे, ऋतुकालमें पत्नीमें संग करे और शास्त्रोक्त
धि से नित्य होम करे ऐसा गृहस्थ ब्राह्मण ब्रह्मलोक को जन्मान्तर में प्रा·
होता है फिर वहां से च्युत नहीं होता ॥ १७ ॥

[वासिष्ठ धर्म शास्त्र के भाषानुवाद में आठवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ८ ॥

वानप्रस्थ पुरुष जटाधारी, फटे चिथरा वस्त्र वा मृग चर्म को ओढ़े, गांव
न घुसे ॥ १ ॥ हलसे जोती हुई भूमिपर न बैठे लेटे ॥ २ ॥ बिन जोती भूमि
उत्पन्न हुए मूल तथा फलों को भोजन के लिये लाया करे । ऊर्ध्वरेता (जि-
ा वीर्य नीचे को कदापि न गिरे) रहे पृथिवी पर सोया लेटा करे ॥३॥
र मूल फल रूप भिक्षा से अपने आश्रम पर आये अतिथि का सत्कार करे
॥ दिया ही करे किसी से कुछ न लेवे ॥ ५॥ सायंप्रातःकाल और मध्याह्न
तीनोंकाल स्नान सन्ध्यादि कृत्य किया करे ॥ ६ ॥ श्रावणक द्वारा अग्नि-
पन करके आहिताग्नि हो जावे । वृक्षों की जड़ों पर वृक्षों के नीचे निवास
ा करे ॥ ७ ॥ फिर छः महिनों के बीतने पर अग्नि और एक स्थान का
ाम त्याग देवे ॥८॥ देवयज्ञ, पितृयज्ञ, और अतिथियज्ञ द्वारा देव पितर
र मनुष्यों को दिया करे तो वह अनन्त मोक्ष के आनन्द को प्राप्त होता है॥९॥
इ वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में नवम अध्याय पूरा हुआ ॥ ९ ॥

परिव्राजकः सर्वभूताभयदक्षिणां दत्त्वा प्रतिष्ठेत ॥
अथाप्युदाहरन्ति ॥ २ ॥
अभयं सर्वभूतेभ्यो दत्त्वाचरतियोमुनिः ।
तस्यापिसर्वभूतेभ्यो नभयंजातुविद्यते ॥ ३ ॥
अभयंसर्वभूतेभ्यो दत्त्वायस्तुनिवर्त्तते ।
हन्तिजातानजातांश्च द्रव्याणिप्रतिगृह्यच ॥ ४ ॥
संन्यसेत्सर्वकर्माणि वेदमेकंनसंन्यसेत् ।
वेदसंन्यसनाच्छूद्रस्तस्माद्वेदंनसंन्यसेत् ॥ ५ ॥
एकाक्षरंपरंब्रह्म प्राणायामः परन्तपः ।
उपवासात्परंभैक्ष्यं दयादानाद्विशिष्यते ॥ ६ ॥
मुण्डोऽममोऽपरिग्रहः सप्तागाराण्यसंकल्पितानि च
दुर्भैक्षं विधूमे सन्नमुसले ॥ ७ ॥ एकशाटीपरिवृतोऽजिन

अब इस दशम अध्याय में संन्यास धर्म कहते हैं। संन्यासी होता हु
ब्राह्मण सब प्राणियों को निर्भयरूप दक्षिणा देकर एक स्थान वा संसार
पदार्थों से प्रस्थान करे ॥ १ ॥ यहां श्लोक प्रमाण कहते हैं ॥ २ ॥ सब प्राणि-
यों को अभयदान देकर जो मुनि संन्यासी विचरता है उसको भी सब प्राणि-
यों से कदापि कहीं भय नहीं है ॥ ३ ॥ सब प्राणियों को अभय दान देकर
जो निवृत्ति मार्ग में चलता है। वह द्रव्यादि को ग्रहण करके भी होचुके वा
होनेवाले सब दोषों को नष्ट कर देता है ॥ ४ ॥ विरक्त संन्यासी पुरुष संसार
के सब कामों को त्याग देवे परन्तु एक वेद का त्याग न करे क्योंकि वेद
त्याग करने से शूद्र होजाता है तिससे वेद को न त्यागे ॥ ५ ॥ एक अक्षर ओं
कार परमोत्तम वेद है, प्राणायाम उत्तम तप है। भिक्षा मांगकर परिमि
सूक्ष्म भोजन करना उपवास करने से अच्छा और दान धर्म से दया बड़ी है
॥ ६ ॥ संन्यासी शिर के तथा डाढ़ी मूंछों के सब बाल मुंडाया करे, ममता को
त्यागे, संसारी सुख के पदार्थों का संचय वा रक्षा न करे, गृहस्थों के घरों में
धानादि कूटने पीसने खाने पकाने के समाप्त होजाने पर पहिले से जिनका
संकल्प न किया हो ऐसे सात घरों से संन्यासी पकाये अन्न की भिक्षा मां-
गलावे और एकान्त में जाकर खावे ॥ ७ ॥ कौपीन (लंगोट) के ऊपर एक
धोती संन्यासी पहने उसी में से आधी ओढ़ लिया करे, अथवा मृग चर्म से अ-

वा गोमलूनैस्तृणैर्वेष्टितशरीरः स्थण्डिलशाय्यनित्यां वसतिं वसेत् ग्रामान्ते देवगृहे शून्यागारे वृक्षमूले वा मनसा ज्ञानमधीयमानः ॥ ८ ॥ अरण्यनित्यो न ग्राम्यपशूनां संदर्शने विहरेत् ॥ ९ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ १० ॥

अरण्यनित्यस्यजितेन्द्रियस्य सर्वेन्द्रियप्रीतिनिवर्त्तकस्य ।
अध्यात्मचिन्तागतमानसस्य ध्रुवाह्यनावृत्तिरुपेक्षकस्येति ११

अव्यक्तलिङ्गो व्यक्ताचारः, अनुन्मत्त उन्मत्तवेषः॥१२॥

अथाप्युदाहरन्ति ॥ १३॥

शब्दशास्त्राभिरतस्यमोक्षो नचापिलोकग्रहणेरतस्य ।
भोजनाच्छादनतत्परस्य नचापिरम्यावसथप्रियस्य ॥१४
नचोत्पातनिमित्ताभ्यां ननक्षत्राङ्गविद्यया ।

को ढांपे । गौओं के खाने से बची घास शरीर में लपेटे । स्थण्डिल भूमि पर सोवे । किसी एक स्थान में अधिक दिनों तक न बसे, गांव के समीप देवस्थान (शिवालय आदि) में, किसी सूने घर में, अथवा वृक्षों के नीचे वा किसी अनुकूल निर्विघ्न स्थान में मन से तत्त्वज्ञान का स्मरण करता हुआ बसे ॥ ८ ॥ नित्य ही एकान्त वन आदि में रहे । गांव के पशुओं के देखने में समय भ्रमण न करे ॥ ९ ॥ इस पर श्लोक का प्रमाण कहते हैं ॥ १० ॥ सब इन्द्रियों को उनर के विषय भुगाने द्वारा प्रसन्न करने से हटे हुए जितेन्द्रिय हो के नित्य एकान्त में रमनेवाले, अध्यात्म चिन्ता में जिसका मन लगा हो ऐसे उपेक्षावृत्तिवाले संन्यासी की मोक्ष से पुनरावृत्ति नहीं होती है ॥ ११ ॥ महात्मा पन के चिन्ह प्रकट न करे पर शुद्ध आचार रक्खे, ऊपरी वेष से उन्मत्त जान पड़े, अर्थात् उन्मत्तों का सा वेष रक्खे परन्तु भीतरी विचारों में उन्मत्त न रहे ॥ १२ ॥ इस पर श्लोकों का प्रमाण कहते हैं ॥ १३ ॥ व्याकरण के पढ़ने पढ़ाने, वाद विवाद में, तथा संसारी मनुष्यों के संग्रह रखने में, अच्छे भोजन वस्त्रों की प्राप्ति में, अच्छे घर में निवास में, तत्पर संन्यासी का मोक्ष नहीं हो सकता है ॥ १४ ॥ उत्पात (होके भयंकर घटना) बताने, काम सिद्ध होने के निमित्त बताने, ज्योतिष

नानुशासनवादाभ्यां भिक्षांलिप्सेतकर्हिचित् ॥ १५ ॥
अलाभेनविषादीस्याल्लाभेचैवनहर्षयेत् ।
प्राणयात्रिकमात्रःस्यान्मात्रासङ्गाद्विनिर्गतः॥१६॥
नकुर्यान्नोदकेसङ्गो नचैलेनत्रिपुष्करे ।
नाऽऽगारेनासनेनाऽन्ने यस्यवैमोक्षवित्तमः । इति॥१७

ब्राह्मणकुले वा यल्लभेत तद्भुञ्जीत, सायंप्रातर्मधुमांस
परिवर्जम् ॥ १८ ॥ यतीन्साधून्वा गृहस्थान्सायंप्रातश्चरे
त् ॥ १९ ॥ ग्रामे वा वसेत् ॥ २०॥ अजिह्मोऽशरणोऽसङ्कु
को नचेन्द्रियसंयोगं कुर्वीत केनचित् ॥ २१ ॥ उपेक्षकः स
भूतानां हिंसानुग्रहपरिहारेण ॥ २२ ॥ पैशुन्यमत्सराभि
नाहंकाराश्रद्धानार्जवात्मस्तवपरगर्हादम्भलोभमोहक्रोधा

विद्या, या अङ्ग विद्या, धर्मादि का उपदेश और ... विवाद करने द्वारा
... भिक्षादि मिलने की इच्छा कदापि न करे ॥ १५ ॥ भिक्षा
मिलने पर दुःख न माने और भिक्षादि के लाभ का हर्ष भी न करे ...
निर्वाहमात्र के लिये कुछ थोड़ा सा अन्न लेना ... करे । ...
या पूजा की भावनादि से ... न करे ॥ १६ ॥ ...
[illegible]

गत्रिवर्जनं सर्वाश्रमिणां धर्म-इष्टः ॥ २३ ॥ यज्ञोपवीत्युदक-मण्डलुहस्तः शुचिर्ब्राह्मणो वृषलान्नवर्जी न हीयते ब्रह्म-लोकाद्ब्रह्मलोकादिति ॥ २४ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

षडर्हा भवन्ति, ऋत्विग् विवाह्यो राजा पितृव्यमातुलस्नातकाश्च ॥ १ ॥ वैश्वदेवस्य सिद्धस्य सायंप्रातर्गृह्याग्नौ जुहुयात् ॥ २ ॥ गृहदेवताभ्यो बलिं हरेत् ॥३॥ श्रोत्रियायाऽगताय भागं दत्त्वा ब्रह्मचारिणे वाऽनन्तरं पितृभ्यो दद्यात् ॥४॥ ततोऽतिथिं भोजयेत्, श्रेयांसं श्रेयांसमानुपूर्व्येण गृह्याणां कुमारबालवृद्धतरुणप्रभृतींस्ततोऽपरान्गृह्यान् ॥५॥

त्याग करना चारो आश्रम वाले ब्राह्मणादि का परम कर्त्तव्य है ॥ २३ ॥ यज्ञोपवीत धारण किये, जल सहित कमण्डलु हाथ में लिये, शूद्रादि नीचों का अन्न न खाने वाला शुद्ध ब्राह्मण ब्रह्मलोक को प्राप्त होवे वहां से च्युत नहीं होता है ॥ २४ ॥

यह वसिष्ठ प्रोक्त धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में दशवां अध्याय पूरा हुआ ॥ १०

ऋत्विज्, विवाह के समय वर, राजा, चाचा, मामा, और ब्रह्मचर्य को पूर करने वाला स्नातक ये छः पुरुष मधुपर्क विधि से पूजा करने योग्य हैं ॥ १ ॥ विश्वेदेवों के निमित्त पकाये नैत्यिक भोजन में से सायंप्रातः अपने गृह्यसूत्रोक्त मन्त्रों से गृह्याग्नि में देवयज्ञ नामक होम करे ॥ २ ॥ तर गृहाभिमानी पूर्वदिशादि के इन्द्रादि देवताओं के लिये बलि नाम करना रूप भूतयज्ञ करे ॥ ३ ॥ आये हुए वेदपाठी ब्राह्मण को वा भिक्षार्थ ब्रह्मचारी का भाग देकर पश्चात् पितरों को बलि देवे वा इसी में पितरों को अन्न देना रूप तर्पण करे (इस तर्पण में देवयज्ञ ऋषियज्ञ पितृयज्ञ तीनों के अंश संमिलित जानो) ॥ ४ ॥ तदनन्तर अतिथि को भोजन इन में भी जो २ विशेष मान्य हों उन २ को पहिले २ क्रमशः भोजन अपने घर के कुमार बालक, वृद्ध, और तरुण आदि को रूप से क्रि-तदनन्तर घरके अन्य लोगों को [illegible]

श्वचाण्डालपतितवायसेभ्यो भूमौ निर्वपेत् ॥६॥ शूद्रायोच्छि
ष्टमनुच्छिष्टं वा दद्यात् ॥७॥ शेषं दम्पती भुञ्जीयाताम् ॥
सर्वोपयोगेन पुनःपाकः ॥९॥ यदि निरुप्ते वैश्वदेवेऽतिथि
गच्छेद्विशेषेणास्माअन्नं कारयेत् ॥१०॥ विज्ञायते हि ॥११
वैश्वानरः प्रविशत्यतिथिर्ब्राह्मणो गृहम् । तस्मादपआन
न्त्यन्नं वर्षाभ्यस्तां हि शान्तिं जना विदुरिति ॥१२॥ तं भ
जयित्वोपासीताऽऽसीमान्तमनुव्रजेत्, आऽनुज्ञानाद्वा ॥ १
अपरपक्ष ऊर्ध्वं चतुर्थ्याः पितृभ्यो दद्यात्पूर्वेद्युर्ब्राह्मणान
न्निपात्य यतीन् गृहस्थान् साधून् वा परिणतवयसोऽविका
स्थाञ् श्रोत्रियानशिष्यानन्तेवासिनः शिष्यानपि गुणव
भोजयेत् ॥१४॥ विलग्नशुक्लक्लीबान्धश्यावदन्तकुष्ठिकुनखि
वर्जम् ॥१५॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ १६ ॥

काक इन के नाम से भूमि पर एक २ ग्रास धरे ॥६॥ शूद्रको उच्छिष्ट वा अनु
च्छिष्ट नहो वैसा भोजन यथेच्छ देवे ॥७॥ शेष बचे अन्नको स्त्री पुरुष खावें ॥
यदि सभी भोजन अन्यों को देने में ही चुक जावे तो फिर से अपने लि
पकावे ॥ ९ ॥ यदि वैश्वदेव करलेने पर अतिथि आजावे तो विशेष कर उ
के लिये भोजन करावे ॥ १० ॥ श्रुति से जाना जाता है कि ॥११॥ "अति
ब्राह्मण वैश्वानर के रूप से गृहस्थ के घर पर आता है । उस के सत्का
रार्थ जल और अन्न गृहस्थ लोग उपस्थित करते हैं । एक वर्ष अभ्यास क
अतिथि सेवा परम शान्ति सुख देने वाली होती ऐसा विद्वान् लोग मानते
मानते हैं" ॥ १२ ॥ उस अतिथि को भोजन कराके समीप बैठे । जब अतिथि
चले तो गांव की सीमातक पीछे २ चले अथवा जहां से लौटने की आज्ञा
करे वहां से लौट आवे ॥ १३ ॥ कृष्ण पक्ष में चतुर्थी तिथि के पश्चात् पितरों
का श्राद्ध करे । श्राद्ध से पहिले दिन यति, गृहस्थ, साधु शुभकर्मी, शिष्यों से
भिन्न समीपवर्त्ती वा वृद्ध ब्राह्मणों को अथवा गुणी विद्वान् शिष्यों को भी
निमन्त्रित करके श्राद्धकाल में भोजन करावे ॥ १४ ॥ विषयी, श्वेतकुष्ठी, न-
पुंसक, अन्धे, काले दांतों वाले, कुष्ठी और जिन के नख बिगड़े हों ऐसों को
श्राद्ध में भोजन न करावे ॥ १५ ॥ इस पर श्लोक भी प्रमाण में कहते हैं कि

अयचेत्मन्त्रविद्युक्तः शारीरैःपङ्क्तिदूषणैः ।
अदूष्यन्तंयमःप्राह पङ्क्तिपावनएवसः ॥ १७ ॥
श्राद्धेनोद्वासनीयानि उच्छिष्टान्यादिनक्षयात्
श्च्योतन्तेहिसुधाधारास्ताःपिबन्त्यकृतोदकाः ॥ १८ ॥
उच्छिष्टंनप्रमृज्यात्तु यावन्नास्तमितोरविः ।
क्षीरधारास्ततोयान्ति,अक्षय्याः पङ्क्तिभागिनः ॥१९॥
प्राक्संस्कारप्रमीतानां स्ववंश्यानामितिश्रुतिः ।
भागधेयंमनुःप्राह उच्छिष्टोच्छेपणेउभे ॥ २०॥
उच्छेपणंभूमिगतं विकिरंल्लेपसोदकम् ।
अन्नंप्रेतेपुविसृजेदप्रजानामनायुषाम् ॥ २१ ॥
उभयोःशाखयोर्मुक्तं पितृभ्योऽन्नंनिवेदितम् ।
तदन्तरंप्रतीक्षन्ते ह्यसुरादुष्टचेतसः ॥ २२ ॥
तस्मादशून्यहस्तेन कुर्यादन्नमुपागतम् ।

। यदि वेदवेत्ता ब्राह्मण अङ्गहीन होना आदि पङ्क्ति में दूषित शरीर वाला
ो तो भी महर्षि यमने उसको निर्दोष पङ्क्तिपावन ही कहा है ॥१७॥ श्राद्ध में
न कराये ब्राह्मणों की जूठन को सूर्यास्त होने समय तक न उठावे। क्योंकि
।की धारा झरती हैं उनको वे पितर पीते हैं जिन ने जल दान नहीं किया
॥१८॥ जब तक सूर्य अस्त नहीं तब तक उच्छिष्ट को उठाके स्थान की शुद्धि
न करे क्योंकि उस से अक्षय दूध की धारा पङ्क्तिभागी पितरों को प्राप्त
होती हैं ॥ १९ ॥ पिण्ड बनाये अन्नका शेष लेप और ब्राह्मणों के भोजन का
च्छिष्ट ये दोनों- उपनयन संस्कार होने से पहिले मरे अपने वंशवालों के भाग
मनुजी ने कहे हैं ॥२०॥ पात्र में लिपा वा भूमि पर गिरा उच्छेषणभाग को नि-
प होकर कम आयु में मरों के अन्नको जल सहित प्रेतों के निमित्त छोड़े
रे ॥ दोनों ओर की अंगुलियों से छोड़े पितरों को निवेदन किये अन्न
पात्र में पहुंचने से पहिले दुष्ट विचार वाले असुर लोग बीच में मारखाने
ी प्रतीक्षा करते हैं ॥ २२ ॥ तिस से कुश हाथ में ले कर कुशों के सहारे से
न्न का निवेदन करे। अथवा भोजन का स्पर्श करके दोनों प्रकार के शेष

भोजनंवासमालभ्य तिष्ठेतोच्छेषणेउभे ॥ २३ ॥
द्वौदैवेपितृकृत्येत्रीनेकैकमुभयत्रवा ।
भोजयेत्सुसमृद्धोऽपि नप्रसज्येतविस्तरे ॥ २४ ॥
सत्क्रियांदेशकालौच शौचंब्राह्मणसम्पदः ।
पञ्चैतान्विस्तरोहन्ति तस्मात्तंपरिवर्जयेत् ॥ २५॥
अपिवाभोजयेदेकं ब्राह्मणंवेदपारगम् ।
श्रुतशीलोपसंपन्नं सर्वालक्षणवर्जितम् ॥ २६ ॥
यद्येकंभोजयेच्छ्राद्धे दैवंतत्रकथंभवेत् ।
अन्नंपात्रेसमुद्धृत्य सर्वस्यप्रकृतस्यतु ॥ २७ ॥
देवतायतनेकृत्वा ततःश्राद्धंप्रवर्त्तयेत् ।
प्रास्येदग्नौतदन्नंतु दद्याद्वाब्रह्मचारिणे ॥ २८ ॥
यावदुष्णंभवत्यन्नं यावदश्नन्तिवाग्यताः ।
तावद्धिपितरोऽश्नन्ति यावन्नोक्ताहविर्गुणाः ॥२९॥

भागों की यथास्थान रक्षा करे ॥२३॥ विश्वेदेव सम्बन्धी दो और तीन ब्राह्मणों को या दोनों में एक २ ब्राह्मण को भोजन करावे। धनाढ्य तो भी अधिक विस्तृत पांति को भोजन कराने को तत्पर न हो ॥२४॥ क सत्कार, देश, काल, शुद्धि और सुपात्र ब्राह्मणों का मिलना इन पांचों क हुतों का भोजन कराना नष्ट करता है तिस से श्राद्ध में बड़ी पांति करन चेष्टा न करे ॥२५॥ अथवा वेद पारंगत, शास्त्राभ्यासी, सौम्य स्वभाव युक्त कुलक्षणों से रहित, धर्म कर्म निष्ठ एक ही ब्राह्मण को श्राद्ध में भोज रावे ॥ २६ ॥ यदि एक ही ब्राह्मण को श्राद्ध में जिमावे तो वही एक दैवों और पितरों दोनों के लिये कैसे होगा ? । इसका समाधान यह पकाये हुए सब अन्न में से विश्वेदेवों के निमित्त एक पात्र में अन्न परो ॥ २७ ॥ किसी देवस्थान मन्दिरादि में सुरक्षित रख कर श्राद्ध करे पश्चात विश्वेदेवों के भोजन को अग्नि में होम करदे वा किसी ब्रह्मचारी को ॥ २८ ॥ जब तक भोजन गर्म रहता और जबतक निमन्त्रित ब्राह्मण मौ कर भोजन करते हैं तथा जबतक भोज्य पदार्थों के गुण वर्णन नहीं क तभी तक ब्राह्मणों के साथ पितर लोग भोजन करते हैं ॥२९॥

हविर्गुणानवक्तव्याः पितरस्तावदश्नति: ।
पितृभिस्तर्पितःपश्चाद् वक्तव्यंशोभनंहविः ॥ ३० ॥
नियुक्तस्तुयदाश्राद्धे दैवेवामांसमुत्सृजेत् ।
यावन्तिपशुरोमाणि तावन्नरकमृच्छति ॥ ३१ ॥
त्रीणिश्राद्धे पवित्राणि दौहित्रःकुतपस्तिलाः ।
त्रीणिचात्रप्रशंसन्ति शौचमक्रोधमत्वराम् ॥ ३२ ॥
दिवसस्याष्टमेभागे मन्दीभवतिभास्करः ।
सकालःकुतपोनाम पितृणांदत्तमक्षयम् ॥ ३३ ॥
श्राद्धंदत्वाचभुक्त्वाच मैथुनंयोऽधिगच्छति ।
भवन्तिपितरस्तस्य तन्मासंरेतसोभुजः ॥ ३४ ॥
यस्ततोजायतेगर्भो दत्वाभुक्त्वाचपैतृकम् ।
नसविद्यांसमाप्नोति क्षीणायुश्चैवजायते ॥ ३५ ॥

तक पितृगण तृप्त नहीं तबतक हविष्य भोज्य पदार्थों के गुण वर्णन न करे। पित-
रोंके तृप्त होजाने पश्चात् कहे कि हविष्यान्न बहुत उत्तम बना है ॥ ३० ॥ जब
पुरुष निमन्त्रण स्वीकार करके यजमान के यहां किसी कारण मांस बनाया
देख खाय और उस को त्याग देवे तो पशु के शरीर में जितने रोम होते
ने वर्षों तक नरक में पचता है ॥ ३१ ॥ श्राद्ध में तीन वस्तु विशेष
त्र होते हैं एक दौहित्र (पुत्री का पुत्र) द्वितीय कुतप (दिन का आठ-
ां भाग) और तिल। तथा शुद्धि, क्रोधका त्याग और शीघ्रता न करना ये तीनों
र करे तो प्रशंसा के योग्य श्राद्ध होगा ॥ ३२ ॥ दिन के आठवें भाग में
घड़ी दिन शेष रहे सूर्य का तेज मन्द हो जाता है उस चार घड़ी काल
तप कहते हैं उस काल में पितरों के निमित्त श्राद्ध करने से अक्षय फल
है ॥ ३३ ॥ श्राद्ध जिमाने वाला तथा जीमने वाला इन में से जो
श्राद्ध की समाप्ति में उसी दिन मैथुन करता है उस के पितर उस एक
तक वीर्य को खाने वाले होते हैं ॥ ३४ ॥ श्राद्ध में भोजन करने क-
ानों के उसी दिन किये मैथुन से जो सन्तान होता है वह विद्या को
नहीं कर पाता और थोड़ी आयु में नष्ट हो जाता है ॥ ३५ ॥

यस्य,गव्यं वस्ताजिनं वा वैश्यस्य ॥ ४८ ॥ शुक्लमहतं
ब्राह्मणस्य,माञ्जिष्ठं क्षत्रियस्य,हारिद्रं कौशेयं वैश्यस्य
पां वा तान्तवमरक्तम् ॥ ४९ ॥ भवत्पूर्वां ब्राह्मणो
याचेत,भवन्मध्यां राजन्यो,भवदन्त्यां वैश्यः ॥ ५० ॥
षोडशाद्ब्राह्मणस्य नातीतः कालः ॥ ५१ ॥ आद्वाविंश
त्रियस्य ॥५२॥ आचतुर्विंशाद्वैश्यस्य ॥५३॥ अतऊर्ध्वं पति
वित्रीका भवन्ति ॥ ५४ ॥ नैतानुपनयेन्नाध्यापयेन्न या
न्नैभिर्विवाहयेयुः ॥ ५५ ॥ पतितसावित्रीक उद्दालकव्रतं
त् ॥५६॥ द्वौ मासौ यावकेन वर्तयेत्,मासं पयसा,अर्धमास
मिक्षयाऽष्टरात्रं घृतेन, षड्रात्रमयाचितेन, त्रिरात्रमब

में ओढ़ने को देवे ॥४८॥ जो किसी थान में से फाड़ा न हो किन्तु पौरा
बिना बुना सफेद वस्त्र ब्राह्मण का, मजीठ से रंगा लाल वस्त्र क्षत्रिय का
हल्दी से रंगा पीला रेशमी वस्त्र वैश्य ब्रह्मचारी का हो अथवा तीनों
चारियों को बिना रंगे कपास के वस्त्र दिये जावें ॥ ४९ ॥ ब्राह्मण ब्रह्म
(भवति!भिक्षांदेहि) क्षत्रिय (भिक्षांभवति! देहि) और वैश्य ब्रह्मचारी
क्षां देहि भवति !) ऐसा वाक्य बोल कर अपनी २ माता से प्रथम भि
मांगे ॥ ५० ॥ सोलह वर्ष की आयु तक ब्राह्मण के उपनयन संस्कार का
अतीत नहीं होता ॥५१॥ बाईस वर्षतक क्षत्रिय के संस्कार का काल है
और चौबीस वर्ष तक वैश्य के संस्कार का समय है ॥ ५३ ॥ इस से उप
तीनों ही अपने २ सावित्री गुरुमन्त्र से पतित हो जाते हैं ॥ ५४ ॥ ऐसे
पतित हुए ब्राह्मणादि का न यज्ञोपवीत संस्कार करावें, न वेद पढ़ावें, न
करावें और न उन के साथ कन्या का विवाह करें ॥ ५५ ॥ वह पतित सा
त्रीक ब्राह्मणादि पुरुष निम्न रीति से उद्दालक व्रत करें॥५६॥ प्रथम दो म
तक जौ का यावक खाता हुआ एकान्त में रहे। एक मास तक दूध से
पन्द्रह दिन तक आमिक्षा (गर्म दूध में दही डालने से फटा दूध) से आठ
रात घी से, छः दिन तक बिन मांगे जो मिले उस से, तीन दिन तक जल
पीकर और एक दिनरात निर्जल उपवास करे । इसप्रकार चार महीने त

अहोरात्रमुपवसेत् ॥ ५७ ॥ अश्वमेधावभृथं वा गच्छेत् ॥५८॥ व्रात्यस्तोमेन वा यजेद्वायजेत् ॥ ५९ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अथातः स्नातकव्रतानि ॥१॥ स न किंचिद्याचेतान्यत्र राजान्तेवासिभ्यः ॥२॥ क्षुधा परीतस्तु किंचिदेव याचेत कृतमकृतं वा,क्षेत्रं गामजाविकमन्ततो हिरण्यं धान्यमन्नं वा,न तु स्नातकः क्षुधाऽवसीदेदित्युपदेशः ॥३॥ न मलिनवाससा सह संवसेत्,न रजस्वलया,नायोग्यया, नकुलं कुलंस्यात् ॥४॥ वत्सतन्त्रीं विततान्नातिक्रामेत् ॥५॥ नोद्यन्तमादित्यं पश्येत् ॥ ६ ॥ नास्तमयन्तम् ॥ ७ ॥ नाप्सु मूत्रपुरीषे कुर्यात ॥ ८ ॥ न निष्ठीवेत् ॥ ९ ॥ परिवेष्टितशिरा भूमिमयज्ञियैस्तृणैरन्तर्धाय मूत्र-

---

तीन दिन (१२३ दिन) एकान्त में भजन पूजन करता हुआ व्रत करे ॥५७॥ अथवा अश्वमेध यज्ञ के अवभृथ स्नान के समय ब्राह्मणों की आज्ञा से सब के साथ स्नान करके शुद्ध होता है ॥ ५८ ॥ अथवा व्रात्यस्तोम यज्ञ करे ॥ ५९॥ यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ग्यारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ११ ॥

अब ब्रह्मचर्य व्रत को समाप्त कर गृहस्थ होने वाले स्नातक के लिये नियम कहते हैं ॥१॥ वह स्नातक राजा और अपने शिष्यों से भिन्न अन्य किसी से कुछ न मांगे ॥२॥ यदि क्षुधा से पीड़ित हो तो पकाया या कच्चा थोड़ा अन्न मांग ले। अन्त में यदि कुछ न मिले तो खेत-गौ-बकरी-भेड़, सुवर्ण धान्य अन्न इत्यादि जो मिले मांग लेवे किन्तु भूखों मरता हुआ दुःख न भोगे यही स्नातक के लिये शास्त्र का उपदेश है ॥ ३ ॥ मलिन वस्त्रोंवाली, रजस्वला और [illegible] की अयोग्य स्त्री के साथ सहवास (संग) न करे। नकुल को [illegible] ऐसा व्यवहार करे ॥ ४ ॥ विस्तृत फैली हुई बछड़े की रस्सी को लांघकर [illegible] ॥ ५ ॥ उदय होते हुए सूर्य को न देखे ॥ ६ ॥ अस्त होते समय भी [illegible] को न देखे ॥ ७ ॥ जल में मल मूत्र का त्याग न करे ॥ ८ ॥ जल में न थूके ॥ ९ ॥ शिर पर अंगोछा लपेट कर यज्ञ में काम न आने वाले सूखे तृणों को

पितापितामहश्चैव तथैवप्रपितामहः ।
उपासतेसुतंजातं शकुन्ताइवपिप्पलम् ॥ ३६ ॥
मधुमांसैश्चशाकैश्च पयसापायसेनवा।
एषनोदास्यतिश्राद्धं वर्षासुचमघासुच ॥ ३७ ॥
संतानवर्द्धनंपुत्र मुद्यतंपितृकर्माणि ।
देवब्राह्मणसंपन्नमभिनन्दन्तिपूर्वजाः ॥ ३८ ॥
नन्दन्तिपितरस्तस्य सुवृष्टैरिवकर्षकाः ।
यद्गयास्थोददात्यन्नं पितरस्तेनपुत्रिणः ॥ ३९ ॥
श्रावण्याग्रहायण्योश्चान्वष्टक्यां च पितृभ्यो दद्या
व्यदेशब्राह्मणसन्निधाने वा,न कालनियमः ॥४०॥ अवश्यं च

ा हितामह और प्रपितामह ये तीनों उत्पन्न हुए पुत्र के शरीर पर र
ऐसे ही वाट देखतेहैं कि जैसे पीपल आदि वृक्षों पर रहते हुए पक्षी ल
फलों की आशा रखतेहैं ॥३६॥ कि सहत, मांस, शाक, दूध, खीर, वा खीर
सन्तान हमारे लिये पिण्ड देगा श्राद्ध करेगा। और विशेषकर वर्षा ऋ
ा नक्षत्र में दिया श्राद्ध विशेष सन्तोष जनक होताहै॥ ३७ ॥ देवता औ
से युक्त, पितरों के श्राद्धकर्म में उद्यत अपने कुल की सन्तति बढ़ाने
त्र को उनके पूर्वज लोग धन्यवाद देते हैं कि तू कुलतारक कुलदीपक
तारनेवाला है ॥ ३८ ॥ जैसे अच्छी वर्षा होने से किसान लोग
ोते वैसे उस सुपुत्र के पितर लोग आनन्द मानते हैं। जो गया
पितृश्राद्ध करता है पितर लोग उससे अपने को पुत्रवाला मा
श्रावण तथा मार्ग शीर्ष महिने की पौर्णमासी, माघ कृष्ण पक्ष
त अन्वष्टका में पितरों का श्राद्ध करे। अथवा जब कभी श्राद्ध केयो
क उत्तम स्थान और सुपात्र ब्राह्मण मास हों तभी श्राद्ध करे काल
होने पर भी साधनों की ठीकर मासि ही उत्तम कक्षा के श्राद्ध का
कारण काल नियम से साधन संपय बलवान् है। ४० ॥ ग्रास्र
ग्नियों का विधिपूर्वक स्थापन अवश्यमेव करे । दर्शेष्टि, पौर्ण
यण (नवान्नेष्टि)

...ग्रभ्योग्नीनाद्धीत, दर्शपर्णमासाग्रयणेष्टिचातुर्मास्यपशु-
...ललेन यजेत नैयमिके ह्येतत्संस्तुतं च ॥ ४१ ॥ विज्ञा-
...ते हि त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवान् ब्राह्मणो जायते । इति ॥ ४२ ॥
...यज्ञेन देवेभ्यः,प्रजया पितृभ्यो,ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्य इत्येष
...वानृणी यज्वा यः पुत्री ब्रह्मचर्यवानिति ॥ ४३ ॥ गर्भाष्ट-
...मेषु ब्राह्मणमुपनयीत,गर्भैकादशेषु राजन्यं,गर्भद्वादशेषु वै-
...म् ॥४४॥ पालाशो बैल्वो वा दण्डो ब्राह्मणस्य, नैयग्रोधः
...त्रियस्य वा,औदुम्बरो वा वैश्यस्य ॥४५॥ केशसंमितो ब्रा-
...ह्मणस्य,ललाटसंमितः क्षत्रियस्य,घ्राणसंमितो वैश्यस्य ॥४६॥
...मौञ्जी रशना ब्राह्मणस्य,धनुर्ज्या क्षत्रियस्य, शणतान्तवी वै-
...श्यस्य ॥ ४७ ॥ कृष्णाजिनमुत्तरीयं ब्राह्मणस्य, रौरवं क्षत्रि-

...ग्रहायणीयपर्व ये चारों चातुर्मास्य, निरूढपशुयाग, और सोमयाग (अग्निष्टोम) ...इनसे यज्ञ नियम से करे क्योंकि यह सबका करना ऋण चुकाने की प्रशंसा में परिगणित है ॥ ४१ ॥ श्रुति में लिखा है कि "द्विजत्व के संस्कार को प्राप्त हुआ ब्राह्मण तीन प्रकार के ऋणों से ऋणी होजाता है" ॥ ४२ ॥ यज्ञों के द्वारा ...ओं का, पुत्रोत्पत्ति द्वारा पितरों का, और ब्रह्मचर्याश्रम के नियम धर्म पालन ...ओं का, पितरों का ऋण चुकावे, यज्ञों का करनेवाला, पुत्रोंवाला और ब्रह्मचर्या-...म युक्त होने पर तीनों ऋणों से मुक्त हुआ मोक्ष का पूर्णाधिकारी होजाता है ॥४३॥ गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण का, गर्भ से ग्यारहवें वर्ष क्षत्रिय का, और गर्भ से बारहवें वर्ष में वैश्य के बालक का उपनयन संस्कार करे ॥ ४४ ॥ पलाश (ढांक) का वा बिल्व का दण्ड ब्राह्मण ब्रह्मचारी का, (वट बर्गद) का क्षत्रिय ब्रह्मचारी का और गूलर का दण्ड वैश्य ब्रह्मचारी का होवे ॥ ४५ ॥ चोटी की बराबर ऊंचा ब्राह्मण का, मस्तक तक क्षत्रिय का और नासिका के मूल तक वैश्य ब्रह्मचारी का दण्ड रखना चाहिये ॥ ४६ ॥ मूंज की मेखला (कन्ध-...नी) ब्राह्मण की, धनुर्ज्या क्षत्रिय की और शण की मेखला वैश्य ब्रह्मचारी के लिये होवे ॥४७॥ काला (कपोतल) मृगचर्म ब्राह्मण को, रुरु (रोज) मृग का क्षत्रिय को और बैल वा बकरे का चर्म वैश्य ब्रह्मचारी को दुपट्टा के स्थान

यस्य,गव्यं वस्ताजिनं वा वैश्यस्य ॥ ४८ ॥ शुक्लमहतं व
ब्राह्मणस्य,माञ्जिष्ठं क्षत्रियस्य,हारिद्रं कौशेयं वैश्यस्य,
षां वा तान्तवमरक्तम् ॥ ४९ ॥ भवत्पूर्वां ब्राह्मणो भि
याचेत,भवन्मध्यां राजन्यो,भवदन्त्यां वैश्यः ॥ ५० ॥
षोडशाद्ब्राह्मणस्य नातीतः कालः ॥ ५१ ॥ आद्वाविंशात
त्रियस्य ॥५२॥ आचतुर्विंशाद्वैश्यस्य ॥५३॥ अतऊर्ध्वं पतित
वित्रीका भवन्ति ॥ ५४ ॥ नैतानुपनयेन्नाध्यापयेन्न याज
न्नैभिर्विवाहयेयुः ॥ ५५ ॥ पतितसावित्रीक उद्दालकव्रतं च
त् ॥५६॥ द्वौ मासौ यावकेन वर्तयेत्,मासं पयसा,अर्धमास
मिक्षयाऽष्टरात्रं घृतेन, षड्रात्रमयाचितेन, त्रिरात्रमब्भ

में ओढ़ने को देवे ॥४८॥ जो किसी थान में से फाड़ा न हो किन्तु चीरा म
विना हुआ सफेद वस्त्र ब्राह्मण का, मजीठ से रंगा लाल वस्त्र क्षत्रिय का
हल्दी से रंगा पीला रेशमी वस्त्र वैश्य ब्रह्मचारी का हो अथवा तीनों ब्र
चारियों को विना रंगे कपास के वस्त्र दिये जावें ॥ ४९ ॥ ब्राह्मण ब्रह्मच
(भवति!भिक्षांदेहि) क्षत्रिय (भिक्षांभवति! देहि) और वैश्यब्रह्मचारी (
क्षां देहि भवति !) ऐसा वाक्य बोल कर अपनी २ माता से प्रथम भि
मांगे ॥ ५० ॥ सोलह वर्ष के आयु तक ब्राह्मण के उपनयन संस्कार का क
अतीत नहीं होता ॥५१॥ बाईश वर्षतक क्षत्रिय के संस्कार का काल है ॥५
और चौवीश वर्ष तक वैश्य के संस्कार का समय है ॥ ५३ ॥ इस से उपरा
तीनों ही अपने २ सावित्री गुरुमन्त्र से पतित हो जाते हैं ॥ ५४ ॥ तब व
पतित हुए ब्राह्मणादि का न यज्ञोपवीत संस्कार करावे, न वेद पढ़ावे, न य
करावे और न उन के साथ कन्या का विवाह करे ॥ ५५ ॥ वह पतित सावि
त्रीक ब्राह्मणादि पुरुष निम्न रीति से उद्दालक व्रत करे॥५६॥ प्रथम दो महि
तक आठ ग्रास कुलत्थ खाताहुआ एकान्त में रहे। एक मास तक दूध से
पन्द्रह दिन तक आमिक्षा (गर्म दूधमें दही डालने से फटा दूध) से. आठ दि
घी के धा से, छः दिन तक विन मांगे जो मिले उस से, तीनदिन तक जल
पीकर और एक दिनरात निर्जल उपवास करे । इसप्रकार चार महीने तक

ेरात्रमपुवसेत् ॥ ५७ ॥ अश्वमेधावभृथं वा गच्छेत् ॥५८॥ व्रात्यस्तोमेन वा यजेद्वायजेत् ॥ ५९ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अथातः स्नातकव्रतानि ॥१॥ स न किंचिद्याचेतान्यत्र राजान्तेवासिभ्यः ॥२॥ क्षुधा परीतस्तु किंचिदेव याचेत कृतमकृतं वा,क्षेत्रं गामजाविकमन्ततो हिरण्यं धान्यमन्नं वा,न तु स्नातकः क्षुधाऽवसीददित्युपदेशः ॥३॥ न मलिनवाससा सह संवसे,न रजस्वलया,नायोग्यया, नकुलं कुलंस्यात् ॥४॥ वत्सतन्त्रीं ततान्नातिक्रामेत् ॥५॥ नोद्यन्तमादित्यं पश्येत् ॥ ६ ॥ नानमयन्तम् ॥ ७ ॥ नाप्सु मूत्रपुरीषे कुर्यात ॥ ८ ॥ न निंष्ठीवे ॥ ९ ॥ परिवेष्टितशिरा भूमिमयज्ञियैस्तृणैरन्तर्धाय मूत्र-

---

न दिन (१२३ दिन) एकान्त में भजन पूजन करता हुआ व्रत करे ॥५७॥ वा अश्वमेध यज्ञ के अवभृथ स्नान के समय ब्राह्मणों की आज्ञा से मग्न आप स्नान करके शुद्ध होता है ॥ ५८ ॥ अथवा व्रात्यस्तोम यज्ञ करे ॥ ५९॥

वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में ग्यारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥ ११ ॥

अब ब्रह्मचर्य व्रत को समाप्त कर गृहस्थ होने वाले स्नातक के लिये नि- कहते हैं ॥१॥ वह स्नातक राजा और अपने शिष्यों से भिन्न अन्य किसी से न मांगे ॥२॥ यदि क्षुधा से पीड़ित हो तो पकाया या कच्चा थोड़ा अन्न मांगे। अन्त में यदि कुछ न मिले तो खेत-गौ-बकरी-भेड़, सुवर्ण धान्य इत्यादि जो मिले मांग लेवे किन्तु भूखों मरता हुआ दुःख न भोगे यही के लिये शास्त्र का उपदेश है ॥ ३ ॥ मलिन वस्त्रोंवाली, रजस्वला और अयोग्य स्त्री के साथ सहवास (संग) न करे। ...न को ऐसा व्यवहार करे ॥ ४ ॥ विस्तृत फैली हुई बछड़े की रस्सी को लांघकर ॥ ५ ॥ उदय होते ...े ॥ ६ ॥ अस्त होते समय भी ...न देखे ॥ ...न करे ॥ ८ ॥ जल में न थूके ... न ... यज्ञ ...

पुरीषे कुर्यात् ॥ १० ॥ उदङ्मुखश्चाहनि नक्तं द
सन्ध्यामासीतोत्तरामुदाहरन्ति ॥ ११ ॥
स्नातकानांतुनित्यंस्यादन्तर्वासस्तथोत्तरम् ।
यज्ञोपवीतेद्वेयष्टिः सोदकश्चकमण्डलुः ॥ १२ ॥
अप्सुपाणौचकाष्ठेच कथितःपावकःशुचिः ।
तस्मादुदकपाणिभ्यां परिमृज्यात्कमण्डलुम् ॥ १३
पर्यग्निकरणंह्येतन्मनुराहप्रजापतिः ।
कृत्वाचावश्यकर्माणि आचामेच्छौचवित्तमः ॥इति॥
प्राङ्मुखोऽन्नानि भुञ्जीत ॥१५॥ तूर्ष्णीं साङ्गुष्ठंकृत्
ग्रासंग्रसेत् ॥ १६ ॥ न च मुखशब्दं कुर्यात् ॥ १७ ॥ ऋतुकाल
भिगामी स्यात् पर्ववर्जं स्वदारेषु ॥१८॥ अतिर्यगुपे
अथाप्युदाहरन्ति ॥ २० ॥

मि पर विछाकर उन पर मल मूत्र का त्याग करे ॥ १० ॥ दिन में
र राति में दक्षिण को मुख करके मल मूत्र त्याग करे। सन्ध्याओं
उत्तर को मुख कर मलमूत्र त्यागे ऐसा ऋषि लोग कहते हैं ॥११॥
ों के एक भीतरी और दूसरा ऊपरी वस्त्र नित्य (प्रत्येक समय
दो यज्ञोपवीत धारण करे,एक वांस की छड़ी और जल सहित ए
भी साथ रक्खे ॥१२॥ जल में, हाथ में, और काष्ठ में पवित्र अग्नि
है तिस से जल सहित हाथों से कमण्डलु को शुद्ध करे ॥ १३ ॥ प्रज
ने इस कृत्य को पर्यग्निकरण कर्म कहा है। अवश्य कर्तव्य कर्मों
द शौच धर्मका तत्त्व जानने वाला ब्राह्मण आचमन किया करे॥
मुख करके भोजन किया करे ॥ १५ ॥ मौन होके भोजन करे। अङ्
ा ग्रास मुख में दिया करे ॥ १६ ॥ भोजन करते समय मुख से (
दि) शब्द न करे ॥ १७ ॥ अमावास्या अष्टमी पौर्णमासी
इन पर्वतिथियों को छोड़ के ऋतु काल में अपनी स्त्री
करे ॥ १८ ॥ तिरछा होकर संग न करे किन्तु सीधा होके
श्लोक भी प्रमाण में कहते हैं कि ॥२०॥ जो पुरुष अपनी स्त्री

यस्तुपाणिगृहीताया आस्येकुर्वीतमैथुनम् ।
भवन्तिपितरस्तस्य तन्मासंरेतसोभुजः ॥ २१ ॥
यास्यादनित्यचारेण रतिःसाऽधर्मसंश्रिता ॥ २२ ॥
अपि च काठके विज्ञायते ॥२३॥ अपि नः श्वोविजनिष्यमाणाः पतिभिः सह शयीरन्निति स्त्रीणामिन्द्रदत्तो वर इति ॥२४॥ न वृक्षमारोहेत् ॥२५॥ न कूपमवरोहेत् ॥२६॥ नाग्निं मुखेनोपधमेत् ॥२७॥ नाग्निं ब्राह्मणं चान्तरेण व्यपेयात् ॥२८॥ नाग्न्योर्न ब्राह्मणयोरननुज्ञाप्य वा भार्य्यया सह नाश्नीयादवीर्य्यवदपत्यं भवतीति वाजसनेयके विज्ञायते ॥ २९ ॥ नेन्द्रधनुर्नाम्ना निर्दिशेत ॥ ३० ॥ मणिधनुरिति ब्रूयात् ॥ ३१ ॥ पालाशमासनं पादुके दन्तधावनमिति वर्जयेत् ॥ ३२ ॥ नोत्संगे भक्षयेन्न सन्ध्यायां भुञ्जीत ॥३३॥ वैणवं दण्डं धारयेद्रुक्म-

---

द्वित पत्नी के मुख में मैथुन करे उस के पितर उस एक महिने तक उस का वीर्य खाने वाले होते हैं ॥ २१ ॥ जो उपस्थेन्द्रिय से भिन्न अन्य मार्ग में रति करे वह अधर्म सम्बन्धी कर्म है ॥ २२ ॥ और भी वेद की कठ शाखा में लिखी श्रुति से जाना जाता है कि ॥ २३ ॥ कल बालक पैदा होगा और आज एक दिन पहिले स्त्रियां पतियों के साथ शयन करें यह स्त्रियों को इन्द्रदेवता ने वरदान दिया है ॥ २४ ॥ स्नातक गृहस्थ वृक्ष पर न चढ़े ॥ २५ ॥ कूप में न घुसे ॥ २६ अग्नि को मुख से न फूंके ॥ २७ ॥ अग्नि और ब्राह्मण को छोड़के वा अनादर करके कोई काम न करे ॥२८॥ स्वीकार कराये विना अग्नियों और ब्राह्मणों के मध्य में पत्नी के साथ भोजन न करे । ऐसा करने से निर्बल पराक्रम हीन सन्तान होता है यह वाजसनेय श्रुति से जाना जाता है ॥ २९ ॥ इन्द्रधनुः ऐसा नाम लेकर किसी को न दिखावे ॥ ३० ॥ किन्तु उस को 'मणिधनु' ऐसा कहे ॥ ३१ ॥ ढांक की लकड़ी का पट्टा चौकी, खड़ाऊं, और दातौन न बनावे ॥ ३२ ॥ गोदी में अन्न को धर के या मातादि की गोदी में बैठकर तथा सन्ध्या के समय भोजन न करे ॥ ३३ ॥ बांस की छड़ी और सु-

पुरीषे कुर्यात ॥ १० ॥ उदङ्मुखश्चाहनि नक्तं दक्षिण
सन्ध्यामासीतोत्तरामुदाहरन्ति ॥ ११ ॥

स्नातकानांतुनित्यंस्यादन्तर्वासस्तथोत्तरम् ।
यज्ञोपवीतेद्वेयष्टिः सोदकश्चकमण्डलुः ॥ १२ ॥
अप्सुपाणौचकाष्ठेच कथितःपावकःशुचिः ।
तस्मादुदकपाणिभ्यां परिमृज्यात्कमण्डलुम् ॥ १
पर्यग्निकरणंह्येतन्मनुराहप्रजापतिः ।
कृत्वाचावश्यकर्माणि आचामेच्छौचवित्तमः ।इति

प्राङ्मुखोऽन्नानि भुञ्जीत ॥१५॥ तूष्णीं साङ्गुष्ठंकृ
ग्रासंग्रसेत् ॥ १६ ॥ न च मुखशव्दं कुर्यात् ॥ १७ ॥ ऋतुका
भिगामी स्यात् पर्ववर्जं स्वदारेषु ॥१८॥ अतिर्यगुपेयात्॥१
अथाप्युदाहरन्ति ॥ २० ॥

भूमि पर बिछाकर उन पर मल मूत्र का त्याग करे ॥ १० ॥ दिन में उत्तर
और रात्रि में दक्षिण को मुख करके मल मूत्र त्याग करे। सन्ध्याओं के सम
भी उत्तर को मुख कर मलमूत्र त्यागे ऐसा ऋषि लोग कहते हैं ॥११॥ स्नात
पुरुषों के एक भीतरी और दूसरा ऊपरी वस्त्र नित्य (प्रत्येक समय) सा
रहे । दो यज्ञोपवीत धारण करे,एक बांस की छड़ी और जल सहित एक क
मण्डलु भी साथ रक्खे ॥१२॥ जल में, हाथ में, और काष्ठ में पवित्र अग्नि
कहा है तिस से जल सहित हाथों से कमण्डलु को
मनु जीने इस कृत्य को पर्यग्निकरण
करने बाद शौच धर्मका तत्त्व
पूर्व को मुख करके
सहित पूरा ग्रास
चप आदि)
चतुर्दशी इन पर्व
पत्नी से संग करे
॥ १९ ॥ यहां

यस्तुपाणिगृहीताया आस्येकुर्वीतमैथुनम् ।
भवन्तिपितरस्तस्य तन्मासंरेतसोभुजः ॥ २१ ॥
यास्यादनित्यचारेण रतिःसाऽधर्मसंश्रिता ॥ २२ ॥
अपि च काठके विज्ञायते॥२३॥ अपि नः श्वोविजनिष्यमा
णाः पतिभिः सह शयीरन्निति स्त्रीणामिन्द्रदत्तो वर इति ॥२४
न वृक्षमारोहेत् ॥२५॥ न कूपमवरोहेत् ॥२६॥ नाग्निं मुखेनो-
पधमेत् ॥२७॥ नाग्निं ब्राह्मणं चान्तरेण व्यपेयात् ॥२८॥ ना-
ग्न्योर्न ब्राह्मणयोरननुज्ञाप्य वा भार्य्यया सह नाश्नीयादवी-
र्य्यवदपत्यं भवतीति वाजसनेयके विज्ञायते ॥ २९ ॥ नेन्द्र-
धनुर्नाम्ना निर्दिशेत ॥ ३० ॥ मणिधनुरिति ब्रूयात् ॥ ३१ ॥
पालाशमासनं पादुके दन्तधावनमिति वर्जयेत् ॥ ३२ ॥ नो-
त्सङ्गे भक्षयेन्न सन्ध्यायां भुञ्जीत ॥३३॥ वैणवं दण्डं धारयेद्रुक्म-

---

[illegible] पत्नी के मुख में मैथुन करे उस के पितर उस एक महिने तक उस का वीर्य खाने वाले होते हैं ॥ २१ ॥ जो उपस्थेन्द्रिय से भिन्न [illegible] मार्ग में [illegible] वह अधर्म सम्बन्धी कर्म है ॥ २२ ॥ और भी वेद की कठ शाखा में [illegible] श्रुति से जाना जाता है कि ॥ २३ ॥ [illegible] दिन पहिले स्त्रियां पतियों के साथ शयन करें यह स्त्रियों को इन्द्र [illegible] वरदान दिया है ॥ २४ ॥ स्नातक गृहस्थ वृक्ष पर न चढ़े ॥ २५ ॥ कूप में [illegible] ॥ २६ अग्नि को मुख से न फूके ॥ २७ ॥ अग्नि और ब्राह्मण को [illegible] अनादर करके कोई काम न करे॥२८॥ स्वीकार कराये बिना [illegible] और [illegible] के मध्य में पत्नी के साथ भोजन न करे । ऐसा करने से [illegible] हीन सन्तान होता है यह वाजसनेय श्रुति से जाना जाता है ॥ २९ ॥ [illegible] ऐसा नाम लेकर किसी को न [illegible] ॥ ३० ॥ किन्तु [illegible] ऐसा कहे ॥ ३१ ॥ ढांक का लकड़ी का [illegible] [illegible] न बनावे ॥ ३२ ॥ गोदी में अन्न को धर के [illegible] तथा सन्ध्या के समय भोजन न करे ॥ ३३ ॥ बांस की [illegible]

कुण्डले च ॥३४॥ न वहिर्मालां धारयेदन्यत्र रुक्म
सभा समवायांश्च वर्जयेत् ॥ ३६ ॥ अथाप्युदाहरं

अप्रामाण्यंचवेदानामार्षाणांचैवकुत्सनम् ।
अव्यवस्थाचसर्वत्र एतन्नाशनमात्मनः । इति

नावृतो यज्ञं गच्छेत् ॥ ३९॥ यदि व्रजेत्प्रदक्षि
व्रजेत् ॥४०॥ अधिवृक्षसूर्यमध्वानं न प्रतिपद्येत ॥४१
सांशयिकीं नाधिरोहेत् ॥४२॥ वाहुभ्यां न नदीं त
उत्थायापररात्रमधीत्य न पुनः प्रतिसंविशेत् ॥४४॥
मुहुर्त्ते ब्राह्मणः कांश्चिन्नियमाननुतिष्ठेदनुतिष्ठेदि

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे द्वादशोऽध्यायः ॥ १:

अथातः स्वाध्यायोपाकर्म्म श्रावण्यां पौर्णमास
पद्यां वाऽग्निमुपसमाधाय कृताधानो जुहोति देवेभ्य

वर्णके कुण्डल नित्य धारण करे ॥ ३४ ॥ सुवर्ण को छोड़कर अन्य
माला वाहर केशादि में न धारण करे किन्तु कण्ठ में भले ही
॥ ३५॥ मनुष्यों की सभादि भीड़ में न जावे ॥३६ ॥ यहां श्लोक क
कहते हैं कि ॥ ३७ ॥ वेदों का प्रमाण न मानना, ऋषि प्रोक्त
की निन्दा करना, किसी वात पर स्थिर न रहना ये आत्मा
नाश के लक्षण हैं ॥३८॥ वरण किये विना किसी के यज्ञ में न जावे
जावे तो प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करिके लौट आवे ॥ ४० ॥ वृक्ष
सूर्य को न देखे और सूर्य के सामने मार्ग में न चले ॥ ४१ ॥ डूबने
सन्देह वाली नौका पर न चढ़े ॥ ४२ ॥ भुजाओं के द्वारा तर के
न जावे या नदी को न तरे ॥ ४३ ॥ आधी रात के पश्चात् उठ
का पाठ करके फिर न सोवे ॥ ४४ ॥ ब्राह्ममुहूर्त्त अर्थात् चार घ
से ब्राह्मण किन्हीं शौच स्नान सन्ध्योपासनादि नियमों का अनु
करे यह न बने तो किसी प्रकार प्रातःस्मरणादि ही करे ॥ ४५ ॥
यह वासिष्ठ धर्म शास्त्र के भाषानुवाद में वारहवां अध्याय पूरा हु

अथ वेदाध्ययन के उपाकर्म का विचार दिखाते हैं। श्राव
की पौर्णमासी को जिस ने अग्नियोंका विधि पूर्वक आधान कि
पुरुष अपने सामने अग्नि को स्थापन करके आघारादि साम

श्छन्दोभ्यश्चेति ॥ १ ॥ ब्राह्मणान्स्वस्तिवाच्य
प्राश्य ततोऽध्यायानुपाकुर्वीरन् ॥ २ ॥ अर्धपञ्चममासा
पष्ठान्वाऽतऊर्ध्वं शुक्लपक्षेष्वधीयीत कामं तु वेदाङ्गानि
त्स्यानध्यायाः ॥ ४ ॥ संध्यास्तमिते सन्ध्यास्वन्तःशवदि
र्तीर्येषु नगरेषु कामं गोमयपर्युषिते परिलिखिते वा श्
ानान्ते शयानस्य श्राद्धिकस्य ॥ ५ ॥ मानवं चात्र श्लो
दाहरन्ति ॥ ६ ॥

फलान्यापस्तिलान्भक्ष्यान्यच्चान्यच्छ्राद्धिकंभवेत् ।
प्रतिगृह्याप्यनध्यायः पाण्यास्याब्राह्मणाःस्मृताः॥इति॥

धातवः पूतिगन्धप्रभृतावीरिणे, वृक्षमारूढस्य नावि से
यां च भुक्त्वा चाऽऽर्द्रपाणेर्वाणशब्दे चतुर्दश्याममावास्या

त देवों ऋषियों और छन्दों के नाम से प्रधान आहुति करे ॥ १ ॥ ब्राह्मण
स्वस्ति वाचन करा और दधि प्राशन करके अध्यायों का उपाकरण (प्रा
) करें ॥२॥ साढ़ेचार वा साढ़ेपांच महिने निरन्तर वेदाध्ययन करके पश्चात
र्ग करके शुक्ल पक्षों में वेदों को और वेदाङ्गों को शुक्लकृष्ण दोनों पक्षों में पढ़े
रे ॥३॥ उस वेद के अनध्याय ये निम्न लिखित हैं ॥४॥ सायंप्रातः काल
र्यनारायण के अस्त होते वा उदय होते समय, गाय या मुर्दे में मुर्दा
यमान होते,चाण्डालादि के समीप, और नगरों के भीतर वेद को न पढ़े।
ो दिन का गोबर पड़ा होने, वा मय और खोदी भूमि पर भी
श्मशान में वा श्मशान के समीप वेद को न पढ़े। लेटा हुआ, श्राद्ध करने
। श्राद्ध में भोजन करके भी न पढ़े ॥५॥ यहां मनु जी का श्लोक प्रमाण में
हैं कि ॥६॥ फलों,जल, तिलों तथा भक्ष्य पदार्थों का और श्राद्ध सम्बन्धी
का दान लेकर वेद को न पढ़े क्योंकि हाथ ही जिनका मुख है
माने गये हैं ॥ ७ ॥ शरीर के धातु रुधिरादि के निकलने पर
क्ष के कोप में, दुर्गन्धादि से दूषित स्थान में, ऊसर भूमि में,
नौका में बैठा हुआ, भोजन करके, गीले हाथ होने पर,
र, चतुर्दशी, अमावस्या, अष्टमी,

यामष्टम्यामष्टकासु प्रसारितपादोपस्थकृतस्योपाश्रित
गुरुसमीपे मैथुनव्यपेतायां वाससा मैथुनव्यपेतेनानि
ग्रामान्ते छर्दितस्य मूत्रितस्योच्चारितस्य ऋग्यजुष
सामशब्दे वाऽजीर्णे निर्घाते भूमिचलने चन्द्रसूर्योपरागे
ङ्नादपर्वतनादकम्पपातेपूपलरुधिरपांशुवर्षेष्वाकालिक
॥ ८ ॥ उल्काविद्युत्समासे त्रिरात्रम् ॥ ९ ॥ उल्काविद्यु
ज्योतिपम् ॥ १०॥ अपर्त्तावाकालिकमाचार्ये प्रेते त्रिरात्रम
चार्यपुत्रशिष्यभार्यास्वहोरात्रम् ॥११॥ ऋत्विग्योनिसंबन्धे
च गुरोः पादोपसंग्रहणं कार्यम् ॥ १२ ॥ ऋत्विक्श्वशुरपितृ
व्यमातुलाननवरवयसः प्रत्युत्थायाभिवदेत् ॥ १३ ॥ येचैव

किसी की गोदी में बैठकर, गुरु जनों के समीप में, मैथुन किये आसन वा श-
य्या पर, वा मैथुन कर चुकी स्त्री के निकट, मैथुन करने समय के वस्त्र पहने
के, ग्राम के समीप, वमन करने पर, मल मूत्र त्याग के बाद शुद्धि किये विना,
वेद को न पढ़े। सामवेद की उच्च ध्वनि होने पर ऋग्वेद यजुर्वेद को न प
आकाश में शब्द होने पर, भूमि के चलने पर, चन्द्रग्रहण वा सूर्यग्रहण के स
मय, दिशाओं में वा पर्वत में गूंजने का शब्द हो वा पर्वत कांपे, वा पर्वत का
कुछ भाग गिरे, पत्थर, रुधिर, तथा धूलि वर्षने पर इन सब हालतों में एक दिन
रात वेद का अनध्याय रक्खे ॥ ८ ॥ उल्कापात और विजली का गिरना साथर
हो तो तीन दिन वेद न पढ़े ॥ ९ ॥ और उल्कापात वा बिजली का प्रबल
भयंकर शब्द होने पर उसी दिन वा रात भर का अनध्याय करे ॥ १० ॥ उल्का-
पात वा विजली का शब्द वर्षा से भिन्न ऋतु में होतो एक दिन रात (उप-
द्रव के समय से अगले दिन उसी समय तक) अनध्याय करे। गुरु का स्वर्ग
वास होने पर तीन दिन तथा गुरु के पुत्र शिष्य और गुरुपत्नी के मरने पर
एक दिन रात वेद न पढ़े॥ ११ ॥ ऋत्विज् तथा साले श्वशुरादि के मरने पर
भी एक दिन रात का अनध्याय करे। ऋत्विज् वा श्वशुरादि में भी जो
गुरु हो अर्थात् जिस के पास वेदादि पढ़ा हो तो उस के पगों को छूना चा-
हिये ॥ १२ ॥ ऋत्विज, श्वशुर, चाचा, मामा, ये सब अपने से अधिक आयु के
हों तो इन को आता देख के खड़ा हो जाय और अभिवादन करे ॥१३॥ जिन के

पादग्राह्यास्तेषां भार्या गुरोश्च मातापितरौ यो विद्यादभि
वन्दितुमहमयंभोइति ब्रूयाद्यश्च न विद्यात् प्रत्यभिवा
मामन्त्रिते स्वरोऽन्त्यः प्लवते सन्ध्यक्षरमप्रगृह्यमायावभा
वाऽऽपद्यते यथा भो भाविति ॥ १४ ॥ पतितः पिता त्याज्य
माता तु पुत्रे न पतति ॥ १५ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ १६

उपाध्यायाद्दशाऽऽचार्य आचार्याणांशतंपिता ।
पितुर्दशशतंमाता गौरवेणातिरिच्यते ॥ १७ ॥
भार्याःपुत्राश्चशिष्याश्च संसृष्टाःपापकर्मभिः ।
परिभाष्यपरित्याज्याः पतितोयोऽन्यथात्यजेत् ॥१८॥

ऋत्विगाचार्यावयाजकानध्यापकौ हेयावन्यत्र हाना

पग छूने उचित हैं उन की स्त्रियों को भी अभिवादन करे और गुरु के माता
पिता को भी अभिवादन करे। जो (वैयाकरण होने से) अभिवादन करना
जानता हो वह (अभिवादये देव शर्माऽहंभोः) ऐसा कहे । और जो पुरु
अभिवादन के प्रत्युत्तर (जिस के सम्बोधन में अन्त्य स्वर प्लुत होता और
प्रगृह्य संज्ञा न होने पर एकार ओकारादि सन्ध्यक्षर को आय् आव् आदेश
होता है जैसे भो इति । भाविति) को नहीं जानता उस मान्य को भी शास्त्र
विधि से अभिवादन न करे किन्तु लोक भाषा में बोलकर पाद स्पर्श कर
लेवे ॥ १४ ॥ पतित हुए पिता को पुत्र त्याग देवे परन्तु पुत्र के लिये माता
पतित नहीं होती अर्थात् पतित हुई माता को भी भोजन वस्त्रादि देके पुत्र
रक्षा या सेवा करता रहे ॥१५॥ यहां श्लोक का भी प्रमाण कहते हैं कि॥१६॥ अध्याप-
क वा उपाध्याय से दश गुणी मान प्रतिष्ठा आचार्य की, आचार्य से सौ गुणा
मान्य पिता का और पिता से हजार गुणा मान्य माता का करना
चाहिये और इस से भी जितना अधिक गौरव माता का करे सो सब उचित
ही जानो ॥ १७ ॥ स्त्री पुत्र और शिष्य लोग यदि विशेष कर पाप कर्मों में
युक्त हों तो उन से कहदे (नोटिस दे देवे) कि तुम लोग अब आगे
ऐसा मत करो तथा पिछले किये का प्रायश्चित्त करलो ऐसा सुना देने पर भी
न मानें तो उन को त्याग देवे । बिना सुनाये त्यागे तो त्यागने वाला भी
पतित हो जाता है ॥ १८ ॥ ऋत्विज् यज्ञ न करासके या किसी कारण से न

यामष्टम्यामष्टकासु प्रसारितपादोपस्थकृतस्योपाश्रितस
गुरुसमीपे मैथुनव्यपेतायां वाससा मैथुनव्यपेतेनानिर्
ग्रामान्ते छर्दितस्य मूत्रितस्योच्चारितस्य ऋग्यजुष
सामशब्दे वाऽजीर्णे निर्घाते भूमिचलने चन्द्रसूर्योपरा
ङ्नादपर्वतनादकम्पपातेपूपलरुधिरपांशुवर्षेष्वाकालि
॥ ८ ॥ उल्काविद्युत्समासे त्रिरात्रम् ॥ ९ ॥ उल्का
ज्योतिपम् ॥ १०॥ अपर्त्तावाकालिकमाचार्ये प्रेते त्रिर
चार्यपुत्रशिष्यभार्यास्वहोरात्रम् ॥११॥ ऋत्विग्योनिसं
च गुरोः पादोपसंग्रहणं कार्यम् ॥ १२ ॥ ऋत्विक्श्वशु
व्यमातुलाननवरवयसः प्रत्युत्थायाभिवदेत् ॥ १३ ॥

किसी की गोदी में बैठकर, गुरु जनों के समीप में, मैथुन किये प्रा
य्या पर, वा मैथुन कर चुकी स्त्री के निकट, मैथुन करने समय के
के, ग्राम के समीप, वमन करने पर, मल मूत्र त्याग के बाद शुद्धि f
वेद को न पढे। सामवेद की उच्च ध्वनि होने पर ऋग्वेद यजुर्वेद
आकाश में शब्द होने पर, भूमि के चलने पर, चन्द्रग्रहण वा सूर्य
मय, दिशाओं में वा पर्वत में गूंजने का शब्द हो वा पर्वत कांपे, ड
कुछ भाग गिरे ,पत्थर, रुधिर, तथा धूलि वर्षने पर इन सब हालतों
रात वेद का अनध्या— रक्खे ॥ ८ ॥ उल्कापात और विजली का f
हो तो तीन दिन ... उल्कापात वा बिजली
... अनध्याय करे ॥ ९
भयंकर शब्द ... में होतो एक दिन
पात वा ...) अनध्याय करे।
द्रव ... य और गुरुपत्नी
सालेश्वशुरादि
त्विज वा श्वशुरा
उस के पगों
अपने से
अभिवादन करे

त्पतति ॥ १९॥ पतितोत्पन्नः पतितो भवतीत्याहुरन्यत्र
याः ॥ २०॥ सा हि परगामिनी तामरिक्थामुपेयात् ॥ २

गुरोर्गुरौसन्निहिते गुरुवद्वृत्तिरिष्यते ।

गुरुवद्गुरुपुत्रस्य वर्तितव्यमितिश्रुतिः ॥ २२ ॥

शस्त्रं विषं सुरा चाप्रतिग्राह्याणि ब्राह्मणस्य॥२३॥ वि
वित्तं वयः संबन्धः कर्म च मान्यम् ॥२४॥ पूर्वः पूर्वो गरी
न् स्थविरबालातुरभारिकस्त्रीचक्रिवतां पन्थाः समागमे
स्मै देयः ॥ २५ ॥ राजस्नातकयोः समागमे राज्ञा स्नातक
देयः ॥ २६ ॥ सर्वैरेव च वध्वा उह्यमानायै ॥ २७ ॥ तृणभू
ग्न्युदकवाक्सूनृतानसूयाः सतां गृहे नोच्छिद्यन्ते कदा
कदाचनेति ॥ २८ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

करावे तथा जो आचार्य वेद को न पढ़ावे उन दोनों को त्याग देना चाहि
न त्यागे तो पतित हो जाता है ॥ १९ ॥ पतित से उत्पन्न हुआ भी पुत्री
छोड़ कर पतित होता है ऐसा ऋषि लोग कहते मानते हैं ॥ २० ॥ वह
पतित को प्राप्त हुई इस से उसके साथ के वस्त्राभूषणादि धन को त्याग के
वल कन्या को स्वीकार करे ॥ २१ ॥ गुरु के गुरु भी समीपस्थ हों तो उन
साथ गुरु काला वर्त्ताव करे और गुरुपुत्र के साथ भी गुरु के तुल्य वर्त्ताव
॥ २२ ॥ शस्त्र, विष और मद्य इन को ब्राह्मण दान में न लेवे ॥ २३ ॥ विद
कर्म, अवस्था, कुटुम्ब, और धन ये पांच मान्य के स्थान हैं ॥ २४ ॥ इन
पर २ की अपेक्षा पूर्व २ का अधिक मान्य करे । वृद्ध, बालक, रोगी, बोझ
वाला, स्त्री और गाड़ीवाला इन का समागम होने पर पिछले २ के लिये र
स्ता देना चाहिये ॥ २५ ॥ राजा और स्नातक के समागम में राजा स्नातक
लिये मार्ग छोड़े ॥ २६ ॥ तत्काल विवाह हो कर आई बहू के लिये सभी
दादि मार्ग छोड़ें ॥ २७॥ कुशासन वा चटाई, भूमि, अग्नि, जल, कोमल वाणी
निन्दा का त्याग, सत्पुरुषों के घर में इन आसनादि मिलने का कदापि अ
भाव नहीं होता अर्थात् जिनके घर पर आये हुये का आसनादि मिलने द्वार
अवश्य सत्कार हो, वे ही सत्पुरुष हैं ॥ २८ ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में तेरहवां अध्याय पूरा हुआ ॥ १३

याते भोज्याभोज्यं च वर्णयिष्यामः ॥१॥ चिकित्सक-
दुश्चलोदण्डिकस्तेनाभिशस्तपण्डपतितानामन्नमभो-
॥ २ ॥ कदर्यदीक्षितबद्धातुरसोमविक्रयितक्षकरजक-
इकसूचकवार्द्धुषिकचर्मावकृत्तानां शूद्रस्य चायुधभृत
पतेर्यश्चोपपतिं मन्यते, यश्च गृहान्दहेत्‌ यश्च वधार्हं
महन्यात्, को भक्ष्यत इति ॥ ३ ॥ वाचाभिघुष्टं गणान्नं
णिकान्नं चेति ॥४॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ५ ॥

नाश्नन्ति श्ववतोदेवा नाश्नन्तिवृषलीपतेः ।
भार्याजितस्यनाश्नन्ति यस्यचोपपतिर्गृहे । इति ॥ ६ ॥
एधोदकयवसकुशलाजाभ्युद्यतयानावसथसफरीप्रियङ्गु
ान्यमधुमांसानीत्येतेषां प्रतिगृह्णीयात् ॥ ७ ॥ अथाप्यु-
हरन्ति ॥ ८ ॥

अब इस चौदहवें अध्याय में भक्ष्याभक्ष्य का विचार दिखाते हैं ॥१॥ वैद्य,
...ला, व्यभिचारिणी स्त्री, लाठी आदिसे पशु हत्या करने वाला, चोर, नि-
...द, नपुंसक और पतित इन सबका अन्न अभक्ष्य है ॥ २ ॥ कंजूस, दीक्षित,
...ो, रोगी, सोम बेंचने वाला, बढ़ई, धोबी, मद्य बनाने बेंचने वाला कल-
...ार, चुगल, ब्याज लेनेवाला-सूदखोर, शूद्र, अस्त्रधारी, जो अन्य जीवित पुरुष
...ी पत्नी से संग करता हो, जो अपनी स्त्रीके जार को मानता (स्वीकार क-
...ता) हो, जो घरों में आग लगावे, और जो वध करने योग्य को न मार-
...े, इन का अन्न कोई न खावे ॥ ३ ॥ वाणी से निन्दित, चन्दा का, और
...ेश्या का अन्न भी अभक्ष्य है ॥४॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥५॥
...ुत्ता पालने वाले, वेश्यागामी, स्त्री की आज्ञा में चलने वाले, अर्थात् जिनको
...ी ने जीत लिया हो और जिस की स्त्री का दूसरा पति जार पुरुष
...ो इन सब के होमादि को देवता लोग ग्रहण नहीं करते ॥ ६ ॥ ईंधन, जल,
...ुस, कुश, धान वा खीलें, नये बने हुए-सवारी, घर, मछली, कंगुनी, माला,
...दन, शहद, और मांस इन पदार्थों को वेद्यादि निन्दितों से भी लेलेवे ॥७॥
इस विषय में श्लोकका भी प्रमाण कहते हैं कि ॥८॥ माता पितादि मान्य और
...ी पुत्रादि दुःखित हों तो उन के निर्वाहार्थ और देवता तथा अतिथियों के

गुरून्भृत्यांश्चोज्जिहीर्षन्नर्चिष्यन्देवतातिथीन् ।
सर्वतःप्रतिगृह्णीयान्नतुतृप्येत्स्वयंततः । इति ॥ ९

न मृगयोरिपुचारिणः परिवर्ज्यमन्नम् ॥ १०॥ विज्ञ
ह्यगस्त्यो वर्षसाहस्त्रिके सत्रे मृगयां चकार, तस्याऽऽसंस्तु
मयाः पुरोडाशा मृगपक्षिणां प्रशस्तानाम् ॥११ ॥अपि
प्राजापत्याञ्श्लोकानुदाहरन्ति ॥ १२ ॥

उद्यतामाहृतांभिक्षां पुरस्तादप्रचोदिताम् ।
भोज्यांप्रजापतिर्मेने अपिदुष्कृतकारिणः ॥ १३ ॥
श्रद्दधानैर्नभोक्तव्यं चोरस्यापिविशेषतः ।
नत्वेवबहुयाज्यस्य यश्चोपनयतेबहून् ॥ १४॥
नतस्यपितरोऽश्नन्ति दशवर्षाणिपञ्च च ।
नचहव्यंवहत्यग्निर्यस्तामभ्यवमन्यते ॥ १५ ॥
चिकित्सकस्यमृगयोः शल्यहस्तस्यपापिनः ।

पूजन के लिये सब किसी से अन्न को ग्रहण करले परन्तु उसको स्वयं न
तो दोष नहीं लगता है ॥९॥ धनुष बाण लेकर विचरने वाले व्याधा का
वर्जित नहीं ॥ १० ॥ क्योंकि शास्त्रों में लिखा है कि अगस्त्य ऋषि ने ह
वर्ष के सत्र यज्ञ में प्रशस्त मृगों और पक्षियों की शिकार की, उ
रस रूप पुरोडाश बनाये गये । (यह किन्हीं का मत है । अगस्त्य म
ने तपो बल के प्रभाव से दोष को नष्ट किया इस से साधारण व्याध के
में कुछ दोष रहेगा । इस कारण दशवां सूत्र एक देशी कत जानो)॥ १
इस भक्ष्या भक्ष्य विषय में प्रजापति के कहे श्लोक कहते हैं कि॥ १२॥ दात
पहिले से न कहा हो कि अमुक वस्तु तुम को मैं दूंगा और अकस्मात् वि
मांगें लाकर सामने धर दे तो ऐसी भिक्षा दुष्कर्मी पुरुषकी भी भोजन या
हण करने योग्य है ॥ १३ ॥ धर्म में श्रद्धा रखने वाले ब्राह्मणों को चोरों
एक साथ बहुतों को यज्ञ कराने तथा एक साथ बहुतों का उपनयन कर
वाले का अन्न नहीं खाना चाहिये ॥ १४ ॥ जो पुरुष उस अकस्मात् प्रा
पूर्वोक्त भिक्षा का तिरस्कार करता है उस के श्राद्ध को पितर लोग
पन्द्रह वर्ष तक स्वीकार नहीं करते और उस के हविष्यांश को अग्नि देव
ओं में नहीं पहुंचाता ॥ १५ ॥ वैद्य, व्याधा, भाला व शूल हाथ लिये पा

पण्डस्यकुलटायाश्च उद्यतापिनगृह्यतइति ॥ १६ ॥
उच्छिष्टमगुरोरभोज्यं, स्वमुच्छिष्टोपहतं च ॥ १७ ॥ यद-
न्नं केशकीटोपहतं च ॥१८॥ कामं तु केशकीटानुद्धृत्याद्भिः
प्रोक्ष्यभस्मनाऽवकीर्य वाचा प्रशस्तमुपभुञ्जीत ॥१९॥ अपिह्य-
त्रप्राजापत्यान् श्लोकानुदाहरन्ति ॥ २० ॥

त्रीणिदेवाःपवित्राणि ब्राह्मणानामकल्पयन् ।
अदृष्टमद्भिर्निर्णिक्तं यच्चवाचाप्रशस्यते ॥ २१ ॥
देवद्रोण्यांविवाहेषु यज्ञेषुप्रकृतेषुच ।
काकैःश्वभिश्चसंस्पृष्टमन्नंतन्नविसर्जयेत् ॥ २२ ॥
तस्मादन्नमुद्धृत्य शेषंसंस्कारमर्हति ।
द्रवाणांप्लावनेनैव घनानांप्रोक्षणेनतु ।

नपुंसक, हिजड़ा, और व्यभिचारिणी स्त्री इन की अकस्मात् आयी भिक्षा को भी ग्रहण न करे ॥ १६ ॥ गुरु से भिन्न का उच्छिष्ट, अपना उच्छिष्ट और जिस में उच्छिष्ट का मेल हो गया हो ऐसा अन्न अभक्ष्य है ॥ १७ ॥ जिस भोजन में बाल या कीड़ा पड़ गये हों वह भी अभक्ष्य है ॥ १८ ॥ जिस में वालादि पड़ गये हों उस में से वालों और कीड़ों को निकाल कर जल सेचन कर भस्म छिड़क के वाणी से मन्त्रों (पितुंनुस्तोषं०) द्वारा अन्नस्तुति किये अन्न को भले ही खावे तब दोष नहीं लगता है ॥ १९ ॥ और भी प्रजापति के कहे श्लोकों का उदाहरण देते हैं कि ॥२०॥ देवता लोगों ने ब्राह्मणों के लिये तीन प्रकार के पदार्थ पवित्र कहे हैं-एक जिस में विना देखी जानी कोई अशुद्धि हो, द्वितीय जो पुनः जल से या धोने आदि द्वारा जो पवित्र किया गया हो और तीसरा वाणी से जिस की प्रशंसा की गयी हो ॥ २१ ॥ देव द्रोणी अर्थात् दश मेर आदि के भोजन से जहां देव पूजा की जाय, विवाहों में तथा अन्य यज्ञों में बहुत से पकाये अन्न के ढेर में कौवा या कुत्ता मुख लगा देवें तो उस अन्न का त्याग न करे ॥ २२ ॥ किन्तु उस में से उच्छिष्टांश अन्न को निकाल कर शेष अन्न की शुद्धि कर लेवे । यदि पतले कढ़ी आदि हों तो छिनारने से, कड़े रोटी पूरी आदि की कुशों द्वारा मार्जन से शुद्धि होती है । और छिनरों का

मार्जारमुखसंस्पृष्टं शुचिरेवहितद्भवेत् ॥ २३ ॥

अन्नं पर्युषितं भावदुष्टं सकृल्लेखं पुनःसिद्धमाममांसं प॰
च कामं तु दध्ना घृतेनाभिघारितमुपयुञ्जीत ॥ २४ ॥ अपि
ह्यत्र प्राजापत्यान् श्लोकानुदाहरन्ति ॥ २५ ॥

हस्तदत्तास्तुयेस्नेहा लवणव्यञ्जनानिच ।
दातारंनोपतिष्ठन्ति भोक्ताभुङ्क्तेचकिल्विषम् ॥ २६ ॥
प्रदद्यान्नतुहस्तेन नाऽऽयासेनकदाचन, इति ॥ २७ ॥

लशुनपलाण्डुकवकगृञ्जनश्लेष्मातवृक्षनिर्यासलोहितव्र॰
नश्वकाकावलीढशूद्रोच्छिष्टभोजनेषु कृच्छ्रातिकृच्छ्रइतरेऽप्य॰
न्यत्र मधुमांसफलविकर्षेष्वग्राम्यपशुविषयः ॥२८॥ संधिनी
क्षीरमवत्साक्षीरं गोमहिष्यजानामनिर्दशाहानामन्तर्नाव्यु॰

मुख भोज्यान्न में लग गया होतो वह अन्न शुद्ध ही है ॥ २३ ॥ बासी पहि॰
दिन का धरा हुआ, जिस में ग्लानि वा शंका हो गयी हो, एक बार किसे॰
जान वरने पंजा मार दिया हो, फिर से पकाया, कच्चा मांस, वा पकाया॰
मांस ये सब अभक्ष्य हैं। परन्तु बासे धरे हुये अन्नादि को दही वा घी ॰
संस्कार करके भले ही खालेवे ॥ २४ ॥ और भी यहां प्रजापति के श्लोक उदा॰
हरण में कहते हैं कि॥२५॥ घी आदि स्नेह, लवण और दही आदि व्यञ्जन ये॰
सब हाथ पर दिये जांय तो देने वाले को दुर्लभ हो जाते और इन को खाने॰
वाला पाप को खाता है अर्थात् भोजन करते हुये को लवण घृतादि हाथ॰
पर नहीं देने चाहिये किन्तु पात्र वा पत्तल पर धर देवे ॥२६॥ और देने वाला भी॰
उक्त पदार्थों को हाथ से न देवे और लोभ में आकर कष्ट मानताहुआ भी कदापि॰
दान न देवे॥२७॥ लहसन, प्याज, कठफूल, गाजर, शलगम, लसोड़ा, (लभेड़ा) वृक्षों का॰
गोंद, लाल गोंद, वृक्षों के गोदने से निकला रस वा दूध, कुत्ते कौवे का चाटा हुआ ॰
अन्नादि, और शूद्र का उच्छिष्ट इन सब को खालेने पर कृच्छ्रातिकृच्छ्र ॰
व्रत करे तथा शहद मांस और जिन से फलों की हानि हो ऐसे वृक्षों के फूल॰
वा फली आदि को छोड़ के अन्य अभक्ष्यों में भी यही कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्र॰
जानो और यह मांस ग्राम के पशुओं से भिन्न जंगल का जानो ॥ २८ ॥ गा॰
भिन गौ का, जिस का बछा मर गया हो, तथा गौ भैंसि बकरी का ब्याने॰
पर दश दिन के भीतर का दूध, नौका का जल, ये सब अभक्ष्य हैं।पुत्रा॰

दमपूपधानाकरम्भसक्तुवटकतैलपायसशाकानि शुक्तानि वर्जयेत्, अन्यांश्च क्षीरयवपिष्टविकारान् ॥ २९ ॥ श्वाविच्छल्यकशशकच्छपगोधाः पञ्चनखानां भक्ष्याः ॥३०॥ अनुष्ट्राः पशूनामन्यतोदतश्च मत्स्यानां वा चेटगवयशिशुमारनक्रकुलीरा विकृतरूपाः ॥ ३१ ॥ सर्पशीर्षाश्च ॥ ३२ ॥ गौरगवयशरभाश्चानुद्दिष्टाः ॥ ३३ ॥ तथा धेन्वनडुहौ मेध्यौ वाजसनेयके विज्ञायेते ॥ ३४ ॥ खड्गे तु विवदन्त्यग्राम्यशूकरे च ॥ ३५ ॥ शकुनानां च विघुविविष्किरजालपादाः ॥ ३६ ॥ कलविङ्कप्लवहंसचक्रवाकभासवायसपारावतकुक्कुटसारङ्गपाण्डुकपोतक्रौञ्चक्रकरगृध्रश्येनबकबलाकमद्गुटिट्टिभमान्धालनक्तं

पकाये जौ, दही में मिले सत्तू, केवल सत्तू, तेल के बड़े, पायस–खीर, पकाये शाक ये सब धरे रहने से खटाय जाने पर अभक्ष्य हैं। तथा दूध, और पिट्ठी के अन्य विकार भी खटाये हुए अभक्ष्य हैं ॥ २९ ॥ पांच नख जीवों में श्वावित्, शल्यक, (दो प्रकार की सेही उस के अवान्तर भेद में दो प्रकार जाति हैं) शश, कच्छप, और गोधा (गोह) ये पांच भक्ष्य हैं परिसंख्या विधि राग से सर्वत्र प्राप्त मांस भक्षण के अन्यों में परिवर्जन है। अर्थात् हिंसाजनक होने से सभी मांस भक्षण त्याज्य है यदि सब राग भी कोई न कर सके तो पांच पञ्चनख वालों में प्रवृत्ति रहने से कम दोष (अर्थात् निर्दोष फिर भी न होगा) ॥ ३० ॥ ऊंट को छोड़के एक ओर दांत वाले, चेट, गवय, शिशुमार, नाका, कुलीर इन नामों वाले विकृत भयंकर रूप धारी, ॥ ३१ ॥ सांप के जैसे शिर वाले ये चेट आदि नामक जल जन्तु परिसंख्या विधि से भक्ष्य हैं ॥३२॥ गौर मृग, गवय (नीलगाय) और शरभ ये जङ्गल के जीव भक्ष्यों में उद्दिष्ट नहीं हैं ॥ ३३ ॥ गौ बैल मेध्य नाम यज्ञ के अनुकूल हैं ऐसा वाजसनेय श्रुति से जाना जाता है ॥३४। गैंडा और जंगली सुअर के भक्ष्य होने न होने में विवाद करते हैं ॥ ३५ ॥ पक्षियों में विघु, विष्किर, जालपाद नामक पक्षी भी अभक्ष्य हैं ॥ ३६ ॥ कलविङ्क, प्लव, हंस, चक्रवाक, भास, कौवा, परेवा, मुर्गा, सारङ्ग, श्वेतकबूतर, क्रौञ्च, क्रकर, गीध, श्येन, बगुला, बलाका, मद्गु, टिट्टिहिया, मान्धाता, चमगीदड़,

घरदार्वाघाटचटकरैलातकहारीतखञ्जरीटग्राम्यकुक्कुटशुकसा-
काकोकिलक्रव्यादा ग्रामचारिणश्चाग्रामचारिणश्चेति ॥ ३७ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

शोणितशुक्रसंभवः पुरुषो मातापितृनिमित्तकः ॥ १ ॥
तस्य प्रदानविक्रयत्यागेषु मातापितरौ प्रभवतः ॥ २ ॥ न
त्वेकं पुत्रं दद्यात् प्रतिगृह्णीयाद्वा ॥ ३ ॥ स हि संतानाय
पूर्वेषाम् ॥ ४ ॥ न स्त्री दद्यात् प्रतिगृह्णीयाद्वाऽन्यत्रानुज्ञाना-
द्भर्तुः ॥ ५ ॥ पुत्रं प्रतिग्रहीष्यन् बन्धूनाहूय राजनि चावेद्य
निवेशनस्य मध्ये व्याहृतिभिर्हुत्वा दूरेबान्धवं बन्धुसन्नि-
कृष्टमेव प्रतिगृह्णीयात् ॥ ६ ॥ संदेहे चोत्पन्ने दूरेबान्धवं
शूद्रमिव स्थापयेत् ॥ ७ ॥ विज्ञायते ह्येकेन बहूंस्त्रायत

कठफोरवा, चिड़िया, रैलातक, हारीत, खञ्जरीट, गांव का मुर्गा, तोता, मैना,
कोइल, कच्चा मांस खाने वाले तथा गांव या वन में रहने वाले ये उक्त सब
पक्षी अभक्ष्य हैं ॥ ३७ ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौदहवां अध्याय पूरा हुआ ॥१४॥

माता पिता जिस के निमित्त कारण हैं ऐसे रजवीर्य से सन्तान का शरीर
बना है ॥ १ ॥ उस सन्तान को किसी के लिये दे देने, बेंच देने और त्याग
देने का अधिकार माता पिता को है (परन्तु सन्तान का बेंचना काम अच्छा नहीं
किन्तु निन्दित पाप कर्म है। यह बात प्रसंगानुसार धर्म शास्त्रों में लिखी है)
॥ २ ॥ किसी के एक ही पुत्र होतो उसे पिता किसी को दान करके न देवे
और लेने वाला भी न लेवे ॥ ३ ॥ क्योंकि वही आगे पूर्वजों का कुल चलाने
वाला होगा ॥ ४ ॥ पति की आज्ञा के विना माता अपने सन्तान का दान
किसी को न देवे और किसी के सन्तान का दान भी न लेवे ॥ ५ ॥ दत्रिम
वा दत्तक पुत्र को लेना चाहता हुआ पुरुष राजा के दरबार में
आवेदन पत्र (दरखास्त) देके, कुटुम्बियों को बुलाकर, घर के बीच
कुण्ड में व्याहृतियों से होम करके, उस के कुटुम्बी दूर हों तो कुटुम्बि-
यों के सामने ही उस पुत्र को स्वीकार करे ॥ ६ ॥ जिस के माता पितादि
कुटुम्बी दूर देश में हों ऐसे पुत्र को ले लेने पर उस की शुद्ध उत्पत्ति में
सन्देह हो जाय तो उसे शूद्र के तुल्य अपने घर में रक्खे ॥ ७ ॥ श्रुति से ज्ञा-

इति ॥८॥ तस्मिंश्चेत् प्रतिगृहीत औरसः पुत्र उत्पद्येत, चतुर्थभागभागी स्याद्दत्तकः ॥९॥ यदि नाभ्युदयिकेषु युक्तः स्याद्वेदविप्लविनः सव्येन पादेन प्रवृत्ताग्रान् दर्भान् लोहितान् वोपस्तीर्य पूर्णपात्रमस्मै निनयेत् ॥ १० ॥ नेतारं चास्य प्रकीर्णकेशा ज्ञातयोऽन्वालभेरन्नपसव्यं कृत्वा गृहेषु स्वैरमापद्येरन्नूर्ध्वं ते न धर्मयेयुस्तद्धर्माणस्तं धर्मयन्तः ॥११॥ पतितानां तु चरितव्रतानां प्रत्युद्धारः ॥१२॥ अथाप्युदाहरन्ति॥१३॥
अग्रेऽभ्युद्धरतां गच्छेत् क्रीडन्निवहसन्निव ।
पश्चात्पातयतां गच्छेच्छोचन्निवरुदन्निव ॥ १४ ॥
आचार्यमातृपितृहन्तारस्तत्प्रसादाद्भयाद्वा, एषा तेषां

ता है कि एक से बहुतों की रक्षा करे ॥ ८ ॥ उस दत्तक पुत्र के ले लेने दि औरस पुत्र उत्पन्न हो जाय तो दत्तक पुत्र पिता के चतुर्थांश का होगा ॥ ९ ॥ यदि वह दत्तक पुत्र शास्त्रोक्त कर्मों में तत्पर न हो किधर्मादि कर्मों में प्रवृत्त हो निषेध करने पर भी न माने उलटा वेदवि द को डुवाने वाला हो उस के लि[illegible] [illegible]णाग्र फैलाये कुशों वा लोहों पर एक [illegible] हही के [illegible] पग से ठरका देवे ॥१०॥ [illegible] के वाल [illegible] कुटुम्बी लोग उस जल वाले का [illegible] पयों [illegible] हिने [illegible] गे स्पर्श) [illegible] का [illegible] ते

चरदार्वाघाटचटकरैलातकहारीतखञ्जरीटग्राम्यकुक्कुटशुकस
काकोकिलक्रव्यादा ग्रामचारिणश्चाग्रामचारिणश्चेति ॥ ३७
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥
शोणितशुक्रसंभवः पुरुषो मातापितृनिमित्तकः ॥ १ ॥
तस्य प्रदानविक्रयत्यागेषु मातापितरौ प्रभवतः ॥ २ ॥ न-
त्वेकं पुत्रं दद्यात् प्रतिगृह्णीयाद्वा ॥ ३ ॥ स हि संतानाय
र्वेषाम् ॥ ४ ॥ न स्त्री दद्यात् प्रतिगृह्णीयाद्वाऽन्यत्रानुज्ञाना-
र्तुः ॥ ५ ॥ पुत्रं प्रतिग्रहीष्यन् बन्धूनाहूय राजनि चावेद्य
विशनस्य मध्ये व्याहृतिभिर्हुत्वा दूरेबान्धवं बन्धुसन्नि-
ष्टमेव प्रतिगृह्णीयात् ॥ ६ ॥ संदेहे चोत्पन्ने दूरेबान्ध
मिव स्थापयेत् ॥ ७ ॥ विज्ञायते ह्येकेन बहूंस्त्रायत

रवा, चिड़िया, रैलातक, हारीत, खञ्जरीट, गांव का मुर्गा, तोता, मैना
, कचा मांस खाने वाले तथा गांव या वन में रहने वाले ये उक्त सब
अभक्ष्य हैं ॥ ३७ ॥
ासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौदहवां अध्याय पूरा हुआ ॥१४॥
ता पिता जिस के निमित्त कारण हैं ऐसे रजवीर्य से सन्तान का शरीर
॥ १ ॥ उन सन्तान को किसी के लिये दे देने, बेंच देने और त्य
धिकार माता पिता को है (परन्तु सन्तान का बेंचना काम अच्छा न
न्दित पाप कर्म है। यह बात प्रसंगानुसार धर्म शास्त्रों में लिखी है
सी के एक ही पुत्र होतो उसे पिता किसी को दान करके न देवे
वाला भी न लेवे ॥ ३ ॥ क्योंकि वही आगे पूर्वजों का कुल चलाने
॥ ४ ॥ पति की आज्ञा के विना माता अपने सन्तान का दान
न देवे और किसी के सन्तान का दान भी न लेवे ॥ ५ ॥ दत्रिम
पुत्र को लेना चाहता हुआ पुरुष राजा के दरबार में
(दरखास्त) देके, कुटुम्बियों को बुलाकर, घर के बीच
तियों से होम करके, उस के कुटुम्बी दूर हों तो कुटुम्बि-
ही उन पुत्र को स्वीकार करे ॥ ६ ॥ जिस के माता पितादि
न में दो ऐसे पुत्र को ले लेने पर उस की शुद्ध उत्पत्ति में
तो उसे शूद्र के तुल्य अपने घर में रक्खे ॥ ७ ॥ श्रुति से जा-

शत ॥८॥ तस्मिंश्चेत् प्रतिगृहीत औरसः पुत्र उत्पद्येत, चतु
र्थंभागभागी स्याद्दत्तकः ॥९॥ यदि नाभ्युदयिकेषु युक्तः स्याद्
वेदविप्लविनः सव्येन पादेन प्रवृत्ताग्रान् दर्भान् लोहितान्
वोपस्तीर्य पूर्णपात्रमस्मै निनयेत् ॥ १० ॥ नेतारं चास्य प्रकी-
र्णकेशा ज्ञातयोऽन्वालभेरन्नपसव्यं कृत्वा गृहेषु स्वैरमापद्ये
रन्नत ऊर्ध्वं ते न धर्मयेयुस्तद्धर्माणस्तं धर्मयन्तः ॥११॥ पति-
तानां तु चरितव्रतानां प्रत्युद्धारः ॥१२॥ अथाप्युदाहरन्ति॥१३॥
अग्रेऽभ्युद्धरतां गच्छेत् क्रीडन्निव हसन्निव ।
पश्चात्पातयतां गच्छेच्छोचन्निव रुदन्निव ॥ १४ ॥
आचार्यमातृपितृहन्तारस्तत्प्रसादाद्व्याद्वा, एषा तेषां

ना जाता है कि एक से बहुतों की रक्षा करे ॥ ८ ॥ उस दत्तक पुत्र के ले लेने
पर यदि औरस पुत्र उत्पन्न हो जाय तो दत्तक पुत्र पिता के चतुर्थांश का
भागी होगा ॥ ९ ॥ यदि वह दत्तक पुत्र शास्त्रोक्त कर्मों में तत्पर न हो कि-
न्तु अधर्मादि कर्मों में प्रवृत्त हो निषेध करने पर भी न माने अथवा वेदवि
रोधी वेद को डुबाने वाला हो उस के लिये दक्षिणाग्र फैलाये कुशों या लो-
हित तृणों पर एक जल से भरे मट्टी के पात्र को बायें पग से ढरका देवे ॥१०॥
चोटी तथा शिर के बाल खोलें बिखेरें हुए अपसव्य करके कुटुम्बी लोग उस पात्र
ढरकाने वाले का अन्वारम्भ (कुशों द्वारा या दहिने हाथ से स्पर्श)
करें। फिर निरपेक्ष घर को लौट आवें इस के उपरान्त उस के साथ धर्म का
व्यवहार रखते वा उस को धर्माचरण कराते हुए कुछ भी आचरण न करें
यह जीवित हो उस को तिलाञ्जलि देने की रीति दिखायी है) ॥ ११ ॥
धर्म से पतित हुए उक्त प्रकार के मनुष्य प्रायश्चित्त कर लें तो उन के साथ
न करके जाति में मिला लेना चाहिये ॥ १२ ॥ इस पर श्लोक का प्रमाण
कहते हैं कि ॥१३॥ अन्यों का उद्धार वा उपकार करने वालों में क्रीड़ा करता
हंसता आनन्द मानता हुआ सा सब से आगे चले और किन्हीं को पतित
नीचे गिराते हुओं में शोक मनाता और रोता हुआ सा सब से पीछे
॥ १४ ॥ गुरु, माता, और पिता को भी ताड़ना करें उन का प्रायश्चित्त

प्रत्यापत्तिः ॥ १५॥ पूर्णाद्दात् मवृत्ताद्वा काञ्चनं पात्रं माहेर
वा पूरयित्वाऽऽपोहिष्टेति मन्त्रेणाद्भिरभिषिञ्चति ॥ १६ ॥ सं-
र्वएवाभिषिक्तस्य प्रत्युद्धारः पुत्रजन्मना व्याख्यातो व्याख्यात
इति ॥ १७ ॥

इति श्रीवासिष्ठे धर्मशास्त्रे पञ्चदशोध्यायः ॥ १५ ॥

अथ व्यवहाराः ॥ १॥ राजमन्त्री सदःकार्य्याणि कुर्यात्
। २ ॥ द्वयोर्विवदमानयोर्न पक्षान्तरं गच्छेत् ॥ ३ ॥ यथास-
मपराधो ह्यन्ते नापराधः ॥४॥ समः सर्वेषु भूतेषु यथासन-
पराधो ह्याद्यवर्णयोर्विद्यान्ततः ॥५॥ संपन्नं च रक्षद्दरा
लधनान्यप्राप्तव्यवहाराणां प्राप्तकाले तु तद्ददद्यात् ॥६॥
लिखितंसाक्षिणोभुक्तिः प्रमाणंत्रिविधंस्मृतम् ।

आदि की प्रसन्नता से वा भय से निम्नलिखित जानो ॥ १५ ॥ वर्ष की
स के दिन से वा नये संवत्सर के आरम्भ से व्रत का आरम्भ करके सु-
वा मट्टी के पात्र को जल से भर के उस से अपना अभिषेक (आपो-
) मन्त्र पढ़ २ कुशों द्वारा तब तक करे ॥ १६ ॥ कि जब तक उस
सब जल अभिषेक में चुक जावे इसी से उस के पाप का उद्धार हो
। जिस का व्याख्यान पुत्र जन्म के साथ किया गया जानो ॥ १७ ॥
ासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पन्द्रहवां अध्याय पूरा हुआ ॥१५॥
व्यवहारों की व्यवस्था कहते हैं ॥ १ ॥ राजा का मन्त्री (दीवान)
ार्य करे ॥ २ ॥ विवाद करने वाले मुद्दई मुद्दाले दोनों में से किसी
त की ओर न झुके ॥ ३॥ धनादि के लोभ से एक पक्ष में झुकना अ
पक्षपात के त्याग में अपराध नहीं है ॥ ४ ॥ न्याय कर्ता सब प्रा
समदृष्टि रक्खे एक का पक्ष करने में पाप लगता है। ब्राह्मण क्ष
वर्णो के न्याय में विद्या पुस्तकों द्वारा विचार करे ॥ ५ ॥ छोटे
न रहने पर व्यवहार की मर्यादा से अनभिज्ञ (नाबालिग)रा
सम्पत्तियों की रक्षा करता हुआ उन के समर्थ (१८ वर्ष के)
उन की सम्पत्ति सौंप देवे ॥ ६ ॥ तमस्सुक का लेख होना, कोई

धनस्वीकरणंपूर्वं धनीधनमवाप्नुयात्,इति ॥ ७ ॥
मार्गक्षेत्रयोर्विसर्गं तथा परिवर्तनेन तरुणगृहेष्वर्था
रेषु त्रिपादमात्रम् ॥ ८॥ गृहक्षेत्रविरोधे सामन्तप्रत्ययः
सामन्तविरोधे लेख्यप्रत्ययः ॥ १० ॥ प्रत्यभिलेख्यविरोधे
मनगरवृद्धश्रेणिप्रत्ययः ॥ ११ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ १२ ॥

पैतृकंक्रीतमाधेयमन्वाधेयंप्रतिग्रहम् ।
यज्ञादुपगमोवेणिस्तथाधूमशिखाष्टमी,इति ॥१३ ॥
तत्रभुक्तानुभुक्तदशवर्षम् ॥ १४॥अन्यथाऽप्युदाहरन्ति
आधिःसीमाबालधनं निक्षेपोपनिधिःस्त्रियः ।

साक्षी (गवाहों) का होना, और भोग होना, यह तीन प्रकार का प्र
विवाद के निर्णय में अपेक्षित है। धन लेने वाला ऋणी प्रथम स्वीकार
तो धनी को उस का धन दिलाया जावे ॥ ७ ॥ मार्ग तथा खेत के छोड़ने
बदलने से नये घरों में अर्थान्तर करलेने पर अर्थात् घर के स्थान में खे
खेत की जगह घर हो जाने पर घर वाले को उस का तीन भाग मूल्य
॥ ८ ॥ घर और खेत के विवाद में विरोध होतो सामन्त (नंबरदार)
बात,मानी जाय॥९॥ कई नम्बरदार हों और वे परस्पर विरुद्ध कहें तो लेख
का मिले वह माना जाय॥१०॥ लेख में भी विरोध होतो गांव तथा नगरके वृद्ध
गों की बात ठीक मानी जाय॥११॥ इसपर भी श्लोक प्रमाण कहते हैं कि॥१२॥
सके पिताका हो, जिसने खरीदा हो, जिसने स्थापित किया, जिसने जीर्णो
किया, जिसको दान में मिला, यज्ञ की दक्षिणा में जिसको मिला, जि
हद्द में हो और कोइलादि चिन्ह मिलें। ये आठ रीति निर्णय करने कं
कि जिसके पिता का होना आदि सिद्ध हो वह वस्तु उसी का जानो ॥१३॥
न्यके पदार्थ को भी जिसने दश वर्ष तक भोगा तथा फिर२ भोग किया तब
का होजाता है ॥ १४ ॥ इस पर अन्य प्रकार से भी श्लोक प्रमाण कहते हैं
॥ १५ ॥ गिर्वी रक्खा वस्तु, सीमा,बालक का धन,गिनाय के दिया वा ताले
बन्द बक्सादि में रक्खा धरोहर, स्त्रियां, (दासी) राजा का धन और
पाठी का धन ये सब जिसके यहां बहुत काल भी रहें तो भी अन्य के का

राजस्वंश्रोत्रियद्रव्यं नसंभोगेनहीयन्ते ॥ १६ ॥
प्रहीणद्रव्याणि राजगामीनि भवन्ति ॥ १७ ॥ ततोऽन्यथा राजा मन्त्रिभिः सह नागरैश्च कार्य्याणि कुर्य्यात् ॥१८॥ वेधसो वा राजा श्रेयान् गृध्रपरिपारं स्यात् ॥ १९ ॥ गृध्रपरिवारं वा राजा श्रेयान् ॥ २० ॥ गृध्रपरिवारं स्यान्न गृध्रो गृध्रपरिवारं स्यात् परिवाराद्धि दोषाः प्रादुर्भवन्ति स्तेयहारविनाशनं तस्मात् पूर्वमेव परिवारं पृच्छेत् ॥ २१ ॥ अथ साक्षिणः ॥ २२ ॥ श्रोत्रियोरूपवान् शीलवान् पुण्यवान् सत्यवान् साक्षिणः सर्वेषु सर्वएव वा ॥ २३ ॥

स्त्रीणांसाक्ष्यंस्त्रियःकुर्यु र्द्विजानांसदृशाद्विजाः ।
शुद्राणांसन्तःशूद्राश्च,अन्त्यानामन्त्ययोनयः ॥ २४ ॥
अथाप्युदाहरन्ति ॥ २५ ॥
प्रातिभाव्यंवृथादानं साक्षिकंशौरिकंचयत् ।

आने मात्र से ये अन्य के नहीं हो जाते हैं ॥ १६ ॥ जिसका कोई दायभागी न हो ऐसे नष्ट हुए मनुष्य का धन राजा के कोष में जाना चाहिये ॥ १७ ॥ तिससे अन्य प्रकार राजा मन्त्रियों और नगर के सभ्य मनुष्यों के साथ राज कार्यों को करे ॥ १८ ॥ अथवा गीध पक्षी के समान परिवारवाला राजा विधा से भी अच्छा होता है । इससे गृध्रपरिवार हो ॥ १९ ॥ गृध्रपरिवार राजा कल्याकारी है ॥२०॥ गृध्रपरिवार हो पर लालची न हो उदार प्रकृति रहे । लालच परिवार से ही चोरी लूट और विनाशादि दोष होते हैं इससे पहिले ही सब कामों में भाई बन्धुओं की सलाह सम्मति पूर्वक काम करे ॥ २१ ॥ अब साक्षियों के विषय का विचार करते हैं ॥ २२ ॥ वेद पाठी, सुरूपवान्, सुशील, पुण्यात्मा, सत्यवादी, सब वर्णों में से साक्षी किये जावें या सभी प्रकार के साक्षी हों तो बुरों से अच्छों की परीक्षा होगी ॥ २३ ॥ स्त्रियों की गवाही स्त्रियां देवें । तथा द्विजों के साक्षी उन्हीं२के तुल्य द्विज होवें । शूद्रों के साक्षी अच्छे प्रतिष्ठित शूद्र और अन्त्यजों के गवाह भी अन्त्यज ही होने चाहिये ॥२४॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ २५ ॥ किसी की जामिनी करना, किसी को व्यर्थ देने की प्रतिज्ञा, साक्षी, शूरता सम्बन्धी, दण्ड (जुर्माना)

दण्डशुल्कावशिष्टंच नपुत्रोदातुमर्हति, इति ॥ २६ ॥
ब्रूहिसाक्षिन्यथातत्त्वं लम्बन्तेपितरस्तव ।
तववाक्यमुदीक्षन्तउत्पतन्तिपतन्तिच ॥ २७ ॥
नग्नोमुण्डःकपालीच भिक्षार्थीक्षुत्पिपासितः ।
अन्धःशत्रुकुलेगच्छेद्यःसाक्ष्यमनृतंवदेत् ॥ २८ ॥
पञ्चपश्वनृतेहन्ति दशहन्तिगवानृते ।
शतमश्वानृतेहन्ति सहस्रंपुरुषानृते ॥ २९ ॥
व्यवहारेमृतेदारे प्रायश्चित्तंकुलस्त्रियाः ।
तेषांपूर्वपरिच्छेदाच्छिद्यन्तेऽत्रापवादिभिः ॥ ३० ॥
उद्वाहकालेरतिसंप्रयोगे प्राणात्ययेसर्वधनापहारे ।

और पिछला बाकी कर, इन सब पिताके प्रारम्भ किये कामों का पिता के रहने पर पुत्र उत्तर दाता नहीं है ॥२६॥ साक्षीसे न्यायाधीश या अदालत ओर से नियत हुआ वकील ऐसा कहे कि–हे साक्षिन् ! जैसा तुम जानते ऐसा ठीक २ सत्य कहो क्योंकि तुम्हारे वाक्य की प्रतीक्षा करते (बाटदेख हुए तुम्हारे पितर लोग बीच में लटक रहे हैं । यदि तुम सत्य बोले तो सत्य के प्रभाव से तुम्हारे पितर लोग ऊपर के स्वर्गलोकों में प्राप्त हो जां और यदि मिथ्या बोले तो नीचे नरक में गिराये जावेंगे ॥२७॥ आंखों से अन होके नंगा, मुंडा हुआ, भूंख प्यास से पीड़ित, खप्पर हाथ में लेकर भिक्षा गता हुआ शत्रु के घर पर जाकर वह पुरुष दीनता दिखाता है कि जो झू गवाही देवे ॥ २८ ॥ साक्षी या मध्यस्थ पुरुष यदि अन्य पशुओं के विषय मिथ्या कहे तो पांच, गौ के विषय में झूठ कहे तो दश, घोड़ा के विषय मिथ्या कहे तो सौ १०० और मनुष्य के विषय में मिथ्या साक्षी देवे तो १ एक सहस्र हत्या का अपराधी होता है ॥ २९ ॥ व्यवहार में, स्त्री के मरने और कुलस्त्री का प्रायश्चित्त इन का पूर्व से सम्बन्ध नष्ट किया जाय अर्थ साथ में न रक्खा जाय तो निन्दक लोग उन सम्बन्धनाशकों का छेदन उपहास आक्षेपादि द्वारा करते हैं । अर्थात् व्यवहारादि में पूर्व (प्रमाणित सत्य के साथ सम्बन्ध तोड़ना बड़ा पाप है ॥ ३० ॥ परन्तु कन्या के विव के लिये, मैथुन के विषय में, प्राण जाने के भयमरमें, सब धनका नाश है

विप्रस्यचार्थेह्यनृतंवदेयुः पञ्चानृतान्याहुरपातकानि ॥३१॥
स्वजनस्यार्थेयदिवार्थहेतोः पक्षाश्रयेणैववदन्तिकार्य्यम्।
तेशब्दवंशस्यकुलस्यपूर्वान् स्वर्गस्थितांस्तानपिपातयन्ति,
अपिपातयन्ति । इति ॥ ३२ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

ऋणमस्मिन्सन्नयति अमृतत्वंचगच्छति ।
पितापुत्रस्यजातस्य पश्येच्चेज्जीवतोमुखम् ॥ १ ॥
अनन्ताः पुत्रिणां लोका नापुत्रस्य लोकोऽस्तीति श्रूयते
॥ २ ॥ प्रजाः सन्त्वपुत्रिणइत्यभिशापः ॥ ३ ॥ प्रजाभिरग्नेअ
मृतत्त्वमश्यामित्यपि निगमो भवति ॥ ४ ॥
पुत्रेणलोकाञ्जयति पौत्रेणानन्त्यमश्नुते ।

हो वहां, और गौ ब्राह्मण की रक्षाके लिये इन पांच मौकों पर मनुष्य भले ही जानकर भी मिथ्या बोले क्योंकि ये पांचों मिथ्या भाषण पातकों में ऋषि लोगों ने नहीं कहे हैं ॥३१॥ जो लोग अपने स्त्री पुत्रादि के लिये, वा धनादि के लोभ से अथवा पक्षपात के हठ से किसी काम को मिथ्या कहते हैं वे लोग वेद के अध्ययनादि जन्य पुण्य से स्वर्ग को प्राप्त हुये अपने पूर्वजों को भी स्वर्ग से गिरा देते अर्थात् नरक में पहुंचाते हैं ॥ ३२ ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सोलहवां अध्यायः पूरा हुआ ॥१६॥

पिता यदि उत्पन्न हुए अपने जीवित पुत्र का मुख देखलेवे तो परंपरा से चले देव ऋषि पितरों के तीन ऋण चुकाने का भार पिता से उतर के पुत्र पर आजाता और पिता मोक्ष का अधिकारी वा मोक्ष को प्राप्त होता है ॥ १ ॥ पुत्र वालों को अनन्त स्वर्गलोक प्राप्त होते हैं। निर्वंशी के लिये स्वर्ग प्राप्त नहीं होता यह श्रुति में लिखा है ॥२॥ "तेरी सन्तति या कुल पुत्र हीन हो" यह शाप श्रुति में लिखा है इस से भी सिद्ध है कि सन्तति के विना उस के कुल की अधोगति शाप से हो जाती है ॥ ३ ॥ "हे अग्ने ! मैं प्रजा नाम सन्तानों के द्वारा मोक्षानन्द को भोगूं" यह भी वेद मन्त्र का प्रमाण है इस से भी पुत्रोत्पत्ति से मोक्ष होना सिद्ध है ॥ ४ ॥ पुत्र के उत्पन्न होने से स्वर्गादि लोकों को जीत लेता, पौत्र के उत्पन्न होने से अनन्त सुख भोगता और पुत्र का पौत्र अर्थात् प्रपौत्र (पन्ती) उत्पन्न हो जाने से आदित्य मण्डल

अथपुत्रस्यपौत्रेण ब्रध्नस्याप्नोतिविष्टपम्,इति ॥ ५ ।
क्षेत्रिणः पुत्रो जनयितुः पुत्रइति विवदन्ते ॥ ६ ॥ तत्र
भयथाप्युदाहरन्ति ॥ ७ ॥
यद्यन्यगोषुवृषभो वत्सानांजनयेच्छतम् ।
गोमिनामेवतेवत्सा मोघंस्यन्दितमार्षभम्,इति ॥ ८
अप्रमत्तारक्षततन्तुमेतं माव:क्षेत्रेपरबीजानिवाप्सुः ।
नजनयितुःपुत्राभवतिसंपरायेमोघंवेत्ताकुरुतेतन्तुमेतमिति
बहूनामेकजातानां मेकश्चेत्पुत्रवान्नरः ।
सर्वेतेतेनपुत्रेण पुत्रवन्तइतिश्रुतिः ॥ १० ॥
बह्वीनामेकपत्नीनामेकापुत्रवतीयदि ।
सर्वास्तास्तेनपुत्रेण पुत्रवत्यइतिश्रुतिः ॥ ११ ॥

के स्वर्ग को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ अन्य की स्त्री में जो अन्य पुरु
पुत्र उत्पन्न होता है वह स्त्री वाले का पुत्र है वा बीज जिस का पड़ा
का है इस पर दोनों पक्ष वाले विवाद करते हैं ॥६॥ उस में दोनों प्रका
उदाहरण (प्रमाण) श्लोकों द्वारा देते हैं कि ॥ ७ ॥ यदि अन्य की गौओं
किसी का बैल सौ बछड़े भी पैदा करे तो वे सब बछड़े गौ वाले के हैं
और बैल का वीर्य सेचन व्यर्थ ही होगा। अर्थात् बैल वाले को कुछ
नहीं मिलेगा ॥ ८ ॥ हे मनुष्यो ! प्रमाद को छोड़ कर इस सन्तान की
करो तुम्हारे खेत (स्त्री) में अन्य लोग बीज न बोयें (तभी शुद्ध सन
होंगे। अन्य के बीज से खेत के दूषित हो जाने पर सन्तति बिगड़ जा
अर्थात् खेत की रक्षा द्वारा सन्तति की रक्षा करो) पैदा करने (बीज)
का पुत्र नहीं होता और अन्य के बीज से पैदा हुए पुत्र को जो क्षेत्र (
वाला प्राप्त होता है वह जन्मान्तर में अपने डुबोने वाले को पुत्र बन
है ॥ ९ ॥ एक पिता से उत्पन्न हुए अनेक भाइयों में एक भी पुत्रवान् हो
उसी एक पुत्र से सब भाई पुत्र वाले हो जाते हैं यह श्रुति में लिखा है।
एक पुरुष की कई स्त्रियां हों तो उनमें एक स्त्री के उत्पन्न हुए पुत्रसे सब
वाली हो जाती हैं क्योंकि वही एक उन सब पिता माताओं तथा सब
ताओं के स्वत्व का दायभागी और पिण्ड देने वाला होगा ॥ ११ ॥ पु

ष्टाव, तस्येह देवताः पाशं विमुमुचुः, तमृत्विजऊचुर्ममैवायं पुत्रोऽस्त्विति,तान् ह न संपेदे ते संपादयामासुरेषएव यं कामयेत तस्य पुत्रोऽस्त्विति, तस्य ह विश्वामित्रो होताऽऽसीत्तस्य पुत्रत्वमियाय ॥ ३३ ॥ अपविद्धः पञ्चमो यं मातापितृभ्यामपास्तं प्रतिगृह्णीयात् ॥ ३४ ॥ शूद्रापुत्रएव षष्ठो भवतीत्याहुः ॥ ३५ ॥ इत्येतेऽदायादा बान्धवाः ॥३६॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ३७ ॥ यस्य पूर्वेषां षण्णां न कश्चिद्दायादः स्यादेते तस्य दायं हरेरन्निति ॥ ३८ ॥ अथ भ्रातॄणां दायविभाग ॥ ३९ ॥ द्व्यंशं ज्येष्ठो हरेद्,गवाश्वस्य चानुदशमम् ॥ ४० ॥ अजावयो गृहं च कनिष्ठस्य ॥ ४१ ॥ कार्ष्णायसं गृहोपकरणानि च मध्यमस्य ॥४२॥ मातुः पारिणेयं स्त्रियो विभजेरन्॥४३॥

ओं की स्तुति की, इस संसार में उस शुनःशेप को देवताओं ने बन्धनों से मुक्त किया, उस यजमान राजा से ऋत्विज् लोगों ने पृथक् कहा कि यह मेरा पुत्र हो जाय यह मेरा हो इत्यादि । उन ऋत्विजों के पास शुनःशेप नहीं गया, तब ऋत्विजों ने यह सिद्धान्त स्थिर किया कि यह बालक हम सब में जिस के पास रहने की कामना करे उसी का पुत्र हो जाय । उस राजा हरिश्चन्द्र के यज्ञ में ऋग्वेदी काम के सात होताओं में प्रधान होता ऋत्विग् ब्रह्मर्षि विश्वामित्र हुए थे उन का पुत्र शुनःशेप बना ॥ ३३ ॥ जिस को माता पिता ने त्याग दिया वा फेंक दिया उस को जो लाकर रक्षा करे उस का वह पांचवां अपविद्ध पुत्र कहाता है ॥ ३४ ॥ और शूद्रा का पुत्र छठा होता है ॥ ३५ ॥ ये छः अदायाद पुत्र हैं ॥ ३६ ॥ और भी ऋषि लोग कहते हैं कि ॥ ३७ जिस पुरुष के पूर्व कहे औरसादि छहों में से कोई भी दायभागी पुत्र न हो उस के धन को ये छहो ले सकते हैं ॥३८॥ अब भाइयों का दायभाग दिखाते हैं ॥ ३९ ॥ ज्येष्ठ भाई दो हिस्सा लेवे और गौ घोड़ों में से दशवां हिस्सा अधिक लेवे ॥ ४० ॥ भेड़ बकरी और घर इन के दो भाग छोटा भाई लेवे ॥ ४१ ॥ लोहादि काले वस्तु तथा घर के अन्य सामान को संझला भाई दो भाग लेवे ॥ ४२ ॥ माता के पास अपने विवाह के समय का जो आभूषणादि होवें उन में सब बहुओं को बराबर भाग मिले ॥ ४३ ॥

दि ब्राह्मणस्य ब्राह्मणीक्षत्रियावैश्यासु पुत्राः स्युस्त्र्यं-
ं ब्राह्मण्याः पुत्रो हरेत्, द्व्यंशं राजन्यायाः पुत्रः सम-
मितरे विभजेरन् ॥४४॥ येन चैषां स्वयमुत्पादितं स्याद् द्व्यंश
मेव हरेत् ॥ ४५ ॥ अनंशास्त्वाश्रमान्तरगताः ॥ ४६ ॥ क्लीवो-
न्मत्तपतिताश्च ॥ ४७ ॥ भरणं क्लीवोन्मत्तानाम् ॥४८॥ प्रेत-
पत्नी षण्मासान् व्रतचारिण्यक्षारलवणं भुञ्जानाऽधःशयीतो-
र्ध्वं षड्भ्यो मासेभ्यः स्नात्वा श्राद्धं च पत्ये दत्त्वा विद्याकर्म
गुरुयोनिसंबन्धान् सन्निपात्य पिता भ्राता वा नियोगं कार-
येत्तपसे ॥४९॥ न सोन्मत्तामवशां व्याधितां वा नियुञ्ज्यात्
॥५०॥ ज्यायसीमपि षोडशवर्षाणि, नचेदामयावी स्यात्॥५१॥

यदि ब्राह्मण की ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या ये तीनों वर्ण की विवाहित स्त्रियां
हों और उन सब में पुत्र उत्पन्न हुए हों तो तीन भाग ब्राह्मणी के पुत्र को,
दो भाग क्षत्रिया के पुत्र को मिलें और बाकी बचे पुत्र बराबर भाग बांट
लेवें ॥ ४४ ॥ इन पुत्रों में से जिस ने जितना धनादि स्वयं पैदा किया हो उन
में से भी वह दो ही भाग लेवे ॥ ४५ ॥ गृहाश्रम से भिन्न आश्रम में गये भाई
लोग पिता के धन में दायभागी नहीं हैं ॥ ४६ ॥ नपुंसक, उन्मत्त (पागल)
और पतित भाई भी दायभागी नहीं हैं ॥ ४७ ॥ नपुंसक और उन्मत्तों को
भी भोजन वस्त्र मिलना चाहिये ॥ ४८ ॥ मरे हुए पुरुष की पत्नी छः महिने
तक खार और लवण को छोड़ कर हविष्य भोजन करती हुई व्रत करके पृथ्वी
पर सोवे छः महिने के उपरान्त स्नान कर पति का श्राद्ध करके पति को
विद्या पढ़ाने और कर्म कराने वाले गुरु लोगों और पति के भाई आदि को
सभा करके सब की राय होने पर स्त्री के लिये सन्तान की विषय पवित्रा हो
पर स्त्री का पिता वा भाई तप के लिये नियोग करा देवे (कि उत्पन्न हु
सन्तान मृत पिता का स्थानापन्न होकर श्राद्धादि कर्म रूप तप करेगा) ॥४
यदि वह मृत पुरुष की पत्नी उन्मत्त (पागल) स्वेच्छा चारिणी अथवा
रोगिणी होतो वह पितादि नियोग न करावे ॥ ५० ॥ यदि उन्मत्तादि न
किन्तु ज्येष्ठ हो तो भी सोलह वर्ष की आयु से पहिले नियोग न कर
और जिस से नियोग कराना चाहे वह भी रोगी न हो ॥ ५१ ॥ नियु

प्राजापत्ये मूहूर्त्ते पाणिग्राहवदुपचरेत् ॥ ५२ ॥ अन्यत्र संप्रहास्याद्‌ वाक्पारुष्याद्‌ दण्डपारुष्याच्च ॥५३॥ ग्रासाच्छादनस्नानानुलेपनेषु प्राग्गामिनी स्यात् ॥ ५४ ॥ अनियुक्तायामुत्पन्न उत्पादयितुः पुत्रो भवतीत्याहुः ॥ ५५ ॥ स्याच्चेन्नियोगिनो रिक्थम् ॥ ५६॥ लोभान्नास्ति नियोगः ॥ ५७ ॥ प्रायश्चित्तं वाऽप्युपनियुञ्ज्यादित्येके ॥५८ ॥ कुमार्य्यृतुमती त्रीणि वर्षाण्युपासीतोर्ध्वं त्रिभ्यो वर्षेभ्यः पतिं विन्देत्तुल्यम् ॥ ५९ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ६० ॥

पितुःप्रमादात्तुयदीहकन्या वयःप्रमाणंसमतीत्यदीयते ।
साहन्तिदातारमुदीक्षमाणा कालातिरिक्तागुरुदक्षिणेव॥६१॥
प्रयच्छेन्नग्निकांकन्यामृतुकालभयात्पिता ।

रूप चार घड़ी रात रहे विवाहित पति के तुल्य नियुक्ता स्त्री से व्यवहार करे ॥ ५२ ॥ परन्तु स्त्री के साथ उपहास वा किसी प्रकार की बात चीत न करे। न धमकावे और किसी अनुचित को देख कर मृत पति के तुल्य नियुक्त पुरुष को पीटने का भी अधिकार नहीं है ॥ ५३ ॥ भोजन वस्त्र स्नान और अनुलेपन इन कामों में पूर्व मृत पति के ध्यान से चलने वाली हो अर्थात् नियुक्त को पति मान भोजनादि न करे ॥५४॥ नियुक्त न हुई अन्य की स्त्री में उत्पन्न किया पुत्र उत्पादक पुरुष का होगा ऐसा ऋषि लोग कहते हैं ॥५५॥ यदि नियुक्ता स्त्री में उत्पन्न पुत्र भी उत्पादक का हो तो वह नियुक्त पिता के धन का भागी होगा ॥ ५६ ॥ काम भोगादि के लालच से नियोग नहीं है ॥ ५७ ॥ लोभ से नियोग करने में कोई आचार्य प्रायश्चित्त करना कहते हैं ॥ ५८॥ यदि पिता वा भाई कन्या का विवाह न करें और वह ऋतुमती (रजस्वला) होने लगे तो तीन वर्ष तक रजस्वला होती हुई विवाहादि की वाट देखे। तीन वर्ष के उपरान्त अपने तुल्य योग्य वर से स्वयं विवाह कर लेवे ॥ ५९ ॥ इस पर श्लोकों का भी प्रमाण कहते हैं कि ॥ ६० ॥ गृहस्थाश्रम में पिता के प्रमाद से यदि कन्या ऋतुमती होने पर विवाही जाती है तो वह कन्या विवाह की वाट देखती हुई कन्यादान करने वाले का नाश करती है। जैसे कि देने का समय निकल जाने पर गुरु को दी दक्षिणा शिष्य का नाशक करती है ॥ ६१ ॥ रजस्वला होने का अवसर आने से पहिले ऋतुमती होने के भय

ऋतुमत्यांहितिष्ठन्त्यां दोषःपितरमृच्छति ॥ ६
यावन्नकन्यामृतवःस्पृशन्ति तुल्यैःसकामामभियाच
भ्रूणानितावन्तिहतानिताभ्यां मातापितृभ्यामितिध
अद्भिर्वाचाचदत्तायां म्रियेतादौवरोयदि ।
नचमन्त्रोपनीतास्यात् कुमारीपितुरेवसा ॥ ६
बलाच्चेत्प्रहृताकन्या मन्त्रैर्यदिनसंस्कृता ।
अन्यस्मैविधिवद्देया यथाकन्यातथैवसा ॥ ६५
पाणिग्राहेमृतेबाला केवलंमन्त्रसंस्कृता ।

से पिता कन्या का दान कर देवे । यदि ऋतुमती
विवाह से पहिले पिता के घर पर कन्या रहे तो पित
लगता है ॥ ६२ ॥ कामना रखती हुई कन्या को चाहने
वरों के विद्यमान होते हुए भी जितने मास तक पिता
कन्या रजस्वला होती रहे उतनी ही गर्भहत्याओं का पाप क
पिता को लगता है यह धर्मशास्त्रकारों का कथन है ॥६३॥ ज
या वाणीमात्र से टीका लगन सब हो गयी हो अथवा कन्या दा
कर दिया हो परन्तु मन्त्रों के साथ पति ने पाणिग्रहण न कि
सप्तपदी न हुई हो और ऐसे अवसर में यदि वर पति मर जावे
को अविवाहिता कुमारी कन्या ही मानी जायगी । इस दशा में
वर के साथ उनका विधिपूर्वक विवाह कर देवें ॥ ६४ ॥ मन्त्रों
संस्कार होनेसे पहिले यदि किसीने बल पूर्वक कन्या को हर लि
हो तो विधिपूर्वक वह कन्या अन्य वर को देदेनी चाहिये क्यों
न्या होती वैसी ही वह है ॥ ६५ ॥ और यदि पाणिग्रहण तक
द्वारा संस्कार हो गया हो किन्तु सप्तपदी न हुई हो और उ
साथ संग भी न किया हो या किसी ने बल पूर्वक भी दूषित
भी उस का अन्य वर के साथ विवाह संस्कार हो सकता है (स
का निचोड़ सिद्धान्त यह है कि यदि मन से वर का स्वीकार हो
अन्य वर के साथ विवाह न हो तो उत्तम कोटि है उदाहरण सावि
ग्दान (टीका लगुन) हो जाने पर अन्यवर के साथ विवाह हो
कोटि है । जिस के उदाहरण संप्रति अनेक हैं । और कन्यादान

साचेदक्षतयोनिःस्यात् पुनःसंस्कारमर्हति । इति ॥ ६६ ॥
प्रोषितपत्नी पञ्चवर्षाण्युपासीतोर्ध्वं पञ्चभ्यो वर्षेभ्यो भर्तृसकाशं गच्छेत् ॥ ६७ ॥ यदि धर्मार्थाभ्यां प्रवासं प्रत्यनुकामा न स्याद् यथाप्रेतएवं वर्त्तितव्यं स्यात ॥ ६८ ॥ एवं ब्राह्मणी पञ्च प्रजाताऽप्रजाता चत्वारि, राजन्या प्रजाता पञ्चाऽप्रजाता त्रीणि, वैश्या प्रजाता चत्वार्यप्रजाता द्वे, शूद्रा प्रजाता त्रीण्यप्रजातैकम् ॥ ६९ ॥ अत ऊर्ध्वं समानोदकपिण्डजन्मर्षिगोत्राणां पूर्वः पूर्वो गरीयान् ॥ ७० ॥ नतु खलु कुलीने विद्यमाने परगामिनी स्यात् ॥ ७१ ॥ यस्य पूर्वेषां षण्णां न कश्चिद्दायादः

निकृष्ट चाहिये । इस से आगे शास्त्र मर्यादा से द्वितीय विवाह कदापि नहीं हो सकता किन्तु सप्तपदी के बाद में अन्य के साथ विवाह करना विवाहित स्त्रियों के अन्य व्यभिचार के तुल्य यह भी व्यभिचार नाम जार कर्म माना जायगा) ॥ ६६ ॥ विदेश में गये पुरुष की पत्नी पांच वर्ष तक अपने पति की बाट देखे उस के उपरान्त पति के समीप देशान्तर में चली जावे ॥ ६७ ॥ यदि धर्म वा धन के कारण पति का विदेश जाना न चाहती हो और वह चला ही जावे तो पति के मर जाने पर विधवा होने के समान विधवाओं के धर्म का पालन करे ॥ ६८ ॥ इसी प्रकार ब्राह्मणी के कोई सन्तान हो तो पांच वर्ष तक और सन्तान न हुआ हो तो चार वर्ष तक विदेश गये पति की बाट देख कर विदेश को जावे । क्षत्रिया स्त्री सन्तान वाली हो तो पांच वर्ष तक तथा सन्तान न हुए हों तो तीन वर्ष तक, बाट देखे । वैश्या स्त्री सन्तान वाली हो तो चार वर्ष तक तथा विना सन्तान की हो तो दो वर्ष तक बाट देखे । और शूद्रा स्त्री सन्तान वाली हो तो तीन वर्ष और विना सन्तान की हो तो एक वर्ष तक विदेश गये पति की बाट देख कर पति के समीप चली जावे । ब्राह्मणी आदि स्त्रियों में क्रमशः धर्म के न्यूनाधिक भाव से काल भी न्यूनाधिक बतावेगा यह आशय धर्म शास्त्र कारने दिखाया जनाया है ॥ ६९ ॥ समानोदक, सपिण्ड, और एक गोत्र इन में पर २ की अपेक्षा पूर्व २ के साथ सम्बन्ध या मेल होना अन्तरङ्ग होने से श्रेष्ठ है ॥ ७० ॥ कुलीन स- मानोदकादि पुरुष के विद्यमान होते हुए स्त्री अन्य के साथ नियोगादि न करे ॥ ७१ ॥ जिस पुरुष के पूर्वोक्त छः पुत्रों में से कोई भी दायभागी न हो

स्यात् सपिण्डाः पुत्रस्थानीया वा तस्य धनं विभजेरन् ॥ ७२ ॥ तेषामलाभआचार्यान्तेवासिनौ हरेयाताम् ॥ ७३ ॥ तयोरलाभे राजा हरेत् ॥ ७४ ॥ न तु ब्राह्मणस्य राजा हरेत् ॥ ७५ ॥ ब्रह्मस्वं तु विषं घोरम् ॥ ७६ ॥

नविषंविषमित्याहुर्ब्रह्मस्वंविषमुच्यते ।
विषमेकाकिनंहन्ति ब्रह्मस्वंपुत्रपौत्रकम् । इति ॥७७॥
त्रैविद्यसाधुभ्यः संप्रयच्छेदिति ॥ ७८ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

शूद्रेण ब्राह्मण्यामुत्पन्नश्चाण्डालो भवतीत्याहुः,राजन्यायां वैणो वैश्यायामन्त्यावसायी॥१॥ वैश्येन ब्राह्मण्यामुत्पन्नो रामको भवतीत्याहुः, राजन्यायां पुल्कसः ॥२॥ राजन्येन ब्राह्मण्यामुत्पन्नः सूतो भवतीत्याहुः ॥३॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ४ ॥॥

उस के धनादि को पुत्र के स्थानापन्न वा सपिण्ड के मनुष्य आपस में बांट कर लेलेवें ॥ ७२ ॥ यदि,सपिण्ड नाम सात पीढी में भी कोई न हो तो गुरु और शिष्य लोग उस के धनादि को लेवें ॥ ७३ ॥ यदि गुरु शिष्य भी नहों तो उस का धन राजा लेवे ॥ ७४ ॥ परन्तु ब्राह्मण का धन राजा न लेवे ॥ ७५ ॥ ब्राह्मण का धन लेना घोर विष है ॥ ७६ ॥ विष को विद्वान् लोग विष नहीं कहते किन्तु ब्राह्मण का धन विष कहाता है । क्योंकि विष एक मनुष्य को मारता है और ब्राह्मण का धन पुत्र पौत्रादि सहित सब कुल का नाश कर देता है ॥ ७७ ॥ इस से लावारिस ब्राह्मण के धन को राजा तीनों वेदों के जानने वाले सुपात्र ब्राह्मणों को दे देवे ॥ ७८ ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सत्रहवां अध्याय पूरा हुआ ॥ १७ ॥

शूद्र पुरुष से ब्राह्मणी में उत्पन्न हुआ चाण्डाल है ऐसा ऋषि लोग कहते हैं । शूद्र से क्षत्रिया कन्या में हुआ वैण और शूद्र पुरुष से वैश्य स्त्री में अन्त्यावसायी नामक नीच सन्तान पैदा होता है ॥ १॥ वैश्य पुरुष से ब्राह्मणी में उत्पन्न हुआ रामक, और वैश्य से क्षत्रिय कन्या में पैदा हुआ पुल्कस जाति होता ऐसा कहते हैं ॥ २ ॥ क्षत्रिय पुरुष से ब्राह्मणी में पैदा हुआ सूत होता ऐसा कहते हैं ॥ ३ ॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ ४ ॥ नीच पुरुष

छन्नोत्पन्नास्तुयेकेचित् प्रातिलोम्यगुणाश्रिताः ।
गुणाचारपरिभ्रंशात् कर्मभिस्तान्विभावयेत् । इति ॥५॥

एकान्तरद्व्यन्तरत्र्यन्तरानुजाता ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यैर म्बष्ठोग्रनिषादा भवन्ति ॥ ६ ॥ शूद्रायां पारशवः पारय न्नेव जीवन्नेव शवो भवतीत्याहुः ॥ ७ ॥ शवइति मृताख्या ॥८ एके वै तच्छ्मशानं ये शूद्रास्तस्माच्छूद्रसमीपे नाध्येतव्यं ॥ ९ ॥ अथापि यमगीतान् श्लोकानुदाहरन्ति ॥१०॥

श्मशानमेतत्प्रत्यक्षं येशूद्राःपापचारिणः ।
तस्माच्छूद्रसमीपेच नाध्येतव्यंकदाचन ॥ ११ ॥
नशूद्रायमतिंदद्यान्नोच्छिष्टंनहविष्कृतम् ।
नचास्योपदिशेद्धर्मं नचास्यव्रतमादिशेत् ॥ १२ ॥
यश्चास्योपदिशेद्धर्मं यश्चास्यव्रतमादिशेत् ।

से उत्तम वर्ण की स्त्री में प्रतिलोम के द्वारा प्रच्छन्न गुप्त रूप से जो उत्प होते उन गुण कर्मों के आचार से भ्रष्ट पुरुषों की कर्मों से परीक्षा करके जा कि यह अमुक से पैदा हुआ है जैसे हिंसाशील सन्तान हो तो जानो व्याधा कसाई आदि हिंसक से पेदा हुआ है ॥५॥ ब्राह्मण से वैश्य की स्त्री में अम्बष्ठ, क्षत्रि से शूद्र कन्या में उग्र और वैश्य शूद्र की कन्या में निषाद नामक जाति उत्पन्न ती है (मनु० अ० १० में ब्राह्मण से शूद्र कन्या में निषाद की उत्पत्ति लिखी है) ॥ शूद्र कन्या में पैदा हुआ निषाद जीवित रहता हुआ उसी जन्म में मुर्दा तुल्य अशुद्ध होता इससे उस को पारशव भी कहते हैं ॥ ७ ॥ शव यह म शरीर का नाम है ॥ ८ ॥ कोई आचार्य कहते हैं कि-शूद्र श्मशान के तुल्य पवित्र है इस से शूद्र के समीप वेद को न पढ़े ॥९॥ और भी महर्षि यम के श्लोकों का प्रमाण कहते हैं ॥ १० ॥ जो पापाचरणी शूद्र हैं वे प्रत्यक्ष ही श्म शान (मरघट) हैं तिस से शूद्र के समीप में कदापि वेद को न पढ़े ॥ ११ शूद्र को न अच्छी धर्म की सम्मति देवे न जूठन देवे और न होम का शे देवे । न इन को धर्म करने का उपदेश करे और न कृच्छ्रादि व्रतों का उपदे करे (यह निषेध धर्म के विरोधी शूद्रों के लिये जानो क्यों कि धर्म के प्रे या श्रद्धालु शूद्रों के लिये स्मार्त्त तथा पौराणिक धर्म का उपदेश करना विहि भी है) ॥ १२ ॥ जो पुरुष शूद्र को धर्म तथा व्रत करने का उपदेश करता

॥ १३ ॥
न्धोघोरं सहतेनप्रपद्यते, इति ॥ १३ ॥
मियंस्य संभवेतकदाचन ।
न शुद्ध्येत हिरण्यं गौर्वासो दक्षिणा, इति ॥१४॥
वत्वा रामामुपेयात् ॥ १५ ॥ कृष्णवर्णा या रा-
न धर्माय न धर्मायेति ॥ १६ ॥
ासिष्ठे धर्मशास्त्रेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥
ं राज्ञः पालनं भूतानां तस्यानुष्ठानात्सिद्धिः ॥१॥
हान जरामर्यं वै तत् सत्रमाहुर्विद्वांसस्तस्माद्गा-
मिकेषु पुरोहितं दध्यात् ॥ २॥ विज्ञायते ॥ ३ ॥
हता राष्ट्रभृद्भोतीति ॥ ४ ॥ उभयस्य पालनासाम-
देशधर्मजातिकुलधर्मान् सर्वानेवैताननुप्रविश्य रा-
ती वर्णान् स्वधर्मे स्थापयेत् ॥५॥ तेष्वपचरत्सु दण्डं

ूद्र के सहित विस्तृत घोर अन्धकार रूप नरक को प्राप्त होता है
जित ब्राह्मण के फाड़ में कदाचित् कोई पड़ जावें वह प्राजापत्य व्रत
वर्ण, गौ और वस्त्र दक्षिणा में देवे तब शुद्ध होता है ॥ १४ ॥ अग्नि-
ग्र करके सुन्दरी स्त्री से फिर गमन न करे ॥ १५ ॥ काले वर्ण की सुन्दरी
ाग के लिये ही हो सकती है किन्तु उस को पत्नी बना कर दान य-
धर्म कृत्य न करे ॥ १६ ॥
ासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में अठारहवां अध्याय पूरा हुआ ॥१८॥
सब प्राणियों की रक्षा करना राजा का निज धर्म है उसी निज धर्म के
२ धर्मानुकूल करने से राजा की सिद्धि होती है ॥ १ ॥ वृद्ध होके म-
ण पर्यन्त सेवन करने को राजा का यह राजधर्म रूप सत्र यज्ञ विद्वानों
कहा है कि जिस में भय तथा दया दोनों का त्याग है । तिस से गृहाश्रम
नित्य नैमित्तिक वेदशास्त्रोक्त काम करने के लिये राजा एक विद्वान् को
ुरोहित नियत करे । राजा को अग्निहोत्रादि का अवकाश न होने से राज
पुरोहित ही उन कामों को राजा की ओर से किया करे ॥ २ ॥ श्रुति से जा-
ना जाता है कि ॥ ३ ॥ अथर्ववेदी राजपुरोहित के ठीक योग्य होने पर रा-
उय की उन्नति होती है ॥ ४ ॥ अपना निज धर्म तथा वेदाध्ययन, यज्ञ करना,
दान देना, इस दोनों प्रकारके धर्मकी रक्षा एक से न होसकने के कारण पुरोहित
सहित करे और देश धर्म जाति धर्म, और कुल धर्म इन सब में प्रवेश (यथोचितज्ञान)
करके चारों वर्णों को अपने २ धर्म पर स्थापित करे ॥ ५ ॥ वे ब्राह्मणादि वर्ण

धारयेत्॥६॥ दण्डस्तु देशकालधर्मवयोविद्यास्थानविशेषैर्हिंसाक्रोशयोः कल्प्यआगमाद्दृष्टान्ताच्च ॥ ७॥ पुष्पफलोपगान्पादपान्न हिंस्यात्कर्षणकरणार्थं चोपहन्यात् ॥८॥ गार्हस्थ्याङ्गानां च मानोन्माने रक्षिते स्याताम् ॥ ९ ॥ अधिष्ठानान्ननोहारः स्वार्थानां,मानमूल्यमात्रं नैहारिकं स्यात्॥१०॥ महामहयोः स्थानात् पथः स्यात् ॥ ११ ॥ संयाने दशवाहवाहिनी द्विगुणकारिणी स्यात् ॥ १२ ॥ प्रत्येकं प्रयास्यः पुमान् ॥१३॥ पुंसां शतावराध्यं चाऽऽहवयेदव्यर्थाः स्त्रियः स्युः ॥ १४ ॥ कुरा अष्टौ कृष्णलमापसुवर्णमध्यधरणपलपादकार्षापणाः स्यु-

---

यदि अपने २ धर्म से च्युत होते हों तो दण्ड देकर ठीक धर्म की व्यवस्था करे ॥ ६ ॥ देश, काल, धर्म, अवस्था, विद्या और स्थान इन सब की विशेषताओं का हिंसा होने तथा रोने चिल्लाने के विषय में विचार करके शास्त्र द्वारा और लौकिक दृष्टान्तों से दण्ड की भिन्न २ न्यूनाधिक कल्पना करे ॥ ७ ॥ फल फूल देनेवाले वृक्षों को न कटवावे परन्तु खेती कराने के उपयोगी वृक्षों को भलेही कटावे ॥ ८ ॥ गृहाश्रम सम्बन्धी पदार्थों की तौल नाप ठीक सुरक्षित रक्खे ॥ ९ ॥ अपने नगर के व्यापारी आदि से अन्नादिका नियत भाग राज कर में न लेवे किन्तु उस भाग का मूल्य नियत करके उतनार धन उनर से लिया करे ॥ १० ॥ देवस्थान पाठशाला धर्मशालादि के धन पर, श्मशान (मरघट) और मार्ग (सड़क) इनका महसूल या इनपर कर (टैक्स) राजा न लेवे ॥ ११ ॥ युद्ध के लिये यात्रा करे तब (८१ रथ । ८१ हाथी । २४३ सवार और ४०५ पैदल सिपाही इतनी फौज को एक वाहिनी कहते हैं) ऐसी बीस पलटनें लेकर युद्ध में चढ़ाई करे ॥ १२ ॥ फौज में प्रत्येक मनुष्य तथा हाथी घोड़ादि हृष्टपुष्ट नीरोग परिश्रमी हों ॥१३॥ ऐसी रीति युक्ति से युद्ध करावे जिसमें सौसे भी बहुत कम योद्धा मारे जावें। जिससे विधवा होकर नगर की स्त्रियों का जन्म व्यर्थ न होवे ॥ १४ ॥ कृष्णल, माष, सुवर्ण, मध्य, धरण, पल, पाद, कार्षापण ये आठ प्रकार के तौल बाट हैं । वस्तुओं के न्यूनाधिक लाभ देखकर भिन्नर कर नियत करे । इस-

...दकस्तरोमोप्योऽकरः श्रोत्रियो राजपुमाननाथप्रव्रजित-
...लवृद्धतरुणप्रदातारः प्रागगामिकाः कुमार्यो मृतपत्न्यश्च ॥१५॥
...हुभ्यामुत्तरञ्छतगुणं दद्यात् ॥ १६ ॥ नदीकक्षवनदाहशै-
...ोपभोगा निष्कराः स्युस्तदुपजीविनो वा दद्युः ॥१७॥ प्रति
...मासमुद्वाहकरं त्वागमयेद्राजनि च प्रेते दद्यात्प्रासङ्गिकम्
॥ १८ ॥ एतेन मातृवृत्तिर्व्याख्याता ॥ १९ ॥ राजमहिष्याः
पितृव्यमातुलान् राजा बिभृयात्तद्बन्धूंश्चान्यांश्च ॥ २० ॥
...राजपत्न्यो ग्रासाच्छादनं लभेरन् ॥ २१ ॥ अनिच्छन्त्यो वा
प्रव्रजेरन् ॥ २२ ॥ क्लीबोन्मत्तान्राजा बिभृयात्तद्गामित्वा-
...द्रव्यस्य ॥ २३॥ शुल्के चापि मानवं श्लोकमुदाहरन्ति ॥२४॥
नभिन्नकार्षापणमस्ति शुल्के नशिल्पवृत्तौ नशिशौनदूते ।

...हीन खेत, वर्षा से डूबनेवाले खेत, और जिनके अन्न को पार लेजाते हों ऐसे
खेतोंपर कर न लेवे। वेद पाठी, तथा राजकर्मचारियों से भी कर न लेवे।
अनाथ, साधु संन्यासी, बालक, वृद्ध, और ब्रह्मचारियों को भोजनादि देने-
वाले, कुमारी स्त्री और जिन के पति मरगये हों ऐसी विधवाओं से भी कर
नहीं लेना चाहिये ॥ १५ ॥ भुजाओं के द्वारा नदी के पार जानेवाला सौगुणा
दण्ड देवे ॥ १६ ॥ नदी का कछार, जलनेवाले वनके खेत और पर्वत के खेतों
पर कर न बांधे या कछार आदि से जिनकी जीविका हो उन लोगों से प्रति
मास उचित कर लिया करे ॥ १७ ॥ विवाहों पर भी यथोचित कर लिया करे।
और राजा का स्वर्गवास होने पर या किसी उत्सव पर प्रजा को भोजनादि
प्रसङ्गानुसार दिया करे ॥ १८ ॥ इससे राजा में माता का सा यत्तां सिद्ध होता
है कि सन्तान लोग धनादि लाकर के माता को देवें और माता फिर उन्हीं को
खिलावे ॥ १९॥ राज महिषी (मुख्य रानी) के चाचा, मामा, भाई, तथा अ...
...न्य कृपापात्रों का राजा भरण पोषण करे ॥ २० ॥ राजा की अन्य स्त्रियों को
भोजन वस्त्रादि मिला करे ॥ २१ ॥ यदि राजपत्नी भोजन वस्त्र न चाहें ...
घरेंही विरक्त होकर तप करें ॥ २२ ॥ नपुंसक (हिजड़ों) और पागलों ...
राजा रक्षा करे क्योंकि उनके धनादि का मालिक राजा ही है ॥ २३ ॥ ...
शुल्क लेने में भी मनुजी के श्लोक का प्रमाण देते हैं ॥ २४ ॥ महसूल में ...
रुपया नहीं लेवे। कारीगरी, बालक, दूत, भिक्षावृत्ति, चोरी या लूट में ...

नभैक्षलब्धेनहृतावशेषे नश्रोत्रियेप्रव्रजितेनयज्ञे,इति ॥ २५ ॥ स्तेनोऽनुप्रवेशान्नदुष्यते शस्त्रधारी सहोढो व्रणसंपन्नो व्यपदिष्टस्त्वेकेषां दण्डयोत्सर्गे राजैकरात्रमुपवसेत् ,त्रिरात्रं पुरोहितः ॥२६॥ कृच्छ्रमदण्डयदण्डने पुरोहितस्त्रिरात्रं राजा॥२७॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ २८ ॥

अन्नादेभ्रूणहामार्ष्टि पत्यौभार्याऽपचारिणी ।
गुरौशिष्यश्चयाज्यश्च स्तेनोराजनिकिल्विषम् ॥२९॥
राजभिर्धृतदण्डास्तु कृत्वापापानिमानवाः ।
निर्मलाःस्वर्गमायान्ति सन्तःसुकृतिनोयथा ॥ ३० ॥
एनोराजानमृच्छति उत्सृजन्तंसकिल्विषम् ।
तंचेद्घातयतेजारा हन्तिधर्मेणदुष्कृतम् , इति ॥ ३१ ॥
राज्ञामात्ययिकेकार्ये सद्यःशौचंविधीयते ।

वेदपाठी, संन्यासी और यश इन सब पर महसूल या कर न लेवे ॥ २५ ॥ विवाह के समय गर्भवती जो कन्या उससे उत्पन्न सहोढ सन्तान शस्त्रधारी तथा रागी हो तथा चोर के तुल्य किसी के घरमें घुसे तो दोष नहीं है। और किन्हीं के मत से दोष युक्त भी कहा गया है। दण्ड के योग्य मनुष्य को सजा न करके छोड़ देवे तो एक दिन राजा और तीन दिन राजपुरोहित उपवास करे ॥२६॥ दण्ड देने योग्य को दण्ड देने पर पुरोहित कृच्छ्र व्रत करे और राजा तीन दिन उपवास करे ॥२७॥ और भी श्लोकों का प्रमाण कहते हैं कि ॥२८॥ भ्रूणहत्या करनेवाला पुरुष उस का अन्न खाने वाले पर, व्यभिचारिणी स्त्री अपने पति पर, शिष्य और यजमान गुरु पर और चोर राजा पर अपना पाप शुद्ध करना मान डालता है। अर्थात् भ्रूण हत्यारे आदि का पाप उस का अन्न खाने वाले को, स्त्री का पाप पति को, शिष्य और यजमान का पाप गुरु पुरोहित को और चोर का पाप राजा को लगजाता है ॥२९॥ जिन मनुष्यों को उन के पापों का दण्ड राजा ठीक २ देता है वे लोग शुद्ध निर्दोष हुए पुण्यात्मा सज्जनों के समान अन्त में स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। यदि फिर २ उन कामों को न करें तो ॥ ३० ॥ अपराधी को बिना दण्ड दिये छोड़ देने से उस का पाप राजा को लगता है। और यदि उस पापी को राजा मरवा डाले तो धर्म के द्वारा उस का नाश करता है ॥ ३१ ॥ राजाओं को मृत्यु संबन्धी कार्य में तत्काल शुद्धि

ऽनात्ययिकेनित्यं कालएवात्रकारणम्, इति ॥३२॥
॥ ३३ ॥
गीतंचात्र श्लोकमुदाहरन्ति ॥ ३३ ॥
पोऽस्तिराज्ञांवै व्रतिनांनचसत्रिणाम् ।
ानमुपासीना ब्रह्मभूताहितेसदा,इति,हितेसदा,इति॥३४॥
ति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥
अनभिसंधिकृते प्रायश्चित्तमपराधे ॥१॥ अभिसंधिकृते
के ॥ २ ॥
गुरुरात्मवतांशास्ता राजाशास्तादुरात्मनाम् ।
इहप्रच्छन्नपापानां शास्तावैवस्वतोयमः,इति ॥ ३ ॥
तत्र च सूर्याभ्युदयतः सन्नहस्तिष्ठेत् ॥ ४ ॥ सावित्रीं च
जपेत् ॥५॥ एवं सूर्याभिनिर्मुक्तो रात्रावासीत ॥ ६ ॥ कुनखी
श्यावदन्तस्तुकृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरेत् ॥७॥ परिवित्तिः कृच्छ्रं

करलेने का विधान शास्त्र में कहा है। वैसे ही पुत्र जन्मादि में भी तत्काल
ही शुद्धि करे। इस में काल ही कारण है ॥ ३२ ॥ यहां महर्षि यमराज के
हे श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ ३३ ॥ राजाओं को व्रतधारियों और
त्रयज्ञ के ऋत्विजों को सूतक का दोष नहीं लगता है। क्योंकि ये सब
इन्द्रदेवता के स्थान पर बैठे हुए सदा ब्रह्मस्वरूप ही हैं ॥ ३४ ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में उन्नीसवां अध्याय पूरा हुआ ॥१९॥
भूल में विना समझे किये अपराध में प्रायश्चित्त कर्त्तव्य है ॥ १ ॥
इच्छा पूर्वक किये पाप का भी प्रायश्चित्त कोई आचार्य कहते हैं ॥ २ ॥ जो
पयी नहीं किन्तु सीधे सच्चे हैं उनका शिक्षक गुरु, दुष्टों का शिक्षक राजा
र इस जन्म में जिन के अनेक बड़े २ गुप्त पाप होते हैं उन के शिक्षक
मराज होते हैं ॥ ३ ॥ उस प्रायश्चित्त में सूर्यनारायण के उदयकाल से ले कर
दिन में खड़ा हुआ जप करे ॥ ४ ॥ सावित्री का जप करे ॥५॥ इसीप्रकार सूर्य
के अस्त होने समय से लेकर रात में बैठा हुआ जप करे यह सब प्रायश्चित्तों
के लिये है ॥६॥ बिगड़े नखों वाला और काले दांतों वाला बारह दिन कृच्छ्र
त करे ॥ ७ ॥ जिस छोटे भाई ने बड़े से पहिले विवाह किया उस का बड़ा
भाई बारह दिन तक कृच्छ्र व्रत करके ठहर जावे पश्चात् उस नियत की कन्या

द्वादशरात्रं चरित्वा निविशेत तां चैवोपयच्छेत् ॥ ८ ॥ अथ परिविविदानः कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चरित्वा तस्मै दत्त्वा पुनर्निर्विशेत तामेवोपयच्छेत् ॥९॥ अग्रेदिधिषूपतिः कृच्छ्रं द्वा रात्रं चरित्वा निविशेत तां चैवोपयच्छेत् ॥१०॥ दिधिषूप कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चरित्वा तस्मै दत्त्वा पुनर्निर्विशेत् ॥ १ वीरहणं परस्ताद्वक्ष्यामः ॥ १२ ॥ब्रह्मोज्झः कृच्छ्रं द्वादशर चरित्वा पुनरुपयुञ्जीत वेदमाचार्य्यात् ॥ १३ ॥ गुरुतल्प सवृषणं शिश्नमुत्कृत्याञ्जलावाधाय दक्षिणामुखो गच्छेत्॥१ यत्रैव प्रतिहन्यात्तत्र तिष्ठेदाप्रलयम् ॥ १५ ॥ निष्कालको घृताभ्यक्तस्तप्तां सूर्मिं परिष्वजेन्मरणात्पूतो भवतीति वि

से विवाह कर लेवे ॥८॥ और उस का छोटा भाई परिवेत्ता कृच्छ्र अतिकृ दोनों व्रत बारह २ दिन करके अपनी स्त्री को बड़े भाई को समर्पण करके हर जावे पश्चात् बड़े भाई की आज्ञा होने पर उसी स्त्री को स्वीकार क ॥ ९ ॥ ज्येष्ठ भगिनी का विवाह होने से पहिले छोटी भगिनी से वि करने वाला पुरुष दिधिषूपति कहाता है और ज्येष्ठ भगिनी के साथ पीछे विवाह करने वाला अग्रेदिधिषूपति कहाता वह बारह दिन तक कृच्छ्र करके ठहर जावे फिर उसी स्त्री को स्वीकार करे ॥ १० ॥ और छोटी के स विवाह करने वाला बारह २ दिन तक कृच्छ्र अतिकृच्छ्र दोनों व्रत करके ज्येष्ठ भगिनी के पति को अपनी स्त्री समर्पित करके ठहर जावे पीछे उस आज्ञा से स्वीकार करे॥ ११॥ विधि से स्थापित किये अग्नि को त्यागने वा के विषय में आगे प्रायश्चित्त कहेंगे ॥१२॥ पढ़ेहुए वेद को भुला देने वाला पुरु बारह दिन तक कृच्छ्र व्रत करके भूलेहुए वेद को फिर गुरुमुख से पढ़ लेवे ॥१ गुरुपत्नी से संग करने वाला पुरुष अण्डकोशों सहित लिङ्गेन्द्रिय को काट दोनों हाथों की अञ्जुली में धरके दक्षिण दिशा को बराबर चला जावे जह अब कुछ भी न चला जाय अर्थात् अत्यन्त थक जावे तब वहीं प्राणान्त हो तक खड़ा रहे ॥१५॥ अथवा उक्तरीति से प्राणान्त न हो तो लोहे की प्रति को अत्यन्त तपाकर अपने शरीर में घृत लगाके उस लोहे की प्रतिमा से लिप जावे ऐसे तप कर मरजाने से शुद्ध निरपाप हो जाता है यह भृगु ने का

वते ॥१६॥ आचार्य्यपुत्रशिष्यभार्य्यासु चैवम् ॥ १७ ॥ योनिषु च गुर्वीं सखीं गुरुसखीमपपात्रां पतितां च गत्वा कृच्छ्राब्दपादं चरेत् ॥ १८ ॥ एतदेव च चाण्डालपतितान्नभोजनेषु,ततः पुनरुपनयनं, वपनादीनां तु निवृत्तिः ॥ १९ ॥ मानवं चात्र श्लोकमुदाहरन्ति ॥ २० ॥

वपनंमेखलादण्डो भैक्षचर्य्याव्रतानिच ।
निवर्त्तन्तेद्विजातीनां पुनःसंस्कारकर्मणि,इति ॥ २१ ॥

मत्या मद्यपाने त्वसुरायाश्चाज्ञाने कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ घृतं प्राश्य पुनःसंस्कारश्च ॥२२॥ मूत्रशकृच्छुक्राभ्यवहारेषु चैवम् ॥२३॥

मद्यभाण्डेस्थिताआपो यदिकश्चिद्द्विजःपिबेत् ।
पद्मोदुम्बरबिल्वपलाशानामुदकं पीत्वा त्रिरात्रेणैव शुद्ध्यति ॥ २४ ॥ अभ्यासेतु सुराया अग्निवर्णां तां द्विजः

गया है ॥१६॥ आचार्य की, पुत्र की, और शिष्य की पत्नी से गमन करने पर भी यही प्रायश्चित्त है ॥१७॥ मित्र की पत्नी, गुरु के मित्र की पत्नी, अन्त्यज नीच की, और पतित स्त्री से संग करके तीन मास तक कृच्छ्र व्रत करे ॥१८॥ चाण्डाल और पतितों के अन्न के भोजनों में भी यही प्रायश्चित्त है उस प्रायश्चित्त के बाद मुण्डन कराये बिना ही फिर से उपनयन संस्कार करावे ॥ १९ ॥ इस विषय में मनु जी के श्लोक का प्रमाण भी कहते हैं कि ॥ २० ॥ शिर मुंड़ाना, मेखला, दण्ड, भिक्षा मांगना, और रस त्यागादि नियम, ये सब काम द्विजों का पुनः संस्कार होने के समय निवृत्त हो जाते हैं अर्थात् फिर से उपनयन करने में मुण्डनादि की आवश्यकता नहीं है ॥ २१ ॥ पदार्थों को सड़ाकर बनाया मादक (नशाकारी) वस्तु अनेक प्रकार का मद्य कहाता है। गुड़, आटा और महुआ से बनी सुरा कहाती है। उसमें सुरा वा असुरा को न जानकर मद्य के पीने पर कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र दोनों व्रत कर तथा घी का प्राशन करके फिर से उपनयन संस्कार करके शुद्ध होता है ॥ २२ ॥ विष्ठा, मूत्र और वीर्य के खालेने पर भी यही उक्त प्रायश्चित्त जानो ॥ २३ ॥ मद्य के पात्र में रखते हुए जल को यदि कोई द्विज पीले तो कमल, गूलर, बेल (बिल्व) और ढाक के पत्तों को बिना के निकाले जलमात्र को पीकर तीन दिन रात व्रत करने से शुद्ध हो जाता है ॥२४॥ बहुत दिनों तक नित्य के अभ्यास से सुरा पीवे तो द्विज

पिबेन्मरणात्पूतो भवतीति ॥२५॥ भ्रूणहनं वक्ष्यामो ब्राह्मणं हत्वा भ्रूणहा भवत्यविज्ञातं च गर्भमविज्ञाता हि गर्भाः पुमां भवन्ति॥२६॥तस्मात् पुंस्कृत्याऽऽजुहुतीति, भ्रूणहाग्निमुपसम धाय जुहुयादेताः ॥ २७ ॥ लोमानि मृत्योर्जुहोमि लोमभिर्मृ वासय, इति प्रथमाम् ॥२८॥ त्वचं मृत्योर्जुहोमि त्वचा मृ वासय,इति द्वितीयाम् ॥२९॥ लोहितं मृत्योर्जुहोमि लोहिते मृत्युं वासय, इति तृतीयाम् ॥३०॥ मांसं मृत्योर्जुहोमि मांसे मृत्युं वासय, इति चतुर्थीम् ॥ ३१ ॥ स्नावानि मृत्योर्जुहो स्नावभिर्मृत्युं वासय, इति पञ्चमीम् ॥ ३२ ॥ मेदो मृत्योर्जुहे मि मेदसा मृत्युं वासय, इति षष्ठीम् ॥३३॥ अस्थीनि मृत्यो र्जुहोमि अस्थिभिर्मृत्युं वासय, इति सप्तमीम् ॥ ३४ ॥ म ज्जानं मृत्योर्जुहोमि मज्जभिर्मृत्युं वासय, इत्यष्टमीमिति ॥३

पुरुष अग्निवर्ण सुरा पीकर मरजाने पर शुद्ध होता है ॥२५॥ अब भ्रूण हत्या का विचार कहते हैं। ब्राह्मण को तथा अविज्ञात (कि पुत्र है वा पुत्री ऐसे चिन्ह न बन पाने से नहीं जाना गया ऐसे) ब्राह्मणी के गर्भ को गिरा के मनुष्य भ्रूण हत्यारा होता है। क्योंकि अविज्ञात गर्भ-पुरुष माने जाते हैं यह धर्मशास्त्रकारों की माननीय राय है ॥ २६ ॥ तिससे " पुरुष सम्बन्धी क्रिया से भ्रूणहत्या के प्रायश्चित्त में होम करते हैं,, ऐसा श्रुति में कहा है। भ्रूण हत्यारा अग्नि को सामने स्थापित करके आघारादि सामान्य विधिपूर्वक नि लिखित आहुति करे ॥ २७ ॥ (लोमानि०-वासय-स्वाहा) इस प्रकार ३५ तक कही आठो आहुति स्वाहान्त मन्त्र बोलकर घी से करे। अर्थ-मृत्यु लिये लोमों को होमता हूं। हे अग्ने देव! लोमों के साथ मृत्यु को बसा यह मेरी वाणी सत्य हो ॥ २८ ॥ इसी प्रकार त्वचा, रुधिर, मांस, स्नायु (न ड़ी नसें) मेद, अस्थि (हड्डी) और मज्जा इन सब का मृत्यु के लि होम और इन के साथ मृत्यु का निवास दिखाना होम के मन्त्रों का आश य है। अर्थात् होम करनेवाला कहे कि मेरे शरीर के लोमादि भाग (बहा भाग) मरण समय में मृत्यु के साथी बनें, और मृत्यु का निवास उन्हीं के सा रहे किन्तु मृत्यु मुझपर कृपा करे मेरे साथ आगे का सम्बन्ध तोड़ देवे तो अमृत मोक्ष का अधिकारी बनं ॥ ३०-३५ ॥ राजा की वा ब्राह्मण की रक्षा

जार्थे ब्राह्मणार्थे वा संग्रामेऽभिमुखमात्मान घातयेत्त्रिर-
जतो वाऽनपराद्धः पूतो भवतीति ॥३६॥ विज्ञायते हि ॥३७॥
निरुक्तं ह्येनः कनीयो भवतीति ॥३८॥ तथाऽप्युदाहरन्ति॥३९॥

पतितंपतितेत्युक्त्वा चौरंचौरेतिवापुनः ।
वचसातुल्यदोषःस्यात् मिथ्याद्विर्दोषतांव्रजेत्,इति ॥४०॥

एवं राजन्यं हत्वाऽष्टौ वर्षाणि चरेत, षड्वैश्यं, त्रीणि
शूद्रं, ब्राह्मणीं चात्रेयीं हत्वा, सवनगतौ च राजन्यवैश्यौ
॥ ४१ ॥ आत्रेयीं वक्ष्यामो–रजस्वलामृतुस्नातामात्रेयीमाहुः
॥ ४२ ॥ अत्र ह्येष्यदपत्यं भवतीति ॥ ४३ ॥ अनात्रेयीं राज-
न्यहिंसायां राजन्यां वैश्यहिंसायां वैश्यां शूद्रहिंसायां शूद्रां
हत्वा संवत्सरम् ॥ ४४ ॥ ब्राह्मणसुवर्णहरणे प्रकीर्य्य केशान्
राजानमभिधावेत्स्तेनोऽस्मि भोःशास्तु मां भवानिति तस्मै

लिये संमुख युद्ध करता अपना घात करा देवे। ऐसा तीन बार युद्ध करने पर भी शत्रुओं से न जीता जाय (न मरे) तो भी निरपराध हुआ शुद्ध होजाता है ॥ ३६ ॥ श्रुति में भी कहने से जाना जाता है कि ॥ ३७ ॥ प्रकाशित प्रसिद्ध [illegible]या अपराध घटजाता है ॥ ३८ ॥ वैसा भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ३९ ॥ पतित को पतित और चोर को चोर ऐसा कहकर निकृष्ट शब्द के बोलने [illegible] वाणीमात्र का दोष लगता है। परन्तु जो चोरादि नहीं उसको चोरादि मिथ्या कहे तो वक्ता को द्विगुण दोष लगता है ॥ ४० ॥ इसी प्रकार क्षत्रिय को मारके आठ वर्ष, वैश्य को मारके छः वर्ष, यज्ञप्राप्त–क्षत्रिय, वैश्य, रजस्वला हो के शुद्ध हुई ब्राह्मणी और शूद्र को मारकर तीन वर्षतक कृच्छ्रव्रत प्राय-श्चित्त करे ॥ ४१ ॥ रजस्वला होकर ऋतुकाल में स्नान की ब्राह्मणी को आत्रेयी कहते हैं ॥ ४२ ॥ क्योंकि इस ब्राह्मणी में अभीष्ट सन्तान उत्पन्न होता है॥४३॥ जो तत्काल रजस्वला न हो चुकी हो ऐसी क्षत्रिय कन्या को मारकर क्षत्रिय हिंसा में, वैश्य स्त्री को मारने पर वैश्यहिंसा में और वैसी शूद्रा स्त्री को मार कर शूद्रहत्या मध्ये एक वर्ष तक कृच्छ्र व्रत प्रायश्चित्त करे ॥४४॥ ब्राह्मण का सुवर्ण चुराने पर द्विज मनुष्य केशों को बिखेरे हुए यत्नपूर्वक दौड़ता हुआ राजा के पास जावे और राजा से कहे कि" स्तेनोऽस्मि भोःशास्तुमां भवान्,, मैं चोर

राजोदुम्बरं शस्त्रं दद्यात्तेनात्मानं प्रमापयेन्मरणात् पूत भवतीति विज्ञायते ॥ ४५ ॥ निष्कालको वा घृताक्तो गोम याग्निना पादप्रभृत्यात्मानमभिदाहयेन्मरणात्पूतो भवती विज्ञायते ॥ ४६ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ४७ ॥

पुराकालात्प्रमीतानां पापाद्विविधकर्मणाम् ।
पुनरापन्नदेहानामङ्गंभवतितच्छृणु ॥ ४८ ॥
स्तेनःकुनखीभवति श्वित्रीभवतिब्रह्महा ।
सुरापःश्यावदन्तस्तु दुश्चर्मागुरुतल्पगः, इति ॥ ४९ ॥

पतितसंप्रयोगं च ब्राह्मेण वा यौनेन वा यास्तेभ्यः स काशान्मात्रा उपलब्धास्तासां परित्यागस्तैश्च न संवसेदुदी चीं दिशं गत्वाऽनश्नन् संहिताध्ययनमधीयानः पूतो भवती ति विज्ञायते ॥ ५० ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ५१ ॥

हूं आप मुझ को दण्ड दीजिये । तब राजा उसके हाथमें गूलर वृक्ष का मोट लट्ठ देवे उससे अपने को मारडाले मरजाने से पवित्र होता ऐसा श्रुति से जान जाता है ॥ ४५ ॥ यदि उक्तरीति से न मरे तो शरीर में घी लगा कर कण्ड के अतिप्रज्वलित अग्नि में अपने शरीर को जलाकर भस्म करे । इस प्रकार म जाने से आगे को पवित्र हो जाते हैं ऐसा श्रुति से जाना जाता है ॥ ४६ ॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ ४७ ॥ नाना प्रकार के प्रबल दुष्क र्मों सम्बन्धी पापों से क्षीणायु होकर मृत्यु के समय से पहिले ही मरे मनु ष्यों का जन्मान्तर में जैसा शरीर होता है सो सुनो ॥ ४८ ॥ ब्राह्मण के सुवर्ण को चुरानेवाले के नख बिगड़े हुए होते, ब्रह्म हत्यारा श्वेत कुष्ठी होता, मद्य पीनेवाले के काले दांत होते और गुरुस्त्रीगामी की त्वचा बिगड़ी होती है ॥ ४९ ॥ ऐसे पतितों के साथ वेदादि शास्त्रों के पठन पाठन रूप से वा वि वाहरूपसे जो कोई मेल मिलाप सम्बन्ध करे उसने जो कुछ धनादि पदार्थ उन पतितों से लिया हो उसका प्रथम त्याग करे और फिर उनके साथ न बसे। फिर उत्तर दिशा में एकान्त शुद्ध स्थल में जाकर उपवास पूर्वक वेद की सं हिता को पारायण रूप से पढ़ता हुआ पवित्र होता है यह श्रुति से जाना जाता है ॥ ५० ॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ ५१ ॥ शरीर की

रपरितापेन तपसाध्ययनेनच ।
यतेपापकृत्पापाद्दानाच्चापिप्रमुच्यते,इति
ज्ञायते, इति विज्ञायते ॥ ५२ ॥
वासिष्ठे धर्मशास्त्रे विंशतितमोऽध्यायः ॥२०॥
द्रश्चेद् ब्राह्मणीमभिगच्छेद्वीरणैर्वेष्टयित्वा शूद्रमग्नौ प्रा
१॥ ब्राह्मण्याः शिरसि वपनं कारयित्वा सर्पिषा स-
नग्नां कृष्णं खरमारोप्य महापथमनुसंव्राजयेत्पूता
ते विज्ञायते ॥ २ ॥ वैश्यश्चेद् ब्राह्मणीमभिगच्छेल्लो-
र्वेष्टयित्वा वैश्यमग्नौ प्रास्येत् ॥ ३॥ ब्राह्मण्याः शिर-
पनं कारयित्वा सर्पिषाभ्यज्य नग्नां गौरखरमारोप्य
थमनुसंव्राजयेत् पूता भवतीति विज्ञायते ॥ ४ ॥ राज-
ब्राह्मणीमभिगच्छेच्छरपत्रैर्वेष्टयित्वा राजन्यमग्नौ प्रा-
ब्राह्मण्याः शिरोवपनं कारयित्वा सर्पिषासमभ्यज्य
रक्तं खरमारोप्य महापथमनुसंव्राजयेत् पूता भवतीति

कष्ट देने रूप तपसे, वेदाध्ययन से और सुपात्रों को दिये दान से पाप
का पुरुष पाप से छूट जाता है । यह बात श्रुति से जानी जाती है ॥५२॥
सिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में बीसवां अध्याय पूरा हुआ ॥ २० ॥
दि शूद्र ब्राह्मणी से व्यभिचार करे तो राजा उसको गांडर से लपेटकर
त अग्नि में डलवादेवे ॥ १ ॥ और ब्राह्मणी का शिर मुंडा के सब अं-
घी लगाकर नंगी करके काले गधेपर चढ़ा के बड़ी चौड़ी सड़क से
जिस दशा को प्राप्त कराई देवे तो शुद्ध होजाती है यह श्रुति से जाना जाता
॥ यदि वैश्य पुरुष ब्राह्मणी से संग करे तो लाल दाभों से लपेटकर
श्य को प्रज्वलित अग्नि में फेंक देवे ॥ ३ ॥ और ब्राह्मणी का शिर मुंडवा
र में घी लगाकर सफेद गधे पर नंगी चढ़ा के बड़ी सड़क से निकाले
वित्र होजाती ऐसा जाना जाता है ॥ ४ ॥ यदि क्षत्रिय पुरुष ब्राह्मणी
भिचार करे तो शरपते से लपेटकर प्रज्वलित अग्नि में डलवा देवे और
णी का शिर मुंडवा के शरीर में घी लगाकर नंगी कर लाल गधे पर च

विज्ञायते ॥ ५॥ एवं वैश्यो राजन्यायां शूद्रश्च राजन्यावैश्य
योः ॥ ६ ॥ मनसा भर्तुरतिचारे त्रिरात्रं यावकं क्षीरौदनं व
भुञ्जानाऽधःशयीतोऽर्ध्वं त्रिरात्रादप्सु निम्नगायाः सावित्र्य
अष्टशतेन शिरोभिर्जुहुयात्, पूता भवतीति विज्ञायते ॥ ७

वाक्सम्बन्ध एनदेव मासं चरित्वोर्ध्वं मासादप्सु नि
म्नगायाः सावित्र्याश्चतुर्भिरष्टशतैः शिरोभिर्जुहुयात्पूता भ
वतीति विज्ञायते ॥८॥ व्यवाये तु संवत्सरं घृतपटं धारये
॥ ९ ॥ गोमयगर्त्ते कुशप्रस्तरे वा शयीतोर्ध्वं संवत्सराद
निम्नगायाः सावित्र्यास्त्र्यष्टशतेन शिरोभिर्जुहुयात्पूता भ
वतीति विज्ञायते ॥ १० ॥

व्यवायेतीर्थगमने धर्मेभ्यस्तुनिवर्तते ।

ढ़वा के वही सड़क से निकाले तो पवित्र होजाती है यह जाना जाता है।
इसी प्रकार वैश्य पुरुष क्षत्रिया स्त्री से तथा शूद्र पुरुष क्षत्रिया और वैश्या
से व्यभिचार करे तो पूर्वोक्त प्रकार से ही दोनों का प्रायश्चित्त जानो ॥
यदि द्विज स्त्री मन से दूसरे पुरुष की चाहना द्वारा पति का उलंघन या
रस्कार करे तो तीन दिन तक दूध भात और कुलत्थ खाती हुई भूमि
सोवे । तीन दिन के उपरान्त नदी के जल में सावित्री के शिरोमन्त्र (
पोज्योती०) एक सौ आठ मन्त्रों से घी की आहुति करे तो पवित्र हो
है ऐसा श्रुति से जाना जाता है॥७॥ यदि वाणी द्वारा अन्य पुरुष से संयोग
बात करे वा पति का अनादर या आज्ञा का उलङ्घन करे वा गाली आदि क
बोले तो पूर्वोक्त ७ वें सूत्र में कहा व्रत एक मास तक करके नदी के जल में
वित्री (तत्सवितुः०) मन्त्र के शिरो मन्त्र (ओम्–आपोज्योती०) से ४३२
हुति घी की छोड़े तो शुद्ध हो जाती है यह श्रुति से जाना जाता है ॥
यदि द्विज स्त्री पर पुरुष से संग करे तो एक वर्ष तक घी लगाये वस्त्र धा
करे (अथवा केवल घी लगा कर नंगी रहे अथवा घृत नाम जल से
वस्त्र धारण करे) ॥९॥ गोवर के गड्ढे में वा कुशों के विछौना पर सोया क
एक वर्ष के पश्चात् सावित्री के शिरो मन्त्र (आपोज्योती०) से नदी के
में ३२४ आहुति घी की छोड़े तो पवित्र होती ऐसा जाना जाता है ॥
मैथुन में विशेष कर प्रयुक्त होने तथा तीर्थयात्रा करने वाला अन्य

चतस्रस्तु परित्याज्याः शिष्यगागुरुगाचया ॥ ११ ॥
पतिघ्नी च विशेषेण जुङ्गितोपगता च या ॥ १२ ॥
याब्राह्मणीसुरापी नतांदेवाःपतिलोकंनयन्ति ।
इहैवसाचरतिक्षीणपुण्याऽप्सुलुग्भवतिशुक्तिकावा ॥१३॥
ब्राह्मणक्षत्रियविशां स्त्रियःशूद्रेणसंगताः ।
अप्रजाताविशुद्ध्यन्ति प्रायश्चित्तेननेतराः॥
प्रतिलोमंचरेयुस्ताः कृच्छ्रंचान्द्रायणोत्तरम् ॥ १४ ॥
पतिव्रतानांगृहमेधिनीनां सत्यव्रतानांचशुचिव्रतानाम् ।
तासांतुलोकाःपतिभिःसमाना,गोमायुलोकाव्यभिचारिणीनाम्१५
पतत्यर्धंशरीरस्य यस्यभार्यासुरांपिबेत् ।
पतितार्द्धशरीरस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥ १६ ॥
ब्राह्मणश्चेदप्रेक्षापूर्वं ब्राह्मणदारानभिगच्छेदनिवृत्तध-

नियम धर्मों से रहित हो जाता है। तथापि मनुष्य को पुत्र शिष्यों की स्त्री, पितादि गुरुओं की पत्नी, पतिका घात करने वाली और वर्जित नीच के साथ संग करने वाली इन चार प्रकार की स्त्रियों को विशेष कर त्यागना चाहिये परन्तु पाप सब के साथ व्यभिचार करने में है॥ ११ । १२ ॥ जो ब्राह्मणी सुरा (मद्य) पीने वाली होती है उस को देवता लोग पति के साथ स्वर्ग में नहीं घुसने देते। वह पुण्य का नाश हो जाने से इसी मर्त्यलोक में विचरती है। जल में डुबकी लगाने वाली पक्षिणी वा सीपी होती है ॥ १३ ॥ जिन के कोई सन्तान न हुआ हो ऐसी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, की स्त्रियां शूद्र से संग करें तो प्रायश्चित्त से शुद्ध हो सकती हैं किन्तु जिन के सन्तान हो चुके वे शुद्ध नहीं हो सकतीं। वे स्त्रियां उलटा कृच्छ्र व्रत करके चान्द्रायण व्रत करें ॥ १४ ॥ शुद्ध पवित्रता से रहने वालीं, सत्य बोलने वालीं, और पतिव्रता होने से घर को पवित्र करने वालीं स्त्रियों को अपने पतियों के सहित स्वर्ग प्राप्त होता, और व्यभिचारिणी स्त्रियों को शृगाल योनि मिलती है ॥ १५ ॥ जिस द्विज की स्त्री मद्य पीती है उस का आधा शरीर पतित हो जाता है और जिस के शरीर का आधा भाग पतित हो गया उस के शुद्ध होने का प्रायश्चित्त नहीं है ॥ १६ ॥ ब्राह्मण पुरुष यदि विना विचारे किसी ब्राह्मण की स्त्री से

विज्ञायते ॥ ५॥ एवं वैश्यो राजन्यायां शूद्र
योः ॥ ६ ॥ मनसा भर्तुरतिचारे त्रिरात्रं याव
भुञ्जानाऽधःशयीतोऽर्ध्वं त्रिरात्रादप्सु निम्नः
अष्टशतेन शिरोभिर्जुहुयात्, पूता भवतीति
वाक्सम्बन्ध एतदेव मासं चरित्वोर्ध्वं
म्नगायाः सावित्र्याश्चतुर्भिरष्टशतैः शिरोभि
वतीति विज्ञायते ॥८॥ व्यवाये तु संवत्सरं
॥ ९ ॥ गोमयगर्त्ते कुशप्रस्तरे वा शयीतोर्ध्वं
निम्नगायाः सावित्र्यास्त्र्यष्टशतेन शिरोभि
वतीति विज्ञायते ॥ १० ॥

व्यवायेतीर्थगमने धर्मेभ्यस्तुनिवर्तते ।

यतस्तु परित्याज्याः शिष्यगागुरुगाचया ॥ ११ ॥
तिघ्नी च विशेषेण जुङ्गितोपगता च या ॥ १२ ॥
याब्राह्मणीसुरापी नतांदेवाःपतिलोकंनयन्ति ।
इहैवसाचरतिक्षीणपुण्याऽप्सुलुग्भवतिशुक्तिकावा ॥१३॥
ब्राह्मणक्षत्रियविशां स्त्रियःशूद्रेणसंगताः ।
अप्रजाताविशुद्ध्यन्ति प्रायश्चित्तेननेतराः॥
प्रतिलोमंचरेयुस्ताः कृच्छ्रंचान्द्रायणोत्तरम् ॥ १४ ॥
तानांगृहमेधिनीनां सत्यव्रतानांचशुचिव्रतानाम् ।
लोकाःपतिभिःसमाना,गोमायुलोकाव्यभिचारिणीनाम्१५
पतत्यर्धंशरीरस्य यस्यभार्यासुरांपिबेत् ।
पतितार्द्धशरीरस्य निष्कृतिर्नविधीयते ॥ १६ ॥
ब्राह्मणश्चेदप्रेक्षापूर्वं ब्राह्मणदारानभिगच्छेदनिवृत्तध-

धर्मों से रहित हो जाता है। तथापि मनुष्य को पुत्र शिष्यों की स्त्री, पि- गुरुओं की पत्नी, पतिका घात करने वाली और वर्जित नीच के साथ रने वाली इन चार प्रकार की स्त्रियों को विशेष कर त्यागना चाहिये पाप सब के साथ व्यभिचार करने में है॥ ११ । १२ ॥ जो ब्राह्मणी सुरा पीने वाली होती है उस को देवता लोग पति के साथ स्वर्ग में नहीं देते। वह पुण्य का नाश हो जाने से इसी मर्त्यलोक में विचरती है। डुबकी लगाने वाली पक्षिणी या सीपी होती है ॥ १३ ॥ जिन के न्तान न हुआ हो ऐसी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, की स्त्रियां शूद्र से संग प्रायश्चित्त से शुद्ध हो सकती हैं किन्तु जिन के सन्तान हो चुके वे हीं हो सकतीं। वे स्त्रियां उलटा कृच्छ्र व्रत करके चान्द्रायण व्रत करें। शुद्ध पवित्रता से रहने वालीं, सत्य बोलने वालीं, और पतिव्रता होने को पवित्र करने वालीं स्त्रियों को अपने पतियों के सहित स्वर्ग प्राप्त और व्यभिचारिणी स्त्रियों को शृगाल योनि मिलती है ॥ १५ ॥ जिस की स्त्री मद्य पीती है उस का आधा शरीर पतित हो जाता है और के शरीर का आधा भाग पतित हो गया उस के शुद्ध होने का प्रायश्चित्त है ॥ १६ ॥ ब्राह्मण पुरुष यदि बि [illegible]

अथ खल्वयं पुरुषो मिथ्या व्याकरोत्ययाज्यं वा याजयति,अप्रतिग्राह्यं वा प्रतिगृह्णाति,अनन्नं वाऽश्नाति, अनाचरणीयमेवाऽऽचरति,तत्र प्रायश्चित्तं कुर्यान्न कुर्य्यादिति मीमांसन्ते,न कुर्य्यादित्याहुर्नहि कर्म क्षीयतइति, कुर्यादित्येव तस्मात्-श्रुतिनिदर्शनात्तरति सर्वं पाप्मानं तरति ब्रह्महत्यां योऽश्वमेधेन यजतइति ॥ १ ॥ वाचाऽभिशस्तो गोसवेनाग्निष्टुता यजेत ॥२॥ तस्य निष्क्रयणानि जपस्तपो होम उपवासो दानमुपनिषदो वेदादयो वेदान्ताः सर्वच्छन्दः संहिता मधून्यघमर्षणमथर्वशिरो रुद्राः पुरुषसूक्तं राजनरौहिणे सामनी कूष्माण्डानि पावमान्यः सावित्री चेति पावनानि ॥ ३ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ४ ॥

वैश्वानरींव्रतपतीं पवित्रेष्टिंतथैवच ।
सकृदृतौप्रयुञ्जानः पुनातिदशपूरुषम्, इति ॥ ५ ॥

इसके बाद यह विचार करते हैं कि यह मनुष्य मिथ्या बोलता, अनधिकारी नीचों को यज्ञ कराता, अनुचित निषिद्ध दान को लेता,अभक्ष्य पदार्थों को खाता और प्रायः निन्दित शास्त्र विरुद्ध आचरण करता है। उन सब ग्रंथों में प्रायश्चित्त करे ? वा न करे ऐसी मीमांसा करते हैं। पूर्वपक्षी कहते हैं कि प्रायश्चित्त न करे क्योंकि विना भोगे किया कर्म क्षीण नहीं होता। उत्तर पक्षवाले कहते हैं कि प्रायश्चित्त अवश्य करे क्योंकि, श्रुति में लिखा है कि "जो पुरुष अश्वमेध यज्ञ करता है उसके सब पाप छूट जाते हैं। और ब्रह्महत्या के पाप से भी मुक्त हो जाता है" ॥१॥ वाणी से निन्दित अर्थात् अति कठोर आदि आचरण करने से निन्दित पुरुष गोसव अग्निष्टुत यज्ञ करे ॥२॥ उन यज्ञों के प्रत्याम्नाय वा प्रतिनिधि–जप, तप, होम, उपवास, दान, उपनिषद्-वेदादि-वेदान्त, सब छन्द, संहिता, मधुऋचा, अघमर्षण, अथर्वशिरः, रुद्राध्याय, वा रुद्रसूक्त, पुरुष सूक्त, राजन-रौहिण दोनों साम, कूष्माण्ड सूक्त, पवमान सूक्त, और सावित्री मन्त्र ये सब पावन हैं। इन का जप पाठ शुद्ध होके एकान्त में श्रद्धा से करे ॥ ३ ॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ ४ ॥ वैश्वानरी, व्रतपती, और पवित्रा इष्टि को प्रत्येक ऋतु में एक वार करे तो दश पीढ़ी को पवित्र करता है ॥ ५ ॥

उपवासन्यायेन पयोव्रतता फलभक्षता प्रसृतयावको हिरण्यप्राशनं सोमपानमिति मेध्यानि ॥ ६ ॥ सर्वे शिलोच्चयाः सर्वाः स्रवन्त्यः पुण्या ह्रदास्तीर्थान्यृषिनिवासगोष्ठपरिस्कन्धा इति देशाः ॥ ७ ॥ संवत्सरो मासश्चतुर्विंशत्यहो द्वादशाहः षडहस्त्र्यहोऽहोरात्रइति कालाः ॥८॥ एतान्येवानादेशे विकल्पेन क्रियेरन्, एनःसु गुरुषु गुरूणि लघुषु लघूनि ॥९॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चान्द्रायणमिति सर्वप्रायश्चित्तिः सर्वप्रायश्चित्तिरिति ॥ १० ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

ब्रह्मचारी चेत्स्त्रियमुपेयादरण्ये चतुष्पथे लौकिकेऽग्नौ रक्षोदैवतं गर्दभं पशुमालभेत, नैर्ऋतं वा चरुं निर्वपेत्, तस्य जुहुयात्कामाय स्वाहा, कामकामाय स्वाहा, निर्ऋत्यै स्वाहा, रक्षोदेवताभ्यः स्वाहेति ॥ १ ॥ एतदेव रेतसः प्रयत्नोत्सर्गे

उपवास की रीति से दूध का व्रत, केवल फल खाना, मुट्ठी भर कुलत्थ, सुवर्ण, सोमपान, इनमें से किसी एक का कुछ नियत काल तक सेवन करते हुए व्रत करना बुद्धि को शुद्ध करता है ॥ ६ ॥ सब पर्वत, सब नदियां, तालाब, तीर्थ, ऋषियों के निवास स्थान, गोशाला, बड़े २ प्राचीन नामी वृक्ष वटपीपलादि ये सब पवित्र देश हैं ॥७॥ एक वर्ष, एक महीना, २४ दिन, बारह दिन, छः दिन, तीन दिन, और एक दिन ये प्रायश्चित्त के काल हैं ॥ ८ ॥ इन्हीं में से किसी नियत काल तक विकल्प से अर्थात् किसी अपराध में किसी काल तक प्रायश्चित्त वहां करें कि जहां काल का नियम न किया हो । बड़े पापों में बड़ा प्रायश्चित्त और छोटे पापों में छोटा प्रायश्चित्त करे ॥ ९ ॥ कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, और चान्द्रायण ये सभी अपराधों पर प्रायश्चित्त हैं ॥ १० ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में बाईसवां अध्याय पूरा हुआ ॥२२॥

यदि ब्रह्मचारी पुरुष किसी स्त्री से वन में भोग करे तो चौराहे पर लौकिक अग्नि में राक्षस देवता वाले गर्दभ पशु का आलम्भन करे । अथवा निर्ऋति देवता का विधि पूर्वक चरु बना कर आचारादि पूर्वक (कामाय स्वाहा) इत्यादि चार आहुति देवे ॥ १ ॥ प्रयत्न के साथ वीर्य के निकालने, दिन को सोने अथवा अन्य नियमों के टूटने पर भी समारोपण के अनन्तर

दिवा स्वप्ने व्रतान्तरेषु वा ऽऽसमावर्त्तनात्तिर्यग्योनिव्यवाये॥२॥ शुक्लमृषभं दद्यात् ॥ ३ ॥ गां गत्वा शूद्रावधेन दोषो व्याख्यातः ॥४॥ ब्रह्मचारिणः शवकर्मणो व्रतान्निवृत्तिरन्यत्र मातापित्रोः ॥५॥ स चेद्व्याधीयीत कामं गुरोरुच्छिष्टं भेषजार्थं सर्वं प्राश्नीयात् ॥६॥ गुरुप्रयुक्तश्चेन्म्रियेत त्रीन्कृच्छ्रांश्चरेद्गुरुः ॥ ७ ॥ ब्रह्मचारी चेन्मांसमश्नीयादुच्छिष्टभोजनीयं कृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा व्रतशेषं समापयेत् ॥ ८ ॥ श्राद्धसूतकभोजनेषु चैवम् ॥ ९ ॥ अकामतोपनतं मधु वाजसनेयके न दुष्यतीति विज्ञायते ॥१०॥ यआत्मत्यागयभिशस्तो भवति सपिण्डानां प्रेतकर्मच्छेदः ॥ ११ ॥ काष्ठलोष्टजलपाषाणशस्त्र विषरज्जुभिर्यआत्मानमवसादयति,स आत्महा भवति ॥१२॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ १३ ॥

यही प्रायश्चित्त करे। यदि पशुस्त्री गौ आदि से मैथुन करे तो॥२॥ उक्त होम के पश्चात् श्वेत बैल दक्षिणा में देवे ॥ ३ ॥ गौ के साथ मैथुन करे तो पूर्व कहे शूद्रा स्त्री के वध का प्रायश्चित्त करे ॥४ ॥ माता पिता के मरण को छोड़ के अन्य के मरने पर ब्रह्मचारी को सूतक का दोष नहीं लगता है ॥ ५ ॥ यदि ब्रह्मचारी रोगी हो जाय तो दवाई के विचार से केवल गुरु का उच्छिष्ट मात्र भोजन करे ॥ ६ ॥ गुरु की प्रेरणा से यदि ब्रह्मचारी मर जावे तो गुरु तीन कृच्छ्रव्रत करके प्रायश्चित्त करें ॥ ७ ॥ ब्रह्मचारी यदि मांस खा लेवे तो उच्छिष्ट भोजनांश द्वारा बारह दिन तक कृच्छ्रव्रत करके प्रायश्चित्त को समाप्त करे ॥ ८ ॥ किसी के श्राद्ध और सूतक में ब्रह्मचारी भोजन करे तो भी यही उक्त प्रायश्चित्त करे ॥ ९ ॥ विना कामना के ब्रह्मचारी का वीर्य निकल जाय तो मधु वाजसनेय श्रुति से जाना जाता है कि दोष नहीं लगता ॥१०॥ जो निन्दित पुरुष स्वयं आत्मघात करके मरे उस का सपिण्डों को प्रेतनिवृत्त्यर्थ पिण्डदानादि कर्म नहीं करना चाहिये ॥ ११ ॥ काष्ठ से दब के, मट्टी से दब के, जल में डूब के, पत्थरों से पिच कर या दब के, शस्त्र से शिर काट कर, विष खाके, और फांसी लगा के जो पुरुष अपनी हत्या करता है वह आत्मघाती होता है ॥१२॥ और भी श्लोक का प्रमाण कहते हैं कि ॥ १३ ॥

यश्चात्मत्यागिनः कुर्यात्स्नेहात्प्रेतक्रियांद्विजः ।
सतप्तकृच्छ्रसहितं चरेच्चान्द्रायणव्रतम्, इति ॥१४॥
चान्द्रायणं परस्ताद्वक्ष्यामः ॥१५॥ आत्महननाध्यवसा-
ये त्रिरात्रम् ॥ १६ ॥ जीवन्नात्मत्यागी कृच्छ्रं द्वादशरात्रं
चरेत्, त्रिरात्रं ह्युपवसेन्नित्यं स्निग्धेन वाससा प्राणानात्म-
नि चाऽऽयम्य त्रिः पठेदघमर्षणमिति ॥ १७ ॥ अपि वैतेन
कल्पेन गायत्रीं परिवर्त्तयेत् । अपिवाऽग्निमुपसमाधाय कू-
ष्माण्डैर्जुहुयाद्घृतम् ॥१८॥ यच्चान्यन्महापातकेभ्यः सर्वमे-
न पूयत इत्ययाप्याचामेत् ॥ १९ ॥ अग्निश्चमामन्युश्चेति
यतमनसापापं ध्यात्वोंपूर्वाः सत्यान्ता व्याहृतीर्जपेदघमर्षणं
वा पठेत् ॥२०॥ मानुषास्थिस्निग्धं स्पृष्ट्वा त्रिरात्रमाशौच-
मस्निग्धे त्वहोरात्रम् ॥ २१ ॥ शवानुगमने चैवम् ॥ २२ ॥

जो पुत्रादि द्विज पुरुष आत्महत्या करने वाले का स्नेह प्रीति मान के
कर्म करे वह तप्त कृच्छ्र सहित चान्द्रायण व्रत करे ॥ १४ ॥ चान्द्रायण व्रत
कहेंगे ॥ १५ ॥ आत्महत्या करने का निश्चय मात्र किया हो तो तीन
व्रत करे ॥१६॥ आत्महत्या के लिये विष खाकर वा फांसी आदि लगा कर भी
कारण मृत्यु न हो जीवित ही रहे तो बारह दिन कृच्छ्रव्रत करे पश्चात
दिन पृथक् उपवास करे, नित्य गीले वस्त्र पहन कर प्राणायाम करता हु-
तीन बार अघमर्षण सूक्त पढ़े ॥१७॥ अथवा उक्त पन्द्रह १५ दिन व्रत के
गायत्री का निरन्तर जप करे । अथवा विधि पूर्वक अग्नि को सामने
प्रति दिन कूष्माण्ड मन्त्रों द्वारा घी से होम के ॥ १८ ॥ महापातकों
जो कुछ अपराध किये हों वे सभी इस (१७। १८ सूत्रों में कहे १५ दिन
प्रायश्चित्त से दूर हो जाते हैं। निम्न रीति से प्रति दिन आचमन करे
मन से पाप का ध्यान करके (अग्निश्चमा०) मन्त्र से आचमन करे
ओं पूर्वक सात व्याहृतियों को अथवा अघमर्षण सूक्त को पढ़े ॥ २० ॥
की गीली हड्डी का स्पर्श करके तीन दिन अशुद्धि और सूखी हड्डी का
तो एक दिन रात सूतक के तुल्य अशुद्धि मान कर रहै पीछे सूतक
शुद्धि करे ॥ २१ ॥ मुर्दा के साथ मरघट तक आवे तो मुर्दा का स्पर्श
तीन दिन तथा स्पर्श न करने पर एक दिन सूतक माने ॥ २२ ॥

अधीयानानामन्तरागमने त्वहोरात्रमभोजनम्, त्रिरात्रमभिषेको विवासश्चान्योन्येन ॥ २३ ॥ श्वमार्जारनकुलशीघ्रगाणामहोरात्रम् ॥ २४ ॥ श्वकुक्कुटग्राम्यसूकरकङ्कगृध्रभासपारावतमानुषकाकोलूकमांसादने सप्तरात्रमुपवासो निष्पुरीषभावो घृतप्राशः पुनःसंस्कारश्च ॥ २५ ॥

ब्राह्मणस्तु शुना दष्टो नदीं गत्वा समुद्रगाम् ।
प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य ततः शुचिः । इति ॥ २६ ॥
कालोऽग्निर्मनसः शुद्धिरुदकार्कावलोकनम् ।
अविज्ञानं च भूतानां षड्विधा शुद्धिरिष्यते, इति ॥ २७ ॥

श्वचाण्डालपतितोपस्पर्शने सचेलं स्नातः सद्यः पूतो भवतीति विज्ञायते ॥ २८ ॥ पतितचाण्डालशववहने त्रिरात्रं वाग्यता अनश्नन्त आसीरन्, सहस्रपरमं वा तदभ्यसन्तः पूता भवन्तीति विज्ञायते ॥ २९ ॥

वेदशास्त्र पढ़ते पढ़ाते हुए गुरु शिष्य के बीच से कोई निकले तो एक दिन रात उपवास करें। तीन दिन अभिषेक करें तथा गुरु शिष्य दोनों तीन दिन दूर २ रहें ॥ २३ ॥ कुत्ता, बिलाव, न्योला, या कोई दौड़ता हुआ वेदाध्ययन के समय गुरु शिष्य के बीच से निकल जावे तो दोनों गुरु शिष्य एक दिन रात उपवास करें ॥ २४ ॥ कुत्ता, मुर्गा, गांव का सुअर, चीलह, गीध, भास, परेवा, गांव का कौवा, उल्लू, इन का मांस खा लेने पर सात दिन उपवास करे, उदर से मल की शुद्धि, और घी खावे तथा फिर से उपनयन संस्कार करे॥२५॥ यदि ब्राह्मण को कुत्ते ने काटा हो तो गंगा जी या समुद्र तक गयी अन्य नदी पर जाके स्नान के पश्चात् सौ प्राणायाम कर घी खाके शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ काल बीतना, अग्नि, मन की शुद्धि, जलाशय का दर्शन, सूर्यनारायण का दर्शन, और प्राणियों को न जानना देखना निर्जन एकान्त का वास ये छः प्रकार शुद्धि के साधारण हैं॥२७॥ कुत्ता, चाण्डाल और पतित का स्पर्श करें तो सचैल स्नान करने से तत्काल शुद्ध हो जाता है यह श्रुति में जाना गया है॥२८॥ पतित, चाण्डाल और मुर्दा को उठा के ले जाने पर मौन हुए तीन दिन बिना कुछ खाते हुए बैठे रहें। और (सहस्र परमं) मन्त्र का जप करें तो शुद्ध होते यह श्रुति से जाना जाता है ॥ २९ ॥ निन्दित निषिद्ध दुष्टों का

एतेनैव गर्हिताध्यापकयाजका व्याख्याताः, दक्षिणात्यागाच्च पूता भवन्तीति विज्ञायते ॥ ३० ॥ एतेनैवाभिशस्तो व्याख्यातः ॥ ३१ ॥ अथापरं भ्रूणहत्यायां द्वादशरात्रमब्भक्षो द्वादशरात्रमुपवसेत् ॥ ३२ ॥ ब्राह्मणमनृतेनाभिशंस्य पतनीयेनोपपतनीयेन वा मासमब्भक्षः शुद्धवतीरावर्तयेत् ॥ ३३ ॥ अश्वमेधाऽवभृथे वा गच्छेत् ॥ ३४ ॥ एतेनैव चाण्डालीव्यवायो व्याख्यातः ॥ ३५ ॥ अथापरः कृच्छ्रविधिः साधारणो व्यूढः ॥ ३६ ॥

अहःप्रातरहर्नक्तमहरेकमयाचितम् ।
अहःपराकंतत्रैकमेवंचतुरहौपरौ ॥ ३७ ॥
अनुग्रहार्थंविप्राणां मनुर्धर्मभृतांवरः ।
बालवृद्धातुरेष्वेवं शिशुकृच्छ्रमुवाचह ॥ ३८ ॥
अथ चान्द्रायणविधिः ॥ ३९ ॥

वेद पढ़ाने तथा यज्ञ कराने वालों को भी यही प्रायश्चित्त है । और नीचों से दक्षिणा का त्याग करें तो पवित्र हो जाते हैं ऐसा जाना गया है ॥ ३० ॥ इसी के तुल्य निन्दित का प्रायश्चित्त जानो ॥ ३१ ॥ और भ्रूण हत्या करने पर बारह दिन जल मात्र पी कर रहे तथा बारह दिन सर्वथा उपवास करे इन चौबीस दिन के व्रत से भी शुद्ध होता है ॥३२॥ ब्राह्मण की झूठी निन्दा करे तो महापातक वा उपपातक के तुल्य दोष लगता है उस के लिये एक मास तक जलमात्र पीकर व्रत करता हुआ शुद्धवती (एतोन्विन्द्रं स्तवाम० । सामसं० उत्तरार्चिके अ० १२ खं० ३) इत्यादि तीन ऋचाओं का बार २ जप करे ॥३३॥ अथवा अश्वमेध यज्ञ के अवभृथ स्नान में विद्वानों की आज्ञा लेकर सम्मिलित हो ॥३४॥ इसी के तुल्य चाण्डाली स्त्री के साथ संग करने पर भी प्रायश्चित्त करे ॥३५॥ अब असमर्थ वृद्ध बालकादि के लिये कृच्छ्र व्रत का छोटा साधारण विधान दिखाते हैं ॥३६॥ एक दिन प्रातःकाल, एक दिन सायंकाल, और एक दिन अयाचित भोजन करे तथा एक दिन सर्वथा उपवास करे । ऐसे चार दिन का यह कृच्छ्र व्रत कहाता है इसी के अनुसार तप्त कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र भी चार २ दिन के जानो ॥३७॥ धर्म को धारण करने वालों में श्रेष्ठ मनु जी ने बालक, वृद्ध, रोगी, और, साधारण निर्बल ब्राह्मणों पर कृपा दृष्टि करके यह शिशु कृच्छ्र व्रत कहा है ॥ ३८ ॥ अब चान्द्रायण व्रत का विधान दिखाते हैं ॥३९॥

मासस्यकृष्णपक्षादौ ग्रासानद्याच्चतुर्दश ।
ग्रासाऽपचयभोजीस्यात्पक्षशेषंसमापयेत् ॥ ४० ॥
एवंहिशुक्लपक्षादौ ग्रासमेकंतुभक्षयेत् ।
ग्रासोपचयभोजीस्यात्पक्षशेषंसमापयेत् ॥ ४१ ॥
अत्रैवगायेत्सामानि अपिवाव्याहृतीर्जपेत् ।
एषचान्द्रायणोमासः पवित्रमृपिसंस्तुतः ॥ ४२ ॥
अनादिष्टेपुसर्वेषु प्रायश्चित्तंविधीयतेविधीयत, इति ।

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अथातिकृच्छ्रः ॥ १ ॥ त्र्यहं प्रातस्तथासायमयाचितं राकइति कृच्छ्रः ॥ २ ॥ यावत्सकृदाददीत तावदश्नीयात्पू वत्सोऽतिकृच्छ्रः ॥ ३ ॥ अब्भक्षः स कृच्छ्रातिकृच्छ्रः ॥ ४

महीने के प्रारम्भ में कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को चौदह ग्रास खावे फि द्वितीयादि तिथियों में एक २ ग्रास घटाता जावे। अमावास्या को निराह उपवास करे ॥४०॥ इसी प्रकार शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को एक ग्रास खावे पि द्वितीयादि तिथियों में एक २ ग्रास बढ़ाता जाय पौर्णमासी को १५ ग्रास ख कर व्रत समाप्त करे ॥ ४१ ॥ चन्द्रमा की कलाओं के घटने बढ़ने के साथ ग्रास को घटाना बढ़ाना कहा है। इस व्रत में सामवेद का गान अथवा व्याहृतियं का जप अवश्य करे। यह चान्द्रायण महीने भर का व्रत ऋषियों ने पवि कहा है ॥४२॥ जिन पापों का कोई प्रायश्चित्त न कहा हो उन सब में चान्द्रा यण का ही विधान जानो ॥ ४३ ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में तेईसवां अध्याय पूरा हुआ ॥२३॥

अब अतिकृच्छ्र व्रत का विधान दिखाते हैं ॥ १ ॥ तीन दिन प्रातःकाल, तीन दिन सायंकाल, तीन दिन बिन मांगे जो मिले सो खावे और अन्त में तीन दिन उपवास करे यह तो १२ दिन का पूर्वोक्त कृच्छ्र व्रत कहाता है ॥ २ ॥ इसी क्रम से नौ दिन तक जितना अन्न एक बार में मुख में आसके उतना ही खावे अन्त में तीन दिन उपवास करे वह बारह दिन का अति- कृच्छ्र व्रत कहाता है ॥ ३ ॥ नौ दिन केवल जल पी के रहे और अन्त में तीन दिन निर्जल निराहार रहे यह कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत कहाता है ॥४॥ कृच्छ्र व्रतों

णां व्रतरूपाणि ॥ ५ ॥ श्मश्रुकेशान्वापयेद्भ्रुवोऽ
ामशिखावर्जं नयान्तिकृत्येकवासा अनिन्दितभोजी
द्वैक्ष्यमनिन्दितं त्रिषवणमुदकोपस्पर्शी दण्डी सकमण्डलुः
शूद्रसंभाषणवर्जी स्थानाऽऽसनशीलोऽहस्तिष्ठेद्रात्रावासीते-
ह भगवान् वसिष्ठः ॥ ६ ॥ स तदेतद्धर्मशास्त्रं नापुत्राय
शिष्याय नासंवत्सरोषिताय दद्यात् ॥७॥ सहस्रं दक्षिणा
ृषभैकादश गुरुप्रसादो वा गुरुप्रसादो वेति ॥ ८ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अविख्यापितदोषाणां पापानांमहतांतथा ।
सर्वेषांचोपपापानां शुद्धिंवक्ष्याम्यशेषतः ॥ १ ॥
आहिताग्नेर्विनीतस्य वृद्धस्यविदुषोऽपिवा ।
रहस्योक्तंप्रायश्चित्तं पूर्वोक्तमितरेजनाः ॥ २ ॥

के नियम दिखाते हैं ॥ ५ ॥ भौंह, आंखें, उदर-भुजादि के लोम तथा चोटी को छोड़ कर प्रथम डाढ़ी मूंछें और शिर के बालों को मुंड़ावे । फिर नख काट-वाके स्नान कर एक धोती मात्र पहिने हुए, दिनरात में एकवार शुद्ध अनिन्दित भोजन करे, शुद्ध एकान्त में निवास करे, सायं, प्रातः और मध्यान्ह में तीनों वार स्नान करे, दण्ड कमण्डलु आदि ब्रह्मचारी के चिन्ह रक्खे, स्त्री तथा शूद्रादि नीचों से संभाषण न करे, रहने के स्थान और आसन से दूर कहीं न जावे । दिन में खड़ा होके तथा रात्रि में बैठ कर प्रायः जप करता रहे । यह भगवान् वसिष्ठ महर्षि ने कहा है ॥ ६ ॥ यह अध्यापक ब्राह्मण इस महर्षि वसिष्ठ प्रोक्त धर्मशास्त्र को भी विधिपूर्वक शिष्य नहीं हुआ, या जो एक वर्ष तक निकट में न रहे या जो पुत्र न हो, ऐसों को यह शास्त्र न पढ़ावे या न उपदेश करे ॥ ७ ॥ सहस्र स्वर्ण मुद्रा या सहस्र गौ अथवा दश गौ एक बैल गुरु को शिष्य दक्षिणा देवें अथवा गुरु वैसे ही सन्तुष्ट हों तो भले ही दक्षिणा न लेवें और अधिकारी शिष्य को शास्त्रों का विद्वान् करें ॥ ८ ॥ यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में चौबीसवां अध्याय पूरा हुआ ॥ २४ ॥

जिन के दोष प्रकट नहीं हुए ऐसे छिपे हुए पापों की, तथ बड़े प्रबल महापापों की, और सब उपपातकों की पूरी २ शुद्धि आगे कहते हैं ॥ १ ॥ नम्रभाव से वर्तने वाला आहिताग्नि (अग्निहोत्री,) वृद्ध, तथा विद्वान् इन के लिये एकान्त में करने योग्य प्रायश्चित्त पूर्व कहा गया । अन्य लोग ॥ २ ॥

प्राणायामैःपवित्रैश्च दानैर्होमैर्जपैस्तथा ।
नित्ययुक्ताःप्रमुच्यन्ते पातकेभ्योनसंशयः ॥ ३ ॥
प्राणायामाःपवित्राणि व्याहृतीःप्रणवंतथा ।
पवित्रपाणिरासीनो ब्रह्मनैत्यकमभ्यसेत् ॥ ४ ॥
आवर्त्तयेत्सदायुक्तः प्राणायामान्पुनःपुनः ।
आलोमाग्रान्नखाग्राच्च तपस्तप्यतुउत्तमम् ॥ ५ ॥
निरोधाज्जायतेवायु र्वायोरग्निर्हिजायते ।
तापेनाऽऽपोऽथजायन्ते ततोऽन्तःशुध्यतेत्रिभिः ॥ ६ ॥
नतांतीव्रेणतपसा नस्वाऽध्यायैर्नचेज्यया ।
गतिंगन्तुंद्विजाःशक्ता योगात्संप्राप्नुवन्तियाम् ॥ ७ ॥
योगात्संप्राप्यतेज्ञानं योगोधर्मस्यलक्षणम् ।
यागःपरंतपोनित्यं तस्माद्युक्तःसदाभवेत् ॥ ८ ॥
प्रणवेनित्ययुक्तःस्याद् व्याहृतीपुचसप्तसु ।
त्रिपदायांचगायत्र्यां नभयंविद्यतेक्वचित् ॥ ९ ॥

प्राणायाम, पवमान सूक्तादि के अभ्यास, सुपात्रों को दान, होम, गायत्र्यादि के जप, इन कामों में नित्य ही श्रद्धा भक्ति से तत्पर रहते हुए पातकों से छूट जाते हैं इस में सन्देह नहीं है ॥ ३ ॥ हाथ में पवित्री या कुश ले कर पूर्वाभिमुख बैठा हुआ प्राणायाम करके प्रणव और व्याहृतियों के उच्चारण पूर्वक पवमान सूक्तादि रूप वेद का श्रद्धा से, नित्य २ अभ्यास करे ॥ ४ ॥ सदा ही तत्पर रहता हुआ श्रद्धा से प्राणायामों की वार २ नित्य आवृत्ति करे। लोमों के अग्रभाग और नखों के अग्रभाग तक सब शरीर से उत्तम तप करे ॥ ५ ॥ प्राण की गति के रोकने से शरीर में वायु बढ़ता, वायु से अग्नि प्रकट होता या बढ़ता, और अग्नि के ताप से जल बढ़ता है तिस से तीनों तत्त्वों से अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है ॥ ६ ॥ तीव्र तप से, नियत वेदाध्ययन रूप स्वाध्याय से, और यज्ञों के करने से ब्राह्मण लोग उस उत्तम गति को प्राप्त नहीं होते कि जिस गति को प्राणायामादि योगाभ्यास से प्राप्त हो सकते हैं ॥ ७ ॥ योग से ज्ञान प्राप्त होता, योग धर्म का चिन्ह है, योग नित्य ही परम तप है, तिस कारण अपना हित चाहने वाला प्राणायामादि योग में नित्य तत्पर हो ॥ ८ ॥ प्रणव, सात व्याहृति, और तीन पाद की गायत्री, इन के जप में जो प्राणी सदा भक्ति से निरन्तर नित्य तत्पर रहे उस के लिये कहीं भय नहीं है ॥ ९ ॥

प्रणवाद्यास्तथावेदाः प्रणवेपर्यवस्थिताः ।
वाङ्मयंप्रणवःसर्वं तस्मात्प्रणवमभ्यसेत् ॥ १० ॥
एकाक्षरंपरंब्रह्म पावनंपरमंस्मृतम् ।
सर्वेषामेवपापानां संकरेसमुपस्थिते ॥ ११ ॥
अभ्यासोदशसाहस्रः सावित्र्याःशोधनंमहत् ॥१२॥
सव्याहृतिंसप्रणवां गायत्रींशिरसासह ।
त्रिःपठेदायतप्राणः प्राणायामःसउच्यतेसउच्यतइति ॥१३॥
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥
प्राणायामान्धारयेत्त्रीन्यथाविध्यतन्द्रितः ।
अहोरात्रकृतंपापं तत्क्षणादेवनश्यति ॥ १ ॥
कर्मणामनसावाचा यदन्हाकृतमेनसम् ।
आसीनःपश्चिमांसन्ध्यां प्राणायामैर्व्यपोहति ॥ २ ॥
कर्मणामनसावाचा यद्रात्र्याकृतमेनसम् ।
उत्तिष्ठन्पूर्वसन्ध्यान्तु प्राणायामैर्व्यपोहति ॥ ३ ॥
प्राणायामैर्यआत्मानं संयम्याऽऽस्तेपुनःपुनः ।

प्रणव को आदि ले कर वेद चलते हैं अर्थात् प्रणव से वेदों की
उत्पत्ति हुई, प्रणव में ही वेदों की स्थिति है। और वाणी का विषय शब्दमात्र
सब प्रणव स्वरूप ही है जिस से प्रणव का निरन्तर अभ्यास करे॥ १० ॥ सब
प्रकार के पापों का घाल मेल होकर बड़ा संकट हो जाने पर, पर ब्र-
ह्मस्वरूप एकाक्षर प्रणव का अभ्यास करना परम पवित्र माना गया है ॥११॥
दश हजार गायत्री का एकान्त में शुद्धि के साथ श्रद्धा पूर्वक जप करना परम
शुद्धि करने वाला है अर्थात् इस से अधिकांश पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १२ ॥
प्रणव, व्याहृति और शिरोमन्त्र इन सब के सहित गायत्री को प्राणगति
रोक कर तीन बार पढ़े इसी को प्राणायाम कहते हैं ॥ १३ ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में पचीसवां अध्याय पूरा हुआ ॥ २५ ॥
निरालस हो के विधि पूर्वक तीन प्राणायाम नित्य करे तो दिन रात
में किया पाप तत्क्षण नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥ मन, वाणी तथा शरीर से जो
कुछ अपराध दिन भर में किया उस को सायंकाल की सन्ध्या में बैठ कर
प्राणायाम करता हुआ नष्ट कर देता है ॥ २ ॥ इसी प्रकार मन, वाणी तथा
शरीर से रात्रि में किये दोषों को प्रातःकाल की सन्ध्या में खड़ा हुआ प्राणा-
यामों से नष्ट करदेता है ॥३॥ जो पुरुष अपने सर्वाङ्गिन्द्रियों को प्राणायामों से

संदध्याद्वाधिकैर्वाऽपि द्विगुणैर्वापरंतुयः ॥ ४ ॥
सव्याहृतिकाःसप्रणवाः प्राणायामास्तुषोडश ।
अपिभ्रूणहनंमासात् पुनन्त्यहरहःकृताः ॥ ५ ॥
जप्त्वाकौत्समपेत्येद्वासिष्ठंचप्रतीत्यृचम् ।
माहित्रंशुद्धवत्यश्च सुरापोऽपिविशुध्यति ॥ ६ ॥
सकृज्जप्त्वाऽस्यवामीयं शिवसंकल्पमेवच ।
सुवर्णमपहृत्यापि क्षणाद्भवतिनिर्मलः ॥ ७ ॥
हविष्पान्तीयमभ्यस्य नतमंहइतीतिच ।
सूक्तंचपौरुषंजप्त्वा मुच्यतेगुरुतल्पगः ॥ ८ ॥
अपिवाप्सुनिमज्जानस्त्रिर्जपेदघमर्षणम् ।
यथाऽश्वमेधावभृथस्तादृशंमनुरब्रवीत् ॥ ९ ॥
आरम्भयज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टोदशभिर्गुणैः ।
उपांशुःस्याच्छतगुणः साहस्रोमानसःस्मृतः ॥ १० ॥

रस्सी से बांध कर वार २ यैंठता है तथा जो अधिक द्विगुण वा और भी अधि अभ्यास करता ॥४॥ अर्थात् व्याहृति और प्रणव के सहित यदि सोलह प्राण याम नियम से विधि पूर्वक नित्य करे तो एक मास में ब्रह्महत्या का महापात भी छुटा कर शुद्ध निर्दोष कर देते हैं ॥ ५ ॥ (अपनः शोशुचदघं० ऋ०मं० १ सू० ९७) यह कौत्स सूक्त (प्रतिस्तोमेभिरुषसं० ऋ०७।७।२७) यह वासिष्ठ सू (महित्रीणामवोऽस्तु०ऋ०८।८।४२) यह माहित्र सूक्त (एतोन्विन्द्रं०ऋ०८।६।३१) शुद्धवती तीन ऋचा इन का जप करने से मद्यपान के दोष से मुक्त हो जात है॥६॥ (अस्यवामस्य० ऋ० मं० १ । सू० १६४) सूक्त तथा (यज्जाग्रतो दू यजु०अ०३४।१-६) छः मन्त्र शिवसंकल्प सूक्त के एक वार जप करने से सुवर्ण की चोरी के दोष से शीघ्र ही मुक्त होता है ॥७॥ (हविष्पान्त० ऋ० ८।४।१७ सूक्त (नतमंहोनदुरितं०ऋ०८।७।१३) सूक्त (इति वा०ऋ०८।६।२६) सूक्त और (सहस्र शीर्षा० ऋ० ८ । ४ । १७) पुरुष सक्त इन सब का जप करने से गुरुपत्नी गमन के दोष से भी मुक्त हो जाता है ॥ ८ ॥ अथवा जल में डुबकी लगा के तीन वार अघमर्षण सूक्त का जप करे । जैसे अश्वमेध यज्ञ का अवभृथ स्नान सर्व पाप नाशक है वैसा ही मनु जी ने अघमर्षण को कहा है ॥ ९ ॥ अग्नि में आरम्भ होने वाले यज्ञों से जप यज्ञ दश गुणा श्रेष्ठ है । धीरे २ उच्चारण क्रि या उपांशु जप सौ गुणा और मानस जप सहस्र गुणा उत्तम है ॥१०॥

येपाकयज्ञाश्चत्वारो विधियज्ञसमन्विताः ।
सर्वेतेजपयज्ञस्य कलांनार्हन्तिषोडशीम् ॥ ११ ॥
जप्येनेवतुसंसिध्येद्‌ ब्राह्मणोनात्रसंशयः ।
कुर्य्यादन्यन्नवाकुर्य्यान्मैत्रोब्राह्मणउच्यते ॥ १२ ॥
जापिनांहोमिनांचैव ध्यायिनांतीर्थवासिनाम् ।
नपरिवसन्तिपापानि येचस्नाताःशिरोव्रतैः ॥ १३ ॥
यथाऽग्निर्वायुनाधूतो हविषाचैवदीप्यते ।
एवंजप्यपरोनित्यं ब्राह्मणःसंग्रहीप्यते ॥ १४ ॥
स्वाध्यायाध्यायिनांनित्यं नित्यंचप्रयतात्मनाम् ।
जपतांजुह्वतांचैव विनिपातोनविद्यते ॥ १५ ॥
सहस्रपरमांदेवीं शतमध्यांदशावराम् ।
शुद्धिकामःप्रयुञ्जीत सर्वपापेष्वपिस्थितः ॥ १६ ॥
क्षत्रियोबाहुवीर्य्येण तरेदापदमात्मनः ।
धनेनवैश्यशूद्रौतु जपैर्होमैर्द्विजोत्तमः ॥ १७ ॥

जो चार पाकयज्ञ और पकाये अन्न से होने वाले देवयज्ञ,भूत यज्ञ,पितृयज्ञ,नृयज्ञ, ये सब ठीक २ किये जप यज्ञ के षो- अग्निहोत्र दर्शपौर्णमासादि विधियज्ञ ये सब ठीक २ किये जप से ही डशांश के तुल्य भी नहीं हैं ॥ ११ ॥ ब्राह्मण केवल ठीक २ किये जप सिद्ध हो जाता है । वह चाहे अन्य कुछ करे वा न करे वह सब का मित्र हो- ता है ॥ १२ ॥ निरन्तर जप, होम, ध्यान करने वाले, तीर्थों में जाकर वास करने वाले और नित्य नियम से प्रातः स्नान सन्ध्या करने वालों के शरीरेन्द्रियों में पाप नहीं ठहरते ॥ १३ ॥ जैसे वायु और हविष्य घृतादि से प्रज्वलित अ- ग्नि का तेज बढ़ता है वैसे जप के द्वारा ब्राह्मण का तेज नित्य २ बढ़ताजाता है ॥१४॥ जो नित्य जितेन्द्रिय रहते, जो नित्य नियम से विधि पूर्वक वेदाध्ययन करते तथा नित्य २ जप होम करते हैं उन के यहां अकालमृत्यु आदि वि- पत्ति नहीं आती हैं ॥ १५ ॥ सब पापों में स्थित रहता हुआ भी अधिक से अधिक १००० गायत्री का, मध्यकक्षा में १०० का, और निकृष्ट दशा में १० गायत्री का जप अवश्य ही नित्य २ करता रहे ॥ १६ ॥ क्षत्रिय पुरुष अपने बाहुबल से विपत्तियों से बचे, वैश्य तथा शूद्र धनादि के द्वारा दुःखों को हटावें और ब्राह्मण जप होमों के द्वारा सब दुःखों को हटाता रहे ॥ १७ ॥ जैसे रथ के

यथाऽश्वारथहीनाःस्युरथोवाऽश्वैर्विनायथा ।
एवंतपस्त्वविद्यस्य विद्यावाऽप्यतपस्विनः ॥ १८ ॥
यथाऽन्नंमधुसंयुक्तं मधुवाऽन्नेनसंयुतम् ।
एवंतपश्चविद्याच संयुक्तंभेषजंमहत् ॥ १९ ॥
विद्यातपोभ्यांसंयुक्तं ब्राह्मणंजपनैत्यकम् ।
सदाऽपिपापकर्माणमेनोनप्रतियुज्यते,एनोनप्रतियुज्यते,इति २०
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

यद्यकार्यशतंसाग्रं कृतंवेदश्चधार्य्यते ।
सर्वंतत्तस्यवेदाग्निर्दहत्यग्निरिवेन्धनम् ॥ १ ॥
यथावातबलोवन्हिर्दहत्यार्द्रानपिद्रुमान् ।
तथादहतिवेदाग्निः कर्मजंदोषमात्मनः ॥ २ ॥
हत्वाऽपिसइमाँल्लोकान् भुञ्जानोऽपियतस्ततः ।

विना घोड़े वा घोड़ों के विना रथ व्यर्थ रहता है वैसे ही विना विद्या के धर्मानुष्ठान वा विना धर्मानुष्ठान रूप तप के विद्वान् होना मात्र निरर्थक है ॥ १८॥ जैसे मिष्ट मिला हुआ अन्न या अन्न मिला हुआ शर्करादि मीठा स्वादिष्ठ होता वैसे ही तप नाम धर्मानुष्ठान और विद्या दोनों हों तो सब पापों की परम औषध है ॥ १९ ॥ विद्या और धर्म कर्मानुष्ठान रूप तप से युक्त नित्य जप करने वाले, सदा पाप कर्म करते हुये भी ब्राह्मण को पाप दोष नहीं लगता है (चाहे यों कहलो कि पाप पुण्य दोनों बराबर हो जाने से वह पापी नहीं होता अर्थात् संसार में रहते हुए मनुष्य से बहुत बचने पर भी कुछ अपराध अवश्य होते हैं इस से जप होमादि सब हालत में करना अच्छा है। परन्तु पापों से बचता हुआ धर्म करे सो सब से अच्छा है) ॥ २० ॥
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में छब्बीसवां अध्याय पूरा हुआ ॥२६॥

यदि ब्राह्मणादि नये २ अकर्त्तव्य सैकड़ों अपराध भी करता हो पर वेद को नियम से पढ़ता पढ़ाता हो तो उसके उन सब पापों को वेद का ज्ञान रूप अग्नि ईंधन के तुल्य भस्म कर देता है ॥ १ ॥ जैसे वायु से प्रबल हुआ प्रज्वलित अग्नि वन के गीले वृक्षों को भी जला देता है। वैसे ही वेद रूप अग्नि भी कर्मों से हुए अन्तःकरण के दोषों को भस्म कर देता है ॥ २ ॥ इन मनुष्यादि प्राणियों का हनन कर के भी तथा उचित अनुचित का अन्न खाता हुआ भी ऋग्वेद को

ऋग्वेदंधारयन्विप्रो नैनःप्राप्नोतिकिञ्चन ॥ ३ ॥
नवेदबलमाश्रित्य पापकर्मरतिर्भवेत् ।
अज्ञानाच्चप्रमादाच्च दह्यतेकर्मनेतरत् ॥ ४ ॥
तपस्तप्यतियोऽरण्ये मुनिर्मूलफलाशनः ।
ऋचमेकांचयोऽधीते तच्चतानिचतत्समम् ॥ ५ ॥
इतिहासपुराणाभ्यां वेदंसमुपबृंहयेत् ।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयंप्रहरिष्यति ॥ ६ ॥
वेदाभ्यासोऽन्वहंशक्त्या महायज्ञक्रियाक्रमः ।
नाशयन्त्याशुपापानि महापातकजान्यपि ॥ ७ ॥
वेदोदितंस्वकंकर्म नित्यंकुर्यादतन्द्रितः ।
तद्धिकुर्वन्यथाशक्त्या प्राप्नोतिपरमांगतिम् ॥ ८॥
याजनाध्यापनाद्यौनात्तथैवासत्प्रतिग्रहात् ।
विप्रेपुनभवेद्दोषो ज्वलनार्कसमोहिसः ॥ ९ ॥

कण्ठस्थ पाठ करता हुआ ब्राह्मण किंचित् भी पाप को प्राप्त नहीं होता ॥३॥
परन्तु ब्राह्मण वेदाध्ययन के बल का आश्रय लेकर समझ पूर्वक पाप कर्म
कदापि न करे कि मेरे पाप वेदाध्ययन के बल से नष्ट हो जांयगे। ऐसा भरोसा
न रक्खे। क्योंकि अज्ञान वा भूल से किया अपराध वेदाध्ययन से नष्ट होता
है अन्य नहीं ॥ ४ ॥ जो पुरुष मूल फल खाता हुआ मौन हो कर वन में तप
करता है और जो गांव वा घर में रहता हुआ एक गायत्री मात्र का जप
करता है वे दोनों बराबर हैं ॥ ५ ॥ इतिहास पुराणों को देखने द्वारा वेदार्थ
ज्ञान को बढ़ावे। क्योंकि अल्पशास्त्रांश देखने जानने वाले से वेद डरता है
कि मुझ पर यह मनुष्य प्रहार करेगा ॥ ६ ॥ प्रति दिन नियम से यथा शक्ति
वेदाभ्यास करना और क्रम से पञ्चमहायज्ञ करना इतने ही कर्म महापातक
सम्बन्धी पापों को भी शीघ्र नाश करते हैं ॥ ७ ॥
वेद में कहे अपने कर्म को ब्राह्मण आलस्य छोड़ के नित्यर करे यथाशक्ति
केवल वेदोक्त कर्म को करता हुआ ही परमगति को अन्त में प्राप्त होजाता है
॥ ८ ॥ यज्ञ कराने, वेदादि पढ़ाने, क्षत्रियकन्यादि के साथ विवाह करने और
अयोग्य का दान लेने से तपस्वी तेजस्वी विद्वान् ब्राह्मणों को दोष विशेष
नहीं लगता क्योंकि ब्राह्मण अग्नि तथा सूर्य के समान हैं ॥ ९ ॥ भोज्य अभोज्य

शङ्कास्थानेसमुत्पन्ने भोज्याभोज्यान्नसंज्ञके ।
आहारशुद्धिंवक्ष्यामि तन्मेनिगदतःशृणु ॥ १० ॥
अक्षारलवणांरूक्षां पिबेद्ब्राह्मींसुवर्चलाम् ।
त्रिरात्रंशङ्खपुष्पींच ब्राह्मणःपयसासह ॥ ११ ॥
पालाशबिल्वपत्राणि कुशान्पद्मानुदुम्बरान् ।
क्वाथयित्वापिबेदापस्त्रिरात्रेणवशुध्यति ॥ १२ ॥
गोमूत्रंगोमयंक्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम् ।
एकरात्रोपवासश्च श्वपाकमपिशोधयेत् ॥ १३ ॥
गोमूत्रंगोमयंचैव क्षीरंदधिघृतंतथा ।
पञ्चरात्रंतदाहारः पञ्चगव्येनशुध्यति ॥ १४ ॥
यवान्विधिनोपयुञ्जानः प्रत्यक्षेणैवशुध्यति ।
विशुद्धभावेशुद्धाःस्युरशुद्धेतुसरागिणः ॥ १५ ॥
हविष्यान्प्रातराशांस्त्रीन्सायमाशांस्तथैवच ।
अयाचितंतथैवस्यादुपवासत्रयंभवेत् ॥ १६ ॥
अथचेत्त्वरतेकर्त्तुं दिवसंमारुताशनः ।

अन्न के खा लेने की शंका उत्पन्न हो कर ग्लानि हो जाने पर आहार शु[द्धि] का विचार कहते हैं सो तुम सुनो ॥१०॥ खार तथा लवण को छोड़ कर रू[खी] ब्राह्मी सुवर्चला औषधि को और शंखाहुली औषधि को दूध के साथ ती[न] दिन पीकर व्रत करे ॥११॥ अथवा ढांक, बिल्व (बेल) कमल और गूलरी [के] पत्तों का काढ़ा करर तीन दिन तक पीता हुआ व्रत करे तो शुद्ध होजाता [है] ॥१२॥ गोमूत्र, गोवर, गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत और कुशों का जल इन सब[को] एक दिन पीवे और एक दिन उपवास करे यह दो दिन का कृच्छ्र सान्तप[न] व्रत श्वपाक को भी शुद्ध कर सकता है। अर्थात् अत्यन्त शोधक है ॥ १३ ॥ और अभक्ष्य भक्षण की विशेष अपवित्रता की शंका हो तो गोमूत्र, गोवर, गोदुग्ध, गो दधि, गो घृत, इन पांच पदार्थों को पांच दिन एकर को एक र दिन खाके व्रत करे तो इस पञ्चगव्य से सम्यक् शुद्धि होती है ॥ १४ ॥ विधि के साथ केवल जौ खाकर व्रत करे तो प्रत्यक्ष शुद्धि होती है। व्रत करनेवाले का मन शुद्ध हो मन में कुटिलता न हो तो शुद्धि होगी और अपवित्र भाव होगा तो राग सहित की शुद्धि न होगी ॥१५॥ तीन दिन प्रातःकाल, तीन दिन सा- यंकाल हविष्य अन्न, खार लवण रहित खावे, तीन दिन बिन मांगे जो मिले [खा]वे और तीन दिन उपवास करे ॥ १६ ॥ अथ यदि अति शीघ्र ही प्रायश्चित्त

रात्रौजलाशयेव्युष्ठः प्राजापत्येनतत्समम् ॥ १७ ॥
सावित्र्यष्टसहस्रंतु जपंकृत्वोत्थितेरवौ ।
मुच्यतेपातकैःसर्वैर्यदिनोब्रह्महाभवेत् ॥ १८ ॥
योवैस्तेनःसुरापोवा भ्रूणहागुरुतल्पगः ।
धर्मशास्त्रमधीत्यैव मुच्यतेसर्वपातकैः ॥ १९ ॥
दुरितानांदुरिष्टानां पापानांमहतांतथा ।
कृच्छ्रंचान्द्रायणंचैव सर्वपापप्रणाशनम् ॥ २० ॥
एकैकंवर्धयेत्पिण्डं शुक्लेकृष्णेचह्रासयेत् ।
अमावास्यांनभुञ्जीत एवंचान्द्रायणोविधिरेवं
चान्द्रायणोविधिः, इति ॥ २१ ॥
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे सप्तविंशोऽध्यायः ।२७।
नस्त्रीदुष्यतिजारेण नविप्रोवेदकर्मणा ।

कर लेना चाहता हो तो दिन भर कुछ भी अन्न जल न ग्रहण कर वायु
का भक्षण करे और रात्रि भर किसी जलाशय में भीगता रहे तो वह एक दि
रात का व्रत बारह दिन के कृच्छ्र प्राजापत्य व्रत की बराबर माना जाय
॥ १७ ॥ उस व्रत के एक दिन रात में आठ हजार गायत्री का जप भी करे
अगले दिन सूर्योदय होते २ ब्रह्महत्या को छोड़के अन्य सब पातकों से
ही दिन रात में मुक्त हो जाता है ॥ १८ ॥ जो सुवर्ण का चोर वा सुराप
वाला, ब्रह्महत्यारा और गुरु स्त्री गामी ये सभी धर्म शास्त्रों के आद्योपा
पढ़लेने पर सब पातकों से मुक्त हो जाते हैं ॥ १९ ॥ निकृष्टों को यज्ञ कर
सम्बन्धी पापों तथा महापातकादि सब पापों का कृच्छ्र चान्द्रायण व्रत न
करता है २० ॥ शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की कलाओं के साथ प्रतिपदादि में ग्
ग्रास बढ़ावे अर्थात् शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से चान्द्रायण व्रत का आर
करके प्रतिपदा को एक द्वितीया को दो ऐसे एक २ ग्रास बढ़ाके पौर्णमासी
१५ ग्रास खावे फिर कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से एक२ ग्रास घटा के अमावास
को निराहार उपवास करे यह कृच्छ्रचान्द्रायण का विधान जानो ॥ २१
यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में सत्ताईसवां अध्याय पूरा हुआ॥ २
यदि किसी जार (व्यभिचारी) दुष्ट पुरुष ने बलात्कार आदि से वा
छे में नशादि द्वारा बेहोश करके स्त्री से कुकर्म किया हो तो ऐसी स्त्री, बेहो

नाऽऽपोमूत्रपुरीषेण नाग्निर्दहनकर्मणा ॥ १ ॥
स्वयंविप्रतिपन्नावा यदिवाविप्रवासिता ।
बलात्कारोपभुक्तावा चोरहस्तगताऽपिवा ॥ २
नत्याज्यादूषितानारी नास्यास्त्यागोविधीयते ।
पुष्पकालमुपासीत ऋतुकालेनशुध्यति ॥ ३ ॥
स्त्रियःपवित्रमतुलं नैतादुष्यन्तिकर्हिचित् ।
मासिमासिरजोह्यासां दुष्कृतान्यपकर्षति ॥ ४ ॥
पूर्वंस्त्रियःसुरैर्भुक्ताः सोमगन्धर्ववन्हिभिः ।
गच्छन्तिमानुषान्पश्चान्नैतादुष्यन्तिधर्मतः ॥ ५ ॥
तासांसोमोऽददच्छौचं गन्धर्वःशिक्षितांगिरम् ।
अग्निश्चसर्वभक्षत्वं तस्मान्निष्कल्मषाःस्त्रियः ॥ ६ ।
त्रीणिस्त्रियःपातकानि लोकेधर्मविदोविदुः ।

अभिचार (मारणप्रयोगादि) से ब्राह्मण, विष्ठा मूत्रादि से नद्यादि जल और अशुद्ध मुर्दादि को जलाने से अग्नि, दूषित नहीं होता है ॥ स्त्री यदि स्वयं विरुद्ध हो कर वा पति आदि के निकाल देने पर कहीं जाय उस से कोई दुष्ट वा चोर बलात्कार दुराचार करे ॥२॥ तो इस प्रकार दूषित हुई स्त्री त्याज्य नहीं ऐसी (निरपराध होने से) का त्याग शास्त्र में नहीं कहा है । ऐसी स्त्री रजोधर्म होने से शुद्ध हो जाती है (यह धर्मशास्त्रकार का आशय है सो जब जहां लोकव्यवहार के विरुद्ध न हो वहां मान्य होगी क्योंकि लोकव्यवहार से विरुद्ध होने पर (लोकविक्रुष्टमेवच । मनु० अ० ४ ।१ के अनुसार धर्मानुकूल विचार भी त्याज्य होगा । तदनुसार दूषित स्त्री का ग्रहण लोक विक्रुष्ट होने से संमति करना उचित नहीं है) ॥ ३ ॥ स्त्रियां अतुल पवित्र हैं इस से कदापि दूषित नहीं होतीं । क्योंकि प्रतिमास निकलने वाला रज उन के दोषों को नष्ट करता रहता है ॥ ४ ॥ पहिले स्त्रियों को सोम, गन्धर्व और अग्नि देवताओं ने भोगा और पीछे मनुष्यों के साथ विवाह हुआ इस से धर्मानुकूल दूषित नहीं होतीं ॥ ५ ॥ सोम देवता ने वरने के समय में स्त्रियों को पवित्रता दी, गन्धर्वदेवता ने प्रिय तथा कोमल शिक्षित वाणी दी और अग्नि ने सब कुछ खाने पचाने की शक्ति दी है इस से स्त्रियां स्वाभाविक शुद्ध हैं ॥ ६ ॥ धर्मज्ञ विद्वानों ने स्त्रियों के तीन पातक दुस्तर माने हैं । एक पति को स्वयं विषादि देके वा अन्यद्वारा मरवा डालना, दूसरा का गर्भ गिराना, वा अपना गर्भ गिराना (इन से भिन्न अन्य भी स्त्री के पाप

भर्तुर्वधोभ्रूणहत्या स्वस्यगर्भस्यपातनम् ॥ ७ ॥
वत्सःप्रस्रवणेमेध्यः शकुनिःफलपातने ।
स्त्रियश्चरतिसंसर्गे श्वामृगग्रहणेशुचिः ॥ ८ ॥
अजाश्वामुखतोमेध्या गावोमेध्यास्तुपृष्ठतः ।
ब्राह्मणाःपादतोमेध्याः स्त्रियोमेध्यास्तुसर्वतः ॥ ९ ॥
सर्ववेदपवित्राणि वक्ष्याम्यहमतःपरम् ॥
येषांजपैश्चहोमैश्च पूयन्तेनात्रसंशयः ॥ १० ॥
अघमर्षणंदेवकृतं शुद्धवत्यस्तरत्समाः ।
कूष्माण्डानिपावमान्यो दुर्गासावित्रिरेवच ॥ ११ ॥
अभीषङ्गाःपदस्तोमाः सामानिव्याहृतीस्तथा ।
भारुण्डानिचसामानि गायत्रंरैवतंतथा ॥ १२ ॥
पुरुषव्रतंन्यासंच तथावेदव्रतानिच ।

हैं जिन के प्रायश्चित्त पूर्व अ० २१ आदि में कहे हैं पर उन में ये तीन बड़े महापाप हैं) ॥ ७ ॥ गौ के थनों को चोंखने में बछड़े का मुख शुद्ध है, फल गिराने में पक्षी का मुख शुद्ध, शिकार पकड़ने में कुत्ते का मुख शुद्ध और रति सम्बन्ध में स्त्री शुद्ध है ॥ ८ ॥ बकरा बकरी घोड़ा का मुख, गौ के मल-मूत्र स्थान, तथा ब्राह्मणों के पग पवित्र हैं तथा स्त्रियों का सर्वाङ्ग शुद्ध है ॥ ९ ॥ (स्त्रियां निर्बल पराधीन होने से भी कम दूषित होती हैं बालकृत अपराध बालक को नहीं लगता है) सब वेदों के पवित्रांश आगे कहते हैं जिन के जप और होमों द्वारा निःसन्देह मनुष्य पवित्र होते हैं ॥१०॥ (ऋतं च सत्यं चा०) इत्यादि तीन मन्त्र, (देवकृतस्यैनसो०) इत्यादि छः मन्त्र, (एतो-न्विन्द्रं०) इत्यादि तीन शुद्धवती ऋचा, (तरत्समन्दी०) इत्यादि चार ऋचा, कूष्माण्ड सूक्त, ऋग्वेद का नवम मण्डल पवमान सूक्त, सविता देवता वाली, दुर्गा की ऋचा, अभीषङ्ग-पदस्तोम- ये साम, सातों व्याहृति, भारुण्ड-गायत्र और रैवत साम, ॥११। १२ ॥ पुरुषव्रत, न्यास, वेदव्रत ये साम, अप् शब्दवाले, बृहस्पति शब्दवाले मन्त्र वा सूक्त, (मधुवाता०) इत्यादि तीन ऋचा (नमस्ते रुद्र०) इत्यादि शत रुद्रिय, अथर्वशिरः, त्रिसुपर्ण, महाव्रत, गोसूक्त, अश्व-

अविलङ्गं बार्हस्पत्यंच वाक्सूक्तंमध्वृचस्तथा ॥ १३ ॥
शतरुद्रियमथर्वशिर–स्त्रिसुपर्णमहाव्रतम् ।
गोसूक्तंचाश्वसूक्तंच शुद्धःशुद्धेतिसामनी ॥ १४ ॥
त्रीण्याज्यदोहानिरथन्तरञ्च अग्नेर्व्रतंवामदेव्यंबृहच्च ।
एतानिजप्तानिपुनन्तिजन्तू–ञ्जातिस्मरत्वंलभतेयदीच्छेत ॥१५॥
अग्नेरपत्यंप्रथमंसुपर्णं भूर्वैष्णवीसूर्यसुताश्चगावः ।
तासामनन्तंफलमश्नुवीत यःकाञ्चनंगांचमहींचदद्यात् ॥१६॥
उपरुन्धन्तिदातारं गौरश्वःकनकंक्षितिः ।
अश्रोत्रियस्यविप्रस्य हस्तंदृष्ट्वानिराकृतेः ॥ १७ ॥
वैशाख्यांपौर्णमास्यांच ब्राह्मणान्सप्तपञ्चवा ।
तिलान्क्षौद्रेणसंयुक्तान् कृष्णान्वायदिवेतरान् ॥ १८ ॥
प्रीयतांधर्मराजेति यद्वामनसिवर्त्तते ।
यावज्जीवकृतंपापं तत्क्षणादेवनश्यति ॥ १९ ॥
सुवर्णनाभंकृत्वातु सखुरंकृष्णमार्गणम् ।
तिलैःप्रच्छाद्ययोदद्यात्तस्यपुण्यफलंशृणु ॥ २० ॥
ससुवर्णगुहातेन सशैलवनकानना ।

सूक्त, शुद्धः–शुद्धा, ये दोनों साम ॥ १३ । १४ ॥ चीर, आज्यदोह, रथन्तर, अग्निव्रत, वामदेव, बृहत, ये साम इन सब का जप करे तो ये जीवों को पवित्र करते हैं और चाहे तो पूर्व जन्म का स्मरण भी हो जाता है ॥ १५ ॥ अग्निदेवता का प्रथम सन्तान सुवर्ण, विष्णुदेव की पृथिवी, और सूर्यनारायण की पुत्री गौ इन तीनों का जो पुरुष दान करता है उस को अनन्त फल प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ गौ, घोड़े, सुवर्ण और भूमि ये सब वेदाध्ययन से शून्य ब्राह्मण के हाथ में अपने को जाते देख कर दाता पुरुष को रोकते हैं कि हमें मत दे यह सुपात्र नहीं है ॥ १७ ॥

वैशाख की पौर्णमासी के दिन सात वा पांच ब्राह्मणों को सहत से संयुक्त काले या अन्य तिल (हे धर्मराज! प्रसन्न हूजिये ऐसा वा जो मनमें हो कहकर) दान करे तो जीवन भर में किया सब पाप क्षण भर में नष्ट होता है ॥ १८ । १९ ॥ कस्तूरी गन्ध द्रव्य सहित काले याग को मध्यमें सुवर्ण लगा, के तिलों से ढांपकर जो पुरुष दान करता है उसके पुण्य फल को सुनो ॥ २० ॥ सुवर्ण, गुफा, पर्वत वन, जङ्गल और चारों दिशाओं सहित सब भूमि उसने दान की कि जिसने

चतुर्वक्त्राभवेद्दत्ता पृथिवीनात्रसंशयः ॥ २१ ॥
कृष्णाजिनेतिलान्कृत्वा हिरण्यंमधुसर्पिषी ।
ददातियस्तुविप्राय सर्वंतरतिदुष्कृतमितिसर्वंतरतिदुष्कृतमिति२२

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे ऽष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

दानेन सर्वकामानाप्नोति ॥१॥ चिरजीवित्वं ब्रह्मचारी रूपवान् ॥ २ ॥ अहिंस्युपपद्यते स्वर्गम् ॥ ३ ॥ अग्निप्रवेशाद् ब्रह्मलोकः ॥ ४ ॥ मौनात्सौभाग्यम् ॥ ५ ॥ नागाधिपतिरुदकवासात् ॥ ६ ॥ नीरुजः क्षीणकोशः ॥ ७ ॥ तोयदः सर्वकामसमृद्धः ॥ ८ ॥ अन्नप्रदाता सचक्षुः ॥ ९ ॥ स्मृतिमान्मेधावी सर्वतोऽभयदाता ॥ १० ॥ गोयुक्ते सर्वतीर्थोपस्पर्शनम् ॥ ११ ॥ शय्यासनदानादन्तःपुराधिपत्यम् ॥ १२ ॥ छत्र-

---

उक्त प्रकार वाला का दान किया इसमें सन्देह नहीं ॥ २१ ॥ काले मृग चर्म पर तिल धरके उन तिलों पर सुवर्ण, शहत और घी धर के जो ब्राह्मण को दान देता है वह सब दुष्कर्मों से पार हो जाता है ॥ २२ ॥

यह वासिष्ठ धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में अट्ठाईसवां अध्याय पूरा हुआ ॥ २८ ॥

दान धर्म से मनुष्य की सब मनोकामना पूरी हो जाती है ॥ १ ॥ दान शील पुरुष चिरंजीवी ब्रह्मचारी तथा सुरूपवान् होता है ॥ २ ॥ दयालु पुरुष स्वर्ग को प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ दान शील को अग्नि में प्रवेश करने (विधिपूर्वक मरणान्तदाह) से ब्रह्मलोक प्राप्त होता ॥ ४ ॥ मौन धारण करने से सौभाग्य प्राप्त होता ॥५॥ जलमें भींगते हुए जप करने से नागों का अधिपति अर्थात् नागलोक का राजा होता है ॥ ६ ॥ दान में जिसका धन चुक जाय वह नीरोग होता ॥७॥ प्याऊ आदि जलदान करनेवाला सब कामनाओं से युक्त होता ॥ ८ ॥ अन्न दाता चक्षु हीन नहीं होता ॥ ९ ॥ सब प्रकार से अभय देने वाला स्मरण शक्ति युक्त उत्तम बुद्धिवाला होता ॥ १० ॥ धेनु युक्त रथ के दान में सब तीर्थों के स्नान का फल होता है ॥ ११ ॥ शय्या दान और उत्तम आसनों के दान से स्त्री रणवास की महारानी होती है ॥ १२ ॥ छाता के दान

दानाद् गृहलाभः ॥ १३ ॥ गृहप्रदो नगरमाप्नोति ॥ १[illegible]
उपानत्प्रदाता यानमासादयति ॥१५॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥[illegible]

यत्किंचित्कुरुतेपापं पुरुषोवृत्तिकर्षितः ।
अपिगोचर्ममात्रेण भूमिदानेनशुध्यति ॥ १७ ॥
विप्रायाऽऽचमनार्थंतु दद्यात्पूर्णकमण्डलुम् ।
प्रेत्यतृप्तिंपरांप्राप्य सोमपोजायतेपुनः ॥ १८ ॥
अनडुहांसहस्राणां दानानांधुर्यवाहिनाम् ।
सुपात्रेविधिदत्तानां कन्यादानेनतत्समम् ॥ १९ ॥
त्रीण्याहुरतिदानानि गावःपृथ्वीसरस्वती ।
आदिदानंहिरण्यानां विद्यादानंततोऽधिकम् ॥ २० ॥
आत्यन्तिकफलप्रदं मोक्षदंबन्धमोचनम् ।
योगिनांसंमतोविद्वानाचारमनुवर्तते ॥ २१ ॥
श्रद्दधानःशुचिर्दान्तो धारयेच्छृणुयादपि ।

से घर मिलता (वह एक प्रकार का बड़ा छाता जानो) ॥ १३॥ घर देनेवाला नगर का स्वामी होता है ॥ १४ ॥ जूतों का दान करनेवाले को सवारी प्राप्त होती है ॥ १५ ॥ और भी श्लोकों का प्रमाण कहते हैं कि ॥ १६ ॥ जीविका रोजगार) न मिलने से दुःखित हुआ मनुष्य जो कुछ पाप करता है वह [गो]चर्म मात्र भूमि के दान से शुद्ध हो जाता है ॥ १७ ॥ आचमन के लिये [ब्र]ाह्मण को जो जल से भरा कमण्डलु दान करे वह जन्मान्तर में [प]रम तृप्ति को प्राप्त होकर अग्निष्टोमादि सोमयाग करने वाला होता है ॥ १८ ॥ बलवान् गाड़ी में बोझा ले चलने में समर्थ एक हजार बैलों का दान [सु]पात्रों को विधिवत् देवे तो कन्यादान के तुल्य पुण्य होता है ॥ १९ ॥ [गौ],पृथिवी और विद्या ये तीन दान बड़े हैं । इन में भी सुवर्ण का दान मुख्य [है] और विद्या का दान सुवर्ण से भी बड़ा है ॥ २० ॥ बन्धन से छुड़ा के मोक्ष [दे]नेवाला होने से विद्या दान अत्यन्त फल देनेवाला है । जो विद्वान् होकर [सद]ाचार पर चलता है वह योगियों का भी मान्य है ॥ २१ ॥ जो धर्म के वि[चा]रों को सुने और धारण (स्वीकार) करे आगे वैसा ही करने लगे, मनको

विहायसर्वपापानि नाकपृष्ठेमहीयत,इति ।
नाकपृष्ठेमहीयते । इति ॥ २२ ॥

इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

धर्मंचरतमाऽधर्मं सत्यंवदतमानृतम् ।
दीर्घंपश्यतमाह्रस्वं परंपश्यतमाऽपरम् ॥ १ ॥
ब्राह्मणोयज्ञो भवत्यग्निर्वै ब्राह्मणइति श्रुतेः ॥ २ ॥

तच्च कथम् ॥३॥ तत्र सतो ब्राह्मणस्य शरीरं वेदिः संकल्पो यज्ञः पशुरात्मा मनो रशना बुद्धिः सदो मुखमाहवनीयं नाभ्यामुदरोऽग्निर्गार्हपत्यः प्राणोऽध्वर्युरपानो होता व्यानो ब्रह्मा समान उद्गाताऽऽत्मेन्द्रियाणि यज्ञपात्राणि यएवं विद्वानिन्द्रियैरिन्द्रियार्थं जुहोतीति ॥ ४ ॥ अपि च काठके विज्ञायते ॥ ५ ॥ अथाप्युदाहरन्ति ॥ ६ ॥

पातित्रातिचदातार-मात्मानंचैवकिल्विपात् ।
वेदेन्धनसमृद्धेषु हुतंविप्रमुखाग्निषु ॥ ७ ॥

प में रक्खे, पवित्रता से रहे, तथा श्रद्धालु हो वह सब पापों को त्याग के गं के सिंहासन पर पूजा जाता है ॥ २२ ॥

इ वासिष्ट धर्मशास्त्र के भाषानुवाद में उनत्तीशवां अध्याय पूरा हुआ ॥२९॥

र्म करो अधर्म नहीं, सत्य बोलो मिथ्या नहीं, दीर्घ दर्शी बनो संकुचित विचार वाले नहीं, परम अविनाशी सब अनित्य पदार्थों में नित्य परम तत्त्व रूप ईश्वर को देखो संसार को नहीं ॥ १ ॥ ब्राह्मण यज्ञ का ही रूप है। "अग्नि ही ब्राह्मण है," ऐसा श्रुति में लिखा है ॥ २ ॥ सो कैसे ? ॥ ३ ॥ उस में सत्पात्र ब्राह्मण का शरीर-वेदि, संकल्प-यज्ञ, पशु-आत्मा, मन-रस्सी, बुद्धि-सदःशाला, मुख-आहवनीय, नाभिस्थल में उदर का जाठराग्नि-गार्हपत्य, प्राण-अध्वर्यु, अपान-होता, व्यान-ब्रह्मा, समान-उद्गाता, इन्द्रियां यज्ञपात्र. जो ऐसा जानता है वह इन्द्रियों के साथ शब्द स्पर्शादि विषयों का होमकर देता है ॥ ४ ॥ और भी कठशाखास्थ श्रुति से जाना जाता है ॥ ५ ॥ और भी श्लोकों का प्रमाण कहते हैं कि ॥ ६ ॥ दान लेने वाले और दाता पुरुष को वह दान पाप से रक्षा करता है कि जो वेदरूप ईंधन से प्रज्वलित ब्राह्मणों के मुख रूप अग्नि में होम किया जाता है ॥ ७ ॥-न फेंगता, न व्यर्थ हो-

नस्कन्दतेनव्यथते नैनमध्यापतेच्चयत् ।
वरिष्ठमग्निहोंजात्रात्तु ब्राह्मणस्यमुखेहुतम् ॥ ८ ॥
ध्यानाग्निः सत्योपचयनं क्षान्त्यापुष्टिश्चवं त्रिः पुरोडा
अहिंसा च सन्तोषो यूपः कृच्छ्रं भूतेभ्योऽभयदाक्षिण्यं सम
कृत्वा क्रतुं मानसं याति क्षयं बुधः॥९॥
जीर्यन्ति जीर्यतःकेशा दन्ताजीर्यन्तिजीर्यतः ।
जीवनाशाधनाशाच जीर्यतोऽपिनजीर्यति ॥१०॥
यादुस्त्यजादुर्मतिभिर्यानजीर्यतिजीर्यतः ।
प्राणान्तिको व्याधिस्तांतृष्णांत्यजतःसुखमिति॥११॥
तुमित्रावरुणयोरुर्वश्यात्मजाय शतयातवे वसिष्ठाय
ायेति॥१२॥
इति वासिष्ठे धर्मशास्त्रे त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥
समाप्ताचेयं वसिष्ठस्मृतिः ॥

किसी प्रकार के अनिष्ट का कारण होता है (अर्थात् अग्निहोत्र
क दिक्कतें होती हैं इस कारण) अग्नि होत्र से बहुत अच्छा यह
ह्मण के मुख में होम किया गया है ॥ ८ ॥ ध्यान रूप अ
, क्षमा से पुष्टि अन्न या पुरोडाश, अहिंसा-दया, सन्तोष यू
ों के लिये अभयदान रूप कृच्छ्रव्रत, ऐसा स्मरण करके विद्वा
साथ संबन्ध का त्याग करता हुआ मानस यज्ञ को प्राप्त हो
वस्था में बालश्वेत हो जाते,दांत गिर जाते हैं, परन्तु जीवन
तृष्णा जीर्ण (बुड्ढी) नहीं होती ॥१०॥ जो शरीर के जीर्ण होते
ीं होती जो निकृष्ट बुद्धि वालों से कदापि त्यागी नहीं जा सकती
र्यन्त साथ में लगी पूरी व्याधि है उस तृष्णा को त्याग ने पर
॥११॥ मित्रावरुण देवतों द्वारा उर्वशी दिव्याङ्गना से उत्पन्न
महर्षि वसिष्ठ को बारंबार नमस्कार प्राप्त हो ॥१२॥
ज के ब्राह्मणसर्वस्व सम्पादक पं० भीमसेन शर्म कृत भाषा
ध्याय समाप्त हुआ ॥ और यह वसिष्ठ स्मृति भी समाप्त हुई ॥
ओम्-शान्तिः । शान्तिः । शान्तिः ॥